गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

ओ३म्

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष १
अङ्क १
गुरुकुल झज्जर, भाद्रपद सं० २०१० वि०, सितम्बर १९५३, दयानन्दाब्द १२९
वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

❋ आदर्श सुधारक महर्षि दयानन्द ❋

❋ आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द ❋

जो अपने कुल की उत्तमता, उत्तम सन्तान=दीर्घायु, सुशील, बुद्धि-बल-पराक्रमयुक्त, विद्वान् और श्रीमान करना चाहें; वे १६ (सोलहवें) वर्ष से पूर्व कन्या और २५ (पच्चीसवें) वर्ष से पूर्व पुत्र का विवाह कभी न करें। यही सब सुधारों का सुधार, सब सौभाग्यों का सौभाग्य और सब उन्नतियों की उन्नति करने वाला कर्म है कि इस अवस्था में ब्रह्मचर्य रख के अपने सन्तानों को विद्या और सुशिक्षा ग्रहण करावें कि जिससे उत्तम सन्तान होवें।

—संस्कारविधि-गर्भाधान प्रकरणम्

❋ ❋ ❋ ❋

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सह सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्त वाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्त वाचस्पति

ब्रह्मचर्यमहत्त्वम्

(श्री पं० मेधाव्रताचार्यकविरत्नप्रणीतम्)

अनुष्टुप्छन्दः] युग्मम्-

ब्रह्मणा संप्रणीतानां छन्दसां भावमाहरन् ।
छन्दोभिर्विविधैर्वच्ये लौकिकैरप्यलौकिकम् ॥१॥
कुमारीणां कुमाराणां काव्यं कल्याणकारकम् ।
ब्रह्मचर्यमहत्त्वाख्यं ब्रह्मचारिनिदर्शनम् ॥ २ ॥

अर्थः—परब्रह्म ओ३म् प्रणीत अथर्ववेद के ग्यारहवें काण्ड के पञ्चम सूक्तगत मन्त्रों का अलौकिक भाव ग्रहण करता हुआ मैं जगत् प्रसिद्ध ब्रह्मचारियों के दृष्टान्तों सहित कुमार कुमारियों के हितार्थ 'ब्रह्मचर्य-महत्वम्" नामक काव्य का भिन्न भिन्न लौकिक छन्दों द्वारा प्रणयन करूंगा ।

इन्द्रवज्रा] युग्मम्–

ओ३मीश्वरोपासनचिन्तनानि
स्वाध्याय एतद्रचितश्रुतीनाम् ।
वीर्यावनं सत्यसुधारणञ्च
सर्वोन्नतिध्येयनिलीनता च ॥ ३ ॥

उपजातिः---

ज्ञानाभिवृद्धौ सततं प्रयत्नः
पवित्रता साधनदक्षता च ।
बुद्धेर्विकासेऽतिशयानुरागः
स ब्रह्मचर्यार्थ उदीरितोऽयम् । ४॥

ब्रह्म	चर्य	अर्थ
(१) ओ३मीश्वरस्य	उपासनचिन्तनानि	ब्रह्म का उपस्थान और ध्यान ।
(२) एतद्रचितश्रुतीनां	स्वाध्यायः	ईश्वर प्रणीत वेदों का अध्ययन ।
(३) वीर्यस्य	अवनम्	वीर्य रक्षण ।
(४) सत्यस्य	सुधारणम्	सत्य का धारण
(५) सर्वोन्नतिध्येये	निलीनता	सबकी उन्नति में तत्परता ।
(६) ज्ञानाभिवृद्धौ	सततं प्रयत्नः	ज्ञानवर्धन में निरन्तर प्रयत्न ।
७ पवित्रतायाः	साधन-दक्षता	पवित्रता के उपायों में चातुर्य ।
(८ बुद्धेर्विकासे	अतिशयानुरागः	बुद्धि के विकास में अत्यन्त प्रीति ।

ये ब्रह्मचर्य शब्द के आठ अर्थ कहे गये हैं ।

उपजातिः —

उदीरितार्थानुगुणं गुणज्ञो
यो ब्रह्मचर्यं यतते प्रलब्धुम् ।
स ब्रह्मचारी सुतरां चकास्ति
लोकद्वयानन्दसुसिद्धिधारी ॥५॥

अर्थः—कहे गये अर्थानुसार जो विवेकशील जन ब्रह्मचर्य धारणार्थ प्रयत्न करता है। वह ऐहलौकिक व पारलौकिक आनन्द को सिद्ध करने वाला ब्रह्मचारी अत्यन्त देदीप्यमान बन जाता है ।

वसन्ततिलका:—

यस्यास्तिशीलममलं चरितुं जनस्य
ब्रह्मण्ययं व्रतिवरो गदितो मुनीन्द्रैः ।
ब्रह्मापि वेद इति तत्पठनार्थमीड्यं
योऽयं व्रतं चरति सोऽप्युदितो व्रतीन्द्रः ।६

अर्थ:—जिसका ब्रह्म में विचरने का निर्मल स्वभाव है। उसको मुनिवरों ने श्रेष्ठ ब्रह्मचारी कहा है अथवा ब्रह्म नाम वेद उसके अध्ययन के लिये जो प्रशंसनीय व्रत धारण करता है उसे भी व्रतीन्द्र कहा गया है ।

मन्त्रः—ब्रह्मचारीष्णंश्चरति रोदसी उभे तस्मिन् देवाः समनसो भवन्ति । स दाधार पृथिवीं दिवं च स आचार्यं तपसा पिपर्ति ॥

(अथर्व० का० ११। सू० ५ । म० १)

[क्रमशः]

सम्पादकीय—

सुधारक का प्रयोजन

जिस प्रकार शुद्ध और श्वेत वस्त्र बाह्य धूलि आदि के कारण मल लगता ही रहता है और उसको फिर से स्वच्छ करने के लिये साबुन आदि साधनों की आवश्यकता होती ही रहती है, ठीक इसी भांति व्यक्ति के आत्मा मन और शरीर पर भी अविद्या कुसंस्कार और आलस्य प्रमाद आदि के कारण मल चढ़ता है और उसको दूर करने तथा पवित्र बाने के लिये विद्या आदि साधन ग्रहण किये जाते है। यही अवस्था समाजिक कुरीतियों को दूर करने के विषय में समझनी चाहिये। जब व्यक्ति और समाज दोषरहित, स्वच्छ दशा में रहते हैं तो देश उन्नति करता है।

इसी प्रयोजन को सामने रखकर देशहितैषी जनसेवक अपने सामर्थ्यानुसार सामाजिक मल= कुरीतियों को दूर करने के लिये भिन्न-भिन्न श्रेष्ठ उपायों का अवलम्बन किया करते हैं। इन उपायों में वाणी और लेख द्वारा प्रचार कार्य प्रमुख है। वाणी का प्रभाव लेख की अपेक्षा अस्थिर होता है। लेख के द्वारा कार्य में विशेषता आजाती है। इसी भावना को हृदय में धर कर 'सुधारक' का प्रकाशन किया जाता है। यह कार्य साधारण नहीं अपितु कष्ट साध्य है, परन्तु मिलजुल कर कार्य करने से कठिन तम कार्य भी सरलता से किये जा सकते है। इसी लिये मैं सब देश-सेवक, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं से विनय पूर्वक निवेदन करता हूँ कि इस पवित्र कार्य में सब प्रकार से यथासाध्य सहयोग देकर उत्साहित एवं कृतार्थ करें।

यह बात किसी भी समझदार से छिपी हुई नहीं है कि वर्तमन काल में हमारे देश और समाज में अनेक प्रकार की कुरीतियां घुसी हुई हैं। इनको हमें ही दूर करना है। आत्मिक, सामाजिक और भौतिक रूपों में हम शुद्ध मार्ग से भटके हुये हैं। हमें फिर से मिथ्या मार्ग को छोड़ना और सत्पथ पर चलना होगा।

वर्तमान युग के सबसे बड़े सुधारक महर्षि दयानन्द ने सुधार की सब दिशाओं पर प्रकाश डाला हुआ है जिसको आज भी उनके द्वारा प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश आदि अमर ग्रन्थों द्वारा ग्रहण किया जा सकता है।

सुधारक, का मुख्य प्रयोजन सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक और धार्मिक आदि क्षेत्रों से मलविक्षेप को दूर करना है। इसमें किसी सम्प्रदाय, राजनीतिक दल अथवा जाति पांति का भेदभाव नहीं किया जावेगा। हम शुद्ध भावना से सुधार कार्य में सब का सहयोग चाहते हैं और सहयोग देंगे। भेदभावना के वशीभूत सज्जन इस में किसी प्रकार की गन्ध लेने की प्रवृत्ति न रखें। हमारा यह प्रयोजन आगे आगे स्पष्ट होता जावेगा।

किसी भी देश और समाज का प्राण कुमार और कुमारी होते हैं। बालक-बालिकाओं का सर्वसुधार चरित्र निर्माण पर आश्रित है। चरित्र निर्माण में किसी भी भेद के बिना ब्रह्मचर्यपालन, अचूक साधन है। इसकी प्राप्ति से सब क्षेत्र जगमगा उठेंगे। 'सुधारक' इस ध्येय को सदा आगे रखेगा।

समाज में फैली हुई कुरीतियों को हमें निर्भयता से काटना पड़ेगा, परन्तु हृदय में हित भावना लेकर प्रेमपूर्वक कार्य करना 'सुधारक' का ध्येय होगा।

मौलिक कार्य करने के लिये ही 'सुधारक' का प्रकाशन 'मासिक' रूप में रखा गया है। इसका प्रचार समाज के सब विभागों में हो सके, विशेषतया देश के भावी निर्माता विद्यार्थी भी इससे पूर्ण लाभ उठा सकें, इसी कारण इसका वार्षिक मूल्य बहुत थोड़ा केवल २) रू० रखा गया है। इसके लेख दैनिक समाचारों की भांति पढ़े और फैंक देने के लिये नहीं होंगे,किन्तु बार-बार मनन करने और आचरण में लाने योग्य होंगे। यह पत्र स्थिर साहित्य का कार्य करेगा।

परम पिता परमेश्वर से प्रार्थना है कि हमें इस पवित्र कार्य को शुद्ध रूप में चलाने का सामर्थ्य दे, जिस से हम अपने दोषों का त्याग और सद्गुणों का ग्रहण करते हुये स्वदेश और भारतीय समाज की उन्नति करके विश्व-कल्याण में सहयोग दे सके।

सभी सुधार प्रेमियों से नम्र निवेदन है कि 'सुधारक' को सब भांति सहयोग देकर अपनावें।

—: हरयाणा में सुधार :—

[श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज]

हरयाणा प्रान्त वैदिक संस्कृति प्रधान क्षेत्र है। हरयाणा की भूमि वीरसू है। हरयाणा निवासी कठोर भाषी तथा शुद्ध हृदय हैं। इन कारणों से वहां सुधार होना आवश्यक है और सुधार होना सुसाध्य है। निम्न बातों में सुधार होना चाहिये।

१—मद्य का निषेध— सरकार ने पंजाब प्रदेश में रोहतक प्रान्त में मद्य का निषेध किया है। जनता को इसका स्वागत करना चाहिये। और किसी को भी इसका सेवन न करना चाहिये। गुप्त रूप में भी व्यवहार न होना चाहिये। ऐसे ही मांस--त्याग भी।

२—वैदिक संस्कार—संस्कार वैदिक धर्म में विशेष महत्त्व की वस्तु है। यथा सम्भव समय पर ही प्रत्येक संस्कार होना चाहिये और उन संस्कारों में व्यय अत्यन्त अल्प होना चाहिये। संस्कार करवाने के लिये जिसे संस्कार विधि आती है, संस्कार विध्यनुसार जो संस्कार करवा सकता है, उसी से करवा लेना चाहिये। कई संस्कार ऐसे हैं, जिसे गृहस्थी स्वयं ही कर सकता है। उनमें बाहर से किसी पंडित को बुलाने की आवश्यकता नहीं होती है। इस समय जो संस्कार न करने की प्रवृत्ति है उसमें सुधार करके संस्कार अवश्य ही हों, ऐसी प्रवृत्ति बनाने का यत्न करना चाहिये।

३—इस समय हरयाणा वासी कई कामों को अपने लिये निन्दनीय समझते हैं इन विचारों में सुधार होना आवश्यक है। हरयाणा का ब्राह्मण कृषि करने वाला ब्राह्मण है। इसी प्रकार आर्य समाज के प्रचार से हरयाणा का जाट संस्कृत पढ़ने वाला जाट है। अब इसके साथ ब्राह्मण, जाट, धानक, चमार आदि सबको शिल्प कार्य में दक्ष होने की आवश्यकता है। इस समय तक वहां का व्यापारी अग्रवाल मात्र था। अब पाकिस्थान से जो सज्जन आए हैं। उनमें अग्रवाल अतिरिक्त भी व्यापारी हैं। किन्तु हरयाणा का ब्राह्मण तथा जाट व्यापार में कुशल नहीं है। इसको इस कार्य में भी दक्ष होकर अपनी प्रथम जीविका में सुधार करना चाहिए। अन्यथा वह पिछड़ जायेंगे।

४—खेतों में कृषि कार्य जितना स्त्रियां करती हैं, उनमें न्यूनता होनी चाहिए और पुरुषों को उसमें अधिक भाग लेना चाहिए। गृह पर जो शिल्प हो सकता है, उसमें स्त्रियों को पटु होने की आवश्यकता है। अनेक कार्य ऐसे हैं, जो गृह पर बैठकर हो सकते हैं, हरयाणा की स्त्री उनसे सर्वथा अनभिज्ञ है। उदाहरण के लिये जौ, गेहूँ की नाल से जो वतुएं बनती हैं, हरयाणा की स्त्रियों को उन का ज्ञान होना चाहिए और करने चाहिएं। इसी प्रकार और भी अनेक कार्या हैं। जो स्त्रियों को सीखने चाहियें

— —

आशीर्वाद

गुरुकुल झज्जर से 'सुधारक, नाम की पत्रिका निकलने का पता चला है। यह प्रसन्नता की बात है।

गुरुकुल का पग उन्नति की ओर है, 'सुधारक' पत्रिका सुधार कार्य में सफलता प्राप्त करे, यह हार्दिक अभिलाषा है। भगवान् इसे यथा नाम तथा सिद्ध करें।

—पूज्य स्वामी स्वतंत्रानन्द जी महाराज

आशीर्वाद

भारतवर्ष अनेक कुरीतियों का उर्वर क्षेत्र बन रहा है। इन कुरीतियों को दूर किये बिना सुरीति-सुनीति का प्रणयन असम्भव है। इसलिये जो कोई व्यक्ति या संस्था कुरीतियों को हटा कर सुरीतियों का बीज बोने का प्रयास करता है वह सचमुच बहुत अभिनन्दनीय है। इस दृष्टि से मैं "सुधारक" मासिक पत्र का अभिनन्दन करता हूँ, कि भगवान् इस सुधारक और इसके संस्थापक आदि को बल प्रदान करें। जिससे यह लोकोपकारक सुधारक की योजना को सफल कर सकें

—पूज्य स्वामी वेदानन्द जी महाराज

ग्राम्य विश्वविद्यालय— (देहाती यूनीवर्सिटी) क्यों ?

(लेखक—प्रोफेसर शेरसिंह जी एम० ए०, एम० एल० ए०)

[१]

"सुधारक" शिक्षासंस्था की पत्रिका है अतः शिक्षा में क्या सुधार हो ? लेखमाला का यही विषय चुना है ।

प्रायः पिछले ३०, ३५ वर्षों से देश के सभी विचारकों और नेताओं ने एक स्वर से चालू शिक्षा-पद्धति की निन्दा की और उस में तुरन्त परिवर्तन करने पर जोर दिया है । महात्मा गांधी ने तो एक बार यहां तक कहा था कि हमारे किसान को तो इस शिक्षा के देने से हानि है और यदि यही शिक्षा देनी है तो न देनी अच्छी । उस समय मैं कालिज में पढ़ता था । उस लेख को पढ़कर मेरे एक साथी ने कहा था कि महात्मा गांधी तो किसान को अशिक्षित ही देखना चाहते हैं, नहीं तो किसानों को पृथक करके क्यों कहा ? उस समय कोई अच्छा उत्तर मुझ से नहीं बन पड़ा, परन्तु आज मैं समझता हूँ कि उस कथन के पीछे कितनी प्रबल किसान हित की भावना महात्मा जी के हृदय में छिपी हुई थी। वास्तव में जो शिक्षा हमें विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में मिल रही है भारतीय जीवन से और विशेषकर ग्रामीण जीवन से उस का दूर का भी सम्बन्ध नहीं है । जीवन में जिसका कुछ उपयोग नहीं ऐसा मृत ज्ञान (Dead Knowcledge) हमारे मस्तिष्क में ठूंसा जा रहा है जिसके परिणाम स्वरूप १४ या १६ वर्ष तक शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी शारीरिक, मानसिक तथा अध्यात्मिक रोगी बन कर जीवन की कठिन समस्यायों से लड़ने के स्थान पर उन से भागना चाहता है । इस में विद्यार्थी का क्या अपराध ? अस्वस्थ शरीर, अस्वस्थ मन और अस्वस्थ आत्मा ले कर समाज के लिये उपयोगी और आनन्द का जीवन कोई कैसे बिता सकता है ? इस शिक्षा के दुष्प्रभाव से यदि किसान को बचने का उपदेश गांधी जी ने किया तो उसके कल्याण के लिये ही तो किया ।

पहिले तो अंग्रेज का राज्य था और हम विवश थे शिक्षा पद्धति को बदलने में, परन्तु आज तो हम बदल सकते हैं, और हमें इस को बदलना चाहिये । ऐसी निष्प्रयोजन और निष्प्रयोजन ही नहीं हानिकारक शिक्षा पद्धति को और आगे आगे चलाना राष्ट्र के साथ खिलवाड़ है । इतने सारे नवयुवकों का जीवन बिगाड़ना देश में उत्पादकों (Producers) की संख्या घटा कर उपभोगियों (consumers) की संख्या उत्तोत्तर बढ़ाना बड़ा भारी पाप है । जिन्होंने जीवित ज्ञान का उपार्जन करके देश की सम्पत्ति और समृद्धि को बढ़ाना था और ईर्ष्या तथा कलह में फंसे हुए और भटके हुए संसार को शान्ति और संस्कृति का संदेश देना था, आज वे ट्रामों को आग लगाने और दूसरे समाज विरोधी (Anti-social) कार्यों द्वारा देश में विध्वंस मचाने पर बाधित हो रहे हैं इससे अधिक दुःख पूर्ण (tragic) बात और क्या हो सकती है इसके उत्तरदायित्व

से हम जिन्होंने शासन की बाग डोर संभाल रक्खी है बच नहीं सकते।

पूज्य डा० राजेन्द्रप्रसाद जी के मुख से (दिल्ली विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर) यह सुनकर ,,कि मैं शिक्षा पद्धति बदलना चाहता हूं परन्तु लाचार हूं, (I find my self helpless),,बड़ी निराशा होती है । हमारे जो नेता विदेशी सत्ता के दिनों विवश नहीं हुए और जिन्होंने राष्ट्रियविद्यापीठ चलाये वे आज सत्तारूढ होकर विवश क्यों हो रहे हैं ? देश का दुर्भाग्य है यह, और इसे क्या कह सकते हैं ?

कौन नहीं जानता कि किसी राष्ट्र की शक्ति का स्रोत ग्राम हैं, और यदि ग्रामीण जीवन अस्त व्यस्त हो जाय, बिगड़ जाय, नष्ट हो जाय, तो राष्ट्र कितने दिन तक ठहर सकता है । भारत के ग्रामीण जीवन की ओर इसलिये सरकार का ध्यान आकृष्ट हुआ है क्योंकि यह गांव के लिये महत्व नहीं रखता अपितु सारे भारत का भविष्य इस में निहित है।

परन्तु आज हमें जो शिक्षा मिल रही है उस में और दोष तो हैं ही—जो नागरिक और ग्रामीण दोनों के लिये कष्टदायक हैं, परन्तु एक सब से बड़ा दोष यह है कि यह शिक्षा गामों को उजाड़ कर नगर बसा रही है । गाम भी बसे और नगर भी बसे, परन्तु गाम उजड़ कर नगर बसे वह अत्यन्त भयावह है। जो भी ग्रामीण आज शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं वह गाँव से तो छिन गया । उसकी शिक्षा से ग्रामीण जीवन में कोई सुधार या उन्नति नहीं हुई, उसने गांव से कुछ लिया उस को दिया नहीं। यदि यह एक-पदीय व्यापार (one way traffic) चलता रहा [देन ही देने का] तो गावों में क्या रहेगा ? इस बात को विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (University Education Commition) ने भी अनुभव किया । उन्होंने अपनी रिपोर्ट के पृष्ठ ५५६ में जो लिखा है वह मैं पाठकों की जानकारी के लिये उद्धृत करता हूँ—

In the course of world history. seldom has the greatneses of a nation long survived the disintegration of its rural life. For untold ages man by nature has been a Villager and has not long survived in any other environment. Almost every study of the subject which has been made in Europe and America has revealed that as a rule city families survive for only few generations. Cities grow and thrive only as they are constantly replenished from the rural population. So long as a nation's rural life is vigorous if posesses reserves of life and power. When for a long time cities draw the cream of life and culture from the Villages, returning almost nothing, as has been the case in India during the last two centuries. The current Village resources of culture and energy become dipleted, and the strength of the nation is reduced."

संसार के इतिहास में कदाचित् ही कोई ऐसा राष्ट्र मिलेगा जो अपने ग्रामीण जीवन को अस्त-व्यस्त करके अपने महत्व की रक्षा कर सका हो। लम्बे अतीत से मनुष्य स्वभाव से ही ग्रामीण रहा है किसी और वातावरण में वह बहुत दिन तक जीवित नहीं रह सका । इस विषय पर यूरोप और अमरीका में जो खोज हुई उस से पता चला है कि शहरी कुटुम्ब कुछ ही पीढियों तक जीवित रह सके हैं । शहर ग्रामीण लोगों से लगातार नये प्राण लेकर खड़े होते हैं और बढ़ते है।

जब तक राष्ट्र के ग्रामीण जीवन में तेजस्विता है तभी तक उसके पास जीवन और शक्ति का भण्डार रहता है। जब बहुत समय नगर (शहर) ग्रामों से जीवन और संस्कृति का तत्त्व खींचते रहें और बदले में कुछ भी न दें जैसा पिछली दो शताब्दियों से भारतवर्ष में हो रहा है तो संस्कृति और शक्ति के ग्रामीण साधनों में (ह्रास होता है) घाटा पड़ता है और राष्ट्र की शक्ति कम हो जाती है।

ग्रामीण जीवन की तेजस्विता कैसे रहे ? हमारे ग्राम शिक्षित सुसंस्कृत नवयुवकों के रहने योग्य कैसे बनें ? किस ढंग की शिक्षा पाकर नययुवक ग्रामों में रहना पसंद करके ग्रामों को अच्छा और उन्नतिशील बना सकेंगे। किस प्रकार अस्तव्यस्त (disintegrating) होते हुए ग्रामीण जीवन का पुनर्वास (rehabilitation) हो सकेगा। ये महत्वपूर्ण प्रश्न हैं। और सब राष्ट्र सेवियों को इन्हें गम्भीरता से सोचना चाहिये। क्या आज वे विश्वविद्यालय जो कि नगर केन्द्रित (Urban centred) हैं गामीण जीवन का पुनर्वास कर सकेंगे ? क्या वे नवयुवकों को ग्रामों में जाकर उनकी सेवा करके ग्रामीण जीवन को उन्नत बनाने के लिए तैयार कर सकते हैं ? यदि नहीं तो फिर क्या हमारी सरकार ८५ प्रतिशत देहात में रहने वाले लोगों के लिये उनकी उन्नति और विकास के लिए सीधे-सादे और उपयोगी शिक्षणालय और विश्वविद्यालय नहीं खोलेगी ? यदि राष्ट्र को जीवित रखना है और इसकी महत्ता को बनाये रखना है तो यह करना ही पड़ेगा—ग्राम्य (देहाती) विद्यालय और विश्वविद्यालय खोलने होंगे जो ग्रामीण जीवन को आर्थिक, शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक पहलुओं से उन्नति की ओर ले जायें। इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है। यह तो ग्राम्य (देहाती) विश्वविद्यालयों की आवश्यकता पर लिखा। अगले लेखों में ग्राम्य विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की रूपरेखा पाठकों के सम्मुख रक्खूंगा।

(क्रममः)

आर्यकुमार लेखमाला—

आर्यकुमार सभा

(ले०—श्री जगन्नाथ, बी० ए० एल० एल० बी०, जे० डी०, प्रभाकर, सिद्धान्त शास्त्री)

विश्वमित्र आदर्श नगर के सच्चे सुधारक एवं प्रसिद्ध व्यक्ति थें। वे थे तो निर्धन, परन्तु हृदय उनका उदार था, वे जो कुछ 'मिल' से जहां वे दिन भर कार्य करते थे मिल जाता था उसी में सन्तोष कर प्रति सायंकाल घर आकर शौच, स्नान, सन्ध्या, भोजन आदि से निवृत्त होकर अपने कमरे के आगे मैदान में मोहल्ले के बच्चों को इकट्ठा कर उन्हें अच्छी; कहानियाँ तथा उपदेश सुनाया करते थे, वे अपने समय को इधर उधर चक्कर काटने, गप्पें मारने या ताश खेलने में न बिता कर कभी-कभी बच्चों को खेल आदि कराते और विजेता बालक को फल पुस्तक आदि इनाम में देते। परिणाम यह हुआ कि उनके मोहल्ले के बच्चे विनम्र, सुशील, सभ्य, सदाचारी एवं बुद्धिमान हो गये।

एक ऐसी ही संध्या थी। सब बच्चे इकट्ठे थे। दैनिक प्रार्थना समाप्त होने पर एक बच्चा बोला—गुरुजी, आज तो हम कहानी सुनेंगे।,,

उन में एक सुशील नाम का बच्चा था। वह बोला— गुरु जी आपने कहा था कि आप हमारी 'आर्य कुमार सभा बनावेंगे, वह कब बनेगी ? विश्वामित्र बोले—आर्य कुमार सभा बनने में

अभी देर है। आज तो मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूं, सो ध्यान देकर सुनो—

पुराने युग की बात है। देवनगर में एक राजा रहता था। वह प्रति मंगलवार को अपने देश के श्रेष्ठ पुरुषों और देवताओं को भोजन कराया करता था। देवनगर के पास ही पापनगर नामक एक राक्षसों की बस्ती थी। एक दिन राक्षसों ने सभा की और अपने सरदार से कहा कि हमें राजा से कहना चाहिये कि या तो हमें भी भोज में बुलाया करें, अन्यथा हम उस का सब धन छीन लेंगे और उसे मार डालेंगे। जब यह प्रस्ताव राजा के सामने पहुंचा तो उसने कहला भेजा कि हमारे वहां जो लोग भोजन करने आते हैं उन्हें अपने सारे हाथ में पहुँचे से लेकर कंधे तक एक लकड़ी की पट्टी बांधनी पड़ती है। यदि आपको भी यह शर्त स्वीकार हो तो अगले मंगलवार को बड़े शौक से भोज में आइये। राक्षसों ने राजा की शर्त स्वीकार करली।

अगले मंगलवार को राक्षस लोग समय से पहले ही पहुँच गए, और कहा हम देवताओं से पहले आये हैं, इसलिये हम पहले भोजन करेंगे। राजा ने यह बात मान ली । सब राक्षसों के दोनों हाथों पर पट्टी बांध कर आमने-सामने दो पंक्तियों में बैठा दिया गया। पत्तलें परोसी गयीं और जैसे ही उन पर लड्डू आये, राक्षसों ने बिना अन्य भोज सामग्री की प्रतीक्षा किये खाने के लिये हाथ बढ़ाया; परन्तु हाथ मुड़ न सका और मुंह की बजाय सिर की ओर गया। जब एक राक्षस ने हाथ में लड्डू लेकर हाथ आगे किया तो सामने वाले राक्षस ने समझा कि मुझे लड्डू खिला रहा है, इसलिये उसने मुंह चौड़ा कर दिया। पहिले राक्षस ने समझा कि यह मेरा लड्डू हड़पना चाहता है इसलिये उसने दूसरे के मुंह पर तमाचा मारा।

इस प्रकार राक्षस लोग आपस में लड़-भिड़ कर बिना एक ग्रास खाये ही उठ खड़े हुए और कुपित होकर राजा से बोले—"देवताओं को भी इसी प्रकार पट्टी बाँध कर भोजन कराना होगा।"

हुआ भी ऐसा ही । कहने की आवश्यकता नहीं कि एक पंक्ति में बैठे हुए देवताओं ने दूसरी पंक्ति वालों को बड़े आनन्द से भोजन करा दिया और खा-पी कर राजा को धन्यवाद देकर तथा राक्षस लोग अपनी बुद्धि को कोसते हुये अपने २ घरों को चले गये।

कहानी समाप्त करके गुरु जी ने इस कहानी से मिलने वाली शिक्षायें बच्चों को बताईं।

१- देवना लोग बिना बुलाये किसी के घर नहीं जाते । राक्षस मांगा करते हैं ।

२- देव नगर के राजा श्रेष्ठ पुरुषों का आदर करते हैं। पाप नगर में ऐसा नहीं होता ।

३- देव नगर के राजा यथासम्भव युद्ध को टाला करते हैं। वे व्यर्थ के युद्धों से प्रजा की हानि नहीं करते। पाप नगर के राजा बात-बात में युद्ध की धमकी देते हैं।

४- देवता लोग समय का पालन करते हैं। राक्षस लोग उतावले होते हैं।

५- देवता लोग पहिले खिलाते हैं, बाद में स्वयं खाते हैं। दूसरे से सहयोग करते हैं। राक्षस लोग स्वार्थी होते हैं

इतना कहकर गुरु जी ने पूछा—

"देवता बनोगे या राक्षस ?"

सब बच्चों ने जोर से कहा—"देवता" ।

गुरु जी बोले—देवता बनने के लिये तुम्हें स्वार्थ छोड़ना होगा, त्यागी बनना होगा, आपस में प्रेम से रहना होगा । बोलो ऐसा कर सकोगे ?

"सब बच्चे बोले—अवश्य करेंगे ।"

गुरु जी ने कहा····तब तुम्हारी आर्य कुमार सभा अवश्य सफल होगी। देवताओं की सभा ही चला करती हैं। झगड़ालू और स्वार्थी मनुष्यों की सभायें या तो बन ही नहीं पातीं और यदि बनती हैं तो कुछ दिनों बाद टूट जाती हैं। यही दशा देशों की होती है। अब तुम जा सकते हो। एक महीने तक देवता बनने का अभ्यास करो। यदि तुम सफल हुए तो तुम्हारी आर्य कुमार सभा की नींव दृढ़ रहेगी।"

बिच्छू विष चिकित्सा

(लेखक—आचार्य भगवान्‌देव जी गुरुकुल झज्झर रोहतक)

सर्प और बिच्छू के काटने से सर्वसाधारण जनता को बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है, न ही उन्हें औषध का ज्ञान होता है और न ही उनके पास चिकित्सा के साधन हैं, अतः वे चिकित्सा करने में असमर्थ ही होते हैं। सर्प-विष और बिच्छू-विष चिकित्सा पर लिखने का बहुत दिनों से विचार था। अनेक प्रेमियों के बार-बार आग्रह करने पर भी और मेरी इच्छा होते हुये भी अनेक कारणों से इस विषय पर लिख हो न सका। आज "सुधारक" के प्रथम अंक में बिच्छू-विष की चिकित्सा पर लिखने का सौभाग्य मिला है। इसी प्रकार सर्प-विष पर भी लेखमाला लिखने का विचार है, ईश्वर कृपा करें।

बिच्छू के विष की चिकित्सा लिखने से पूर्व कुछ बिच्छुओं के विषय में सामान्य ज्ञान करा देना उचित जान पड़ता है। आयुर्वैदिक ग्रन्थों में तीस प्रकार के बिच्छुओं का वर्णन आता है। सुश्रुत और वाग्भट्ट ने इनको तीन प्रकार की जातियों में विभाजित किया है—

"त्रिविधा वृश्चिकाः प्रोक्ता मन्दमध्यमहाविषाः"
(सुश्रुत अ० ८)

मन्दविषवाले, मध्यविष वाले, महाविषवाले, भेद से तीन प्रकार के बिच्छू होते हैं।

१—मन्द विष वाले

"गोशकृत्कोथजा मन्दाः" (सुश्रुत अ०)

मन्दविष अर्थात् निर्बल और हीन विष वाले जिनकी उत्पत्ति गाय; भैंस आदि के गोबर, मूत्र आदि से तथा घोड़े आदि की लीद से होती है।

"मन्दा द्वादश" (सुश्रुत अ०)

इनकी बारह जातियाँ हैं। गोबर के रंग के पीले, काले आदि अनेक रङ्गों के और लम्बाई में छोटे-छोटे होते हैं किन्तु इन सब का उदर (पेट) श्वेत रंग का होता है। मन्द (निर्बल) विष वाला बिच्छू जब काटता है तब शरीर में पीड़ा, कम्पन, अकड़ना पसीना आना, दंश स्थान को काटने से काले रंग का रक्त (लहू) निकलता है।

२—मध्य विष वाले

"मध्या काष्ठेष्टकोद्भवाः" (सुश्रुत) अ० ८)

जो बिच्छू ईंट पत्थर; चूना लकड़ी आदि से उत्पन्न होते हैं वे मध्य विष वाले होते हैं।

"मध्यास्तु त्रयः" [सुश्रुत अ०]

ये लाल, पीले और कपिल तीन प्रकार के होते हैं। सर्प के मल-मूत्र से भी इनकी उत्पत्ति मानी गई है। इन में प्रायः अधिक नारंगी रंग के होते हैं। मध्य विष वाले बिच्छुओं का पेट धूम्रवर्ण का होता है। इनके काटने से मनुष्य के शरीर में पीड़ा, कम्पन अकड़ाव, तीव्रदाह और सूजना आदि उपद्रव होते हैं। दंशित मनुष्य की जिह्वा सूझ जाती है, गला रुक जाता है, कोई वस्तु अन्दर नहीं जाती। मनुष्य मूर्च्छित हो जाता है, दंशित स्थान से जो रक्त निकलता है वह काले रंग का होता है।

३—महा विष वाले

"सर्पकोथोद्भवास्तीक्ष्णाः ये चाऽन्ये विषसम्भवाः"
(सुश्रुत अ० ८)

महाविषैले बिच्छू सांप के गले-सड़े शरीर या फण से उत्पन्न होते हैं, इसी प्रकार जो अन्य विष से उत्पन्न होते हैं वे भी इसी कोटि में आ जाते हैं।

"पञ्चदशोत्तमाः" (सुश्रुत अ० ८)

ये पन्द्रह प्रकार के होते हैं। महाविषैले बिच्छू लम्बे-लम्बे कृष्ण, श्वेत या काजल के समान अनेक रंगों के होते हैं। इनके विषय में सुश्रुतकार लिखते हैं-

नानारूपा वर्णतश्चापि घोरा
ज्ञेयाश्चैते वृश्चिकाः प्राणचोराः ।
जन्मैतेषां सर्पकोथात्प्रदिष्टं
देहेभ्यो वा घातितानां विषेण ॥

[सुश्रुत अ० ८ श्लोक ६५]

ये तीक्ष्ण विष वाले बिच्छू भयंकर वर्ण वाले अनेक प्रकार के होते हैं इनको मृत्युरूप जानना चाहिये, इनकी उत्पत्ति सर्प के गले सड़े शरीर से तथा विष के कारण मरे हुए प्राणियों के शरीर से होती है। इन महा विषैले बिच्छुवों के काटने से जो दुर्गति दंशित मनुष्य की होती है उसके विषय में महाराज धन्वन्तरी जी सुश्रुत में लिखते हैं—

एभिर्दष्टे सर्पवेगप्रवृत्तिः
स्फोत्पत्तिर्भ्रान्तिदाहौ ज्वरश्च ।
खेभ्यः कृष्णं शोणितं याति तीव्रं
तस्मात् प्राणैस्त्यज्यते शीघ्रमेव ।

[सुश्रत अ०८ श्लोक ६६]

इन तीक्ष्ण विष वाले बिच्छुओं के काटने से सर्प के काटने के समान वेगों की प्रवृत्ति होती है, बड़े बड़े स्फोटों [फोड़ों] की उत्पत्ति, मूर्छा, दाह, तीव्र ज्वर आदि उपद्रव खड़े हो जाते हैं। दंशित मनुष्य की जिह्वा तुरन्त सूख जाती है, शरीर के सब अङ्ग और ज्ञानतन्तु चेतना रहित होकर ज्ञानेन्द्रियाँ तक अपना कार्य छोड़ देती हैं, मुख नासिका आदि छिद्रों से कृष्णरक्त निकलता है, सारा शरीर निर्जीव सा हो जाता है। ऐसे विषैले बिच्छू का विष अग्नि के समान भयङ्कर दाह करता हुआ अत्यन्त तीव्र वेग से ऊपर को चढ़कर सारे शरीर में फैल जाता है। यदि ऐसा बिच्छू किसी मनुष्य के नाक, जिह्वा, हृदय स्थान पर काट जाये तो उसके शरीर का मांस गल-गल कर गिरने लगता है। ऐसे बिच्छू के काटने पर प्राणी प्राणों से हाथ धो बैठता है। ऐसे बिच्छू का काटना तो मृत्यु का सन्देश ही है। एक इसी प्रकार के बिच्छू के काटने की घटना निम्न प्रकार से है।

एक पर्वतीय (पहाड़ी) स्थान पर एक यात्री के पीछे एक मस्त हाथी लग गया, उसने उससे बचने वा छुपने के अनेक यत्न किये किन्तु हाथी पीछे ही लगा रहा, ईश कृपा से भागते भागते एक पक्की कुटिया सन्मुख आगई। वह उसमें घुस गया। हाथी द्वार पर खड़ा हो गया और इसके बाहर निकलने की प्रतीक्षा करने लगा, कुछ समय पीछे कुटीर के द्वार पर ही बठ गया। उस कुटी के कोने में एक अत्यन्त भयङ्कर विषैला बिच्छू था, वह ईश कृपा से हाथी की ओर चला गया। और हाथी को डंक मारा। हाथी वहीं बैठा का बैठा ही रह गया। यात्री को हाथी के मरने का ज्ञान न हुआ, वह भय के मारे एक दो दिन भूखा प्यासा कुटी में पड़ा रहा। किन्तु कुटी के द्वार पर हाथी को निश्चेष्ट (गति रहित) देख कर यात्री विचारने लगा कि हाथी चुप चाप कैसे बैठा है। ध्यान से देखने पर उसे निश्चय हो गया कि हाथी मर गया। उसने बाहर निकलने के लिए एक पैर हाथी पर रख कर बाहर निकलना चाहा, किन्तु उसका वह पैर हाथी के अन्दर जङ्घा तक चला गया, और साथ ही साथ उसके पैर के मांस और हड्डियाँ आदि बिच्छू के विष के कारण गल कर पृथक् पृथक् हो गई। अर्थात् पैर गलकर हाथी की भाँति समाप्त होगया। इस प्रकार के भयंकर बिच्छू प्रायः पर्वतीय स्थानों पर ही अधिक होते हैं।

बिच्छू के काटने के लक्षण

दहत्यग्निरिवादौ तु भिनत्तीवोर्ध्वमाशु च ।
वृश्चिकस्य विषं याति दंशे पश्चात्तु तिष्ठति ॥

(चरक०चि० अ० २३ श्लो० १४६)

किसी भी प्रकार का बिच्छू काटे आरम्भ में बिच्छू का विष अग्नि के समान दाह (जलन) और भेदन (हड्डी टूटने के समान ऐसी भयंकर असह्य पीड़ा) उत्पन्न करता है कि दंशित मनुष्य, "बिच्छू का काटा रोवे" इसके अनुसार दुखी होकर रो ही पड़ता है वह विद्युत् के समान तीव्र गति से शीघ्र ही ऊपर की ओर चढ़ता तथा फैलता चला जाता है किन्तु पीछे दंश (काटने) के स्थान पर आ कर ठहर जाता है।

असाध्य बिच्छु दष्ट के लक्षण

दष्टोऽसाध्यस्तु हृद्घ्राणरसनोपहतो नरः ।
मांसैः पतद्भिरत्यर्थं वेदनार्तो जहात्यसून् ॥
(चरक० चि० अ० ३३ श्लो० १५०)

जब प्राणहा बिच्छु के काटने पर हृदय. नाक और जिह्वा अपना अपना कार्य छोड़ देते हैं। मांस (गलकर) गिरने लगता है और दंशित मनुष्य भयंकर वेदनाओं से पिड़ित होकर प्राणों से हाथ धो बैठता है।

बिच्छू दंश से बचने के उपाय

(१) जो लोग पर्याप्त मूली और खीरा खाने के अच्छे अभ्यासी हैं बिच्छु उनको सर्वथा नहीं काटता। जिन स्थानों पर बिच्छु अधिक रहते हैं और उनके काटने का भय रहता हो वहां के निवासियों को मूली और खीरा खूब खाना चाहिये।

(२) एक बिच्छु को पकड़ कर घर में दबा दिया जाये तो घर में रहने वाले सब बिच्छू भाग जाते हैं।

(३) मूली का छिलका, पत्ते अथवा रस बिच्छु पर डालने से बिच्छु तुरन्त मर जाता है।

(४) यदि किसी मनुष्य को कैसा भी बिच्छु काट खाये तो सर्व प्रथम तुरन्त ही डंक के स्थान से ऊपर और नीचे की ओर किसी सुदृढ़ रसी से बन्ध लगाइये। जिससे विष शरीर के रक्त में प्रविष्ट वा संचारित न हो सकेगा।

(५) यदि बिच्छु ने ऐसे स्थान पर काटा हो कि जहां पर बन्ध न लग सके तो तुरन्त ही दंश के स्थान को काट कर माँस निकाल डालें।

(६) डंक स्थान पर पछने लगाकर चूसने से भी विष निकल जाता है किन्तु सांप व बिच्छु का विष खींचने वालों को निम्नलिखित सावधानी करनी चाहिए—

१—विष चूसने वाले मनुष्य के मुख, गले और तालु में कोई घाव न हो।

२—दांतों तथा मसूढ़ों में कोई रोग न हो।

३—मुख में घी चुपड़ कर बिष चूसना चाहिए।

४—चूस कर तुरन्त ही थूक दें और घी मुख में चुपड़ लें। बिच्छु के काटने की आयुर्वेदीय शास्त्रों के अनुसार चिकित्सा अपने तथा अनेक वैद्यों के अनुभूत योग व औषध आपकी सेवा में निवेदन करता हूं।

शास्त्रीय-चिकित्सा

चरक शास्त्र में लिखा है—

वृश्चिक के स्वेदमभ्यङ्ग घृतेन लवणेन च।
सेकांश्चोष्मान प्रयुञ्जीत भोज्यं पानं च सर्पिषः
(चरक० चि० अ० श्लोक १७२)

(१) बिच्छु के दंश पर स्वेद (पसीना) दिलावें। घी और सैंधा नमक मिलाकर मर्दन करना, संधा नमक और घी मिला कर परिषेचन (सेक) करना चाहिए। खान पान में घी का अधिक उपयोग करें। घृत गाय का हो तो सोने पर सुहागा है। इसी प्रकार अन्य ग्रन्थों में भी लिखा है।

२—वृश्चिकविषहरासव

निम्बू कागजी का रस आध सेर, एक पाव नृसार (नौसादर) शुद्ध मधु [शहद] आठ तोले और तीन छटांक मैथेलिटिड स्पिरिट, सबको मिला कर एक बोतल में भर दो-तीन दिन तक बार बार हिला दिया करें, कुछ दिन पीछे निथरा हुआ आसव किसी दूसरी बोतल में भर दें। यह विचित्र प्रभावशाली रामबाण औषध बिच्छु विष को तुरन्तदूर करती है। जिस स्थान पर बिच्छु ने काटा हो रूई के फाहे से तर करके उस स्थान पर लगादें, तुरन्त ही दाह, वेदना [पीड़ा] दूर होगी रोगी प्रसन्न हो जायेगा।

[३] एक चौडे मुख की बोतल में स्प्रिट डाल लें और जो भी बिच्छु मिले उस पर लगी हुई मिट्टी आदि को साफ करके उसे जीवित ही बोतल में डाल लें और बन्द करदें, ऐसे ही बिच्छु डालते जायें बिच्छु तो स्प्रिट में डालते ही तत्क्षण मरते जायेंगे, किन्तु बिच्छु के काटे पर इस स्प्रिट फाये के लगा देने से रोता हुआ हंसने लगता है। अच्छी औषध है।

[४] इमली के बीज के नाकू के सिरे को काट कर कुछ घिस कर उस बीज को काटे हुए पर चिप-

का देवें, अथवा पानी के साथ पीसकर लेप कर दें। विष उतर जायेगा।

(५) बिच्छु के काटे पर काशीफल [पेठा] के डण्ठल [नाकू] को घिस कर लगाने से तुरन्त लाभ होता है।

[६] जयपाल [जमालघोटा] की गिरी को पानी में घिस कर कई बार लेप करने से लाभ होगा।

[७] मोर के पङ्खों के चन्दों का (ऊपर के सुनहरी भाग के चारों ओर का) हरा हरा भाग लेकर थोड़ा स चिलम में रख पीवें उससे तुरन्त लाभ होता है।

[८] यदि रोगी को प्यास व गर्मी अधिक सतावे तो मिश्री का ब्राह्मी शरबत पिलायें, शीतल जल से स्नान करायें, पङ्खे से वायु करें, नमक सैंधा गोघृत का मर्दन करें।

९. बिच्छु के काटे स्थान पर १—बारीक पिसा हुआ नमक पानी में मिलाकर व खाण्ड [बूरा] पानी में मिलाकर अथवा नसार "नौसादर" पानी में घिस कर गाढा लेप करने से लाभ होता है। लेप चार पांच बार कुछ समय ठहर ठहर कर करें। साधारण बिच्छु की अच्छी औषधि है।

१०. नौसादर तथा हरताल को समान भाग में लेकर जल में घिस कर लेप करने से बिच्छु का विष नष्ट होता है।

११. फिटकरी को पिघला कर किसी तेल से चुपड़े हुए पात्र में डालकर टिकिया बना लें। फिर अवसर पड़ने पर दीपशलाका वा अग्नि से पिघला कर काटे हुए स्थान पर लगायें, तुरन्त लाभ होगा।

१२. तुलसी की जड़ को जल में घिसकर लगाने से बिच्छु का विष दूर होता है।

१३. बिच्छु के काटने पर अपामार्ग (लटजीरा) अमृत के समान कार्य करता है। जड़ पत्तों सहित उखाड़ कर जल में बारीक पीस कर डंक मारे हुए स्थान पर गाढ़ा लेप कर देवें और अग्नि से सेक कर सुखा देवें। विष उतर जावेगा। यदि विष ऊपर तक चढ़ गया हो तो अपामार्ग की मूल से रगड़ रगड़ कर विष को ऊपर से डंक मारे स्थान पर ले आवें फिर उस पर लेप आदि करें। अपामार्ग की लकड़ी को भी हाथ में लेने से लाभ होता है।

१४. सुहागा और अपामार्ग की जड़ दोनों बारीक घिस कर जल में मिला कर लेप करें तथा सेकें लेप सूखने पर उतार दें फिर दूसरा लेप करें तथा पुर्ववत् सूखने तक अग्नि से सेक कर यदि आराम न हो तो इस प्रकार लेप करते चले जायें।

१५. सफेद फूल की कनेर की जड़ को पानी में पीस कर लेप करें लाभ होगा। यदि सफेद कनेर न मिले तो लाल की जड़ ले लेवें।

१६. पुनर्नवा लाल सांठी के पंचाङ्ग को लेकर जल में बारीक पीसकर काटे हुए स्थान पर लेप करें और अग्नि से सेकें। जब तक पूर्ण लाभ न हो कई बार बदल बदल कर लेप करें, बड़ी अच्छी औषधि है।

१७. पुराने आक (जिस पर फूल फल लगे हों) की मोटी जड़ तथा अपामार्ग की जड़ रोगी के हाथ में रखवाकर बलपूर्वक मुट्ठी बन्धवायें, विष उतर जायेगा

१८. आक के दूध को भी काटे हुए स्थान पर बार बार लगाने से लाभ होता है। यदि आक के दूध में पलाश (ढाक) के बीज घिस कर लगायें तो बहुत लाभ होगा।

१९. मूली के पत्तों का रस काटे हुए पर बार बार लगाने से लाभ होगा।

२०. आक के पत्तों के रस का नस्य रोगी को दें, छींक आने पर विचित्र लाभ होगा।

२१. बिच्छु के काटे स्थान पर टिंचर लगाने से भी लाभ होता है। इसी प्रकार कारबोलिक एसिड लगाना भी लाभदायक है।

२२. काटे स्थान पर चाकू आदि से थोड़ा घाव करके पुटाशियम परमगनेट (लाल दवाई जो कुएँ में डालते हैं) भर देने से सर्प और बिच्छु का विष दूर होता है।

(क्रमशः)

हमारे अष्ट रत्न

१—स्वामी दयानन्द और गोरक्षा— मू० छः पैसे, प्रचारार्थ ७) सैंकड़ा। (मोटे अक्षर—२४ पृष्ठ) गो-रक्षा आन्दोलन को तीव्र गति देने एवं महर्षि दयानन्द का गो-रक्षा सम्बन्धी वास्तविक दृष्टिकोण जनता के समक्ष रखने के लिये इसका प्रचार करना प्रत्येक संस्था एवं गो-भक्त का कर्तव्य है।

२—ब्रह्मचर्य रक्षा के साधन--ब्रह्मचर्य रक्षा के साधनों को भलीभांति समझाने के लिये आचार्य भगवान्‌देव जी ने इस नाम से एक ग्रन्थ माला लिखनी आरम्भ की है जोकि ग्यारह भागों में समाप्त होगी। इसके प्रथम एवं द्वितीय संयुक्त भाग में प्रातः जागरण, चक्षुःस्नान, ऊषःपान तथा शौच आदि के महत्त्व तथा प्रकार। तृतीय भाग में दाँतों की उपयोगिता, उनको पुष्ट बनाने की विधि, दन्त रोगों के निवारणार्थ अनेक प्राकृतिक एवं औपचारिक साधनों तथा पंचम भाग में स्नान का समय, स्थान, एवं वास्तविक विधि और संध्या की उपयोगिता तथा यज्ञ आदि पर सप्रमाण प्रकाश डाला गया है। मूल्य क्रमशः ।-), ≡), ।=) है। शेष भाग भी यथा समय प्रकाशित होंगे।

३ संस्कृताङ्कुर—मूल्य १।) लेखक स्वामी वेदानन्द जी 'तीर्थ'। यह संस्कृत सीखने वालों के लिये अपूर्व पुस्तक है। यह इस प्रकार से लिखी गई है कि हिन्दी पढ़ा-लिखा व्यक्ति इसे पढ़कर बिना किसी विशेष सहायता के संस्कृत सीख सकता है। इसमें रटंत की भी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती।

तथा संस्कृत कथामंजरी मूल्य ।-)

४ मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प (सजिल्द मूल्य २।।) ले० श्री स्वामी आत्मानन्द सरस्वती। योग अभ्यासियों, विद्यार्थियों एवं ईश्वर-भक्ति मार्ग के पथिकों के लिये यह अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है। पहला संस्करण हाथों-हाथ समाप्त हो गया था। अब यह द्वितीय परिवर्धित एवं संशोधित संस्करण निकाला गया है। भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की सिद्धान्त वाचस्पति परीक्षा में निर्धारित, पृ० ३३४

केवल कुछ प्रतियां शेष हैं।

५ वैदिक गीता—सजिल्द मू० ३)

ले० श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती।

श्रीमद् भगवद्‌गीता पर सर्व सुन्दर एवं अद्वितीय भाष्य। शुद्ध वैदिक दृष्टिकोण से एक मात्र भाष्य। सुन्दर दुरंगी छपाई, परिवर्धित एवं संशोधित तृतीय संस्करण। जन्मष्टमी पर भेंट करने योग्य।

६ हितैषी की गीता—मू० ॥।) इसमें भगवद्‌गीता के श्लोकों का सुन्दर एवं सरस हिन्दी दोहों में अनुवाद है। अक्षर मोटे और सरल होने के कारण यह सर्व साधारण के लिये अत्यन्त उपयोगी हो गई है।

७ महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी— (सजिल्द) मूल्य २) ले० पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति। इस युग में दो ऐसे महापुरुष हुए हैं जिनकी धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विचारधारा ने युग का निर्माण किया है। अनेक अंशों में जहां ये दो महापुरुष—ऋषि दयानन्द और महात्मा गांधी—एक मत थे वहां कुछ एक बातों में उनका परस्पर भेद भी था। इन दोनों के विचारों की समता एवं भेद को जाने विना वर्तमान राजनीति को समझना कठिन है। इस पुस्तक में लेखक ने दोनों महात्माओं के धर्म, समाज, तत्वज्ञान तथा राजनीति-विषयक विचारों की निष्पक्ष रूप से तुलना की है।

८ विदेशों में एक साल मूल्य २।) -लेखक स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज। अनेक चित्रों से आभूषित इस पुस्तक में श्री स्वामी स्वतंत्रानन्द जी महाराज द्वारा की गई मारीशस, टांगानिका, केनिया, यूगैंडा आदि देशों की यात्रा का विशद विवरण सरल एवं रोचक भाषा में दिया गया है। इन देशों की धार्मिक, राजनीतिक और सामाजिक अवस्था, वहां पर भारतीय संस्कृति का प्रचार एवं उसकी रक्षार्थ किये गये संघर्ष का वर्णन दिया गया है। एक बार आरम्भ करने पर पुस्तक छोड़ने को मन नहीं चाहता।

वैदिक साहित्य सदन, आर्य समाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली।

हमारी बहुमूल्य औषधियाँ

दशमूलारिष्ट [कस्तूरियुक्त]

मूल्य बड़ी शीशी ४)   छोटी शीशी २।)

यह आयुर्वेद शास्त्र की अत्यन्त प्रसिद्ध और अद्वितीय औषध है। यह प्रसूता स्त्री (जच्चा) के सभी रोगों अर्थात् ज्वर, अतिसार, (दस्त) कास (खांसी), उदर पीड़ा आदि को दूर करता है और इस में कस्तूरी आदि बहुमूल्य औषध मिलाने से बहुत गुण बढ़ाने में सोने पर सुहागे का काम किया है। इसके प्रयोग से स्त्रियों के हिस्टिरिया, मूर्छा आदि रोग दूर होते हैं। इसका सेवन पुरुषों के बल वीर्य आदि को बढ़ाता है। सर्व प्रकार की शारीरिक और मस्तिष्क की निर्बलता को दूर भगाता है। हृदय को शक्ति देता और नपुंसकता को दूर करता है। जब रोगी निर्बलता के कारण शीतल (ठंडा) पड़ जाता है और उसकी नाड़ी छूट जाती है तब इस के प्रयोग से शरीर तुरन्त गरम हो जाता है और नाड़ी ठीक चलने लगती है। यहां तक कि चतुर वैद्य सभी प्रकार के वायु, कफ और मस्तिष्क के रोगों और विकारों के नाश के लिये प्रयोग कर सकता है।

वृहद् योगराज गूगल

यह वात रोगों के लिये रामवाण औषध है, जोड़ों का दर्द, गठिया, अर्धाङ्ग, लकवा रींगन वाव, हाथ पैरों का कांपन, पीठ, जांघ आदि की पीड़ा, हाथ पांवों का सूखना आदि वायु के रोगों को दूर करने के लिए इसके समान कोई औषध नहीं है।

अर्श रोगामृत

यह औषधि सब प्रकार के अर्श (बवासीर) के लिए रामबाण का काम करती है। हमारी रसायनशाला में इसे तैयार करने के लिए कई मास तक भरसक प्रयत्न किया गया है। इसकी तीन चार मात्रा के सेवन मात्र से ही खून का आना तो तुरन्त बन्द हो जाता है। यह औषधि जादू के समान तुरन्त प्रभाव दिखाती। प्राचीन आयुर्वेद का इसे चमत्कार कहना चाहिए। संसार में इससे बढ़कर अर्श के लिए कोई औषधी नहीं। सेवन विधि—

एक से दो गोली तक प्रातः सायं धारोष्ण दूध के साथ सेवन करें यदि कोष्टबद्धता (कब्ज) के कारण मल त्यागते समय रक्त आता है तो गोली लेते समय एक तोले से दो तोले तक इसबगोल के साथ मिला कर सेवन करें।

मूल्य एक मास के लिए १०) दस रु०

महा त्रिफलादि घृत

यह घृत आंखों के लिए अत्युत्तम है इसकी जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है, यह आंखों के समस्त रोगों के लिए रामबाण है। इसके सेवन से नेत्रों का कोई भी रोग नहीं रहता। इससे रतौंधी, आंखों की खुजली; पानी जाना, धुंध-जाला इत्यादि सब दूर होते हैं, आंखें निर्मल हो कर चमकने लगती हैं। सौ वर्ष तक नेत्र ज्योति नवयुवकों के समान बनी रहती है। मोतियाबिन्द को भी लाभदायक है। आखों के छोटे बड़े सब रोगों को हितकारी है।

मूल्य आधपाव ४) एक सेर ३२)

महा नारायण तैल

इसकी मालिस से रिंगन बाव, अधरङ्ग, जबड़े का जकड़ना, वायु से हाथ पैर आदि किसी अङ्ग का सूखना, कमर की पीड़ा वा जकड़ना, अण्ड वृद्धि अण्ड कोष वा जल का उतरना, सिर की तीव्र पीड़ा, पसलियों का दर्द लूलापन-गठिया, लकवा आदि सभी वातज रोगों का नाश होता है।   मूल्य……………

ब्राह्मीघृत

यह घृत आयुर्वेद शास्त्र की विधि के अनुसार बनाया गया है। इसका सेवन कुष्ट (कोढ़) मृगी (हिस्टीरिया) मस्तिष्क की निर्बलता, चक्कर आना, याद किये हुये पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है और जिसकी स्मरण शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिये श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी, दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष सब प्रकार के धातु प्रमेह को दूर करता है, इसके सेवन से स्मरण शक्ति खूब बढ़ती है।

मल्य आध पाव ४) एक सेर ३२)

रोहतक में मिलने का पता—

गुरुकुल फार्मेसी – रेलवे रोड, (रोहतक)

देहली में मिलने का पता—

"नवजीवन संचारक कम्पनी"

आर्य समाज—सीताराम बाजार देहली।

दादरी में मिलने का पता—रेलवे रोड डालमिया दादरी वैद्य सोमवीर आर्य चिकित्सालय।

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी), गुरुकुल झज्जर रजिस्टर्ड (रोहतक)

आसनों......के......व्यायाम

(लेखक—भाष्याचार्य ब्रह्मचारी वेदव्रत, सिद्धान्त वाचस्पति गुरुकुल झज्जर रोहतक)

आसनों के विषय में लोगों को अनेक भ्रम वा शंकायें हैं। आसन करना तो प्रायः आज-कल के पढ़े लिखे सभ्य मूर्खता समझते हैं। इनका प्रचार स्वयमेव बहुत न्यून है। किसी किसी स्थान पर किसी महात्मा के सत्संग से यदि कोई नर या नारी आसन करना प्रारम्भ कर देता है तो वहां पर रहने वाले उपहास तथा उसका विरोध करते हैं, और उस के नवअंकुरित उत्साह रूपी पादपपौदे को वहीं पर समाप्त कर देते हैं, यह कितने दुःख की बात है। इसे अज्ञानता कहें अथवा धृष्टता, यह हानिप्रद है। इसीलिये मैंने आसनों के विषय में कुछ शब्द लिखने की आवश्यकता समझी।

आसन कोई नई वस्तु नहीं हैं, यह तो चिरकाल से ऋषि मुनियों द्वारा आविष्कृत किये चले आ रहें हैं। प्राचीन समय में इनका प्रचुर प्रचार था। मध्यकाल में इनके प्रचार में ह्रास हो गया। तभी से इनके विषय में विविध भ्रम उत्पन्न हो गये।

व्यायाम के सम्बन्ध में संसार के उन्नत देश आज बहुत आगे हैं, वे व्यायाम से स्वास्थ्य को उन्नत करके ही उन्नत हुए हैं। व्यायाम का उद्देश्य एक ही है अर्थात् सुन्दर स्वास्थ्य की प्राप्ति। पुनरपि व्यायाम के सम्बन्ध में सभी देशों में भिन्न-भिन्न प्रणालियाँ प्रचलित हैं। व्यायाम का प्रचार सभी देशों में है, किसी में अधिक और किसी में न्यून। जो देश स्वास्थ्य और व्यायाम में जितना आगे है वह उतना ही उन्नत, समृद्धिशाली स्वस्थ और बलवान् है।

भारत ने अपने प्राचीन काल में शरीर शास्त्र में जितनी उन्नति और दक्षता प्राप्त की थी वह भारत के पूर्वजों के प्राचीन इतिहास रामायण और महाभारत को पढ़ने से स्वयमेव प्रतीत हो जाती है। इसी लिये भारतीयों का चक्रवर्ती साम्राज्य था। क्योंकि उनके अन्दर शूरता, बल, वीर्य ओज और साहस कूट-कूट कर भरा हुआ था। उसी समय सब देशों के मनुष्य यहाँ आकर विविध विद्यायें पढ़ते थे। मनु जी लिखते हैं: —

> एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
> स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

इस देश भारत के ऋषियों के चरणों में बैठ कर भूमण्डल के सभी मनुष्य शिक्षा ग्रहण करते थे। सभी देश इसकी ओर आँख उठाकर देखते हुए काँपते थे। अतः एव यही भारतवर्ष सोने की चिड़िया कहलाता था और विदेशी मनुष्य यहाँ पर जन्म लेना भी अपना अहोभाग्य समझते थे और मृत्यु के समय ईश्वर से प्रार्थना करते थे कि हे परमात्मा यदि मुझे जन्म दे तो भारतवर्ष में देना। जब से यहां पर व्यायाम का अभाव हुआ है तभी से दुःख—दारिद्र्य और परतन्त्रता का साम्राज्य हुआ है।

भारत का एक-एक अनुभव, एक-एक विवेचना आज तक संसार को चकित कर देती है। शरीर के सम्बन्ध में आज तक संसार में उन्नत कहे जाने वाले देशों ने जो अनुभव किये हैं वे सभी बहिरंग [बाहरी] हैं, किन्तु भारतीयों ने बहिरंग उन्नति के साथ-साथ शरीर के सूक्ष्म से सूक्ष्म अवयवों के विवेचन, परिमार्जन और उनकी पुष्टि के साधनों का भी आविष्कार किया था, उन्हीं में से आसनों का व्यायाम भी एक साधन है।

पाश्चात्य देशों में जितनी भी व्यायाम-प्रणालिया हैं वे सभी शरीर के बाहर के भागों के लिये हैं और उनमें रगों तथा मांसपेशियों के बनाने पर ही अधिक बल दिया गया है। परन्तु उन प्रणालियों से मानव के आभ्यन्तर अङ्ग परिपुष्ट और स्वस्थ नहीं होते। भारतीय प्रणालियों में बाह्य तथा आभ्यन्तर दोनों प्रकार के अंगों को नीरोग और परिपुष्ट करने पर विशेष ध्यान दिया गया है।

बाहरी अंगों की पुष्टि और साधन से बल की वृद्धि हो सकती है, शरीर सुघटित हो सकता है, शरीर सुन्दर भी हो सकता है, किन्तु पूर्ण स्वास्थ्य और आरोग्यता की प्राप्ति नहीं हो सकती। भीतर के अंगों का परिमार्जन और भली भांति परिचालन ही स्वास्थ्य का वास्तविक स्वरूप है।

भारतीय व्यायामों के दो स्थूल भेद

भारतीय व्यायामों को दो बड़े भागों में विभाजित किया गया है, दोनों का उद्देश्य एक ही है—शारीरिक उन्नति, परन्तु दोनों के कार्य पृथक्-पृथक् हैं। उन दो प्रकार के व्यायामों में पहला आसन तथा दूसरा सीधा व्यायाम के नाम से व्यवहृत होता है।

आसनों का कार्य है शरीर को निर्मल, नीरोग, लचकदार और कान्तियुक्त करना तथा रोग के कारणों को दूर करके शारीरिक उन्नति करना। शरीर पर आसनों के भी दो प्रकार के प्रभाव होते हैं, पहला प्रभाव शरीर को रोग रहित करता है और दूसरा शरीर को पुष्ट तथा बलवान् बनाता है।

स्वास्थ्य का अर्थ है शारीरिक तथा मानसिक उन्नति, नीरोग जीवन और बल की प्राप्ति। उपर्युक्त सभी लाभ आसनों से होते हैं, अतः आसनाभ्यासी मनुष्य पूर्ण स्वस्थ रह सकता है। अन्य व्यायामों की तुलनात्मक विवेचना में आसनों का स्थान बहुत ऊँचा है। ऊपर की पंक्तियों में स्वास्थ्य के तीन स्वरूप बतलाये हैं, व्यायाम से केवल दो की ही प्राप्ति होती है किन्तु आसनों से तीन की प्राप्ति होती है।

व्यायाम का प्रत्यक्ष प्रभाव शारीरिक उन्नति और बल की प्राप्ति में होता है, किन्तु शरीर को नितान्त नीरोग नहीं बनाता। आसनों का प्रत्यक्ष प्रभाव शरीर को नीरोग करने में पड़ता है और अप्रत्यक्ष रूप से शारीरिक उन्नति भी होती है, जो कि श्रद्धापूर्वक सुदीर्घ काल के निरन्तर अभ्यास के पश्चात् प्रतीत होती है। यदि हम आनन्दमय जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, रोग तथा वैद्य और डाक्टरों से छुटकारा पाना चाहते हैं, दीर्घायु पाना चाहते हैं, मानसिक शक्ति को विकसित करना चाहते हैं और चाहते हैं साधारण बल का सञ्चय, तो आसनों से अधिक उपयोगी साधन या वस्तु संसार में आज तक किसी के पास नहीं है।

स्वतन्त्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति देशरत्न श्री डा० राजेन्द्रप्रसाद जी आसनों के विषय में लिखते हैं—

'मैंने यह भी देखा कि सभी जगह पर न केवल शिक्षालयों में बल्कि अन्य संथाओं में भी खेल पर आज बहुत जोर दिया जाता है। और उनके प्रोत्साहन के लिए बहुत आयोजन किए जाते हैं। यह अच्छी चीज है। और मैं इसकी शिकायत नहीं करता हूँ। इन खेलों से कुछ शरीर अच्छा रहता है और लोगों में एक साथ मिलकर काम करने की आदत पड़ती है, तथा उनके मन पर और चरित्र पर भी असर पड़ता इसलिए वह ठीक है।

मगर हम चाहते हैं कि इस पर ध्यान रखा जाये कि इन खेलों में से कई खेल ऐसे हैं जिनको पीछे लोग छोड़ देते हैं तो शरीर पर उसका बुरा असर पड़ता है। इसलिए कुछ ऐसी चीज भी बच्चों को देनी चाहिए जिससे उनके शरीर पर, उनके जीवन के अन्तिम समय तक बुरा असर नहीं पड़े और जिससे वे अपना स्वास्थ्य भी ठीक रख सकें। मैंने जहां तक सोचा है और देखा है, मैं समझता हूँ कि आसन की पद्धति, जो हमारे देश में प्रचलित थी, उससे शरीर और स्वास्थ्य बना रहता है और साथ ही उसमें खर्च भी नहीं है, और उसमें कोई ज्यादा आयोजन की जरूरत नहीं है और उससे चरित्र पर और विशेष करके अपने मन को संयमित रखने में बहुत असर पड़ता है।

इसलिए मैं चाहूँगा कि बच्चों को खेल-कूद में

प्रोत्साहन दिया जाय, मगर ऐसा भी, कुछ प्रबन्ध कर दिया जाय कि प्रतिदिन सवेरे दश मिनट, पन्द्रह मिनट इन से आसन करा लिया करें, तो मैं समझता हूँ कि उसमें उनका शरीर और स्वास्थ्य ठीक रहेगा और उनका मन भी काबू में आजायेगा, और जो मन की चञ्चलता रहती है, वे उसे बहुत कुछ वश में कर लेंगे।

इसलिए मैं चाहता हूं कि विद्यालयों में जितने आयोजन होते हैं, उनमें आसन को भी सम्मिलित करने का प्रयत्न करें और उसमें अगर प्रोत्साहन की जरूरत हो तो प्रोत्साहन भी दें। जिस तरह अन्य विषयों के लिये इनाम बांटे जाते हैं, और बच्चों को प्रोत्साहन दिया जाता है, उनमें अगर हम आसन को भी शरीक करेंगे तो हम देखेंगे कि इसका कितना अच्छा असर शरीर पर होता है। यह ऐसी चीज है जो करने योग्य है। इसलिए मैंने देश के सामने रख दिया है।"

(कल्याणपृ० २३,२४ बालक अंक १९५३ जनवरी

आसनों का अभ्यासी सुदीर्घजीवी और कर्मवीर हो सकता है। परन्तु प्रसिद्ध पहलवान नहीं हो सकता इसी प्रकार व्यायामशील व्यक्ति अधिक से अधिक शक्ति सम्पन्न और पहलवान बन सकता है परन्तु पूर्ण स्वस्थ, सुदीर्घजीवी और आत्मबली नहीं बन सकता। जीवन की असाधारण अवस्थाओं में आसन तथा अन्य व्यायामों के सम्बन्ध में यही अन्तर हो जोता है।

स्वास्थ्य का साधारण और असाधारण जहां तक सम्बन्ध है आसनों के द्वारा उसकी सर्वोत्तम पूर्ति हो जाती है, परन्तु जहां पर असाधारण बल का सम्बन्ध आ जाता है यहां अन्य व्यायाम करना परमावश्यक हो जाता है। ऐसी अवस्था में दोनों के प्रयोग और उपयोग की अवश्यकता हो जाती है। अतः दोनों ही करने आवश्थक हैं।

आसन तथा अन्य व्यायाम

आसन और अन्य दण्ड बैठक आदि का व्यायाम दोनों ही साथ साथ करने हों तो पहले आसन करने चाहियें और आसनों में भी सर्वप्रथम शीर्षासन करना चाहिए, तत्पश्चात् अन्य व्यायाम करना चाहिए। आसन करने का सर्वोत्तम समय प्रातः काल शौचादि से निवृत्त होने के उपरान्त है। प्रातःकाल हल्का आसन आदि का व्यायाम करने से पढ़ने वाले विद्यार्थियों तथा मस्तिष्क का कार्य करने वाले को आलस्य भी नहीं आता। किन्तु प्रातःकाल शरीर भली भांति मुड़ता नहीं, क्योंकि रात्रि में सोने के कारण अकड़ जाता है, इसलिये जिन आसनों में अधिक मुड़ने की आवश्यकता पड़ती है वे आसन सायं काल करने चाहियें। कुछ दिन के अभ्यास के पश्चात् वे प्रातः काल भी किये जा सकते हैं।

अतः प्रातः काल आसन, साधारण दण्ड तथा बैठक और दौड़ने का व्यायाम करना उचित है और सायंकाल कठिन व्यायाम दण्ड बैठक (कुश्ती) मल्लयुद्ध मुग्दर आदिका करना अतीव लाभप्रद है, क्योंकि शरीर के श्रान्त हो जाने से रात्रि में गाढ़ निद्रा आयेगी जिससे वीर्य सम्बन्धी रोग भी न होगा। "आम्राश्च सिक्ताः पितरश्च प्रीणिताः" के अनुसार शरीर भी सुघटित होगा और ब्रह्मचर्य की रक्षा भी होगी।

आसन तथा योग

आसन साधारण वस्तु नहीं है। अष्टांग योग में महर्षि पतञ्जलि जी महाराज ने आसन को तीसरा अग माना है। वे योगदर्शन में लिखते हैं—

"यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि" (यो० द० साधन पाद सूत्र २९)

१ यम २ नियम, ३ आसन, ४ प्राणायाम. ५ प्रत्याहार ६ धारणा, ७ ध्यान ८ समाधि ये आठ योग के अंग हैं। आसन की सिद्धि के बिना प्राणायाम आदि अन्य अगों की भी सिद्धि नहीं हो सकती, अतः पहले आसन की सिद्धि अत्यावश्यक है।

आसन का लक्षण करते हुए महर्षि पतञ्जलि लिखते हैं—' स्थिरसुखमासनम्" [साधनपाद सू-४६] जिसमें स्थिर सुख की प्राप्ति हो अथवा जिसमें निश्चेष्ट सुख-पूर्वक बैठ सकें। प्राणायामादि में बाधा न हो वह आसन है और आसन की सिद्धि का फल —

"ततो द्वन्द्वानभिघातः" (सा० ४८) आसन की सिद्धि हो जाने से सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास आदि द्वन्द्वों का अभिघात नहीं होता अर्थात् सर्दी-गर्मी आदि द्वन्द्व उसकी कुछ भी हानि नहीं कर सकते।

आसनों का कितना विशाल महत्व है—यह योग दर्शन के सूत्रों से स्वयमेव प्रकट हो जाता है। आसनों से मन की चञ्चलता नष्ट होती है तथा मन पर विजय प्राप्त की जाती है, अतएव यह आसन योग का अंग हैं और योगासन के नाम से लोक में प्रसिद्ध हैं।

आसनों के सम्बन्ध में भ्रम

भारत के जिस उन्नति के युग में इन आसनों का आविष्कार किया गया था उसको व्यतीत हुए आज सहस्रों वर्ष हो गए हैं। कितने ही युगों के विविध आक्रमणों के उपरान्त भी वे अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं, यह उनकी सर्वोत्कृष्टता का ही एक मात्र प्रमाण है।

सम्प्रति मनुष्य खेल, मल्लयुद्ध तथा अन्य स्वदेशी तथा विदेशी व्यायामों को तो करने लग गये हैं किन्तु आसनों के प्रति अब भी उदासीन हैं। जो मनुष्य अशिक्षित हैं उनको तो इनका ज्ञान ही नहीं है और जो वर्तमान युग में शिक्षित माने जाते हैं, वे भी इनको व्यर्थ समझकर छोड़ देते हैं। जो व्यायाम बाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष, रुग्ण और स्वस्थ सभी के लिए लाभ दायक हो, उसको इतनी उपेक्षा दृष्टि से देखना दुर्भाग्य की ही बात है।

मध्यकाल में आसनों के साथ घोर अन्याय किया गया है। उस समय में आसनों के उद्देश्यों को ही परिवर्तित कर दिया गया। जिस युग में भारत में वैराग्य का बाहुल्य था और "ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मै व नापरः" "अर्थात् संसार मिथ्या है, शरीर मिथ्या है और है सर्वस्व मिथ्या, केवल एक ब्रह्म ही सत्य है, सनातन है" का नाद देशों दिशाओं को गुञ्जायमान कर रहा था, उस समय शरीर के मिथ्यात्व का प्रचार हो रहा था, इसलिए जो आसन शारीरिक उन्नति करते थे उनका भी दृष्टिकोण योग की ओर झुका दिया गया और उस समय से इन आसनों का सम्बन्ध केवल योगियों से ही समझा जाने लगा तथा अब तक भी लोग यह समझे हुए हैं कि आसन योगियों और वैरागियों के लिए ही होते हैं।

आसनों का यथार्थ रूप जानने वाले बहुत कम मनुष्य थे, कुछ वैरागी, तपस्वी या योगी इन आसनों का प्रयोग करते थे। यदि किसी जिज्ञासु ने आसनों के विषय में कुछ जानना चाहा तो तत्काल कह दिया कि आसन योगियों के लिए होते हैं तुम्हारे लिए नहीं। शनैः-शनैः किन्हीं-किन्हीं का यह विचार हो गया कि आसन गृहस्थ वा संसारिक स्त्री-पुरुषों के लिए नहीं होते।

आसनों के सम्बन्ध में यह विचार कोरा भ्रम और नितान्त निराधार है। आसनों का मुख्य उद्देश्य स्वास्थ्य की रक्षा और उन्नति करना है। स्वस्थ रहना मनुष्य मात्र के लिए परमावश्यक है तथा आसन लौकिक हैं, पारलौकिक भी नहीं हैं अतः आसन बालक, वृद्ध युवक, स्त्री, पुरुष सभी के लिए लाभप्रद हैं और सबको करने भी चाहियें।

यह ठीक है कि सब आसन सबको नहीं करने चाहियें, जिसका जिस अवस्था में निषेध किया जाय वह नहीं करना चाहिए। आसनों के सम्बन्ध में कुछ नियम अवश्य हैं। परन्तु नियम तो प्रत्येक व्यायाम के लिए हैं। व्यायामशील व्यक्ति को संयमी, सदाचारी और सात्विक आहारी होना चाहिए, विशेषतः आसनाभ्यासी को। व्यायाम करने वाला व्यक्ति यदि संयमी और सदाचारी नहीं है तो कोई भी देशी या विदेशी, साधारण अथवा असाधारण, व्यायाम नहीं किया जा सकता और यदि करेगा तो लाभ के स्थान में हानि ही होगी।

नित्यप्रति व्यायाम करने वाले तथा अखाड़े में कुश्ती करने वाले को ब्रह्मचारी रहना चाहिए। फिर यदि आसन करते हुए ब्रह्मचारी रहने का विधान है तो इसमें कौनसी आपत्ति की बात है? इसमें तो लाभ ही लाभ है। और ब्रह्मचर्य तो सभी प्रकार के व्यायामों के लिए आवश्यक है। (क्रमशः)

❁ संस्था परिचय ❁

गुरुकुल झज्जर

गुरुकुल झज्जर हरयाणा प्रान्त का प्रमुख गुरुकुल है। इसमें महर्षि दयानन्द जी महाराज की आर्ष पाठविधि के द्वारा अध्ययन अध्यापन होता है। अब तक शिक्षा कल्प, व्याकरण, निरुक्त और छन्द वेद के इन पांच अंगों का अध्ययन करा चुके हैं। सिद्धान्त में आर्य कुमार परिषद् की सिद्धान्त वाचस्पति परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हैं।

जो विद्यार्थी अश्लील गन्दे साहित्य से पृथक् रह कर आर्षपाठविधि के आधार पर अध्ययन कर अपने जीवन को समाज और राष्ट्र की सेवा में लगाना चाहें उनके लिए समुचित स्थान है। पढ़ाई का कोई शुल्क गुरुकुल में नहीं है केवल २५) प्रवेश के देने पड़ते हैं। भोजन व्यय १२०) वार्षिक वर्ष के प्रारम्भ में अगाऊ देने पड़ते हैं। इससे गुरुकुल वर्ष भर तक घृत रहित भोजन देता है। घृत वस्त्र तथा पुस्तक आदि का सब व्यय संरक्षक को ही देना पड़ता है। छुट्टी गुरुकुल से बाहर जाने के लिए नहीं होती। विशेष जानकारी के लिए कार्यालय से पूछताछ करें।

आयुर्वेद महाविद्यालय

गुरुकुल की स्वमिनी सभा गुरुकुल में आयुर्वेद विद्यालय की स्थापना पर विचार कर रही थी किन्तु इस वर्ष आयुर्वेद महाविद्यालय खोलने का दृढ़ निश्चय कर लिया है। यह महाविद्यालय हरयाणा में अपने ढंग का एक ही होगा। इसमें शल्य, शिक्षण का भी पूरा पूरा प्रबन्ध करने का विचार है। संस्कृत और साइन्स लेकर दशमी परीक्षा उत्तीर्ण आचारवान विद्यार्थी भी इसमें प्रविष्ट हो सकेंगे।

महाविद्यालय के लिये एक लाख रुपये की आवश्यकता है। यह सब प्रेमी आर्य जनता ने ही संग्रह करना है। धनसंग्रह समिति रुपया एकत्रित करेगी। सभा के प्रधान माननीय श्री प्रो० शेरसिंह जी एम० ए०, एम० एल ए० ने इस कार्य के लिए अपना एक मास दिया है। वह श्री आचार्य जी के साथ मिल कर एक मास में लगभग पच्चीस सहस्त्र रुपये इकट्ठे कर सकेंगे। निम्न सज्जनों ने निम्न धन-संग्रह कराने का वचन दिया है:—

श्री लेखराम जी आर्य टीकरी	५०००
श्री उमरावसिंह जी आर्य मातनहेल	२०००
श्री हरफूलसिंह जी आर्य भदानी	१०००
श्री खुशीराम जी आर्य असौधा	१०००
श्री पं० टेकराम जी आर्य भापड़ोदा	१०००
ले० श्री श्योचन्द जी आर्य ग्वालीसन	१०००
श्री इन्द्राज जी आर्य खेकड़ा	१०००
श्री भक्त मथुराप्रसाद जी आर्य रोहद	१०००
श्री फतहसिंह जी आर्य रेय्या	१०००
श्री ब्र० अतरसिंह जी गढ़ माजरा	१०००
मा० दीपचन्द जी आर्य कासनी	५००

श्री धनीराम जी आर्य कड़ौदा ने ५०१ रु० प्रदान करने का वचन दिया। श्री फतहसिंह जी आर्य दहकौरा, श्री लहरीसिंह जी आर्य कोठ श्री अमरसिंह जी आर्य मारौत, श्री जुगलाल जी आर्य कलोई श्री राम कृष्ण जो एक सौ एक, एक सौ एक रुपये प्रदान करेंगे तथा अन्यों से धन संग्रह कराने में सहायता करेंगे। —मुख्याधिष्ठाता

आयुर्वैदिक फार्मेसी

इसका उद्घाटन पञ्जाब सरकार के मुख्य मन्त्री द्वारा कराया गया था। इसकी सारी औषधियां ताजा वस्तुओं से शास्त्रोक्त विधि पर तैयार कराई जाती हैं। दो-सवा दो वर्षके थोड़ेसे समय में फार्मेसी ने विशाल रूप धारण कर लिया है। अनेकों स्थानों पर बिक्री केन्द्र खुल चुके हैं।

नवजीवन संचारक कम्पनी सीताराम बाजार देहली, गुरुकुल फार्मेसी रेलवे रोड़ रोहतक में मुख्य केन्द्रों के अतिरिक्त झज्जर, रिवाड़ी, डालमिया दादरी, सम्राट् प्रेस देहली, नरेला, महाविद्यालय किरठल, रैया, भापड़ौदा, गढ़माजरा, घासीकावास जयपुर, चिड़ी, मातनहेल, इसलौटा, पतला, मुरथल, नीमली (दादरी), लूलोढ, आर्यनगर, पचगावां, दातौली, चिड़िया, महेन्द्रगढ़, आदि स्थानों पर औषधियां समुपलब्ध होती हैं।

फार्मेसी की औषधियों की भारी चर्चा है। कितने ही रोगों के लिए रामबाण सिद्ध हुई है। सौ रुपये की औषधियां एक साथ लेने पर २५) प्रतिशत कमीशन दिया जाता है। अधिक जानकारी के लिये नियम मंगायें। ——प्रबन्धक आयुर्वेद फार्मेसी
गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर

"सोलहवें वर्ष से पूर्व कन्या और पच्चीसवें वर्ष से पूर्व पुत्र का विवाह कभी न करें यही सब सुधारों का सुधार, सब सौभाग्यों का सौभाग्य और सब उन्नतियों की उन्नति करने वाला कर्म है।"

नवयुवकों के उत्थान के लिये महर्षि दयानन्द जी महाराज ने उपर्युक्त मौलिक योजना को उपस्थित किया।

इस पवित्र योजना को जनसाधारण में सर्वप्रिय बनाने के लिये बाल ब्रह्मचारी श्री भगवान्देव जी ने ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर लगाना प्रारम्भ किया है। हरयाणा में इन शिविरों से पर्याप्त प्रचार हुआ है। स्वल्प समय में ढाणी (दादरी) गढीराजलू, हाईस्कूल, बीसलवास, रावलधी, रोहतक, श्री दयानन्द मठ, नरेला, दादरी, हिन्दीमहाविद्यलय इन सात स्थानों पर शिविर लग चुके हैं।

एक शिविर कम से कम सात दिन तक चलता है। इसमें ब्रह्मचर्य रक्षण के क्रियात्मक उपायों पर प्रकाश डाला जाता है। इनमें उपदेश तथा कार्यकर्त्ताओं के रूप में भी उच्च आचार के व्यक्तियो का ही सहयोग लिया गया है।

पर्याप्त संख्या में नवयुवकों ने शिविरों में प्रवेश करके अपने जीवन को पवित्र बनाने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञायें की हैं, आचार निर्माण में इस योजना से भारी सहयोग मिला है। आचार का उत्थान चाहने वाले महानुभावों को इस पवित्र कार्य में पूरा-पूरा सहयोग देना चाहिए।

समय की यह मांग है कि इस योजना को सफल बनाया जाये। हमारा प्रयत्न रहा है कि अधिक से अधिक नवयुवक इससे लाभ उठायें, इसलिए आगामी शिविरों में प्रवेश होने वाले नवयुवक अपना नाम और पता भेजें। शिविर लगने पर उन्हें सूचित कर दिया जायेगा। प्रवेश नियम गुरुकुल से मंगायें—
मुख्याधिष्ठाता

विरजानन्द संस्कृत परिषद्

जन साधारण में संस्कृत भाषा का प्रचार करने के लिए विरजानन्द संस्कृत परिषद् की संस्कृतांकुर, संस्कृतविज्ञ, तथा संस्कृत प्रवीण यह तीन परीक्षायें चालू की गई हैं। गत वर्ष आरम्भिक दो परीक्षायें ही ली गई थीं। सैकड़ों परीक्षार्थी इनमें सम्मिलित हुए थे। बाल, वृद्ध, युवा, स्त्री-पुरुष चाहे जिस परीक्षा में बैठ सकते हैं। इस बर्ष यह परीक्षायें दशहरा, दीवाली की छुट्टियों में २५ अक्टूबर १९५३ रविवार को होंगी। आवेदनपत्र कार्यालय से मंगायें। आवेदनपत्र भेजने की अन्तिम विथि ३१-८-५३ ई० कर दी गई है। कम कम ५ परीक्षार्थी होने पर नवीन केन्द्र बनाया जा सकता है। विशेष जानकारी के लिए परीक्षा मन्त्री विरजानन्द संस्कृत परिषद् लाल दर्वाजा, सीताराम बाजार देहली को लिखें। परीक्षा मन्त्री

विशेष सूचना

'सुधारक' का मूल्य २) वार्षिक रखा है। प्रेमी जन अपने आप ग्राहक बनें और साथियों को बनायें।

जो महानुभाव 'सुधारक' के कम से कम दश ग्राहक बनायेंगे, उन्हें सुधारक एक वर्ष तक बिना मूल्य भेजा जायेगा। —निवेदक
व्यवस्थापक—"सुधारक"

श्रावणी पर्व

प्राकृतिक और ऐतिहासिक रूप से पर्व के दो मुख्य भेद होते है। किन्तु पर्वों (त्योहारों) का मूल प्राकृतिक प्रवाह रूप से नित्य घटना होती है और किन्हीं का आधार कोई ऐतिहासिक घटना बन जाती है। कुछ पर्व ऐसे भी होते हैं कि जिन में दोनों घटनाओं का संमिश्रण हो जाता है। पर्व ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान, के साधन होते है। इन में श्रावणी पर्व नित्य प्राकृतिक आधार रखता है।

मूल कारण

जब-जब सृष्टि उत्पत्ति का समय होता है और मानव शरीर धारण करके पृथ्वी तल पर जन्म लेता है, तब-तब परम कारुणिक परमेश्वर पवित्र वेद ज्ञान का प्रकाश सब से पवित्र कर्म वाले चार ऋषियों [illegible] आत्माओं में करते हैं। यही समय श्रावणी पर्व के रूप में आर्य जाति द्वारा सृष्टि आरम्भ काल से ही मनाया जाता रहा है और सृष्टि के अन्तिम काल तक मनाया जाता रहेगा। जिस समय चारों ऋषि (अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा) स्वयं वेद के प्रकाश से प्रकाशित हो कर दूसरे मानवों में उपदेश द्वारा वेद ज्ञान का प्रचार और प्रसार करते हैं तब अत्यन्त हर्ष से प्रफुल्लित होकर परमोत्सव मनाया जाता है। इसी को श्रावणी पर्व नाम से आज तक स्मरण किया जाता है। चारों ऋषियों से चारों वेदों के ज्ञान को पूर्ण रूप से ग्रहण करके जो महामानव सर्व प्रथम वेद का उपदेष्टा बनता है, उसी का नाम ब्रह्मा कहलाता है। ब्रह्मा वेद परम्परा को आगे चलाता है। आज भी चारों वेदों के ज्ञाता महा विद्वान् को यज्ञ में "ब्रह्मा" रूप में स्वीकार किया जाता है। जब मानव को सर्वप्रथम वेद ज्ञान श्रुति उपदेश द्वारा मिला होगा, तब कितना आनन्द हुआ होगा, उस की कल्पना हम अल्पज्ञ कर्म भ्रष्ट मानव कैसे कर सकते हैं।

"सर्वं तदेषां समृधेव पर्व यत्सुवाचो वदथनाध्यप्सु।" ऋ० ७-१०४ ५॥

(यत्) जब और जो (सुवाचः) वेद ज्ञान प्रवक्ता ऋषि (अध्यप्सु) समस्त ज्ञान कर्म विषयक (वदथन) उपदेश मानव जाति को देते हैं (तद्) तब और वह (सर्वम्) सम्पूर्ण (एषाम) वेदार्थ प्राप्त इन मानवों के लिए (समृधा) अत्यन्त वृद्धि (इव) के समान (पर्व) महोत्सव हो जाता है. यहां वेद में स्वयं "पर्व" शब्द से इस आनन्दोत्सव को प्रकट किया है।

श्रावणी नाम

अथर्व वेद के १९ वें काण्ड के ७ वें सूक्त में नक्षत्रों की गणना की गई है। उन २८ नक्षत्रों में एक "श्रवणा" नक्षत्र भी है। चान्द्रमास की पूर्णिमा में जो नक्षत्र पड़ता है वह मास उसी नक्षत्र के नाम पर कहलाता है। अतः श्रवणा नक्षत्र युक्त पूर्णिमा वाले मास का नाम श्रावण मास होता है।

श्रवणा नाम

नक्षत्रों के नाम वेद में यौगिक रूप में दिए गये हैं। ऋषि दयानन्द ने उणादि कोष में श्रवण शब्द की व्युत्पत्ति यह की है—

"शृणोत्यनया सा श्रवणा नक्षत्रं वा" जिसके द्वारा सुना जाय वह श्रवणा होती है अथवा नक्षत्र का नाम भी श्रवणा है।

श्रावण मास वर्षा ऋतु का होता है। इस में शब्द बाहुल्य होता है। वर्षा का शब्द होता रहता है। जंगल में अनेक जन्तु भान्ति-भान्ति के शब्द करते रहते हैं, दिन रात्रि जंगल शब्दों से भरे

रहते हैं । रात्रि में जंगल में जाकर यह अनुभव किया जा सकता है गांव, नगर और जंगल में वर्षा ऋतु में सर्वत्र जल ही जल रहता है। मैण्डकों की ध्वनि का तो ठिकाना ही क्या है ? अतः श्रावण मास को शब्द मास कह दिया जाय तो कुछ भी अत्युक्ति नहीं नक्षत्रों में "श्रवण" नाम भी शब्द पूर्ण होने के कारण ही दिया गया है ।

जैसा वर्षा ऋतु में अनेक जीव जन्तुओं की अमैथुनि सृष्टि होती है, ऐसी ही सृष्टि के आरम्भ में मानव की अमैथुनि सृष्टि भी वर्षा ऋतु—श्रावण मास में ही होती है। तब ही कारुणिक भगवान वेदोपदेश भी देता है और वही उपदेश श्रुतिपरम्परा द्वारा पहिले पहिले इसी भान्ति चलता है। इन कारणों से श्रवण नक्षत्र भी "श्रवण" कहलाता है (सृष्टि की उत्पति प्रत्येक सर्ग में वर्षा ऋतुमें ही होती है, इस प्रकरण को फिर कभी "सुधारक" के प्रेमी पाठकों के सामने रखेंगे—लेखक)

इस मन्तव्य के कारण श्रावणी पर्व को ब्राह्मणों" ब्रह्म सम्बन्ध को धारण करने वालों का कहा जाता है और यह है भी ठीक। वेद का विशेष मनन करना ब्राह्मण का धर्म है। ब्राह्मण लोग यजमानों के हाथों में "रक्षासूत्र" धागा बांधते हैं—इस का अभिप्राय मुख्य रूप से यही है कि ब्राह्मण लोग अपने यजमानों को रक्षा सूत्र—यज्ञोपीवत— जनेऊ धारण कराके गायत्री के उपदेश पूर्वक वेद का अभ्यास कराते हैं रक्षा का तात्पर्य वेद रक्षा से ही है। ऋषि दयानन्द जी ने भी गायत्री द्वारा शिखा बन्धन बतलाया है। जिस का प्रयोजन भी उन्होंने रक्षा ही दिया है। निरुक्तकार महर्षि यास्क ने भी गायत्री की निरुक्ति में लिखा है कि स्तुति करने वालों की रक्षा करने से गायत्री कहलाती है। इसलिये श्रावणी के पर्व पर गायत्री पूर्वक वेदाध्ययन का विधान है ।

इस प्रयोजन से श्रावणी पर्व के समय गुरु पूजा का विधान भी है। यह भी वेद रक्षा के महत्व का प्रकट करता है। यजमान और विद्यार्थी अपने आचार्यों और ब्राह्मणों का दान-धनादि से यथायोग्य सत्कार करते हैं।

रक्षा बन्धन की ऐतिहासिक घटनायें तो गौण रूप से बहुत काल पश्चात् सम्मिलित होती रही हैं, उन पर कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं ।

पर्व पद्धति

प्रत्येक परिवार और आर्य समाज मन्दिरों में यह पर्व अत्यन्त उत्साह से मनाया जाना चाहिए ।

प्रातः नित्यकर्म के अतिरिक्त विशेष यज्ञ और वेद सम्बन्ध में विशेष उपदेश होने चाहियें ।

विशेष यज्ञ के लिए आर्य-पर्व-पद्धति को काम में लाना चाहिये । स्थूल रूप से यह भी हो सकता है कि—

१—दैनिक यज्ञ के अतिरिक्त सामान्य प्रकरण—स्तुतिप्रार्थनोपासना, स्वस्तिवाचन शान्तिप्रकरण और सामान्यप्रकरण की सामान्य विधि करके "अग्नये स्वाहा" आदि चार आहुतियां दी जावें, फिर गायत्री मन्त्र से एक आहुति और ऋग्वेद के ७ वें मण्डल के १०३ वें "मण्डूक" सूक्त की आहुतियां दी जायें। फिर ऋग्वेद मण्डल १० के ७१ वें "ज्ञान" सूक्त की आहुतियां देकर ज्ञान गायत्री मन्त्र से एक आहुति दी जावे। इतना होकर फिर' अग्नये स्वाहा—४ भूरग्नये स्वाहा=४, त्वं नो अग्न ८, अग्न आयूँषि—४ आहुतियां देकर स्विष्टकृत आहुति एक और प्रजापति आहुति एक दें। तत्पश्चात् यथेच्छ गायत्री मन्त्र से आहुतियां देकर पूर्णाहुति दी जायें। अन्त में वामदेव गान से मंगल पाठ किया जाय।

सायंकाल के समय जंगल खेतों का भ्रमण होवे और रात्रि में आत्मोत्थान सम्बन्धी भाषण होवे ।

आर्य जनों को कर्मकाण्ड पर अत्यन्त श्रद्धा से आचरण करना चाहिये। केवल ज्ञान से कार्य की पूर्ति नहीं हो सकती ज्ञान पूर्वक कर्म करने से यथेच्छ फल प्राप्त किया जा सकता है ।

—जगदेवसिंह 'सिद्धान्ती"

हमारे द्वारा प्रकाशित एवं प्रचारित पुस्तकें

१-ब्रह्मचर्य के साधन	
भाग १,२ (प्रातः जागरणआदि)	।–)
भाग ३ (दन्त रक्षा)	≡)
भाग ४ (व्यायाम संदेश) छपेगी	
भाग ५ (स्नान, संध्या, यज्ञ)	।=)
२-ब्रह्मचर्यामृत—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)॥
३-तम्बाकू का नशा—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)॥
४-पापों की जड़ शराब—	
बाल संस्करण	।–)
साधारण संस्करण	=)॥
५-सदाचार पंजिका	॥)
६-ब्रह्मचर्य शतकम्	॥=)
७-संस्कृतांकुर	१।)
८-संस्कृत कथा मंजरी	।–)
९-श्रुति-सुधा	≡
१०-हित की बातें	–)॥
११-आर्यसमाज की आवश्यकता	।)
१२-स्वा० श्रद्धानन्द	)॥
१३-महर्षिदयानन्द और गोरक्षा	–)।
१४-क्या हम आर्य हैं ? (६० प्र०)	–)
१५-नेत्र रक्षा	≡)
१६-व्यायाम का महत्त्व	≡)
१७-आदर्श ब्रह्मचारी	=)।
१८-कन्या और ब्रह्मचर्य	≡)
१९-स्वा० आत्मानन्दजी	–)
२०-महर्षि दयानन्द का कार्य	–)
२१-आर्योद्देश्य रत्न माला	–)
२२-आर्यसमाज के नियमोपनियम	=)
२३-वैदिक संध्या पद्धति	–)
२४-वैदिक संध्या हवन पद्धति	≡)
२५-वैदिक सत्संग पद्धति	।=)
२६-कर्त्तव्य दर्पण	१।)
२७ हितैषी की गीता	॥)
२८ कृषि विज्ञान	।॥)
२९-सिख और यज्ञोपवीत	≡)
३०-पंजाब की भाषा	–)
३१-आर्यकुमार गीतांजली भाग १, २	।=)
३२- रामराज्य कैसे हो ?	≡)
३३-मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२।)
३४-वैदिक गीता	३)
३५-अफ्रीका की यात्रा	२।)
३६-स्वा० दयानन्द और म०गांधी	२)

प्रचारित साहित्य

१-फलों की पंचायत	।=)
२-फोटोग्राफी की कहानी	।=)
३-मोटर कार ,,	।=)
४-वायुयान ,,	।=)
५-जलयान ,,	।=)
६-रेडियो ,,	।=)
७-बिजली ,,	।=)
८-सिनेमा ,,	।=)
९-भाप ,,	।=)
१० रेल ,,	।=)
११-वीरों की कहानियाँ	।=)
१२-अनमोल हीरे	।=)
१३-ब्रह्मचर्य	=)
१४-तम्बाकू के काले कारनामे	।=)
१५-बाल क्रान्ति गीत	=)॥
१६-भले रहो चंगे रहो	॥)
१७-पद्यमाला	≡)
१८-क्यों, क्या, कैसे ?	॥=)
१९-आर्थिक कहानियाँ	१)
२०-राजनीति ज्ञान कोष	१।)
२१- ईषप नीति निकुंज भाग २, ३, ४	॥।=), ॥=), ॥।=)
२२-राष्ट्र की सम्पत्ति	।)
२३-राजनीति कथा माला	१)
२४-महात्मा सुकरात	२।)
२५-महात्मा शेखसादी	॥=)
२६- ,, मेजिनी	१)
२७- ,, मार्टिन लूथर	१)
२८-ऊर्ध्वाङ्ग व्याधि-विज्ञान	१)
२९-सरल चिकित्सा	।=)
३०-समाज सुधार के गायन	=)
३१-इस हाथ करो उस हाथ मिले	≡)
३२-धर्म ज्ञान भाग १, २, ३, ४	।=), ।), ।), ।=)
३३-वैदिक विनय भाग १	२)
३४-संध्या रहस्य	१)
३५विद्यार्थी जीवन रहस्य	।॥)
३६-प्राणायाम विधि	।)
३७-cow Protection	=)
३८-महर्षि दयानन्द	॥=)
३९-सत्यार्थ प्रकाश शंका समाधान	।)
४०-आगे बढ़ो	१।)
४१-वैदिक वीर तरङ्ग	।)
४२-दयानन्द और वेद	।)
४३-स्वा०दयानन्द और आर्यसमाज	।)
४४-बाल शिक्षा	–)।
४५-धर्म शिक्षा	–)।
४६-वेदों की आवश्यकता	–)॥
४७ हिन्दी प्रकाश	॥
४८-मेरी पोथी (छोटी)	=
४९- ,, ,, (बड़ी) भाग १, २	॥=), १।
५०-मदीयम् पुस्तकम्	॥
५१-मरुभूमि सेवा कार्य	१
५२-व्याकरण विनोद	॥–
५३-संयुक्ताक्षर बोध	॥
५४-सफलता की कुँजी	१।

वैदिक साहित्य सदन, आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली ६ ।

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की बहुमूल्य औषधियाँ

च्यवनप्राश

इसी ऋतु के ताजे आँवले से तैयार किया गया स्वादिष्ट, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका [निरन्तर] सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य ७) सेर, ५ सेर लेने पर ६) सेर

ज्वरामृत

यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की रामबाण औषध है। बिगड़े हुये मलेरिया, विषम ज्वर को दूर करने में अद्वितीय औषध है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन सिर दर्द, स्वप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है। मलेरिया काल में सेवन की हुई मलेरिया को नहीं आने देती। अधिक प्रशंसा व्यर्थ है, सेवन करें और लाभ उठावें।

मूल्य छोटी शीशी २) बड़ी शीशी ५)

सूखा रोगामृत

जिन गृहस्थों के बालक सूखा रोग (मसान) से सूख-सूख कर मरते हैं। अनेक प्रकार चिकित्सा करने पर भी कोई लाभ नहीं होता। ऐसे निराश रोगियों के लिये यह औषधि अचूक है। सहस्रों रोगियों पर अनुभूत है। इसके अतिरिक्त बालक के हरे पीले दस्त, अजीर्ण, अरुचि, दांत निकलते समय के रोग, वमन, निर्बलता और ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखे। सू० १ मास के सेवन तथा मालिश के लिये १२)

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है। इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस [सदा रहने वाले जुकाम और नजले] की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास [खांसी] नाशक, राजयक्ष्मा [तपेदिक] श्वास [दमा] के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढङ्ग की एक ही औषधि है।

छोटी शीशी २), बड़ी शीशी ५)

स्वप्नदोषामृत

इस भयङ्कर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग के दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। मूल्य ५) रुपये

सञ्जीवनी तैल

मूर्च्छित लक्ष्मण को चेतावनी देने वाली इतिहास-प्रसिद्ध बूटी से तैयार किया गया यह तैल घावों को भरने में जादू का काम करता है। भयङ्कर फोड़े फुन्सी, गले-सड़े जख्मों तथा आग से जले जख्मों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भर कर ठीक कर देता है। खून का बहना तो तुरन्त ही बन्द हो जाता है। चोट की भयङ्कर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है। मूल्य छोटी शीशी ॥=) बड़ी शीशी ५)

सेवन विधि

फाये में भर कर बार-बार चोट आदि पर लगायें।

रोहतक में मिलने का पता—

गुरुकुल फार्मेसी. रेलवे रोड (रोहतक)

देहली में मिलने का पता—

"नवजीवन सञ्चारक कम्पनी"

आर्य समाज मन्दिर, सीताराम बाज़ार—देहली

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

प्रकाशक—आचार्य भगवानदेव गुरुकुल झज्जर के लिये सम्राट् प्रेस—पहाड़ी धीरज देहली, में जगदेवसिंह शास्त्री द्वारा मुद्रित

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष १
अङ्क २

आश्विन
गुरुकुल झज्जर, ~~भाद्रपद~~ सं० २०१० वि०, अक्टूबर १९५३, दयानन्दाब्द १२९

वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

आदर्श सुधारक श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित वैदिक सिद्धान्तों को क्रियात्मक रूप देने वाले आप प्रथम आर्य नेता थे। गुरुकुल शिक्षाप्रणाली, आर्य भाषा को राष्ट्रिय रूप देना, अछूतोद्धार, वर्तमान जाति-बिरादरी के बन्धन को तोड़ कर वर्ण व्यवस्था के अनुसार विवाह सम्बन्ध स्थापित करना, सामाजिक कुरीतियों का नाश, आर्यजाति की विधर्मियों से रक्षा, शुद्धि, स्वराज्य प्राप्ति के लिये कष्ट सहन और अन्धानुकरण न करना आदि कार्य आपने प्रबलता से चलाये। अन्त समय में वैदिक धर्म की बलि वेदी पर एक मतान्ध मुसलमान के हाथ से छाती में पिस्तौल की गोली खा कर अमर हो गये।

* * * श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द * * *

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक

सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्त वाचस्पति

सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्त वाचस्पति

ब्रह्मचर्यमहत्त्वम्

(श्री पं० मेधाव्रताचार्यकविरत्नप्रणीतम्)

मन्त्रः—ब्रह्मचारीष्णंश्चरति रोदसी उभे तस्मिन् देवाः
संमनसो भवन्ति ।
स दाधार पृथिवीं दिवं च स आचार्यं तपसा
पिपर्ति ॥

(अथर्व० का० ११ सू० ५ म० १)

मन्दाक्रान्ता—

ब्रह्मान्विष्यन् विचरति दिवि ब्रह्मचारी भुवीव
तस्मिन्देवाः समसुमनसः सानुकुल्या भवन्ति ।
प्रज्ञाशक्त्या दिवमथ महीञ्चान्तरिक्षं बिभर्त्ति
पूज्याचार्यं प्रखरतपसाऽयं प्रदीप्तः पिपर्ति ॥७॥

अर्थः—जब ब्रह्मचारी द्युस्थानीय प्रकाश के केन्द्र-मस्तिष्क में, भूस्थानीय नाभिकेन्द्र में एवं अन्तरिक्षस्थानीय हृदय-केन्द्र में ब्रह्म को खोजता हुआ विचरण करता है, तब उस ब्रह्मचारी के अन्तःशरीरचारी प्राण आदि समस्त देव उसके आधीन होकर अनुकूल हो जाते हैं। तदनन्तर वह शरीरपिण्डाधिकारी बन, कारणरूप ब्रह्माण्डस्थ द्युलोक, भूलोक व अन्तरिक्ष लोक को धारण करता है, एवं अनुकूल बना लेता है। इस प्रकार कठोर तपस्या से अभिवन्दनीय आचार्य की इच्छा को पूर्ण कर उन्हें तृप्त व आनन्दित कर देता है।

देहे देवाननलमरुदाद्यंशभूतान् वशीन्द्रो-
वश्यान् कृत्वा लसति तपसान्तर्दधानस्त्रिलोकीम् ।
बाह्या देवास्तदनुगुणताञ्चाप्य वश्या अवश्यं
सम्पद्यन्ते त्रिभुवनमतो ब्रह्मचारी बिभर्ति ॥८॥

अर्थः—अतिवीर्यवान् तेजस्वी, आत्मसंयमी, शरीर-पिण्डनियन्ता, जितेन्द्रिय, वशीन्द्र, ब्रह्मचारी शरीरस्थ आंशिक, अग्नि, वायु आदि देवों को वशीभूत करके अपने तपोबल से बुद्धि, स्थूल शरीर व सूक्ष्म प्राण मनरूप-त्रिलोक को वश में करके चमकता है, बाह्य अन्तरिक्षचारी देव अनुकूलता को प्राप्त होकर निःसन्देह वशीभूत हो जाते हैं और वह ब्रह्मचारी तब तीनों द्यु-भू और अन्तरिक्ष लोक को धारण करने वाला हो जाता है।

ब्रह्मान्वेषी चरति स यदा स्वं तपस्तीव्रमस्माद्
दिव्या शक्तिः प्रभवति तदा भूर्भुवः स्वर्विधात्री ।
आचार्यं च प्रथिततपसा प्रीणयत्यात्मतेजा-
ब्रह्मध्येयं विमलमनसा संभजन् संयमीशः ॥९॥

अर्थः—वह ब्रह्म का अन्वेषक श्रेष्ठ ब्रह्मचारी आत्म-शक्ति से देदीप्यमान से पवित्रमन से ध्येयरूप ब्रह्म की आराधना करते हुए कठोर तप का अनुष्ठान करता है। तब उसके आत्मा से पिण्डस्थ एवं ब्रह्माण्डस्थ पृथिवी अन्तरिक्ष और द्युलोक को धारण करने वाली दिव्यशक्ति प्रकट होती है, एवं विख्यात तप से अपने आचार्य को प्रसन्न कर देता है।

क्रमशः

* * *

सम्पादकीय —

गाय की समस्या

सृष्टि के आदि काल से दो-चार दश-पाच्च सौ-पचास शताब्दियों तक ही नहीं, लाखों शताब्दियों तक भारत गोपालन का प्रधान केन्द्र रहा है। भारत के गुरुकुल, विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय आदि सार्वजनिक शिक्षण संस्थाओं में गोपालन–शिक्षण शिक्षा का मुख्य अङ्ग समझा जाता था। गोसेवा भारतीय विश्ववारा संस्कृति की प्रतीक समझा जाता था।

गाय ही योगिराज भगवान् कृष्ण की राजनीति का अङ्ग थी। विश्वशान्ति के उपासक राष्ट्रनिर्माता महर्षि दयानन्द जी महाराज ने गोरक्षा को अपने जीवन का ध्येय बनाया। राष्ट्रपिता गान्धी के चर्खे का सहारा गाय ही रही। उन्होंने गोसेवा को स्वराज्य से भी बढ़ कर बतलाया।

अमेरिका आदि उन्नतिशील देशों में दूध और घी का विवेचन भली प्रकार किया गया है। उन्होंने भारी विचार विनिमय के उपरान्त School Milkयोजना बनाई है।

इङ्गलैण्ड ने भी Education Act (शिक्षा विधान) है। इस विधान के आधार पर प्रधानाध्यापक एवं अन्य अधिकारियों की स्वीकृति पर दुर्बल छात्रों को बिना किसी मूल्य के दूध दिया जाता है।

प्रारम्भ में पचास लाख विद्यार्थियों में से केवल तीन लाख तीस हजार विद्यार्थियों को ही दूध दिया गया यद्यपि यह दूध मात्रा में पर्याप्त न था परन्तु पुनरपि उनके स्वास्थ्य और मस्तिष्क को आशातीत लाभ पहुँचा है। इसलिये इस School Milk वाली योजना का सर्वत्र स्वागत किया जा रहा है।

स्काटलैण्ड के मन्त्री श्री टाम जानस्टन के कथनानुसार सन्१९३९ ई० में इसकी संख्या में ३४ प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार दूध दिये जाने वाले छात्रों की संख्या ६७प्रतिशत एवं इङ्गलैण्ड में ७८ प्रतिशत हो गयी थी।

श्री एच, सी, कैटीमन ओ० बी० ई० एम० डी० मैडीकल रिसर्च कौंसिल इङ्गलैण्ड ने बच्चों को विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ पृथक् पृथक् खाने के लिये दिये। अनुभव के उपरान्त मालूम हुआ कि जिन बच्चों को दूध दिया गया था उनमें से एक भी बालक रोगी नहीं हुआ, जब कि अन्य पदार्थ खाने वाले बालक पर्याप्त मात्रा में रोगी हुए। लम्बाई में भी अन्यों की अपेक्षा दुग्धाहारी बालकों की पर्याप्त वृद्धि हुई।

मैडीकल रिसर्च कौंसिल का अनुभूत मत है कि यदि बच्चों को पर्याप्त मात्रा में दूध दिया जाये तो उनके भार और लम्बाई में अशातीत वृद्धि होती है। और विविध शारीरिक सुधार होते हैं। यहां तक कि बच्चों के हाथ और पैर भी नहीं फटते। श्री कैटीमन का कथन तो यहां तक है कि यदि बालकों की क्षुधानिवृत्ति के लिये अन्य पदार्थ थोड़ा कम करके केवल १२ औंस अर्थात् छः छटांक दूध ही बढ़ा दिया जाये तो बालक की भारवृद्धि का माध्यम ३.८५ पौण्ड से बढ़कर ६.९८ पौड हो जायेगा और लम्बाई की वृद्धि का माध्यम १.८४ से बढ़कर २.६३ इन्च हो जायगा।

डा० एच. डी. के ने कहा है कि स्वास्थ्य में यदि तत्काल परिवर्तन करना है तो दुग्धपान और दूध से बनी हुई वस्तुओं के अधिक से अधिक व्यवहार का प्रचार करना चाहिये।

मि० राल्फ ए. हेने जो आजकल पाश्चात्य जगत् के गोदुग्ध के बड़े विशेषज्ञ है उनका कहना है कि "यदि आप लोग अपने बालकों को बलिष्ठ वीर और शक्तिसम्पन्न बनाना चाहते हैं तो उनको दिन में तीन बार दूध और मक्खन देना चाहिये।

इतना ही नहीं उन्होंने तो यहां तक कहा है कि जो व्यक्ति अपनी सन्तान को मलाई मक्खन और दूध जैसे स्वास्थ्यवर्धक उपयोगी पदार्थों को खाने के लिये नहीं देता, उसे कारागार में बन्द रखने की आवश्यकता है।

भारत में जिसके विषय में कहा जाता है कि भारत में दूध की नदियां बहती थीं आज दूध का माध्यम प्रति मनुष्य ५.६ औंस=तीन छटांक से कम है, जब कि जर्मनी में दूध का माध्यम प्रति मनुष्य ३५ औंस; अमेरिका में ३५. ६ औंस, डेनमार्क में ४०. ३ औंस, ग्रेट ब्रिटेन में ४०. ७ औंस, न्यूजीलैण्ड में ५५. ६ औंस तथा कनाडा में ५६. ६ औंस है।

दूध ही नहीं, खेती के लिये बैल नहीं मिलते इतने पर भी भारत में गोवध हो रहा है। समय की मांग है कि गोपालन को महत्व दिया जाये।

गोरक्षा आन्दोलन

आर्यों की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने गोरक्षा आन्दोलन को अपने हाथ में लेकर भारी उपकार का "विश्वानिदेव" किया है। प्रत्येक गोभक्त और गोसेवक को इस में तन मन धन से सहयोग देना चाहिये।

कोई राजनीतिक पार्टी यदि इस आन्दोलन का संचालन करती तो उस का राजनीतिक स्वार्थ समझा जाता। परन्तु आर्यसमाज आज तक किसी दलगत राजनीति में सम्मिलित नहीं हुआ। आर्य समाज का क्षेत्र विशुद्ध सांस्कृतिक एवं धार्मिक ही रहा है। राजनीतिक स्वार्थ से आर्य समाज को बदनाम नहीं किया जासकता है।

जितने भी आन्दोलनों का संचालन आर्य समाज ने किया है। उस पर चिरकाल तक आर्यसमाज ने गहरी दृष्टि से विचार किया है।

यही कारण है कि इतिहास इस बात का साक्षी है कि विजय-श्री ने आर्यसमाज का साथ दिया है।

अब भी परिस्थिति अनुकूल है। अशोकचक्र की प्रतीक वाले जनराज्य में गोवध भारतीयों के माथे पर कलङ्क का टीका है। महाराज अशोक के राज्य में तो प्राणिहिंसा पाप था। परन्तु आज सहस्रों लाखों गायों की हिंसा हो रही है, जब कि दूध पीने को नहीं मिलता और खेती के लिये बैल नहीं मिलते।

शिक्षा का जनतीकरण

अंग्रेज कालीन वर्त्तमान शिक्षा-प्रणाली लार्ड मैकाले के मस्तिष्क की खोज थी इस का उद्देश्य भारतीयों में अंग्रेजियत का प्रसार तथा अंग्रेजी-राज्य के संचालन के लिये क्लर्क तैयार करना था। वह अपने उद्देश्य में सफल हुआ। कारण यह है कि अंग्रेज चले गये परन्तु अंग्रेजियत और क्लर्की विद्या अभी शेष हैं।

हर्ष की बात है कि अब प्रत्येक बुद्धिमान् व्यक्ति इस सचाई को समझने लगा है कि बिना वर्त्तमान शिक्षा-प्रणाली में परिवर्त्तन के काम नहीं चलेगा। राष्ट्रपति और प्रधान मन्त्री तथा नेताओं के भाषणों से यही प्रतीत होता है कि अब शिक्षा प्रणाली में परिवर्त्तन अनिवार्य है। वह परिवर्त्तन कया हो? यह एक विचारणीय प्रश्न है। राष्ट्र पिता गान्धी तथा राष्ट्र निर्माता महर्षि दयानन्द जी महाराज की विश्व शान्ति और विश्व कल्याण की भावना को दृष्टि में रखते हुए शिक्षा का जनती-करण होना चाहिये। ग्राम ग्राम के समीप गुरुकुल या उपनिवेश हो। यह राज नियम और जाति नियम होना चाहिये कि कोई भी व्यक्ति आठ वर्ष की आयु के उपरान्त अपने बालकों को घर में न रख सके। पढ़ने के लिये लड़कों को लड़कों के गुरुकुलों में और लड़कियों को लड़कियों के गुरुकुल में भेज दिया जाये। सब के लिये समान खान पान भोजन आदि का प्रबन्ध हो। राजा और रङ्क के बालक के साथ कोई भेद भाव न हो। सब विद्याध्ययन करने वालों का ध्येय राष्ट्र की उन्नति हो। माता पिता उन से स्वार्थ की भावना छोड़ दें। वह अपने आश्रम की मर्यादा के अनुसार अपने वानप्रस्थ या संन्यास आश्रम को ग्रहण करें।

इससे स्वार्थ की भावना मिट जायेगी। प्रत्येक नवयुवक विशाल दृष्टिकोण अपने सामने रक्खेगा। उस के जीवन का उद्देश्य क्लर्की करना न होगा। शिक्षा में गो पालन आदि स्वावलम्बन के विषयों का प्रवेश होना चाहिये। स्वार्थ की भावना से ऊपर उठ कर ही बलिष्ठ भारत का निर्माण हो सकता है। सबल भारत ही विश्व शान्ति और विश्व कल्याण का पाठ पढ़ा सकता है।

ग्राम्य-शिक्षणालय

(लेखक—प्रोफेसर शेरसिंह जी एम० ए० एम० एल० ए०)

[२]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् यह अनुभव तो हर राष्ट्र सेवी को होने लगा है कि शिक्षा प्रणाली में ऐसा सुधार किया जाय जिस से समग्र ग्रामीण जीवन अंगड़ाई लेकर उठ खड़ा हो। ग्राम और शिक्षणालय के बीच जो दीवार खड़ी हो गई है उसे तोड़ दिया जाय और कुछ अंशों में शिक्षणालय और घर के बीच जो दीवार खड़ी हो गई है उसे भी तोड़ना पड़ेगा। ग्रामीण लोगों को ऐसी शिक्षा देनी पड़ेगी जो उन्हें उनके खेतों से और घर में होने वाले कुटीर उद्योगों (Cottage industries) से अलग न फैंक सकें, बल्कि उन्हें अपने ज्ञान का उपयोग ग्रामीण क्षेत्र में करने दे, जिससे ग्रामीण जीवन जगमगा उठे। शिक्षा में किस प्रकार का परिवर्तन लाने से यह हो सकेगा और वर्तमान परिस्थितियों में किस प्रकार वह लाया जा सकेगा, इन बातों पर गहराई से विचार करना होगा।

सर्व प्रथम तो हमें अपनी प्राथमिक शिक्षा (Primary Education को ही लेना चाहिये। केवल साक्षरता जिसका उद्देश्य है ऐसी छःघण्टे की शिक्षण कवायद (Education parade) बच्चों को अपने ही ग्राम और घर में अजनबी बना देती है। माता-पिता भी इसी को सर्वोत्तम शिक्षा समझ बैठे हैं, उनका यह मत है कि यही तो वास्तविक शिक्षा है, नहीं तो हाथ से काम करना और छोटे-छोटे धन्धे करना तो हम उसे घर पर भी सिखा सकते हैं। लिखना-पढ़ना और पुस्तकों से ज्ञान प्राप्त करना ही उनके विचार में शिक्षा है। यह विचार इतने घर कर गये हैं कि यदि हाथ से काम करने का शिक्षा में समावेश किया जाय तो लोग अपने बच्चों को स्कूल से उठा लेने की भी धमकी देने लगते हैं। पढ़ने--लिखने की कला के द्वारा दूर बैठा हुआ आदमी एक परची पढ़ कर सब कुछ समझ सकता है, इस चमत्कार को ही लोग शिक्षा की बड़ी भारी देन मानते हैं और अपने आप को अनपढ़ (निरक्षर) होने के कारण पशु समान कहते हैं। विनोबा जी ने तो कहा है कि यदि बिना पढ़ा--लिखा आदमी बिना पूँछ और सींग का पशु है तो आज की शिक्षाप्रणाली का पढ़ा हुआ पूंछ और सींग वाला पशु है। लिखना-पढ़ना कुछ है ही नहीं, ऐसा नहीं। यह भी एक साधन है, हथियार है, जो ज्ञान प्राप्ति में सहायक है। परन्तु यह सब कुछ है और यही शिक्षा है—यह मान लेना बड़ी भारी भूल है। लिखने-पढ़ने की कलाओं के साथ-साथ काम करते-करते उपयोगी ज्ञान को प्राप्त करना जीवन के लिये अति आवश्यक है और शिक्षण जीवन से पृथक् नहीं किया जा सकता, नहीं तो वह शिक्षण जीवित शिक्षण नहीं रहता, इसलिये यही तो वास्तविक शिक्षण भी हुआ। निर्माण में ही जीवन का वास्तविक आनन्द मिलता है। जिस शिक्षा में निर्माणकारी उद्योग का स्थान नहीं वह कभी आनन्द देने वाला नहीं हो सकता और निर्थक तो है ही। छः घण्टे प्रतिदिन का कारागार कई वर्षों तक लगातार काटकर कोई भी बालक एक सामान्य और संतुलित व्यक्ति कैसे बन सकता है। ग्राम और घर के लिये अजनबी, ग्रामीण लोगों की दृष्टि में लिखने-पढ़ने का महान् चमत्कार लिये हुए और सब को पशु समान समझने वाला, वह जो जीवन भर मृतज्ञान प्राप्त करते-करते जीवन की सारी ज्योति खो चुका है और विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों की दीवार के अन्दर रहकर जो कई वर्षों तक चार कारागार काटकर आया है, ऐसा असामान्य और असंतुलित व्यक्ति क्या कभी सुन्दर ग्राम बनाने और बसाने की बृहत् कल्पना लेकर आगे [illegible] सकेगा? इसलिये ग्राम के निर्माण के लिए तो ऐसी शिक्षा देनी होगी जो निर्माण करना सिखाये। तो यह

आवश्यक हुआ कि लिखने-पढ़ने के साथ-साथ हाथ से काम करना भी सिखाया जाय। खेती--बाड़ी, पशुपालन, बढ़ई का, लुहार, का मोची का, कपड़े बुनने का, तेल निकालने आदि का अनेकों काम जो ग्राम में चलते हैं, उनका सैद्धान्तिक शिक्षण भी और व्यावहारिक शिक्षण भी कराया जाय, जिस से ये सब धन्धे आज जिस ढंग से होते हैं उससे अच्छे ढंग से किये जा सकें। इनके साथ और भी जो वस्तुएँ ग्रामीण जीवन के लिये आवश्यक हैं और जिनका निर्माण आज ग्राम में नहीं होता उनकी शिक्षा का भी प्रबन्ध किया जाय।

मैं एक चीज के पीछे कई वर्षों तक पागल रहा, बहुत लोगों से बातें कीं, अच्छे अच्छे शिक्षाशास्त्रियों से भी और गान्धी आश्रम के बड़े-बड़े विचारकों से भी। मैं यह चाहता था कि कोई ऐसा निश्चित श्रैणिकक्रम उद्योग धन्धों के शिक्षण के लिए बनाया जाये, जो बालकों के शारीरिक और मानसिक विकास के साथ मेल खाता हो। मेरा यह विचार था कि कुछ उद्योगों को लेकर उनमें ऐसा श्रैणिक क्रम बनाकर लिखने-पढ़ने के साथ साथ चलाया जाये और शनैः शनैः दूसरे कामों और उद्योगों में भी इसी प्रकार करते चले जायें, ताकि बच्चा कुछ वर्षों के पश्चात् जब ७ या ८ वर्ष की प्राथमिक शिक्षा लेकर निकले तो वह एक काम तो ऐसा जानता हो जिस में वह कुशल हो और स्वावलम्बी बन सके। ऐसा श्रैणिक क्रम कोई भी बनाकर दे नहीं सका और उसके लिये कितनी ही प्रतीक्षा करते रहें कोई दे भी नहीं सकेगा, यह तो कार्य आरम्भ कर देना होगा। जो ज्ञान भी हमारे समाज के पास इस समय है उसी से। यदि श्रैणिक क्रम बनाने में लगे रहें और उसके पश्चात् इस प्रकार की शिक्षा (क्रमबद्ध शिक्षा) देने के लिये ऐसे अध्यापकों के प्रशिक्षण में लगे रहें तो कई वर्ष बीत जायेंगे। मुझे बड़ा क्रोध आता था अपने शिक्षामन्त्रालय पर कि जिस ने शिक्षाशास्त्रियों ,वैज्ञानिकों, शिल्पवैज्ञानिकों, अर्थशास्त्र के पण्डितों की एक समिति बनाकर अभी तक देश को एक सर्वांङ्गपूर्ण शिक्षा योजना क्यों नहीं तैयार करके दी। शिक्षामन्त्रालय का इस प्रकार का उत्तरदायित्व तो है और उसे पूरा करने में उसे देर भी लग रही है, अभी तक प्राथमिक माध्यमिक और उच्च शिक्षाओं के सम्बन्ध में विस्तार यूनिवर्सिटी शिक्षा कमीशन से लिखी हुई रिपोर्ट तैयार नहीं हुई है, केवल की रिपोर्ट ही लोगों के सामने आई है, जो सचमुच बड़े परिश्रम से तय्यार की गई है और उसमें बड़े बहुमूल्य सुझाव दिये गये हैं। परन्तु उनकी प्रतीक्षा में बैठे न रह कर सब को सोचना चाहिये और काम शुरू करना चाहिये।

सब कुछ सोचकर मैं तो इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि जो साधन इस समय हमारे पास हैं उन्हीं का हमें उपयोग करके आगे बढ़ना चाहिये। व्यावहारिक शिक्षा के लिये (खेती बाड़ी, पशुपालन, कुटीर और ग्रामीण उद्योगों की) हमें ग्रामों में जो इन विद्याओं का अधिक से अधिक व्यावहारिक ज्ञान रखते हैं, उन्हें उद्योग-धन्धे सिखाने के लिये रख लेना चाहिये। जो पढ़े-लिखे इन कामों को जानते हैं और जिन्होंने वैज्ञानिक ढंग से इनको सीखा है उन्हें हम ऐसे अनपढ़ परन्तु अपने कामों में कुशल अध्यापकों के प्रशिक्षण और सरल भाषा में इन विषयों पर पुस्तकें लिखने के काम दें। ऐसे सुशिक्षित शिल्पियों की हमारे पास कमी है और वे सब नौकरी चाहते हैं, उन्हें हम नौकरी भी नहीं दे पा रहे हैं, उनसे हम यह उपयोगी काम ले सकते हैं। ऐसे लोगों की संख्या हम अपने देश में केन्द्रिय संस्थायें खोलकर या बाहर भेज कर बढाते रहें और ग्राम विद्यालयों में व्यावहारिक शिक्षा देने वाले अध्यापकों के प्रशिक्षण और उपयोगी साहित्य निकालने में उनका उपयोग करें। (क्रमशः)

* * *

सुधारक

के

ग्राहक बनकर और बनाकर

सुधार कार्य में

सहयोग दीजिये

* * *

आर्यकुमार सभा लेखमाला—२

आर्यकुमार सभा

(ले०—श्री जगन्नाथ, बी० ए० एल० एल० बी०, जे० डी०, प्रभाकर, सिद्धान्त शास्त्री)

यह हमारे आर्यकुमार सभा स्तम्भ की दूसरी कड़ी है। यह पाठकों को शायद कुछ नीरस जान पड़े, परन्तु यह बच्चों में अच्छी आदतें डालने के हेतु आर्यकुमार सभा बनाने में काफी सहायक होगी। अगली कड़ी अधिक रुचिकर होगी।

—सम्पादक

पूर्णमासी का दिन था। आदर्शनगर में विश्वमित्र के मकान के सामने वाले मैदान में बच्चों का जमघट लगा हुआ था। आज मोहल्ले के बच्चों ने आर्य कुमार सभा बनाने का निश्चय किया हुआ था। शाम को ठीक सात बजे विश्वमित्र जी, जिसका आदर्शनगर में सबसे अधिक मान था, वहाँ पधारे। बच्चे उन्हें गुरु जी कहते थे। उनके सम्मान में सब बच्चों ने खड़े होकर नमस्ते की। विश्वमित्र जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया। फिर सुशील बोला—

गुरु जी ! आपने गत मास हमारी सभा बनाने के लिए कहा था। आज हमारी सभा अवश्य बननी चाहिए।"

दो-चार बच्चे और भी तुरन्त बोल उठे—"जी हाँ, आज सभा जरूर बन जानी चाहिए।"

गुरुजी—"मुझे तुम्हारी सभा बनाने में कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु तुम्हें याद है कि मैंने सभा बनाने के पूर्व कुछ शर्तें पूरी करने को कहा था।"

सुशील—"जी हां, मुझे अच्छी तरह याद है। आपने देवताओं और राक्षसों की कहानी सुनाकर हमें देवता बनने का आदेश दिया था। आपने यह भी कहा था कि देवताओं की सभा ही चला करती है। झगड़ालू और स्वार्थी मनुष्यों की सभाएँ या तो बन ही नहीं पातीं, और यदि बनती भी हैं तो कुछ दिनों बाद टूट जाती हैं। हम सबने देवताओं के गुणों को अपनाने का अभ्यास आरम्भ कर दिया है। हम कभी झगड़ा नहीं करेंगे, सभा के जो नियम बनेंगे उनका पालन करेंगे।"

गुरुजी—"तब तुम्हारी सभा अवश्य सफल होगी। इसके पहिले कि मैं सभा बनाऊँ, सबसे पहले हमें प्रभु का स्मरण करना चाहिए। हरेक अच्छा कार्य प्रारम्भ करने के पहिले ईश्वरोपासना करनी चाहिए। तुम जानते ही हो कि ईश्वर ने हम सबको बनाया है। उसीने हमारे लिए नाना प्रकार की वस्तुएँ बनाई हैं। ये सूर्य, चांद, तारे, नदी, नाले, पहाड़, वृक्ष पत्ती फल, फूल आदि सब उसीने हमारे लाभ के लिए बनाए हैं"

इसके पश्चात् गुरुजी ने सब बच्चों से ईश्वरोपासना का एक भजन कहलवाया। आगे आगे गुरु जी बोलते थे और पीछे बच्चे दोहराते थे। प्रार्थना के बाद गुरुजी ने बच्चों को बाल समा के बारे में निम्न आदेश दिया:—

बाल सभा कैसे बनती है ?

"प्यारे बच्चो, आज तुम बाल सभा बनाना चाहते हो, इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। वास्तव में प्रायः सब बड़े-बड़े देशों में बच्चों की बाल सभाएँ होती हैं जिनके सदस्य बनकर वहाँ के बच्चे अपने व्यक्तित्व का विकास एवं चौमुखी उन्नति करते हैं। वे सीख जाते हैं कि सभाएँ कैसे बनती हैं क्यों बनती हैं, उनका प्रबंध कैसे चलता है, उनको कैसे बढ़ाया जाता है। बाल सभा में आकर ही बच्चे बोलना सीखते हैं और बड़े होकर वे अच्छे व्याख्यान देने वाले बन जाते हैं। बाल सभा में बच्चे लेख लिखते हैं, अपनी पत्रिका निकालते हैं, जिससे वे बड़े

होकर अच्छे लेखक बन जाते हैं। बाल सभा में वे खेल खेलते हैं, व्यायाम करते हैं। उनके अपने पुस्तकालय होते हैं जहाँ बालोपयोगी पुस्तकें एवं पत्रिकाएँ होती हैं। अवसर पड़ने पर वे बाल सभाएँ देश के संकट में अपने नेताओं का हाथ बटाती हैं। उन सभाओं के बारे में विस्तार से मैं फिर कभी बताऊँगा। आज तो मुझे केवल यह बताना है कि बाल सभाओं को अनेक कार्य करने होते हैं। सब बच्चे सब काम नहीं कर सकते। अतः वे इन कार्यों को चलाने के लिए अपने में से जिनको योग्य समझते हैं, अधिकारी चुन लेते हैं। अधिकारी पाँच प्रकार के होते हैं—प्रधान, मंत्री कोषाध्यक्ष, पुस्तकाध्यक्ष और लेखा निरीक्षक।

अधिकारियों के कर्तव्य

प्रधान—इसे किसी भी सभा का दिमाग़ समझना चाहिए। सभा सब कार्य नियमानुसार करे, सभा में कोई झगड़ा न हो, कोई सभा में आकर सभा के सामान को चुरा न ले जाय, आदि इसके काम होते हैं। सभा की बैठकों का सभापति भी यही होता है। अतएव इस पद के लिए तुम्हें कोई ऐसा आदमी चुनना चाहिए जो योग्य, शिक्षित, सदाचारी, सभ्य, न्यायी तथा सुशील हो।

मन्त्री—यह सभा की जान होता है। सभा की ओर से पत्र व्यवहार करना, सभाओं के विषय में सूचना देना, कार्यवाही रजिस्टर में लिखना, इसका कार्य होता है। प्रधान की अपेक्षा इसका उत्तरदायित्व यद्यपि कम होता है पर उसे काम बहुत करना होता है। अतः इसके लिए तुम्हें कोई ऐसा आदमी चुनना चाहिए जो शिक्षित, सदाचारी होने के साथ-साथ कर्मवीर भी हो और जो सभा के कार्य में पूरी दिलचस्पी ले।

कोषाध्यक्ष—इस पद पर अत्यंत ईमानदार एवं सच्चे व्यक्ति को ही चुना जाना चाहिए, क्योंकि सभा का सब धन उसी के पास रहता है। इसे हिसाब किताब रखना भी आना चाहिए।

पुस्तकाध्यक्ष – इसका कार्य सब पुस्तकों का, चाहे वह बिक्री के लिए हों वा पुस्तकालय के लिए—हिसाब रखना होता है। पुस्तकालय से सदस्यों को पुस्तक देना तथा वापस लेना इसी का कार्य होता है।

लेखा निरीक्षक—इसका कार्य कोषाध्यक्ष के हिसाब की जाँच पड़ताल करके यह देखना होता है कि समस्त आय-व्यय उचित है या नहीं। और हिसाब किताब ठीक ठीक रखा गया है या नहीं।

इनके अतिरिक्त उप प्रधान, उपमंत्री और आवश्यकता अनुसार पृथक् पृथक् कार्य के लिए अलग अलग मन्त्री बनाए जा सकते हैं, जैसे क्रीड़ा मंत्री, प्रचार मंत्री आदि। सभा के लिए कार्यक्रम आदि बनाने के लिए कर्मचारियों सहित १५-२० सदस्यों की एक समिति होती है, जिसे 'अन्तरंग सभा' कहते हैं।

"मैंने तुम्हें सब अधिकारयों के कर्त्तव्य बता दिए हैं। अब जो बच्चे आर्य कुमार सभा के सदस्य होना चाहें वे दाईं ओर आ जाएँ। ध्यान रहे कि १८ वर्ष से अधिक आयु वाले बच्चे सभा के सदस्य नहीं हो सकते, नहीं तो छोटे बच्चे को कार्य सीखने का अवसर नहीं मिलेगा।"

इसके पश्चात् गुरुजी ने बच्चों को अधिकारी आदि चुनने की विधि बतलाई। तदुपरान्त बालकों ने अपने अधिकारी चुन लिए। सुशील प्रधान बना और कर्मवीर मंत्री उन्होंने गुरुजी से आर्य कुमार सभा को अगली बैठक में स्वास्थ्य के विषय में भाषण देने की प्रार्थना की, जो गुरुजी ने सहर्ष स्वीकार कर ली। क्रमशः

* ओ३म् *
॥ देवान् यज्ञेन बोधय ॥
ऋत्वनुसार, सुगन्धित, पुष्टिकारक
और रोगनाशक
हवन सामग्री
मूल्य १) सेर
निर्माता
गुरुकुल झज्जर रसायनशाला
झज्जर (रोहतक)

बिच्छू विष चिकित्सा

(लेखक—आचार्य भगवान्देव जी गुरुकुल झज्जर रोहतक)

(२)

(२३) बिच्छू के काटने पर मिट्टी की पट्टी चढ़ाने से लाभ होता है। किसी पात्र में मिट्टी घोलकर काटे हुए स्थान को उस में डबोये रखने से शान्ति मिलती है। विष उतर जाता है।

(२४) मिट्टी को एक दो बार बदल देना चाहिए। जिस ओर काटा हो उससे विपरीत भाग के कान में तथा नाक में सफेद फिटकड़ी पानी में घोलकर थोड़ी बूदें डालें और कुछ समय पीछे निकाल दें, इस प्रकार तीन चार बार करने से बिच्छू का विष दूर हो जाता है।

(२५) बिना बुझा हुआ चूना (कली) और नौसादर दोनों समभाग लेकर थोड़े से जल में इतना पीसें कि उसमें से तीव्र गन्ध निकलने लगे तब उसी समय रोगी को सुंघायें और काटे हुए स्थान पर भी लगायें। इसकी गन्ध मस्तिष्क में पहुँचते ही विष उतर जायेगा। रोगी शांत हो हंसने लगेगा।

(२६) बिच्छू ने जिस अंग में काटा हो उस से दूसरे भाग के कान तथा नाक में शुद्ध जल में सैंधा नमक मिलाकर २-४ बूंदें डालदें, विष उतर जायेगा, बड़ी अच्छी औषधि है।

(२७) यदि एक बिच्छू को पकड़ कर कोयलों की आग पर जलावें, इससे उस स्थान के सब बिच्छू इसकी गन्ध से भाग जायेंगे।

(२८) लशुन स्वरस ३ तोले, मधु शुद्ध ३ तोले, दोनों को मिलाकर सेवन कराने से बिच्छू का विष तुरन्त उतर जाता है।

(२९) भाङ्ग के बीज ३ माशे अत्यन्त बारीक पीस कर मोम में लपेटकर निगलवावें, इससे विष दूर होगा।

(३०) लशुन, हींग, अकर्करा प्रत्येक २ माशे रैकटीफाईड स्पिरिट ५ तोले में मिलाकर थोड़ा थोड़ा सेवन करायें लाभ होगा।

(३१) सांभर लवण पीसकर थोड़ा थोड़ा खिलाने से लाभ होगा।

(३२) रीठे का छिलका चार चार माशे पीसकर जल के साथ खिलाने से तथा लगाने से विष दूर होगा।

(३३) जमालघोटे की गिरी को थोड़े से जल में घिसकर अञ्जन के समान आंख में लगाने से विष दूर होगा किन्तु आंख दुखनी आजायेंगी, उन की फिर चिकित्सा करलें।

(३४) कसौंधी का फल भूनकर खिलाने से बिच्छू का विष दूर होता है।

(३५) सैंधा लवण एक तोला पीसकरर घी ५ तोले दोनों को मिलाकर खिलाने से विष दूर होता है।

(३६) शालपर्णी ५ तोला १ सेर जल में उबालें, इसके आधा रहने पर काटने के स्थान पर बार बार डालने से विष दूर होता है।

(३७) घी गर्म कर सैंधा नमक मिलाकर काटे हुए स्थान पर लगावें विष दूर होगा।

(३८) गर्म दूध में नमक मिलाकर सेकने से लाभ होता है।

(३९) मूली नमक दोनों मिलाकर लगाने से विष दूर होता है।

(४०) निम्बू का रस लगाने से विष दूर होता है।

(४१) नागर मोथा १ तोला से २ तोला तक सरदाई घोटकर पिलाने से लाभ होता है।

(४२) हड़ताल बरकिया, हीङ्ग, चावल, सौंठ सब समान भाग लेकर बारीक पीस जल में मिलाकर लेप करने से विष दूर होता है।

(४३) बिच्छू के काटने पर नीम की धूनी से लाभ

होता है।

(४४) प्याज के दो भाग करके दंश स्थान पर बान्धने से विष उतर जाता है।

(४५) मोर के पंख तथा घी मिला कर दंश स्थान को धूनी देने से लाभ होता है।

(४६) हुलहुल के पत्तों को बारीक पीसकर इसकी नस्य दो, लाभ होगा।

(४७) सज्जी क्षार को पीस, शहद में मिलाकर लेप करने से लाभ होगा।

(४८) निर्मली बीज पानी में पीसकर बिच्छू के डंक पर बांध दें, विष उतर जायेगा।

(४९) कौंच के बीजों का छिलका बिच्छू के काटे हुए स्थान पर लगाने से विष दूर हो जाता है।

(५०) सूखा अमचूर सूखा लहसुन दोनों को पानी के साथ पीसकर बिच्छू के काटे स्थान पर लगाने से विष दूर हो जाता है।

(५१) समुद्रफल को पानी के साथ पत्थर पर घिसकर बिच्छू के काटे हुए स्थान पर लगाने से विष दूर हो जाता है।

(५२) चूहे की मींगनी (लेंडी) पानी में पीसकर बिच्छू के काटे स्थान पर लगाने से बिच्छू का विष दूर हो जाता है।

(५३) सज्जीखार को बारीक पीसकर शहद में मिलाकर काटे हुए स्थान पर लगाने से बिच्छू का विष दूर होता है।

(५४) मैनसिल-सैंधानमक-हींग-चमेली के पत्ते सौंठ इन सबको बारीक पीसकर आपस में मिला दो। और गाय के गोबर का रस डाल डाल कर खूब खरल करें। दो तीन दिन खरल करने के बाद गोलियां बनाकर शीशियों में रखलें, आवश्यकता पर गोली को पानी में घिसकर बिच्छू के काटे हुए स्थान पर लगाओ, तथा दो चार बूँद नाक में टपकालो, इससे बिच्छू का विष तत्काल दूर हो जाता है।

(५५) कपोतविट् मातुलङ्ग, शिरीषकुसुमाद्रसः।
शङ्खिन्यार्क पयःशुण्ठी करञ्जोमधु वार्श्चिके॥

[चरक चि० अ० २३ श्लो० २०८]

कबूतर की बींट, निम्बू का रस शिरस के फूलों रस शङ्खनी (यवतिक्ता) आक का दूध, सौंठ करञ्ज तथा मधु इन सब को कूट पीसकर तथा मिलाकर बिच्छू के काटे पर लेप करें।

(५६) कुटजस्य फलं पिष्टं तगरं जालमालिनी।
तिक्तेक्ष्वाकुश्च योगोऽयं पानप्रधमनादिभिः॥
वृश्चिकोन्दुरुलूतानां सर्पाणां च विषापहः।
समानो ह्यमृतेनाऽयं गराजीर्णं च नाशयेत्॥

(चरक चि० अ० २३ श्लोक २०५,२०६)

इन्द्रजौ, तगर, जालमालिनी [घोषा, देवदली तथा कड़वी तुम्बी इनको समभाग लेकर चूर्ण कर जल के साथ पिलाने, इसके चूर्ण का नस्य देने आदि से बिच्छू, सांप चूहा आदि का विष नष्ट होता है। यह योग अमृत के समान हितकर है, इससे गराजीर्ण भी दूर होता है। अष्टाङ्गसंग्रह, में कुष्ट अधिक लिखा है जालमालिनी के स्थान पर मालती और फलिनी लिखा है।

५७ शिरीषारिष्ट को पिलाने से बिच्छू सर्प आदि तथा सर्व प्रकार का विष नष्ट होता है।

२८ इन्द्रायण के फल खाने से भी बिच्छू बिष दूर होता है। मात्रा छ माशे जल के साथ लें।

५९ गन्धक शुद्ध, पारा शुद्ध, हलदी, सुहागा भुना हुआ इनको बन्दाल के रस में घोटें और मनुष्य मूत्र में घिस कर लगाने सब प्रकार के विष दूर होते हैं।

६० जीरे को पानी के साथ सिलपर पीसकर लुगदी बना लें और लुगदी में पिसा हुआ सैन्धालवण मिलाकर अग्नि पर गरम कर थोड़ा शहद मिलादें। इसको काटी हुई जगह पर लेप करने से बिच्छू का विष अवश्य नष्ट होता है।

(६१) पीपल और सिरस के बीज समान भाग लेकर पानी के साथ पीस लें और बिच्छू काटे स्थान पर कई बार लेप करें विष नष्ट होगा।

६२. वाग्भट्ट ने लिखा है—

अर्कस्य दुग्धेन शिरीषबीजं
त्रिभावितं पिप्पलिचूर्णमिश्रम्।
एषो गदो हन्ति विषाणीकीट—
भुजङ्गलूतोन्दुरुवृश्चिकानाम्॥

सिरस के बीज और पीपल के चूर्ण को मिलाकर आक के दूध की तीन भावनायें दें। इस औषधि के लगाने से कीड़े, साँप, मकड़ी, चूहे और बिच्छुओं का विष नष्ट होता है।

[६३] बिच्छू के काटे स्थान पर मक्खी को मलने से तत्काल लाभ होता है।

[६४] गर्म काञ्जी से बिच्छू के काटे स्थान को सेकने से विष उतरता है।

[६५] घोड़े का नाखून पानी में पीसकर लगाने से विच्छू का विष नष्ट होता हैं।

[६६] कसौंदी के बीज पानी के साथ पीसकर काटे स्थान पर लगाने से विच्छू का विष उतर जाता है।

[६७] तितली के पत्तों का स्वरस थोड़ा थोड़ा कई बार पिलाने से सांप और बिच्छू का विष नष्ट होता है।

(६८) ताड़ के पत्ते, कड़वे नीम के पत्ते, पुराने बाल, सैंधा नमक और घी इन सब को मिला कर बिच्छू के काटे स्थान पर धूनी देने से विष तत्काल उतर जाता है।

(६९) पोदीना और जौ का आटा, तुलसी के पानी में पीसकर लगाने से बिच्छू का विष नष्ट होता है।

(७०) लहसुन को जैतून के तैल में पीसकर काटे हुए स्थान पर लगाने से बिच्छू का विष नष्ट होता है।

(७१) बबूल के पत्तों को चिलम में रखकर, ऊपर आग धर कर तम्बाकू की भांति पीने से बिच्छू का विष उतरता है। साथ ही आक का दूध दंश स्थान पर लगावें।

(७२) बिच्छू के काटते ही तत्काल तिल के तैल अथवा सैंधालवण मिले घी के तरड़े देने से बिच्छू का विष नष्ट होता है।

(७३) बकरी की मैंगनी पानी में पीसकर विच्छू के काटे स्थान पर लगा देने से तत्काल विष उतर कर शान्ति होती है।

(७४) बकरी की मैंगनी जलाकर खाने और उस राख का लेप करने से भी विष नष्ट होता है।

(७५) पानी की बर्फ विच्छू के काटे स्थान पर रखने से तत्काल शान्ति होती है इससे नितान्त लाभ नहीं होता, पश्चात् अन्य औषधि करें।

[७६] कपास के पत्ते और राई दोनों को मिला कर पानी के साथ पीसकर बिच्छू के काटे स्थान पर लेप करने से तत्काल शान्ति होती है।

(७७) कड़वे नीम के पत्ते या फूलों को चिलम में रखकर तम्बाकू की भांति पीने से बिच्छू का विष नष्ट होता है।

(७८) गोमूत्र और निम्बू के रस में तुलसी के पत्ते पीसकर लेप करें और ऊपर से गोबर गरम करके सुहाता सुहाता बाँध दें, विच्छू का विष नष्ट हो जायेगा।

(७९) नीले फल वाले घमिरा के पत्ते मसलकर सूँघने से बिच्छू का विष तुरन्त उतरता है।

(८०) जहरमोरे को गुलाब-जल में घिसकर डंक की जगह लगाने से बिच्छू, सांप प्रभृति का विष निश्चय ही नष्ट होता है।

(८१) मोर के पंख, मुर्गे के पंख, सैंधा नमक, तैल और घी, सबको मिलाकर धूनी देने से बिच्छू का विष उतरता है।

(८२) सिन्दूर, मीठा तेलिया, पारा सुहागा, चूक, निशोथ, सज्जीखार, सौंठ, मिर्च, पीपल पांचों लवण, हल्दी, दारुहल्दी, कमल के पत्ते, बच, फिटकरी, अरण्डी की गिरी, कपूर, मँजीठ, चीता और नौसादर, इन सब को बाराबर बराबर लेकर महीन पीसकर चूर्ण को गोमूत्र, गुड़, आक और थूहर के दूध में मिला कर साँप, बिच्छू, या अन्य विषैले जीवों के काटे स्थान पर लगाने से यह औषधि अवश्यमेव विष को नष्ट करती है।

(८३) करञ्ज वा, कोंहका, लिहसौड़ा, गोकर्णी और

कुड़ा इन सब के फूलों को मस्तु [दही के पानी) में पीसकर बिच्छू काटे स्थान पर लगाना चाहिए।

(८४) बेरी के पत्तों को पानी के साथ पीसकर बिच्छू काटे स्थान पर लेप करने से विष नष्ट होता है।

(८५) काली तुलसी का रस और नमक मिलाकर दो तीन बार लगाने से बिच्छू और सांप का विष उतरता है।

(८६) हल्दी, सैंधानमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, और सिरस का फल या फूल, सबका चूर्ण बनाकर बिच्छू के डंक मारे स्थान को चूर्ण से घिसना चाहिए।

(८७) बिच्छू काटे स्थान पर थोड़ा सा चूना लगा र ऊपर से गन्धक का तेजाब लगाने से तत्काल ष दूर होता है।

(८८) लाल और गोल लटजीरे के पत्ते खाने से त्काल बिच्छू का विष उतरता है और मनुष्य सुखी ो जाता है।

८९. बच, हीङ्ग, वायविडंग, सैंधानमक, गजपीपल ाठा, कालाअतीस, सौंठ, काली मिर्च, और पीपल इन दशों औषधियों को बराबर बराबर लेकर पीसकर चूर्ण बनाकर जल के साथ लेना चाहिये।

९०. यः कासमर्दपत्रं वदने प्रक्षिप्य कर्मफूत्कारम्।
मनुजो ददाति शीघ्रं जयति विषं वृश्चिकानां सः॥

कसौंदी या नीम के पत्तों को चबाकर बिच्छू के काटे हुए मनुष्य के कान में फूक मारने से विष नष्ट होता है। पत्ते चबाकर मुख की भाफ बाहर न जाने दे।

९१. वृश्चिकदंश की पीड़ा दूर करने के लिए बच्छनाग अथवा कसौंधी की जड़ को जल में घिसकर काटे हुए स्थान पर बार-बार लेप करना चाहिये, पीड़ा न्यून होकर विष उतर जाता है।

९२. मेंथलेटेड १ छटांक, नौसादर छः माशे, कपूर ६ माशे सब को शीशी में भरकर कार्क लगा रख दें। आवश्यकता पड़ने पर इसको रूई के फाये में भिगोकर बार-बार लगायें, दाह पीड़ा न्यून होकर विष धीरे-धीरे दूर हो जाएगा।

९३. ३ रत्ती चूना को नीम के पत्तों के १ तोले रस में मिलाकर इस रस की एक-दो बूंद कान में डालने से तथा रूई के फाये को भिगोकर काटे स्थान पर रखने से बिच्छू का विष उतर जाता है।

९४. वृश्चिकदंश पर रसोन (लसुन) के रस में लौंग को घिसकर लगाने से पीड़ा और दाह कम होकर वृश्चिक-विष धीरे-धीरे उतर जाता है।

९५. बिच्छू के काटते ही दंश स्थान को जला देने से भी बिच्छू के विष का वेग नहीं बढ़ता।

९६. दारचीनी का तैल काटे स्थान पर बार-बार लगाने से विष दूर होता है।

९७. नीम्बू का रस पानी में घोलकर पिलाने से रोगी को लाभ होता है।

९८. आम का बूर जब प्रथम दिखाई, दे इस को भलीभांति हाथों से मलें, इसमें वर्ष भर के लिए हाथों में ऐसी शक्ति उत्पन्न हो जाती है कि जिस स्थान पर बिच्छू काटे उसके चारों ओर हाथ की उंगली फेरते रहने से लाभ होता है। साधारणतया बूर न मले हुए हाथों को फेरने से भी कुछ लाभ होता है।

९९. फिटकरी भुनी हुई ३ माशे १ तोला जल में मिलाले, दो-दो बूंद आंखों में डालें लाभ होगा।

१००. अपामार्ग के क्षार को जल में घोलकर डंक के स्थान पर लगाने से तुरन्त लाभ होता है।

१०१. दूद्धी बड़ी को उखाड़ कर हाथ से मलकर गोला बना लें। जहां तक विष चढ़ा हो उस स्थान को उसी के हाथ से पकड़वा दें और उसे गोले से स्पर्श करके विष को दंश स्थान पर उतार लावें और गोले की टिकिया बनाकर दंश स्थान पर बांध दें। अवश्य लाभ होगा।

१०२. श्वेतपुनर्नवा की जड़ से अल्प विष वाले बिच्छू के डंक को स्पर्श करने से बिच्छू ही निर्विष हो जाता है।

१०३. सिरस के बीजों को बकरी के दूध में घिसकर दंश स्थान पर लगायें।

१०४. (१) सत अजवायन १ तोला, (२) सत पोदीना १ तोला, (३) कपूर २ तोला, तीनों को पृथक्-पृथक् बारीक पीस कर शीशी पर कार्क लगाकर हिलायें, तथा धूप में रखदें। तैल सा बन जायेगा, इसकी चार-पांच बूंदें दंश स्थान पर मल दें, लाभ होगा। इसे कई बार लगावें तथा

[शेष पृष्ठ २२ पर]

भयङ्कर रोग नाशक बहुमूल्य औषधियां

—:०:—

च्यवनप्राश

इसी ऋतु के ताजे आँवले से तैयार किया गया स्वादिष्ट, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका [निरन्तर] सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य ७) सेर, ५ सेर लेने पर ६) सेर

ज्वरामृत

यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की रामबाण औषध है। बिगड़े हुये मलेरिया, विषम ज्वर को दूर करने में अद्वितीय औषध है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन सिर दर्द, स्वप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है। मलेरिया काल में सेवन की हुई मलेरिया को नहीं आने देती। अधिक प्रशंसा व्यर्थ है, सेवन करें और लाभ उठावें।

मूल्य छोटी शीशी २) बड़ी शीशी ५)

सूखा रोगामृत

जिन गृहस्थों के बालक सूखा रोग (मसान) से सूख-सूख कर मरते हैं। अनेक प्रकार चिकित्सा करने पर भी कोई लाभ नहीं होता। ऐसे निराश रोगियों के लिये यह औषधि अचूक है। सहस्रों रोगियों पर अनुभूत है। इसके अतिरिक्त बालक के हरे पीले दस्त, अजीर्ण, अरुचि, दाँत निकलते समय के रोग, वमन, निर्बलता और ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखे। मू० १ मास के सेवन तथा मालिश के लिये १२)

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है। इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस [सदा रहने वाले जुकाम और नजले] की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास [खांसी] नाशक, राजयक्ष्मा [तपेदिक] श्वास [दमा] के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढङ्ग की एक ही औषधि है।

छोटी शीशी २), बड़ी शीशी ५)

स्वप्नदोषामृत

इस भयङ्कर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग के दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। मूल्य ५) रुपये

सञ्जीवनी तैल

मूर्च्छित लक्ष्मण को चेतावनी देने वाली इतिहास-प्रसिद्ध बूटी से तैयार किया गया यह तैल घावों को भरने में जादू का काम करता है। भयङ्कर फोड़े फुन्सी, गले-सड़े जख्मों तथा आग से जले जख्मों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भर कर ठीक कर देता है। खून का बहना तो तुरन्त ही बन्द हो जाता है। चोट की भयङ्कर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है।

मूल्य छोटी शीशी ॥=) बड़ी शीशी ५)

सेवन विधि

फाये में भर कर बार-बार चोट आदि पर लगायें।

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्झर (रजि०) रोहतक

हमारे अष्ट रत्न

१—सदाचार पञ्जिका — मू० ॥)

हमारी आज वास्तविक समस्या यह है कि हमें स्वास्थ्य एवं सदाचार सम्बन्धी नियमों का पता होते हुये भी हम उन पर आचरण नहीं कर पाते। यह डायरी उसी समस्या को सुलझाने के लिये लिखी गई है। विश्वास रखिये-यह आपके जीवन को उच्च एवं नियमित बनाने में अवश्य सहायक सिद्ध होगी। इसकी विशेषता यह भी है कि यह आपको डायरी का काम भी देगी और जिस तारीख से आप इसका उपयोग आरम्भ करेंगे, तभी से एक वर्ष के लिये यह काम देगी।

२ हितैषी की गीता—मू० ॥।) इसमें भगवद् गीता के श्लोकों का सुन्दर एवं सरस हिन्दी दोहों में अनुवाद है। अक्षर मोटे और सरल होने के कारण यह सर्वसाधारण के लिये अत्यन्त उपयोगी होगई है।

३—ब्रह्मचर्य रक्षा के साधन--ब्रह्मचर्य रक्षा के साधनों को भलीभांति समझाने के लिये आचार्य भगवान्देव जी ने इस नाम से एक ग्रन्थ माला लिखनी आरम्भ की है जोकि ग्यारह भागों में समाप्त होगी। इसके प्रथम एवं द्वितीय संयुक्त भाग में प्रातः जागरण, चक्षुःस्नान, ऊषःपान तथा शौच आदि के महत्त्व तथा प्रकार। तृतीय भाग में दाँतों की उपयोगिता, उनको पुष्ट बनाने की विधि, दन्त रोगों के निवारणार्थ अनेक प्राकृतिक एवं औपचारिक साधनों तथा पंचम भाग में स्नान का समय, स्थान, एवं वास्तविक विधि और संध्या की उपयोगिता तथा यज्ञ आदि पर सप्रमाण प्रकाश डाला गया है। मूल्य क्रमशः।-), ≡), ।=) है। शेष भाग भी यथा समय प्रकाशित होंगे।

४ मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प (सजिल्द मूल्य २।।) ले० श्री स्वामी आत्मानन्द सरस्वती। योग अभ्यासियों, विद्यार्थियों एवं ईश्वर-भक्ति मार्ग के पथिकों के लिये यह अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है। पहला संस्करण हाथों-हाथ समाप्त हो गया था। अब यह द्वितीय परिवर्धित एवं संशोधित संस्करण निकाला गया है। भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की सिद्धान्त वाचस्पति परीक्षा में निर्धारित, पृ० ३३४

केवल कुछ प्रतियां शेष हैं।

५ वैदिक गीता—सजिल्द मू० ३)

ले० श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती।

श्रीमद् भगवद्गीता पर सर्व सुन्दर एवं अद्वितीय भाष्य। शुद्ध वैदिक दृष्टिकोण से एक मात्र भाष्य। सुन्दर दुरंगी छपाई, परिवर्धित एवं संशोधित तृतीय संस्करण। जन्माष्टमी पर भेंट करने योग्य।

६ संस्कृताङ्कुर—मूल्य १।) लेखक स्वामी वेदानन्द जी 'तीर्थ'। यह संस्कृत सीखने वालों के लिये अपूर्व पुस्तक है। यह इस प्रकार से लिखी गई है कि हिन्दी पढ़ा-लिखा व्यक्ति इसे पढ़कर बिना किसी विशेष सहायता के संस्कृत सीख सकता है। इसमें रटंत की भी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती।

तथा संस्कृत कथामंजरी मूल्य।-)

७ महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी— (सजिल्द) मूल्य २) ले० पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति। इस युग में दो ऐसे महापुरुष हुए हैं जिनकी धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विचारधारा ने युग का निर्माण किया है। अनेक अंशों में जहां ये दो महापुरुष—ऋषि दयानन्द और महात्मा गांधी—एक मत थे वहां कुछ एक बातों में उनका परस्पर भेद भी था। इन दोनों के विचारों की समता एवं भेद को जाने विना वर्तमान राजनीति को समझना कठिन है। इस पुस्तक में लेखक ने दोनों महात्माओं के धर्म, समाज, तत्वज्ञान तथा राजनीतिविषयक विचारों की निष्पक्ष रूप से तुलना की है।

८ विदेशों में एक साल मूल्य २।) —लेखक स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज। अनेक चित्रों से आभूषित इस पुस्तक में श्री स्वामी स्वतंत्रानन्द जी महाराज द्वारा की गई मारीशस, टांगानिका, केनिया, यूगँडा आदि देशों की यात्रा का विशद विवरण सरल एवं रोचक भाषा में दिया गया है। इन देशों की धार्मिक, राजनीतिक और सामाजिक अवस्था, वहां पर भारतीय संस्कृति का प्रचार एवं उसकी रक्षार्थ किये गये संघर्ष का वर्णन दिया गया है। एक बार आरम्भ करने पर पुस्तक छोड़ने को मन नहीं चाहता।

वैदिक साहित्य सदन, आर्य समाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली।

आसनों के व्यायाम

(लेखक--भाष्याचार्य ब्रह्मचारी वेदव्रत, सिद्धान्त वाचस्पति गुरुकुल झज्जर रोहतक)

[२]

इसका यह अभिप्राय नहीं कि विवाहित स्त्री-पुरुष आसन अथवा अन्य व्ययाम करने के अधिकारी नहीं हैं। कोई भी सदाचारी व्यक्ति व्यायाम तथा आसन कर सकता है। कोई भी हानि नहीं, अपितु लाभ अवश्य ही होगा। ऋषियों ने ऋतुगामी सच्चे गृहस्थियों को भी एक प्रकार का ब्रह्मचारी ही माना है।

आसन किसे न करने चाहिएं

सामान्यतः आसन करने का अधिकार स्वस्थ और नीरोग स्त्री-पुरुष को है। परन्तु बहुत से रोगों की चिकित्सा भी आसनों द्वारा की जाती है और वह स्थायी होती है, अतः जिन-जिन रोगों में जो-जो आसन लाभदायक हों, वे अवश्य ही करने चाहिएं। कुछ आसन ऐसे भी हैं जो स्त्रियों को नहीं करने चाहियें, उनका उनकी विधि के साथ-साथ निर्देश कर दिया जायेगा। ऋतुकाल और गर्भावस्था में भी आसन नहीं करने चाहियें।

आसनों का प्रभाव

आसनों का प्रभाव अन्य व्यायाम की अपेक्षा विलम्ब से होता है, दण्ड बैठक आदि के व्यायाम का प्रभाव एक महीने में ही प्रतीत होने लगता है किन्तु आसनों के सम्बन्ध में ऐसा नहीं है। इनका लाभ विलम्ब से प्रतीत होता है किन्तु उतना ही चिरस्थायी भी होता है। वही बात है "धीरे पके सो मीठा होय"

अतः यथाविधि आसनों का सुदीर्घकाल तक अभ्यास करना चाहिए तभी लाभ होगा। शीघ्र लाभ की आशा से आसनों के करने में शीघ्रता नहीं करनी चाहिए, उससे लाभ के स्थान में हानि ही होगी। क्योंकि आसनों का सम्बन्ध आभ्यन्तर सूक्ष्म नस और नाड़ियों से है, उनके लिए साधारण अनियमता भी असाधारण हानिकर होगी। अतः जिन आसनों के विषय में जो भी नियम बताये जावें उनका ध्यानपूर्वक पालन करना चाहिए, तभी लाभ होगा, अन्यथा करने से हानि ही हानि होगी।

आसन करने के लिए किसी आसनाभ्यासी पुरुष से आसनों की विधि सीख लें तो और भी अच्छा है। आसन संख्या में बहुत हैं किन्तु स्वास्थ्य रक्षा और ब्रह्मचर्य की दृष्टि से जो आसन अधिक लाभदायक हैं उन पर मैं क्रमशः प्रकाश डालूंगा।

शीर्षासन

सर्व प्रथम शीर्षासन के विषय में लिख रहा हूँ, जो ब्रह्मचर्य रक्षा में सर्वोत्तम है। शीर्षासन को कपालासन, शीर्षासन, वृक्षासन तथा विपरीतकरणी मुद्रा भी कहते हैं। इस के करने की विधि इस प्रकार है—भूमि पर आसन बिछा कर उस पर कपड़े की गोल गद्दी बनाकर रखें, उस पर शिर रख दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर मिला शिर के दोनों ओर दृढ़ता पूर्वक रखें, और शरीर को शनैः-शनैः ऊपर को उठाते हुए शिर के बल खड़े हो जावें। मस्तिष्क और शिर के बीच का भाग अर्थात् माथा ही वस्त्र पर रखना चाहिये। शरीर नितान्त सीधा रहे, पावों की अंगुलियाँ ऊपर को ही रहें, नेत्र खुले रहें, घुटने भी ढीले न रहें, श्वास-प्रश्वास की क्रिया पूर्ववत् चलती रहे। यही शीर्षासन की विधि है।

शीर्षासन करने के पश्चात् कुछ काल तक सीधा खड़ा रहना चाहिये। कुछ आसनों के अभ्यासियों का ऐसा मत है कि जितने समय तक शीर्षासन करें उतने ही समय तक सीधे खड़े रहें तो विशेष लाभ होता है। यदि खड़े रहने के लिए समय कम हो तो खड़े होकर करने के आसन तथा व्यायाम कर लेने चाहियें।

प्रारम्भ में किसी दूसरे व्यक्ति अथवा भित्ति का आश्रय ले लेना चाहिये, क्योंकि आरम्भ में अभ्यास के बिना गिरकर चोट लगने का भय रहता है। अभ्यास होने के पश्चात् आश्रय लेना छोड़ दें।

शीर्षासन का अच्छा अभ्यास होने पर इसके अनेक भेद कर सकते हैं। यथा—शीर्षासन करते हुए ी ऊपर पद्मासन लगाना, एक पांव नीचे करना, दोनों ांव नीचे करना, पांवों को आगे पीछे तथा पार्श्व में घुमाना, शिर को ऊपर उठा कर केवल हाथों के बल ी खड़े रहना इत्यादि।

शीर्षासन के पर्याप्त अभ्यास के पश्चात् यह भी सम्भव हो जाता है कि हाथों को शिर से पृथक् कर केवल शिर के ही बल पृथिवी पर खड़ा रहे। यह बहुत कठिन है, क्योंकि सम्पूर्ण शरीर का भार ग्रीवा पर ी पड़ता है, किन्तु अभ्यास होने पर सुखपूर्वक कर कते हैं।

शीर्षासन प्रारम्भ में अधिक नहीं करना चाहिए। वल दश-पन्द्रह सैकिण्ड से आरम्भ कर प्रथम प्ताह में पांच मिनट का अभ्यास करें, तत्पश्चात् ति सप्ताह एक या दो मिनट बढ़ा कर आध घण्टे क अभ्यास कर लेना चाहिये। जब आध घण्टा ीर्षासन करने का अभ्यास हो जाता है तब स्वप्नदोष, मेह, धातुक्षय आदि वीर्यसम्बन्धी समस्त विकार नैः शनैः समूल नष्ट हो जाते हैं और शरीर स्वस्थ वं कान्तिमय बन जाता है। किन्तु आध घण्टा शीर्षासन करने वाले को घी—दूध, मक्खन, बादाम आदि पौष्टिक आहार अवश्य करने चाहियें। जिन को ौष्टिक भोजन पर्याप्त मात्रा में सुलभ हों वे आध ण्टे से अधिक अभ्यास जितना चाहें उतना कर सकते हैं। शीर्षासन करने का समय अपने बल और भोजन के अनुसार ही न्यूनाधिक करना चाहिये, अन्यथा पौष्टिक आहार की न्यूनता में अधिक समय तक शीर्षासन करने से मस्तिष्क में शुष्कता आ जाती है।

शीर्षासन गुणों की दृष्टि से सब आसनों में श्रेष्ठ तथा ब्रह्मचर्य का प्राण है। जिस भान्ति प्राणों के बिना जीना असम्भव है उसी भान्ति बिना शीर्षासन ब्रह्मचर्य की रक्षा करना तथा ऊर्ध्वरेता बनना असम्भव नहीं तो अतिकठिन अवश्य है, विशेषतः आधुनिक वातावरण में। अतः ब्रह्मचर्य प्रेमियों को शीर्षासन अवश्य ही करना चाहिये। इस आसन को पुरुष तथा स्त्री सभी कर सकते हैं।

कुछ लोगों का विचार है कि शीर्षासन करने से बुद्धि तथा नेत्रदृष्टि मन्द हो जाती है, अतः इसे न करना चाहिये। किन्तु यह विचार अज्ञान और अनुभव के अभाव के ही कारण हैं। शीर्षासन करने से बुद्धि तथा नेत्रदृष्टि दोनों ही तीव्र होते हैं, यह अनुभूत है।

शीर्षासन करते समय रक्त प्रवाह शुक्राशय की ओर से मस्तष्क की ओर हो जाता है, जिससे मनुष्य ऊर्ध्वरेता बनता है और वीर्य की ऊर्ध्व गति होने से स्वप्नदोष, धातुक्षय, प्रमेह आदि वीर्य विकार नहीं होते। प्राचीन ऋषियों द्वारा आविष्कृत, ऊर्ध्वरेता बनने की यह विशेष विधि है, इसके श्रद्धापूर्वक सतत अभ्यास से मनुष्य अवश्यमेव ऊर्ध्वरेता हो जाता है।

यात्रा करने से अथवा अन्य किसी कठोर शारीरिक परिश्रम से जब शरीर थक जाता है तब थोड़ी देर ठहर कर शीर्षासन करने से थकावट दूर होकर पुनः चैतन्य एवं नवीन शक्ति का संचार होता है। अनुभव कर के देख लें।

मस्तिक का कार्य करने से जब मनुष्य थक जाता है तब शीर्षासन करने से मस्तिष्क की थकावट दूर होती है, रक्त का प्रवाह मस्तिष्क की ओर होने से ज्ञानतन्तुओं को जीवन शक्ति मिलती है, स्मरण शक्ति तीव्र होती है, मेधाबुद्धि और नेत्र दृष्टि बढ़ती है, सफेद बाल काले हो जाते हैं, सम्पूर्ण मुखमण्डल कान्तिमय बन जाता है।

यदि शीर्षासन करते समय आखों की पुतली इतस्ततः घुमाई जाय तथा टकटकी लगाकर किसी एक स्थान पर दृष्टि स्थिर की जाय तो अधिक लाभ होता है। वृद्धावस्था में भी उपनेत्र (ऐनक) लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। जो उपनेत्र लगाने के

अभ्यासी हैं वे भी शीर्षासन के अभ्यास से उपनेत्र छोड़ सकते हैं, किन्तु गाय का दूध और घी यथोचित मात्रा में सेवन अवश्य करना चाहिये।

हृदय सर्वदा रक्तशुद्धि का कार्य करता रहता है उसको किसी भी समय विश्राम नहीं मिलता, परन्तु शीर्षासन करते समय रक्तप्रवाह स्वयमेव हृदय की ओर जाता है, जिस से थोड़ी सी शक्ति से सम्पूर्ण शरीर के रक्त को शुद्ध कर देता है, हृदय को कुछ विश्राम मिलता है जिस से हृदय की शक्ति बढती है, मनुष्य दीर्घायु होता है, रक्त के शुद्ध होने से फोड़े फुन्सी, दाद, कण्डू (खुजली) कुष्ठ(कोढ़), पामा, पीनस आदि रक्तविकारजन्य तथा चर्मरोग कभी पास नहीं फटकते।

प्रायः देखा जाता है कि बहुत से मनुष्यों की ग्रीवा पतली होती है और शिर बहुत बड़ा, जिस से शरीर कुरूप दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त ग्रीवा के निर्बल होने से किसी भारवान् पदार्थ को भी शिर पर नहीं संभाल सकते, तथा कण्ठ के दुर्बल होने से श्वास, कास, स्वरविकृति आदि विविध विकार उपस्थित हो जाते हैं। क्योंकि समस्त शरीर की प्रधान नाड़ियों का कण्ठ से सम्बन्ध है। शीर्षासन करने से उपयुक्त रोग तथा दोष नहीं होते।

पेट की आन्तों का बोझ सदा नीचे की ओर रहने से कई मनुष्यों का पेट बाहर निकल आता है किन्तु शीर्षासन करने से यह भी ठीक हो जाता है। बढ़ा हुआ मेद (चर्बी) भी नष्ट हो जाता है और शरीर सुगठित एवं सुडौल बन जाता है।

शीर्षासन करने से पाचनशक्ति तीव्र होती है जिस से भोजन पचकर शरीर का अंग बन जाता है और मल यथा समय बाहर हो जाता है। अग्नि मांद्य, अजीर्ण, कोष्ठ बद्धता, बहुमूत्र प्रभृति उदर रोग नहीं होते। बढ़ी हुई प्लीहा (तिल्ली) और यकृत् (जिगर) ठीक हो जाते हैं। उदावर्त, गुल्म, आध्मान (अफारा) आदि वात रोगों में भी शीर्षासन लाभप्रद है।

नवीन अर्श (बवासीर) शीर्षासन करने करने से अवश्यमेव समूल नष्ट हो जाती है, पुराने अर्श-रोग में लाभदायक है तथा निरन्तर श्रद्धापूर्वक पर्याप्त समय तक अभ्यास करने से उससे भी मुक्त करा देता है। बधिरता, कम सुनना, कान का बहना, पाण्डु, संग्रहणी, सूजन, प्रतिश्याय (जुकाम) इत्यादि रोगों में भी शीर्षासन करने से लाभ होता है।

सभी रोगों की उत्पत्ति का कारण उदर ही है, पेट के यथोचित भोजन–पाचन आदि कार्य न करने से मनुष्य रोग-ग्रस्त हो जाता है और शीर्षासन करने से पेट नीरोग रहता है, पाचन-क्रिया ठीक करता है अतः प्रायः सभी रोगों में शीर्षासन हितकर है।

अभिष्यन्द (नेत्र पीड़ा) में शीर्षासन न करना चाहिये, क्योंकि रक्त के नेत्रों में जाने से पीड़ा अधिक होती है। और भी इसी प्रकार का रोग जिस में शीर्षासन करने से लाभ के स्थान पर हानि होने की सम्भावना हो तो उस में भी शीर्षासन न करें।

शीर्षासन से नेत्र-ज्योति वृद्धि

"वैसे तो वीर्यरक्षा तथा आँखों के लिये, सब प्रकार के व्यायाम से लाभ पहुंचता है परन्तु शीर्षासन, वृक्षासन, मयूरचाल, सर्वांगासन तो वीर्यरक्षा में परम सहायक तथा आँखों के लिए सब प्रकार के व्यायामों में मुख्य हैं। शीर्षासन, वृक्षासन, मयूरचाल, सर्वांगासन, जो एक प्रकार से शीर्षासन के ही भेद तथा समान गुणवाले हैं, वीर्यरक्षा में परम सहायक तथा आँखों के लिये गुणकर हैं—यह स्वयं मेरे जीवन का अनुभव है।

जब मैं दशम श्रेणी में पढ़ता था, डाक्टर ने मेरी आँखों में रोग बताया। इस रोग में दूर की वस्तु स्पष्ट नहीं दीखती और पुस्तक पढ़ने के लिये विद्यार्थी को पुस्तक पास लानी पड़ती है। यह रोग आजकल प्रायः बहुत से विद्यार्थियों को होता है। डाक्टर ने साथ-साथ यह सम्मति भी दी कि आप आँखों पर चश्मे लगावें नहीं तो आँखें खराब हो जावेंगी। मुझे डाक्टर की इस सम्मति पर हँसी आई। उस समय मुझे चश्मे से घृणा थी। ईश कृपा से और महर्षि दयानन्द की दया से

मैं आर्य समाज की शरण में आचुका था। इसी कारण ब्रह्मचर्य पालन की लगन भी पहले से ही लग चुकी थी। इसी धुन में मैं नियम पूर्वक शीर्षासनादि ायाम करता था। इसका फल धीरे-धीरे मिलने लगा तु क्या किसी अंग में भी किसी प्रकार का विकार रहा। महर्षि की कृपा से आज २४ वर्ष के पीछे में खता हूँ कि मेरी आँखों की ज्योति दिनप्रतिदिन ढ़ती ही जाती है। और डाक्टर की चश्मे वाली ात याद करके मुझे आज भी हंसी आती है

यदि लोग चक्षुरक्षा के लिए ब्रह्मचर्य पालन, ीर्षासनादि व्यायाम साधनों का अवलम्बन करें तो कितने ही लोगों के चश्में उतर जायें। निष्कर्ष यह है कि विद्यार्थी आदि मस्तिष्क से काम करने वाले लोगों को शीर्षासनादि व्यायाम से जहाँ अनेक लाभ होते हैं वहाँ उनकी आखों के रोग और विकार भी दूर होते हैं, अतः चक्षुप्रेमियों को प्रतिदिन शीर्षासनादि व्यायाम अवश्य करना चाहिये।"

शीर्षासन से लाभ

(श्री पं० देवशर्मा जी 'अभय' भू० पू० आचार्य गुरुकुल काङ्गड़ी के अनुभव)

मैंने दो-ढाई वर्ष तक शीर्षासन का अभ्यास किया है। इसलिये यह समझकर कि मेरा अनुभव भी पाठकों को रुचिकर और कुछ सेवाकारक हो सकेगा, इस विषय पर निम्न पंक्तियाँ लिखने लगा हूँ।

(१)भूखपर——शीर्षासन करने से भूख खूब बढ़ी। अथवा यह कहना अधिक ठीक होगा कि क शीर्षासन से शरीर में किसी वस्तु की आवश्यकता अनुभव होती थी, जो कि हलके और स्निग्ध भोजन खा लेने से भी मालूम होती थी। यह सत्य है कि, शीर्षासन करने वाले को घी दूध आदि का विशेष सेवन करना चाहिये, नहीं तो पेट अग्नि से जलने लगता है। मेरी समझ में शीर्षासन करने वाले को नित्य नियमित रूप से अवश्य भोजन करते रहना चाहिये।

(२) वीर्यरक्षा पर—शीर्षासन से यद्यपि पूर्ण वीर्यरक्षा तो मुझे नहीं प्राप्त हुई, परन्तु स्वप्न दोष की मात्रा और संख्य अवश्य कम हो गई, और यह तो सर्वथा निश्चय हो गया कि इस क्रिया से पूर्ण वीर्यरक्षा कालान्तर में हो जायेगी।

(३) नेत्रों पर—कुछ दिनों शीर्षासन करने से नेत्र खुलते से प्रतीत होते थे।

(४) निद्रा पर—शीर्षासन करने के बाद ही शरीर में ऐसा आराम और शान्ति अनुभव होती थी कि प्रायः मुझे इसके उपरात थोड़ीसी निद्रा आजाती थी।

(५) सिरदर्द पर —मैं कुछ आग्रही स्वभाव का हूँ इसलिये चाहे कुछ भी क्यों न हो जाये, मैं शीर्षासन दोनों समय कर ही डालता था। तीन-चार बार ऐसा हुआ कि सायंकाल के समय मेरे शिर में दर्द हो रहा था, परन्तु फिर भी मैंने शीर्षासन किया ही। प्रत्येक बार इसका परिणाम यह हुआ कि एक बार तो जोर से सिर में दर्द बढ़ा और कुछ डकारें आईं और फिर एकदम दर्द अच्छा हो गया। परन्तु मैं लोगों को यह सलाह देने को तैय्यार नहीं कि जब आप के सिर में दर्द हो तब आप शीर्षासन करके खड़े हो जायें। बल्कि यह कह सकता हूं कि शीर्षासन के अभ्यास से सिरदर्द पैदा होना बन्द होजायेगा।

(६) आगन्तुक रोगों पर—मेरा यह निश्चित अनुभव हो गया था कि जब कभी मुझे कुछ रोग होने का भय होता था तब वह मेरे शीर्षासन के समय से पहिले ही मुझे दबा सकता था, इसके पश्चात् नहीं। कई बार जब चारों ओर बीमारी फैली हुई थी, मुझे भी कुछ ज्वर होने की आशंका हुई, परन्तु शीर्षासन करने के उपरान्त शरीर बिलकुल निर्व्याधि हो जाता था। कुछ ज्वर या हरारत, कान में दर्द, जुकाम, खाँसी की ठसक आदि पैदा होकर भी शीर्षासन के बाद स्वयमेव उड़ जाते थे। कभी छाती में सर्दी लग गई है, ऐसा भय हो जाता था, परन्तु शीर्षासन करने के पश्चात् सारा शरीर एक

संस्था परिचय

गुरुकुल झज्जर—

प्रभु की दया से गुरुकुल झज्जर दिन प्रतिदिन उन्नति कर रहा है। पीछे ता० १३ सितम्बर को गुरुकुल की प्रबन्धकारिणी सभा का अधिवेशन हुआ। अधिवेशन में पर्याप्त उत्साह था। आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये पचास सहस्त्र रुपये फसल के उपरान्त इकट्ठे करने का कार्यक्रम बनाया जायेगा।

माननीय चौ० राजेन्द्रपाल अ० डायरेक्टर

इस अवसर पर श्री माननीय चौधरी राजेन्द्रपाल जी असिस्टेण्ट डायरेक्टर ग्राम पंचायत ने पधारने की कृपा की। गुरुकुल के औषधालय (फार्मेसी) रसायनशाला, कृषि, पुस्तकालय, गोशाला, छात्रावास आदि विभागों को देख कर प्रसन्नता प्रकट की। आपने सभासदस्यों तथा गुरुकुल प्रेमियों के समक्ष भाषण देने की भी कृपा की। आयुर्वेदमहाविद्यालय की आयोजना से बड़े ही प्रभावित हुए। उन्होंने अपने भाषण में आयुर्वेद महाविद्यालय की भूरि-भूरि प्रशंसा की और उपस्थित महानुभावों से तन-मन-धन से सहयोग देने की अभ्यर्थना की। साथ ही राष्ट्र की भावी सम्पत्ति नवयुवकों के लिये ग्राम ग्राम में खेलों की आयोजना रक्खी। खेलों के आधार पर नवयुवक एक-दूसरे के साथ बैठना सीखेंगे। इस से सबल राष्ट्र का निर्माण होगा और साथ ही ग्रामवासियों को पारस्परिक सद्भावना उत्पन्न करने की प्रेरणा की। अवकाश के समय पुनः पधारने का वचन दिया।

आपके साथ ही श्रीमान् शङ्करसिंह जी पंचायत आफीसर झज्जर भी पधारे थे। आप भी गुरुकुल के शान्त वातावरण से बड़े प्रभावित हुए।

माननीय कुमरिया जी

गवर्नमेण्ट कालेज रोहतक के प्रिंसिपल श्री माननीय आर, आर, कुमरिया जी ने भी पधारने की कृपा की।

आपने अपने भाषण में बतलाया कि में रोहतक के रेलवे रोड बाजार में गुरुकुल की चाय लेने गुरुकुल फार्मेसी की दूकान पर गया औषध देखी-भाली। आंख की औषध पूछनेपर औषध विक्रेता ने मुझे नेत्र-ज्योति नाम सुर्मा की सुर्मे की शीशी दी और कहा कि इसका प्रयोग निरन्तर करना चाहिये। मैं वापस लौटा और कुछ समय तक मैंने नेत्र ज्योति सुर्मे का प्रयोग किया और अब मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि तीस वर्ष तक अनेक सुर्मे प्रयोग करने के उपरान्त मुझे यह ऐसा अच्छा सुर्मा मिला है। कि मैं अब तीन-तीन घण्टे बिना थके पढ़ लेता हूं। पहले दस मिनट तक नहीं पढ़ सकता था। वास्तव में इस सुर्मे के कारण ही मेरा गुरुकुल झज्जर से परिचय हुआ। मुझे यहाँ के ब्रह्मचारियों के रहन-सहन आदि को देख कर भारी प्रसन्नता हुई। मन यह चाहता है कि कुछ समय तक ऐसे वातावरण में रहा जाये। जब में विद्यार्थियों से बात करता हूँ तो विद्यार्थी बन जाता हूँ। मुझे गुरुकुल को देख कर प्रसन्नता हुई।

अध्यक्ष प्रचार विभाग

श्री माननीय कुमरिया जी के साथ ही रोहतक जिले के प्रचार विभाग के अध्यक्ष श्री माननीय ईश्वरचन्द्र जी भी पधारे। उन्होंने भी गुरुकुल के विभिन्न विभागों को देख कर प्रसन्नता प्रकट की।

माननीय डिप्टी कमिश्नर रोहतक

ता० १९ सितम्बर को सायंकाल लगभग ७ बजे माननीय डिप्टी कमिश्नर जी जिला रोहतक पधारे। यह समय ब्रह्मचारियों की सन्ध्योपासना का था। गुरुकुल के विभिन्न विभागों को शीघ्रता में देख सके। वातावरण से बड़े प्रभावित हुये। पुनः अवकाश के समय पधारने का वचन दिया।

माननीय डिप्टी कमिश्नर जी के साथ झज्जर तहसील के तहसीलदार जी भी थे। आपने भी अवकाश के समय गुरुकुल को देखने की इच्छा प्रकट की।

पूज्य स्वा० केशवानन्द जी महाराज

ता० १९ सितम्बर को पूज्यपाद स्वा० केशवानन्द जी महाराज सदस्य राज्य परिषद् देहली ने गुरुकुल में पधार

कर गुरुकुलवासियों को प्रोत्साहित किया। पूज्य स्वामी जी महाराज का सारा जीवन सामाजिक कार्यों, शिक्षा प्रचार, पुस्तकालय की स्थापना आदि में व्यतीत हुआ है। अबोहर का हिन्दी पुस्तकालय आपके ही प्रयत्न । परिणाम है। ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगारिया ने आपके प्रयत्नों से ही उन्नति की है। राजस्थान में जहां शिक्षा का नाम न था। आपने शिक्षण संस्थाओं का जाल बिछा दिया है। राजस्थान के सांस्कृतिक जीवन में आपका विशेष हाथ है। आप कर्मठ संन्यासी है। आपका कहना है कि कर्म करते रहना चाहिये। फल की आकांक्षा नहीं करनी चाहिये, वह तो अवश्यभावी है अवश्य मिलकर ही रहेगा।

आपने अपने भाषण में कहा कि मेरा जीवन भी शिक्षण संस्थाओं के साथ सम्बन्धित रहा है। परन्तु यहाँ जैसा वातावरण हमारे यहाँ नहीं है। यहाँ के वातावरण का मैं प्रभाव लेकर जा रहा हूँ। मुझे प्रसन्नता है कि यह गुरुकुल विशेष उन्नति करेगा।

पूज्य स्वामी जी महाराज की सम्मति निम्न है—

"गुरुकुल की अनेक विशेषतायें हैं कि जिन्हें देखते हुए यह बहुत ही जल्दी उन्नति करेगा। यहाँ के वातावरण और उन्नति साधनों पर मुझे अत्यन्त हर्ष है। सञ्चालकों और कार्यकर्त्ताओं को उत्साह से बढ़ते जाना चाहिये। गुरुकुल का भविष्य अत्यन्त उज्वल है।"

माननीय पं० समरसिंह जी एम. एल. ए.

ता० २४ सितम्बर को माननीय श्री पं० समरसिंह जी वेदालङ्कार सदस्य विधान सभा पंजाब पधारे। आप गुरुकुल विश्वविद्यालय काङ्गड़ी के प्रतिष्ठित स्नातक हैं। वर्षों तक उपदेशक पद से प्रान्त की सेवा की है। आपने एक मनोहर व्याख्यान ब्रह्मचारियों के समक्ष दिया। आपके व्याख्यान का प्रभाव हृदयग्राही रहा। आपने कहा--गुरुकुल झज्जर के विषय में जैसी ख्याति मैंने सुनी थी वैसा ही गुरुकुल को पाया।

निवेदक - आचार्य

ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर

आर्य महाविद्यालय किरठल (मेरठ) में ता० ११ अक्टूबर से १८ अक्टूबर सन १९५३ ई० तक ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर की आयोजना की गई है। प्रवेशार्थी ता०११ अक्टूबर को सायं तक पहुंच जायें। प्रवेश नियम आर्य महाविद्यालय किरठल से मंगायें।

निवेदक-संयोजक

विरजानन्द परिषद् की परीक्षायें

विरजान्दन परिषद् की परीक्षायें दशहरा की छुट्टियों में ता० २५ अक्टूबर से प्रारम्भ होंगीपरीक्षार्थी नोट कर लें।

निवेदक—परीक्षा मन्त्री जगन्नाथ देहली

पंजाब प्रान्तीय आर्यकुमार परिषद्

पंजाब प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद् की स्थापना फाल्गुन के अवसर पर गुरुकुल झज्जर के वार्षिक महोत्सव पर हुई थी। इस का सम्बन्ध अखिल भारतीय आर्यकुमार परिषद् से हो चुका है। इस में प्रान्त की १०० आर्य कुमार सभायें सम्मिलित हैं।

पंजाब प्रान्तीय आर्यकुमार सम्मेलन

आर्य समाज झज्जर रोड रोहतक के ता० २७-२८-२९ नवम्बर को होने वाले वार्षिकोत्सव पर पंजाब प्रान्तीय आर्य कुमार सम्मेलन की आयोजना की गई है। सब कुमारों को उत्साह से इस में भाग लेना चाहिये।

मन्त्री—भगवनदेव

विशेष सूचना

हर्ष का विषय है कि "सुधारक" का सर्वत्र स्वागत हो रहा है। कतिपय महानुभावों के पत्र वी. पी. से मंगाने के लिये आये पड़े हैं। उनकी सेवा में निवेदन है कि वह अपना चन्दा मनिआर्डर से भेजें। इस प्रकार २=) व्यय ही होगा। और यदि वी. पी. से मंगायेंगे तो दो रुपये दश आने देने पड़ेंगे आठ आने का बड़ा भारी अन्तर है। इसलिये हमारी प्रेरणा है कि वी. पी. मगाने वाले तथा जिनका चन्दा २) अभी तक नहीं आया है, वे सब अपना चंदा मनिआर्डर से ही भेज कर अनुगृहीत करें

व्यवस्थापक

अध्यात्म प्रश्नोत्तरी

[लेखक—श्री पं० देवराज जी विद्यावाचस्पति]

प्रश्न—ईश्वर का स्वरूप और उसकी प्राप्ति के साधन पर कुछ प्रकाश डालने की कृपा कीजिये ?

उत्तर—व्यावहारिक दृष्टि से तो ईश्वर का स्वरूप वही है जो सत्य का स्वरूप है। सत्य को पहचानने से ईश्वर की पहचान हो जाती है। बालक, युवा, वृद्ध मूढ़ या विद्वान्, ब्रह्मचारी, गृहस्थ वानप्रस्थ और संन्यासी, हिन्दू, मुसलमान, पारसी, जैनी, बौद्ध, ईसाई आदि तथा किसी भी देश में रहने वाला कोई भी पुरुष या स्त्री सब को आजीवन कुछ न कुछ करना ही पड़ता है। बिना कार्य के कोई रह नहीं सकता। सब कर्मोपासना में लगे हुए हैं। कार्य के दो स्वरूप हो जाते हैं—एक सत्कर्म, दूसरा दुष्कर्म। इन दोनों का विवेक मनुष्य अपने ज्ञान के आधार पर बुद्धि के द्वारा किया करता है। ज्ञान के द्वारा जो अनुभव प्राप्त होता है उसी से बुद्धि का निर्माण होता है। ज्ञान मनुष्य को कर्म के द्वारा प्राप्त होता है। अनेक कारणों से कभी मनुष्य में सत्कर्म का प्रवाह उदय होता है और कभी दुष्कर्म का। सत्कर्म के प्रवाह से उत्पन्न हुई बुद्धि व विवेक शक्ति कर्मोपासना के द्वारा मनुष्य को सत्यनिष्ठ बना देती है और ऐसे सत्यनिष्ठ मनुष्य को भूत, भविष्यत और वर्तमान तीनों कालों में सत्य स्वरूप का प्रकाश कर देती है, इसी सत्य स्वरूप के प्रकाश का नाम ईश्वर के स्वरूप का प्रकाश होता है। ऐसी अवस्था में मनुष्य का निर्विकल्प ज्ञान का उदय होता है। इस प्रकार के ज्ञान के उदय का ही नाम ईश्वर-प्राप्ति है जैसे जैसे मनुष्य अब कीड़स साधना के द्वारा सत्यनिष्ठ होता जाता है वैसे वैसे उसके कर्म का प्रवाह व्यावहारिक दृष्टि से कुछ कम पड़कर अध्यात्म की ओर विशेष प्रवाहित होने लगता है और एक अवस्था उसे मनुष्य को ऐसी प्राप्त होती है जिस में उसे अध्यात्म—प्रसाद मिल जाता है, यह अध्यात्म प्रसाद ईश्वर प्राप्ति का स्वरूप है, यहाँ तक पहुँचने के लिए मनुष्य को ज्ञानोपासना, कर्मोपासना इन दोनों की आवश्यकता रहती है। इन दोनों के द्वारा मनुष्य के अन्दर भक्ति का उदय हो जाता है। भक्ति का अर्थ है दूसरे के स्वरूप में अपने स्वरूप का हो जाना। ज्ञान और कर्मोपसनाओं से मनुष्य को वह भक्ति प्राप्त होती है जिस में मनुष्य के अपने आत्मा में ईश्वर का स्वरूप या परमात्मा का स्वरूप प्रकट हो जाता है अर्थात् वह पूर्ण रूप से सत्य में प्रतिष्ठित हो जाता है।

प्रश्न—मनुष्य स्वभाव से मांसाहारी है या शाकाहारी ?

उत्तर—हमारी समझ में मनुष्य स्वभाव से शाकाहारी है मांसाहारी नहीं। इस विषय में निम्नलिखित युक्तियाँ हैं।

१—मांसाहारियों के बच्चे जन्म होने पर अन्धे पैदा होते हैं जब कि शाकाहारियों के बच्चे जन्मते ही आँखें खोल लेते हैं।

२—मांसाहारी प्राणी जीभ से पानी पीते हैं और शाकाहारी घूंट से।

३—मांसाहारी प्राणी मैथुन के पश्चात् तुरन्त पृथक् नहीं हो पाते, जब कि शाकाहारी हो जाते हैं।

४—मांसाहारी प्राणियों के मुख में कीले अन्य दान्तों की अपेक्षा अधिक लम्बे और नोकीले होते हैं, जब कि शाकाहरारियों के वैसे नहीं।

५—मांसाहारियों का पसीना जीभ से टपका करता है, शाकाहारियों का त्वचा से।

सुधारक का स्वागत

१-आपका पत्र प्राप्त हुवा यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुवा कि आप ने श्रावणी से सुधारक नाम का पत्र मासिक निकाल दिया है ऐसे पत्र की अत्यन्त आवश्यकता थी ताकि आपके व अन्य विद्वानों के वेचार दूर-दूर तक पाठकों के समीप पहुँच सकें, मेरी रमात्मा से प्रार्थना है कि आपका यह मासिक सफल-ापूर्वक उन्नति पथ का अनुगामी बने।

आपका विनीत विनायक
(मन्त्री हैदराबाद राज्य)

२-आपके पत्र से यह जानकार अत्यन्त प्रसन्नता है कि आपने श्रावणी से सुधारक नामक मासिक पत्र रम्भ कर दिया है। मंगलमय भगवान् की कृपा से पका प्रयत्न पूर्णतया सफल हो, यह मेरी हार्दिक र्थना है। आजकल लोगों की धार्मिक, सामाजिक ष्ट्रिय सारी अवस्था शोचनीय है और उस में सुधार विशेष आवश्यकता है इस से कोई इनकार नहीं सकता। आशा है आप अपने सुधारक पत्र के द्वारा दिक मार्ग का निर्देश करते हुए उचित सुधार की ओर जनता को निरन्तर प्रेरित करते रहेंगे। जातिभेद, अस्पृश्यता, मूर्तिपूजादि आज भी प्रबलरूप में विद्यमान हैं जिनके निवारण की आवश्यकता है। इनके साथ-साथ प्रत्युत सब से पूर्व आत्म-सुधार की आवश्यकता है। अनेक आर्यों का ध्यान भी अपने सुधार की ओर पर्याप्त नहीं हैं और अनेक प्रकार से अनार्यत्व आचरण में आ रहा है इस ओर आर्यों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

धर्मदेव विद्या वाचस्पति
मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्यसभा

३—मेरी शुभ कामना भी लीजिए—

"सुधारक" दिनों-दिन उन्नति करे। यही चाहता हूँ।

(हरिदत्त शास्त्री एम० ए० आगरा)

४—सु—मन समान ज्ञानगन्ध का प्रसार करे-
योगियों के तुल्य अघ भावना भगाये यह।
धा—र्मिक ज्योति का विस्तार सर्वत्र करे-
दंभियों के दंभ का विनाश करवाये यह॥
र—द्दा वेद धर्म की प्रचार राजनीति का-
ऋषि दयानन्द सा संसार में कराये यह।
क—र्म कुशल आदि अक्षरों का योग "नाथ"-
पत्र रूप धार करके मानव बनाये यह॥१॥

(लोकनाथ तर्क वाचस्पति)

पृष्ठ १२ का शेष

दो-चार बूंदें पताशे वा खाँड में डालकर निगल जायें।

१०५. नौसादर १ तोला पोटाश परमैगनेट ६ माशे दोनों को मिलाकर खरल करें तथा थोड़ी सी लेकर जल में घोलकर दंश स्थान पर लगायें और अग्नि से सेक दें।

१०६. (१) आक की जड़ की छाल का चूर्ण (२) तम्बाकू (३) तारपीन का तैल (४) सिरका (५) कपूर (६) अफीम (७) सत पोदीना (८ दियासलाई का मसाला, इनमें से किसी एक को जल में पीसकर बिच्छू के काटे पर लगावें।

१०७. चूना २ तोला के लगभग दंश स्थान पर लेप करके सेक देवें, विष तुरन्त उतर जायेगा।

बिच्छू और सर्प के विष की औषधि "आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्जर" में हर समय तैयार रहती है, जो कि धर्मार्थ बांटने के लिए लागत मात्र मूल्य पर दी जाती है। यदि कोई दंशित रोगी गुरुकुल में आता है तो उसकी आर्य आयुर्वैदिक धर्मार्थ औषधालय की ओर से बिना मूल्य मुफ्त चिकित्सा की जाती है। इससे अगले लेख में सर्प विष और उसकी चिकित्सा के विषय में निवेदन करूंगा।

हमारे द्वारा प्रकाशित एवं प्रचारित पुस्तकें

·ब्रह्मचर्य के साधन	
भाग १, २ प्रातः जागरण आदि	।—)
भाग ३ दन्त रक्षा	≡)
भाग ४ व्यायाम संदेश छपेगी	
भाग ५ स्नान, संध्या, यज्ञ	।=)
२-ब्रह्मचर्यामृत—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=॥)
३-तम्बाकू का नशा—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=॥)
४-पापों की जड़ शराब—	
बाल संस्करण	।—)
साधारण संस्करण	=॥)
५-सदाचार पंजिका	॥)
६-ब्रह्मचर्य शतकम्	॥=)
७-संस्कृतांकुर	१।)
८-संस्कृत कथा मंजरी	।—)
९-श्रुति-सुधा	≡)
१०-हित की बातें	—॥)
११ आर्यसमाज की आवश्यकता	।)
१२-स्वा० श्रद्धानन्द	॥)
१३-महर्षिदयानन्द और गोरक्षा	—॥)
१४-क्या हम आर्य हैं ? ६० प्र०	—))
१५-नेत्र रक्षा	≡)
१६-व्यायाम का महत्त्व	≡)
१७-आदर्श ब्रह्मचारी	=।)
१८-कन्या और ब्रह्मचर्य	≡)
१९-स्वा० आत्मानन्दजी	—)
२०-महर्षि दयानन्द का कार्य	—)
२१-आर्योद्देश्य रत्न माला	—)
२२-आर्यसमाज के नियमोपनियम	=)
२३-वैदिक संध्या पद्धति	—)
२४-वैदिक संध्या-हवन पद्धति	≡)
२५ वैदिक सत्संग पद्धति	।=)

२६-कर्त्तव्य दर्पण	१।)
२७ हितैषी की गीता	।।।)
२८-कृषि विज्ञान	।।।)
२९-सिख और यज्ञोपवीत	≡)
३०-पंजाब की भाषा	—)
३१-आर्यकुमार गीतांजली भाग १, २	।=)
३२- रामराज्य कैसे हो ?	≡)
३३-मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२।।)
३४-वैदिक गीता	३)
३५-अफ्रीका की यात्रा	२।)
३६-स्वा० दयानन्द और म०गांधी	२)

प्रचारित साहित्य

१-फलों की पंचायत		।=)
२-फोटोग्राफी की कहानी		।=)
३-मोटर कार	,,	।=
४-वायुयान	,,	।=)
५-जलयान	,,	।=)
६-रेडियो	,,	।=)
७-बिजली	,,	।=)
८-सिनेमा	,,	।=)
९-भाप	,,	।=)
१० रेल	,,	।=)
११-वीरों की कहानियाँ		।=)
१२-अनमोल हीरे		।=)
१३-ब्रह्मचर्य		=)
१४-तम्बाकू के काले कारनामे		।=)
१५ बाल क्रान्ति गीत		=॥)
१६-भले रहो चंगे रहो		॥)
१७-पद्यमाला		≡)
१८-क्यों, क्या, कैसे ?		॥=)
१९-आर्थिक कहानियाँ		१)
२०-राजनीति ज्ञान कोष		१।)
२१- ईषप नीति निकुंज भाग २, ३, ४		।।।=), ॥=), ।।।=)

२२-राष्ट्र की सम्पत्ति	।
२३-राजनीति कथा माला	१
२४-महात्मा सुकरात	२।
२५-महात्मा शेखसादी	॥=
२६- ,, मेजिनी	१
२७- ,, मार्टिन लूथर	१
२८-ऊर्ध्वाङ्ग व्याधि-विज्ञान	१
२९-सरल चिकित्सा	।=)
३०-समाज सुधार के गायन	=)
३१-इस हाथ करो उस हाथ मिले	≡)
३२-धर्म ज्ञान भाग १, २, ३, ४	।=), ।), ।), ।=)
३३-वैदिक विनय भाग १	२)
३४-संध्या रहस्य	१)
३५विद्यार्थी जीवन रहस्य	।।।)
३६-प्राणायाम विधि	।)
३७-cow Protection	=)
३८-महर्षि दयानन्द	॥=)
३९-सत्यार्थ प्रकाश शंका समाधान	।)
४०-आगे बढ़ो	१।)
४१-वैदिक वीर तरङ्ग	।)
४२-दयानन्द और वेद	।)
४३-स्वा०दयानन्द और आर्यसमाज	।)
४४-बाल शिक्षा	—॥)
४५-धर्म शिक्षा	—॥)
४६-वेदों की आवश्यकता	—॥)
४७ हिन्दी प्रकाश	॥)
४८-मेरी पोथी (छोटी)	=)
४९- ,, ,, (बड़ी) भाग १, २	॥=), १।)
५०-मदीयम् पुस्तकम्	॥)
५१-मरुभूमि सेवा कार्य	१)
५२-व्याकरण विनोद	॥—)
५३-संयुक्ताक्षर बोध	१॥
५४-सफलता की कुँजी	१।)

वैदिक साहित्य सदन, आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली ६ ।

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की बहुमूल्य औषधियाँ

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इस के लगाने से आंखों के सब रोग-जैसे आंख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट) दूर का कम दीखना (लांग साइट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आंख के सब रोगों की राम बाण औषध है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ स्वच्छ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रचा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सूर्मे की प्रशंसा की है। सेवन विधि-पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रातः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ॥) शीशी

कुछ महानुभावों, की सम्मतियां

I have used Netra Jyoti Surma. After a great search I have found a really good eye soother. I have put my whole family on it.

R. R. Kumaria

(भावार्थ) मैंने नेत्र ज्योति सुर्में का प्रयोग किया। बहुत बड़ी खोज के पीछे यथार्थ में एक बहुत श्रेष्ठ आंखों को शान्ति करने वाली औषध प्राप्त हुई। मैंने अपने सारे परिवार के लिये यह (गुरुकुल झज्झर का सुर्मा) प्रयोग करने के लिये दे दिया है।

आर. आर. कुमरिया प्रिंसिपल गवर्नमेंट कालेज रोहतक

२—ऐनक लगवाने पर भी पढ़ने-लिखनेमें विशेषता के कारण आंखों पर दबाव पड़ता था। इस कारण मैं कभी कभी कोई नेत्रसुर्मा प्रयोग में लाता रहा, परन्तु विशेष लाभ प्रतीत नहीं होता था। गुरुकुल झज्झर के नेत्र ज्योति सुर्मा के थोड़े समय के प्रयोग ने ही मुझे पूर्ण लाभ पहुँचाया। अब आंखें थकती नहीं। मुझे पूरा सन्तोष है।

जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती संस्थापक सम्राट् देहली

३—"नेत्र ज्योनि सुर्मा" का प्रयोग मैंने किया और मेरा अनुभव है कि यदि "नेत्र ज्योति सुर्मा" का प्रयोग लगातार किया जावे तो अधिकांश नेत्र रोगों से मुक्ति प्राप्त हो सकती है। फतहचन्द अध्यापक

टी.आई.टी. हाईस्कूल भिवानी

त्रिफलादि घृत और नेत्र ज्योति सुर्मा

४—एक रोगी जिसकी आंखें लाल रहती थीं, पानी बहता था, पीड़ा के साथ साथ दृष्टि भी न्यून हो गई थी। मैंने उसे एक मास तक प्रातः सायं त्रिफलादि घृत गोदुग्ध के साथ सेवन कराया तथा दोनों समय नेत्र ज्योति सुर्मा आंखों में डाला। इस से उसकी आंखें सर्वथा रोगरहित व ठीक हो गईं।

मैं अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि नेत्र ज्योति सुर्मा और त्रिफलादि घृत रसायनशाला गुरुकुल झज्झर के जितने गुणकारी सिद्ध हुए हैं इतने किसी अन्य फार्मेसी के नहीं। इन से आश्चर्यजनक लाभ होता है।

वैद्य सोमवीर आर्य आयुर्वेदाचार्य M.A.M.S.

५—हम ने इस सुर्मे को अनेक जड़ी बूंटियों के रसों से भावना देकर निरन्तर छः मास के घोर परिश्रम से तैयार किया है। मैंने इसका सैंकड़ों रोगियों पर अनुभव किया है। बच्चे, बूढ़े, स्त्री, पुरुष सभी लगा सकते हैं। आंखों में शान्ति पहुँचाता है। प्रतिदिन के प्रयोग के लिये बहुत ही अच्छा सुर्मा है।

भगवानदेव आचार्य
गुरुकुल झज्झर रोहतक

१—रोहतक में मिलने का पता—
गुरुकुल फार्मेसी, रेलवे रोड (रोहतक)
२—देहली में मिलने का पता—
"नवजीवन सञ्चारक कम्पनी"
आर्य समाज मन्दिर, सीताराम बाज़ार—देहली
३—दादरी में मिलने का पता—
वैद्य सोमवीर आर्य औषधालय
रेलवे रोड डालमिया दादरी

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजिस्टर्ड) रोहतक

प्रकाशक—आचार्य भगवानदेव गुरुकुल झज्जर के लिये सम्राट प्रेस-पहाड़ी धीरज देहली, में जगदेवसिंह शास्त्री द्वारा मुद्रित

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

ओ३म्

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष १
अङ्क ३
गुरुकुल झज्जर, कार्तिक सं० २०१० वि०, नवम्बर १९५३, दयानन्दाब्द १२९
वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

आदर्श शिक्षा सुधारक स्वामी विरजानन्द

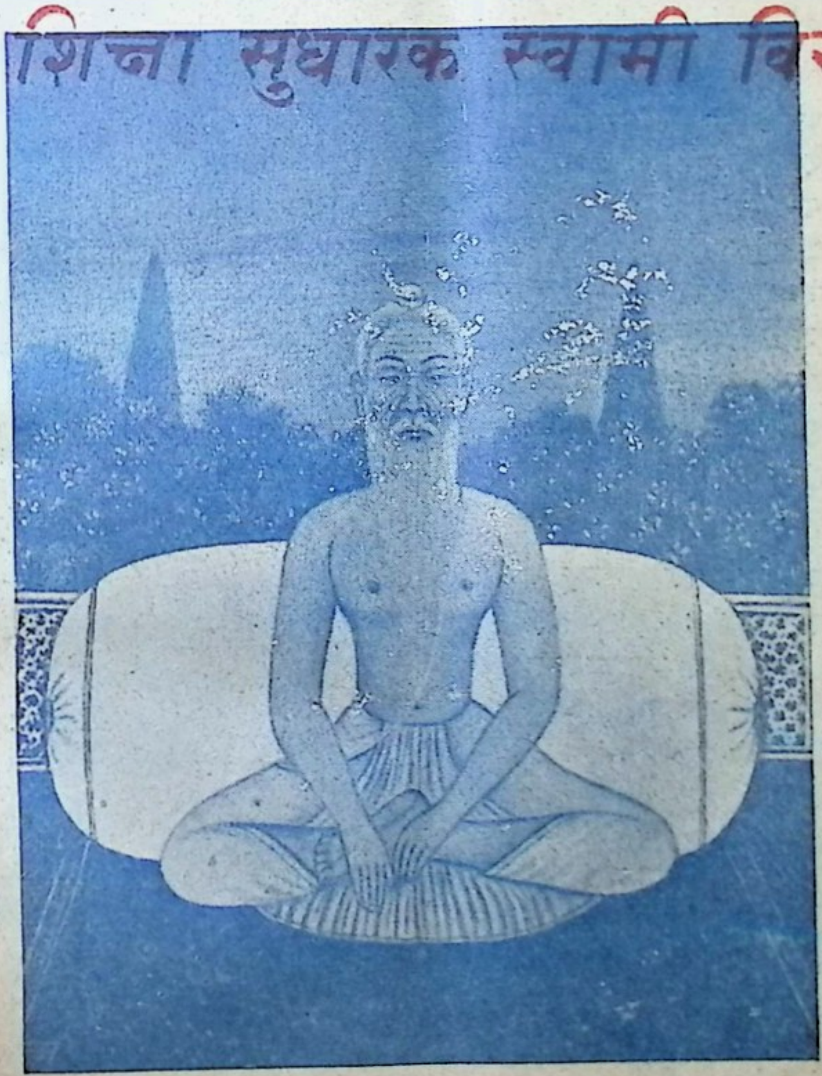

अर्वाचीन काल के वैष्णव, शैव-शाक्त आदि सैंकड़ों मतमतान्तरों के घोर साम्प्रदायिक मेघमाण्डल से आच्छन्न, वैदिक आर्ष शिक्षा पद्धति से विमुख और अनार्ष भ्रान्त जाल ग्रन्थों में लिप्त परतन्त्र भारत भूमि में पुनः आर्ष शिक्षा प्रणाली द्वारा वैदिक सूर्य के प्रकाश को फैलाने वाले, स्वतन्त्रता के अग्रणी, दिव्य-नेत्र परमहंस परिव्राजकाचार्य महाविद्वान् स्वामी विरजानन्द जी महाराज।

*

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्‌देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्त वाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्त वाचस्पति

* ब्रह्मचर्य महत्त्वम् *

(श्री पं० मेधाव्रताचार्यकविरत्नप्रणीतम)

मन्त्रः—ब्रह्मचारिणं पितरो देवजनाः पृथग् देवा अनुसंयन्ति सर्वे । गन्धर्वा एनमन्वायन् त्रयस्त्रिंशत् त्रिशताः षट्सहस्राः सर्वान्त्स देवांस्तपसा पिपर्ति ॥

(अथर्व० ११ । ५ । २)

गन्धर्वदेवपितृदेवजनाः पृथक्ते
श्रीब्रह्मचारिणमतो अनुसरन्ति सर्वे ।
त्रिंशत्त्रयस्त्रिशत षष्टिशतानिदेवाः
सर्वानमूंन्त्स तपसा बृहता पिपर्ति ॥१०॥

अर्थः – अतः ये सब छः हजार तीन सौ तैंतीस गन्धर्व-देव-पितर और देवजन नाडी नामक देव पृथक् २ रूप से उत्तम ब्रह्मचारी का अनुसरण करते हैं-- आधीन हुए पीछे चलते हैं, क्योंकि वह ब्रह्मचारी कठोर तप से इन सब देवों को संतृप्त करता है ।

शार्दूल०]—

प्राणायामतपोभिरुज्ज्वलतराश्चन्द्राग्निसूर्याभिधा
नाडीडाप्रमुखा अवान्तरशिराः प्राणावहाश्चक्रगाः ।
मस्तिष्के हृदयेऽथ नाभिवलये व्याप्तास्तनौ तर्पयन्
स्वाधीनास्तनुते य ईशनिरतस्तं ताः कथं नान्वियुः ॥११॥

अर्थः – मस्तिष्क हृदय और नाभि केन्द्र में व्याप्त तथा सप्तचक्रों में गई हुई, प्राणायाम, द्वन्द्वसहन आदि तपों से निर्मल व अत्यन्त उज्ज्वलभूत ६३३३ व इनसे भी अधिक प्राणवाहक चन्द्र, अग्नि, सूर्य नामक इडा, सुषुम्ना, पिङ्गला नाड़ियां व उपनाड़ियों को शरीर में ही तृप्त करते कुछ जो ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मचारी अपने आधीन बना लेता है उसका अनुसरण वे क्यों न करें ।

विप्रा देवपदेन प्रोक्ताः क्षत्रियाः पितृसंज्ञया ।
वैश्या गन्धर्वनामानः शूद्रा देवजनाख्यया ॥१२॥
अनुसंयन्त्यमी सर्वे ब्रह्मचारिणमानताः ।
आत्मानमिव नेतारं कायस्था इव मानवाः ॥१३॥

अर्थः – देव, पितृ, गन्धर्व और देवजन पद से क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कहे गये हैं । अत्यन्त विनीत हुये ये सब मानवगण नेता ब्रह्मचारी का वैसे ही अनुगमन करते हैं जैसे शरीरस्थ नाड़ियां आत्मा का ।

देहेऽपि रचना तादृक् त्रिलोक्यां यादृगद्भुता ।
ब्रह्माण्डपिण्डयोः साम्यं वेधसा विहितं ध्रुवम् ॥१४॥

अर्थः—जैसे भू-अन्तरिक्ष व द्युलोक में रचना है वैसे ही अद्भुत रचना शरीर में है निश्चय ही इस प्रकार ब्रह्म ने ब्रह्माण्ड और पिण्ड की साम्यता प्रकट की है ।

गन्धर्वशक्तयःपृथ्व्या नभसः पितृशक्तयः ।
अनुयन्ति द्युदेवाश्च ब्रह्माणं ब्रह्मचारिणम् ॥१५॥

अर्थः—जैसे पृथिवी से धारक, अन्तरिक्ष से रक्षक और द्युलोक से ज्ञान शक्तियाँ ब्रह्मचारी ब्रह्म का अनुसरण करती हैं ठीक वैसे ही पिण्डस्थ भू-अन्तरिक्ष और द्युलोक से क्रमशः कर्मेन्द्रिय, मानसेन्द्रिय व ज्ञानेन्द्रिय ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मचारी का अनुगमन करती हैं ।

॥ क्रमशः ॥

सुधारक भेजने की तारीख

"सुधारक" प्रत्येक अंग्रेजी महीने की १० तारीख को डाकखाने में दे दिया जाता है । जिन ग्राहक महानुभावों को एक सप्ताह अर्थात् प्रत्येक महीने की १७ तारीख तक सुधारक न मिले तो हमें लिख भेजें दूसरी बार वह अंक भेज दिया जावेगा । इस के पश्चात् कार्यालय उत्तरदाता न होगा ।

व्यवस्थापक सुधारक मासिक
गुरुकुल झज्जर; (रोहतक)

सम्पादकीय—

हमारे पर्व

त्यौहारों को संस्कृत भाषा में पर्व कहा जाता है। व्यक्ति और समाज पर पर्वों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। किसी भी राष्ट्र के जीवन तत्व का पता पर्व-रीति से चल सकता है। अविद्या, आलस्य, प्रमाद और कुसंस्कारों के कारण आर्य जाति में जहां अन्य क्षेत्रों में बिगाड़ के अंकुर जम कर वृक्ष रूप धारण कर गये, वहां पर्वों के मनाने की रीति भी बहुत बिगड़ गई! पूर्वकाल में पर्व यज्ञमय होते थे, परन्तु वर्तमान काल में इनका रूप सर्वथा बदल कर दूषित होगया। दीपमाला-पर्व का ही दृष्टान्त ले लीजिये—प्राचीन काल में इस त्यौहार पर गन्दगी और अस्पष्टता का वातावरण दूर करके बड़े-बड़े यज्ञों द्वारा समस्त राष्ट्र का वायु मण्डल सुगन्धित और प्रकाशमय कर दिया जाता था। परन्तु वर्तमान-काल में दीपमाला के दिन जूआ खेल कर जीतना और चोरी में प्राप्ति हो जाना ही शुभ लक्षण माना जाने लगा! कितना घोर पतन हुआ। जहां वेद में आदेश मिलता है-"अक्षै र्मा दीव्य"-ऐ मनुष्य! जूआ न खेल! वहां जूआ खेलना दीपमाला का प्रमुख अंग बन गया। इसी प्रकार भगवती वेदश्रुति ने पवित्र उपदेश दिया—"मा गृधः कस्य स्विद्धनम्" हे मानव! तू दूसरे किसी के धन पर ललचाई दृष्टि न डाल। अपने पुरुषार्थ से सहस्रों कमा और श्रेष्ठ कामों में धन लगा। आज दीवाली के समय चोरी करके कुछ हाथ पड़ जाना वर्ष भर के लिये शुभ समझने लगे। घोर पतन है। इसी प्रकार हमारे प्रमुख पर्व—श्रावणी, विजयदशमी, दीपावली और होली सर्वथा रूप बदले हुये हैं। श्रावणी में वेद का अध्ययन-अध्यापन हट कर हाथ में धागा बांधना बंधवाना मात्र रह गया। विजय दशमी पर कहीं-कहीं भैंसे और बकरों की बलि चढ़ाई जाने लगी। साधारण जनता में शास्त्र विशेष का बोध और संचालन पद्धति रही ही नहीं। दीपावली की कथा ऊपर दी ही जा चुकी है। होली का तो कहना ही क्या? इस त्यौहार को अत्यन्त दूषित कर दिया गया है। होली के दिनों में गन्दी कीच और सड़ा पानी तथा रंग परस्पर डालना और गाली प्रदान, हा-हुल्लड़ मचाना, गन्दे राग गाना और मद्य-मांस का सेवन करना बुरा नहीं समझा जाता। कोई भला मानव होली के दिनों में वस्त्र दूषित कराये बिना इधर उधर जा नहीं सकता।

आश्चर्य और खेद तो यह है कि आज सभ्य कहे जाने वाले, राष्ट्र के नेता और शासक इन गन्दी दूषित हानिकर रीतियों में स्वयं सम्मिलित होकर इन पतन के कारणों में वृद्धि करते हैं। होली और फाग के दिन स्त्री और पुरुष भी परस्पर कुत्सित खेल करते हुये कुछ भी लज्जा अनुभव नहीं करते। इसका परिणाम यह हो रहा है कि स्वदेश में भ्रष्टाचार, व्यभिचार, कामुकता, मद, लोभ, अभक्ष्य भोजन, अपेय पान, अगेय गान और गन्दे नाच, खेल तमाशे दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहे हैं। देश का आचार धरातल नीचे खिसक रहा है। पुरातन वैदिकी संस्कृति के स्थान पर नूतन पाश्चात्य विकृति फैल रही है। बालक और बालिकाओं में से ब्रह्मचर्य पालन वृत्ति नष्ट हो रही है। आयु, तेज, बल, विद्या और सत्कर्तव्यता का लोप होता जा रहा है। यह सब कुछ सामने है और हम टुक-टुक देख रहे हैं। बड़े-बड़े नगरों और मध्य स्थानों में रामलीला के नाम पर पाखण्ड फैलाया जा रहा है। रामलीला की भीड़ में स्त्री-पुरुषों के जमघट में कुत्सित दृश्य दिखलाई-पड़ता है। इसके आगे गांवों के मेलों की

गन्दगी भी नीचे रह जाती है।

हमारा कर्तव्य है कि इन पर्वों की रीति-नीति में तुरन्त आवश्यक और उचित सुधार करें। इनके सुधार से राष्ट्र और समाज का जीवन उच्च होकर भारतीयता का उत्थान होगा। इस बिगाड़ को दूर करने और उत्तम रीति प्रचलित करने के लिये आर्यों को वैयक्तिक और सामूहिक प्रयत्न करना चाहिये। वैयक्तिक सुधार यही है कि ऐसे गन्दे कामों में स्वयं कभी सम्मिलित न होवें और दूसरों को भी ऐसी ही प्रेरणा करें। ऐसे काम करने वालों को समझा कर दूर रखवाने का यत्न करें। ऐसे दूषित भावों के प्रति घृणा प्रकट करें। अपने बालकों को ऐसी शिक्षा करें कि इधर उनकी रुचि ही न रह जावे। बालकों को सुन्दर-सुन्दर कथा, इतिहास और धार्मिक उपदेश करें। स्वयं आचरण करें तब बालक भी अनुकरण करेंगे। पर्वों के समय घर में यज्ञ किया जावे। बालकों को उत्तम भोजन, शुद्ध वस्त्र, अच्छी पुस्तक और शिक्षाप्रद खिलौने दिये जावें। यज्ञ की समाप्ति पर चरित्र निर्माण और ईश्वरोपासना के सुरीले सरल भजन आदि कार्य किये जावें। पर्वों को इस रीति से मनाने में कभी शिथिलता न की जाय। बच्चे पर्व का नाम सुनते ही स्वयं उत्साहित होते रहते हैं। वर्ष भर में कम से कम १०-१२ पर्व तो मनाये ही जाते और जाने चाहियें। एक पर्व के प्रभाव को समाप्त होने का अवसर मिलेगा ही नहीं जबकि दूसरे पर्व की तैयारी आरम्भ हो जावेगी। इस प्रकार वर्ष भर सतत एक उत्तम वायु मण्डल बना रहेगा, जिसमें बालक-बालिकायें उत्तम और शुद्ध श्वास लेते रहेंगे। गन्दगी से इनकी अरुचि हो जावेगी।

ऐसे ही सामूहिक सामाजिक यज्ञ बड़े-बड़े पर्वों पर किये जावें। इनमें भी उत्तमोत्तम वेदोपदेश और राष्ट्रोत्थान विषयक व्याख्यान और गाने होवें। भाण्ड भड़ुवे और नक्कालों वाले गानों का सर्वथा बहिष्कार रहे। इन पार्वणिक यज्ञोत्सवों में सपरिवार सम्मिलित होवें। वहां से चरित्र को ऊँचा करने वाला साहित्य लेकर बालकों को दिया जाय। स्वयं भी उनका अध्ययन करें और बालकों को सुनावें, ऐसे बड़े-बड़े उत्सव वर्ष में दो चार भी होवें तब भी उनका स्थिर प्रभाव जीवन पर पड़ता है। इन त्योहारों से वैयक्तिक और सामाजिक मल दूर होता और राष्ट्र के सदाचार में वृद्धि होती है।

अतः प्रत्येक आर्य का यह परम कर्तव्य है कि इन पर्वों के बिगड़े हुये रूपों में सुधार करें। केवल बिगड़े वातावरण में न जाकर शान्त नहीं हो जाना चाहिये, अपितु इनमें सुधार करके उत्तम रीति प्रचलित करनी भी आवश्यक है। इसका कारण यह है कि जब मनुष्य गन्दगी से दूर हट जाता है तब उसकी स्वाभाविक इच्छा उत्तम रीति की ओर बढ़ती है। यदि उसको प्रशस्त मार्ग मिल जाय तो वह मानव श्रेष्ठता की ओर चलता रहेगा और स्वभाव से कुत्सित भावों को छोड़ जावेगा। यदि ऐसी उत्तम रीति सुधारपूर्वक न डाली जाय तो मानव वृत्ति उधर स्थान न पाकर फिर नीचे की ओर बहने लग जाती है। इसलिये मनुष्यों को बुराई से दूर रहना ही पर्याप्त नहीं किन्तु भलाई के काम करना भी अत्यन्त आवश्यक है। गिरते समय देर नहीं लगती। ऊपर चढ़ने में समय, बल और ज्ञान की आवश्यकता होती है। इसी कारण समझदार महानुभाव उत्तम कामों में प्रवृत्त रहते हैं। इन के करने और करवाने में चाहे कष्ट भी क्यों न हों। महर्षि दयानन्द आदित्य ब्रह्मचारी ब्रह्म-आनन्द का अनुभव समाधि द्वारा प्राप्त करके भी जगत्-कल्याणार्थ कार्य क्षेत्र में उतरे। यावज्जीवन विघ्न बाधायें झेलीं परन्तु वेद मार्ग पर मानव मात्र को चलाने के कार्य से परे नहीं हटे। अन्त में लोक हितार्थ स्वप्राणों की आहुति देकर ब्रह्मानन्द प्राप्त कर गये।

यदि समझदार व्यक्ति सुधार का कार्य न करें तो उन पर दोष भी लगता है। उन का कर्तव्य है कि अज्ञान को दूर करने में यत्नवान् हों। इस दुष्ट वातावरण में समझदार को भी कष्ट झेलने पड़ते हैं। परन्तु मानव कर्तव्य से विमुख नहीं होना चाहिये।

प्राचीन गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली

(ले०—ब्रह्मचारी सत्यव्रत भाष्याचार्य. हैदराबाद)

मैं गुरुकुल से निकल कर जब से यहाँ आया हूँ उसी समय से मुझ से जो भी मनुष्य मिलता है वह सब से पूर्व यही प्रश्न करता है कि तुम नौकरी क्यों नहीं कर लेते ? कहीं अध्यापक, कहीं क्लर्क, कहीं कुछ और काम कर लो। इन सब बातों को सुन कर मैंने अनुभव किया है कि आज के युग में मनुष्य अपने जीवन का एक ही उद्देश्य या लक्ष्य यह समझता है "नौकरी करना"। बाबू बनने में अथवा बाबू गिरी न मिलने पर भी बाबू जी कहाने में इन को इतना आनन्द आता है जो कि ध्रुव, प्रह्लाद सरीखे भगवद् भक्तों को भी परम पद की प्राप्ति में शायद ही आया हो ? नौकरी इनका इष्टदेव है, जिस के लिये ये अपनी भाषा, अपना वेष, अपना साहित्य तथा अपना धर्म तक सब कुछ बेचने को तैयार हैं। आज समाज में उसी का मान होता है जिस ने अपने आत्मा का अधिक से अधिक हनन कर के न्याय अथवा अन्याय से बैङ्कों में अपने नाम पर अधिक से अधिक कागज जमा कर रखे हों। सदाचार की पूजा मनुष्य का व्यक्तित्व न हो कर पैसा बन चुका है। ईश्वर का नाम है केवल जपने के लिये, धर्म की दुहाई केवल चन्दा बटोरने के लिये, ढंग ढंग के प्रस्ताव हैं केवल रङ्गमंच पर कुर्सियाँ एवं मेज तोड़ने के लिये, और करने के लिये है तो है केवल नौकरी! इस का कारण…… ।

एक सहस्र वर्ष की पराधीनता ने हमें पतन की पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। किसी ने हमारी गंगा को बोतलों में भर कर समाप्त नहीं कर दिया। हमारा वरुण देव भी रसातल में समा नहीं गया। भारत की सभी विभूतियाँ–वेदशास्त्र, गौ, गंगा, गायत्री आज भी भारत के भाग्य को समलंकृत कर रही हैं। भारत में सब कुछ होते हुये भी सब कुछ हम से छिन गया है। मराठों का तेज चुल्हे चक्कियों को भेंट हो गया। राजपूतों का क्षात्र तेज विलास भवनों में बह गया। खालसाओं की खड्ग कांचन-कामिनी के दर्शन मात्र से ही कुण्ठित होगई है। इस का कारण …… !

किसी कैदी को अपनी बेड़ियों से प्रेम हो सकता है। किसी मनस्वी को अपनी राष्ट्रभाषा से घृणा हो सकती है। परन्तु नौकरी की फाँसी आज यह सभी कुछ करवा रही है। इस दुष्टा नौकरी ने हम से क्या कुछ नहीं करवाया। हमारे नेताओं पर लाठियाँ बरसाईं, हमारी माताओं तथा बहनों का अपमान किया गया। हमारे पवित्र स्थानों का सर्वनाश किया किन्तु ये इन सब को पीयूष धारा के समान पी गये। इस का कारण …… ।

आज का मनुष्य भारतीय भाषा, वेश तथा भाव से घृणा करता है। वह कोट पतलून पहन, गले में पट्टा डाल मुख में चुरट ले अपने भाईयों को घृणा की दृष्टि से देखता है। अपनी भाषा तो उसे अच्छी लगती ही नहीं और न अपने प्राचीन ऋषि मुनि उन की आँखों में जंचते हैं। उस के लिये तो अच्छा बूट, शूट, और किसी दफ़्तर में क्लर्क की नौकरी ही स्वर्गीय जीवन है। नौकरी के लिये यदि इनको अपने देश बन्धुओं का गला भी काटना पड़ा तो ये इसको ड्यूटी के नाम से पुकारते हैं। रुपये के लिये घृणित से घृणित काम करने को सदा उद्यत रहते हैं इस का कारण …… ।

संसार में सोने की मात्रा बढ़ रही है, कारखाने भी पहले की अपेक्षा बढ़ चुके हैं, बंजर भूमियां आबाद हो रही, हैं फिर भी जिधर देखो उधर अशान्ति ही अशान्ति दिखाई देती है। वेद में कहा है:—

''अपां मध्ये तस्थिवाँसं तृष्णावि ज्जरितारं मृडः सुक्षत्रं मृडय''—इसी का अनुवाद करते हुए किसी कवि ने कहा है:—

"आती है मुझ को हाँसी, पानी में मीन प्यासी"

ठीक संसार की यही दशा है। इन सब दोषों का मूल कारण क्या है ?

प्रत्येक जन आज सुख की कामना करता है तो भी उस के भीतर अशान्ति, द्वेष, घृणा, ईर्ष्या और लम्पटता के अतिरिक्त कुछ नहीं पाता। इसका कारण ?

आज जब शिक्षा के लिये विश्व के प्रत्येक देश बड़े बड़े विश्वविद्यालय, अनेकों शिक्षण संस्थायें स्थापित करते हैं। विश्व की संस्थायें शिक्षा पर पानी सा रुपया बहा रही हैं, तब आज के मनुष्यों में इतनी व्याकुलता इतनी अशान्ति क्यों ? इतनी पारस्परिक पृथकता क्यों ? इसका एक मात्र उत्तर है:—आधुनिक शिक्षा ? आधुनिक शिक्षा ?? आधुनिक शिक्षा ???

अवश्य आज की शिक्षा में दोष हैं। आज के मानव को ऐसी शिक्षा नहीं दी जा रही है जिस से वह अपने आप को समझ सके ? अपने आप को न समझने के कारण ही मानव आज अंधकार में भटक रहा है, रो रहा है, बिलबिला रहा है।

भाई ? जाने दो विश्व को ! अपने ही देश की शिक्षा व्यवस्था पर विचार कीजिये। हमारे देश के बालकों को जिस प्रकार शिक्षा दी जा रही है उस के जीते जागते दृष्टान्त हमारे समक्ष उपस्थित हैं। आप सिनेमा घरों का निरीक्षण कीजिये वहाँ पर छात्रों की ही संख्या अधिक दिखाई देगी। सड़कों पर ध्यान से सुनिये अधिकांश छात्र ही सिनेमा के गान स्तव करते हुये दिखाई पड़ते हैं। अनुशासन हीनता के क्षेत्र में, हुरदंगई के मैदान में आज छात्र ही सब से अग्रसर हैं। इतना ही नहीं अपने अध्यापकों, अपने गुरुओं पर आक्रमण करने में भी पाश्चात्यशिक्षाध्यायी छात्र ही अधिक अंक प्राप्त कर रहे हैं।

यह है हमारी आधुनिक शिक्षा का परिणाम ? हम आज अपनी जिस शिक्षा पर गर्व कर रहे हैं वह आज ऐसे ही छात्र उत्पन्न कर रही है जिन का संकेत मात्र ऊपर किया गया है। यदि और कुछ वर्ष तक हमारे देश में शिक्षा की यही अवस्था रही तो भले ही भारत, यूरोप और अमेरिका बन जाय पर उस के भीतर से मानवता निकल जायगी और वह एक उस दानव की भाँति बन जायगा जो दानों हाथों से पीड़ितों का गला दबा कर उस का रक्त शोषण करने में ही अपने पुरुषार्थ की सार्थकता समझता है। हमारी आज की शिक्षा अधूरी है। निःसार है। हमारी आज की शिक्षा भले ही छल-छिद्रों से युक्त नागरिक उत्पन्न कर सकती है पर वह उस मानव की सृष्टि करने में पूर्ण रूपेण असमर्थ है जो अपने को पहचान कर विश्व के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है।

इस शिक्षा प्रणाली का यह परिणाम है और हुआ है कि हम अंग्रेजी साहित्य में तो व्युत्पन्न हो जाते हैं परन्तु अपने प्राचीन साहित्य, संस्कृति, सभ्यता और गौरव से अनभिज्ञ रहते हैं, हम पश्चिम के मानसिक दास बन जाते हैं। हमारे आचार-विचार, रहन-सहन, चाल-ढाल पश्चिमी सभ्यता के ढाँचे में ढल जाते हैं, और हम अपनी जातीयता को सर्वथा खो देते हैं। न हमें अपने धर्म का ज्ञान प्राप्त होता है न उस से हमें प्यार होता है। हम अपने धर्मानुष्ठानों को ढकोम्सला समझने लगते हैं, हमें अपने भूत से प्रेम नहीं रहता, न उसका हमारी दृष्टि में कुछ गौरव ही रहता है। हम एक केवट रहित नौका की भाँति भविष्य के असीम समुद्र पर जिधर हवा के थपेड़े हमें ले जाना चाहें उधर बढ़े हुये चले जाते हैं।

२६ दिसम्बर सन् १९५२ ई० को भारत के प्रथम राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी ने कलकत्ता विश्वविद्यालय में दीक्षान्त भाषण देते हुये कहा था कि "वर्तमान शिक्षा पद्धति केवल क्लर्क तथा दफ़्तर के बाबू ही तैय्यार करने में समर्थ हैं। इस में चरित्र निर्माण के लिये कोई स्थान नहीं और न ही इस में

चरित्र निर्माण का कोई महत्व समझा जाता है । आज की शिक्षा प्रणाली से मुझे सन्तोष नहीं है ।"

राष्ट्रपति जी को तब तक संतोष न हो सकेगा जब तक हमारा देश प्राचीन ऋषि मुनियों द्वारा प्रदर्शित शिक्षा प्रणाली को न अपनायेगा । प्राचीन शिक्षा प्रणाली ही उपर्युक्त सब दोषों को दूर करने में समर्थ है । यदि हमें इतने तप त्याग और बलिदानों के वाद प्राप्त हुये स्वराज्य को सुराज्य वनाना है तो प्राचीन शिक्षा को प्रचरित करना होगा और अपने ज्ञान विज्ञान के आगार वेदादि शास्त्रों का महत्व जिसे आज सारा संसार स्वीकार कर चुका है, उसे वालकों तक पहुंचाना होगा, जिससे वे अपनी अमूल्य निधि को पहचान सकें ताकि गज मुक्ता को गुंजा समझ कर त्याग न दें ।

महात्मा गांधी ने १६२६ ई० में राष्ट्रिय शिक्षणालय स्थापित किये परन्तु वे भी सफल न हो सके, अधिकांश में बन्द हो गये । इस के वाद गाँधी जी ने "बेसिक एज्युकेशन" अर्थात् नई तालीम के नाम से शिक्षा संबन्धी आन्दोलन प्रारम्भ किया परन्तु वे भी पुराने ढर्रे को बदल न सके । गांधी जी की शिक्षा प्रणाली में तो केवल आर्थिक समस्या हल करने का प्रयत्न था किन्तु यह तो ऐसा हुआ जैसा कि पुरानी बोतलों में नई शराब भर देना । अतः यदि भारत शीघ्र ही प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को अपनाले तो सारे संसार का गुरु बन जाय और भारतवासी गर्व से कह सकें:—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

आज तक संसार में जितनी भी क्रान्तियाँ हुई हैं वे सब शिक्षा के कारण ही हुई हैं, रूस में क्रान्ति हुई लेनिन की शिक्षा के कारण, फ्रांस में क्रान्ति हुई रूसो की शिक्षा के कारण; ठीक उसी तहर यदि भारत के स्वराज्य को सुराज्य बनाने के लिये क्रान्ति होगी तो प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के कारण ।

सच बात तो यह है चाहे कोई राजा हो, सेनापति हो या कहीं का गवर्नर या मन्त्री हो, बुद्धि में बृहस्पति तुल्य हो, वाग्मिता में सिसरो या गिटे से भी बढ़ चढ़ कर हो परन्तु यदि वह प्राचीन शिक्षा प्रणाली का विरोध करेगा तो हमें यह कहने में अणुमात्र संकोच न होगा कि वह भारत का घोरतम शत्रु है, क्योंकि यही शिक्षा प्रणाली भारतोत्थान में समर्थ है ।

आज यह आवश्यक है कि हम कृत्रिम वर्ण-व्यवस्था को मिटा कर प्राणवान् वर्ण व्यवस्था को रखने वाली प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का प्रचार एवं प्रसार करें । निस्तेज और निष्प्राण प्रजा के स्थान पर सतेज और वीर्यवती प्रजा देने वाली प्राचीन शिक्षा प्रणाली ही है ।

इस में कुछ संदेह नहीं कि हम अपने छोटे छोटे भौतिक स्वार्थों में बंटे हुए भले ही प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को आज न समझें पर वह समय दूर नहीं जब कि राष्ट्रोन्नति का बीज इस में ही दृष्टिगोचर होगा और सारे विश्व को इसी पथ पर आना होगा । तथा यह भौतिकवाद का प्रचार करने वाली और मानव को दानव बनाने वाली आधुनिक शिक्षा की लकड़ी का सूखा ढेर धू-धू कर जलता हुआ समाप्त हो जायेगा और विश्व में प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का प्रचार एवं प्रसार होगा ।

सुधारक प्रेमियों से निवेदन

सुधारक के समस्त प्रेमी महानुभावों से निवेदन है कि यह तीसरा अंक आपकी सेवा में पहुँच रहा है । हमें पूर्ण विश्वास है कि आप इसको रीति-नीति से सन्तुष्ट होंगे । कृपया वार्षिक मूल्य २) मनीआर्डर से भिजवा दीजिये । इसमें केवल =) खर्च पड़ता है, परन्तु वी० पी० से मंगवाने में ।।=) खर्च लग जाता है, फिर ।।) क्यों व्यर्थ दिये जावें । आशा है अन्य प्रतीक्षा न करके शीघ्र २) रु० मनिआर्डर से भिजवा कर कृतार्थ करेंगे—

व्यवस्थापक----'सुधारक' गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

आर्यकुमार लेखमाला (३)—

हम स्वस्थ कैसे हों ?

(श्री जगन्नाथ बी. ए., एल. एल. बी., जे. डी., प्रभाकर सि० शास्त्री)

आज फिर आदर्श नगर के बालकों की सभा लगी हुई थी पिछली बार की सभा का प्रभाव बच्चों पर इतना अच्छा पड़ा कि आज उन की संख्या कई गुना अधिक हो चुकी थी । जैसा कि पहिले निश्चित हो चुका था आज के दिन विश्वमित्र ने बच्चों को स्वास्थ्य संबंधी कुछ बातें बतानी थीं । अतः साप्तहिक सत्संग की अन्य कार्यवाहियों के पश्चात उन्होंने यूं उपदेश देना आरम्भ किया—

स्वास्थ्य के लाभ

प्यारे बच्चो ! हम सभी चाहते हैं कि हम बीमार अथवा रोगी न हों । ठीक भी है क्योंकि बिना अच्छे स्वाध्य के नरम नरम गदों पर सोना, अच्छे अच्छे पकवान खाना, सुन्दर सुन्दर कपड़े पहिनना इत्यादि सब व्यर्थ है । एक रोगी को देखिये । वह अत्यन्त अमीर है। वैद्य लोगों ने उसे नींद लाने वाली औषधि भी दी हुई है । वह सोना भी चाहता है किन्तु वह सो नहीं सकता । करवटें बदलता रहता है, और एक पल भर की नींद के लिये तरसता है । इस के विपरीत आपने खेतों और बागों में देखा होगा कि बहुत से मजदूर भाई कितनी मस्ती से सोते हैं, मानों नींद का सारा आनन्द ये ही लेंगे । एक दुर्बल और अवस्थ व्यक्ति अच्छे अच्छे पदार्थ होते हुये भी उन्हें खा नहीं सकता । खा ले तो पचा नहीं सकता । किसी स्थानीय औषधालय में बैठ कर देखें । आप देखेंगे कि पेट की बीमारियों के शिकार प्रायः वे लोग ही मिलेंगे जो अच्छा खा भी सकते हैं परन्तु अस्वस्थ और दुर्बल हैं। इसके विपरीत एक स्वस्थ व्यक्ति को देखिये । वह मोटी मोटी रोटियों को भी कितने आनन्द से खा रहा है । अस्वस्थ मनुष्य प्राकृतिक ऋतुओं का लाभ भी नहीं उठा सकता । गर्मी की ऋतु आई और उस के सिर में दर्द आरम्भ हुआ । उसे चक्कर आते हैं, बदहजमी हो जाती है । किन्तु एक स्वस्थ मनुष्य का गर्मी कुछ नहीं करती । वह बड़े मजे से प्रातः उठकर किसी तालाब या नदी में घंटा दो घंटा तैरता है । वर्षा ऋतु आई कि कमजोर मनुष्य को जुकाम आरम्भ हुआ । अब उस का घर से निकलना भी बन्द हुआ और एक प्रकार से उसे अपने घर में ही कैद हो जाती है । किन्तु उसी का दूसरा भाई, जो स्वस्थ है, बड़े चाव से अपने साथियों को इकट्ठा कर उसी वर्षा की नन्हीं २ बूंदों में मजे लेता हुआ किसी उद्यान में जाकर अपने साथियों के साथ आमोद प्रमोद करता है । नाना प्रकार के खेल खेलता है और आनन्द के साथ आम खा और दूध पी कर अपने स्वास्थ्य के रंग को और भी निखार लेता है । एक अस्वस्थ मनुष्य के लिये सर्दी की ऋतु क्या आजाती है मानों आफत आ जाती है । जरा भी इधर फिरा कि उसे बुखार ने आ दबाया । जुकाम तो उसे अवश्य ही आ दबोचता है । उसके लिये खाना पीना सब हराम हो जाता है । जरा अधिक खाया और उस की शामत आई । बेचारा अपने ही स्वस्थ भाई को माल खाते देख कर तरसता रहता है । एक स्वस्थ व्यक्ति के लिये सर्दी की ऋतु क्या आती है मानों ईश्वर प्रदत्त एक स्वर्ण अवसर आता है जिसका लाभ उठा कर वह डटकर व्यायाम करता है, भागता है, दौड़ता है, दण्डपेलता है और नाना प्रकार के योगासन आदि करता है । और बड़े मजे से बादाम, हलवा, लड्डू, फलाहार आदि खा-पी कर अपने आप को पूर्व की अपेक्षा और भी अधिक बलवान्, सुन्दर और स्वस्थ बना लेता है ।

मुझे इस विषय में अधिक कहने की आवश्यकता

नहीं। जब तुम रोगी हो जाते हो स्वयं ही स्वास्थ्य के महत्व को समझ जाते हो और मन में प्रतिज्ञा करते हो कि 'आज से कभी कोई ऐसा कार्य न करूंगा जो मेरे स्वास्थ्य को हानि पहुंचावे।' प्रभु से प्रार्थना करते हो कि 'हे प्रभु, अब तो मुझे शक्ति दे। आगे स्वास्थ के नियमों का अवश्य पालन करूंगा।'

अतः सारांश यह है कि यदि आप स्वस्थ हैं तो संसार के समस्त आमोद-प्रमोद आपके लिये हैं, अन्यथा कुछ नहीं। हमारे धर्म शास्त्रों का भी यही मत है कि "धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलकारणम्" अर्थात् धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति का सबसे पहिला साधन स्वास्थ्य ही है।

अब मैं आपको वे उपाय बताता हूं जिन से हम स्वस्थ रह सकते हैं। समय थोड़ा है इस लिये आज थोड़े से ही उपाय बताऊंगा। शेष फिर कभी बताऊंगा।

स्वस्थ कैसे हैं ?

(१) प्रातः जागरणः—एक महात्मा ने लिखा है, "ब्रह्मचारी हो अथवा गृहस्थ, जो भी जीवन में उन्नति करना चाहता है उसे सब से पूर्व प्रातः उठने का ही अभ्यास करना चाहिए। हमारे जितने भी पूर्वज ऋषि महर्षि हुये हैं वे सब प्रातः ही उठ जाते थे। आज कल के महापुरुष सभी ब्राह्म मुहूर्त में ही उठ जाते हैं। चार बजे उठने का समय सर्वोत्तम है किन्तु चार बजे आप तभी उठ सकते हैं जब कि आप रात्रि में जल्दी नौ और दस बजे के बीच में ही सो जाने का अभ्यास डालें। अंग्रेजी में एक कहावत है जिसका तात्पर्य है कि "जल्दी सो जाने तथा जल्दी उठने से मनुष्य स्वस्थ, धनी और बुद्धिमान् बनजाता है।" अतः अभी से प्रातः उठने की प्रतिज्ञा करो। इत बात को छोटी न समझो। यदि आपने इस नियम का पालन नहीं किया तो निश्चय ही आप अन्य नियमों का पालन नहीं कर सकेंगे। प्रातः उठने का दृढ़ता से अभ्यास करो। आरम्भ में यह काम कठिन जरूर मालूम देगा। यदि आप रात को निश्चय करके सोओगे कि आप चार बजे उठेंगे तो ठीक चार बजे आपकी आंख तो खुल जायेंगी, किन्तु आपका मन उसी समय आपको बहकायेगा। किन्तु होशियार! मन के बहकावे में न आना, उसे फटकार देना। आप स्वतन्त्र हैं, फिर यह दासता क्यों?

(२) प्रातःकाल उठकर चक्षुःस्नान, उषःपान और शौच आदि के पश्चात् किसी खुली हुई जगह पुष्प वाटिका, उद्यान अथवा नदी किनारे—चले जाओ और वहां व्यायाम करो।

सुशीलः—गुरुजी! यह चक्षुः-स्नान, उषः-पान आदि क्या हैं। कृपया जरा समझा कर बताइये।

चक्षुःस्नान तथा उषःपान

गुरु जी—बेटा सुनो। चक्षुःस्नान की विधि इस प्रकार है। प्रातःकाल उठकर ईश्वर की प्रार्थना के पश्चात् ताजे और वस्त्र से छाने हुये शुद्ध जलको मुंह में अच्छी प्रकार भर लो। इतना भरो कि उसमें और जल न समा सके। इस जल को मुंह ही में रखो। फिर दूसरे जल से आंखों में कई बार छींटे दो। ऐसा करने से तुम्हारी आंखों की ज्योति बढ़ेगी और आप का आलस्य आदि दूर हो जावेगा।

(३) उषःपान की क्रिया इस प्रकार है। चक्षुःस्नान के पश्चात् (किन्तु मल मूत्रत्याग से पूर्व) अपने गले, जीभ, नासिका आदि को भली प्रकार साफ करके, कुल्ला आदि करके आठ-दस घूंट ताजा जल पी लो। 'भाव प्रकाश' आदि आयुर्वेद के ग्रन्थों में उषःपान के अनेक लाभ लिखे हैं। उषःपान की क्रिया नासिका से भी होती है। किन्तु उसकी पूरी विधि जाने बिना उसे न करें। यदि कब्ज रहता हो तो पूर्व सायंकाल तांबे के पात्र में रखा हुआ जल उषःपान करते समय पी लें।

(४) शौचः—जल पीकर शौच के लिये जायें। शौच जाते समय आगे लिखी बातों का ध्यान रखें—

[शेष पृ० १८ पर]

क्या आयुर्वेद शास्त्र में—

सर्पविष की चिकित्सा (औषध) नहीं है ?

[लेखक आचार्य भगवान्देव जी गुरुकुल झज्जर]

श्री रामेश वेदी विश्वविद्यालय गुरुकुल काङ्गड़ी के सुयोग्य स्नातक तथा माने हुए विद्वान् हैं। "सांपों की दुनियां" आदि अनेक पुस्तकों के लेखक हैं। यू० पी० सरकार से आप को अपनी लिखी हुई कई पुस्तकों पर पारितोषिक भी मिले हैं। आप को सर्प पकड़ने तथा इनके विषय में अनेक प्रकार के अनुभव करने में बड़ी रुचि है। "गुरुकुल पत्रिका" तथा "हिन्दुस्तान" साप्ताहिक वा दैनिक देहली में सर्प विषय पर आपके लेख भी निकलते रहते हैं। यह सब होते हुए आपने अपनी पुस्तक "सांपों की दुनियां" तथा अपने लेख जो साप्ताहित हिन्दुस्तान देहली में प्रकाशि हुए हैं उन में यह लिखा हुआ है कि 'आयुर्वेद शास्त्र में सर्पविष की कोई औषध नहीं है।' यह पढ़ कर मुझे बड़ा आश्चर्य तथा दुःख हुआ कि यह लिखने का आपको कैसे साहस हुआ, जब कि भारत देश की पवित्र भूमि पर एक-दो नहीं, सहस्रों बड़े अच्छे-अच्छे सर्पविष के चिकित्सक अब भी विद्यमान हैं तथा पहले भी हो गये हैं। जो भयंकर सर्पों के काटने पर निश्चय से रोगी को मृत्यु-मुख से बचा लेते हैं। कितने ही चिकित्सक तो सर्वथा परोपकार भाव से निःस्वार्थ ही चिकित्सा करते हैं। कितने ही स्वार्थी मूर्ख भी होते हैं जो मृतसञ्जीवनी औषधियों को छिपाये रखते हैं। किसी को भी अपने जीवन काल में न बता कर संसार से चले जाते हैं, उनके साथ ही उनकी औषधियां भी चली जाती हैं। कितनी दुःख और लज्जा की बात है कि सर्वस्व न्यौछावर कर देने वाले ऋषियों के देश में उनकी सन्तान इतनी स्वार्थी और मूर्ख हो गई है कि अपने प्राचीन पुरुषाओं की खोजी हुई अमृत तुल्य औषधियों को सर्व साधारण में प्रचार करने के स्थान पर छिपाते रहते हैं। जो सज्जन परोपकार के भाव से बिना कुछ लिये सेवा करते हैं न वे समाचार पत्रों में लेख लिखते, न ही और किसी प्रकार से अपना विज्ञापन करते हैं। यदि वे किसी को बताते हैं—तो कुछ कठोर नियमों (शर्त्तों) के साथ बताते हैं। ऐसी अवस्था में खोज करने वालों के लिये सर्पविष की चिकित्सा एक जटिल समस्या बनी हुई है। इन्हीं कठिनाईयों के कारण तथा डाक्टरों की खोज के आधार पर ही अथवा यदि मैं भूल नहीं करता तो स्वयं सर्प विष की चिकित्सा का अनुभव न करने के कारण श्री माननीय पं० रामेश वेदी जी ने यह लिखा है कि आयुर्वेद शास्त्रों में सर्प-विष की चिकित्सा नहीं है। जिन डाक्टरों के अनुभव के आधार पर आपने यह लिखने का साहस किया है वे बम्बई की हाफकिन इन्स्टीट्यूट की औषध-गुण विज्ञान प्रयोगशाला में सर्प-विष उतारने वाली औषधियों की उपयोगिता जानने के लिये प्रयोग करते रहे हैं। उनके शुभ नाम डाक्टर श्री के० एस० म्हस्कर और श्रीयुत जे० एफ० कायस हैं। श्री वेदी जी ने अपना अनुभव कोई नहीं लिखा। प्रायः डाक्टर सदैव ही सर्प-विष-चिकित्सा ही क्या, आयुर्वेद-चिकित्सा पद्धति का ही खण्डन करते रहते हैं, क्योंकि डाक्टरों की ऐलोपैथी होम्योपैथी आदि किसी भी पद्धति में सर्पविष चिकित्सा नहीं है। डाक्टर सर्प-विष चिकित्सा में सर्वथा असफल हैं अतः वे आयुर्वेद की सफलता को इस विषय में कैसे सहन कर सकते हैं। किन्तु उनका अनुकरण हमारे विश्वविद्यालय गुरुकुल काङ्गड़ी के सुयोग्य स्नातक पं० रामेश वेदी आयुर्वेददालङ्कार को अपने स्वयं के किसी अनुभव के बिना नहीं करना चाहिये था। और न ही इस प्रकार का लेख लिखना चाहिये कि जिस से

आयुर्वेद की उच्चता के स्थान पर हीनता (जो यथार्थ में नहीं है) सिद्ध हो । मैं उन माननीय डाक्टरों के परीक्षण के विषय में तो आगे चलकर समाधान करूंगा, अब तो मैं अपने अनुभव के तथा अनेक सर्पविष चिकित्सकों के अनुभव के आधार पर लिखने का साहस करता हूं कि सर्पविष की चिकित्सा जितनी अच्छी आयुर्वेद शास्त्रों में है । तथा ऋषियों की पवित्र भारत भूमि पर है ऐसी न किसी अन्य विदेशी चिकित्सा पद्धति में है, न संसार के अन्य किसी देश वा स्थान पर है ।

मुझे अपने जन्म स्थान नरेला में आर्य विद्यार्थी आश्रम में रहते हुए सर्प ने काटा था, इसी प्रकार कई अन्य ब्रह्मचारियों को सर्पों ने काटा तथा आश्रम के आयुर्वैदिक औषधालय के सफल चिकित्सक श्री वैद्य कर्मवीर जी को भयंकर सर्प ने काटा, तब ही से मुझे सर्पविष चिकित्सा के ज्ञान की पिपासा हुई तथा उसी समय से इस विषय में अनुभव करता आ रहा हूं । इच्छा ने प्रबल रूप तो तब धारण किया जब गुरुकुल काङ्गड़ी के सुयोग्य स्नातक तपस्वी ब्रह्मचारी विक्रमादित्य को गुरुकुल झज्जर में सर्प ने काटा । वे आयुर्वैदिक साधारण चिकित्सा से सात-आठ दिन तक जीवित रहे किन्तु उनके भाई माननीय डा० अनन्तानन्द जी ने उनके बार-बार निषेध करने पर भी सर्पविष से तैयार किया गया इन्जैकशन लगा दिया जिसके लगते ही प्राण पखेरू उड़ गये ।

श्री ब्रह्मचारी विक्रमादित्य जी को पित्त प्रकृति के बिना पान के सर्प ने काटा था । उनसे घृत पीने के लिए बार २ आग्रह किया गया किन्तु उन्होंने घृत नाम मात्र ही पिया । वे घी पीने से न जाने क्यों संकोच वा घृणा करते थे । उनकी मृत्यु से मेरे ऊपर वज्रपात हुआ । उसके पीछे मैं अपने आयुर्वेद के ग्रन्थों में सर्पविष की चिकित्सा विषय की खोज करने लगा । अनेक अनुभवी सर्पविष चिकित्सकों से मिला तथा अब भी मिलता रहता हूं । प्रति वर्ष मेरे पास अनेक सर्पविष के दंशित रोगी आते हैं । ईश कृपा तथा ऋषियों की दया से मैं सेवा करता रहता हूं । कई रोगियों की भयंकर अवस्था में सेवा कर सफलता प्राप्त की । कितने ही सर्पविष चिकित्सक मेरे मित्र हैं, जो सर्पविष के अच्छे सफल चिकित्सक हैं । श्री वैद्य कर्मवीर जी नरेला प्रतिवर्ष अनेक रोगियों की चिकित्सा करते हैं । हरयाणा प्रान्त में ही नहीं, मैं भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रान्तों में जाता रहता हूं, सर्वत्र सर्पविष के चिकित्सक वा वैद्यों के दर्शन से परस्पर आदान-प्रदान होता रहता है ।

मैं यह मानता हूँ कि कितने ऐसे भयंकर विषधर नाग वा सर्प हैं जिनके विष की कोई चिकित्सा नहीं, ऐसा ही आयुर्वेद शास्त्र भी मानते हैं । किन्तु यह कहना वा लिखना कि आयुर्वेद शास्त्रों में सर्पविष की कोई चिकित्सा नहीं, यह भारी भूल है । जैसे सभी रोगों में असाध्य अवस्था होती है ऐसे ही सर्पविष चिकित्सा के विषय में भी समझें । मैं कुछ घटनायें अन्य चिकित्सकों तथा अपने अनुभव की लिखता हूँ ।

१—एक दिन अकस्मात् ही मैं श्री वैद्य कर्मवीर जी के पास नरेला आश्रम में मिलने गया । उस दिन वैद्य जी कार्यवश कहीं बाहर गये थे । मैं उनकी प्रतीक्षा में बैठा था कि एक कृषक जोतराम नाम का सर्प के काटने से भयङ्कर पीड़ा से अत्यन्त दुःखी आर्तनाद करता (करहाता) हुआ वैद्य जी से चिकित्सा कराने आया । वह सर्प को पकड़कर इधर-उधर छोड़ दिया करता था, मारता नहीं था । उसी स्वभाववश उसने एक विषैले सर्प को पकड़ने के लिये जो हल चलाते समय उसके बैलों के पैरों में आ गया था, हाथ डाला । हाथ सर्प के मुख पर ठीक नहीं पड़ा सर्प ने क्रोध में आकर डस लिया । उसे सर्प एक बार पहले भी काट चुका था, वह कोई निर्विष सर्प था, उसे काई कष्ट नहीं हुआ था । उसे पुराना अनुभव वा अभिमान था जिस से उसने यही सोचा कि "इसके काटने से मुझे क्या होता है, और कार्य में लग गया । यह सर्प विषैला था । थोड़े ही समय में सर्पविष ने सारे शरीर पर प्रभाव जमा लिया । आश्रम से खेत कुछ

दूर था, उसे वैद्य जी के स्थान पर पहुँचते देर लगनी ही थी। सर्प पित्त प्रकृति का था, उसके विष के कारण रक्त- शिरायें फट गई थीं, दंशित स्थान से भी रुधिर वेग से निकल रहा था, मुख से भी रक्त बह रहा था, उसके हाथ पर पर्याप्त शोथ (सूजन) आ गया था, उसे असह्य पीड़ा थी। उसे सर्पविष के कारण वेग से ज्वर चढ गया। मैं शीघ्र ही गुरुकुल झज्जर लौटना चाहता था किन्तु वैद्य जी वहाँ थे नहीं अतः उस सेवा का अवसर मुझे हाथ लग गया। मुझे देख कर उसे आशा बंध गई। उसकी चिकित्सा आरम्भ की, औषध लगाई तथा गोघृत के साथ खिलाई। वह मुख से पाव पाव भर रक्त (लहू) वमन द्वारा फैंक रहा था। आरम्भ में एक दो बार घृत तथा औषध को भी वमन द्वारा बाहर फैंक दिया। रोगी को धैर्य ा ढाडस बन्धाया, औषध उपचार करता रहा। निरतर कई दिन की सेवा से मैं उसकी चिकित्सा करने में प्रभु-कृपा से सफल हुआ।

उसकी चिकित्सा करने में अनेक कठिनाईयाँ आईं। ज्वर बड़े वेग से था अतः घृत जो उस समय औषध के साथ चिकित्सा की दृष्टि से देना अत्यन्त आवश्यक था, हानिकारक सिद्ध हो सकता था। शरीर से पर्याप्त मात्रा में रक्त निकल जाने से हृदय की गति निर्बल तथा मन्द हो गई थी। उसके शरीर में अनेक वर्षों से वात (वायु) रोग चला आ रहा था, वह भी रक्त की न्यूनता के कारण रोगी के एक पैर में प्रकट होकर उसे भयंकर पीड़ा कर रहा था। भयङ्कर सूजन, असह्य पीड़ा और पर्याप्त मात्रा में शरीर से रक्त निकल जाना, ये सब मिलकर रोगी के साहस को तोड़ रहे थे। सहानुभूति के लिये आने जाने वाले इष्टमित्र वा सम्बन्धी उसकी भयंकर अवस्था और असह्य पीड़ा को देखकर उलटी सीधी बातें कह कर उसका साहस तोड़ रहे थे। सब के मुख से यही निकलता था—बचना असम्भव वा अति-कठिन है। किन्तु ईश-कृपा वा ऋषियों की दया से और आयुर्वेद शास्त्र की सच्ची चिकित्सा पद्धति के कारण उस के प्राण बच गये। रोगी ईश-कृपा से भला चंगा होकर घर चला गया। जब कभी मिलता है उसकी आंखें और हृदय कृतज्ञता वा प्रेम से भर जाते हैं, वह श्रद्धावश नतमस्तक हो जाता है।

२—एक बार इसी प्रकार मैं गीझी ग्राम में कार्यवश गया, वहाँ एक पटवारी को सर्प ने काट खाया था। सर्पविष सारे शरीर में फैल गया था, ज्वर रहता था, रक्त शिरायें फटकर पर्याप्त रक्त भी शरीर से निकल गया था, शरीर के अनेक स्थानों पर विष के कारण नीलिमा लिये लाल धब्बे पड़े हुये थे। वह घबराया हुआ था, उसकी चिकित्सा एक सर्पवैद्य कर रहा था, वह ही मुझे उसके पास ले गया था और मेरी सम्मति चाहता था। मेरी सम्मति के अनुसार चिकित्सा की गई। वह रोगी कुछ दिनों में भला चंगा हो गया।

इसी प्रकार कितने ही रोगियों की चिकित्सा की, जब रोगी तथा उनके सम्बन्धी घबराये हुये थे। ईश-कृपा से उनकी सेवा में सफलता मिली। मैंने क्या औषध उपचार किया, वह सर्पविष चिकित्सा लिखते समय खोलकर लिखूंगा। (क्रमशः)

ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर

११ अक्टूबर से १८ अक्टूबर तक आर्य महाविद्यालय किरठल में ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। ७० आर्य विद्यार्थियों को आसन, व्यायाम, प्राणायामविधि, नैत्यिक कर्म तथा सामान्य ज्ञान की क्रियात्मक शिक्षा दी गई। पूज्य स्वामी सुरेन्द्रानन्द जी महाराज, आचार्य श्री भगवान्देव जी नैष्ठिक ब्रह्मचारी, आचार्य महामुनि जी शास्त्री "मुनि" आदि उच्चकोटि के महानुभावों के भाषण हुये। श्री स्वामी धर्मानन्द जी महाराज तथा गांव किरठल के अनेक सज्जनों ने शिविर व्यय वहन में पूर्ण सहयोग दिया। उत्तम अङ्क प्राप्त करने वाले आर्य कुमारों को विशेष पारितोषिक दिये गये। अनेक नवीन यज्ञोपवीत भी हुये। महाविद्यालय और गांव किरठल में सप्ताह भर पवित्र वातावरण छाया रहा।

महा विद्यालय किरठल में आर्य कुमार सभा की स्थापना हो गई। साथ ही गांव किरठल के सुप्त आर्यसमाज का पुनर्जागरण किया गया। सब आयोजन देहली प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के नेतृत्व में किया गया।

जगदेवसिंह सिद्धान्ती—मन्त्री सभा

आसनों के व्यायाम

(लेखक--भाष्याचार्य ब्रह्मचारी वेदव्रत, सिद्धान्त वाचस्पति गुरुकुल झज्जर रोहतक)

[३]

परन्तु शीर्षासन करने के पश्चात् सारा शरीर एक समान उष्ण होकर सर्दी का नाम भी न रहता था। मेरा विचार है कि यदि किसी को निमोनिया होने का भय हो (बल्कि प्रारंभिक अवस्था में आ भी गया हो) तो यदि उस से शीर्षासन कराया जा सके तो वह रोग के आक्रमण से मुक्त हो सकता है।

(७) कब्ज पर—मैं कोष्ठबद्धता के कारण कुम्भक के बल ही मल त्याग किया करता था। परन्तु अब एक वर्ष से मुझे बिना कुम्भक किये ही स्वयमेव नित्य शौच हो जाता है। इस उन्नति में अन्य आसनों के साथ शीर्षासन का भी प्रभाव है। शीर्षासन का विशेष लाभ मुझे यह अनुभव होता है कि एक तो पेट में वायु नहीं रह सकती और दूसरे शौच बधकर होता है।

(८) सर्वांग पर—सब से पहिला अनुभव शीर्षासन से यह होता है कि सम्पूर्ण शरीर हल्का और फुर्तीला हो जाता है। सारे शरीर पर एक प्रकार की कान्ति आजाती है। सम्पूर्ण त्वचा बिना तैलादि मले ही स्निग्ध बनी रहती है।

[९] प्राण पर—शीर्षासन से प्राण की गति स्थिर और शान्त होने लगती है। स्वयमेव प्राणायाम होने लगता है। इस समय प्राणायाम करने की चेष्टा कदापि न करनी चाहिये। शीर्षासन के पश्चात् अवश्य स्वेच्छापूर्वक प्राणायाम करना उचित है। मुझे इस का अनुभव इस प्रकार हुआ कि शीर्षासन के पश्चात् स्वमेयव श्वास रोकने की इच्छा होती थी। और रोकने पर बिना कष्ट के चिरकाल तक श्वास रुका रहता था। शीर्षासन के बाद प्राणायाम करने से उत्तमतया रक्तशुद्धि हो जाती है क्योंकि सम्पूर्ण शरीर का रुधिर मलों को लेकर फेफड़े में पहुँचता है।

मेरा विचार होता है कि केवल शीर्षासन के तथा उसके साथ और बाद में होने वाले प्राणायाम से भी अभ्यासी समाधि तक पहुंच सकता है। कई योगाभ्यासियों के कथन सुनकर मैंने अपना यह मत बनाया है। उनका कहना है कि प्रतिदिन तीन घण्टा कपाली मुद्रा (शीर्षासन) के अभ्यास से षट्चक्रवेध आदि सब कुछ सिद्ध हो जाता है। इसका कारण यही है कि शीर्षासन से प्राण अन्दर खिंचने लगता है। योगमार्ग में शीर्षासन का सब से बड़ा लाभ यही है। प्राण का आयाम होने से जैसे कि योगग्रन्थों में लिखा है इस आसन से आयुवृद्धि होती है और काल पर विजय पाई जाती है। वस्तुतः शीर्षासन आसनों में शीर्षस्थानीय है।

शीर्षासन की अवस्था में ही जो अन्य आसन किये जाते हैं उनके विषय में पृथक्-पृथक् लिखता हूँ, इनका वृत्तान्त सामान्यतया शीर्षासन की विधि में लिख चुका हूँ

२—ऊर्ध्वपद्मासन

शीर्षासन करके ऊपर ही पद्मासन लगाने से 'ऊर्ध्वपद्मासन' हो जाता है, यह विधि सरल है। इस की दूसरी विधि यह है—पहले भूमि पर बैठकर पद्मासन लगावें, तत्पश्चात् पद्मासन लगाये हुये ही शीर्षासन करें, अर्थात् शिर को किसी वस्त्र पर रखें और घुटनों को भूमि पर रख कर शिर के निकट करते हुये ग्रीवा को दृढ़ करते हुए पृष्ठ भाग को ऊपर उठावें।

लाभ—इस आसन के करने से शरीर में स्फूर्ति आती है, घुटनों के दोष दूर होकर वे निर्दोष हो जाते हैं। यह आसन शीर्षासन का ही रूपान्तर है, अतः शेष लाभ उस के तुल्य ही हैं।

३—ऊर्ध्वहस्तपद्मासन

ऊर्ध्वहस्तपद्मासन के लिये हाथों पर सम्पूर्ण शरीर के भार को संतुलित कर शनैः-शनैः पांवों को ऊपर ले जावें। ऊपर ही कुछ समय तक ठहर कर पद्मासन लगावें, शिर नीचे की ओर जहां तक हो सके सीधा रहना चाहिये।

लाभ—इस आसन के करने से शरीर अपने वश में हो जाता है, हाथों का बल विशेषतः बढ़ता है, ग्रीवा दृढ होती है। यह भी शीर्षासन के ही समान गुण वाला है।

४—वृक्षासन

पहले सीधे खड़े हो जावें, पश्चात् हाथों को भूमि पर जमाकर पांवों को शनैः-शनैः उठाकर ऊपर ले जावें और शीर्षासन की भान्ति बिल्कुल सीधे कर देवें, दोनों पांव मिले हुये रहें। वृक्ष की भाँति शरीर सीधा एवं तना हुआ रहना चाहिये।

लाभ—इसके लाभ शीर्षासन के समान हैं, इसके करने से विशेषतः हाथों में बल बढ़ता है, हाथों की कलाई और पञ्जे सुदृढ होते हैं।

५—हस्तपादाङ्गुष्ठासन

सीधे खड़े हो जावें, सारा शरीर सीधा रहे, दोनों हाथ कमर पर रखें। एक पांव को शनैः-शनैः ऊपर को उठावें, पांव घुटने में से न मुड़े। जब पांव सामने सीध में आजावें तब जिस ओर का पांव हो उसी ओर के हाथ से पांव के अंगूठे को पकड़े, श्वास अन्दर रहे। इसी प्रकार दूसरे पांव से भी करें। इस आसन को लेट कर भी कर सकते हैं।

लाभ—इस आसन से ग्रीवा कटि और उदर के विकार नष्ट होते हैं, पिण्डली, जंघा आदि के लिये लाभदायक है।

६—चक्रासन

इस आसन के करते समय शरीर चक्राकार बन जाता है, इसलिये इसका नाम चक्रासन है। इस आसन के करने की विधियां इस प्रकार हैं—

प्रथम विधि—पहले भूमि पर चित लेट जावें, पुनः हाथों और पावों के पंजों को भूमि पर दृढतापूर्वक जमाकर शरीर के मध्यम भाग को शनैः-शनैः ऊपर उठावें और शरीर को चक्र के समान बनावें। कुछ समय इसी स्थिति में रहें, पश्चात् हाथों और पांवों को एक दूसरे की ओर करते हुये प्रयत्न करें कि हाथों की अंगुलियाँ एड़ियों को छूवें। इतने अभ्यास के पश्चात् शिर को एड़ियों पर टेकने का प्रयत्न करें। यह विधि अन्य विधियों से सरल है।

द्वितीय विधि—सीधे खड़े होकर हाथों को शिर के ऊपर से पीछे लेजाकर मेरुदण्ड तथा कटि को पीछे को मोड़ते हुये शनैः-शनैः हाथों को भूमि पर टेक दें। शरीर का भार पांवों की ओर रहना चाहिये, इस के आगे पूर्ववत् क्रिया करें।

तृतीय विधि— प्रथम भूमि पर सीधे खड़े होकर हाथों को आगे भूमि पर रख कर पांवों को शिर के ऊपर से उछालकर भूमि पर रखें, इसके उपरान्त पूर्ववत् क्रिया करें।

आरम्भ में यह आसन प्रथम विधि से ही करना चाहिये, क्योंकि वह सरल है। अभ्यास होने पर अन्य विधियों से करें। अभ्यास होने के उपरान्त इस आसन की स्थिति से हाथों और पांवों से भी उठते हैं अर्थात् आसन की दशा से पांवों को ऊपर से लाकर पीछे टेककर सीधे खड़े हो जाना और दूसरा हाथों की ओर से शरीर को ऊपर उठाकर सीधा खड़ा हो जाना।

इसी आसन को करते हुए दण्ड भी लगा सकते हैं। चक्रासन की स्थिति में हाथों को कोहनियों में से और पांवों को घुटनों में से मोड़ें और शरीर को नीचे लावें, पुनः ऊपर उठावें, इसी प्रकार बार-बार करें, श्वास अन्दर भर लें।

लाभ—साधारणतया पीठ का झुकाव आगे को रहने से जो विकार उत्पन्न हो जाते हैं वे विरुद्ध झुकाव होने से दूर हो जाते हैं। शरीर का आधारस्तम्भ मेरुदण्ड (रीढ की हड्डी) बलवान् होता है, बुढ़ापे में भी कमर आगे को नहीं झुकती। पेट की नस-नाड़ियां बलवान् होती हैं। आमाशय के रोग, कमर दर्द, और जीर्णज्वर में लाभप्रद है। प्लीहा और कृमिनाशक है। कद (लम्बाई) को बढ़ाता है, अतः बालकों और वृद्धि अवस्था वालों को विशेषतया करना चाहिये।

७—पादहस्तासन

पहले सीधे खड़े हो जावें, पश्चात् हाथों को पीछे करके कमर को झुकाते हुए दोनों हाथों से दोनों पावों के अंगूठे पकड़ें। श्वास को बाहर निकालदें और पेट का अन्दर को संकोच करें अर्थात् पेट को अन्दर को खीचें और शिर को घुटनों पर लगायें। जब श्वास लेने की इच्छा हो तब शनैः २ ऊपर को हो जावें। नीचे को जाते समय रेचक करें अर्थात् सम्पूर्ण श्वास को बाहर निकाल दें, जब आसन की स्थिति में ठहरें तब बाह्य कुम्भक करें और ऊपर को उठते समय पूरक करें अर्थात् पूरा श्वास अन्दर भर लेवें। इसी प्रकार बार २ करें। इस आसन के करते समय रेचक, बाह्य-कुम्भक और पूरक तीनों प्राणायाम हो जाते हैं। इस बात का विशेष ध्यान रखें कि पाँव नितांत सीधे तने हुए रहें, घुटने में से मुड़े नहीं।

हाथों तथा पांवों को बदल कर भी इस आसन को करते हैं। —दायें हाथ से बायें पांव का और बायें हाथ से दायें पांव का अंगूठा पकड़ने से प्रथम प्रकार सिद्ध होता है। दूसरा—पहले पांवों को एक दूसरे के स्थान पर रख कर पूर्ववत् पांवों के अंगूठों को पकड़ें।

लाभ—हाथ, पांव, कमर आदि के स्नायु भली-भांति खिंच जाते हैं अतः इन अंगों की आरोग्यता प्राप्त होती है। यकृत और प्लीहा निर्दोष होते हैं। जठराग्नि तीव्र होती है, भूख खूब लगती है, अजीर्णता दूर होती है। पेट और आन्तों की शुद्धि होकर मल भी अच्छी प्रकार बाहिर हो जाता है, पेट के कृमि नष्ट हो जाते हैं। मेद(चर्बी) कम होकर पेट छोटा हो जाता है। पेट की निम्नगति होकर वायु बाहर हो जाती है। रीढ की हड्डी दृढ होती है, कद बढ़ता है, आयु की वृद्धि होती है।

८—वृश्चिकासन

इस आसन को करने के लिए प्रथम भूमि पर बैठ कर कोहनी से पंजे तक के हाथ भूमि पर रखें, हाथों की हथेलियां भूमि पर लगी रहें और अंगुलियां फैली रहें। हाथों पर ही सम्पूर्ण शरीर के भार को संतुलित करते हुए पांवों को शनैः शनैः ऊपर उठावें और कमर को मोड़ते हुए पावों को घुटने में से मोड़कर रखने का यत्न करें, ग्रीवा को ऊपर को उठावें, श्वास अन्दर रहे। शरीर की आकृति डंक उठाये हुए बिच्छू के तुल्य बन जावे।—

भूमि पर शरीर के आगे के भाग को रख कर लेट जावें, हाथों को पांवों के साथ पीछे फैला दें, पश्चात् छाती के बल इस आसन को करें अर्थात् पांवों को ऊपर से लाकर शिर पर या भूमि पर टेक दें, इसे "प्रसृतहस्त वृश्चिकासन" कहते हैं।

कुछ लोग इसे केवल हाथों के पंजे पर ही करते हैं। किसी भी प्रकार से किया जाय, लाभ प्रायः तुल्य ही हैं।

वृश्चिकासन करते हुए दण्ड भी लगा सकते हैं, पांवों को कुछ ऊपर उठाकर मुख को नीचे ले जावें और साथ ही पांव भी नीचे को आजावें, फिर ऊपर को उठें, इसी प्रकार बार-बार करें। इसे "वृश्चिक दण्डासन" कहते हैं।

लाभ—वृश्चिकासन करने से हाथों और बाहुओं में बल बढ़ता है, मेरुदण्ड और पेट निर्दोष रहते हैं, शरीर हल्का और फुर्तीला रहता है। आम वात, अजीर्ण, कोष्ठबद्धता आदि में भी हितकर है, पाचनशक्ति बढ़ती है, लम्बाई बढ़ती है, इस आसन का अभ्यास करते रहने से वृद्धावस्था में भी कमर टेढ़ी नहीं होती।

९—सर्वाङ्गासन

प्रथम आसन या भूमि पर चित्त लेट जावें और हाथों को शरीर के साथ मिलाकर लम्बा पसार दें। तदुपरान्त शनैः शनैः पांवों को ऊपर उठावें और हाथों को कटि में लगाकर उनका सहारा लेकर शरीर को इतना सीधा करें कि केवल कन्धों के ऊपर का भाग ही भूमि पर टिके। घुटनों और कमर में टेढापन न रहे, सारा शरीर तना रहे, श्वास अन्दर भर कर ठोडी कण्ठमूल में लगावें, दृष्टि पांवों के अंगूठों पर रखें।

लाभ—इस आसन के करने से यकृत, प्लीहा, पक्वाशय और आन्तें शुद्ध होकर जठराग्नि प्रदीप्त होती है। कोष्ठबद्धता दूर होती है, कण्ठ के रोगों में लाभदायक है। मिर्गी और गठिया रोग वाले तथा वीर्यरक्षा के लिये उत्तम है। इस आसन को करते हुए उड्डियान बन्ध भी लगा सकते हैं।—

१०—हलासन

हलासन करने के लिये सर्वाङ्गासन की स्थिति से ही पांवों को शिर के पीछे टेक देवें, पांव सीधे रहें । हाथों को कमर पर रखें या भूमि पर पसार दें, भूमि पर पसारना ही अच्छा है, श्वास को बाहर निकाल कर पेट को अन्दर खींचें ।

लाभ–इसके लाभ सर्वाङ्गासन के समान हैं । इसके करने में विशेषतया आन्तों को शक्ति मिलती है । कद बढ़ता है । पेट का संकोच कर गुदा की ओर अपानवायु को धक्का देकर बाहर निकालने का अभ्यास भी इस आसन में किया जा सकता है । कमर दर्द में लाभदायक है ।

११—कर्णपीडनासन

पूर्ववत् हलासन करके घुटनों को मोड़कर कानों के ऊपर लगाने से कर्णपीडनासन हो जाता है ।

लाभ—इसके लाभ हलासन के तुल्य हैं ।

१२—उत्तानपादासन

भूमि पर चित लेटकर अत्यन्त मन्द गति से दोनों पांवों को साथ-साथ ऊपर उठावें और श्वास को अन्दर भरते जावें । जब पांव भूमि से १ हाथ ऊपर आजावें तब वहीं पर रोक दें, जब श्वास लेने की इच्छा हो तब धीरे-धीरे पावों को नीचे लेजाकर पूर्व स्थिति में आजावें इसी प्रकार बार-बार करें ।

इस आसन को करते समय जितनी मन्दगति से पांवों को ऊपर उठाया जायेगा और नीचे लाया जायेगा उतना ही अधिक लाभ होगा । शनैः-शनैः पांवों को उठाना और नीचे ले जाना जितना कठिन है उतना ही अधिक लाभप्रद है ।

लाभ—इस आसन के करने से क्षुधा प्रदीप्त होती है, शौच शुद्धि होती है, पेट के स्नायुवों का बल बढ़ता है और पेट नहीं बढ़ता । नाभि (धरन) का डिगना इस आसन के करने से ठीक हो जाता है । नलों के रोग दूर होते हैं ।

कुछ लोग "उत्तानपादासन" को हलासन, हलासन को 'सर्वाङ्गासन" और सर्वाङ्गासन को 'ऊर्ध्व सर्वाङ्गासन" कहते हैं ।

१३—पवनमुक्तासन

भूमि पर चित लेटकर एक पांव को घुटने में से मोड़कर, पेट पर रखकर दोनों हाथों से पांव को पकड़ें और नीचे को दबावें ।

इस आसन को अन्य प्रकारों से भी करते हैं—प्रथम-भूमि पर पसरे हुए पांव को उत्तानपादासन की तरह ऊपर को उठावें । द्वितीय—दोनों पांवों को मोड़कर पेट पर रख पूर्ववत् हाथों से पकड़कर दबावें ।

लाभ—पेट के स्नायुवों पर इस आसन का प्रभाव पड़ता है, अपानवायु बाहर निकलती है । अन्य उदर विकारों में भी हितकर है ।

१४—वज्रासन

इस को वीरासन भी कहते है । इस को करने के लिए भूमि पर घुटनों को टेककर, जंघाओं को पिण्डलियों पर रखें और पांवों की अंगुलियों को भूमि पर रखकर एड़ियों पर बैठ जावें । दोनों एड़ियां मिली हुई हों । श्वास अन्दर भरें और छाती को आगे निकालें ।

इसका दूसरा प्रकार यह है कि पांवों को तिरछा कर उनके तलुवों पर बैठें । शेष पूर्ववत् ।

तृतीय प्रकार यह है कि एड़ियों को पृथक्-पृथक् कर उनके बीच में भूमि पर बैठें, अन्य क्रियायें पूर्ववत् करें ।

वज्रासन लगाकर पीछे भूमि पर लेटने से "सुप्त-वज्रासन" हो जाता है ।

इस आसन को करते समय ठोड़ी कण्ठमूल में लगी रहे तो और भी अधिक लाभदायक है ।

लाभ—इस का पेट पर अच्छा प्रभाव पड़ता है, मेरुदण्ड ग्रीवा, हाथ, घुटना, जंघा आदि का खिंचाव होने से और उन पर दबाव पड़ने से वे रोग रहित हो जाते हैं ।—

॥ क्रमशः ॥

सुधारकता

[श्री पं० लोकनाथ जी तर्कवाचस्पति]

संसार का पविर्त्तित होना एक आवश्यक नियम है। दिन के पश्चात् रात्रि आती है तो रात्रि के पश्चात् दिन का आना भी आवश्यक है। यही नियम सृष्टि और प्रलय के लिये भी लागू होता है। इस सर्वतन्त्र मन्तव्य के आधार पर संसार में सुधार और विकार भी भावनाओं के आधार पर परिवर्तनशील है। इस समय प्रायः समूचे जगत् में विकार ही विकार दिखाई देता है। जहां देखो पाप को ही वृद्धि हो रही है। यदि यह कह दिया जाय कि पाप और पुण्य का विवेक ही नहीं रहा है तो यह अत्युक्ति नहीं होगी।

सम्मिश्रण

सत्यासत्य का परित्याग करके केवल धन लोलुपता के कारण खाने-पीने, पहिनने के प्रत्येक पदार्थ में संमिश्रण करके पदार्थों की वास्तविकता को विनष्ट करके उन्हें विकारी तथा प्रभावशून्य बनाकर क्रय-विक्रय करके स्वास्थ्य तथा सौन्दर्य का विनाश किया जा रहा है। पंजाबी भाषा की एक लोकोक्ति "कोई मरे कोई ज़ीवे सुथरा घोल पताशे पीवे" के अनुरूप ही धन संग्रह किया जा रहा है। इसके साथ ही साथ राजनियमों की भी घोर अवहेलना की जा रही है। प्रजा ही नहीं, राज्य कर्मचारी भी इस में सम्मिलित हैं अपितु अग्रसर हैं। मैं बीस मई के दिन बस में करनाल से देहली आ रहा था, उसी बस में दो थानेदार भी मेरे साथ बैठे हुये थे, उनके सामने लिखा हुआ था "गाड़ी में सिगरिट पीना कानूनन मना है" किन्तु वे दोनों पोलीस कर्मचारी हंस-हंस कर गप्पें हांक रहे थे और सिगरेटों के धुंवें से गाड़ी को दुर्गन्धित कर रहे थे। आर्योपदेशक होने के नाते मैंने उन्हें कहा कि आप तो कानून के रक्षक हैं और आपके सामने जो कुछ लिखा है आप सिगरेट पीकर उसके विरुद्ध आचरण कर रहे हैं। उनमें से एक मुस्कराते हुये बोले,कानून-कानून बनाने वाले के लिये नहीं हुआ करता। बनाने वाले तो लोगों से अमल करवाते हैं। इस से थोड़ी देर तक विनोद होता रहा। जब प्रबन्धकों की यह अवस्था हो और न्यायाधिकारी पूछते तक न हों, तो प्रजा नियमों का पालन करे और सत्य का व्यवहार करे, यह कैसे सम्भव हो सकता है। यही कारण है कि प्रतिदिन भ्रष्टाचार की वृद्धि होती जा रही है जिस के कुछ उदाहरण नीचे उद्धृत करता हूं।

(१) चिरकाल से जनता मांग कर रही है कि वनस्पति घी को रङ्ग दिया जाय जिससे शुद्ध घी में मिलावट न हो सके। यदि कोई करे भी तो पकड़ा जाय; किन्तु भ्रष्टाचारात्मक स्वार्थों के कारण वनस्पति घृत में रङ्ग नहीं दिया जाता और कारण यह दिया जाता है कि रंग स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। जब हम देख रहे हैं कि मिठाइयों में—सोडे की बोतलों में, खट्टी-मीठी गोलियों में इत्यादि अनेक खाद्य पदार्थों रंग पड़ रहा है तो उसे क्यों नहीं रोका जाता? इस से स्पष्ट हो जाता है कि घृत में रंग देने से स्वार्थ टक्कर खाता है इत्यादि।

(२) आटा, बेसन, सूजी, चावल, खाण्ड, गुड़, तेल दालें सब में मिलावट हो रही है। क्षुद्रता की यहां तक पराकाष्ठा है कि गर्म मसाले में घोड़े की लीद पिसी हुई, लाल मिर्चों में दियार का रंगा हुआ बुरादा, काली मिर्चों में वायविडिङ्ग इत्यादि अनेक पदार्थ मिश्रित करके जनता को खिलाये जा रहे हैं। दूध-दही, गन्ने का रस, अर्क-शर्बत-मधु इत्यादि पदार्थ विभिन्न योगों से युक्त ही मिलते हैं। मेरे आश्चर्य की सीमा न रही जब मैंने देखा कि आटे की छोटी-छोटी गोलियों पर राल चढ़ाकर और उस पर इलायची का सत डालकर इलायची दाना बनाकर बेचा जा रहा है। इस से जनता का स्वास्थ्य और व्यापारियों का धर्म नष्ट हो रहा है। इत्यादि विकारों से जन साधारण अत्यन्त ही दुःख अनुभव कर रहे हैं। इन विकारों के सुधार के लिये सुधारक की आवश्यकता थी सो तो पूरी हो गई, परन्तु सुधारक में सुधारकता होनी चाहिये जिस से भावों के परिवर्त्तन से सत्य का व्यवहार होने लगे और लोगों की शारीरिक उन्नति के साथ-साथ आत्मिक उन्नति हो और संसार कल्याण मार्ग पर चलकर आनन्द प्राप्त कर सके।

बाल-शिक्षा

[लेखक—श्री पं० हरिदत्त जी शास्त्री एम० ए० नवतीर्थ]

बालकों का जीवन मुनियों के जीवन से तुलना का विषय होता रहा है। उपनिषद् में आता है कि—"बाल्येन तिष्ठासेद्" अर्थात् मनुष्य को अपना जीवन बच्चे की तरह रागद्वेष रहित जीवन व्यतीत करना चाहिए। जिन बालकों का जीवन इस प्रकार स्पृहणीय बतलाया गया है उनका जीवन अब बड़ा ही उपेक्षणीय बन रहा है। उनका जीवन कैसा बनाया जाय यह विचार शिक्षा-शास्त्रियों के मन में बहुत आ रहा है।

उनका रहन-सहन, बोल-चाल, उठ-बैठ कैसी हो? इस ओर किसी भी शिक्षा प्रेमी का ध्यान नहीं है। उनकी शिक्षा तथा आचार पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। सिगरेट आदि दुर्गण इन बालकों में अरम्भ से ही स्थान कर लेते हैं। मां-बाप इनकी सफाई की ओर बहुत कम ध्यान देते हैं। इनका सहवास किन व्यक्तियों के साथ है? उनसे यह लोग क्या सीखते हैं? इसका ध्यान माता-पिता को नहीं होता। पाठशाला में भेजने के बाद गुरु का भी यह ध्यान नहीं रहता।

इस प्रकार होनहार प्रत्येक बालक का जीवन कुसमय में मुरझा जाता है। इस महती हानि को रोकने का उपाय एकमात्र 'बालक उपनिवेश' स्थापन करना है जहां पर कि बालक अपने जीवन को गुरु के समर्पण कर बना सकें। सुना जाता है कि ऐसे उपनिवेशों का निर्माण प्राचीनकाल में ऋषियों के आश्रम में था, पर अब वह सब नष्ट हो रहा है। क्या स्वतन्त्र भारत के नागरिक भावी भारतीय नागरिकों के जीवन निर्माण की ओर भी कुछ ध्यान देंगे। यही एक प्रश्न है जो आज सब के लिये विचारणीय बना है। आज इसका उत्तर सोचकर ही उठिये।

पृष्ठ ९ का शेष

१. शौच होसके जहांतक, दूर जंगल में जावें।

२. जिधर से वायु आरहा हो, उधर को मुंह करके ही शौच बैठें, जिससे कि आपको दुर्गन्ध न सतावे और आपके नेत्र खराब न हों।

३. शौच के पूर्व यदि खेत में थोड़ी सी मिट्टी खुरच कर बैठें और बाद में उस मिट्टी को ऊपर डाल दें तो आप जहां खेत वाले के लिये खाद तैयार करके उसका ऋण चुकावेंगे वहां अपने नगर को गंदी वायु से भी बचावेंगे।

४. शौच जाते समय पर्याप्त जल ले जावें। इसमें कंजूसी न करें।

५. शौच करते समय जोर न लगावें। यह अत्यन्त हानिकर है।

६. शौच आदि के वेग को कभी न रोकें।

७. शौच के समय मुंह तथा दांतों को बन्द रखें तथा बायें पैर पर दबाव रखें। इससे दांत ठीक रहते हैं, ऐसा हमारे ऋषियों का मत है।

८. शौच के पश्चात् हाथों तथा पात्र को अच्छी प्रकार मिट्टी से मांजें।

९. यदि आप शहर में रहते हैं और घर में ही शौच जाना होता है तो उसे दिन में दो बार धुलवाने का प्रबन्ध करें। यदि फलस की टट्टियां नहीं हैं तो शौच के पश्चात् उस पर राख डाल दें। एक कनस्तर में राख या मिट्टी आदि डाले रखें और उसमें एक बड़ा चमचा हो जिससे टट्टी पर राख डाल देवें। इस से घर में दुर्गन्ध कम होगी।

ये कुछ स्वास्थ्य संबंधी नियम मैंने बताये हैं। मैं आशा करता हूं कि आप लोग इन पर अमल करके लाभ उठावेंगे। आज की सभा का समय बीत गया है। अतः शेष नियम फिर कभी बताऊंगा।

आर्यकुमार सभा की मीटिंग समाप्त हुई

संस्था परिचय

गुरुकुल झज्जर को दान—

गतमास में गुरुकुल की प्रबन्धकारिणी सभा ने आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये जो पचास हजार रुपया इकट्ठा करने का निश्चय किया था उसके अनुसार कार्य आरम्भ कर दिया है। इसी के अनुसार निम्नलिखित दान प्राप्त हुवा है।

८०१) जमींदार रामकृष्ण ट्रांस्पोर्ट मोटर कम्पनी जि० रोहतक।

१०१) श्री महाशय प्रतिपाल जी सुपुत्र सूबेदार सेवाराम जी ग्राम पलड़ा।

१०१) श्री चौ० सुमेरसिंह जी स्वरूपगढ़ जिला महेन्द्रगढ़ ने नकद दिया तथा ४०० रुपये का वचन दिया।

गुरुकुल की प्रबन्धकारिणी के प्रधान माननीय प्रो० शेरसिंह जी एम. एल. ए. आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये विशेष उत्साह से यत्न कर रहे हैं। उपर्युक्त दान आपकी विशेष प्रेरणा से ही मिला है। आप ही की प्रेरणा से इस मास में हमारे यहां अनेक महानुभाव गुरुकुल भूमि में ४ अक्तूबर को पधारे। जिन में से विशेष व्यक्ति पंजाब सरकार के शिक्षामन्त्री माननीय लाला जगतनारायण जी हैं। आप के साथ ही माननीय पूर्णचन्द जी आजाद एम. एल. सी, श्री देवीदत्त जी वैद्य प्रधान कांग्रेस कमेटी हल्का बहादुरगढ़ तथा झज्झर तहसील के बड़े तहसीलदार जी पधारे। आप सब ने गुरुकुल के धर्मार्थ औषधालय, आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला [फार्मेसी], रोगीगृह, कृषि, वनस्पति व औषधवाटिका, औषध प्रदर्शनी, वाचनालय, पुस्तकालय, गोशाला, छात्रावासादि सभी विभागों को देखकर प्रसन्नता प्रकट की। रसायनशाला का प्राचीन क्रियात्मक वैज्ञानिक ढंग देख कर सब ने विशेष हर्ष तथा आश्चर्य प्रकट किया। विशल्यकरणी, संजीवनी, नागदमन, जलपीपलादि विशेष यत्न से लाई और लगाई हुई जड़ी बूंटियां देखकर उनके विषय में जिज्ञासा की-इच्छा से पूछताछ की। गुरुकुल के प्रमुख चिकित्सक आचार्य भगवान्देव जी से माननीय लाला जगतनारायण जी ने अपने स्वास्थ्य का निरीक्षण व परीक्षण कराकर उनसे चिकित्सा सम्बन्धी परामर्श लिया। माननीय शिक्षामन्त्री लाला जगतनारायण ने विद्यार्थियों के कल्याण के लिये स्वास्थ्योन्नति, चरित्र-निर्माण आदि विषयों पर उपदेश दिया। आपने आयुर्वेद के प्रति अपनी अगाध श्रद्धा प्रकट की। और भविष्य में चलने वाले "आयुर्वेद महाविद्यालय गुरुकुल झज्झर" के लिये भी यथोचित सहायता देने का वचन व आश्वासन दिया। आपने गुरुकुल के प्रति श्रद्धा और प्रेम के भाव प्रकट करते हुए यह शब्द कहे कि "यदि मेरे पिता आर्यसामाजी न होते और मुझे संस्कृत न पढ़ाते तो मैं आज पंजाब सरकार का शिक्षामन्त्री न होकर अपने अन्य सम्बन्धियों की तरह साधारण डाक्टर ही होता।

माननीय शिक्षामन्त्री की सम्मति निम्न प्रकार से है:–

आज ४. १०. ५३ को मुझे गुरुकुल झज्झर को देखने का शुभावसर मिला। आचार्य जी की अध्यक्षता में यह गुरुकुल चल रहा है। प्रो० शेरसिंह इस संस्था के प्रधान हैं। यह गुरुकुल अच्छी तरह चल रहा है। आयुर्वेद चिकित्सा के सिखाने का भी प्रबन्ध है। फार्मेसी भी अच्छी तरह चलाई जा रही है। विद्यार्थी धार्मिक जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मुझे इस गुरुकुल को देखकर बड़ा हर्ष हुवा। परमात्मा से प्रार्थना है कि यह गुरुकुल उन्नति करे।

माननीय पूर्णचन्द आजाद की सम्मति निम्न है—

I am very glad to see this Gurukul to day. This is being efficiently run under the able guidence of the noble Acharya Bhagwan Dev. The particular aspect of this institution is the teaching of old system of Ayurvedic arts and practical knowledge in Sanskrit. Such like institutions are badly needed in the country

Purn Chad Azad
M. L. C. (Punjab state)

अर्थात् आज मैं इस गुरुकुल को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हूं। गुरुकुल श्री आचार्य भगवान्देव जी की अध्यक्षता में

बड़ी उत्तमता से चल रहा है। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य प्राचीन आयुर्वैदिक क्रियात्मक शिक्षा का प्रदान करना है। इसके साथ-साथ संस्कृत की भी अच्छी शिक्षा दी जाती है। ऐसी संस्थाओं की देश में परम आवश्यकता है।

इसी मास में ९ तारीख को श्री कर्मवीर वंशीलाल जी व्यास वानप्रस्थी मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल घटकेश्वर तथा मन्त्री आर्यसमाज सुलतान बाजार हैदराबाद (दक्षिण) गुरुकुल में पधारे। आपने भी औषधालय, गोशाला, औषधवाटिका विद्यालयादि सभी विभागों को बड़े प्रेम और श्रद्धा से देखा। आपने ब्रह्मचारियों को तपस्या पूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये विद्याध्ययन करने के लिये उत्साहित किया। विद्या समाप्ति पर वैदिक धर्म प्रचार के लिये त्यागपूर्वक जीवन समर्पण करने की प्रेरणा की। गुरुकुल के कार्य को देखकर आपने अत्यन्त हर्ष प्रकट किया और आपने निम्नलिखित सम्मति दी।

"भगवान् की असीम कृपा और आचार्य श्री भगवान्देव जी के अगाध प्रेम के कारण आज मिति आश्विन शु० ३ सं० २०१० वि० ता० १० १० ५३ ई० को मुझे गुरुकुल झज्जर को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुवा। इसी गुरुकुल को प्रथम भी देखा था पर आज देखने से आत्मा में बहुत आनन्द हुआ। जहाँ भारत के कई गुरुकुल अपनी शिथिलता का अनुभव कर रहे हैं। वहां प्रभु की कृपा से यह गुरुकुल उन्नति के पथ पर बढ़ रहा है। आयुर्वेद फार्मेसी तो गुरुकुल में जीवन भरने का कार्य करेगी। जहाँ ब्रह्मचारी वेद का अध्ययन करके निकलेगा, वहां जीविका की दृष्टि से भी आत्मनिर्भर होगा परमात्मा से प्रार्थना है कि आचार्य जी की दीर्घायु और गुरुकुल की दिनदूनी रात चौगुनी उन्नति करे।

❀ 'सुधारक' के विषय में सम्मतियां ❀

१—आप पत्रिका निकाल रहे हैं यह भी एक व्यय-साध्य कार्य है। भली भान्ति सोच लीजियेगा। क्योंकि साधारण पत्र भी आजकल घाटे में ही चलते हैं। गुरुकुल का भार भी आप के शिर पर है ही। आप अधिक दूरदर्शी हैं सब कुछ सोच ही लिया होगा। लेख भेजूंगा।

शुभचिन्तक—आत्मानन्द सरस्वती
(अध्यक्ष साधनाश्रम-जमना नगर)

२—'सुधारक' के लिए मेरी मङ्गल कामना है कि "यह पत्र वास्तव में युवक—युवतियों, कुमार-कुमारिकाओं के जीवन को सुधारने वाला, वैदिक संस्कृति को फैलाने वाला, मङ्गल ज्ञानामृत को पिलाने वाला बने" यही ईश से प्रार्थना है। —मेधाव्रताचार्य

३—"सुधारक" पत्र का सम्पादन कर दिया है। आप का हार्दिक धन्यवाद करता हूं। और आपको यह आशीर्वाद भेजता हूं कि—"आप अपने युग के सब से बड़े सुधारक बन जावें।"

मङ्गलाभिलाषी—(स्वामी व्रतानन्द

४—आपने 'सुधारक' मासिक आरम्भ किया है, उसके लिए मैं उत्तम यश चाहता हूं। आका सुधारक यशस्वी कार्य करे। सब का कल्याण हो।

श्री पाद सातवलेकर
सम्पादक-वैदिक धर्म

५—आपका "सुधारक" पत्र सच्चे अर्थों में किन्तु मधुरता से सुधार के कार्य में सफल हो।

नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ
(एम० एल० ए०)

६—मुझे हर्ष है कि आप ने "सुधारक" नाम की मासिक पत्रिका आरम्भ कर दी है। भारत के धार्मिक और सांस्कृतिक उत्थान में आपका "सुधारक" सहायक हो, ऐसी प्रार्थना परमात्मा से है।

घनश्यामसिंह गुप्त
(भूतपूर्व प्रधान आर्य सार्वदेशिक सभा)

❀ साहित्य-योजना ❀

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की परीक्षाओं की पाठविधि

कुछ आवश्यक नियम

१—परीक्षायें छः हैं। (१) सिद्धान्त सरोज (२) सिद्धान्त रत्न (३) सिद्धान्त भास्कर (४) सिद्धान्त शास्त्री (५) सिद्धान्त वाचस्पति (६) साहित्य सरोज।

२—इनका शुल्क क्रमशः १), २), ३), ४), ५) एवं ३) है जो आवेदन पत्रों सहित परीक्षा मंत्री के पास १५ जौलाई व १५ नवम्बर तक अवश्य पहुँच जाना चाहिए।

३—ये परीक्षायें प्रति वर्ष प्रायः अगस्त और जनवरी मास में रविवारों को होती हैं।

४—जिस परीक्षा में जो विद्यार्थी चाहे सम्मिलित हो सकता है। परन्तु 'सिद्धान्त वाचस्पति' परीक्षा में वे ही सज्जन बैठ सकेंगे जो सिद्धान्त शास्त्री, बी० ए०, साहित्य रत्न, स्नातक परीक्षा में से कोई एक अथवा कोई अन्य समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण हों, जिस का प्रमाण पत्र पहले परीक्षा मन्त्री को प्रस्तुत करके आज्ञा लेनी पड़ेगी।

५—एक स्थान पर कम से कम पांच परीक्षार्थी होने पर केन्द्र स्थापित किया जा सकता है।

६—किसी भी परीक्षा के छपे हुए आवेदन पत्र एवं नियमावली आदि परीक्षा मंत्री भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् मुरादाबाद से बिना मूल्य मिल सकते हैं।

१—सिद्धान्त सरोज परीक्षा—पूर्णाङ्क २००

प्रथम प्रश्न पत्र—पूर्णाङ्क १०० समय ३ घंटे

क्रमसं०	नाम पुस्तक	मूल्य	अंक
१-	वैदिकशिक्षा (भा. व. आ. कु. परिषद्)	॥)	५०
२—	आदर्श ब्रह्मचारी (स्वामी आत्मानन्द)	=)॥	२०
३—	व्यवहार भानु —ऋषि दयानन्द	≡)	३०

द्वितीय प्रश्न पत्र—पूर्णाङ्क १०० समय ३ घंटे

१—	आर्य समाज के उज्ज्वल रत्न	॥=)	
	अथवा आर्य जगत् के उज्ज्वल रत्न	।=)	५०
२—	वैदिक शिष्टाचार —पं० हरिश्चन्द्र	≡)॥	२०
३—	हमारे स्वामी —पं० चमूपति	॥=)	३०

सिद्धान्त रत्न परीक्षा—पूर्णाङ्क २००

प्रथम प्रश्न पत्र—पूर्णाङ्क १०० समय ३ घंटे

१—	पंच महायज्ञ विधि —ऋषि दयानन्द	≡)	२०
२—	आर्योद्देश्य रत्न माला —ऋषि दयानन्द	–)	१०
३—	बाल सत्यार्थप्रकाश —प्रो० विश्वनाथ	१)	५०
४—	ब्रह्मचर्यामृत —आचार्य भगवान्देव	साधारण =)॥बढ़िया ।=)	२०

द्वितीय प्रश्न पत्र—पूर्णाङ्क १०० समय ३ घंटे

१—	वैदिक धर्म प्रश्नोत्तरी —पं० धर्मदेव	॥=)	२०
२	स्वामी श्रद्धानन्द —राजपाल एण्ड संज	१)	२०
३—	धार्मिक शिक्षा भाग ७,८ –डा० सूर्य देव	१।)	४०
४—	व्यायाम का महत्त्व —आचार्य भगवान्देव	≡)	२०

३—सिद्धान्त भास्कर परीक्षा—पूर्णाङ्क ४००

प्रथम प्रश्न पत्र—पूर्णाङ्क १०० समय ३ घंटे

१—	सत्यार्थ प्रकाश पूर्वार्द्ध –१० समुल्लास तक	१॥)	५०
२—	आर्य समाज क्या है ? –नारायण स्वामी	॥।)	२०
३—	व्यायाम संजीवनी –भा. आ. कु. परिषद्	१)	३०

द्वितीय प्रश्न पत्र—पूर्णाङ्क १०० समय ३ घंटे

१—	स्वास्थ्य जीवन —आ. सा. मं.	१।)	३०
२.	विद्यार्थी जीवन रहस्य (नारायण स्वामी)	॥।)	३०
३.	महर्षि दयानन्द जीवन (प्रो० इन्द्र जी)	=)	४०

तृतीय प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००--समय ३ घंटे

१. वैदिक सिद्धान्त (लाला रामप्रसाद जी) १॥)
अथवा सिद्धान्त भास्कर (सार्व० सभा) १।] ३०
२. पाप व पुण्य [नारायण स्वामी] ॥) ५०
३. सुभाषित रत्नमाला (पं०कृष्णचन्द्र विद्या०) ।॥=)२०

चतुर्थ प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००--समय ३ घंटे

१. आर्यसमाज का इतिहास (पं० हरिश्चन्द्र) १।=) २०
१. महर्षिदयानन्द और महात्मा गान्धी (पं०धर्मदेव) २)३०
३. प्रगतिशील आर्य (श्री विश्वम्भर सहाय) २०
४. निबन्ध किसी (धार्मिक विषय पर) ३०

४--सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा--पूर्णाङ्क ४००

प्रथम प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००-समय ३ घंटे

१. सत्यार्थप्रकाश (सम्पूर्ण) (ऋषि दयानन्द) १॥) ४०
२. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका (ऋषि दयानन्द) २) ४०
३. संस्कार विधि " ।॥=) २०

द्वितीय प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००--समय ३ घंटे

१. आर्य पर्व पद्धति १॥) २०
२. दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह (पूर्वार्ध) २) ३०
३. भारतीय समाज शास्त्र (पं० धर्मदेव) २) ३०
४. कायाकल्प (पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार) २) २०

तृतीय प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००-समय ३ घंटे

१. उपनिषदें (६) (ईश, केन, कंठ, प्रश्न, मुण्डक, श्वेताश्वतर) ४॥) ६०
२. षड् दर्शन समन्वय (स्वामी ओमानन्द जी) २)
अथवा आस्तिकवाद (पं० गंगाप्रसाद उपा०) ३) ४०

चतुर्थ प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००-समय ३ घंटे

१. वैदिक संस्कृति (पं० गंगाप्रसाद उपा०) २॥) ३०
२. धर्म का आदि स्रोत (पं० गंगाप्रसाद एम० ए०)२ ३०
३. निबन्ध (किसी धार्मिक, सामाजिक वा राजनैतिक विषय पर) ४०

टि०:=निबन्ध के लिये सुधारक, सार्वदेशिक, आर्यकुमार आदि आर्य पत्रों से सहायता ले सकते हैं ।

५--सिद्धान्त वाचस्पति परीक्षा--पूर्णाङ्क ४००

प्रथम प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००-समय ३ घंटे

१. वैदिक सम्पत्ति (पं रघुनन्दन शर्मा) ७) ५०
२. वेद रहस्य (म० नारायण स्वामी) २) २५
३. हमारा अक्षय कोष (पं० मुनीश्वर देव)
अथवा, यजुर्वेद अध्याय ३१-३२ तथा अथर्ववेद-पृथ्वी सूक्त २५

(आर्य साहित्य मंडल द्वारा अर्थ सहित मुद्रित हैं)

द्वितीय प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००-समय ३ घंटे

१. सर्वदर्शन मीमांसा (पं० गोपाल जी) २) ४०)
२. न्याय दर्शन (किसी विद्वान् का भाष्य २) ४०)
३. मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प (स्वामीआत्मानंद२॥)२०

तृतीय प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००समय ३ घंटे

१. बौद्ध मत और वैदिक धर्म (पं० धर्मदेव) १॥) ३०
२. यवन मत समीक्षा (पं० लेखराम) १॥) ३०
३. सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास १३-१४ १॥) २०
४. कम्यूनिज्म [पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय] १॥) २०

चतुर्थ प्रश्न पत्र--पूर्णाङ्क १००

१. आधुनिक सामान्य ज्ञान (डा० गर्ग कृत) ३०
२. भारतीय संविधान तथा नागरिकता (श्रीअम्बादत्त)२०
३. भाषण-सम्भाषण (पं० देवनाथ उपाध्याय) २०
४. निबन्ध (धार्मिक व राजनैतिक विषय पर) ३०

उक्त परीक्षाओं की समस्त पुस्तकें हमारे यहां से उचित मूल्य पर प्राप्त कर सकते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार की धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक पुस्तकें हम से मंगा कर लाभ उठावें। हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगा सकते हैं।

वैदिक साहित्य सदन

आर्यसमाज मन्दिर सीताराम बाजार, देहली ६

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक

च्यवनप्राश

इसी ऋतु के ताजे आँवले से तैयार किया गया स्वादिष्ठ, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य ७) सेर, ५ सेर लेने पर ६) सेर

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इस के लगाने से आंखों के सब रोग-जैसे आंख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट) दूर का कम दीखना (लांग साइट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आंख के सब रोगों की राम बाण औषध है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ स्वच्छ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है। सेवन विधि-पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रातः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ॥) शीशी

सूखा रोगामृत

जिन गृहस्थों के बालक सूखा रोग (मसान) से सूख-सूख कर मरते हैं। अनेक प्रकार चिकित्सा करने पर भी कोई लाभ नहीं होता। ऐसे निराश रोगियों के लिये यह औषधि अचूक है। सहस्रों रोगियों पर अनुभूत है। इसके अतिरिक बालक के हरे पीले दस्त, अजीर्ण, अरुचि, दांत निकलते समय के रोग, वमन, निर्बलता और ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखे। मू० १ मास के सेवन तथा मालिश के लिये १२)

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है। इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस [सदा रहने वाले जुकाम और नजले] की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास [खांसी] नाशक, राजयक्ष्मा [तपेदिक] श्वास [दमा] के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढङ्ग की एक ही औषधि है।

छोटी शीशी २), बड़ी शीशी ५)

स्वप्नदोषामृत

इस भयङ्कर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग को दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। मूल्य ५) रुपये

सञ्जीवनी तैल

मूर्च्छित लक्ष्मण को चैतन्य देने वाली इतिहास-प्रसिद्ध बूटी से तैयार किया गया यह तैल घावों को भरने में जादू का काम करता है। भयङ्कर फोड़े फुन्सी, गले-सड़े जख्मों तथा आग से जले जख्मों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये विना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भर कर ठीक कर देता है। खून का बहना तो तुरन्त ही बन्द हो जाता है। चोट की भयङ्कर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है। मूल्य छोटी शीशी ॥=) बड़ी शीशी ५)

फाये में भरकर बार-बार चोट आदि पर लगायें।

१–रोहतक में मिलने का पता—
गुरुकुल फार्मेसी, रेलवे रोड (रोहतक)
२–देहली में मिलने का पता—
"नवजीवन सञ्चारक कम्पनी"
आर्य समाज मन्दिर, सीताराम बाज़ार–देहली
३–दादरी में मिलने का पता—
वैद्य सोमवीर आर्य औषधालय
रेलवे रोड—डालमिया दादरी (पेप्सू)

❋ ज्वरामृत ❋

यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की रामबाण औषध है। विगड़े हुये मलेरिया, विषम ज्वर को दूर करने में अद्वितीय औषध है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन सिर दर्द, स्वप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है। मलेरिया काल में सेवन की हुई मलेरिया को नहीं आने देती। धिक प्रशंसा व्यर्थ है, सेवन करें और लाभ उठावें।

मूल्य छोटी शीशी २) बड़ी शीशी ४)

सेवनविधि—

त्रा १ तोला से २ तोला तक समान जल मिलाकर ड़े हुये ज्वर में गरम जल मिलाकर तथा उतरे हुये में जा जल मिलाकर दिन में तीन बार लेवें। आवश्यकतानुसार अधिक बार भी ले सकते हैं। बालक वृद्ध स्त्री सबको लाभदायक है।

कुछ महानुभावों की सम्मतियां

आपकी ज्वरामृत का मैंने अपनी पुत्री पर प्रयोग किया। पहली ही खुराक में कहने लगी कि पिताजी आज ज्वर नहीं होगा ऐसा मालूम होता है। वास्तव में नहीं हुआ। भगवान् का धन्यवाद है।

धर्मसिंह शुभचिन्तक (झिंझोली)

ज्वरामृत नाम की औपधि इतनी अच्छी और अनुपम (लाजवाब) है कि किसी प्रकार का कोई कैसा ही ज्वर क्यों न हो, रुग्णावस्था में इसका सेवन करने से ज्वर ठहर नहीं सकता। इसका सबसे पहला कार्य यकृत (जिगर) को ठीक करना है दूसरा–अजीर्ण (कब्ज) को दूर करना, तीसरा--ज्वर के कीटाणुओं को मारना है। मेरा अपना अनुभव है। मैंने अपने ज्वर की अवस्था में इसका प्रयोग किया। मुझे जिगर तिल्ली और ज्वर था और पुराना ज्वर था। थोड़े दिनों के उपचार से उपर्युक्त सब रोग जाते रहे। अतः यह औषध अत्युत्तम है। मैंने बहुत से विद्यार्थियों को भी देकर इसका अनुभव किया है। जीर्ण व पुराणे ज्वर में कई दिन पीनी पड़ती है। नये---दो-चार दिन के ज्वर में दो चार बार के लेने से ज्वर बिल्कुल टूट जाता है और रोगी भला चंगा हो जाता है। जनता को इस से पूर्ण लाभ उठाना चाहिये।

ईशानन्द सरस्वती (गुरुकुल टटेसर)

पता

ग्राहक संख्या

सेवा में— श्री

मु०

पो०

जि०

आप द्वारा बनाई ज्वरामृत प्रत्येक प्रकार के ज्वर में रामबाण सिद्ध हुई है। पांच दस दिन के बुखार को तो केवल इसकी दो तीन खुराक ही ठीक कर देती हैं। पुराने बुखार के लिये एक मास पीने से बुखार बिल्कुल टूट जाता है। जिनको जिगर की खराबी से राजयक्ष्मा (तपेदिक) के कारण निरन्तर हड़जुड़ सी रहती है, उनके लिये यह अत्यंत लाभदायक सिद्ध हुई है।

बलवीरसिंह---मद्रास

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि ज्वरामृत ज्वर को दूर करने में अचूक औषधि है। इसका कई बार परीक्षण किया गया है। इससे पेट के विकार नष्ट होकर ज्वर की जड़ कट जाती है। चढ़े ज्वर में भी इस औषधि को दे सकतेहैं।

जगदेवसिंह शास्त्री संस्थापक 'सम्राट्' देहली

मैंने ज्वरामृत अपनी नानी जी, माता जी तथा अपने परिवार के बच्चों को और अन्य रोगियों को सेवन कराया। केवल एक बार पिलाने से ही ज्वर का नाश हो गया। जादू का प्रभाव रखती है। बहुत ही उत्तम औषधि है। सर्व प्रकार के ज्वरों को दूर भगाती है। जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है---

जगराम आर्य मातनहेल

प्रकाशक आचार्य भगवानदेव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

ओ३म्

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष १ अङ्क ४ — गुरुकुल झज्जर, मार्गशीर्ष सं० २०१० वि०, दिसम्बर १९५३, दयानन्दाब्द १२९ — वार्षिक मूल्य २) एक अङ्क का ≡)

साम संहिता स्वर संशोधक गुरुदत्त विद्यार्थी

ऋषि दयानन्द की अन्तिम समाधि अवस्था से प्रभावित महाविद्वान् पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी एम. ए. ने वैदिक सिद्धान्तों पर आक्षेप करने वाले पाश्चात्य विद्वानों को अकाट्य उत्तर दिये।

ऋषि प्रदर्शित वैदिक सिद्धान्तों को पाश्चात्य वैज्ञानिकों के सम्मुख प्रस्तुत किया। सामसंहिता के स्वराङ्कन का संशोधन किया।

* * *

"व्यायाम सन्देश" विशेषांक

'सुधारक' के प्रेमी पाठकों को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि जनवरी ५४ से अगला अङ्क "व्यायाम सन्देश" रूप में विशेषाङ्क होगा। जिसका मूल्य ॥≈) के लगभग होगा। जो सज्जन २) रु० वार्षिक चन्दा भेजकर ग्राहक बन जावेंगे अथवा बन चुके हैं उन्हें यह अङ्क भी बिना विशेष मूल्य साधारण अङ्क के रूप में मिलेगा। जो ग्राहक न होंगे उन्हें ॥≈) में मिलेगा। इस अङ्क में देशी-विदेशी सभी प्रकार के व्यायामों की रीति और लाभ-हानि का प्रकाश किया जावेगा। "व्यायाम" पर इतनी उत्तम सामग्री एक स्थान पर मिलना पुनः दुर्लभ होगा। ग्राहक बनने की शीघ्रता करें।

—व्यवस्थापक 'सुधारक'

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवानदेव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक

सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्त वाचस्पति

सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

कृपया चन्दा भेजें

❋ ब्रह्मचर्य-महत्त्वम् ❋

(श्री पं० मेधाव्रताचार्यकविरत्नप्रणीतम्)

ब्रह्मचर्यप्रतापेन ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः ।
संतर्पयति संसारं सर्ववर्णैरलंकृतम् ।।१६।।

अर्थः—जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य के प्रताप से वर्ण-चतुष्टय से विभूषित इस संसार को उत्तम रूप से तृप्त करता है ।

मन्त्रः—आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः । तं रात्रीस्तिस्र उदरे विभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः ॥ (अथर्व० ११।५।३)

आचार्योऽयं तमुपनयमानः करोत्यात्मगर्भे,
तिस्रो रात्रीर्व्रतिनमुदरे ब्रह्मवेत्ता विभर्ति ।
जीवब्रह्मप्रकृतिविपयध्वान्तहन्तारमेतं,
जातं द्रष्टुं विबुधमभिसंयन्ति देवा वरेण्यम् ।।१७।।

अर्थः—ब्रह्मवेत्ता आचार्य बालक का उपनयन करता हुआ उसे अपने विद्यारूप गर्भ में स्थित करता है एवं तीन रात्रि समाप्त होने तक भरण-पोषण करता रहता है । जीव, ब्रह्म, और प्रकृति विषय में अज्ञानरूप अन्धकार के नाशक, गुरुकुल से निकले हुए श्रेष्ठ विद्वान् स्नातक को देखने के लिये समस्त विद्वज्जन आते हैं ।

आचार्यदेव उपनीय सुबालशिष्यान्
हृद्यान् निधाय हृदये व्रतिनश्च तावत् ।
अध्यापयत्यखिलवेदगताः सुविद्या-
आदित्यसंज्ञकबुधान् कुरुते न यावत् ।।१८।।

अर्थः—हृदय के अनुकूल उत्तम बालकों का श्रेष्ठ आचार्य उपनयन करके अन्तेवासी ब्रह्मचारियों को हृदय में स्थापित कर चारों वेदों की उत्तम विद्यायें उस समय तक पढ़ाता है जब तक कि उसको आदित्य संज्ञक विद्वान् ब्रह्मचारी न बना देवे ।

आचार्य आर्षविधिना निगमागमज्ञो,
जातिं तु यां जनयति व्रतिनः सुतस्य ।
श्रीविद्यया सह कुले वसतो जनन्या,
सत्याऽजरा भवति सा ह्यमरा द्विजस्य ।। १६ ।।

अर्थ.—वेदशास्त्रज्ञाता आचार्य वैदिक विधि से विद्यारूप माता के साथ गुरुकुल में निवास करते हुए पुत्र तुल्य ब्रह्मचारी के लिए वर्णत्रय में से जिस वर्ण का जन्म देता है (जो वर्ण नियत करता है) वह जाति उस द्विज की अजर, अमर और यथार्थ होती है ।

वर्णीश्वरान्स्नातकतां प्रपन्नान् ,
आदित्यतेजोमयदिव्यदेहान् ।
जातान् द्विजान् देवगणा बुधेन्द्रा
निरीक्षितुं तानभियन्ति कान्तान् ।।२०।।

अर्थः—तब सूर्य समान तेजस्वी, दिव्यदेहधारी गुरुकुल से निकले हुए, लावण्यशाली, वेदनिष्णात, द्विज व्रतीन्द्र स्नातकों के निरीक्षणार्थ दिव्यगुण सम्पन्न विद्वद्गण उत्कण्ठा पूर्वक आते हैं ।

बालं सुजातं गृहिणां गृहं ते,
यथा गृहस्थाः प्रतिवेशिनोऽपि ।
द्रष्टुं समायान्ति तथैव देवाः
दिव्यं द्विजेन्द्रं व्रतिनं कवीन्द्राः ।।२१।।

अर्थः—जैसे गृही जनों के घर में उत्पन्न सुन्दर बालक को देखने के लिये पड़ौस वाले गृहस्थजन आते हैं, वैसे ही द्विजों में श्रेष्ठ दिव्य ब्रह्मचारी के दर्शनार्थ मेधासम्पन्न क्रान्तदर्शी विद्वान् लोग शुभागमन करते हैं ।

* * *

ग्राहकों से नम्र निवेदन

हम सुधारक को दो-दो बार संभाल कर डाकखाने में देते हैं । फिर भी जिन सज्जनों को कोई प्रति न मि । उन्हें पहिले अपने डाकखाने में पूछताछ करनी चाहिये । सुधारक अंग्रेजी महीने की प्रत्येक १० तारीख को डाकखाने में दे दिया जाता है । यदि किसी ग्राहक महाशय को एक सप्ताह १७-१८ तारीख तक सुधारक न मिले और डाकखाने से पूछ लिया गया हो तो उन्हें पत्र लिखने पर पुनः वह अङ्क भेज दिया जायेगा । इसके पश्चात् हम पर उत्तरदायित्व न होगा ।

—व्यवस्थापक

* * *

✻ 'सुधारक' के ग्राहक बनाकर ✻
✻ सुधार कार्य में सहयोग दीजिये ✻

सम्पादकीय

आर्य समाज और वेद प्रचार

महर्षि दयानन्द जी महाराज ने वेद प्रचार के लिये ही परोपकारिणी सभा तथा आर्य समाज की स्थापना की थी। किंतु आज सभी एक स्वर से चिल्ला कर कह रहे हैं कि आर्य समाज का प्रचार कार्य शिथिल हो गया है। हमारे प्रचार में शिथिलता क्यों आई, इस विषय में सभी अपनी २ दृष्टि से विचार करते हैं। मेरी दृष्टि में तो मुख्य कारण एक ही है कि आर्य समाज में सच्चे प्रचारकों का दिन प्रति दिन अभाव होता जा रहा है। आर्य समाज के प्रारम्भिक स्वर्णमय युग में कितनी सच्ची लग्न के प्रचारक थे, यह उस समय के आर्य समाचारपत्रों के पढ़ने तथा सुनने से पता चलता है। उस समय के प्रचारकों ने अपना सर्वस्व ही आर्य समाज के लिये न्योछावर कर रक्खा था। धर्मवीर पं० लेखराम जी जैसे उपदेशक गृहस्थ होते हुए भी सच्चे सन्यासियों के समान कार्य करते थे। जब मैं कार्यवश आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिवेशन पर जालन्धर गया, वहां से प्रातः स्मरणीय स्वामी विरजानन्द जी महाराज की जन्म-भूमि देखने का विचार आया। मैं इसी विचार को लेकर कर्त्तारपुर पहुँच गया। वहां अनेक वृद्ध आर्य पुरुषों के दर्शन हुए जिनसे आर्य समाज के स्वर्णमय प्रचार युग को एक दो घटना सुनने को मिलीं। कर्त्तारपुर में आर्य समाज की स्थापना किस प्रकार हुई इस विषय में श्री माननीय पंडित चिरञ्जीलाल प्रेम ने एक घटना सुनाई, वह इस प्रकार है—

एक बार एक स्कूल के अध्यापक ने आर्य समाज का प्रचार करने के लिये श्री पंडित लेखराम जी को कर्त्तारपुर बुलाया। उन्होंने अपने व्याख्यान में कुछ शब्द इस प्रकार के कहे कि जो पुरुषोत्तम राम के भक्त होते हैं वे राम की स्तुति और रावण हो निन्दा करते हैं। यदि कोई रावण का भक्त हो तो वह इसी प्रकार रावण की स्तुति और राम की निन्दा करेगा। ये शब्द जब श्रोताओं ने सुने, तब उन में से कितने ही मूर्ख पंडित जी के भाव को न समझ कर, यह कहने लगे कि यह तो मर्यादा-पुरुषोत्तम राम की भी निन्दा करते हैं और यह कह कर पण्डित जी पर ईंट, पत्थर और मिट्टी के ढेलों की वर्षा आरम्भ कर दी। पण्डित जी निर्भयतापूर्वक पूर्ववत् व्याख्यान देते रहे। व्याख्यान की समाप्ति पर गाड़ी पकड़ने के लिये जब स्टेशन पर जाने लगे तब जिन अध्यापक महोदय ने उनको प्रचारार्थ बुलाया था वे कहने लगे, पंडित जी महाराज! वस्त्रों पर जो मिट्टी वा धूल गिर गई हो उसे झाड़ लें। पण्डित जी ने हँस कर उत्तर दिया 'अभी तो मार्ग में और मिट्टी के ढ़ेले पड़ने हैं स्टेशन पर जाकर इकट्ठी ही झाड़ लेंगे'। पण्डित जी महाराज ईंट पत्थरों की वर्षा से कहां डरने वा घबराने वाले थे। उन्होंने उसी दिन निश्चय कर लिया कि कर्त्तारपुर में आर्य समाज की स्थापना अवश्यमेव करनी है।' पंडित जी अपनी धुन के धनी थे। जो निश्चय करते थे उसे पूर्ण करके छोड़ते थे। वे तो सिर को हथेली पर लिये फिरते थे, ईंट पत्थर का भय उनके लिये क्या अर्थ रखता था? एक दो बार ही नहीं, सात बार प्रचार करने के लिये पण्डित लेखराम जी कर्त्तारपुर गए और आर्य समाज की स्थापना कर के ही छोड़ी।

इसी प्रकार की एक घटना पं० लेखराम जी के विषय में मेरे पिता जी भी सुनाया करते थे। उस घटना का कुछ वृत्त उनके जीवन में भी आता है। एक बार मेरठ प्रांत के एक ग्राम के बड़े ज़मीदार जो मुसलमानों की संगति में उठते-बैठते थे, उन्होंने अख़बारों में घोषणा कर दी कि "अमुक तिथि तक मेरी शंकाओं का समाधान किसी हिन्दू पंडित ने नहीं किया तो मैं हिन्दू धर्म छोड़कर मुसलमान हो जाऊँगा।" इस की सूचना किसी ने पत्र द्वारा पंडित लेखराम जी को भेज दी। जिस समय यह पत्र पहुंचा, उस समय पंडित जी भोजन कर रहे थे, उसी

समय पत्र खोलकर पढ़ा और तांगा मंगवा कर चलने को तैयार हो गये। इनकी वृद्धा माता और पत्नी ने यह कह कर रोका कि "आपको हमारा तो ध्यान है ही नहीं, किन्तु आपका इकलौता पुत्र भयकर रोग में ग्रस्त है। सम्भव है बचे या न बचे ? इस की चिकित्सा का प्रबन्ध तो आपको करना चाहिये।" माता जी के आदेश और पत्नी की ओर विशेष ध्यान न देकर 'मुझे आवश्यक कार्यवश जाना है' यह कह कर चल दिये। मार्ग में तार मिला कि पुत्र की मृत्यु हो गई। तार पढ़ कर कहने लगे "क्या हुआ एक पुत्र मर गया, मुझे जाति के हजारों पुत्र बचाने हैं।" जिस समय पंडित जी निश्चित स्थान पर पहुँचे, उस समय वहां पर सैकड़ों मौलवी पहुंचे हुए थे और वह जमींदार अपने सैंकड़ों साथियों के साथ मुसलमान होने के लिये तैयार था।

पण्डित जी की वेष-भूषा भी मौलवियों के समान ही थी। थोड़ा सा ही भेद था। गले में कुरान लटकी हुई, दाढ़ी बहुत बहुत छोटी और मूछें बहुत लम्बी-लम्बी थीं। एक मौलवी ने पण्डित जी को भी मौलवी समझ कर पूछा 'क्यों मौलवी साहब ! आप की मूछें तो लम्बी-लम्बी हैं। आपकी डाढ़ी को क्या हुआ ?' पण्डित जी तत्काल उत्तर देने वाले (हाजिर जवाब) तो थे ही। पं० जी ने हंस कर उत्तर दिया कि शेरों के तो मूछें ही हुआ करती हैं, डाढ़ी बकरों के होती है' इसके पश्चात् पण्डित जी ने एक दो घंटा डट कर सब मौलवियों से शास्त्रार्थ किया। उन बेचारों में कहां शक्ति थी कि उनकी अकाट्य युक्तियों के आगे टिक सकें। कुछ समय के पश्चात् सब भाग खड़े हुए। पण्डित जी ने ठहर कर प्रचार किया और सैंकड़ों किसानों को इस्लाम के गड्ढे में पड़ने से बचा लिया और उन्हें यज्ञोपवीत देकर सच्चे आर्यों में वेदामृत का पान कराया।

इसी प्रकार कितनी ही घटनायें पं० लेखराम जी तथा अन्य प्रचारकों और उपदेशकों के विषय में पढ़ने और सुनने को मिलती हैं। सर्व प्रथम प्रचार की सच्ची लग्न वा धुन होनी चाहिये। "उसे रात-दिन, खाते। पीते, सोते-जागते, चलते-फिरते प्रतिक्षण अपने सिद्धान्तों के प्रचार के लिये पागल के समान लगे रहना चाहिये।" यही सच्चे प्रचारक का एक लक्ष्य है।

आज दुःख से लिखना पड़ता है कि जिस समय घातक ने पण्डित जी के पेट में छुरा मारा और वीरगति को प्राप्त होने से पूर्व पण्डित जी से आर्यसज्जनों ने यह पूछा कि आप की अन्तिम इच्छा क्या है ? तब उन्होंने यही उत्तर दिया कि "आर्य समाज से लेख का कार्य बन्द नहीं होना चाहिये।" किन्तु आज इस विषय में हम क्या कर रहे हैं, यह सभी जानते हैं। हमने पण्डित जी की 'स्मारक निधि' खोली, आज सत्तर हजार ७००००) रुपया उसमें पड़ा है उससे थोड़ा बहुत कार्य हुआ है। वह भी न होने के बराबर है। क्या रुपया इकट्ठा करना ही एक सच्चे प्रचारक का स्मारक हो सकता है ? उनके स्मारक रूप में 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक वा मासिक पत्र निकलता था वह भी अनेक वर्षों से बन्द पड़ा है। सब प्रकार से ही हमारे प्रचार कार्यों में शिथिलता है। इसका मुख्य कारण यही है कि हम आर्यों के अन्दर सच्ची प्रचार की लग्न नहीं है। प्रत्येक आर्यसमाजी यह समझ बैठा है कि 'प्रचार करना तो सभा के कुछ उपदेशकों का ही कार्य है।' आर्यसमाज के सभासद् प्रचार के विषय में अपना उत्तरदायित्व कुछ भी नहीं समझते। जिस प्रकार हम अपने घर गृहस्थ का कार्य लग्न से करते हैं इसी प्रकार प्रचार कार्य को अपने जीवन का अंग बना लें तो आर्यसमाज के प्रचार कार्य में आई हुई शिथिलता को दूर करने में हमें कोई कठिनाई वा समय न लगेगा। परमात्मा सब आर्यों में प्रचार की सच्ची लग्न उत्पन्न करे।

आर्य कुमार सभा लेखमाला—४

हम स्वस्थ कैसे हों ? (२)

व्यायाम

(ले० श्री जगन्नाथ, बी० ए०, एल० एल० बी०, जे० डी०, प्रभाकर सिद्धान्त शास्त्री)

पूर्ववत् आदर्श नगर में बच्चों की चहल-पहल थी। सब बच्चे स्वास्थ्य सम्बन्धी पिछली बार के व्याख्यान के शेष भाग को सुनने को उत्सुक थे। जैसे ही सभा का यज्ञ, भजन आदि का सामान्य कार्य-क्रम समाप्त हुआ, गुरुजी ने भाषण देना आरम्भ किया—

विश्वमित्र—प्रिय बालको ! गत बैठक में मैंने स्वास्थ्य सम्बन्धी चार बातें बताई थीं। पहली यह थी कि सबको प्रातःकाल उठना चाहिये। शेष तीन बातों में मैंने आपको चक्षुः-स्नान, उषः-पान. और शौच आदि की ठीक विधि बताते हुए उनके पालन करने के लाभ बताये थे। आज मैं आपको व्यायाम का महत्व, व्यायाम का समय, विधि आदि बताऊंगा।

व्यायाम क्या है ? इसको प्रायः सभी समझते हैं। यह दूसरी बात है कि व्यायाम के नाम पर कोई आसन, कोई भाग-दौड़, कोई दण्ड-बैठक, कोई कूद-फांद करता है। कोई क्रिकेट, कोई बाली बाल, कोई कबड्डी, कोई फुटबाल खेलता है। सभी प्रकार के व्यायामों में शरीर अवश्य हिलता जुलता है। स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से शरीर के अययवों को हिलाने-जुलाने का नाम ही व्यायाम है। मेरे इन शब्दों पर तनिक ध्यान दीजिये। शरीर को हिलाने मात्र का नाम ही व्यायाम नहीं है। वह स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से हो। यूं तो एक लुहार अथवा सुनार प्रातः से सायं तक शरीर को हिलाता है, किन्तु उसे हम व्यायाम नहीं कह सकते। व्यायाम करते समय यह ध्यान अवश्य रहना चाहिये कि इससे मुझे स्वास्थ्य, बल एवं उत्साह मिल रहा है। याद रखिये मन लगा कर किया गया व्यायाम ही असली व्यायाम है। अब प्रश्न उठता है कि व्यायाम में मन कैसे लगे ?

व्यायाम में मन कैसे लगे ?

इसके लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि व्यायाम के महत्व को आप भली भांति समझ लें, क्योंकि बिना एक कार्य के महत्व को समझे उसके प्रति उतना प्रेम एवं उत्साह नहीं होता है। और बिना इसके उसके करने में मन नहीं लगता है। जो कुछ हम नित्य प्रति खाते-पीते हैं उसका सब से पूर्व 'रस' बनता है। रस का पक कर रक्त बनता है। इसी प्रकार क्रमशः एक के बाद एक करके मांस, मांस से चर्बी, चर्बी से हड्डी, हड्डी से मज्जा और मज्जा से वीर्य बनता है। विद्वानों ने बताया है कि लगभग एक मन भोजन से लगभग एक मास में जाकर एक तोला वीर्य बनता है। जिस प्रकार तिलों में तेल, गन्ने में रस और गुलाब के फूलों में इतर का महत्व होता है। वही महत्व वीर्य का शरीर में है। यदि यह हम में न हो तो हम बिल्कुल मुर्दे के समान हो जायें। यदि हमारी पाचन क्रिया ठीक नहीं होगी तो ये वीर्य आदि धातुयें भली प्रकार नहीं बन पायेंगी। हमारी पाचन क्रिया को ठीक कर हमारे द्वारा खाये हुए अन्न में से अधिकतम मात्रा में वीर्य उत्पन्न करने में व्यायाम प्रमुख साधन है। याद रखिये, बिना व्यायाम किये स्वास्थ्य प्राप्ति की आशा रखना बालू में से तेल निकालने के समान है। जो आदमी (१) नित्य प्रति (२) नियम पूर्वक (३) मन लगाकर (४) खुली हवा में (५) उचित ढंग से (६) उचित मात्रा में व्यायाम करता है, रोग उससे उसी प्रकार भाग जाते हैं जैसे बिल्ली को देखकर चूहा।

व्यायाम करने वाले का शरीर सुदृढ़, सुन्दर, फुर्तीला एवं प्रभावशाली हो जाता है। आप इस बात को निश्चित मानें कि संसार में जितने भी योद्धा एवं वीर पुरुष हुए हैं, सब व्यायाम प्रेमी रहे हैं। अतः व्यायाम को बेगार समझ कर अथवा नाम मात्र के लिये न करें, अपितु इसे श्रद्धापूर्वक यह समझते हुए करें कि इससे मुझे लाभ हो रहा है।

व्यायाम में मन लगाने का एक उपाय यह भी है कि इसे आप नित्य एक निश्चित समय पर करें। एक निश्चित समय रखने से उस समय स्वाभावतः आपका शरीर और मन व्यायाम के लिये तैयार होगा और इस प्रकार आप अधिक मन लगा कर व्यायाम कर सकेंगे। व्यायाम करते समय समस्त चिन्ताओं को भूल जाइये। यदि आपके मन में पहले ही चिन्ताओं ने डेरा जमाया हुआ है तो उसमें व्यायाम सम्बन्धी शुभ विचार प्रवेश नहीं पा सकते। अतः मनोबल से दृढ़तापूर्वक गंदे, हीन, चिन्ताजनक विचारों को अपने मन से धक्का देकर बाहर निकाल दीजिये।

यह खूब समझ लीजिये कि व्यायाम में समय लगाना समय का खोना नहीं है। आपने देखा होगा कि एक होशियार एवं समझदार बढ़ई अपने औजारों को घंटा, आध घंटा नित्य पैनाता है और फिर उनसे दिन भर काम लेता है, और इस प्रकार उन्हीं औजारों से वर्षों काम चलाता है। क्या आप उस बढ़ई को मूर्ख नहीं कहेंगे जो अपने औजारों को कभी नहीं तेज करता और कुछ ही दिनों में उनसे हाथ धो बैठता है? ठीक इसी प्रकार आप अपने शरीर से तमाम दिन बिना थके तभी काम ले सकते हैं जबकि आपने व्यायाम द्वारा उसे तेज किया हुआ है।

यह सच मानिये, यदि आपने उक्त बातों को भली भांति हृदयङ्गम कर लिया होगा तो व्यायाम करते समय आपका मन शरीर के साथ पूरा-पूरा साथ देगा। इस मनोबल के अभाव में ही तो एक लुहार—जो तमाम दिन हथौड़ा चलाता है—इतना बलवान् नहीं हो पाता जितना कि मननपूर्वक घंटा आध घंटा नित्य प्रति व्यायाम करने वाला आदमी।

आवश्यक बातें

उपरोक्त बातों के अतिरिक्त व्यायाम करते समय निम्न बातों का अवश्य ध्यान रखें—

(१) व्यायाम सदा खुले स्थान पर, जहां शुद्ध वायु हो, करें।

(२) सांस सदैव नाक से लें।

(३) अपनी शक्ति से अधिक व्यायाम न करें। होडपूर्वक अधिक व्यायाम करना सदैव हानिकारक है।

(४) व्यायाम करते समय शरीर पर कम से कम और हल्के वस्त्र हों।

(५) बुखार आदि रोगों की अवस्था में व्यायाम न करें।

(६) व्यायाम के तुरन्त पश्चात् नहाना या जल पीना हानिकारक है।

(७) व्यायामी व्यक्ति को शुद्ध सात्विक एवं पौष्टिक भोजन करना चाहिये।

(८) आसनों के व्यायाम सर्वाधिक लाभदायक हैं।

(९) अपना व्यायाम इस प्रकार चुनें कि इसमें (क) स्वास्थ्य (ख) स्फूर्ति (ग) शारीरिक बल एवं (घ) मनोरंजन आदि बढ़े। यूं तो प्रत्येक प्रकार के व्यायाम से चारों प्रकार के न्यून वा अधिक लाभ हो ही जाते हैं तो भी (क) स्वास्थ्य के लिये आसन (ख) स्फूर्ति के लिये उछल, कूद, भाग, दौड़, (ग) शारीरिक बल के लिये दण्ड-बैठक, मुगदर हिलाना और (घ) मनोरंजन के लिये सामूहिक कबड्डी आदि खेल हैं। अतः चारों प्रकार के व्यायामों का समावेश व्यायाम के कार्य-क्रम में होना चाहिये।

इतना कहने के पश्चात् गुरुजी ने घड़ी देखी और कहा कि आज का समय समाप्त हो चला है। शान्तिपाठ के पश्चात् आज की सभा समाप्त होगी। अगले बार मैं स्नान एवं संध्या के विषय में कुछ बताऊंगा।

शान्तिपाठ के पश्चात् आर्य कुमार सभा की बैठक समाप्त हुई और सब कुमार अपने-अपने मनों में व्यायाम करने की प्रतिज्ञा करके अपने अपने घर लौटे।

सदाचार के सुनहरी नियम

(ले० श्री स्वामी शान्तानन्द जी महाराज, आर्य समाज व्यावर)

(धर्म)

१—जिन शुभ कर्मों से इस लोक और परलोक में सुख मिले वही धर्म है।

२—सदाचार के साथ जिन नियमों के पालन से मनुष्य बलवान्, धनवान् और ज्ञानवान् बनता है वे ही धर्म और सुख के साधन हैं।

३—बल का साधन ब्रह्मचर्य, धन का साधन पुरुषार्थ, विद्या और ज्ञान का साधन ध्यान, और सदाचार का साधन सत्सङ्ग है।

४ ब्रह्मचर्य, पुरुषार्थ, ध्यान, और सत्सङ्ग से बल, धन, विद्या-ज्ञान और सदाचार की प्राप्ति का परम साधन 'संध्योपासना' है।

(अर्थ)

१—धर्मपूर्वक पुरुषार्थ से धन का कमाना अर्थ कहलाता है।

२—अधर्म से धन कमाना अनर्थ कहलाता है।

३—सत्य और धर्म से कमाया हुआ धन ही सुख का कारण होता है।

४—अधर्म और दुराचार से कमाया हुआ धन विषैली मिठाई की भांति खाने में मधुर परन्तु परिणाम में घातक होता है।

५—जो अर्थ से कमाता है वह अनर्थ ही में खोता है।

६—जो मार कर कमाता है वह मर कर ही गंवाता है।

७—जो जैसा बोता है वह वैसा ही काटता है।

(काम)

१—सदाचार से कमाये हुए धन का सद्व्यवहार 'काम' कहलाता है।

२—सांसारिक कर्म व्यापार और पारमार्थिक आचरण में यह सुनहरी नियम कभी न भूलो।

२—दूसरों से तुम वैसा ही व्यवहार करो जैसा तुम अपने लिये चाहते हो।

'आत्मवत्ससर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः'

४—भलाई कर चलो जग में।
तुम्हारा भी भला होगा॥
किया जो काम नेकी का।
वह इक दिन सामने होगा॥

५—समझकर जान अपनी सी।
दुखाओ मत किसी का दिल।
जलायेगा तुम्हें हरदम।
जो खुद तुम से जला होगा॥

(मोक्ष)

१—सम्पूर्ण दुःखों से छुटकारा पा जाना ही मोक्ष कहलाता है।

२—मोक्ष प्राप्ति का परम साधन निष्काम कर्म कहलाता है।

३—स्वार्थ रहित कर्म निष्काम कर्म कहलाता

४—काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहङ्कार या राग-द्वेष से उत्पन्न सम्बन्धों से मन, वचन, और कर्म से पूर्ण वैराग्य जीवन-मुक्ति का चिन्ह है।

५—जीवन-मुक्ति व आनन्द पद प्राप्ति का परम साधन केवल मात्र यही है कि फल की स्वार्थ भावना छोड़कर शुभ कर्म करो।

६—"जैसे मनुष्य जल में गोता मारकर ऊपर आता है और फिर गोता लगा जाता है, इसी प्रकार अपने आत्मा को परमेश्वर में बारम्बार मग्न करना चाहिये।"

(महर्षि दयानन्द)

७—"मैंने परीक्षा करके निश्चय किया है कि जो धर्मयुक्त व्यवहार में ठीक-ठीक वर्त्तता है उसको सर्वत्र सुख लाभ, और जो विपरीत वर्त्तता है वह सदा दुःखी होकर अपनी हानि कर लेता है।"

महर्षि दयानन्द)

क्या अयुर्वेद शास्त्र में--

सर्पविष की चिकित्सा (औषध) नहीं है ?

[लेखक आचार्य भगवान्देव जी गुरुकुल झज्जर]

[२] गताङ्क से आगे

३—एक घटना कुछ समय पूर्व की लिखता हूं, जब पाकिस्तान नहीं बना था। एक इसी विषय की सच्ची घटना गुरुघण्टाल समाचार पत्र में निकली थी। जमालदीन नाम का एक व्यक्ति गुजरांवाले का निवासी लाहौर में मरोजदीन जेलदार के ताङ्गा हाँकने की नौकरी करता था। वह एक दिन लाहौर से तीन मील के लगभग खेत में राजगढ़ में चारा काटने गया। उसे एक सर्पिणी (साँपन) ने जिसके शरीर पर नीली, पीली, हरी, सुनहैरी और श्वेत (सफैद) धारियाँ थीं। जिस की लम्बाई एक हाथ के लगभग थी। पैर पर गट्टे (टकने) के निकट काट खाया। उसने उसे बड़ी कठिनाई से उतार कर फैंका। वह भाग गई और छिप गई। वह घबरा गया, विष के कारण उसके पेट तथा हृदय में भयंकर पीड़ा होने लगी। उसके पक्वाशय तथा कलेजे को विष काट काट कर खाने लगा, वह खेतों में पागलों के समान दौड़ने लगा, फिर चेतनारहित (बेहोश) होकर गिर पड़ा, कई घण्टे इसी अवस्था में पड़ा रहा। मध्य में उसे कभी होश आजाता था उस समय वह पास पड़े हुए जल को उठाकर मुख और शिर पर डाल लेता था। सायंकाल पता चलने पर जेलदार के अन्य नौकर उसे वहाँ से उठाकर लाहौर ले गये। वहाँ नूरउदीन हकीम से चिकित्सा कराई। एक मास के पीछे वह चलने फिरने तथा कार्य करने लगा। हकीम जी ने उसे बता दिया कि वह सर्पिणी कामातुर थी, उसकी गन्ध तुम्हारे अन्दर रम गई है अतः छः मास वा वर्ष के पीछे सर्प तुम्हें अवश्य डसा करेगा। उसने घबराकर इससे बचने का उपाय पूछा। हकीम जी ने यही उत्तर दिया—मृत्यु को छोड़ कर कोई चिकित्सा नहीं। इस जीवन में सांप तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ेंगे।

उसकी उस समय आयु २५ वर्ष की थी। वह निराश वा हताश हो गया, किन्तु करता क्या? गृहस्थ निर्धन था, निर्वाह करना था, अपने कार्य में लग गया। वह स्वस्थ होकर ११ मास भली भान्ति कार्य करता रहा। १२ वें मास के आरम्भ में अपने शरीर में उसे खरबूजे के फूलों के समान गन्ध आने लगी। सुगन्ध दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी, १२ वें मास के १९ वें दिन यह गन्ध अत्यन्त तीव्र हो गई, उसका शरीर टूटने लगा, उसकी यह इच्छा प्रबल होती गई कि सर्प आये और उसे काटे। वह सर्प की प्रतीक्षा करने लगा, एक प्रकार का मद (नशा) सा चढ़ गया। थोड़ी देर में सर्प आता हुआ दिखाई दिया, उसने अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिए अपना अंग आगे कर दिया! सांप ने काट खाया, सांप और वह व्यक्ति चेतना रहित (बेहोश) हो गये। होश आने पर सर्प चला गया और वह दश दिन बिना कोई औषध उपचार किये घर पर पड़ा रहा। निर्वलता दूर होने तथा शक्ति आने पर उस ने यह घटना पीरबख्श मदारी को वजारबाग में सुनाई तथा इस कष्ट से बचने का उपाय पूछा। उसने बताया कि जब साँप काटने आये तो साहस करके उसकी ग्रीवा मुख में लेकर चबाले। इस सर्पिणी की गन्ध तुम्हारे अन्दर से दूर हो जायेगी और तुम इस कष्ट से बच जावोगे। लाहौर आने पर कार्य में लग गया। छः मास पश्चात् वही गन्ध वेग से आने लगी, वह सांप के आने का समय समझ बैठ गया। सर्प शीघ्र ही आ गया, उसने बड़े वेग से काटा, उसने पीर की आज्ञानुसार पीड़ा का ध्यान न करके साहस से सर्प के शिर को वस्त्र में लपेट मुख में रख दान्तों से चबा गया, उसका रस रक्त और विष भी कण्ठ के नीचे उतार गया। किन्तु इसका उलटा ही परिणाम हुआ, उसे दूसरे दिन प्रातः ही तीव्र गन्ध आने लगी, कुछ समय पीछे सांप ने उसे आकर काट लिया। इसके पश्चात् प्रतिदिन उसे आकर काटने लगा। पहले तो वह अपना एक पाँव

सर्प के आगे रख दिया करता था, किन्तु जब उसे चलने-फिरने में कष्ट होने लगा तब उसने अपनी भुजावों वा हाथों पर कटवाना आरम्भ कर दिया। वह उस पीर के पास गया और कहा कि मुझे पहले तो एक वर्ष तथा छः मास में सर्प काटता था किन्तु अब तो प्रतिदिन काटने लगा "तेरा सत्यानाश हो मुझे और अधिक कष्ट में फंसा दिया, अच्छी औषध बताई।"

पीर ने कहा– "मेरी सुनी हुई औषध थी, अनुभूत नहीं, मेरा इसमें क्या दोष ?" वह रोगी हताश होकर योगियों तथा संन्यासियों की खोज में फिरने लगा। हरद्वार कुम्भ के मेले पर पर्वतों पर घूमा; किसी ने कुछ बताया, किसी ने कुछ। जैसे—"मोर की पंख हुक्के में तम्बाकू के स्थान पर धर कर पीवो" उसने ऐसा ही किया। किसी ने रीठे रगड़कर पीने बताये, वे भी पीये। किसी ने नेवले जो सांप के शत्रु हैं उनको पकाकर उनका रस पीना बताया।" जिसने भी जो बताया उसने वह ही किया, किन्तु "रोग बढ़ता गया, ज्यां-ज्यों दवा की" वाली लोकोक्ति सिद्ध होती चली गई। प्रथम बार सांप काटने के छः वर्ष पीछे उसके घर लड़का उत्पन्न हुआ था। उसकी स्त्री जब उसे सर्प काटकर जाता था तो वह सर्प को मार डालती थी। इस प्रकार उसकी स्त्री तथा स्वयं उसने दो सहस्र (हजार) सांप मार डाले।

बीस-पच्चीस उसने कच्चे खाये, तीस-चालीस पकाकर खाये। लड़का जब चार वर्ष का हो गया तो एक दिन दोपहर के समय एक सर्प ने उसकी स्त्री के दांये हाथ की अंगुली पर काट खाया। इसके पश्चात् उसकी स्त्री को आठवें दिन सांप आकर काटने लगा, उसे प्रतिदिन नियम से काटता ही था। जिस दिन उसकी स्त्री को काटता उस दिन दो सर्प आते थे, एक उसे तथा दूसरा उसकी स्त्री को काटता था। उसकी स्त्री के शरीर से भी आठवें दिन उसी प्रकार गन्ध आती थी। साँप के काटने से कामी, विषयी के समान उन्हें विषयानन्द आता था। अतः वे "कामातुराणां भयं न लज्जा" के अनुसार कामासक्त हो सर्प से कटवाते थे। इसी प्रकार एक दिन अपने पुत्र को गोद में लिए बैठा था, बालक की टांग उसकी टांग पर थी। सर्प उसे काटने आया, सर्प का दान्त उसे काटते २ बालक की टांग को छू गया। इसके तीन मास पश्चात् सर्प ने आकर उसके लड़के को डस लिया। उसे प्रतिदिन, स्त्री को आठवें दिन तथा बालक को तीसरे मास काटने लगा। उनके घर में एक लड़की उसके भाई की रहती थी वह शेष थी। एक दिन उसकी पत्नी को सर्प काटने के लिए चार पाई पर आ गया। लड़की डरकर नीचे कूद गई, उसका पग सर्प पर पड़ गया, वह चलता-चलता उसको काट गया।

एक दिन उन्हें किसी ने यह बताया कि सांपों को उबालकर इनका रस पीया जाये तो इस विपदा से पिण्ड छुट सकता है। उसने पन्द्रह दिन तक सांप एक घड़े में इकट्ठे किये! इसके पश्चात् शिर और पूंछें काटकर पृथक् कर दिये तथा मध्यम के शेष भागों को काट-काट कर गंडीरियों के समान छोटे-छोटे भाग कर डाले। रात को पका कर अंधेरे में मांस के समान खा गया। इसका परिणाम यह हुआ कि अगले दिन ही चार सांप आने लग गये और चारों को पृथक २ काट कर चले जाते। प्रतिदिन चार सांप आते और काट कर चले जाते। हमारी दुर्गति हो गई। सारे दिन चारपाइयों पर ही गुजरने लगे, उचित्त भोजन न मिलने तथा प्रतिदिन सांपों के काटने से अत्यन्त निर्बल तथा दीन हीन अवस्था हो गई।

वे किसी भी स्थान पर होते, घर के अन्दर बाहर वा छत पर सांप सब स्थानों पर पहुँच जाते थे। एक दिन उसे जब गन्ध आने लगी वह समझ गया कि सर्प के आने का समय है, वह यह समझ कर छत से लटक गय, यह देखने के लिए कि सर्प आज कहां से आयेगा। दश मिनट के पीछे सर्प ने छत से निकल कर काट खाया। वह एक दिन प्रातः से सायं तक तांगे पर ही चढ़ा रहा, भूमि पर पग ही नहीं रखा, तांगे पर ही न जाने कहां से सांप आ गया और उसे काट खाया। इस प्रकार नवम्बर मास १९२९ सन् में सांपों के चिकित्सक (मीरासी) नंगलदत्तासिंह मे आकर ठहरे। उसने अपना सारा दुःख उनके चरणों में गिर कर रोया और दया की भीख मांगी। उनके बाप और बाबा सेवादास और बाबा मरनदास थे, उनको दुःख भरी

कथा सुनकर दया आ गई। उन्होंने तीस सेर बकरियों का दूध लाने के लिए कहा। वह जैसे तैसे कर बकरियों का दूध ले गया। उन्होंने दो-तीन टोकरियां गोबर की मंगाई, गोबर को पानी में घोल दिया। कुछ समय में गोबर नीचे बैठ गया, जल ऊपर आ गया, जल को निथार कर नीचे डाल दिया। दूध में शुद्ध गोबर डालकर घोल दिया। एक हरे रंग की औषध पताशों में डालकर सबको खिलाई, पश्चात् एक बड़ा गड्ढा खुदवाकर उन चारों को उसमें बिठला दिया। गड्ढे से बाहर उनका केवल शिर ही था। छः बजे सायं उन्हें गढे में बिठलाया था। रात भर उस गड्ढे में ही रखा, उन चारों के शिर पर गोबर मिला हुवा दूध रात भर डालते रहे। ऐसा करने से उनके मुख और नाक से हरे रंग का विष निकलने लगा। जो गोबर मिला दूध उनके शिर पर डाला गया। वह उनके शरीर की उष्णता (गर्मी) से शुष्क होता (सूखता) गया। फिर प्रातः रजाई ओढाकर आग के आगे बिठला दिये, दो दिन उन्हें वहाँ रखकर औषध खिलाई। जिस दिन उन्हें गड्ढे में बिठाया वह सांपों का अन्तिम दिन था। उसके पश्चात काटना तो क्या सांपों के दर्शन भी नहीं हुए। इस प्रकार २५ वर्ष की भयंकर विपदा से उन्हें छुटकारा मिला।

पाठक गण! इस घटना से समझ गये होंगे कि आयुर्वेद शास्त्र में कैसी-कैसी विचित्र सर्प-औषध उपलब्ध हैं। यह घटना पं० ठाकुरदत्त शर्मा अमृत धारा ने अपनी पुस्तक में भी लिखी है।

भारतवर्ष में एक सपेरा (सपेला) नाम की जाति है जो लाखों नहीं तो सहस्रों की संख्या में अवश्य पाई जाती है, जिसका कार्य सांपों को पकड़ना तथा बीन बजाकर सांपों का नांच दिखाकर अपना निर्वाह करना है। वे अनेक प्रकार के सर्पों को पकड़ कर अपने साथ रखते हैं, ग्रामों और नगरों में जाकर लोगों को दिखा दिखाकर अन्न पैसा आदि मांगते तथा सर्पविष की चिकित्सा में वे सिद्धहस्त होते हैं। अनेक प्रकार के भयङ्कर विषैले सर्प उनके पास पकड़े हुए होते हैं। सर्प पकड़ते समय अनेक बार उनको काटते हैं वे अपनी भी चिकित्सा करते हैं। लगभग दो मास हुए उस समय की एक इसी प्रकार की घटना है।

४—कासनी ग्राम तहसील झज्जर जिला रोहतक में कुछ सपेरे आये, वहां ग्राम से कुछ दूर एक स्थान पर एक भयङ्कर विषैली काली नागों का एक जोड़ा रहता था। ग्राम के लोग उधर जाते हुए भी डरते थे। सपेरों को देखकर गांव के लोगों ने उनको सांपों का स्थान बता दिया। वे सपेरे उन सर्पों को पकड़ने के लिये उसी स्थान पर पहुँच गये। एक सपेरे ने साहस से आगे बढ़कर झाड़ियों में से उस भयंकर नाग को बड़ी सावधानता से पकड़ लिया, ज्यों ही उसने उसको पकड़ा तो क्या देखते हैं, पास के खेत में से ही जोड़े वाला सांप क्रोध में आया हुआ भागा आ रहा है, दूसरा सपेरा उसे पकड़ने के लिये आगे बढ़ा, सपेरे ने भी सांप को पकड़ने के लिये बड़ी सावधानता से सांप के मुख पर हाथ डाला, किन्तु सांप भी पहले से ही सावधान था, वह उसकी पकड़ में नहीं आया और सपेरे को काट खाया, सपेरे ने दंश स्थान पर उसी समय औषध लगा ली। पुनः द्वितीय बार उसे पकड़ने का यत्न करने लगा किन्तु सांप ने फिर दूसरी बार भी उसे काट खाया, सपेरे ने भी काटे हुए स्थान पर फिर औषधि लगा ली और तीसरी बार उसके पकड़ने में सफल हो गया। उन दोनों सांपों को अपनी पिटारियों में डालकर दोनों सपेरे चलते बने।

ऐसी घटनायें प्रायः इन सपेरों के साथ प्रतिदिन होती ही रहती हैं, ये सपेरे सर्पविष-चिकित्सा में अच्छे सिद्धहस्त चिकित्सक होते हैं। इसी प्रकार की एक घटना जिला बिजनौर में गङ्गोरा ग्राम की है—

५—एक गडरिये को सांप ने काट खाया; अनेक प्रकार की चिकित्सायें कीं, परन्तु कोई सफलता नहीं मिली। उसके घर वालों ने उसे मृत (मरा हुआ) समझ कर उसके शव [लाश] को गंगा नदी में बहा दिया। जब मृत-शरीर बहा जा रहा था उसे किसी सपेरे ने देख लिया जो उस नदी के किनारे पर स्नान कर रहा था। उसने अपने अनुभव के आधार पर यह जान लिया कि यह सर्प का काटा हुआ है।

वह उसे बाहर निकाल लाया और उसकी चिकित्सा आरम्भ की। कुछ समय पीछे उस मृतदेह में जीवन के चिह्न दिखाई देने लगे; वह सपेरे की चिकित्सा से ठीक (जीवित) हो गया। उसने उसे भी अपने साथ रखकर सपेरा बना लिया। कुछ वर्ष पश्चात् चन्दपुरा ग्राम में जो गङ्गोरा ग्राम से दो-तीन मील के अन्तर पर है, वे दोनों सपेरे आये। वहां पर उसके सम्बन्धी और कुटुम्ब वालों ने उस व्यक्ति को भली-भांति पहचान लिया और उसने भी इष्टमित्रों तथा सम्बन्धियों को भली-भान्ति पहचान कर उनके नाम स्थान आदि सब बता दिये। यह घटना भी एक बार समाचार पत्र में प्रकाशित हुई थी।

उन्नीस अक्तूबर सन् १९५३ ई० के उर्दू दैनिक 'प्रताप' में मैंने स्वयं पढ़ा कि एक भयंकर सर्प ने एक व्यक्ति को काट खाया। उसकी चिकित्सा डाक्टरों से से कराई गई किन्तु उसे कोई लाभ नहीं हुआ। अन्त में डाक्टरों ने यही कह दिया कि इसकी चिकित्सा नहीं हो सकती, यह अवश्य मरेगा। उसके सगे-सम्बन्धी विवश होकर उसको डाक्टर के यहां से उठा लाये। जब वे मार्ग में जा रहे थे, अकस्मात् उन्हें एक सर्पविष चिकित्सक (वैद्य) मिल गया, उसने उसकी चिकित्सा की, जिसे वे मुर्दा समझ रहे थे। वह उसकी चिकित्सा से अच्छा हो गया।

७—सपेरे अपनी सर्पविष चिकित्सा के ज्ञान वा अनुभव के कारण कितने निर्भयहोते हैं। इस विषय की स्वयं देखी हुई एक घटना सूफी अम्बाप्रसाद ने इस प्रकार लिखी है—सन् १८७१ में बंगाल में बहुत वेग से बाढ़ आई, चहुँ दिशाओं में जल ही जल भरा हुआ था। सूफी जी चित्तवल नाम के ग्राम में जाना चाहते थे, नौका के बिना वहां किसी प्रकार जा नहीं सकते थे। उन्होंने पुलिस ओफिसर के द्वारा नौका ली और वे उसमें बैठ गये, नौका चलने ही वाली थी कि एक व्यक्ति ने आकर कहा कि यहां पर बहुत से सपेरे ठहरे हैं जिन्होंने बहुत सांप पकड़ रक्खे हैं। सूफी जी ने उनको बुलाया और उनके सांप देखे। सपेरों ने कहा कि ये क्या सांप हैं, यदि आप हमारे साथ चलें तो आपको बड़े-बड़े भयंकर विषैले सांप दिखा सकते हैं। यह सुनकर उनके मन में भी सांप देखने की इच्छा उत्पन्न हुई, वे पुलिस इन्स्पेक्टर सहित तीन सपेरों को साथ ले नौका द्वारा चल पड़े। पुलिस औफिसर ने अपनी दुनाली बन्दूक भी साथ ले ली। जल का बहाव अनुकूल था अतः नौका तीव्र गति से चली, वे शीघ्र ही निश्चित स्थान के निकट पहुंच गये। आरम्भ में एक वृक्ष आया जिस पर कुछ सांप दिखाई दिये। सपेरों ने कहा—यहां क्या है आगे चलें। ज्यों ही हम आगे गये तो दो-चार और वृक्ष दिखाई दिये। एक छिवारे के वृक्ष पर नीचे से लेकर ऊपर तक सांप ही सांप लिपट रहे थे जिनमें एक काले रंग का कुड़ियाला बहुत लम्बा सांप था। सांपों की इतनी अधिक संख्या थी कि सांप के ऊपर सांप लिपट रहा था, इस प्रकार वह वृक्ष जड़ से चोटी तक सांपों के कारण काले रंग का प्रतीत होता था। पास ही कुछ खजूर के वृक्ष भी थे जिनके ऊपर सांप बहुत अधिक संख्या में लिपटे हुए थे। वे तीनों सपेरे उनको पकड़ने के लिये खड़े हो गये। नाविक (मल्लाह) जो आगे बैठा हुआ नौका चला रहा था, सपेरे ने उसे पीछे कर दिया और स्वयं चप्पू लगाने लगा। वह उस नौका को उस वृक्ष के पास ले गया और उसने वृक्ष की एक शाखा पकड़ ली। शाखा के पकड़ने तथा हिलने से सैकड़ों सांप जल में गिर पड़े। सपेरे ने शाखा को इतने वेग से खेंचा कि नौका का अगला भाग वृक्ष के पत्तों के झुण्ड के नीचे चला गया। उस समय बड़ा भयंकर दृश्य देखने में आया। सहस्रों सांपों ने वृक्ष पर से जल में कूदना आरम्भ किया। कुछ ही क्षणों में उनकी नौका के चारों ओर सांप ही सांप फिरने लगे। इन्स्पेक्टर साहिब भय और क्रोध से चिल्लाने लगे और सपेरों को गाली देते हुए धमकाकर कहने लगे कि नौका को छोड़ दो, नहीं तो सारी नौका में सांप ही सांप भर जायेंगे। किन्तु सपेरे अपने सर्प पकड़ने के कार्य में इतने व्यस्त थे कि उन्होंने इन्स्पेक्टर की बात तक न सुनी। उनका किञ्चिन्मात्र भी भय नहीं था। वे बड़े से बड़ा अच्छा सांप छांट कर पकड़ते

थे। जो सांप उनको बड़े दिनों की खोज के पीछे मिलते थे आज वे सहज में ही मिल रहे थे। उस वृक्ष की प्रत्येक शाखा पर सैकड़ों विषैले सांप लटक रहे थे, वे शाखायें उनकी नौका के ऊपर ही थीं। सूफी जी और अनेक साथी घबराये हुए थे वे पानी में बांस मार मार कर उन सांपों को अपनी नौका से दूर करने का यत्न कर रहे थे। उन्हें यह डर था कि कोई सांप उनकी नौका में न चढ़ आये, किन्तु सपेरों को कोई चिन्ता नहीं थी, सर्प उनके कभी माथे और कभी शिर को छू लेते थे। कोई सांप उनके कान से, कोई हाथ से, कोई सारे शरीर से छू जाते थे; किन्तु सपेरों को किञ्चिन्मात्र भी भय नहीं था। प्रत्येक सांप विना दांत टूटा हुआ था और कोई-कोई तो इतना विषैला यदि काट लेता तो पांच मिनट में ही बलवान् से बलवान् व्यक्ति को समाप्त कर देता। एक बार तो एक सांप ने सपेरे के ललाट को ही चाट लिया। उसने अपना सिर थोड़ा सा नीचा कर लिया और सबको धैर्य देकर अपने काम में लग गया। सपेरों के इस व्यवहार और निर्भयता को देखकर सूफी जी तथा उनके साथी भी कुछ निर्भय से हो गये तथा सपेरों के कार्य को धैर्य और आनन्द से देखने लगे। प्रतिक्षण सहस्रों सांप पानी में गिरते थे। उनके शिरों से चारों ओर का पानी काला दिखाई देता था। फिर वहां से नौका का एक वट वृक्ष की ओर ले गये, यह वृक्ष सांपों का तम्बू (शामियाना) प्रतीत होता था, उस पर अनेक प्रकार के सर्प विद्यमान थे। किसी का फन सफेद, किसी का पीला और किसी का लाल था, सहस्रों प्रकार के बड़े सुन्दर-सुन्दर सर्प थे, एक मनोहर दृश्य था। इतने में ही एक सपेरा बोला—लो एक बड़ा भारी सांप, यह कहकर नौका को छोड़ वृक्ष को जा लिपटा और ऊपर को चढ़ने लगा। इस वृक्ष का प्रत्येक स्थान सांपों से ढका हुआ था और सांप भी कैसे? जिनके काटने से मनुष्य की तुरन्त मृत्यु हो जाये। उसे चिल्लाकर कहा गया कि तुरन्त नीचे उतर आओ, किन्तु वह यह कहता हुआ "बड़ा भारी सांप" ऊपर ही चढ़ता रहा। उसे उस सांप के पकड़ने का लोभ तङ्ग कर रहा था। दोनों सपेरे जो नाव में थे यह कह रहे थे कि यह इसके हाथ न आयेगा। वे सब उस वीर सपेरे की ओर देख रहे थे। वह ज्यों-ज्यों ऊपर जाता था सांपों में खलबली मच जाती थी, कुछ सर्प पानी में गिर जाते थे, कुछ उसके आगे-आगे चलते जाते थे। उनके चलने से जो सांप सो रहे थे वे जागते थे, कुछ यह देखकर कि आगे मार्ग नहीं है उसकी ओर लौट आते थे। वह वृक्ष पर चारों हाथ पैरों से चल रहा था। कभी सांपों को हट जाने का अवसर देने को ठहर जाता, जब वे हट जाते तो कुछ आगे बढ़ता और फिर रुक जाता तथा अपनी ओर आने वाले सांपों को हाथ से हटा देता था। इस कार्य के लिये अपने पैरों का भी प्रयोग करता था। सांप न कोई फन उठाता था। न कोई फूँकारता था, न हो काटता था। शनैः-शनैः वह उस सांप के पास पहुंच गया। सांप भागना चाहता था कि उसने दोनों हाथों से उसकी पूंछ पकड़ कर पूरे वेग से खींचना आरम्भ किया। सांप भी अपनी पास वाली एक छोटी सी शाखा पर लिपट गया। इस खेंचातानी में उसका पैर शाखा से फिसल गया, वह सतरह फिट ऊँचे से बड़े वेग से पानी में गिर पड़ा, गिरते ही पानी गहरा था उसमें डूब गया। सूफी जो के साथियों ने समझा कि मर गया होगा किन्तु थोड़ी ही देर के बाद उसने शिर निकाला और यह कहता हुआ निकला कि मैं पकड़ लाया हूं देखो यह है। उसे अपने गिरने का किञ्चिन्मात्र भी डर नहीं था। उसने अपना वह हाथ निकाला जिसमें सांप की पूंछ थी, दूसरे सपेरे ने जो नाव में था वह पूंछ पकड़ ली और उसे खींच कर पात्र (बर्तन] में बन्द कर दिया। यह सांप इतना बढ़ा था कि इसे साधारण अवस्था में तीनों सेपेरे नहीं पकड़ सकते थे। वह साँप गिरने से डर गया और घबरा गया और पात्र में बन्द करते समय उसने शिर तक न हिलाया। इस घटना से पाठक वृन्द समझ गये होंगे कि सपेरा जाति के लोग किस प्रकार सांप पकड़ने में मृत्यु के साथ खिलवाड़ करते हैं। यदि उनके पास सर्प विष की कोई औषध न हो तो वे ऐसा साहस नहीं कर सकते। (क्रमशः)

आसनों के व्यायाम

(लेखक भाष्याचार्य ब्रह्मचारी वेदव्रत, सिद्धान्त वाचस्पति गुरुकुल झज्जर रोहतक)

[४]

१५---उष्ट्रासन

प्रथम वज्रासन करें, पश्चात् हाथों को ऊपर से लाकर एड़ियों के पीछे रखें; कमर को शनैः-शनैः झुकाते हुए शरीर के मध्यम भाग को ऊपर उठावें, श्वास अन्दर रहे, शरीर को जितना अधिक खींचा जावे उतना अच्छा है।

लाभ—मेरुदण्ड तथा पेट को निर्दोष बनाता है, पीठ के टेढेपन को दूर करता है, आन्तों को शक्ति मिलती है, कद बढ़ता है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है।

१६—धनुरासन

भूमि पर उलटे अर्थात् पेट के बल लेटकर पैरों को घुटनों में से मोड़ते हुए ऊपर पीठ की ओर ले आवें, हाथों को आगे घुमाते हुए पांवों के अंगूठों को पकड़ लें तथा छाती को आगे निकालते हुए हाथों और पांव में तनाव उत्पन्न करें, केवल नाभि के आगे और पीछे चार-चार अंगुल पेट ही भूमि पर टिके, श्वास अन्दर भरा हुआ रहना चाहिए।

इसका दूसरा प्रकार कुछ भेद से इस प्रकार है, अंगूठों के स्थान पर टखने के ऊपर से पांवों को पकड़ कर पूर्ववत् शरीर को खींचें।

लाभ—छाती और पेट के अवयव नीरोग एवं बलवान् होते हैं, पेट की शुद्धि होती है, अजीर्णता अफारा आदि दूर हो जाते हैं। शरीर की लम्बाई बढ़ती है। पेट की आंतें सदृढ़ होती हैं।

१७—पश्चिमोत्तानासन

भूमि पर बैठ कर दोनों पांवों को आगे पसार दें, कमर को आगे झुका कर दोनों हाथों से दोनों पांवों के अंगूठों को पकड़ लें और श्वास को बाहर निकाल कर पेट को अन्दर खेंच कर घुटनों पर शिर रखें, हो सके तो घूटनों के बीच में भूमि पर रखने का यत्न करें। पांव घुटनों में से मुड़ें नहीं, पांवों के पंजे भी आगे को तने रहें।

जब नीचे को जावें तब श्वास को बाहर निकालते जावें, जब ठहरें तब बाह्य कुम्भक करें, जब श्वास लेने की इच्छा हो तब पूरक करते हुए शनैः शनै ऊपर उठ जावें, इसी प्रकार बार-बार करें। इस आसन में रेचक, बाह्य कुम्भक और पूरक का अच्छा अभ्यास किया जा सकता है।

लाभ—इस आसन के करने से जठराग्नि प्रदीप्त होती है, पेट हल्का एवं कोमल रहता है, पेट की नस-नाड़ियां मलरहित हो जाती हैं, पेट का मेदा, (चर्बी) कम होकर पेट छोटा होता है। अजीर्णता, मन्दाग्नि, मलावरोध, उदर पीड़ा प्रभृति उदरविकार समूल नष्ट हो जाते हैं। यकृत् और प्लीहा निर्दोष हो जाते हैं, फेफड़े दृढ़ होते हैं और रक्तशुद्धि भली भान्ति होती है। कमर का झुकाव और कुबड़ापन दूर होता है। आयु और लम्बाई बढ़ती है।

१८—जानुशिरासन

पश्चिमोत्तानासान की भान्ति पांव पसार कर बैठें और बाँये पांव को मोड़कर एड़ी मूत्रेन्द्रिय के नीचे लगा कर पांव का तलवा दाहिनी जंघा के साथ लगा कर रखें। दोनों हाथों से पसरे हुये पांव को पकड़ कर उस के घूटने पर शिर लगावें। श्वास की क्रिया पश्चिमोत्तानासन की भान्ति करें। आरम्भ में जिन्हें पश्चिमोत्तानासन करने में कठिनता होवे, पहले जानुशिरासन का अभ्यास करें। उसी प्रकार दूसरे पांव से भी करें।

लाभ—इसके लाभ पश्चिमोत्तानासन के समान हैं

किन्तु वीर्य रक्षा में यह विशेष सहायक है, वायु प्रकोप मूत्रकृच्छ्र, आन्तों की उष्णता बढ़ना इत्यादि में भी लाभदायक है।

१९—मत्स्येन्द्रासन

इस आसन को करने के लिए प्रथम पांव फैलाकर बैठें, पश्चात् बांयें पांव का पंजा दाहिने पांव की जंघा के मूल में तथा एड़ी नाभि के नीचे लगावें, मुड़ा हुआ पांव भूमि से लगा रहे। दाहिने पांव को थोड़ा मोड़कर बांये पांव के घुटने के पास बाहर की ओर रखें तथा बांये हाथ को दाहिने पांव के घुटने के बाहर से लाकर दाहिने पांव के अंगूठे को पकड़ें। दाहिने हाथ को पीठ के पीछे से लाकर बांयें पांव की एड़ी को पकड़ें। प्रारम्भ में यदि एड़ी को न पकड़ सकें तो उसके निकट ही हाथ को रखें, अभ्यास के उपरान्त एड़ी पकड़ी जा सकेगी। मुख, ग्रीवा आदि अवयवों को पीछे को घुमाकर नासिका पर दृष्टि रखें, शरीर का झुकाव आगे को न हो, किन्तु श्वास को अन्दर भर कर सब अवयव खिंचे हुए रहने चाहियें।

द्वितीय प्रकार—बायें पांव की एड़ी अण्डकोष और गुदा के बीच में लगाकर दायां पांव पूर्ववत् घुटने के पास रख और सभी क्रियायें पूर्ववत् करें, दाहिने हाथ को पीछे से घुमाकर बायें पांव की जंघा को पकड़ें। यह विधि पूर्वविधि से सरल है। मत्स्येन्द्रासन को हाथों और पांवों को बदल-बदल कर दोनों ओर से करना चाहिए।

लाभ—इस आसन के करने से जठराग्नि तीव्र होती है, मेरुदण्ड स्वस्थ रहता है, आन्तों को बल प्राप्त होता है, अतिसार, संग्रहणी, रक्तविकार, दमा, मेद, वृद्धि, अजीर्णता आदि रोग दूर हो जाते हैं। स्वास्थ्य रक्षा के लिए यह आसन अत्युत्तम है।

२०—पद्मासन

पद्मासन करने के लिए भूमि पर बैठ जायें, पश्चात् दाहिना पांव बांई जंघा पर और बांयाँ पांव दाँई जंघा पर रखें, दोनों पांव जंघाओं पर अच्छी प्रकार आ जाने चाहियें। हाथों को घुटनों पर रखें, हाथ मेरुदण्ड, शिर, ग्रीवा आदि सब सीधे और तने हुए रहें। दोनों पांव भूमि से लगे रहें, ठोडी का थोड़ासा झुकाव कण्ठमूल की ओर रखें, दृष्टि भ्रूमध्य में या नासिका के अग्रभाग पर जमावें। दोनों पाँवों को ऊपर नीचे बदल कर दोनों पांवों से यह आसन करना चाहिए।

लाभ—इस आसन के करने से पांव की नस नाड़ियों का रक्त शुद्ध होता है, श्वास को बाहर निकाल कर पेट की अन्तड़ियों को इधर-उधर घुमाने से पाचन शक्ति बढ़ती है, अजीर्ण और कोष्ठ बद्धता नहीं होती। यकृत् और प्लीहा के सब रोग दूर होते हैं। हृदय रोग, रक्त विकार, चर्म रोग, उदरवात आसवात आदि रोगों में लाभ करता है। नाभि के नीचे के भाग को ऊपर को संकोच करके प्राणायाम करने से और मूलबन्ध करने से वीर्य सम्बन्धी सब दोष समूल नष्ट होते हैं। ध्यान करने के लिए भी यह आसन उत्तम है। जिन लोगों को ध्यान-सन्ध्यादि करने में आलस्य या निद्रा आती है उनको इस आसन में बैठना चाहिए।

२१—बद्धपद्मासन

पहले पद्मासन लगावें, तत्पश्चात् दोनों हाथों को पीठ के पीछे लाकर दाहिने पांव का अंगूठा दाहिने हाथ से और बांयें पांव का बांयें हाथ से पकड़ कर श्वास को अन्दर भरें, और छाती को आगे निकालते हुए शरीर को खूब खींचें, ठोडी को कण्ठमूल में भी लगा सकते हैं, दृष्टि को नासिका के अग्रभाग पर स्थिर करें। दोनों पांवों के घुटने भूमि पर टिके हुए रहें।

लाभ—इसके लाभ पद्मासन के तुल्य हैं, शरीर का खिंचाव होने से पेट, छाती, हाथ और पांवों पर विशेष प्रभाव पड़ता है और वे दृढ़ एवं नीरोग होते हैं।

२२—उत्थितपद्मासन

इस आसन को दोलासन और लोलासन भी कहते हैं। पूर्ववत् पद्मासन लगाकर दोनों हाथों की हथेलियों को जंघाओं के पास बाहर की ओर भूमि पर रखकर शरीर को ऊपर उठावें, जितना अधिक

ऊपर उठाया जायेगा उतना ही अधिक लाभ होगा। इसी में आगे-पीछे भूल भी सकते हैं अतएव इस का नाम दोलासन है।

लाभ—इस के लाभ पद्मासन के सदृश हैं, हाथों पर अधिक भार आने से उन में बल की वृद्धि होकर वे सुदृढ़ होते हैं।

२३—कुक्कुटासन

पहले पद्मासन लगा कर जंघा और पिंडलियों के बीच से दोनों हाथ कोहनियों तक नीचे निकाल कर हाथों के पंजों को भूमि पर जमा कर सम्पूर्ण शरीर के भार को उन्हीं पर संतुलित करें, शरीर का झुकाव आगे को कम से कम हो, ऐसा प्रयत्न करना चाहिये।

लाभ—इसके लाभ पद्मासन और उत्थित पद्मासन के समान हैं। विशेषता यह है—

आन्तों की दुर्बलता से जो अपानवायु पैदा हो कर पेट को फुला देता है उसको और मलबद्ध होकर जो अन्य स्वप्नदोषादि रोग होते हैं उनको नहीं होने देता।

२४—गर्भासन

कुक्कुटासन की तरह कोहनियों तक के हाथ नीचे निकाल कर दोनों हाथों से दोनों कानों को पकड़ें।

लाभ—इस आसन के करने से उदर विकार और मन्दाग्नि दूर होकर स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

२५—सिद्धासन

भूमि पर बैठ कर बांयें पांव की एड़ी गुदा और अण्डकोष के बीच के स्थान पर जमा कर रखें और दाहिने पांव की एड़ी मूत्रेन्द्रिय के ऊपर तथा पंजा बांयें पांव की जंघा और पिण्डली के बीच में रहना चाहिये। दोनों पांवों के ऊपर नीचे के गट्टे मिले हुये रहें, ठोड़ी का झुकाव नीचे को करें या कण्ठमूल में लगावें, दोनों हाथों को मिला कर आगे रखें या पांवों के घुटनों पर रक्खें, घुटनों पर रखना अधिक अच्छा है। दृष्टि नासिका के अग्रभग पर या भ्रुवों के बीच में स्थिर करें। मेरुदण्ड ग्रीवादि सब नितान्त सरल रहें, उनमें किंचिन्मात्र भी वक्रता न रहनी चाहिए।

पहले इस आसन में पर्याप्त काल तक बैठने का अभ्यास करना चाहिए, कम से कम एक या दो घण्टे का अभ्यास तो अवश्य होना चाहिये, तभी प्राणायाम आदि अन्य योगाङ्गों में सफलता मिल सकती है। प्राणायाम अथवा योगाभ्यास के लिए सिद्धासन ही सर्वोत्कृष्ट माना गया है।

इस आसन का अभ्यास वैसे तो अन्य आसनों के साथ ही करना चाहिए, किन्तु इस आसन को सन्ध्या आदि करते समय, भोजन के समय, भोजन के पूर्व या पश्चात् पढ़ते लिखते किसी भी समय बिना संकोच कर सकते हैं, कोई हानि नहीं होती, लाभ ही लाभ होता है। इस आसन के अभ्यासी को अधिक पौष्टिक आहार की आवश्यकता नहीं, जिन्हें पौष्टिक भोजन सुलभ नहीं वे भी इसे कर सकते हैं।

श्रेयोमार्गगामियों को इस आसन का विशेषयता अभ्यास करना चाहिए। हठयोगियों ने इस आसन को करने पर सबसे अधिक बल दिया है।

लाभ—इस आसन के करने से पाचनशक्ति बढ़ती है, अतिसार, श्वास, कास, बहुमूत्र आदि रोग दूर होते हैं। हृदय बलवान् होता है। स्वप्नदोष, प्रमेह आदि धातु सम्बन्धी सब दोष नष्ट हो जाते हैं। मन एकाग्र एवं शान्त होकर वश में आजाता है, विषय-लालसा तथा कामवासना कम होती है, वीर्य की ऊर्ध्वगति होती है। ब्रह्मचारी को ब्रह्मचर्य की सिद्धि के लिए इसका विशेष अभ्यास करना चाहिये। इसकी सिद्धि से ब्रह्मचर्य की भी सिद्धि होती है इस आसन को एक प्रकार से ब्रह्मचर्य का प्राण ही कहना चाहिए।

२६—पादाङ्गुष्ठासन ।

विधि—बायें पाँव की एड़ी को गुदा और अण्डकोष के बीच के स्थान पर लगाकर सम्पूर्ण शरीर का भार उसी पाँव पर रखकर बैठ जावें, दाहिने पाँव को मोड़कर बांयें पाँव के घुटने पर रक्खें और दोनों हाथ कमर पर रहें, मेरुदण्ड नित्तान्त सीधा तथा छाती आगे को निकली हुई रहनी चाहिये। आरम्भ में एक हाथ से भूमि या भित्ति का आश्रय ले सकते हैं, अभ्यास होने पर सहारा लेना छोड़ दें। उसी प्रकार दूसरे पाँव पर भी उतने ही समय तक इस आसन को करें।

लाभ—इस आसन के करते समय जहाँ पर एड़ी लगाई जाती है वही स्थान वीर्य सम्वन्धी नाड़ियों का है, उस स्थान को एड़ी से दबाने से वीर्य की अधोगति नहीं होती, अतः यह आसन वीर्य रक्षा में सहायक है। स्वप्नदोषादि भी नहीं होते। वात (बादी) तथा रक्त दोनों प्रकार के अर्श (बवासीर) को नष्ट करता है। इसका सतत अभ्यास करते रहने से नेत्र दृष्टि क्षीण नहीं होती।

२७—सम्प्रसारणभूनमनासन ।

विधि—भूमि पर बैठकर पाँवों को यथाशक्ति चौड़ा करते हुए फैलावें और दोनों हाथों से पाँवों के अंगूठों को पकड़ कर सिर को भूमि पर टिका दें। श्वास को बाहर निकाल दें। इसी प्रकार बार-बार करें।

लाभ—इस आसन से जंघा, पेट; मेरुदंड और ग्रीवा आदि अवयव नीरोग रहते हैं, जठराग्नि प्रदीप्त होती है।

२८—मयूरासन

विधि—मयूरासन करने के लिये हाथों के पंजे पीछे पाँवों की ओर करके दृढतापूर्वक पृथ्वी पर जमावें, दोनों हाथों के पंजों में एक बालिस्त से अधिक अन्तर न हो। कोहनियों को मिलाकर नाभि पर लगा पाँवों को ऊपर उठावें, दोनों पाँव मिले हुए तथा तने हुए रहने चाहियें। सिर नीचे झुका हुआ न रहे। जिस प्रकार मोर का सम्पूर्ण भार पंजों पर संतुलित रहता है उसी प्रकार मनुष्य का भार भी पंजों पर संतुलित रहना चाहिये।

पहले इस आसन का अभ्यास किसी ऊंचे स्थान मेज, कुर्सी, चबूतरे आदि पर करना चाहिये, इसमें सफलता प्राप्त हो जाने पर सम-भूमि पर सुख पूर्वक कर सकते हैं।

लाभ—इस आसन के करने से जठराग्नि तीव्र होती है अतः पेट के रोग नहीं होते। हाथों के पहुंचे दृढ़ होते हैं, मेद (चर्बी) कम होकर अपने वश में रहता है। अतीसार, संग्रहणी आदि आंतों के रोग, गुल्म, आध्मान (अफारा) और कटिशूल नष्ट होते हैं।

२९—गरुड़ासन

पहले सीधे खड़े हो जावें, पश्चात् एक पाँव को दूसरे पाँव के पीछे से लाकर ऐसे लपेटें जैसे वृक्ष से बेल लिपट जाती है। इसी प्रकार हाथों को भी लिपटावें और हाथों की हथेलियों को मिला दें। हाथों और पाँवों को ऊपर नीचे बदल कर दोनों हाथों तथा पाँवों से यह आसन करना चारिये।

लाभ—इस आसन से हाथों और पाँवों का भली-भान्ति तनाव होता है अतः वे नीरोग एवं पुष्ट होते हैं।

घुटने और पिंडली का दर्द दूर होता है। अंडकोष की वृद्धि का रोग नहीं होता, यदि हो गया हो तो इस आसन और वस्ति-धौति क्रिया करने से नष्ट हो जाता है।

३०—कोनासन

विधि—पाँवों को फैलाकर सीधे खड़े हो जावें। पश्चात् एक पाँव को घुटने में से मोड़ते हुए उसी ओर के हाथ से मुड़े हुए पाँव के अंगूठे को पकड़ें तथा दूसरे हाथ को ऊपर उठाकर सिर के ऊपर से सीधा तान देवें। शरीर की आकृति त्रिकोण के समान बन जावे। इसी प्रकार दूसरे पाँव पर भी करें।

लाभ—इस आसन के करने से कमर, पाँव, पेट आदि पर विशेष प्रभाव पड़ने से ये अङ्ग नीरोग रहते हैं। शरीर की थकावट दूर होती है। मल-शुद्धि में इससे विशेष सहायता मिलती है। क्रमशः

* संस्था परिचय *

आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये दान—

गुरुकुल झज्जर रोहतक की प्रबन्धकारिणी सभा का अधिवेशन ता० १५ नवम्बर रविवार को हुआ, सदस्यों के अतिरिक्त अन्य सहायक महानुभाव भी विशेष निमन्त्रण पर सम्मिलित हुए। आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये पर्याप्त उत्साह था। राय बहादुर श्री रणधीरसिंह जी रईस बादली ने अपने पुत्र चि० सम्पूर्णसिंह जी के नाम पर कमरा बनवाने के लिये ११००) दान देने का वचन दिया और गंगा स्नान के उपरान्त ता० २२ या २३ नवम्बर को गुरुकुल की चन्दा-चयन समिति को अपने ग्राम बादली में पधारने के लिये निमन्त्रित किया तथा वचन दिया कि मैं अपने कुटुम्बियों तथा ग्राम वासियों से भी इस शुभ कार्य के लिये चन्दा कराऊँगा। आपके हृदय में आयुर्वेद महाविद्यालय, गुरुकुल तथा गोशाला लिये अत्यन्त श्रद्धा और प्रेम है। आपने ही गुरुकुल के गत वार्षिक महोत्सव पर गुरुकुल के लिये १०१) दान तथा गुरुकुल की गोशाला के लिये २०० बीघे भूमि प्रदान की थी। इस अधिवेशन में भी एक गाड़ी पूली गोशाला के लिये तथा ५ मन गेहूं गुरुकुल को प्रदान करने का वचन दे गये हैं। इसी प्रकार समय-समय पर आप सहायता कहते रहते हैं।

राव बहादुर श्री रणधीरसिंह जी झज्जर तहसील के ही नहीं जिले के माननीय व्यक्तियों में से हैं। सहस्रों बीघे भूमि के आप मालिक हैं। ऐसे व्यक्तियों की सहायता से आयुर्वेद महाविद्यालय तथा भूमि दान से गोशाला का भविष्य उज्वल है।

इसके उपरान्त श्री जयदेव जी (सुपुत्र श्री शिवनारायण जी कृषि निरीक्षक जो कि आकूपुर (याकूबपुर) रोहतक के निवासी हैं) ने गुरुकुल की चन्दा चयन समिति को अपने ग्राम में पधारने का निमन्त्रण दिया। यह सज्जन पहले भी ११००) गुरुकुल के लिये प्रदान कर चुके हैं। आशा है अच्छी धन राशि एकत्रित हो जायेगी।

इसी प्रकार श्री भरतसिंह आर्य पंचग्राम वालों ने अपने ग्राम से एक सहस्र १०००) रुपया एकत्रित कराने के लिये चन्दाचयन समिति को निमन्त्रित किया।

खेड़ी आसरा निवासी श्री सूरतसिंह जी ने भी अपने ग्राम से एक सहस्र रुपये एकत्रित कराने का वचन दिया है। खेड़ी आसरा और लोवा दोनों ग्रामों का सहयोग गुरुकुल को प्राप्त होता रहता है इसलिये आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये भारी सहायता मिलेगी ऐसी आशा है। इसी प्रकार अन्य सज्जनों ने अपने अपने ग्राम में पधारने के लिये निमन्त्रण दिया श्री माननीय ला. घमंडी लाल जी बंसल एम. पी. मन्त्री व्यापार एसोशियन देहली ने गुरुकुल के प्रधान श्री माननीय प्रो. शेरसिंह जी से पान्च सहस्र रुपये एकत्रित कराने का वचन दिया।

निम्न सज्जनों ने गोशाला के लिये पूली प्रदान करने का वचन दिया।

१ गाड़ी पूली तथा २ मन बाजरा श्री नन्दलाल जी जहांगीर पुर
१ ,, ,, ५ मन गेहूँ रावबहादुर श्री रणधीरसिंह जी
१ ,, ,, श्री हरफूलसिंह जी आर्य भदानी

१ ,, ,, श्री उमरावसिंह जी आर्य मातनहेल
१ ,, ,, श्री शीशरामजी आर्य मातनहेल
१ ,, ,, श्री जगरामजी आर्य मातनहेल
१ ,, ,, श्री शुभरामजी आर्य नम्बरदार मातनहेल
१ ,, ,, श्री वेदसिंह जी बाबेपुर
१ ,, ,, श्री विजय कुमार जी बी. ए. बाघपुर
१ ,, ,, श्री इन्द्राज जी आर्य खेड़का
१ ,, ,, श्री अतरसिंह जी आर्य माजरा गढ़
२ मन बाजरा श्री जयदेव जी आकूपुर
१ ,, ,, श्री मेजर मेहरचन्द जी

इसी प्रकार अन्य सज्जनों ने भी अन्न और चारे से गुरुकुल तथा गोशाला को सहायता का वचन दिया।

ता० १०-११-५३ ई० को ब्यावर के सन्त श्री पूज्य स्वामी शान्तानन्द जी सरस्वती महाराज ने गुरुकुल झज्जर को देख कर हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की। पूज्यपाद स्वामी जी महाराज की सम्मति निम्न है—

मैं ता० १०-११-५३ को गुरुकुल में आया। यहां का प्रबन्ध देख कर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। यहां की खेती, रसायन शाला, जोकि विद्यार्थियों द्वारा सर्व कार्य कराया जाता है और रसायन शाला की बहुत ही कम समय की कार्यवाही को देख कर आनन्द हुआ। गोशाला की गायों का स्वास्थ्य और विद्यार्थियों का स्वास्थ्य और त्याग तप तथा पाठविधि प्राचीन (महर्षि दयानन्द प्रतिपादित) देखकर आनन्द की सीमा नहीं रही। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यहां के आचार्य श्री भगवान्देव जी की आयु सौ वर्ष से अधिक करे और गुरुकुल इसी प्रकार अपने ढंग से चलता रहे। इस गुरुकुल के विषय में जितना लिखा जाय बहुत थोड़ा है। हे ईश्वर सब गुरुकुलों में ऐसा ही कार्य शीघ्र कर दे जो गुरुकुल झज्जर में चल रहा है। सर्व गुरुकुलों के आचार्यों को आचार्य भगवान् देव जी सा तपस्वी बना दे, यही विशेष प्रार्थना है।

नवयुवकों से

(ले० श्री हरिश्चन्द्र "नाज़" गढ़ी घसीटा सोनीपत)

बनकर वेदों के अनुयायी,
आज्ञा का उल्लंघन करते हो।
गीता के होकर मतवाले,
क्यों ठंडी आहें भरते हो॥
सन्तान हो तुम बलवीरों की,
खुद को निर्बल बतलाते हो।
बलहीन नहीं, बलवान् हो तुम,
क्यों साहस छोड़े जाते हो॥
क्या कारण है जो विस्मित हो,
किस बात से तुम भयभीत हो।
स्वाधीन हुए अब, परवशता के दिन हैं,
कब के व्यतीत हुए॥
वैज्ञानिक, दार्शनिक, खोजी,
और देश के तुम निर्माता हो।
क्यों भाग्य तुम्हारे फूटे हैं,
जब स्वयं भाग्य विधाता हो॥
विपदायें आती रहती हैं,
मानव भी सहते रहते हैं।
मृत्यु के मुंह में जाकर भी,
"उफ" तक न मुंह में लाते हैं॥
अपने इन कष्ट क्लेशों को,
तुम्हीं ने निवारण करना है।
अति भीषण संकट रूपी,
इस सागर से पार उतरना है॥
ऋषियों मुनियों के कहने पर,
ऐ "नाज़" तुम्हें चलना होगा।
सच्चाई और अहिंसा से,
शत्रु दल को दलना होगा॥

* * *

विरजानन्द संस्कृत परिषद् की परीक्षायें

ईश्वर की कृपा से विरजानन्द संस्कृत परिषद्, देहली द्वारा आयोजित संस्कृताङ्कुर, संस्कृतविज्ञ एवं संस्कृत-प्रवीण परीक्षायें इस वर्ष २४ तथा। २५ अक्तूबर १९५३ को सभी केन्द्रों में सफलतापूर्वक समाप्त हो गईं। इस वर्ष इन परीक्षाओं की यह विशेषता रही कि इनमें सभी वर्गों के परीक्षार्थी हिन्दू-मुसलमान, स्त्री-पुरुष, बाल-युवा-वृद्ध, गृहस्थी एवं ब्रह्मचारी बैठे।

यही नहीं कि जन-साधारण में ही इन परीक्षाओं का प्रचार हुआ हो। कई परीक्षार्थी तो कालिज के विद्यार्थी भी थे। राजस्थान राज्य के एक वकील महोदय, जो वहां की विधान सभा के सदस्य भी हैं, इन परीक्षाओं में बैठे। उनके केन्द्र व्यवस्थापक के शब्दों में—

"यह सब कार्य मंगलमय भगवान् की असीम कृपा से ही हो सका है। क्योंकि मैं अलवर से सदा के लिये जा रहा था किन्तु सहसा रुक जाना पड़ा और उसी प्रभु की सहायता पर विश्वास करके मैंने यह कार्य उठाया और अकेले तुच्छ पुरुषार्थ से इसे निभाने में यथा तथा समर्थ हो सका। अन्य कोई सहायक या सहयोगी न हुआ। सब उसी सर्वशक्तिमान् की कृपा रही। अन्यथा श्री छोटूसिंह जो ऐडवोकेट, एम. एल. ए. जैसे अत्यन्त व्यस्त (Busy) व्यक्ति के मन में भी कैसे प्रेरणा हो पाती ? यद्यपि उनको समय भी कम मिला तथापि उन्होंने तथा उनकी देखा-देखी अन्यों ने भी कठोर परिश्रम करके पढ़ाई की तथा परीक्षा दी। यह प्रभु की प्रेरणा ही थी जो एक ऐसा अपटूडेट व्यक्ति मुझ जैसे अर्धनग्न संध्या-यज्ञ में व्यस्त व्यक्ति पर श्रद्धा करके इस पवित्र कार्य में लग गया।"

उक्त परीक्षाओं का परिणाम पहली जनवरी १९५४ तक निकल जावेगा। जिन-जिन सज्जनों तथा केन्द्र व्यवस्थापकों ने इन परीक्षाओं के प्रचार, व्यवस्था एवं संचालन में सहयोग दिया है, उन सब का मैं हार्दिक धन्यवाद करता हूँ और आशा करता हूं कि भविष्य में भी उनसे इसी प्रकार सयोग प्राप्त होता रहेगा।

परिषद् कागज़ों में है ?

दो वर्ष की बात है, विरजानन्द संस्कृत परिषद् की अभी स्थापना ही हुई थी! देहली से बाहर के एक सज्जन ने आर्य समाज दीवान हाल देहली में आकर विरजानन्द संस्कृत परिषद् के कार्यालय का पता पूछा। एक सज्जन ने उन्हें कहा "कार्यालय-वार्यालय तो कहीं भी नहीं है। हां कागज़ों में अवश्य विरजानन्द संस्कृत परिषद् है।" जिज्ञासु महोदय के आग्रह पर उन्होंने मेरा पता तो बता दिया, किन्तु साथ में यह भी कह दिया कि यह चलने वाली संस्था नहीं है। जिज्ञासु महोदय सच्चे आर्य थे। निराशा एक सच्चे आर्य के पास फटकती तक नहीं। वे खोजते-खोजते मेरे यहां पधारे और यह घटना सुनाई। मैं हंसा और मज़ाक में कहा, वे सज्जन ठीक कहते थे। विरजानन्द संस्कृत परिषद् ही क्या ? सारी संस्थायें कागजों में रहती हैं। यदि सरकारी फायलें गुम हो जावें तो दो दिन काम करना कठिन हो जावे। परिषद् किसी ईंट-पत्थरों के चुने हुये ढेर का नाम नहीं है। परिषद् का वास्तविक बल वे सज्जन एवं महात्मा हैं जिन्होंने परिषद् के प्रतिज्ञा पत्रों को भरा है। ये प्रतिज्ञा-पत्र परिषद् की बहुमूल्य वस्तु हैं। इस आशा भरे उत्तर से जिज्ञासु महोदय की रही-सही थकान और चिन्ता भी मिट गई और उन्होंने अपने यहां हमारी परीक्षाओं का केन्द्र स्थापित किया।

आज दो वर्ष पश्चात् भी परिषद् का अपना निज का भवन नहीं है। फिर भी आज अनेक महात्मा और विद्वान् परिषद् रूपी भवन के स्तम्भ बन चुके हैं। परिषद् के कुछ एक सदस्यों के नाम नीचे दिये जाते हैं जिससे पाठक यह कल्पना कर सकते हैं कि परिषद् एक-दो साधारण से व्यक्तियों का 'गृह' नहीं है अपितु एक जीती-जागती और महत्व-पूर्ण सार्वजनिक संस्था है जिसकी तन, मन, धन से सहायता करना प्रत्येक संस्कृत प्रेमी का कर्तव्य है। अपने जन्म काल के दो वर्ष के भीतर दो

बार परीक्षाओं का सफल संचालन इसकी सजीवता का प्रमाण है।

१. पूज्यपाद स्वा० वेदानन्द जी महाराज,
अध्यक्ष विरजानन्द वैदिक संस्थान (देहली)

२. पूज्यपाद स्वा० स्वतंत्रानन्द जी महाराज,
अध्यक्ष दयानन्द मठ दीनानगर

३. पूज्यपाद स्वा० आत्मानन्द जी महाराज।
अध्यक्ष वैदिक साधनाश्रम जमना नगर

४. पूज्यपाद स्वा० केशवानन्द जी महाराज सदस्य भारतीय राज्य परिषद्।

५. पूज्यपाद स्वा० आनन्द भिक्षु जी महाराज।

६. श्री ब्रह्मचारी भगवान् देव जी, आचार्य गुरुकुल झज्झर (रोहतक)

७. श्री पं० राजेन्द्रनाथ जी शास्त्री आचार्य श्री दयानन्द वेद विद्यालय, देहली।

८. श्री पं० जगदेवसिंह जी शास्त्री सिद्धान्ती मन्त्री देहली प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा।

९. श्री पं० रघुवीरसिंह, शास्त्री, वेदवाचस्पति सम्पादक 'सम्राट्' देहली।

१०. श्री रामकृष्ण जी बी. ए. (आन), एल-एल. एम. लैक्चरार ला कालिज, लखनऊ विश्व विद्यालय

११. श्रीमती सरोज अग्रवाल एम. ए, साहित्य रत्न।

१२. पं० भरत कुमार जी शास्त्री अधिष्ठाता कन्या गुरुकुल पंचग्राम (महेन्द्रगढ़)।

१३. श्री रामेश्वरदास जी बी. एस. सी. बी. ली. बी. जे. डी. देहली।

१४. श्री पं० सत्यानन्द जी शास्त्री एम. ए. एम. ओ. एल. देहली।

निवेदक—जगन्नाथ
बी. ए. एल एल. बी. जे. डी. प्रभाकर,
सि० शास्त्री, परीक्षा मंत्री
विरजानन्द संस्कृत परिषद्, देहली।

सम्मतियाँ

हमारे प्रदेश में सुधार बहुत चाहिये। यदि उदार आधार पर पुरानी अच्छी परम्पराओं की रक्षापूर्वक सुधार लाया जा सके तो हरयाणा बड़ा समर्थ प्रदेश बने। इस दिशा में आपका उद्योग सराहनीय है। मैं इसकी सफलता चाहता हूं।

मौलिचन्द्र शर्मा
(अध्यक्ष भारतीय जन संघ देहली)

मैं सुधारक का हार्दिक स्वागत करता हूँ। क्योंकि इसके अन्दर बड़े २ संन्यासियों; महात्माओं तथा विद्वानों के लेखों की बहुलता हो रही है और होती रहेगी, ऐसी आशा की जा रही है। प्रत्येक लेख रोचक, सारगर्भित तथा शिक्षा सम्बन्धी है। जिनको पढ़ कर आज के नवरत्न बालक अपने देश के लिए सच्चे देश, निर्माता बनेंगे। यह आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि "सुधारक" सचमुच ही सुधारक सिद्ध होगा। कहावत के अनुसार "सपूत के पैर पालने में ही दीख पड़ते हैं।"

इसके लिये मैं परम आराध्य परमात्मा से यह कामना करता हूं कि "सुधारक" और इसके संस्थापक आदि को लोकोपकार के लिए बल प्रदान करें।

उदयचन्द्र "यादव" प्रथमवर्ष
लोहिया कॉलिज चूरू (राजस्थान)

"सुधारक" को पढ़कर हार्दिक प्रसन्नता हुई। सचमुच ही सुधारक एक आदर्श सुधारक के रूप में मेरे सम्मुख आ रहा है। अज्ञान से ग्रस्त लोगों को ज्ञान की ज्योति से देदीप्यमान कर देगा। भगवान् से प्रार्थना करता हूं इस कार्य को सफल बनाये।

जयनारायण सन्त
गवर्नमेन्ट स्कूल लोहारू (हिसार)

आशा है कि "सुधारक" सचमुच कुछ सुधार कर सकेगा।

सुशीला नैयर
स्वास्थ्य मन्त्रिणी देहली।

"सुधारक" के प्रकाशन पर हर्ष हुआ। इस शुभ कार्य के लिये मेरी शुभकानायें स्वीकार करें।

मेरा सहयोग सदा आपके साथ रहेगा।

भारतेन्द्र—सम्पादक आर्य साप्ताहिक

कर्तव्य दर्पण मुफ्त

जो ग्राहक एक ही बार में नीचे लिखी पुस्तकों में से कोई सी न्यून से न्यून १०) की पुस्तकें हमसे मंगायेगा उसे महात्मा नारायण स्वामी जी द्वारा लिखित 'कर्तव्य दर्पण' मुफ्त दिया जावेगा। इस सुन्दर अवसर से अवश्य लाभ उठावें।

१. **विदेशों में एक साल**—मू० २।) ले०—स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज। अनेक चित्रों से आभूषित इस पुस्तक में श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी महाराज द्वारा की गई मारीशस, टांगानीका, केनिया, यूगैंडा आदि देशों की यात्रा का विशद विवरण सरल एवं रोचक भाषा में दिया गया है। इन देशों की धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक अवस्था, वहां पर भारतीय संस्कृति का प्रचार एवं उसकी रक्षार्थ किये गये संघर्ष का वर्णन दिया गया है। एक बार आरम्भ कर देने पर पुस्तक छोड़ने को मन नहीं चाहता।

२. **महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी**—(सजिल्द) मू० २) ले०—पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति। इस युग में दो ऐसे महापुरुष हुए हैं जिनकी धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विचार धारा ने इस युग का निर्माण किया है। अनेक अंगों में जहां ये दो महापुरुष—ऋषि दयानन्द और महात्मा गांधी—एकमत थे वहां कुछ एक बातों में उनका परस्पर भेद भी था। उन दोनों के विचारों की समता एवं भेद को जाने बिना वर्तमान राजनीति को समझना कठिन है। इसमें दोनों महात्माओं के धर्म, समाज, तत्वज्ञान तथा राजनीति विषयक विचारों की निष्पक्ष रूप से तुलना की है। इसका महत्व इसी से जाना जा सकता है कि यह भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की परीक्षाओं के पाठ्य-क्रम में निर्धारित है।

३. **वैदिक गीता**—(सजिल्द) मू० ३) परिवर्धित एवं संशोधित तृतीय संस्करण, सुन्दर दुरंगी छपाई। आज तक गीता के कितने ही भाष्य हो चुके हैं। किन्तु किसी भी विद्वान् का आजतक यह साहस नहीं हो सका था कि गीता-रत्न पर आई हुई रेत मिट्टी को अपनी तीक्ष्ण लेखनी से दूर करे और उसके शुद्ध और उज्ज्वल स्वरूप को जनता के सम्मुख रखे। यह श्रेय पुस्तक के लेखक स्वामी आत्मानन्द जी महाराज को ही प्राप्त है कि उन्होंने इस काम को इतनी सफलतापूर्वक पूरा किया है। गीता एवं कृष्ण भक्तों के लिये यह अनोखा ग्रन्थ है।

४. **मनोविज्ञान तथा शिव संकल्प**—(सजिल्द) मू० २॥) ले० स्वामी आत्मानन्द सरस्वती। योग-अभ्यासियों, भक्ति मार्ग के पथिकों और विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ है। पहला संस्करण हाथों-हाथ समाप्त हो गया था। इस दूसरे संस्करण की भी थोड़ी ही प्रतियां शेष रह गई हैं। शीघ्र मंगाइये, अन्यथा कहीं ऐसा न हो कि आपको पश्चाताप करना पड़े।

५. **संस्कृतांकुर**—मू० १।) ले०—स्वामी स्वामी वेदानन्द जी 'तीर्थ'। यह संस्कृत सीखने वालों के लिये अपूर्व पुस्तक है। यह इस प्रकार लिखी गई है कि साधारण सा लिखा-पढ़ा व्यक्ति भी बिना किसी विशेष सहायता के संस्कृत सीख सकता है। इसमें रटंत की भी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती। इसकी उपयोगिता तो इसी से सिद्ध है कि इसे विरजानन्द संस्कृत परिषद् ने अपनी परीक्षाओं के लिये स्वीकार कर लिया है। स्कूलों के आठवीं श्रेणी के विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त लाभदायक है।

६. **हितैषी की गीता**—मू० ।।।) इसमें भगवद् गीता के श्लोकों का सुन्दर एवं सरस हिन्दी दोहों में अनुवाद है। अक्षर मोटे और सरल होने के कारण यह सर्वसाधारण के लिये और भी अधिक उपयोगी हो गई है। प्रथम चार पुस्तकों में से कोई एक लेने पर मूल्य ॥)

कृषि विज्ञान—मू० ।।।) ले०—प्रि० शिवसिंह जी एम० ए०। इसमें खेती-बाड़ी सम्बन्धी बहुत सी आवश्यक बातों का वर्णन किया गया है। प्रत्येक व्यक्ति को इसे पढ़कर लाभ उठाना चाहिये।

[कृपया दूसरा पृष्ठ देखें]

हमारे कुछ नवीन प्रकाशनों का परिचय

(पूर्व पृष्ठ से)

सदाचार पंजिका—मूल्य ॥) हमारी आज वास्तविक समस्या यह है कि हमें स्वास्थ्य एवं सदाचार सम्बन्धी नियमों का पता होते हुए भी हम उन पर आचरण नहीं कर पाते हैं। यह डायरी इसी समस्या को सुलझाने के लिए लिखी गई है। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपके जीवन को उच्च एवं नियमित बनाने में यह अवश्य सहायक सिद्ध होगी और आप थोड़े ही समय में अनुकूल परिवर्तन अनुभव करेंगे। इसकी विशेषता यह भी है कि यह आपको डायरी का काम भी देगी और जिस तारीख से आप इसका उपयोग आरम्भ करेंगे, तभी से एक वर्ष के लिए यह काम देगी।

९—ब्रह्मचर्य रक्षा के साधन— ब्रह्मचर्य रक्षा के साधनों को भली भांति समझने के लिये आचार्य भगवान् देव जी ने इस नाम से एक लेखमाला आरम्भ की है, जोकि ग्यारह भागों में समाप्त होगी। इसके प्रथम एवं द्वितीय संयुक्त भाग में प्रातः जागरण, चक्षुः स्नान, उषः पान तथा शौच आदि के महत्त्व तथा प्रकार, तृतीय भाग में दांतों की उपयोगिता, उनके पुष्ट बनाने की विधि, दन्त रोग के निवारणार्थ अनेक प्राकृतिक एवं औपचारिक साधनों तथा पंचम भाग में स्नान का समय, स्थान एवं वास्तविक विधि और संध्या की उपयोगिता तथा यज्ञ आदि पर सप्रमाण प्रकाश ला गया है। मूल्य क्रमशः ।-), ≡), ।=) है। शेष भाग भी यथा समय प्रकाशित होंगे।

१०—ब्रह्मचर्य शतकम्--॥=)--ले० आचार्य मेधाव्रत जी। इसमें ब्रह्मचर्य सम्बन्धी १०० वेद मन्त्रों का सुन्दर सरल सस्कृत श्लोकों में स्वतन्त्र अनुवाद किया गया है। श्लोकों की भाषा अति रोचक है। उनका साथ-साथ हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है। ब्रह्मचर्य प्रेमियों को इन्हें कण्ठस्थ करके समय-समय पर गाते रहना चाहिए।

११—संस्कृत कथा मंजरी मूल्य ।-)--लेखक स्वा० वेदानन्द। इसमें अनेक ऐतिहासिक कथायें अत्यन्त सरल संस्कृत भाषा में दी हैं, जिससे साधारण संस्कृत जानने वाला भी लाभ उठा सकता है। छोटे बच्चों को संस्कृत का अभ्यास कराने के लिए यह अत्युपयोगी है।

१२—स्वामी दयानन्द और गोरक्षा मू० -)॥—प्रचारार्थ ७) सैंकड़ा (मोटे अक्षर २४ पृष्ठ) गोरक्षा आन्दोलन को तीव्र गति देने एवं महर्षि दयानन्द के वास्तविक दृष्टिकोण को जनता के समक्ष रखने के लिये इसका प्रचार करना प्रत्येक संस्था एवं गोभक्त का कर्त्तव्य है।

यदि आपको उत्तम पुस्तकें चाहियें तो-

निस्सन्देह एक साथ बहुसंख्या में, एक ही स्थान से पुस्तकें खरीदने में आपको डाक-व्यय की बचत एवं कमीशन आदि का लाभ रहेगा। हमारे पते पर आपको एक ही स्थान से सब प्रकार की धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, बालोपयोगी, गृहस्थोपयोगी, ब्रह्मचर्य सम्बन्धी एवं अन्य जीवनोपयोगी।

सस्ती एवं उच्चकोटि की पुस्तकें

उचित मूल्य पर मिल सकती हैं। विरजानन्द संस्कृत परिषद् एवं भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की परीक्षाओं की समस्त पुस्तकें भी हमसे मंगाइये।

मुफ्त

विस्तृत बड़ा सूचीपत्र, कुमार परिषद् एवं विरजानन्द संस्कृत परिषद् की पाठ्य पुस्तकों की पूरी सूची आज ही एक कार्ड डाल कर मुफ्त मंगायें।

वैदिक साहित्य सदन

आर्य समाज मन्दिर बाजार सीताराम, देहली ६।

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक

च्यवनप्राश

इसी ऋतु के ताजे आँवले से तैयार किया गया स्वादिष्ट, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य ७) सेर, ५ सेर लेने पर ६) सेर

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इस के लगाने से आंखों के सब रोग-जैसे आंख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट) दूर का कम दीखना (लांग साइट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आंख के सब रोगों की राम बाण औषध है । यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ. स्वच्छ रखता है । बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है। सेवन विधि-पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रातः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ॥) शीशी

सञ्जीवनी तैल

मूर्च्छित लक्ष्मण को चैतन्य देने वाली इतिहास-प्रसिद्ध बूटी से तैयार किया गया यह तैल घावों को भरने में जादू का काम करता है। भयङ्कर फोड़े फुन्सी, गले-सड़े जख्मों तथा आग से जले जख्मों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये विना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भर कर ठीक कर देता है। खून का बहना तो तुरन्त ही बन्द हो जाता है। चोट की भयङ्कर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है। मूल्य छोटी शीशी ॥=) बड़ी शीशी ५)

फाये में भरकर बार-बार चोट आदि पर लगायें।

ज्वरामृत

यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की राम-बाण औषध है। बिगड़े हुये मलेरिया, विषम ज्वर को दूर करने में अद्वितीय औषध है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन सिर दर्द, स्वप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है।

सेवनविधि—मात्रा १ तोला से २ तोला तक समान जल मिलाकर बढ़े हुये ज्वर में गरम जल मिलाकर तथा उतरे हुये में ताजा जल मिलाकर दिन में तीन बार लेवें। आवश्यकतानुसार अधिक बार भी ले सकते हैं।

मूल्य छोटी शीशी २) बड़ी शीशी ५)

स्वप्नदोषामृत

इस भयङ्कर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग को दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। मूल्य ५) रुपये

सूखा रोगामृत

जिन गृहस्थों के बालक सूखा रोग (मसान) से सूख-सूख कर मरते हैं। अनेक प्रकार चिकित्सा करने पर भी कोई लाभ नहीं होता। ऐसे निराश रोगियों के लिये यह औषधि अचूक है। सहस्त्रों रोगियों पर अनुभूत है। इसके अतिरिक बालक के हरे पीले दस्त, अजीर्ण, अरुचि, दांत निकलते समय के रोग, वमन, निर्बलता और ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखे। मू० १ मास के सेवन तथा मालिश के लिये १२)

१—रोहतक में मिलने का पता—
गुरुकुल फार्मेसी, रेलवे रोड (रोहतक)
२—देहली में मिलने का पता—
"नवजीवन सञ्चारक कम्पनी"
आर्य समाज मन्दिर, सीताराम बाज़ार—देहली
३—दादरी में मिलने का पता—
वैद्य सोमवीर—आर्य औषधालय
रेलवे रोड—डालमिया दादरी (पेप्सू)

बलदामृत

यह विद्यार्थियों तथा अध्यापकादि मस्तिष्क का (दिमागी कार्य करने वालों के लिये सर्वोत्तम रसायन (टानिक) औषध है। इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है, इसके निरंतर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजला) की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास (खांसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपैदिक), श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आयी निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। इसके सेवन से भार बढ़ता है। यह दवा की दवा और गिजा की गिजा है। यह अत्यन्त स्वादिष्ट पेय है। यह अपने ढङ्ग की एक औषधि है।

छोटी शीशी २)—बड़ी शीशी ५)

कुछ महानुभावों की सम्मतियाँ

"आर्य आयुर्वैदिक फार्मेसी" गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की रसायनशाला में निर्मित 'बलदामृत' का सेवन किया। वास्तव में मन्दाग्नि एवं मस्तिष्क की निर्बलता निवारण करने में अनुपम रामबाण सम अमृत औषध है। मेरे रोग को दो ह दिनों में नष्ट कर मुझे शक्ति-सम्पन्न बनाया और प्रतिदिन मेरी क्षुधा प्रदीप्त होने लगी। मैं मस्तिष्क का कार्य दिन भर करने पर भी नहीं थकता हूँ। यहीं रहकर मैंने २५ दिन में ३०३ श्लोक ब्रह्मर्षि विरजानन्द-चरित के निर्माण किये। अनेक रोगों पर (जो विज्ञापन में वर्णित हैं) सचमुच अतुल लाभकर बलप्रद औषध रसायन है। 'हाथ कंगन को आरसी क्या?'

मेधाव्रताचार्य पो० येवला (नासिक)
'दयानन्द दिग्विजय' महाकाव्यकार

INDIA POSTAGE 3 PS ३ पा

पता

ग्राहक संख्या ५८६
सेवा में— श्री जगदीशचन्द्र जी विद्या
मु० ℅ मुरारी ब्रदर्स
पो० कमला नगर
जि० देहली

बलदामृत का तो कहना ही क्या? इसने तो 'औषध मीठी होते हुए लाभप्रद होनी कठिन है' इस उक्ति को भी बिल्कुल झूठ सिद्ध कर दिया है। यह जितनी मीठी है उतनी ही गुणकारक भी है। पुराने नजले और जुकाम, खांसी, फेफड़ों की कमजोरी के लिये बहुत अच्छी सिद्ध हुई है। हमारे एक मिस्त्री जी को पुराना जुकाम (पीनस) समाप्त हो गया। खून तो यह पर्याप्त मात्रा से बढ़ाती ही है।

बलवीरसिंह (मद्रास)

अनुमान तीस वर्ष से मैं उत्तर भारत के सब भागों—विशेषतया ग्रामीण जनता में वैदिक धर्म के प्रचारार्थ भ्रमण करता रहा हूँ। प्रचार कार्य में अनियमितता होने से स्वास्थ्य में हानि पहुँचना अवश्यम्भावी है। इस कारण मैं प्रायः च्यवनप्राश आदि औषधियों का प्रयोग करता रहा। गुरुकुल झज्जर की रसायनशाला का विज्ञापन मैंने "सम्राट्" साप्ताहिक में पढ़ा। "बलदामृत" सेवन करने की इच्छा हुई। मुझे यह कहने में अतीव प्रसन्नता है कि बलदामृत के थोड़े सेवन से ही मेरे स्वास्थ्य में अपूर्व लाभ हुआ। नजला और जुकाम आदि शिकायतों से पिण्ड छूट गया। मैं अब भी बलदामृत का सेवन करता हूँ। यह औषधि मुझे बड़ी गुणकारी सिद्ध हुई है।

पृथ्वीसिंह बेधड़क कविरत्न-आर्योपदेशक

आपकी आयुर्वैदिक रसायनशाला द्वारा निर्मित 'बलदामृत' का सेवन गुरुकुल झज्झर में रहते हुए मैंने किया था। जिसके द्वारा शरीर में रक्त की वृद्धि हुई और शरीर में बल तथा स्फूर्ति का अनुभव हुआ। औषधि सचमुच बहुत उत्तम है तथा निर्बलों को बल देने वाली है।

महाविद्वान् मुनिवर देवराज जी
स्नातक गुरुकुल कांगड़ी (हरद्वार) की सम्मति

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः ॥

वर्ष १
अङ्क ५-६
गुरुकुल झज्जर, पौष-माघ सं० २०१० वि०, जनवरी-फरवरी १९५४, दयानन्दाब्द १२९
वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

=: गो-विशेषाङ्क :=

॥ गावो हि विश्वस्य मातरः ॥

हे मांसाहारियो ! तुम लोग जब कुछ काल के पश्चात् पशु न मिलेंगे तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं ? हे परमेश्वर ! तू क्यों इन पशुओं पर (जो कि बिना अपराध मारे जाते हैं) दया नहीं करता ? क्या उन पर तेरी प्रीति नहीं है ? क्या इन के लिये तेरी न्यायसभा बन्द हो गई है ? क्यों उनकी पीड़ा छुड़ाने पर ध्यान नहीं देता ? और उनकी पुकार नहीं सुनता, क्यों इन मांसाहारियों के आत्माओं में दया प्रकाश कर निष्ठुरता, कठोरता, स्वार्थपन और मूर्खता आदि दोषों को दूर नहीं करता ? जिससे ये इन बुरे कामों से बचें । —ऋषि दयानन्दः

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्त वाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

गोदुग्ध से ब्रह्मचर्य पालन

(लेखक ब्रह्मचारी सोमवीर आर्य सिद्धान्तशास्त्री गुरुकुल झज्जर)

स्व आ दमे सुदुघा यस्य धेनुः स्वधां पीपाय सुभ्वन्नमत्ति ।
सो अपान्नपादूर्जयन्नप्स्वन्तर्वसुदेयाय विधते विभाति ॥

(ऋ० २।३५।७)

(यस्य) जिसके (स्वे आ) अपने ही (दमे) घर में (सुदुघा) उत्तम दूध देने वाली या सरलता से दोही जाने वाली (धेनुः) दुधार गाय है वह मनुष्य (स्वधां) अपनी शक्ति को (पीपाय) बढ़ाता है और (सुभु) उत्तम रीति से दुग्ध घृतादि पदार्थों से बनाये हुए (अन्नम्) अन्न को, भोज्य पदार्थों को (अत्ति) खाता है। (सः) वह (अपान्नपात्) अपनी जीवनीय शक्ति ब्रह्मचर्य की रक्षा करता हुआ (ऊर्जयन्) बल सम्पन्न होता है और (वसुदेयाय) धन देने योग्य (विधते) मेधावी के लिये (अप्स्वन्तः) जलों के भीतर रहने वाली बिजली के समान (विभाति) विशेषतः चमकता है।

जिसके घर में अमृत रूपी दूध देने वाली सुन्दर और श्रेष्ठ गौ है वह मनुष्य अपने जीवनाधार ब्रह्मचर्य की शक्ति को भली भांति सुरक्षित रख सकता है, क्योंकि गोमाता का दूध परम सात्विक है। अतः उसका पान करने से वीर्य की रक्षा होती है और उसके धारण करने से वह ब्रह्मचारी तेजस्वी कान्तिमान् और मेधावी बनकर संसार में विशेषतया चमकता है। अथर्व वेद में भी आया है—

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम् ।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु ॥ (४।२१।६)

अर्थात् गौवें अपने दूध घी आदि पदार्थों से पतले मनुष्य को मोटा बना देती हैं और निस्तेज अर्थात् कान्ति और शोभा से हीन को तेजस्वी और शोभायमान बना देती हैं। गोमाता घर को पवित्र और कल्याणमय तथा सुख-सम्पन्न बना देती है। क्योंकि इनके दूध आदि के सेवन से मनुष्य नीरोग और सुखी रहते हैं। इसलिये सभा स्थानों में या किसी उत्सव आदि के विशेष समय में गायों की कीर्ति का उत्तम गुणों का सभी नर-नारी गान करते हैं। इस कल्याणमयी गोमाता के प्रति मनुष्य के कर्तव्य के विषय में वेद भगवान् कहता है—"प्रजावतीः सूयवसे रुशन्तीः शुद्धाः अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः" अर्थात् इन प्रजावती उत्तम प्रजा वाली गायों के लिये जौ आदि हरे चारे और पीने के लिये शुद्ध निर्मल जल का प्रबन्ध करना चाहिये। आज हम वेद के इस आदेश को भूल गये हैं। अतः न हरे चारे का प्रबन्ध करते हैं और न ही शुद्ध जल का। फिर शुद्ध पवित्र दूध घी कहाँ से मिले? अतः वेद के आदेशानुसार गायों के लिये हरे जौ आदि के चारे तथा शुद्ध जल का प्रबन्ध करना चाहिये तभी गोमाता के अमृत रूप दुग्ध का पान करके बलवान्, तेजस्वी, मेधावी और सच्चे ब्रह्मचारी बन कर इस लोक और परलोक दोनों में सुखी हो सकते हैं।

सम्पादकीय—

हमारी गोमाता

"गौर्मे माता" गौ मेरी माता है, प्राचीन ऋषि वा हमारे राम कृष्ण आदि महापुरुष यह क्यों मानते आये हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि उन्होंने अपनी ऋतम्भरा प्रज्ञा और धारणावती बुद्धि तथा योग की दिव्य दृष्टि द्वारा यह प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया था कि मनुष्य जीवन के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों फलों की पूर्ण करने वाली अथवा इनकी प्राप्ति में पूर्ण रूप से माता के समान सहायक कोई प्राणी है तो गो माता ही है। माता का नाम हमारे पितरों को क्यों अच्छा लगा, इस का मुख्य कारण यह है कि "जैसे माता सन्तानों पर प्रेम और उनका हित करना चाहती है उतना अन्य कोई नहीं करता। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुंचता है उतना किसी से नहीं।"

—सत्यार्थप्रकाश

जैसे अपनी जननी माता के उपकारों की गणना कौन कर सकता है, इसी प्रकार माता से भी बढ़कर गोमाता के उपकार हम पर हैं। जननी-माता तो केवल ४ वा ५ वर्ष तक अपने पुत्र को अधिक से अधिक दूध पिलाती है। किन्तु गोमाता तो सारी आयु बिना किसी भेद भाव के, बिना ममता व मोह के, आर्य, हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई यहां तक कि प्राणी मात्र को सारी आयु दूध पिलाती है। अतः "मातरः सर्वभूतानां गावः सर्व सुखप्रदाः" (महा० अनु०) गौवें सब प्राणियों को सब प्रकार के सुख देने वाली मातायें हैं। महर्षि दयानन्द जी महाराज गोमाता के उपकारों के विषय में इस प्रकार लिखते हैं :—

"देखिये, जो पशु निःसार घास-तृण, पत्ते, फल-फूल आदि खावें और सार दूध आदि अमृत रूपी रत्न देवें, हल गाड़ी में चलके अनेक विध अन्नादि उत्पन्न कर सब के बुद्धि, बल, पराक्रम को बढ़ा के नीरोगता करें, पुत्र-पुत्री और मित्र आदि के समान पुरुषों के साथ विश्वास और प्रेम करें, जहाँ बांधें वहाँ बंधे रहें, जिधर चलावें उधर चलें, जहाँ से हटावें वहाँ से हट जावें, देखने और बुलाने पर समीप चले आवें, जब कभी व्याघ्रादि पशु मारने वाले को देखें अपनी रक्षा के लिये पालन करने वाले के समीप दौड़ कर आवें कि यह हमारी रक्षा करेगा। जिन के मरे पर चमड़ा भी कण्टक आदि से रक्षा करे, जंगल में चर के अपने बच्चे और स्वामी के लिये दूध देने को नियत स्थान पर नियत समय पर चले आवें, अपने स्वामी की रक्षा के लिये तन मन लागावें, जिनका सर्वस्व राजा और प्रजा आदि मनुष्यों के सुख के लिये है, इत्यादि शुभ गुण युक्त सुखकारक पशुओं के गले छुरों से काट कर जो अपना पेट भर संसार की हानि करते हैं। क्या संसार में उन से भी अधिक विश्वासघाती, अनुपकारी, दुःख देने वाले और पापी जन होंगे?

—गोकरुणानिधि

इसी विषय में महर्षि दयानन्द जी ने गणित द्वारा खोलकर एक गाय की पीढ़ी से कितने प्राणियों का उपकार होता है, गोकरुणानिधि तथा अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में लिखा है वहाँ पढ़ने की कृपा करें। वे लिखते हैं :—

"एक गाय की एक पीढी में ४७५६०० (चार लाख पचहत्तर सहस्र छः सौ) मनुष्य एक बार पालित होते हैं, और पीढी पर पीढी बढ़ाकर के लेखा करें तो असंख्यात मनुष्यों का पालन होता है, इस से भिन्न (बैल) गाड़ी सवारी भार उठाने आदि कर्मों से मनुष्यों के बड़े उपकार होते हैं। तथा गाय दूध में अधिक उपकारक होती है और जैसे बैल

उपकारक होते हैं वैसे भैंसे भी हैं। परन्तु गाय के दूध घी से जितने बुद्धि वृद्धि से लाभ होते हैं उतने भैंस के दूध से नहीं, इससे मुख्योपकारक आर्यों ने गाय को गिना है। और जो कोई अन्य विद्वान् होगा वह भी इसी प्रकार समझेगा।"

—सत्यार्थप्रकाश समु० १०

पाठकगण ! अब तो आप को भली भांति निश्चय हो गया होगा कि जननी-माता से भी बढ़कर गोमाता के उपकार हम पर हैं। इसलिये हमारे प्राचीन पुरुषाओं ने जननी से भी बढ़कर इसका ऊंचा स्थान माना है। वेद भगवान् ने भी गोमाता को बहुत ऊंचा स्थान दिया है—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्या
नाममृतस्य नाभिः। प्र नु वोचं चिकितुषे
जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥

(ऋ० ८।१०१।१५)

दुष्टों को रुलाने वाले क्षत्रियों वा रुद्र ब्रह्मचारियों की माता के समान दूध पिला कर रक्षा करने वाली है, गोमाता के घृत-दुग्ध से ही यह रोग रहित होकर वीर्यवान् और बलवान् बनकर दुष्टों का दलन करते हैं। वसु ब्रह्मचारी या वैश्य लोग गो को अपनी पुत्री के समान प्रेम से पालन पोषण करके दुग्ध और घृत रूपी अमृत इस निधि (खजाने से सारे संसार को यथायोग्य घृत-दुग्ध वितरण करके हृष्ट पुष्ट करते हैं। आदित्य ब्रह्मचारी अथवा ब्राह्मण लोग भी इस सर्व सुखदात्री गो को भगिनी के समान समझ कर अपनी विद्या और ज्ञान बल से इस की रक्षा के लिये जनता को सावधान रखते हैं। शूद्र भी इस की सेवा में कोई न्यूनता नहीं रखते। इस अमृत की नाभि से आज भी सारा संसार घृत दुग्ध आदि अमृत का आस्वादन करता है .फिर भी इस की सेवा-शुश्रूषा और रक्षा से न जाने क्यों विमुख हो रहा है। वेद कहता है ऐ मनुष्य ! यह गौ अपराध रहित है इस का कभी भूल कर भी हनन मत कर, यह तेरी माता है, तेरी पुत्री है तथा तेरी भगिनी है इसलिये इस की अवश्य रक्षा कर। इस की रक्षा में सब से बड़ा तेरा ही स्वार्थ निहित है क्योंकि यह घृत-दुग्ध का बड़ा भारी स्रोत है। इसके जीवन में तेरा जीवन और इन के मरने में तेरा मरण है। वेद की इस उच्च शिक्षा को मान कर यदि मनुष्य चले और गोमाता का रक्षण पोषण और वृद्धि करने में तत्पर हो जाये तो निश्चय से वह अमृत का भोग कर सकता है। उसके घर ही नहीं, संसार में घृत दूध की नदियाँ बह सकती हैं। वह देवों के राज्य को प्राप्त कर सकता है, किन्तु ऋषियों के इस देश में सर्वथा निरपराध, परम शान्त हमारी इस गोमाता का हमारे देखते हुये तिरस्कार ही नहीं निर्दयता पूर्वक वध किया जा रहा है। न जाने ऋषियों के देश में क्षत्रिय वैश्य और ब्राह्मण हैं ही नहीं, यदि हैं तो उनके देखते हुए उनकी माता, दुहिता और स्वसा पर क्यों इतने घोर अत्याचार हो रहे हैं ? तथा वे इन को किस प्रकार सहन कर रहे हैं। इसी विषय में दयालु देव दयानन्द दुःखित हृदय से मांसहारियों से अपील करते हैं—"हे मांसाहारियो ! तुम लोग, जब कुछ काल के पश्चात् पशु न मिलेंगे, तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं ?" गोकरुणानिधि) फिर परम पिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं :—

"हे परमेश्वर ! तू क्यों न इन पशुओं पर, जो कि बिना अपराध मारे जाते हैं दया नहीं करता ? क्या इनके लिये तेरी न्याय सभा बन्द होगई है ? क्यों उनकी पीड़ा छुड़ाने पर ध्यान नहीं देता और उनकी पुकार नहीं सुनता, क्यों इन मांसाहारियों के आत्माओं में दया प्रकाश कर निष्ठुरता, कठोरता, स्वार्थपन और मूर्खता आदि दोषों को दूर नहीं करता ? जिससे ये इन बुरे कामों से बचें।" गोकरुणानिधि

पूज्य महात्मा गांधी को अहिंसा का एकमात्र अवतार मानने वाले उनके शिष्यगण राजसत्ता पाकर कैसे अहिंसा को भूल बैठे हैं जबकि अंग्रेजों को भारत से निकालने के लिये सदैव यह युक्ति देते हुए प्रस्ताव पास करते रहे हैं कि "अंग्रेज भारतीय संस्कृति की एकमात्र प्रतीक वा विभूति गौ का वध

(कत्ल) करते हैं इसलिये इनको भारत से निकाल देना चाहिये।" जबकि स्वराज्य मिले हुए भी कई वर्ष बीत चुके हैं किन्तु हमारे गांधीवादी राज्यसत्ताधारी गोवध बन्द करने के लिये विचार तक भी करने को तैयार नहीं। वे ऋषियों की इस बात को भूल गये हैं "गो आदि पशुओं के नाश होने से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है।"—(महर्षि दयानन्द)

इस गोरक्षा के आन्दोलन को अंग्रेजी राज्य में स्वतन्त्रता युद्ध के सर्वप्रथम योद्धा महर्षि दयानन्द ने निर्भीकता पूर्वक आरम्भ किया था। उसी कार्य को पूरा करने के लिये उनकी उत्तराधिकारिणी आर्यों की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपने हाथ में लिया है। इसी गोवध आन्दोलन के फलस्वरूप श्री सेठ गोविन्ददास जी ने गोवध को पूर्णरूप से बन्द करने के लिये अपना विधेयक संसद् में प्रस्तुत किया है। हमारी गांधीवादी सरकार के राज्याधिकारी श्री किदवई आदि यह स्वीकार भी करते हैं "कि जब देश में जनता की भावना गोवध बन्द करने के पक्ष में है तब प्रजातन्त्र में ऐसी भावना की उपेक्षा नहीं की जा सकती और इस दशा में सरकार को कदम उठाना ही चाहिये" किन्तु "केन्द्रिय सरकार क्या कर सकती है इस पर हमने विचार किया है। वास्तव में यह अधिकार राज्यों की विधान सभाओं का है। यदि सेठ गोविन्ददास संविधान में परिवर्तन करादें तो केन्द्रिय सरकार भी वह काम कर सकती है।" इस प्रकार के शब्द कह कर टालते हुए प्रतीत होते हैं। परमात्मा इनको सद्बुद्धि प्रदान करे जिससे सर्वोपकारी गोमाता का वध शीघ्र ही कानून बना कर बन्द करदें। नहीं तो इन्हें आर्यसमाज के साथ जो स्वराज्य प्राप्ति के लिये बलिदान देने में कभी कांग्रेस से पीछे नहीं रहा व्यर्थ में टक्कर लेनी पड़ेगी। अभी समय है हमारे राज्याधिकारियों को "गोरक्षा का सवाल स्वराज्य से छोटा नहीं, कई बातों में मैं इसे स्वराज्य के सवाल से भी बड़ा मानता हूँ" महात्मागांधी के इन शब्दों पर गम्भीरता से विचारना चाहिये और तुरन्त ही जनता की मांग के अनुसार गोवध निषेध विधेयक को जो इस समय लोकसभा में आ रहा है स्वीकार करके इस विषय का तुरन्त ही कानून बना देना चाहिये।

हमारा 'सुधारक' का गो अंक निकालने का यही उद्देश्य है कि जनता और राज्याधिकारी गोमाता की रक्षा के महत्त्व को समझें और अपना सर्वस्व लगाकर गो-जाति की उन्नति के लिये तत्पर हो जायें। यदि अब भी आंखें न खोलीं तो कविवर मैथिलिशरण के शब्दों में:—

स्वर्ण-भारतभूमि श्मशान बन जायेगी

'दांतों तले तृण दबा कर हैं दीन गायें कह रहीं—
'हम पशु तथा तुम हो मनुज, पर योग्य क्या तुमको यही ?
हमने तुझे मा की तरह है दूध पीने को दिया।
देकर कसाई को हमें तुमने हमारा वध किया॥'
'क्या वश हमारा है भला, हम दीन हैं बलहीन हैं।
मारो कि पालो कुछ करो तुम हम सदैव अधीन हैं॥
प्रभु के यहाँ से भी कदाचित् आज हम असहाय हैं।
इससे अधिक अब क्या कहें--हा! हम तुम्हारी गाय हैं॥'
'जारी रहा क्रम यदि यहाँ यों ही हमारे नाश का।
तो अस्त समझो सूर्य भारत भाग्य के आकाश का॥
जो तनिक हरियाली रही, वह भी न रहने पायेगी।
यह स्वर्ण-भारतभूमि बस मरघट-मही बन जायेगी॥'

(भारत भारती)

मानव को गौ का दान

(ले०- श्री प० विश्वप्रिय जी शास्त्री साहित्यरत्न गुरुकुल झज्जर)

सृष्टि के आदिकाल से महाभारत पर्यन्त एक नहीं, दश-पांच नहीं, लाखों-करोड़ों शताब्दियों तक भारत की सार्वभौम उन्नति का समय रहा । भारतीय संस्कृति विश्ववारा कहलायी । "जीवेम शरदः शतम्" के अनुसार साधारण से साधारण पुरुष भी सौ वर्ष तक जीवित रहने की अभिलाषा रखता था । "शतायुवै पुरुषः" के अनुसार मनुष्य की आयु का माध्यम सौ वर्ष था । विशेष पुरुष तो चार सौ वर्ष तक जीवित रहते थे । बुढ़ापा मानव के पास तक न फटकता था । मानव का यह पाञ्चभौतिक नश्वर शरीर वज्रसार (फौलाद) से भी अधिक कठिनतर होता था । समराङ्गण में लेटे हुए महात्मा भीष्म के शरीर में विषाक्त, नुकीले, तीक्ष्ण तीर घुसते न थे । वह भी उस अवस्था में जब कि भीष्म संसार के पिता ही नहीं पितामह हो चुके थे । उस जर्जरित अवस्था में भी साहस और बल इतना था कि पचीस-तीस लाख की जनसंख्या वाली पाण्डव पक्षीय सप्त अक्षौहिणी सेना को केवल एक मास के स्वल्प से समय में विनष्ट कर देने का साहस रखते थे । यह तो रहा बूढ़े भीष्म पितामह का साहस । इसी सात अक्षौहिणी सेना को महाबली द्रोण और कृपाचार्य एक-एक मास तथा द्रौणि अश्वत्थामा दश दिन, तथा महाबली कर्ण केवल पांच दिन में ही नष्ट करने का बल रखते थे । यह तो रही कौरवपक्षीय महाबलियों की बात । इन सब कौरव पक्षीय महाबलियों को जिनके संकेत पर ग्यारह अक्षौहिणी सेना चलती थी, इन सबको मृत्यु के घाट उतारने वाले पाण्डव पक्षीय महाबली भीम, अर्जुन तथा भगवान् कृष्ण के बल का तो अनुमान ही लगाया जा सकता है । सचमुच वह वीरता का समय था वीरता मानव देह-धारण कर घर-घर में विचरती थी । परन्तु आज सर्वत्र विपरीत दिखाई देता है । आज के युग में तो उसका कहीं भग्नावशेष भी ढूंढे नहीं मिलता । पर्याप्त ऊहापोह तथा विचार-विनिमय के उपरान्त इसका एक ही कारण दिखाई देता है और वह है जीवन के अत्यन्त उपयोगी आहार दूध और घृत का अभाव । उस समय "घृतं वै बलम्" घृत ही निश्चय से बल है । "आयुर्वैघृतम्" घृत ही आयु है । ऐसा निश्चय करके घृत का और "सद्यः शुक्रकरं पयः" दूध ही शीघ्र वीर्य को उत्पन्न करने वाला है । ऐसा समझकर दूध का सेवन करते थे । यहाँ के निवासियों के मस्तिष्क समुन्नत, भुजायें शक्तिशाली, तथा हृदय शुद्ध और निर्विकार होते थे । रोग का नाम तक कहीं सुनाई न देता था । जब रोग ही न थे तो रोगी तथा रोग के उपचारक वैद्यों और डाक्टरों की आवश्यकता कैसे हो सकती है ।

दूध और घी बेचने की कुत्सित प्रथा का भारत में नाम न था, महाभारत काल के उपरान्त भी दूध न बेचने वाली प्रथा कुछ शताब्दियों तक रही । यदि कोई दूध बेचने का विचार करता तो वह कुत्सित समझा जाता था । दूध विक्रयी शब्द ही कुत्सितता का द्योतक है । आज भी नगरों से सुदूर ग्रामों में कहीं-कहीं दूध बेचने की प्रथा नहीं है । कहीं-कहीं पर तो ग्रामों में घी भी नहीं बेचा जाता । परन्तु आज के युग में ऐसे थोड़े से ही सौभाग्यशाली अंगुलिगण्य ग्राम मिलेंगे । उन लोगों से दूध-घी बेचने के लिये कहा जाये तो उत्तर मिलता है, दूध और घी बेचने की वस्तु नहीं है ।

भारत में दूध न बेचने की प्रथा श्री ईसामसीह से बहुत पहले रही है । क्योंकि ईसा से पूर्व चौथी शताब्दी के कौटिल्यार्थ शास्त्र में घृत का साधारण भाव बारह आने प्रतिमन पाया जाता है । तदुपरान्त आर्य राजाओं के समय में भी ऐसी ही रहा, परन्तु उसके उपरान्त यवनसत्ता के भारत में सत्तागम के कारण--सामाजिक जीवन में पर्याप्त परिवर्त्तन होने लगा ।

मुहम्मद तुगलक कालीन इब्नबतूता नामक भारत यात्री ने अपनी पुस्तक में बंगाल के भावों का निर्देश किया है । उसमें घृत के भाव का एक रुपया सात आना प्रतिमन का उल्लेख मिलता है ।

इसी प्रकार 'आईने अकबरी' में घृत का भाव पांच रुपये प्रतिमन तथा सन् १७२९ में मुर्शिदाबाद के भाव साढ़े दश रुपये और सन् १८१० ई० में साढ़े सत्रह रुपये प्रतिमन मिलता है।

परन्तु दौर्भाग्य से आज घृत का भाव ३२० रुपये प्रतिमन है। इसमें भी विशुद्ध घृत के मिलने की आशा कम हीं है क्योंकि सर्वत्र घासलेट घी का बोलबाला है। यही कारण है भारत की आयु का माध्यम बाईस-तेईस वर्ष रह गया है। इसके विपरीत विदेशी लोग दूध और घी की उपयोगिता को शनैः शनैः समझने लगे हैं, वहाँ के विद्वान् गाय को Foster mother of human" मानव समाज की माता कहकर पुकारते हैं। वहाँ दूध और मक्खन जन-साधारण की ही दृष्टि में नहीं अपितु युद्ध में लड़ने वाले सैनिकों के शारीरिक एवं मानसिक बल को बढ़ाने के लिये भी उपयोगी सिद्ध हुए हैं। मदिरा (शराब) बीयर विस्की और चाय के स्थान पर दूध और मक्खन को उपयोगी मान लिया गया है।

हापकिन्स युनिवर्सिटी के डाक्टर ई. बी. मैकालम ने पर्याप्त अन्वेषण उपरान्त लिखा कि—

" Milk is the one food for which there is no effective substitute. "

"Without continued use of milk we can not as a nation maintain the position as a world power to which have risen"

"Without milk the white race can not surviee" अर्थात् दूध एक ऐसा खाद्य पदार्थ है जिसका स्थान अन्य कोई वस्तु नहीं ले सकती। इसके सतत उपयोग के बिना हमारे राष्ट्र की सामूहिक शक्ति संसार में विद्यमान नहीं रह सकती। दूध के बिना गोरी जाति का जीवन निर्वाह असम्भव है।

भारत में जहाँ दूध का माध्यम प्रति मानव ५.६ औंस के लगभग कहा जाता है वहाँ विदेशों में भारत की अपेक्षा कल्पनातीत ऊँचा है। जर्मनी में ३५ औंस, अमेरिका में ३५.६ औंस, डेनमार्क में ४०.३ औंस, ग्रेट ब्रिटेन में ४०.७ औंस और न्यूजीलेण्ड में ५५.६ औंस, तथा कनाडा में ५६.६ औंस प्रति मानव दूध का माध्यम है। इसीलिये वहाँ आयु का माध्यम भारत से द्विगुणे से भी अधिक पचास-पचपन वर्ष तक पहुंच रहा है।

डा० राल्फ. ए. हेने जो आजकल पाश्चात्य जगत् में गोदुग्ध के विशेषज्ञ हैं। उनका निम्न अभिमत है कि—

If you want children to grow in the big strong men give them milk and butter three times a day. अर्थात् यदि आप लोग अपने बच्चों को बलिष्ठ, वीर और शक्ति सम्पन्न बनाना चाहते हैं तो उनको दिन में तीन बार दूध और मक्खन देना चाहिये। इतना ही नहीं इन्होंने तो यहाँ तक कहा है कि जो व्यक्ति अपनी सन्तान को मलाई, मक्खन और दूध जैसे स्वास्थ्यवर्द्धक उपयोगी पदार्थों को खाने के लिये नहीं देता उसे कारागार में बन्द रखने की आवश्यकता है।

Dr. H. D. K. Director of National Instituent for Research in dairying England. ने कहा है कि स्वास्थ्य यदि तत्काल परिवर्द्धन करना है तो दुग्ध पान और दूध से बनी हुई वस्तुओं के अधिक से अधिक व्यवहार करने का प्रचार करना चाहिये।

श्री एच. सी. कैरीमन ओ. बी. ई. एम. डी. मैडीकल रिसर्च कौंसिल इंगलैंड ने बच्चों को विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ पृथक्-पृथक् खाने के लिये दिये। अनुभव के उपरान्त प्रतीत हुआ कि जिन बच्चों को दूध दिया गया था उनमें से एक भी बच्चा रुग्ण नहीं हुआ। जबकि दूध से भिन्न पदार्थ खाने वाले पर्याप्त मात्रा में रोगी निकले। लम्बाई में भी अन्यों की अपेक्षा दुग्धाहारी बच्चों की पर्याप्त वृद्धि हुई।

समिति का अनुभूत मत है कि यदि बच्चों को पर्याप्त मात्रा में दूध दिया जाये तो उनके भार और लम्बाई में आशातीत वृद्धि होती है और विविध शारीरिक सुधार होते हैं यहाँ तक कि बच्चों के हाथ और पैर भी नहीं फटते। वह तो यहाँ तक कहते हैं कि यदि बालकों की क्षुधा निवृत्ति के लिये अन्य पदार्थ थोड़ा कम करके केवल १२ औंस अर्थात् छः छटांक दूध बढ़ा दिया जाय तो बालक को भार-वृद्धि का माध्यम ३.८५ पौण्ड से बढ़कर ६.९८ पौण्ड

हो जायेगा और लम्बाई की वृद्धि का माध्यम १.८४ इंच से बढ़कर २.६३ इंच हो जायेगा।

यह सम्भव भी है क्योंकि एक सेर दूध बल और शक्ति उत्पन्न करने में आध सेर मांस, एक सेर मछली तीन पाव मुर्गी और दश अण्डों के बराबर बतलाया जाता है।

इसी प्रकार एक पौण्ड मक्खन में तीन पौण्ड रोटी, इक्कीस पौण्ड सन्तरे, साढ़े तीन पौण्ड मांस, साढ़े नौ पौण्ड आलू साढ़े बारह पौण्ड केलों तथा तरेपन अण्डों की शक्ति से अधिक शक्ति का अनुमान है।

महंगायी की दृष्टि से हिसाब लगाने वाले सज्जन दूध और मक्खन के मुकाबले में अन्य वस्तुएँ कितनी महंगी पड़ती हैं, हिसाब लगा कर मिलान करें।

अमेरिका आदि देशों ने दूध और घी का विवेचन भली प्रकार किया है। उन्होंने विचार विनिमय के उपरान्त school-milk योजना बनाई है। इङ्गलैण्ड ने भी Education Act (शिक्षा विधान) बनाया है। इस विधान के अधार पर प्रधानाध्यापक एवं अन्य अधिकारियों की स्वाकृति पर दुर्बल छात्रों को बिना किसी मूल्य के दूध दिया जाता है।

प्रारम्भ में पचास लाख विद्यार्थियों में से केवल तीन सहस्र विद्यार्थियों को ही दूध दिया गया। यद्यपि यह दूध मात्रा में पर्याप्त न था, परन्तु पुनरापि उनके स्वास्थ्य और मस्तिष्क को आशातीत लाभ पहुँचा है। इसलिये इस योजना का सवत्र स्वागत किया जा रहा है।

स्काटलैण्ड के मन्त्री श्री टाम नानस्टन के कथनानुसार सन् १६३६ ई० में इसकी संख्या में ३४ प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार दूध दिये जाने वाले विद्यार्थियों की संख्या ६७ प्रतिशत एवं इङ्गलैण्ड में ७८ प्रतिशत हो गयी थी।

भारत भी कभी गो पालन का प्रधान केन्द्र रहा है। भारत के गुरुकुल, विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय आदि सार्वजनिक शिक्षण संस्थाओं में गोपालन भी शिक्षा का अङ्ग समझा जाता था। अध्ययन के साथ ही साथ गोपालन भी सिखलाया जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी को यथेष्ठ दूध पीने के लिये दिया जाता था, कृषि वाणिज्य और गो पालन साधारणतः तत्कालीन भारत के वैश्य के प्रधान कर्म थे। गोपालन से स्वास्थ्य के लिये दूध तथा कृषि कर्म के लिये बढ़िया बैल मिल जाते थे। असाधारण मनुष्यों के यहां गोचर होते थे। गोचर में भारी संख्या में गायें निवास करती थीं। उन सबकी गणना करना साधारण काम न था आजकल के गणित के प्रोफ़ेसर के लिये तो बड़ा कठिन था, इसलिये उन गायों के स्वामियों के नाम से विशेष चिह्न लगा दिया जाता था। जिस प्रकार आजकल मेषपाल अपनी मेषों तथा अजापाल अपनी बकरियों पर चिह्न लगाते हैं, उस चिह से सरलता में मालूम हो जाता है कि यह अमुक स्वामी के गोचर की गाय है कहा जाता है कि धनञ्जय का गोचर दो सौ दश फीट चौड़ा तथा तीन मील लम्बा था। इस लम्ब चौड़े स्थान में धनञ्जय की गायें निवास करती थीं।

प्राचीन काल के गुरुकुल आज के स्कूल और कालेज आदि संस्थाओं की तरह न थे। उस समय गुरुकुल आदि विश्वविद्यालयों में ब्रह्मचारी को भर पेट गोदूध मिलता था, मक्खन मलाई तथा घृत का पूरा-पूरा प्रबन्ध होता था जिससे उसकी बुद्धि विकसित तथा शरीर परिपुष्ट हो जाता था। संसार उसकी योग्यता, प्रतिभा, एवं बलिष्ठता का लोहा मानता था वास्तव में यही ब्रह्मचारी मृत्युन्जय ने कहलाता था जिसमें सामने आने पर हाथी पर हाथी भी हटा देने का बल विद्यमान था परन्तु; आज घृत मलाई मक्खन की बात को छोड़िये। सूखा भोजन भी भर पेट सब भारतीय बालकों को नहीं मिल पाता जब कि अन्य शक्ति शाली देश School-milk योजना को प्रयोग में ला रहे हैं। परन्तु कृषिप्रधान कहा जाने वाला विशाल भारत देश दूसरे देशों का मुंह ताक रहा है। भारतवर्ष में अन्न की पैदावार में वृद्धि भी कैसे हो। भारत के सामने विभिन्न समस्यायें हैं, हल जोतने के लिये बैल नहीं मिलता। अच्छे बैल का मूल्य आज एक सहस्र रुपये से कम नहीं! प्राचीन समय में भारतीय कृषक हल जोतने, सवारी के ताङ्गे तथा भारवाहन के लिये पृथक-पृथक बैलों का जोड़ा रखते थे। साथ ही रथ रखने वालों के यहां एक जोड़ा बैल पृथक होते थे। इसलिये तीन-चार जोड़ी बैलों का रखना प्रत्येक कृपक के लिये साधारण बात थी परन्तु आज तो प्रत्येक कृपक के यहां एक जोड़ी बैल मिलना भी कठिन हो रहा है।

भारत का क्षेत्रफल पन्द्रह-सोलह लाख वर्ग मील से कम नहीं, यदि इस लम्बे चौड़े क्षेत्रफल में केवल अड़तीस करोड़ एकड़ भूमि कृषि के लिये उपयोगी समझी जाये और पाँच एकड़ भूमि के लिये एक जोड़ा बैल उपयुक्त समझे जायें तो सात करोड़ से अधिक जोड़ा बैलों की आवश्यकता है। भारवाहन सवारी, रथ तांगा आदि के लिये पृथक चाहिये। परन्तु उपलब्ध बैलों की संख्या लगभग तीन करोड़ होगी जिन से डेढ़ करोड़ हल चलाये जा सकते हैं।

भैंसों को भी बैलों की कमी के कारण हल और गाड़ी में चलाया जाता है परन्तु भैंसा सर्दी में सर्दी तथा गर्मी में गर्मी को सहन नहीं करता, इसलिये भैंसा बैल जैसा उपयोगी नहीं है, तथापि भैंसे को भी काम में लिया जाये तब भी समस्या ज्यों की त्यों बनी रहती है। क्योंकि कठिनता से एक करोड़ भैंसे भी हों तो ५० सहस्र हल चलाये जा सकते है। सब मिला कर दो करोड़ हल चलाये जा सकते हैं। और आवश्यकता है सात-आठ करोड़ हलों की। बैलों की कमी के कारण ही भूमि ठीक प्रकार जोती नहीं जाती। इसलिये भूमि अन्न उपजाने की सामर्थ्य रखते हुए भी अधिक अन्न नहीं उपजा पाती। हाली बैलों की न्यूनता ही अन्न की कमी का एकमात्र कारण है। इसलिये भारत में अन्न की पैदावार का माध्यम प्रति एकड़ साढ़े सात मन रह गया है जब कि विदेशों में—

फ्रांस में बीस मन, इङ्गलैण्ड में बत्तीस मन, जर्मन में तैतीस मन; डेनमार्क में छत्तीस मन, और बेलजियम में अड़तीस मन प्रति एकड़ पैदावार का माध्यम है।

यदि भारत में बैल पर्याप्त मात्रा में समुपलब्ध हो जायं तो पैदावार में वृद्धि का होना स्वाभाविक ही है। बैलों की संख्या में चार गुणा वृद्धि तो एक दम होजानी चाहिये। ऐसी अवस्था में भी गायों के गले पर छुरा चल रहा है और भारत से प्रति मिनट एक गाय बाहर विदेश को भेजी जाती है।

कृषिप्रधान देश भारत में अन्न और दूध के एक मात्र साधन गाय की ऐसी दुर्दशा को देखकर ही तो पंजाबकेसरी स्व० लाला लाजपतराय ने कहा था कि "जब से गाय और बैल बड़ी निष्ठुरता से हमारे देश में मारे जाने लगे हैं। तब से हमें यह भारी चिन्ता हो चली है कि हमारे बालक कैसे जीवित रहेगे?

सन् १९४३ई० के विवरण के अनुसार भारतीय वधशालाओं में मारी गयी गायों और भैंसों के कुल चमड़ों का योग चव्वन लाख सहस्र था। उनमें से १३ लाख तीस सहस्र चमड़े भैंसों के थे। इस प्रकार सन्१९४३ई० में चालीस लाख तिहत्तर सहस्र गाय मारी गयीं।

दरभंगा गोशाला सोसायटी के संचालक श्री धर्मपाल-सिंह जी के योगानुसार भारत में एक करोड़ बाईस लाख गायों का वध प्रतिवर्ष किया जाता है। इसके अनुसार लगभग चौंतीस सहस्र गायें प्रतिदिन छुरे के घाट उतारी जाती हैं।

भारत में समस्त पशुधन की संख्या लगभग अट्ठारह-उन्नीस करोड़ है इनमें गायों की संख्या तेरह करोड़ छियत्तर लाख पचास सहस्र आठसौ सत्तर है। उपरोक्त प्रकार से यदि वध चालू रहा तो दश बारह वर्ष के उपरान्त भारत में गाय ढूंढे न मिलेगी। और यह अवधि भी तभी है जब कि विदेशों के लिये गायों का भेजना तत्काल बन्द कर दिया जाये। यदि बन्द न किया गया तो और भी शीघ्र समाप्त होजाने की सम्भावना है। हां अपनी मृत्यु से मरने वाली गायों की संख्या यदि उपज से कम हुई तो और भी दश पांच वर्ष तक यह काम चलता रहेगा।

तीन छटांक प्रति मनुष्य माध्यम वाले देश में गायों की यह दशा है। अन्य देशों की ओर दृष्टि डालिये। छोटे से स्विटजरलैंड को ही लीजिये-इसकी जनसंख्या चालीस लाख है। जो भारत के एक नगर या जिले के बराबर भी नही। सन्१९३०ई० में इस छोटे में देश से कुल मिला कर १३३० गाये थीं। जो कि पांच वर्ष के स्वल्प से समय में अर्थात् १९०६ई० में बढ़कर १५ लाख हो गयीं।

आस्ट्रेलिया को लीजिए। वहां पर उन्नीसवीं शताब्दी में एक भी गाय न थी। सन्१९०६ में यहां पर आठ लाख गाय होगयीं।

अर्जन्टाईना में सन् १८०८ ई० में एक करोड़ बीस लाख गायें थीं, जो बढ़कर सन्१८९९ ई० में ढाई करोड़ होगयीं।

अमेरिका ने जहां शस्त्रास्त्र परमाणु बम आदि बनाने में अपूर्व उन्नति की है। वहाँ अमेरिका गोपालन में भी उन्नति कर रहा है। अमेरिका में अपने यहां गाये न थी। अमेरिका ने विदेशों से मोल लेकर गायमंगाना प्रारम्भ किया। नसल सुधार के कार्य को वेग से चलाया विविध प्रदर्शनियों से बढ़िया साण्डों को खरीद कर मंगवाया। चराने के लिये लम्बे-लम्बे विशाल मैदान गोचर भूमि के लिये छुड़वा दिये गये। इस प्रकार अमेरिका में गायों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। यहां पर इङ्गलैण्ड तथा योरूप की सभी प्रकार की गायें पाई जाती है।

जहां गोपालन में अन्य देश इतनी उन्नति कर रहे हैं जो कि कृषि प्रधान देश नहीं है वहां कृषि-प्रधान भारत को देखिये। भारत में सन् १९२० ई० में चार करोड़ तैतीस लाख साठ सहस्र गायें दूध देने वाली थीं। लगभग छत्तीस करोड़ जन संख्या वाले भारत में यह गायों की संख्या बहुत थोड़ी थी। परन्तु वह भी गिर कर सन् १९४० ई० में केवल तीन करोड़ चौरानवे लाख साठ सहस्र रह गई। नौ प्रतिशत गायें दूध देने वाली कम हो गईं।

बिना दूध देने वाली गायों के वध का तो अनुमान ही लगाया जा सकता है। भारत में ९ प्रतिशत दूध देने वाली गायें कम हो गईं, जब कि स्विट्जरलैण्ड में ५ वर्ष में १३४० से बढ़ कर १५ लाख हो गईं। इसी प्रकार जर्मनी, इङ्गलैण्ड, दक्षिण अफ्रीका में क्रम से पांच, आठ चौदह प्रतिशत केवल पांच वर्ष के स्वल्प से समय में सन् १९३५ ई० से सन् १९४० ई० तक बढ़ गईं।

यह घटोतरी तो भारत में लड़ाई से पहले की है। लड़ाई के समय में तो और भी अधिक घटोतरी हुई होगी।

भारतीय वैद्यक शास्त्र में गाय के दूध की जितनी महिमा गाई गई है, उतनी अन्य पदार्थों की नहीं वास्तव में गाय के दूध से बढ़कर कोई अन्य वस्तु है ही नहीं। प्राचीन वैद्यक विशेषज्ञों ने इस को अमृत नाम से पुकारा है। गाय का दूध माता के दूध के समान हितकारी है। जिन माताओं का दूध नहीं उतरता अथवा कम उतरता है, जो लोग धाय का प्रबन्ध नहीं कर सकते और जिन नवजात शिशुओं की माताएं मर जाती हैं उन सबका एक मात्र आश्रय गाय का दूध ही है। इसलिये भारतीय भक्त जन गौ को माता कह कर पुकारते हैं।

गाय के दूध की कमी के कारण दुग्ध-मुहे बच्चों का पालन-पोषण कठिन हो रहा है। नितरां दूध के अभाव में अकाल मृत्यु का ग्रास होना पड़ रहा है। भारत में एक वर्ष तक की आयु वाले बच्चे २६०.७ प्रति सहस्र मर जाते है। जबकि दूध सम्पन्न अन्य देशों में कम अकाल मृत्युएं होती हैं। उनमें से न्युजीलैण्ड में ३२ हालैंड में ५०, स्वीडन में १०२, डेनमार्क में १३६. स्काटलैण्ड में १७२, नारवे में १९१ प्रति सहस्र मृत्युएं होती हैं।

दूध ही मानव जीवन का एक मात्र सहारा है। इसीलिये भगवान् वेद में सुन्दर शब्दावली में कहा है कि—

"गौ मे माता वृषभः पिता मे"

गाय मेरी माता और बैल मेरा पिता है क्योंकि गाय पीने के लिये दूध देती है। करोड़ों दुग्ध-मुहे बच्चों को कराल काल के गाल में जाने से बचाती है। और वृषभ बैल परिश्रम करके अन्न उपजाता है। और सब के उदर का पोषण करता है। अथर्व वेद—

माहिंसींपुरूषान् पशूश्च"

अर्थात् "पुरुष और पशु को न मार" पशु को न मारने का अनुपम आदेश दिया है।

जब साधारण पशु के हनन को मनुष्य कोटि का हनन वेद ने कहा है, तब सब का पालन पोषण करने वाली गाय के मारने का निर्देश किसी भी अवस्था में नहीं हो सकता। वेद ने सर्वत्र गौः को 'अघ्न्या' कहा है

जब भारत में गाय भैंस बकरी आदि के दूध की आय इकसठ करोड़ अट्ठानवे लाख मन है तब प्रति मनुष्य लगभग तीन छटांक के पड़ता है। और अब तो सम्भवतः इससे भी कम रह गया है, क्योंकि दूध देने वाले पशु प्रतिदिन कम होते जा रहे हैं।

आधुनिक डाक्टर भी दूध की उपयोगिता का अनुभव कर रहे हैं। उनका यह अभिमत होता जा रहा है कि दुध बालक के लिये उपयुक्त आधार है। प्राचीन काल में भारत दुग्ध-धनी कहलाता था भले ही दूध की नहरें और नदियां न बहती हों परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि दूध यथेच्छ पीने के लिये मिलता था। उस समय भारतीय

इतना दूध पीते थे कि जिसकी आजकल कल्पना भी नहीं कर सकते। वैद्यक शास्त्र के अनुसार दूध का कल्प किया जाता था, जो दुर्बल मनुष्यों को बलिष्ठ बना देता था।

यदि आज भारत में कनाडा की बराबर भी दूध प्रत्येक भारतीय को दिया जाये जो कि भारत की पुरातन दृष्टि से बहुत थोड़ा है, तो उसे नव गुणा कर देना चाहिये। इसका अभिप्राय यह हुआ कि दूध देने वाले पशुओं की संख्या को तत्काल नौ गुणा कर देना चाहिये। और यदि गाय का ही दूध पिलाना है। साथ ही गाय भैंस तथा बकरी के दूध की उपज बराबर ही मान लीजिये। तो गौओं की संख्या को नौ गुणे का तीन गुणा कर देना चाहिये अर्थात् गायों की सामयिक संख्या को सत्ताईस गुणा कर देना चाहियें।

यदि गायों की सामयिक संख्या सत्ताईस गुणा न करके केवल नौ गुणा ही किया जाये तो भी संख्या में पर्याप्त वृद्धि करनी पड़ेगी यदि इस समय दूध देने वाली गायों की संख्या ४ करोड़ मान ली जाये तो एक दम ४ × ९ = ३६ करोड़ गायें उलब्ध होनी चाहियें।

"प्रत्येक मनुष्य को अठारह औंस दूध अवश्य मिलना चाहिये" डाक्टरों के इस कथनानुसार १८ औंस प्रत्येक मानव को दुध दिया जाये तो गायों की सामयिक संख्या को तिगुणा कर देना चाहिये अर्थात् ४ × ३ = १२ करोड़ गायें तो दूध देने वाली इस समय समुपलब्ध होनी चाहिये।

इस प्रकार गायों की वृद्धि और नस्ल सुधार का कार्य बड़े वेग से होना चाहिये। हाँ यदि "मिनिस्ट्री," आफ-हेल्थ 'एडवायजरी समिति इङ्गलैण्ड' की सम्मति के अनुसार प्रत्येक को डेढ़ पाव दूध दिया जाये तो गायों की संख्या को ड्योढा कर देना चाहिए। अर्थात् ६ करोड़ गायें हो जानी चाहिऍं।

"आईने-अकबरी" मे गाय के दूध का माध्यम प्रतिदिन बीस सेर मिलता है। यदि गायों की सेवा की जाये तो कोई भी कारण नहीं जो आज भी बीस सेर माध्यम न हो सके।

अब भी कतिपय प्रकार की गायें २० सेर दूध देती हैं। वैसे आज भारत में गाय के दूध की वार्षिक आय का माध्यम छः मन बाईस सेर छः छटांक है। परन्तु विदेशों में प्रति गाय के दूध की आय का वार्षिक माध्यम जर्मनी, इंग्लैण्ड, डेनमार्क में क्रम से ६६ मन २२ सेर ८ छटांक, ९९ मन २८ सेर, तथा ८७ मन २२ सेर ८ छ० हैं। इन तीन देशों में सबसे कम जर्मनी का है। पुनरपि भारत से तो ११ गुणा है। परन्तु यह कोई निराशा की बात नहीं है। विदेशों का इतिहास देखने पर मालूम होगा कि डेनमार्क में जहां पर गाय के दूध की आय का माध्यम सबसे अधिक है, वहां पर इतना अधिक दूध एक दिन के परिश्रम के परिणाम स्वरूप नहीं हो गया है। उन्होंने पर्याप्त परिश्रम गोपालन के लिये किया है। सन् १९०० में वहां गाय के दूध की आय का माध्य ४८५० पौण्ड वार्षिक था परन्तु वहाँ के निवासी गोसेवा और नस्ल सुधार के कार्य के पीछे पड़ गये। उसका परिणाम यह हुआ कि केवल चौंतीस वर्ष के उपरान्त सन् १९३४ ई० में प्रत्येक गाय के दूध का माध्यम ७०५५ पौण्ड हो गया अर्थात् द्वि गुणे के लगभग हो गया।

इसी प्रकार लैटविया एक छोटा सा देश है। वहाँ पर सन् १९३० से सन् १९३५ ई० तक पाञ्च वर्ष के स्वल्प से समय में दूध की आय का माध्यम ३० प्रतिशत बढ़ गया। इंग्लैण्ड में भी चालीस वर्षों में ही दूध की आय का माध्यम द्विगुणा हो गया है। यदि प्रयत्न किया जाय तो भारत में भी थोड़े से समय में आशातीत सफलता मिल सकती है।

प्राचीन भारत में ग्राम पञ्चायत बढ़िया गाय के होनहार और बलिष्ठ बछड़े को ही साण्ड छोड़ने के लिये आज्ञा प्रदान करती थी। क्योंकि—

"वृषोत्सर्गादृते नान्यत् पुण्यमस्ति महीतले"

अर्थात् अच्छे बैल को साण्ड छोड़ने का पृथ्वी पर बहुत भारी पुण्य है इसके अतिरिक्त दूसरा पुण्य कर्म नहीं है, क्योंकि जो बैल दस-पन्द्रह वर्ष तक गाड़ी और हल में चलकर अपनी कमाई खिलाये उसको साण्ड छोड़ना कोई कम त्याग नहीं है? इसलिये पुण्य कर्म कहा गया है। परन्तु आज स्वार्थ वश मनुष्य इतना त्याग करने को तैयार नहीं।

आजकल तो जो बछड़े खेती, हल तथा गाड़ी के काम नहीं आ सकते, उन दुर्बल बछड़ों को सारड छोड़ा जाता है। ग्राम पञ्चायत की देख भाल न होने से रद्दी से रद्दी बच्छड़ों का कान काट कर छोड़ दिया जाता है। इसलिये गायों की नस्ल खराब होती जा रही है।

गोचर भूमि

भारत में गायों की गोचर भूमि बहुत कम है। सृष्टि के आदि में भगवान् मनु महाराज ने समस्त भूमि का दशवां भाग गोचर भूमि के रूप में छोड़ने का निर्देश किया है। साथ ही महामुनि याज्ञवल्क्य ने अपने स्मृति-ग्रन्थ में कहा है कि--

"धनुशतं परिणाह ग्रामे क्षेत्रान्तरं भवेत्।
द्वे शते खर्वरस्य स्यान्नगरस्य चतुः शतम् २।१६७

ग्राम के चारों ओर दोसौ दोसौ धनुष और नगर को चारों ओर चार सौ चार सौ धनुष भूमि गाय आदि पशुओं के चरने के लिये छोड़ देनी चाहिये।

इसी प्रकार महाराज मनु ने भी कहा है कि—

"धनुःशतं परिहारो ग्रामस्य स्यात् समन्ततः
शम्यायां वस्त्रयो वापि त्रिगुणो नगरस्य तु॥
मनु-८-२३०

ग्राम के समीप चारों ओर सौ धनुष अर्थात् दो सौ गज अथवा जितनी दूरी तक यष्टिका को तीन बार फैंका जा सके उतनी दूरी तक भूमि को चराने के लिये छोड़ देना चाहिये। इस छोड़ी हुई गोचर भूमि के समीप कृषि उपयोगी भूमि के अन्नसम्पन्नता के विषय में भगवान् मनु ने कहा है कि—

तत्रापरिवृतं धान्यं विहिंस्युः पशवो यदि।
न तत्र प्रणयेद् दण्डं नृपतिः पशुरक्षिणाम्
मनु-८-२३९

उस परिहरित भूमि के पास वाले बाड़ रहित खुले क्षेत्र को यदि पशु चर जांये तो पशुरक्षकों को राजा किसी प्रकार का दण्ड न दे। इतना ही नहीं बाड़ के विषय में भी भगवान् मनु ने कहा है कि—

वृत्तिं तत्र प्रकुर्वीत यांमुष्ट्रो न विलोकयेत
छिद्रं च वारयेत् सर्वं श्वसूकर मुखकयेनुगम्।
मनु ८।२३९

उस कृषि वाले क्षेत्र के ऊपर चारों ओर इतनी ऊंची बाड़ करे जिसके ऊपर से ऊँट-कृषि को न देख सके। वह बाड़ गहरी होनी चाहिये और वह भी इतनी गहरी कि जिसमें कुत्ता सूकर के मुख भी न समा सकें।

इस प्रकार गाय आदि पशुओं को चराने के लिये गोचर भूमि की व्यवस्था भारतीय विधान में थी। आज भी ऐसा होना चाहिये। अन्न की कमी में कैसे छोड़ी जाये? ऐसा प्रश्न होगा। यदि दूध घी की वृद्धि हो गई तो अन्न का व्यय कम हो जायेगा।

भारत बड़ा भारी विशाल देश है। संसार की समस्त जन संख्या का छठा भाग भारत में निवास करता है। और समस्त संसार की पशु संख्या का तीसरा भाग भारत में विद्यमान है। इसमें लगभग एक अरब सोलह करोड़ एकड़ भूमि है। इस समस्त भूमि में से लगभग अड़तीस करोड़ एकड़ भूमि ही कृषि के लिये उपयोगी है।

सोलह सतरह करोड़ एकड़ भूमि में साल के वन हैं और कुछ ऊसर पड़ी है। शेष भूमि तालाब, नदी, रेल की सड़क नहरें, साधारण सड़कें, तार ग्राम, नगर कूप, आदि से घिरी है। इस में से कुछ सत्तर अस्सी लाख एकड़ भूमि गोचर भूमि के लिये भी उपयोग में आती ही होगी।

भारत में लग भग १३ करोड़ गो-वंश, साढ़े चार करोड़ के लग भग भैंस, वंश है। इसी प्रकार घोड़े, गधे, खच्चर ऊँट, भेड़, बकरी आदि को मिला कर पर्याप्त संख्या पशुओं की हो जायेगी। इनमें से ऊँट तथा भेड़ और बकरियों को केवल पात पतोर पर छोड़ दिया जाये, तब भी उन्नीस बीस करोड़ पशु संख्या तो चरने वाले पशुओं की होनी ही चाहिये। इसके लिये सत्तर अस्सी लाख एकड़ भूमि बहुत थोड़ी है प्रत्येक एकड़ भूमि में २९ या ३० पशु हुए।

अमेरिका ने सन् १९११ ई० में एक अरब एकड़ भूमि से भी अधिक भूमि के लिये छोड़ी जो समस्त भूमि के आधे से अधिक है।

न्युजीलैण्ड में दो करोड़ बहत्तर लाख एकड़ भूमि गायों के चरने के लिये छोड़ी हुए हैं जब कि केवल दो करोड़ अस्सी लाख भूमि में ही कृषि होती है। शेष एक करोड़ बीस लाख एकड़ से ऊपर भूमि बन्जर नदी तालाब आदि से घिरी है। जर्मनी में दो करोड़ चौदह लाख भूमि गोचर तथा ६ करोड़ ७० लाख एकड़ भूमि में कृषि होती है।

ग्रेट ब्रिटेन ने भी गोचर भूमि की ओर ध्यान दिया है वहां पर २३ लाख एकड़ भूमि गोचर है और ४६ लाख एकड़ भूमि में कृषि होती है। कुल ७५ लाख एकड़ भूमि है जिस में ६ लाख अन्य वस्तुओं से घिरी है।

अमेरिका में गोचर भूमि के अतिरिक्त चारा भी उपजाया जाता है। सन् १६१६ ई० में चालीस लाख एकड़ भूमि में चारा उपजाया गया था।

भारत में लगभग ग्यारह लाख एकड़ भूमि में तम्बाकू, सात लाख एकड़ भूमि में चाय, लगभग चौंतीस लाख एकड़ भूमि में जूट तथा चालीस सहस्र एकड़ भूमि में अफ्यूम, अस्सी नब्बे सहस्र एकड़ भूमि में कौफी, तथा बीस पच्चीस सहस्र एकड़ भूमि से अधिक भूमि भी इसी प्रकार की नशीली वस्तुओं से घिरी हुई है। यह उपरोक्त नशीली वस्तु उत्पन्न करने वाली पचास साठ लाख एकड़ भूमि गायें चराने के लिये गोचर भूमि के रूप में छोड़ दी जाये तो सचमुच बड़ा ही उपकार हो।

प्राचीन समय में कृषक लोग अपने-अपने क्षेत्र की बाह्यभूमि को बहुत चौड़ा छोड़ा करते थे कारण यह था कि मेंड पर घास उत्पन्न हो जाती थी और वह पशुओं को समय-समय पर काट कर खिलाई जाती थी। गोचर भूमि भी पर्याप्त मात्रा में विद्यमान थी परन्तु आजकल के कृषक तो अपने खेतों की मेंडों को भी जोते हुए हैं, यद्यपि आवागमन आदि के कारण मेंड वाली भूमि में कुछ उपजता भी नहीं है। परन्तु पुनरपि मेंडों को भी नहीं छोड़ते, जब कि गोचर भूमि का अभाव है।

साथ ही अमेरिका में प्रत्येक पशु के लिये १२ एकड़ न्यूजीलैण्ड में ८ एकड़, जापान में ७ एकड़ तथा इङ्गलैण्ड में ३ एकड़ भूमि चरने के लिये छोड़ी हुई है

दाबघास

गोचर भूमि के अतिरिक्त अमेरिका आदि देशों में दाब घास की प्रथा प्रचलित है। वहां पर हरे चारे को भूमि में दबा दिया जाता है। जो सात आठ मास तक भूमि के अन्दर रहता है। जब फस्ल का समय नहीं होता और चारे की महती आवश्यकता होती है, तो उस घास को निकाल निकाल कर खिलाते हैं। इस दाबघास का बड़ा महत्व है। पशु का शरीर हृष्ट पुष्ट और बलिष्ठ हो जाता है। भारत में भी दाबघास की यह प्रथा प्रचलित होनी चाहिये। पशुओं को अपूर्व लाभ होगा और चारे की बढ़ती हुई महंगायी घट जायेगी।

खाद—खाद कृषि के लिये बड़ा ही उपयोगी होता है। इसकी उपयोगिता किसी से छिपी नहीं है। इसके द्वारा ऊसर भूमि भी उपजाऊ बन जाती है। देखा जाये तो सबसे बढ़िया खाद गाय आदि पशुओं के गोबर का होता है। परन्तु भारतीय दौर्भाग्य से गोबर के उपले पथवाते हैं जिनको इन्धन के रूप में जलाने के काम में लिया जाता है। जबकि अन्य समृद्धि-सम्पन्न देश गोबर को भूमि में डाल कर अधिक अन्न उत्पन्न करते हैं। भारत को भी इससे आशातीत लाभ हो सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि गोबर का खाद तैयार किया जाये।

"रोमांस आफ दी काऊ" नाम की पुस्तक में श्री डी. एच. ज्ञानी ने बतलाया है कि यदि यह मान लिया जाये कि लगभग पचास करोड़ एकड़ भूमि में खेती होती है, तो उसका केवल दशवां भाग ही खलिहान की खाद खाता है। ऐसी अवस्था में यदि शेष ४५ करोड़ एकड़ भूमिभी खलियान की खादपा सके तो लगभग ४५×५=२२५ करोड़ रुपये का लाभ होगा। परन्तु इसके लिये पशुओं की आवश्यकता बहुत बढ़ जायेगी। यदि प्रत्येक पशु की खाद का माध्यम ५ टन भी कम से कम मान लें तो साम्प्रतम् पचास करोड़ पशुओं की तत्काल आवश्यकता है। जिससे समस्त कृषि उपयोगी भूमि को खाद मिल सके। परन्तु भारत में कठिनता से एक तिहाई ही पशु होंगे। इसलिये आवश्यकता है पशुओं के बढ़ाने की। परन्तु भारत में उनकी गर्दनों पर कुल्हाड़ा चलाया जा रहा है। पुनः कैसे काम चलेगा ? प्रभु ही रक्षक है।

श्रीयुत डी. एच. ज्ञानी ने आर्थिक दृष्टि से गाय की उपयोगिता पर गहरी दृष्टि से विचार किया है। उन्होंने "रामांस आफ दी काऊ" नाम की पुस्तक में बंगलौर की जिल नाम की संकर गायके विषय में निम्न ब्यौरा दिया है। इस जिल नाम की संकर गाय ने साढ़े उन्तीस वर्ष के जीवन काल में एक लाख चौवन सहस्र सात सौ उन्पचास पौण्ड दूध दिया। इस समय में ७ बच्छड़े और दश बछड़ियां इसने प्रदान कीं। उस गायमें ऐरशायर और हरयाणा का मेल था। दश वर्ष तक दिये हुए उसके दूध का माध्यम प्रति वर्ष ९५४४ पौण्ड रहा। प्रतिवर्ष २९५ दिन तक बिसकती न थी और एक बियांतमें उसने अधिक से अधिक १२००२ पौण्ड दूध दिया। सबके मूल्य का अनुमान लगाने पर ९७३६) रुपये का दूध दिया और २७०० रु० के बच्चे तथा १३६५रु०की खाद उसने दी। जिसका योग तेरह सहस्र रु० से भी अधिक होता है।

यद्यपि जिल नाम की संकर गाय का यह योग पाश्चात्य देशों की दृष्टि में बहुत थोड़ा है। जो अमेरिका के माईनिया पोलिस माइनेसोटा की एक होल्स्टाइन नस्ल की लेडी प्राइट पोस्याक ल्युंकजी नामक गाय वर्ष भर में ३५६२५ पौण्ड दूध तथा १४९३ पौण्ड मक्खन देती है। पुनरपि ६ मन २२ सेर ८ छटांक वार्षिक माध्यम वाले भारत में यह प्रशंसनीय कहा जा सकता है। और इससे उत्तरोत्तर वृद्धि की आशा की जा सकती है। इसी प्रकार भारत बम्बई फार्म की मघो नाम की गाय ने ३६२ दिन में ६४२३ रतल दूध दिया जो प्रतिदिन १९ रतल हुआ।

करनाल के आई. ए. आर. इन्स्टीटयूट की कुमार नाम की गाय ने ३१३ दिनों में ८७३४ रतल दूध दिया जो प्रति दिन २८ रतल हुआ।

गवर्नमेंट एक्सपेरिमेंटल फार्म, कांके 'रांची' बिहार की माधुरी गाय ने ३०४ दिनों में ७१९९ रतल दूध दिया जो लगभग साढ़े तेईस रतल प्रतिदिन पड़ता है। यदि गायों का अच्छी प्रकार पालन पोषण किया जाये तो पश्चिमी देशों की भांति भारत में अधिक दूध उत्पन्न हो सकता है।

गोरक्षा भारत का आर्थिक प्रश्न है। यदि भारत को शक्ति-शाली और सुख सम्पन्न बनाना है, तो कृषि उपयोगी तथा दूध तथा खाद देने वाले प्राणियों का वध बन्द किया जाये।

इसी बात को डा० एच० मान ने सन् १९०० ई. में कहा था कि 'भारत में पशुधन जितना कमजोर होगा राष्ट्र उतना ही निर्बल हो जायेगा।" इसलिये पशुधन पर ध्यान दिया जाये।

लार्ड कर्जन ने सन् १९०३ में अपने सरकारी कागजात में लिखा था कि पशुओं की दृष्टि से भारत पिछड़ता जा रहा है। कर्नल ई० डबल्यू० आलवर ने सन् १९१९ में कहा था कि हम भविष्य में दूध कहां से प्राप्त करेंगे? उस महत्वपूर्ण प्रश्न पर आज विचार करने की आवश्यकता है। क्योंकि यह बात सबको विदित हो गयी है कि भारत में दूध देने वाले पशुओं का शीघ्रता से ह्रास होता जा रहा है।

कृषि प्रधान भारत देश में गाय की महती उपयोगिता को देखते हुए महर्षि च्यवन महाराज ने नहुष को कहा था कि—

"गोभिस्तुल्यं न पश्यामिधनं किंचिदिहाच्युत"

हे राजन् इस जगतीतल पर गाय के समान मैं अन्य कोई धन नहीं देखता।

भीष्मपितामह ने महाराज युधिष्ठिर से कहा था कि—

पयसा हविषा दध्ना शकृता चाथ कर्मणा।
अस्थिभिश्चोप कुर्वन्ति श्रृङ्गैर्बालैश्च भारत॥

अनु० अ० ३६।३९

हे धर्मराज युधिष्ठिर गायें। जीवित रहती हुई अपने दूध घी और दही से हमको पुष्ट करती हैं, इतना ही नहीं यह गोबर से भी हमारा उपकार करती है। और जीते जी ही क्या? मरने के उपरान्त भी अपने चर्म, हड्डी, सींगों तथा केशों से भी हमारा उपकार करते हैं। इससे अधिक उपकार क्या होगा?

नासां शीतातपौ स्यातां सदैताः कर्म कुर्वते।
न वर्ष विषमं वापि दुःखमासां भवत्युत॥

महा-अनु० अ० ९९।४०

यह गायें सर्दी-गर्मी का अनुभव न करती हुई सदा हमारे ही लिये जुटी रहती हैं । यहां तक कि यह वर्षा के कष्ट का भी अनुभव नहीं करतीं । हमारे लिये सदा कल्याणकारिणी ही है ।

"गावश्चान्नं संजनयन्ति लोके" गाय ही संसार में अन्न को उत्पन्न करती हैं । इसी प्रकार पांचवां वेद कहलाने वाला भारतीय संस्कृति का प्रतीक महाभारत स्थान स्थान पर गायों के महत्व को दर्शाता है ।

भारत में योगेश्वर महाराज की राजनीति में गाय का विशेष स्थान था । विश्व शान्ति और विश्व कल्याण की भावना के धनी राष्ट्र निर्माता महर्षि दयानन्द जी महाराज के ध्यान का गाय आधार रही । यही राष्ट्रपिता बापू के चर्खे का सहारा रही । गोरक्षा के प्रश्न को महात्मा गान्धी ने स्वराज्य से भी महत्वपूर्ण बतलाया । गाय के वध को देख कर गाय का दूध न पीने का प्रण किया । महर्षि दयानन्द का आत्मा गोबध को देख कर रो उठा । उन्होंने अंग्रेज काल में भी गोवध के विपरीत आवाज उठाई । जन-जागृति की गोकरुणानिधि पुस्तक को लिखा । भारत से करोड़ों हस्ताक्षर करा एक मेमोरेण्डम श्रीमती महारानी विक्टोरिया के पास भेजने की योजना की । परन्तु दौर्भाग्य से दैव ने साथ न दिया, उनका शरीर पूरा हो गया ।

भारत १५ अगस्त सन् १९४७ ई० को स्वतन्त्र होगया । गाय की रक्षा के प्रश्न पर अब तक विचार हो जाना चाहिये था और गोवध बन्द कभी का हो जाना चाहिये था अंग्रेज काल में तो हम अंग्रेजों को कोसते हुए न थकते थे । परन्तु अंग्रेज को गये हुए छः वर्ष पूरे व्यतीत हो चुके । जिन लीगी मुसलमानों के बल पर अंग्रेज सरकार गोवध बन्द न करती थी उन्हे पाकिस्तान गये बहुत समय होगया अब तो राष्ट्रिय मुसलमान ही शेष है जो गोबध निषेध के सदा से समर्थक रहे हैं ।

"न तो कुरान और न अरब की प्रथा ही गाय की कुर्बानी का समर्थन करती है" देश भक्त स्व० हकीम अजमलखाँ के इन अनुपम शब्दों को ध्यान में रखते हुए भारतवासी मुसलमान धर्म के घृणात्मक कपोल कल्पित पचड़े में न पड़ेंगे । वह भारत के सहायक के नाते भारत की सम्पन्नता में पूरा सहयोग देकर देश भक्ति का परिचय देंगे ।

अब समय आगया है कि प्रत्येक भारतवासी को गोवध निषेध के लिए आन्दोलन करना चाहिये नहीं तो देश-शरीरिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़ जायेगा गोरक्षासे ही भारत को उन्नति की ओर लेजाया जासकेगा

एक मुसलमान फकीर गोप्यारा शाह ने लिखा है कि "गाय मेरी माता है । हम गाय को पालते स्वार्थ के लिये तथा दूध के लिये है परन्तु यह सच्चा स्नेह नहीं है यदि गाय से हृदय से प्रेम किया जाये तो संसार भर के ऐशो आराम घर में भर जायेंगे मैं जहाँ जाता हूँ हिन्दू मुसलमानों को गाय के प्रेम का पाठ पढाता हूँ । भारत को फिर से सोने की चिड़िया बनाना चाहते हो तो गाय की रक्षा करनी होगी । क्या हिन्दू क्या मुसलमान प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य हैं कि गोमाता से प्रेम करे । मैं बलपूर्वक कहना चाहता हूँ कि जो गाय का पालन सच्चे विश्वास के साथ करेगा । उसे परमात्मा सब सुख सामग्री देगा "

यहूदी सुधारकों ने पशुओं को राष्ट्र की उन्नति का एक मात्र साधन माना है । श्री यश्या ने कहा है कि जो बैल की हत्या करता है । वह मनुष्य की हत्या करता है ।

सुर अत एहज में लिखा है कि खुदा कुर्बानी में जानवर का मांस और लहू नहीं चाहता । वह केवल तुम्हारी कुर्बानी चाहता है ।

गाय तो गाय ही है गाय नाम से ही हृदय में दया की भावना जागृत हो उठती है । कृषि शास्त्र विशेषज्ञ श्री सल्फ० ए० हेन ने लिखा है कि—

Where the cow is kept and cared for civiligation advanees, lands grow richer homes growe dbts grow fewer

Thecow is one of the greatest blessings to the human race अर्थात् जहां गोपालन होता है । गाय की सेवा होती है वहां सभ्यता का विकास होता है । पृथवी सस्य श्यामला हरी भरी और उपजाऊ होती है । घर समृद्ध और सम्पन्न होते हैं । और ऋण कम होता है । गाय मान वीयजगत के लिये-प्रभु की देन है ।

गोदुग्ध अमृत है

(लेखक—श्री० आचार्य भगवान्देव जी गुरुकुल झज्जर)

अमृत नाम की वस्तु इस संसार में कौनसी है। इस की खोज आदि सृष्टि से ही चली आती है। प्रत्येक प्राणी की यह इच्छा है कि अमृत नाम की वस्तु मुझे मिल जाये जिसका पान करके मैं सब प्रकार के दु:खों से छुटकारा पा जाऊं। भयानक मृत्यु को जीत कर अमर पद की प्राप्ति करूं। "मृत्योर्माऽमृतं गमय" मुझे मृत्यु से (छुड़ाकर) अमृत की ओर ले चलो वा अमृत को प्राप्त करावो। यह प्रार्थना भी इसी इच्छा का अनुरूप है। "देवाऽमृतमानशानास्तृतीये धामन्यध्यैरयन्त" देव (विद्वान्) लोग अमृत को प्राप्त करते वा उपभोग करते हुये स्वतन्त्रता से अधिकार पूर्वक तृतीय धाम (ईश्वर) में विचरते हैं। ":अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते" कर्म द्वारा मृत्यु को जीत कर विद्या (ज्ञान) के द्वारा अमृत को प्राप्त करता है। जिस अमृत का वर्णन इन वेद मन्त्रों में आया है वह तो निश्चय से जगत् पिता परमात्मा ओ३म् की प्राप्ति के विना मिलता नहीं क्योंकि—"तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय" उसी ईश्वर को जानकर वा प्राप्त करके मृत्यु को जीवात्मा जीत सकता है, उसकी प्राप्ति का दूसरा मार्ग नहीं है। यह अमृत वा अमर पद तो जन्म जन्मान्तर की ब्रह्मचर्य साधना, पुनीत तपस्या तथा ईश्वर भक्ति आदि अनेक साधनों से किसी विरले महात्मा को मिलता है किन्तु इस संसार में भी अमृत है जो थोड़े ही परिश्रम से प्रत्येक मनुष्य प्राप्त कर सकता है। वह क्या है—

"अमृतं वै गवां क्षीरमित्याह त्रिदशाधिपः।
तस्माद्ददाति यो धेनुममृतं स प्रयच्छति॥

(महा० अनु० अ० ६६ श्लोक ४६)

गौओं का दूध ही निश्चय से अमृत है यह देव राज इन्द्र ने कहा है अतः जो धेनु (दूध देने वाली गाय) दान देता है वह अमृत का ही दान देता है।

आयुर्वेद के ग्रन्थ राजनिघण्टु आदि में पीयूष और अमृत दोनों नाम गोदुग्ध के लिखे हैं। अथर्ववेद काण्ड ९ सूक्त ४ में साण्ड की प्रशंसा करते हुये आया है--‘प्रतिधुक्पीयूषः” प्रतिदिन अमृत रूपी गोदुग्ध का दोहन करता है। इन शास्त्रीय प्रमाणों से सिद्ध होता है कि यदि संसार में कोई अमृत है तो वह निश्चय से गौदुग्ध ही है।

प्राचीन ऋषियों ने गुणों के अनुसार ही दूध के अनेक नाम रखे हैं।

दूध के नाम—

दुग्धं क्षीरं पयः स्वादु रसायनसमाश्रयम्।
सौम्यं प्रस्रवणं स्तन्यं वारिसात्म्यं च जीवितम्।

(धन्वन्तरीयनिघण्टुः)

क्षीरं पीयूषमूधस्यं दुग्धं स्तन्यं पयोऽमृतम्।

(राजनिघण्टुः)

दुग्ध, क्षीर, पय, स्वादु, रसायन समाश्रय, सौम्य, प्रस्रवण, स्तन्य, वारिसात्म्य, जीवित, पीयूष ऊधस्य, और अमृत। अन्य निघण्टुओं में बालजीवन, दोहज, अवदोह तथा दोहापनय इत्यादि अन्य नाम भी लिखे हैं।

हमारे शास्त्रकारों ने दूध के नामों में ही एक विचित्र रहस्य भर दिया है, इसके नाम ही इसके गुणों का गान करते हैं। बछड़े और अपने स्वामी के प्रेम के कारण गोमाता का दूध ऊध (ओड़ा) में भर जाता है, ऊध में रहने के कारण ही ऊधस्य

इसका नाम पड़ा है। दूध गौ आदि पशुओं को दोहकर निकाला जाता है अतः इसके नाम दुग्ध दोहज, अवदोह आदि हैं। अत्यन्त मधुर और रुचिकर होने से इसे स्वादु कहते हैं। पीया जाता है तथा शरीर को बढ़ाता है अतः दूध को पय कहते हैं। क्षरित होकर प्राप्त होता है इस लिये इसका नाम क्षीर और प्रस्रवण है। सर्वप्रिय और सात्विक होने से इसका नाम सौम्य है। स्तनों के द्वारा प्राप्त होता है इस लिये इसका नाम स्तन्य है तथा जिन माताओं के स्तनों में दूध नहीं होता है उनके स्तनों में गोदुग्ध के सेवन से दूध बढ़ता है अतः इसका नाम स्तन्य है। यह आबाल वृद्ध वनिता सबको जीवन देने वाला है इसलिये इसका नाम जीवन है। जिन बालकों की मातायें दौर्भाग्यवश मर जाती हैं उन्हें गो दुग्ध ही पिलाकर पाला जाता है अथवा माता के दूध को छोड़कर यदि कोई दूध बालकों को पुष्ट करने वाला वा जीवन देने वाला है तो वह गो दुग्ध ही है इसलिये इसका नाम बाल जीवन भी पड़ गया है। गोदुग्ध के सेवन से मनुष्य की आयु बढ़ती है वह मृत्यु को आगे धकेल कर अमृत की ओर चलता है। इसके सेवन से मनुष्य दीर्घ जीवी होता है।

यथा सर्वौषधीसारं क्षीरोदे मथितं पुरा।
सम्भूतममृत दिव्यममरा येन देवताः॥
तथा सर्वौषधीसारं गवादीनां तु कुक्षिषु।
क्षीरमुत्पाद्यते तस्मात् कारणादमृतोपमम्॥

जिस प्रकार पौराणिक भाई यह मानते हैं कि क्षीरसागर को मथ कर सब औषधियां के सार अमृत की प्राप्ति की गई और उस अमृत का पान देवराज इन्द्र तथा सब देवताओं ने किया। यह तो एक अलंकार ही समझना चाहिये। गोमाता को छोड़कर किसी अन्य क्षीरसागर की कल्पना करना कोई बुद्धिमत्ता नहीं दिखाई देती। यथार्थ में गोमाता ही क्षीरसागर है। वह जब सब औषधियों का भक्षण करती है, उनका सार रूप जो रस बनता है उस से ही क्षीर रूपी अमृत की उत्पत्ति होती है। सब औषधियों का सार होने से ही इसको अमृत या पीयूष कहा गया है।

गोदुग्ध सब गुणों की खान वा भण्डार है। चरक शास्त्र में गोदुग्ध के गुण निम्न प्रकार से लिखे हैं:—

गोदुग्ध के मुख्य दश गुण

स्वादु शीतं मृदु स्निग्धं बहलं श्लक्ष्णपिच्छिलम्।
गुरु मन्दं प्रसन्नं च गव्यं दशगुणं पयः॥
(चरक सूत्र स्थान अ० २७ श्लोक २१४)

गाय का दूध १. स्वादु (मीठा), २. शीत (ठण्डा), ३. मृदु (कोमल), ४. स्निग्ध (स्नेहयुक्त अर्थात् घृत वाला), ५. घना (गाढ़ा), ६. चिकना, ७. चिपचिपा, ८. कुछ भारी, ९. मन्द (देर से बिगड़ने वाला), १०. प्रसन्न (निर्मल)। इन दश गुणों से युक्त होता है। क्षीरमोजस्करं पुंसाम्" दूध पुरुषों में ओज की वृद्धि करता है।

इस विषय में चरक शास्त्र में लिखा है—

तदेवं गुणमेवौजः सामान्यादभिवर्धयेत्।
प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तं रसायनम्॥
(चरक सूत्रस्थान अ० २७ श्लोक २१५)

इन दश गुणों से युक्त होने के कारण गाय का दूध ओज को बढ़ाता है, क्योंकि ओज में भी यही दश गुण होते हैं। गोदुग्ध और ओज के गुणों में समानता पाई जाती है। इसके लिये चिकित्सा स्थान में चरक शास्त्र में इस प्रकार लिखा है—

गुरु शीतं मृदु स्निग्धं बहलं मधुरं स्थिरम्।
प्रसन्नं पिच्छिलं श्लक्ष्णमोजो दश गुणं स्मृतम्॥
(अ० २४)

गुरु, शीत, मृदु, स्निग्ध, बहल, मधुर, स्थिर (मन्द), प्रसन्न, पिच्छिल, और श्लक्ष्ण यही दश गुण ओज में कहे गये हैं।

गाय का दूध जीवनीय द्रव्यों सब से श्रेष्ठ, जीवनवर्धक और रसायन माना गया है।

जरायुजानां भूतानां विशेषेण तु जीवनम्।
क्षीरं सात्म्यं हि बालानां क्षीरं जीवनमुच्यते॥

जरायु (जेर) से उत्पन्न होने वाले जितने प्राणी हैं दूध उनका विशेष रूप से जीवन माना गया है और बालकों का तो पालन पोषण ही दूध पर होता है अथवा उनके जीवन का आधार है, इसलिये बाल-जीवन अथवा जीवनीय कहाता है।

औषधाग्रातिभक्षत्वाद्विरेचयति तत्पयः ।
एतस्मात् कारणादुक्तं गवां क्षीरं रसायनम् ॥

औषधियों का अग्रभाग खाने के कारण गोमाता का दूध विरेचक होता है अर्थात् मलबन्ध (कब्ज) दूर करके पेट को शुद्ध पवित्र रखता है, क्योंकि इस में अनेक औषधियों के रसायनिक पदार्थ मिले हुये होते हैं। इसलिये गौवों का दूध रसायन और रसायन-समाश्रय कहाता है। गोक्षीर का यही विशेष गुण है।

महर्षि धन्वन्तरि सुश्रुतसंहिता में इन गुणों की पुष्टि इस प्रकार करते हैं—

तत्त्वनेकौषधिरसप्रसादं प्राणदं गुरु ।
मधुरं पिच्छिलं शीतं स्निग्धं श्लक्ष्णं सरं मृदु ॥
सर्वप्राणभृतां तस्मात् सात्म्यं क्षीरमिहोच्यते ॥
(सूत्रस्थान अ० ४५ श्लोक ४८)

दूध सब द्रव्यों में निर्मल, प्राण अर्थात् जीवन देनेवाला, भारी, मधुर, चिपचिपा, शीतल, स्निग्ध, चिकना, रेचक और कोमल आदि दस गुणों वाला है। सब प्राणियों के लिये सुखदायी है।

इसी प्रकार धन्वन्तरीय निघण्टु में लिखा है—

तथाऽनेकौषधिरसं प्राणिनां प्राणदं गुरु ।
मधुरं पिच्छिलं स्निग्धं शीतं सूक्ष्मं सरं मृदु ॥

गाय का दूध अनेक औषधियों का रस वा सार है, क्योंकि गौ आदि पशु अनेक प्रकार के तृण वा औषधी आदि जड़ी बूटियों को जंगल में चरते समय खाते हैं। इस विषय में काश्यपसंहिता में लिखा है—

तृणगुल्मौषधीनां च अग्राग्रं पय एव हि ।
खादन्ति मधुरप्रायं लवणं च विशेषतः ।
तस्माद् गुणवैशेष्याद् गवां क्षीरं प्रशस्यते ॥

गोमाता सारे दिन अनेक प्रकार की घास झाड़ियाँ और जड़ी बूटियों का ऊपर-ऊपर का अग्रभाग चरती और खाती रहती हैं और उनका जो सार रस लवण और मधुर होता है, ग्रहण करती रहती हैं। इन सब जड़ी बूटियों के विशेषतया सार गुण के ग्रहण करने के कारण गौओं का दूध सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इन रसों से गाय के दूध में निर्मलता वा सात्त्विकता सब दूधों से अधिक आजाती है। "अनेकौषधीरसम्" तथा "तत्त्वनेकौषधीरसप्रसादम्" और काश्यपसंहिता का उपरिलिखित श्लोक ये तीनों प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि अनेक औषधियों के शुद्ध निर्मल रस से ही दुग्ध का निर्माण होता है। जिस प्रकार सर्वप्रथम सभी प्राणियों के शरीर में प्रथम धातु रस ही बनता है, रस भी दूध के समान निर्मल तथा श्वेत रङ्ग का होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि दूध रस है अथवा रस से ही बनता है। डाक्टरों का यह मत है कि दूध खून से बनता है सर्वथा भ्रमयुक्त और मिथ्या है। पाश्चात्य जगत् में यह भ्रम सर्वत्र ही न जाने कैसे फैल गया और बिना विचारे ही नितान्त इस मिथ्या सिद्धान्त को कैसे सारे योरुप के लोगों ने स्वीकार कर लिया, जबकि साधारण पशु पालन करने वाले मनुष्य भी भलीभांति जानते हैं कि दूध बढ़ाने के लिये जब भी कोई अन्न चना आदि वा हरा चारा जौ, जई, मूंग, उड़द और बरसम आदि गौ भैंस आदि को खिलाते हैं तो चार-पांच दिन में ही पशुओं का दूध भलीभांति बढ़ जाता है। रस भी लगभग पांच दिन में बनता है तथा दूध भी इतने ही दिन में बढ़ता है वा बनता है, यह अनुभव सिद्ध है। और रक्त (खून) जो दूसरी धातु है वह दस दिन से अधिक दिन में बनती है क्योंकि "रसाद्रक्तं ततो मांसम्" रस से रक्त और रक्त से मांस बनता है इत्यादि इसमें महर्षि धन्वन्तरि का प्रमाण है। कितने लोगों में भारत में भी यह भ्रम फैला हुआ है कि खून से ही दूध बनता है। इस मिथ्या बात का प्रचार भारत में भी पाश्चात्य डाक्टरी मत को मानने वाले लेखकों ने ही फैलाया है, क्योंकि कितने ही लोग

अंग्रेजी शिक्षा के कारण भारत में भी योरुप के अन्धे भक्त बन गये हैं।

मांसाहारी लोग निरामिष भोजियों को "अजी! दूध भी तो खून से ही बनता है" यह युक्ति देकर दवाना अथवा अपने पाप को छिपाना चाहते हैं। किन्तु उपरिलिखित युक्ति और प्रमाणों से उनकी मिथ्या बात चल नहीं सकती—"सत्यमेव जयते नानृतम्"।

गोदुग्ध के गुणों के विषय में महर्षि धन्वन्तरि लिखते हैं—

पथ्यं रसायनं बल्यं हृद्यं मेध्यं गवां पयः।
आयुष्यं पुंस्त्वकृद्वातरक्तपित्तविकारनुत् ॥

(धन्वन्तरीयनिघण्टुः)

गौवों का दूध पथ्य अर्थात् सब रोगों वा अवस्थाओं में सेवन करने योग्य वा लाभदायक, रसायन, बलकारक, हृदय के लिये हितकारी, मेधा (बुद्धि) बनाने वाला, आयुवर्धक, पुरुषत्वशक्तिवर्धक, वातनाशक तथा रक्त पित्त के विकारों वा रोगों का नाश करने वाला है।

गोक्षीरमनभिष्यन्दि स्निग्धं गुरु रसायनम्।
रक्तपित्तहरं शीतं मधुरं रसपाकयोः ॥
जीवनीयं तथा वातपित्तघ्नं परमं स्मृतम् ॥

(धन्वन्तरीयनिघण्टुः)

यही श्लोक सर्वथा ऐसा ही सुश्रुत संहिता सूत्र स्थान अध्याय ४५ श्लोक ५० वाँ लिखा है, केवल अनभिष्यन्दि के स्थान में अल्पाभिष्यन्दि पाठभेद मानते हैं। इससे यह भी सिद्ध होता है कि धन्वन्तरिनिघण्टु तथा सुश्रुत इन दोनों आयुर्वेद ग्रन्थों के रचयिता महर्षि धन्वन्तिरि जी महाराज ही हैं।

गाय का दूध स्निग्ध, भारी, रसायन, रक्तपित्त रोग को हरने वाला, शीतल, रस और पाक में मधुर है। जीवन देनेवाला, वातरोग और पित्त रोगों के नाशार्थ परम औषध है। गोदुग्ध के सेवन से विशेष लाभ यह होता है कि इसका सेवन करने वाले की आंखें नहीं दूखतीं, और दूधों की अपेक्षा इसमें यह विशेष गुण है।

राजनिघण्टु में नरहरि ने गोदुग्ध के गुण इस प्रकार लिखे हैं—

गव्यं क्षीरं पथ्यमत्यन्तरुच्यं स्वादु स्निग्धं वातपित्तामयघ्नम्। कान्तिप्रज्ञाबुद्धिमेधाङ्गपुष्टिं धत्ते स्पष्टं वीर्यवृद्धिं विधत्ते ॥

स्वादु (मधुर), स्निग्ध, पित्त और वातरोग नाशक, कान्ति (तेज), प्रज्ञा, बुद्धि और मेधा को बढ़ाता, इन सबको तथा शरीर के सब अङ्गों को पुष्ट करता है, यह स्पष्ट वा सबको प्रत्यक्ष है कि यह वीर्यवृद्धि भलीभांति करता है। इसे वृष्य भी इसीलिये कहते हैं। एक स्थान पर लिखा है—

धेनोः पयः स्यान्मधुरं सुशीतं
रसायनं स्निग्धममलं गुरु स्यात्।
भ्रमश्रमघ्नं विषहृत्सरं च कफावहं
शुक्रकरं हि वर्ण्यम् ॥

गाय का दूध मधुर, अत्यन्त ठण्डा, रसायन, स्निग्ध, मलरहित, भ्रमरोगनाशक, श्रम (थकावट) दूर करने वाला, विषविनाशक, कफ कारक, वीर्यजनक, वर्ण (रङ्ग) को निखारता तथा सुन्दर बनाता है।

भावप्रकाश निघण्टु में इतना विशेष और लिखा है—

दोषधातुमलस्रोतः किञ्चित्क्लेदकरं गुरु।
जरासमस्तरोगाणां शान्तिकृत्सेविनां सदा ॥

गाय का दूध रस रक्तादि सात धातुओं, वात पित्त कफ इन तीनों दोषों, मल मूत्र आदि तथा स्रोत अर्थात् नस नाड़ियों को किञ्चित् क्लेदकारक अर्थात् कुछ गीला करने वाला है अर्थात् इन सबको स्नेहयुक्त रखता है। जो सदैव इसका सेवन करते हैं उनके पास बुढ़ापा नहीं फटकता। गोदुग्ध का सेवन सब रोगों को शान्त करने वाला है।

राजवल्लभ ने "धातुवर्धनम्" अर्थात् धातुवर्धक, यह लिखकर और दूध की विशेषता दिखाई है। जो गुण मनुष्य के लिए पूर्ण वा सर्वश्रेष्ठ भोजन में होने चाहियें वे गोदुग्ध में सब विद्यमान हैं। हमारे

शास्त्रकारों ने सात्विक भोजन करने के लिये बहुत बल दिया है। सात्विक भोजन के गीता में इस प्रकार गुण लिखे हैं—

आयुसत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा
हृद्या आहाराः सात्विकप्रियाः ॥

आयु, बुद्धि, बल, आरोग्य वा स्वास्थ्य, सुख, प्रीति को बढ़ाने वाले जो भोजन हैं तथा रसीले, चिकने, दृढ़ अर्थात् शीघ्र न बिगड़ने वाले और हृदय के लिये हितकारी हैं वे भोजन सात्विक होते है और ये सत्त्वगुणी लोगों को प्रिय होते हैं। ये सारे गुण एक साथ केवल गोदुग्ध में ही मिलते हैं। इस विषय में अनेक शास्त्रों के प्रमाण मैं पहले आगे दे चुका हूँ। और गुण तो कुछ-कुछ अन्य खाद्य पदार्थों में भी मिल जाते हैं किन्तु रस और पाक में एक साथ मधुरता लिये हुए सुख आरोग्य आदि तथा प्रेम को बढ़ाने वाला गोदुग्ध के अतिरिक्त कोई खाद्य पदार्थ ढूंढने से न मिलेगा। इसका विशेष कारण है—

मधुरो हि रसः श्रेष्ठो रसानां परिकीर्तितः ।
यन्नित्यं वा गवां क्षीरं मधुरं बृंहणं मतम् ॥

सब रसों में मधुर रस श्रेष्ठ माना गया है और वह मधुर रस सदैव बल बढ़ाने वाला गौवों के दूध में नित्य विद्यमान रहता है। खाते समय तो गुड़ादि पदार्थ भी मीठे लगते हैं किन्तु पाक में अर्थात् पेट में जब पकते हैं तब मीठे नहीं रहते। गौ का दूध रस और पाक में मधुर ही क्यों रहता है इसका विशेष कारण जो पहले हम दे चुके हैं यही है कि गाय औषधियों का अग्रभाग खाते हुए मधुर रस का ही भक्षण करती है।

प्रेम के विषय में वेद भगवान् हमें आदेश देता है—

"अन्योऽन्यमभिहर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ।"
(अथर्ववेद)

हे मनुष्यो ! तुम परस्पर इस प्रकार प्रेम करो कि जैसे सद्यः जात (तुरन्त के जाये) बछड़े से गाय प्रेम करती है। इसमें सत्य कितना कूट-कूट कर भरा है। यदि कोई गाय जङ्गल में ब्या जाये और कोई हिंस्र पशु शेर चीता आदि उसके बछड़े को हानि पहुंचाना चाहे तो यह शान्त और अत्यन्त सुशील गौ भी अपने बछड़े की रक्षा के लिये अपने प्राणों की बाजी लगाकर उसकी रक्षा करतीहै, शरीर में प्राण रहतेहुये अपने बछड़े का बाल बांका नहीं होने देती। गोमाता प्रेम की तो प्रतिमूर्ति ही है। मेरी आंखों देखी घटना है—एक एक दिन एक कुत्ते ने एक मृगी के बच्चे का पीछा किया। ज्यों ही वह कुत्ता उसे मारने के लिये पकड़ना चाहता था, उस मृगी के बच्चे के मुख से अपने प्राणों की रक्षा लिये करुणाक्रन्दन व आर्तनाद सुनाई दिया। पास में गुरुकुल की चरती हुई गौवों ने उस दुखिया के शब्द सुने तो उसकी रक्षार्थ दौड़ पड़ीं, पास में जाकर कुत्ते को सींगों से मार-मार कर मृगी के बच्चे को बचा लिया। हिरणी का बच्चा कुत्ते के मुख से छूटते ही भाग पड़ा, कुत्ता भी उसके पीछे भागा और गौवें भी मृगी के बच्चे की रक्षार्थ कुत्ते के पीछे-पीछे दौड़ीं।

इसी प्रकार यदि गोपाल पर किसी प्रकार की आपत्ति आजाये तो गौवें अपनी पूरी शक्ति लगाकर उसकी रक्षा करती हैं। इस से यह सिद्ध होता है प्रेम गोमाता का विशेष गुण है, इस लिये इसके विषय में कहा है—"विभर्ति पयसा सुतमिव निखिलं जगद्क्षसा" गोमाता सम्पूर्ण जगत् का अपने पुत्र के समान अपने दूध से धारण पोषण करती है, इसलिये वह जननी और जन्मभूमि से भी बढ़कर है। गोमाता की प्रशंसा में अमरीका देशवासी टेनेसी प्रान्त के भूतपूर्व गवर्नर श्री मालकम. आर. पेटसन लिखते हैं—

"महाकवि होमर ने युद्ध, वरजिल ने आयुध, होरेस ने प्रेम, दान्ते ने नरक और मिल्टन ने स्वर्ग का गीत गाया। परन्तु मुझमें यदि इन सब सिद्ध कवियों की सम्मिलित प्रतिभा होती और मेरे हाथ में हजार तारों का तानपूरा होता होता तथा सारा संसार श्रोता बनकर सुनता तो मैं अपना हृदय खोलकर गौ का गीत गाता, उसके गुण बखानता और उसकी

महिमा का गान यावच्चन्द्रदिवाकर अमर कर देता।

यदि मैं मूर्तिकार होता और संगमरमर नामक पत्थर में टांकी से अपने विचार मूर्तिमान कर सकता तो संसार की पत्थर की सब खानें छानकर विमलतम शुभ्रतम, संगमरमर की पटिया ढूंढ लाता और चन्द्रज्योत्स्ना से पुलकित, निरभ्र नील आकाश से मण्डित, किसी मनोहर वन में निर्मल जल के समीप, पक्षियों के मधुर गुञ्जारव के बीच, बैठकर अपने प्रेम-धर्म के पवित्र कर्म में लग जाता। उस शीतल शुभ्र संगमरमर का सारा खुरदरापन अपनी छेनी से छीलकर उसे इतना कोमल बना लेता कि उस में से मेरे मन की गौ की मूरत निकल आती। उसके विशाल करुणामय नेत्र होते, वह अपने उभरे स्तनों में भरा हुआ पुष्टिकर पेय पान कराने की प्रतीक्षा में खड़ी और प्रेम से अमृत के नेत्र वालों को सुख, आरोग्य एवं बल का आशीर्वाद देती हुई देख पड़ती।

गौ बिना ताज की महारानी है, उस का राज्य सारी समुद्र-वसना पृथ्वी है। सेवा उसका विरद है और जो कुछ वह लेती है, उसे सौ गुना करके देती है।

यदि आज संसार की गौएं मर जायं या ठाठ हो जायं तो कल ही मानव जाति पर भयानक सङ्कट आपड़े। रेल की सड़कें, बैंक, कपास की फसल, इन सब के बिना हम लोग, मजे में अपना काम चला सकते हैं, पर गौ के बिना मानव जाति रोग, क्षय और अन्त में विनाश को प्राप्त होगी। गो का हम वह सम्मान और स्तवन करें जिन के वह योग्य है। मुझे आशा है कि ज्यों ज्यों हम लोग ज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ेंगे, क्रूरता और स्वार्थपरता छोड़ेंगे, त्यों-त्यों उन गौओं की हत्या करना और उनका मांस खाना भी त्याग देंगे, जो हमें बल देती, सुख पहुंचाती और हमारे बच्चों के प्राण बचाती हैं।”

गायों के रङ्ग भेद से भी उनके घी दूध में गुणों का भेद हो जाता है। महर्षि धन्वन्तरि जी महाराज इस विषय में लिखते हैं—

गवां सितानां वातघ्नं कृष्णानां पित्तनाशनम्।
कफघ्नं रक्तवर्णानां गोदुग्धं च त्रिधा स्मृतम्॥
(धन्वन्तरीय निघण्टुः)

सिता अर्थात् श्वेत रंग की गायों का दूध वातरोग नाशक, काली गायों का पित्तरोगनाशक और लाल वर्ण वाली गायों का कफरोगनाशक होता है, इस प्रकार रंग भेद से तीन भेद गोदुग्ध के माने हैं। भावप्रकाश निघण्टु में इस प्रकार लिखा है—

कृष्णाया गोर्भवेद्दुग्धं वातहारि गुणाधिकम्।
पीताया हरेत् पित्तं तथा वातहरं भवेत्॥
श्लेष्मलं गुरु शुक्लाया रक्ता चित्रा च वातहृत्॥

काली गाय का दूध वातनाशक होता है तथा इस के दूध में अन्य गायों की अपेक्षा गुण अधिक पाये जाते हैं। महर्षि पतञ्जलि अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ महाभाष्य में 'पञ्चमी विभक्ते' सूत्र पर लिखते हैं—“कृष्णा गवां सम्पन्ना क्षीरतमा” (२।३।४२) अर्थात् गौवों में काली गाय सब से अधिक दूध देने वाली होती है। अथवा उसके दूध में अधिक गुण होते हैं।

अन्यत्र भी इस प्रकार के प्रमाण मिलते हैं। एक स्थान पर लिखा है—“शस्तं वत्सैकवर्णाया धवलीकृष्णयोरपि” अर्थात् जिन गायों का रंग अपने बछड़े से मिलता है उनका दूध तथा काली गाय और सफेद गाय का दूध प्रशंसा करने योग्य है। अर्थात् इनके दूध में प्रशंसनीय गुण हैं। काली गाय की प्रशंसा परम्परा से ही चली आती है, आज भी हमारे प्रान्त में यह रीति प्रचलित है, यदि कोई किसी पर किसी प्रकार का अत्याचार अन्याय वा मार-पीट करने लगे तो निर्बल अपने को छुटकारे वा बचाव के लिये यह दुहाई देता है। अथवा इस प्रकार याचना तथा प्रार्थना करता है कि “मैं तेरी काली गाय” ऐसे शब्दों से वह यह प्रकट करता है कि “मैं तेरा काली गाय के समान हितैषी वा मित्र हूं मुझे छोड़ दे।” प्रायः इस प्रकार के शब्द कहने पर अपने बड़े से बड़े शत्रु पर विश्वास करके उसे अपना मित्र समझ छोड़ देता है। यह परम्परा भारत में बहुत पुरान है।

महाराजा पृथ्वीराज के विषय में भी यही कहते हैं कि मुहम्मद गौरी को जब भी पकड़ा गया वह मुख में तृण (घास) लेकर इसी प्रकार प्रत्येक बार "मैं तेरी काली गाय" कह कर क्षमा याचना करता था और पृथ्वीराज प्राचीन परम्परा के अनुसार उस पर विश्वास कर क्षमा करता रहा वा उसकी धूर्तता से ठगा जाता रहा ।

काली गाय के गुणों के विषय में प्राचीन और मध्य कालीन लेखकों के विचारों में भेद अवश्य पाया जाता है, किन्तु इस विषय में सब का एक मत है कि काली गाय के दूध में और गायों की अपेक्षा अधिक गुण पाये जाते हैं । अभी थोड़े दिन की बात है । मातनहेल ग्राम जिला रोहतक में रिसलदार गंगादत्त के यहां एक सर्वथा काली गाय थी जो २० सेर दूध देती थी । उस समय उत्तम से उत्तम गाय का मूल्य १००) या अधिक से अधिक १५०) होता था, वह उस समय भी ४००) की बिकी । यमुना पार के ग्राहक उसे खरीद कर ले गये । वह लम्बी, कद में मध्य श्रेणी की हरयाणा जाति (नसल) की गाय थी । इस से भी यही सिद्ध होता है कि कृष्णा वा श्यामा गाय अन्य गायों की अपेक्षा अधिक दुधारू होती है । सारे हरयाणे में बहुत खोज करने पर ही शायद ही कोई गाय २० सेर दूध देने वाली हरयाणा नसल की मिल सकेगी ।

काली गायों में क्यों विशेषता है ? आजकल विज्ञानवेत्ता इस प्रकार से लिखते हैं—

कृष्णा वा श्यामा गायों में वह अच्छी मानी जाती है जिस के सब अंग काले हों । काली गाय का दुग्ध क्यों अधिक गुणकारी, निर्मल और अधिक वातनाशक माना जाता है ? इस में बुद्धिमान् लोग इस प्रकार युक्ति देते हैं कि काली वस्तु सूर्य की उष्णता को शीघ्र और अधिक ग्रहण करती है और अपने अन्दर उस उष्णता को आधान (जब) कर लेती है । इसीलिये शीतकाल में काले वस्त्र लोग बहुत पहनते हैं, क्योंकि वह गर्म रहता है । गर्मी में काला वस्त्र, काला जूता कम पहना जाता है वा विचारशील लोग सर्वथा नहीं पहनते । क्योंकि इनके अधिक शीघ्र गर्म होने से इन्हें धारण नहीं कर सकते । निचोड़ यह है कि काली वस्तु पर सूर्य की किरणों का प्रभाव शीघ्र तथा अधिक पड़ता है । काली गाय शरीर को उष्णता पहुंचा कर बहुत शुद्ध कर देती है, जिस के प्रभाव से इसका दूध अधिक शुद्ध निर्मल और अत्यन्त गुणकारी हो जाता है । काली गाय के दूध में उष्णता और निर्मलता अन्य गायों के दूध की अपेक्षा कुछ अधिक आजाती है । अतः उष्ण निर्मल स्निग्ध होने से वायु रोगों को शीघ्र तथा अधिक नष्ट करने का गुण काली गाय के दूध में आजाता है ।

वायु शुष्क शीतल होता है वह काली गाय के दूध के सेवन से कैसे ठहर सकता है । दूसरे शीतकाल में गौ अपने शरीर में उष्णता पहुँचाने के लिये दूध से मलाई ले लेती है तथा जल दूध में छोड़ देती है, किन्तु काली गाय सूर्य किरणों से अधिक उष्णता ले लेती है । इसलिये वह अपने दूध में मलाई बहुत छोड़ देती है तथा अपने शरीर में शीतलता रखने वा पहुंचाने के लिये जल रख लेती है । अतः मलाई की अधिकता तथा निर्मलतादि अनेक गुणों के कारण काली गाय का दूध बहुमूल्य होता है ।

पीली गायों का दूध पित्तनाशक और वातनाशक होता है । शुक्ल अर्थात् सफेद गाय का दूध कफकारक और भारी होता है, इसीलिए सफेद गाय के दूध में अधिक घृत होता है । महाभाष्य के टीकाकार कैयट लिखते हैं—"श्वेता गाव आज्याय दुह्न्त" जिन्हें अधिक घृत चाहिए वे श्वेत गाय पालते हैं । तथा उनको दुह कर अधिक घृत निकालते हैं । लाल गाय और चित्रा (चितकबरी) गाय का दूध वातरोगनाशक होता है । कोई-कोई लाल गौ का कफनाशक, श्वेत का पित्तनाशक, पीली का वात और पित्तनाशक, कपिला और कृष्णा का त्रिदोषनाशक मानते हैं ।

कपिला गौ

कपिला गौ को प्राचीन काल से ही हमारे पुरुषा विशेष गौ मानते आये हैं । महाभारत में इसके विषय में पर्याप्त लिखा है । परमात्मा ने सृष्टि के

आरम्भ में प्रजा की आजीविका के लिये सुरभि नाम की गौ पैदा की। सुरभि से बहुत-सी कपिला गौवें पैदा हुईं। उनका रंग कुन्दन (स्वर्ण) के समान दमकता था। महाभारत में कपिला के भेद इस प्रकार लिखे हैं—१. स्वर्ण कपिला (सोने के समान रंग वाली), २. गौर पिङ्गला (गोरे तथा पीले रङ्ग वाली), ३. आरक्त पिङ्गाक्षी (कुछ लालिमा लिये हुए पीले नेत्रों वाली, ४. गल पिङ्गला (जिसके गले के बाल कुछ पीले हों, ५. बभ्रु वर्णाभा (जिसका सारा शरीर पीले रङ्ग का हो, ६. श्वेतपिङ्गला (कुछ सफेदी लिये पीले रङ्ग वाली), ७. रक्त पिङ्गाक्षी (लाल और पीली आंखों वाली), ८. खुर पिङ्गला (जिसके खुर पीले रङ्ग के हों), ९. पाटला (जिसका हल्का लाल रङ्ग हो), १०. पुच्छपिङ्गला (जिसके पूंछ के बाल पीले रङ्ग के हों।

कुछ लोगों का कपिला गाय के विषय में मतभेद पाया जाता है। जिस गौ के सींग नीचे को होते हैं जिसे हरियाणे में मौड़ी कहते हैं उसको भी कपिला मानते हैं। जो अधिक दूध दे और सुशील हो, महाभारत के ऊपर लिखे हुए गुण वा विशेषता जिसमें पाई जाती है उसे ही कपिला कहते हैं। वैसे तो जिसका रङ्ग कपिल अर्थात् स्वर्ण के समान हो उसे ही कपिला समझना चाहिये। अभी मेरी दृष्टि में यह विद्वानों का विचारणीय विषय है कि यथार्थ में कपिला क्या है? हमारे शास्त्रकारों ने कपिला की पेट भर कर प्रशंसा की है।

गायों की अवस्था अनुसार दूध के गुण

वष्कयिण्यास्त्रिदोषघ्नं तर्पणं बलकृत्पयः।

बाखरी गाय अर्थात् जिसे दूध देते अधिक अर्थात सात आठ मास हो गये हों उसे संस्कृत में वष्कयिणी कहते हैं। जब गाय दूध देना बन्द करती है उससे एक दो मास पूर्व के समय का दूध सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। ग्रामों में यह प्रसिद्ध है कि अमुक व्यक्ति में बल इसलिये अधिक है क्योंकि इसने बाखरी का दूध पी रखा है।

भाव प्रकाश निघण्टु ने भी इस सत्य का मंडन बलपूर्वक किया है। वे यह मानते हैं कि बाखरी गाय का दूध अन्य गायों की अपेक्षा बलकारक भी अधिक है और साथ ही तृप्तिकारक होते हुए त्रिदोष नाशक है। अर्थात् तीनों दोषों वात, पित्त, कफ से होने वाले रोगों को नष्ट करता है। बछड़े को बलवान् बनाने के लिये बाखरी गाय का दूध विशेषतया पिलाया जाता है।

तरुणीना गवां दुग्धं मधुर च रसायनम्।
त्रिदोषशमनं चैव वृद्धायाः दुर्बलं मतम्॥

तरुणी गौ का दूध अन्य गायों की अपेक्षा अधिक मधुर (मीठा) रसायन और त्रिदोषनाशक है। वृद्ध गाय का दूध दुर्बल (बलहीन) होता है।

प्रथमं च प्रसूताया निःसारं गुणहीनकम्।
नूतनप्रसूतगोदुग्धं रूक्षं दाहकरं मतम्॥
रक्तदोषस्य जनकं पित्तलं मतं बुधैः।

जो गाय पहली बार ब्याई है उसका दूध सार (शक्ति) हीन और गुणहीन होता है। जो गाय नई कुछ दिन की ब्याई हुई उसका दूध रूखा, दाहकारक माना जाता है। विद्वान् लोग उसे रक्त (खून) को दूषित करने वाला तथा पित्तकारक मानते हैं, यह पीने योग्य नहीं होता।

विवत्सबालवत्सायाः पयो दोषलमीरितम्,

जिन गायों का बछड़ा नहीं है (मर गया है) अथवा जिनका बछड़ा छोटा है। उनका दूध दोषकारक है। भावप्रकाश निघण्टु में भी लिखा है—

बालवत्सविवत्सानां गवां दुग्धं त्रिदोषकृत्,

सद्यः प्रसूता और वत्स (बछड़ा) रहित गाय का दूध त्रिदोष करने वाला है।

चिरप्रसूतादुग्धं मधुरं तु दाहकं पटु,

जिस गाय को ब्याये बहुत दिन अर्थात् एक वर्ष से भी अधिक समय बीत गया है उसका दूध मधुर (मीठा) होते हुए नमकीन खारी हो जाता और दाह (जलन) उत्पन्न करना है, पीने योग्य नहीं होता।

सगर्भायाः समुद्दिष्टं त्रिमासोर्ध्वं च पित्तलम् ।
क्षारं च मधुरं चैव मतं वै शोषकारणम् ॥

जिस गाय को गर्भिणी (ग्याभन) हुए तीन महीने बीत गये हैं उसका दूध पित्तकारक अर्थात् उष्ण प्रकृति वाला, खारी (नमकीन) मधुर और शोष (सूजन) कारक होता है ।

आहार से दुग्ध में गुणों की विशेषता

स्वल्पान्नभक्षणात् जातं क्षीरं गुरु कफप्रदम् ।
तत्तु वर्ण्यं परं वृष्यं सुस्थानां गुणदायकम् ॥
पलालतृणकार्पासबीजजातं गुणैर्हितम् ॥

जो गौ थोड़ा अन्न खाती है उसका दूध भारी (अधिक घृत वाला) कफकारक, वर्ण को सुन्दर करने वाला, अत्यन्त वीर्यवर्धक, स्वस्थ, मनुष्य के लिये गुणदायक, हितकारक है । जो पलाल चरी कड़वी (ज्वार) घांस (हरी घास, हरे जौ जई आदि) बिनौला इत्यादि खाती हैं उनका दूध अत्यन्त हितकारक है ।

इक्ष्वादा माषपर्णाद्या ऊर्ध्वश्रृङ्गी च या भवेत् ।
तासां गवां हितं क्षीरं शृतंवाऽशृतमेव वा ॥

जो गाय ईख के गांले, माष (उड़द) मूंग आदि खाती हैं और जिन गायों के सींग ऊपर को उठे हुए होते हैं उन गायों का दूध पक्व हो या अपक्व (कच्चा) सब प्रकार से हितकर है ।

गायें सात्विक आहारप्रिय होती हैं । शुद्ध स्थान, शुद्ध भोजन और शुद्ध जल ही उनको प्रिय है . इसलिये वेद में कहा है—

"गावः शुचयो देवा अरेप्साः" गायें शुद्ध और पवित्र होती हैं और देवता लोग पाप रहित होते हैं । इसीलिये "गावो न यवसेष्वा" गौवें जौ जई आदि जो सबसे सात्विक अन्न हैं उनमें रमण करती हैं यह वेद ने उपमा दी, है तथा वेद में—

प्रजावतीः सूयवसे रुशन्तीः शुद्धाः अपः सुप्रपाणे
पिबन्तीः । मा व स्तेन ईशत माघशंसः
परि वो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु ॥

(अथर्व० ४।२१।७)

प्रजावती अर्थात् बहुत प्रजावाली, जो आदि उत्तम अन्न खाने वाली, उत्तम जलस्थान में शुद्ध जल पीने वाली गौवें होती हैं । ऐसी गौवों का स्वामी चौर न हो तथा पापी कसाई आदि को भी गौवें नहीं देनी चाहियें । इस मन्त्र का भावार्थ यही है कि गौ का प्रिय भोजन यव (जौ) आदि हरा घास है उसको यदि यह पर्याप्त मात्रा में मिलता रहे और उसको पीने के लिये यथेष्ट शुद्ध जल उत्तम जल स्थानों में मिलता रहे तो ऐसी गौवों का दूध यथार्थ में सेवन करने योग्य होता है । ऐसी गायों के बछड़े कभी मरते भी नहीं और उनके बहुत बछड़े होते हैं । ऐसी उत्तम गौवों को चोर और डाकुओं से बचाना चाहिये । जिन गायों सात्विक शुद्ध यवादि अन्न खाने को नहीं मिलता और न ही उत्तम शुद्ध जल पीने के मिलता है ऐसी गौवें स्वयं रोगी रहती हैं तथा उनके बछड़े भी मरते हैं । ऐसी गायों का दूध पीने को योग्य नहीं होता । इस विषय का अनुभव मैंने स्वयं किया है ।

एक बार कपिला (मौड़ी) गाय मैं खरीद लाया, उसमें सबसे भारी दोष यही था कि उसका कोई बछड़ा नहीं जीता था, किन्तु दूध पर्याप्त मात्रा में देती थी । जा बछड़ा वह जनती थी वह इतना छोटा होता था कि उसका मुख गाय के थनों तक नहीं जाता था । जिनके घर से मैं गाय लाया था यही बात उन्होंने मुझे बताई । अनेक बार ब्या चुकी थी, हर बार इसी प्रकार उसके बछड़े मर जाते थे । दूध हर ब्यांत में वह देती रहती थी । गौ सुन्दर और सुदृढकाय थी । बछड़े के अभाव में वह अपने सेवक वा स्वामी से प्रेम करती थी और जब दूध निकालने के लिये नीचे बैठता तब दूध उतारती थी । उसको ही अपने बछड़े के समान प्रेम करती थी, अन्य व्यक्तियों से न प्रेम करती थी और न किसी को दूध देती थी । हमने भी गुरुकुल

में लाकर उसकी सेवा शुश्रूषा आरम्भ की। कुछ दिन में हमें भी उसने प्रेमपूर्वक दूध देना आरम्भ कर दिया। अन्य गौवों के लिये पर्याप्त मात्रा में जौ बोया हुआ था। उस गाय को उसकी इच्छानुसार पेट भर कर खिलाते रहे। वेद की आज्ञानुसार हरे जौवों के खाने का यह प्रभाव हुआ कि वह गाय ब्याई, उसने बड़ा सुन्दर बछड़ा दिया और वह जीवित रहा। इस अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया कि जो गायें शुद्ध जल पीती हैं और सूयवस अर्थात् जौ आदि घास खती है उनके बछड़े नहीं मरते।

अन्य स्थलों पर भी "यवेभ्यो गां वारयति" "मुद्गेभ्यो गां वारयति" "माषेभ्यो गां वारयति" महाभाष्यादि व्याकरण ग्रन्थों में ये उदाहरण आते हैं। इनका यही भाव है कि गौवों का प्यारा भोजन हरे जौ, हरे मूंग और हरे उड़द हैं। मैंने ये तीनों चारे अपनी गौवों को पर्याप्त मात्रा में खिलाकर अनुभव किया है कि इनके खिलाने से गायों का दूध पर्याप्त मात्रा में बढ़ जाता है और गायें इन्हें बड़े प्रेम से खाती हैं। ये तीनों अन्न सात्विक हैं। आजकल लोग यह मानते हैं कि चना और बरसिम (अंग्रेजी घास) खिलाने से अधिक दूध बढ़ता है किन्तु मेरा अपना अनुभव यह है कि हरे जौ से अधिक दूध बढ़ाने वाला हरा चारा कोई नहीं है। मैंने हरा जौ और बरसिम आदि अनेक घासें मिलाकर गौवों के आगे डालीं, गौवों ने सर्वप्रथम जौवों को पृथक् छांट-छांट कर खा लिया, पीछे बरसिम आदि घासें खाईं। इससे यह सिद्ध होता है कि जौ ही गायों को सर्वप्रिय और अधिक दूध बढ़ाने वाला है।

सात्विक आहार का गौ माता के स्वास्थ्य, बछड़े और उसके दूध पर जो प्रभाव पड़ता है, वह इस घटना से भली भांति समझा जा सकता है। देश विशेष में रहने वाली गौवों के स्वास्थ्य, दूध घृतादि के गुणों में जो अन्तर वा भेद रहता है, इसमें भी मुख्य कारण जलवायु तथा आहार का ही भेद समझना चाहिये।

गावों के दूध में देश भेद सेगुण भेद—

जाङ्गलानूपशैलेषु चरन्तीनां यथोत्तरम्।
पयो गुरुतरं स्नेहो यथाहारं प्रवर्तते॥

जाङ्गलदेश अनूपदेश और पर्वतों में चरने वाली गायों का दूध क्रमशः एक से एक का अधिक भारी होता है। आहार के अनुसार ही दूध में स्नेह वा घृत की मात्रा विद्यमान रहती है।

जाङ्गलदेश—

अल्पोदकतृणो यस्तु प्रवातः प्रचुरातपः।
स ज्ञेयो जाङ्गलो देशो बहुधान्यादिसंयुतः॥

अर्थात् जाङ्गलदेश वह कहलाता है जहां जल वा घास-फूस अत्यधिक न हो, वायु का संचार पर्याप्त हो, प्रचुर धूप पड़ती हो और धान्यादि पर्याप्त मात्रा में होते हों। ऐसे देश की गायों के दूध में घृत कम निकलता है। जाङ्गलदेश से अनूपदेश की गायों के दूध में घी अधिक माना गया है। अनूपदेश—'अनुगता आपो यत्र' जलप्रायः देश अर्थात् ऐसा स्थान जहां पर जल ही जल हो, ऐसे जल बाहुल्य देश में जहाँ वृक्ष आदि बहुत हों, वात और कफ के रोग होते हों, उसे अनूपदेश कहते हैं। ऐसे देश की गायों के दूध में जाङ्गलदेश की गायों से अधिक घी माना है। पर्वत देश की गाय कद में छोटी और दूध भी थोड़ा देती हैं किन्तु उस दूध में घी की मात्रा अधिक होती है। मैं एक बार एक गोप्रेमी सज्जन से पहाड़ी प्रदेश में मिलने के लिये चला गया, वह गौवों का अत्यन्त श्रद्धालु भक्त था। उसने उसी पहाड़ी प्रदेश में अपनी झोंपड़ी डाल रखी थी और अपनी पत्नी सहित वहीं जङ्गल में गौओं के साथ रहता था। ये पति-पत्नी दोनों गायों के दूध पर ही रहते थे, अन्न नहीं खाते थे। उनके पास आठ-सात गायें थीं, वे दूध तो पांच सेर देती थीं किन्तु उनके दूध में से मक्खन सात छटांक निकलता था। अतः पर्वतीय देशों की गौवों के दूध में जाङ्गल और अनूपदेश की गायों के दूध से अधिक घी निकलता है।

पाठकगण! यह तो आप सबको निश्चय होगया होगा "गोस्तु मात्रा न विद्यते" (यजु० २३।४८)

गौ के समान दुनिया में कोई माता नहीं है। तथा "क्षीरात्परं नास्ति च जीवनीयम्" गोदुग्ध से बढ़कर प्राणिमात्र के लिये कोई जीवनप्रद पदार्थ नहीं है।

गौ का धारोष्ण दूध—

गौ के दूध का सेवन किस प्रकार करना चाहिये इस विषय में हमारे शास्त्रकार कहते हैं "धारोष्णं शस्यते गव्यम्" गाय के धारोष्ण दूध का ही सेवन प्रशंसनीय माना गया है—

धारोष्णं गोपयो बल्यं लघु शीतं सुधासमम् ।
दीपनं च त्रिदोषघ्नं तद्धाराशिशिरं त्यजेत् ॥

गाय का धारोष्ण दूध बल देने वाला, पचने में हल्का, शीतल, अमृत के समान गुणकारी, जठराग्नि को बढ़ाने वाला और त्रिदोषनाशक है। ठण्डा होने पर गाय के दूध में ये गुण नहीं रहते और बहुत देर पड़ा रहने पर तो दूध में गुण के स्थान पर अनेक दोष आजाते हैं। ऐसी अवस्था में दूध को गर्म करके उपयोग में लाना चाहिये। कितना भी करो, जो गुण धारोष्ण दूध में हैं वे गर्म किये हुए दूध में नहीं होते। यथार्थ बात तो यह है जिस समय दूध निकाला जाता है वह इतना उष्ण होता है जितनी उष्णता चाहिये और मधुर भी उतना ही होता है जितना मनुष्य को चाहिये। धारोष्ण दूध में स्वास्थ्य की दृष्टि से प्राकृतिक मधुरता और उष्णता यथोचित मात्रा में विद्यमान रहती है। आजकल लोग दूध को बिगाड़ कर पीते हैं। धारोष्ण दूध का प्रयोग न करके उसे पड़ा हुआ छोड़ देते हैं, ठण्डा होने पर पुनः उसे अग्नि पर गर्म करके अप्राकृतिक उष्णता का प्रवेश करते हैं और उसमें अप्राकृतिक गुड़ चीनी आदि मीठा डालकर उसमें मधुरता लाते हैं। अग्नि पर उबालने से कितने ही गुण दूध के जल जाते हैं और मीठा डालने से कितने ही दुर्गुण उसमें आजाते हैं। इसलिये सौभाग्यशाली वे ही मनुष्य हैं जिन्हें गोमाता का धारोष्ण दूध पीने के लिये नित्यप्रति मिलता है। किन्तु भैंस, बकरी, भेड़ आदि का दूध गर्म करके ही पीने का विधान है।

न पीने योग्य दूध

विवर्णं विरसं चाम्लं दुर्गन्धं ग्रथितं पयः ।
वर्जयेदम्ललवणयुक्तं कुष्ठादिकृद्यतः ॥

जिस दूध का रंग बिगड़ जाये, बुरे स्वाद का हो जाये, जिस में खट्टापन प्रतीत हो, दुर्गन्धयुक्त और फटा हुआ प्रतीत हो, खट्टा वा खारी, लवणादि पदार्थ जिसमें मिल गया हो। वह सर्वथा त्याज्य है, उसका कभी प्रयोग नहीं करना चाहिये। इतना ही नहीं खट्टा, खारी तथा जो लवणयुक्त भोजन हो उस के साथ दूध का प्रयोग करना अत्यन्त हानिकारक है। क्योंकि ऐसा करने से कोढ आदि भयङ्कर चर्म रोग हो जाते हैं और ऐसे भोजन के प्रयोग से बुद्धि का भी नाश होता है।

प्रातःकाल और सायंकाल दूध के गुणों में अन्तर

रात्रौ चन्द्रगुणाधिक्याद् व्यायामाकरणात्तथा ।
प्राभातिकं पयः प्रायः प्रादोषाद् गुरु शीतलम् ॥

रात्रि में चन्द्रमा के गुण अधिक होने से और चलने फिरने का परिश्रम न करने से प्रातः काल का दूध अधिकतर सायंकाल के दूध से भारी और शीतल होता है।

दिवाकरकराघाताद्व्यायामानिलसेवनात् ।
प्रभातिकात्तु प्रादोषं लघुवातकफापहम् ॥

दिन में सूर्य की किरणों की और चलने फिरने के परिश्रम से उत्पन्न हुई उष्णता के कारण सायंकाल का दूध प्रातःकाल के दूध से हलका और वात तथा कफ नाशक होता है।

समय विशेष में दूध सेवन के गुण

वृष्यं बृंहणमग्निदीपनकरं पूर्वाह्णपीतं पयो-
मध्याह्ने बलदायकं कफहरं पित्तापहं दीपनम् ।
बाल्ये वृद्धिकरं क्षये क्षयकरं वृद्धेषु रेतोवहं
रात्रौ पथ्यमनेकदोषशमनं चक्षुर्हितं संस्मृतम् ॥

प्रातःकाल पिया हुआ दूध वीर्यवर्धक, पुष्टिकारक और पाचनाग्नि वर्धक होता है। मध्याह्न (दोपहर) में सेवन किया हुआ दूध बलदायक, कफ तथा पित्त-नाशक और जठराग्नि को प्रदीप्त करता है। रात्रि के समय अर्थात् सायंकाल पीया हुआ दूध बालकों के शरीर की वृद्धि करता है और क्षय (दुर्बलता) को नष्ट करता है तथा वृद्ध मनुष्य के वीर्य को बढ़ाता है, वह अत्यन्त पथ्य और अनेक दोषों को शान्त करता है तथा नेत्रों के लिये हितकर है अर्थात् आंखों की ज्योति को बढ़ाता है।

वदन्ति पेयं निशि केवलं पयो-
भोज्यं न तेनेह सहौदनादिकम् ॥
भवेदजीर्णं न शयीत शर्वरीं
क्षीरस्य पीतस्य न शेषमुत्सृजेत् ॥

सायंकाल केवल दूध ही पीना चाहिये, उसके साथ चावल आदि नहीं खाने चाहियें। क्योंकि सायंकाल दूध के साथ भोजन करने से अजीर्ण हो जाता है, उसके कारण रात्रि में भली भांति निद्रा नहीं आती, यह किसी किसी का मत है, पीने के लिये जो दूध पात्र में लिया जाये उस में से शेष भूठा नहीं छोड़ना चाहिये।

विदाहीन्यन्नपानानि दिवा भुंक्ते हि यन्नरः।
तद्विदाहप्रशान्त्यर्थं रात्रौ क्षीरं सदा पिबेत् ॥

दिन में जो दाहकारक वा शुष्क अन्न आदि सेवन किया जाता है उससे उत्पन्न हुई दाह की शान्ति के लिये रात्रि को सदैव दूध पीना चाहिये। किन्तु यह ध्यान रक्खें कि शयन करने से दो तीन घंटे पूर्व ही दूध पीना लाभदायक है। अन्यथा हानि करता है।

दीप्तानले कृशे पुंसि बाले वृद्धे पयः प्रिये।
मतं हिततमं दुग्धं सद्यः शुक्रकरं यतः ॥

जिन की जठराग्नि तीव्र है उनको, निर्बल शरीर वालों को, बालक, युवा तथा वृद्ध को दूध अत्यन्त हितकारी और पथ्य है क्योंकि दूध पीने से शीघ्र ही वीर्य की वृद्धि होती है। पाश्चात्य विद्वान् भी गोदुग्ध के विषय में इस प्रकार लिखते हैं—

'जो व्यक्ति अपने बाल बच्चों को दूध मलाई और मक्खन जैसे आरोग्यवर्धक पदार्थ खाने को नहीं देता; उसे जेल में बन्द रखने की जरूरत है।'
—मि० राल्फ० ए० हेने

'शताब्दियों से कथाओं और उपन्यासों में वर्णित यौवन के उद्गम की खोज मनुष्य कर रहा है; पर उस आदर्श यौवन का निकटतम सान्निध्य रखने वाला जो पदार्थ अब तक मिल सका है वह गौ का दुग्ध-स्तन है।' - फ्रैंक० ओ० लौडेन

'अपनी सन्तान का हार्दिक कल्याण चाहने वाले माता-पिता को अपने लड़के-लड़कियों को कभी भैंस का दूध न पिलाना चाहिये। भैंस का दूध मनुष्य के लिये उपयोगी पेय नहीं है।'—ईसाट्वीड

'गौ मनुष्य के लिये अमूल्य रत्न है। इसके दूध से बल, बुद्धि, आयु बढ़ती है और लोग नीरोग रहते हैं।'
—व्यवस्थापक एस० बी० डेयरी दिनापुर

'यदि आप अपनी सन्तानों को शक्तिशाली और बलवान् बनाना चाहते हैं तो उन्हें गाय का दूध और मक्खन रोज तीन बार खाने को दीजिये।'
—मिस्टर राल्फ० ए०

'दूध ही एकमात्र पदार्थ है, जो सब पौष्टिक द्रव्यों से परिपूर्ण है और जिसे हम पूर्ण भोजन कह सकते हैं। ··· बढ़ते हुए बच्चों के लिये उत्तमता में इससे बढ़कर और कोई चीज नहीं। शरीर को ठीक तरह से बढ़ाने और पुष्ट करने में दूध की बराबरी करने वाला कोई दूसरा पदार्थ नहीं है।'—प्रो० एम० जे० रोसेनो

'यदि बच्चों को काफी मात्रा में दूध दिया जाय तो उनके वजन और ऊंचाई में पर्याप्त प्रवृद्धि होती है तथा पर्याप्त शारीरिक सुधार होता है। शीतकाल में उनके हाथ पैर अधिक नहीं फटते।'

एच० सी० कैरीमन, ओ० बी० ई०, एम० डी०, मेडिकल रिसर्च कौंसिल, इङ्गलैण्ड।

पाठकगण! इस सारे लेख को पढ़कर आपको अवश्यमेव निश्चय हो गया होगा कि संसार से गोदुग्ध को छोड़कर अन्य कोई पदार्थ अमृत नहीं है। गोदुग्ध द्वारा भयङ्कर सैकड़ों रोगों की किस प्रकार चिकित्सा की जाती है, यह गो-अङ्क के परिशिष्ट अङ्क में अपने अनुभव सहित निवेदन करूंगा।

आहार द्रव्य में गोदुग्ध का महत्त्व

[ले०—डा० रामस्वरूप, रिटायर्ड, वैटर्नरी असिस्टैण्ट सर्जन सांपला (रोहतक)]

मिस्टर एक्लीस अपनी एक किताब में लिखते हैं कि मैकालम, हार्ट मीडियल, रूसबर्न आदि अन्वेषण से पहिले दूध को अन्य आहार द्रव्यों की सूचि में कोई विशेषता नहीं दी गई थी, परन्तु अब यह बात सिद्ध हो चुकी है कि अनाज और सब्जियों की प्रोटीन ही नहीं बल्कि अण्डे और गोश्त की प्रोटीन भी दूध की प्रोटीन का मुकाबला नहीं कर सकती।

अकेले अनाज की प्रोटीन हज़म होकर ३० प्रतिशत शारीरिक परमाणुओं के बनाने में खर्च होती है, परन्तु जब अनाज के साथ गोदुग्ध पिलाया जाय तो अनाज की प्रोटीन ६० से ६५ प्रतिशत तक हज़म होकर शरीर का अंश बन जाती है।

बर्नर मैक् फैडन Miracle of Milk (दूध का चमत्कार) में लिखते हैं कि प्राचीन समय में गोदुग्ध के द्वारा संसार की उत्तम और बलवान् कौमों का पोषण होता आया है। गोदुग्ध ही कमजोरों को बलवान और रोगियों को नीरोग करने के लिये सब से पहले आगे आया है। इसकी सहायता से ऐसे नर-नारी उत्पन्न हुए हैं जिन्होंने जीवन के कष्टों का मुकाबला करते हुए दीर्घ जीवन प्राप्त किये हैं। गोदुग्ध ने इनकी आयु में वृद्धि की, बहुत देर तक जीवित रहे और बुड्ढे नहीं हुए।

संसार का सब से बड़ा सम्पत्तिमान् पुरुष राकफेलर जब मेदे की बीमारी से रोगी हुआ तब उसने घोषित किया कि मैं उस व्यक्ति को दश लाख डालर इनाम दूंगा जो मुझे रोग मुक्त करेगा। अन्त में एक बुद्धिमान् डाक्टर ने सलाह दी कि गोदुग्ध पिया करो और पैदल चला करो। इस से वह नीरोग हुआ और परिश्रम के काम करता रहा।

मि० मैक् फैडन अपनी Miracle of Milk feeding (दुग्ध-चिकित्सा) पुस्तक में लिखते हैं कि ६० प्रतिशत बच्चे विभिन्न रोगों से आक्रान्त होकर मर जाते हैं, क्योंकि गोदुग्ध पूरी मात्रा में उन्हें नहीं मिलता। वे कहते हैं कि गोदुग्ध केवल आहार ही नहीं किन्तु औषध भी है।

कर्नल मैक् टैगरेट जो पहिले यू० पी० के सेनीटरी कमिश्नर थे, वे कहते हैं कि गो-दुग्ध का मूल्य इतना घटा देना चाहिये कि वह निर्धन लोगों के बच्चों के मुख तक पहुंच सके। ट्रेण्ड दाइयों के बढाने के स्थान में गोदुग्ध बढाने से बच्चे अधिक लाभ में रहेंगे।

यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि बङ्गाल प्रान्त में मुसलमान बच्चों मृत्यु हिन्दू बच्चों से अधिक होती है। केवल कलकत्ता शहर में ही मुसलमान बच्चों को हिन्दू बच्चों की अपेक्षा गोदुग्ध के अतिरिक्त अण्डा मांस की प्रोटीन खाने की पूरी अनुकुलता हैं, फिर मुसलमान बच्चे हिन्दू बच्चों की अपेक्षा अधिक मरे। कारण, मुसलमान बच्चों को गोदुग्ध कम मिला या नहीं मिला। गोदुग्ध रोगों को भी हटाता है।

सन्	हिन्दू	मुसलमान	
१९१८	२८१	३०४	कलकत्ते में प्रति सहस्र बच्चों की मृत्यु संख्या।
१९१९	३४७	४१२	
१९२०	३८१	४४९	
१९२१	३२५	३६१	
१९२२	२६९	३८४	

गो-दुग्ध ही जीवन देने वाला है। मि० हाफकिन साहब के प्रयोगों ने वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है कि इस प्रकार का आहार जिस में आटा, मीठा, प्रोटीन, मांस, अण्डा आदि और चिकनाई तथा नमक पर्याप्त नहीं हैं। हाफकिन साहब चूहों की दो टोलियों को आटा, मीठा, प्रोटीन, चिकनाई और नमक बराबर दे रहे थे तो उन्होंने एक टोली के चूहों के भोजन में थोड़ी सी मात्रा में अर्थात कुछ बूंद गाय के दूध के बढ़ा दिये, जो इस टोली के आहार की दृष्टि से कोई विशेष महत्त्व नह

रखते थे । इतने से गोदुग्ध के बढ़ा देने से दूध वाली टोली के चूहे शीघ्र-शीघ्र (जल्दी-जल्दी) बढने लगे, स्वस्थ, बलवान् और जीवित रहे, परन्तु बिना दूध वाली टोली के चूहे कद में अधिक तो बढ़े ही नहीं, किन्तु थोड़े ही दिनों में बहुत से मर गये । हाफकिन साहब ने परिणाम निकाला कि कच्चे गोदुग्ध में कोई ऐसा अज्ञात पदार्थ है और जो थोड़ी सी मात्रा में ही दिये जाने से जीवन को सुरक्षित रख सकता है और कद को बढ़ा सकता है ।

इसी प्रकार बच्चों पर भी प्रयोग किया । कुछ दूध पीते हुए बच्चों को माँ के दैनिक दूध से अतिरिक्त १० छटांक गौ का दूध प्रति दिन दिया जाने लगा । जिनको यह गोदुग्ध दिया जाने लगा वे कद में २·६३ इञ्च और भार (वजन) में ९·८ पाउण्ड बढ़े । जिन को गौ का दूध नहीं मिलता था वे कद में १·८४ इञ्च और ३·२ पाउण्ड भार में बढ़े ।

डा० कैलौग जो अमरीका के बटैलक्रीक के हौस्पिटल में स्वास्थ्य के अध्यक्ष हैं, वे लिखते हैं कि मैंने एक चूहे को रोटी और सेव, और दूसरे को रोटी और गोदुग्ध जितना वे खा सकते थे उतना खाने को दिया । बारह सप्ताह के पश्चात् रोटी और दूध वाला चूहा दूसरे की अपेक्षा भार में पांच गुणा अधिक पाया गया ।

कर्नल मैकरीश लिखते हैं कि यदि भोजन में दूध और दूध से बनी हुई वस्तुयें पर्याप्त मात्रा में हों तो ऐसी दशा (हालत) में किसी भी प्रकार के मांस की आवश्यकता नहीं रहती । पर्याप्त गोदुग्ध का अर्थ दश छटांक दैनिक से कम नहीं है, हो सके तो सवा सेर दैनिक होना चाहिए ।

पिछले महायुद्ध को सफल बनाने में दूध का स्थान (दर्जा), गाय का दूध पीने वालों के लिए, मादक (नशेदार) वस्तुओं से भी सबसे प्रथम संख्या का है ।

होवर्ड डेरी अखबार ने युद्ध के काल में निम्नलिखित वर्णन निकाला था, कि जर्मन के विरुद्ध लड़ने वाली शक्तियाँ अमरीका, इङ्गलैण्ड, फ्रांस, बैलजियम, इटली आदि देशों ने बड़ी प्रसन्नता के साथ घोषित करके यह बात स्वीकार करली है, कि सिपाहियों का हृदय (दिल) बढ़ाने और इनके शरीरों को शक्ति देने के लिये और उनकी वीरता के जोश को बढ़ाने के लिये चाय, कहवा, बीअर और शराब आदि मादक वस्तुओं की अपेक्षा गोदुग्ध का प्रयोग ही सब से अधिक फलप्रद सिद्ध हुआ है ।

गोदुग्ध साधारणतया इस प्रकार की पीने की वस्तु मानी जाती है कि इसका महत्व बच्चों के लिये प्रत्येक आदमी आरम्भ से जानता है । पेय पदार्थों में यह इतना प्रचलित है कि हम मान बैठे हैं कि इसके विषय में हम ने सब कुछ जान लिया है, आगे इस विषय में कुछ भी ज्ञातव्य नहीं है । परन्तु वस्तुतः यह बात नहीं है, इसके सम्बन्ध में अभी बहुत सी बातों का ज्ञान नहीं है । दिन प्रतिदिन जो ज्ञान वृद्धि हो रही है उससे पुष्ट होता है कि यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से हमको सब कुछ ज्ञान है तो भी कितनी बातें ऐसी हैं जिन पर प्रकाश डालना आवश्यक है । गोदुग्ध के सम्बन्ध में उदाहरण के लिए एक नई बात हम यहाँ उपस्थित करते हैं जो कि आज कल सब संगठित शक्तियों की ओर से अपने सिपाहियों को युद्धभूमि में जाते समय पिलाया जा रहा है । जर्मन लोग अपने सिपाहियों को हृदय (दिल) बढ़ाने के लिए बीअर शराब पिलाते हैं, परन्तु संगठित शक्तियाँ फ्रांस के मैदान में सिपाहियों को गोदुग्ध दे रही हैं । इस परिवर्तन का सेहरा फ्रांस की राजधानी पेरिस की पासचर साहब की अन्वेषण (रिसर्च) करने वाली उन कैमिकल और फिजियोलौजिकल शाखाओं (ब्रांचों) के सिर पर है, जिन्होंने इस बात का परम प्रमाण कर दिया है कि गोदुग्ध केवल शरीर के बल को बढाने वाला ही आहार नहीं, अपितु आज तक जितने शराब आदि नशे प्रयोग में लाये जाते हैं उनमें भी गोदुग्ध का स्थान सब से प्रथम है ।

गोदुग्ध की यह विशेषता किस प्रकार प्रतीत हुई ? कुछ तो अचानक और कुछ विविध परीक्षण करने के पश्चात् ज्ञात (मालूम) हुई । एक सौ पच्चीस कुत्तों के बच्चों पर विभिन्न प्रकार के मादक द्रव्यों (नशों) का प्रयोग किया जा रहा था । उद्देश्य यह था कि प्रत्येक मादक द्रव्य में कितना जोश और बल देने का गुण है । इन छोटे-छोटे कुत्तों के बच्चों पर सब प्रकार की जोश

बढ़ाने वाली प्रसिद्ध औषधियाँ (दवाइयाँ) केफ़ीन, ओपियम, कोकेन, शराबें प्रयोग करके देखी गईं और इनके पृथक्-पृथक् परिणाम ज्ञात किये गये कि किस-किस मात्रा में उनकी जीवनीय शक्ति (जिन्दगी की ताकत); सहनशक्ति, दृढता, जोश का काल, थकावट, सांस की चाल, हृदय की गति पर क्या-क्या प्रभाव होता है। जिन कुत्तों के पिल्लों पर ये परीक्षण किये गये, शीघ्र या विलम्ब से उन पर सब का यह प्रभाव हुआ कि जब मादक द्रव्यों से उत्पन्न की हुई अप्राकृतिक (नकली) शक्ति समाप्त हो चुकी तो थकावट भी इतनी बढ़ गई कि मादक पदार्थ (नशा) न देने से पहले कभी नहीं होती थी। परीक्षा के पश्चात् प्रत्येक थके हुए प्राणी (जानवर) को पारितोषिक रूप से भिन्न भिन्न आहार दिया जाया करता था—कभी गुड़, कभी मांस रस, कभी गोदुग्ध के टोस्ट या कभी गोदुग्ध अकेला ही और कभी सीरा (आटा+घी+गुड़) दिया जाया करता था। इसके दिये जाने पर ये बच्चे शीघ्र-शीघ्र अपनी खोई हुई शक्ति प्राप्त कर लिया करते थे। फिर इन को पृथक्-पृथक् कोठड़ियों में लेटने व विश्राम करने और अगले दिन परिक्षण के लिए तैयार हो जाने के लिए भोजन दिया जाता था। एक दिन एक डाक्टर ने क्या देखा कि इनमें से तीन कुत्ते सीरा और रोटी से घृणा (नफरत) कर रहे हैं। इस दिन उनको केवल गाय का दूध दिया गया। फिर उस डाक्टर ने देखा कि वे शीघ्र शीघ्र संभलने लगे और अधिक फुर्तीले तथा हाथ पैर से दृढ़ दिखलाई पड़े, सब से अच्छी बात यह ज्ञात हुई कि दूसरे कुत्तों की तरह न तो वे शीघ्र पड़ रहे और न उनकी तरह उनको नींद ही शीघ्र आई। इस डाक्टर ने अपने साथी डाक्टर का ध्यान इनकी ओर खींचा, परन्तु उन्होंने इन कुत्तों की इस शक्ति और स्फूर्ति का कारण गोदुग्ध ही है यह बात मानने से निषेध कर दिया। इसके पश्चात डाक्टर केसवैड ने ६० कुत्तों को जो कुल (सब) के आधे थे गुप्त रूप से आधा पाव गोदुग्ध काम करने से पहले देना आरम्भ कर दिया। उस दिन सभी लोग बड़े चाव के साथ परीक्षण के परिणाम को देखते रहे। जिन कुत्तों को गोदुग्ध दिया गया था उन्होंने अपने कार्य को अति शीघ्रता (तेजी) से किया और दूसरों की अपेक्षा तीन गुणा काम किया, थकावट कम हुई, काम करने के उपरान्त भी खेलते रहे। ये सब बातें उस पिलाई हुई औषधि के परिणाम के अतिरिक्त थीं जो सबको दी गई थी। इस दिन के पश्चात् यह भी ज्ञात हुआ कि ये कुत्ते जब अपने काम पर गये तो दूसरों की अपेक्षा अधिक फुर्तीले थे। सभी कुत्तों पर इस प्रकार का अनुभव किया गया और बिना किसी सन्देह के यह बात सिद्ध हो गई कि गोदुग्ध के कारण नाड़ी की चाल धीमी और हृदय तथा मांसपेशी दृढ़ हो गईं। कुत्तों की शारीरिक दशा पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा जैसा अन्य किसी नशीले जोश बढ़ाने वाले पदार्थ से कभी नहीं हुआ था। जब इन छोटे बच्चों पर बीअर, क्लोरल हाइड्रेट तथा दूसरी शराबों के प्रयोग किये गये तब उन से इन पर केवल नशा ही नहीं चढ़ा अपितु ये आलसी, ढीले और और अपने काम में निकम्मे पाये गये, उनकी नाड़ी और श्वास की गति तीव्र हो गई। देखने में भी सुकड़े हुए और घबराये हुए दिखाई देने लगे। उनके चेहरों को देखने से वह प्रतीत होता था कि ये निर्बल होते जा रहे हैं और पूर्ववत उनका स्वास्थ्य नहीं रहा है।

इन परिणामों के प्रकाशित होते ही फ्रांस और इङ्गलैण्ड के फौजी अफसरों ने अपने नये ढङ्ग (कायदे) शराब के विरुद्ध तैयार करके प्रकाशित किये, और पीने के स्थान में अलकोइल भक से उड़ने वाले जोरदार मसालों में काम आने लगी। गोदुग्ध स्वयं ही उन गुणों का स्थान माना जाने लगा है जो कि एक अमृत में होने चाहिये। इस में मिठास है, नमक; चिकनाई, एल्ब्यूमिन, निशास्ता, पानी सभी अंश एक स्थान में विद्यमान हैं। ये वे आहार द्रव्य हैं जो मनुष्य के लिये आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त अब दूध में रहस्यमयी और जादू सा काम करने वाली ऐसी शक्तियां भी ज्ञात हुई हैं, जो शरीर के नसों और पट्ठों पर न केवल अंकुश (चाबुक) का सा ही प्रभाव दिखाती हैं अपितु उन्हें परिश्रम के साथ काम करने में लगाती हैं, कार्य के पीछे कुप्रभाव या गिरावट नहीं होने पाती, जैसा कि अफीम, कोकेन, क्लोरलहाइड्रेट, शराब आदि दूसरी अप्राकृतिक मादक

वस्तुओं से होती है। सब से बड़ी बात यह है कि मादक वस्तुओं से बुरा अभ्यास पड़ जाता है और किसी न किसी अंश में इनसे रक्त का दबाव भी बढ़ जाता है। इसके विरुद्ध दूध स्वभाविक शक्ति देने वाला एक आवश्यक आहार और जोश दिलाने वाली वस्तु है जिसका दुश्प्रभाव प्रयोग करने के पश्चात् बिलकुल नहीं होता। फ्रांसीसी गवर्नमेंट को जब दूध की यह विशेषता ज्ञात हुई तब उसने सब शराबखानों को आज्ञा दी कि शराब के स्थान में दूध के क्रय-विक्रय को बढ़ाने पर विशेष बल दिया जाय।

(अजमीरी लैण्ड डा० के० हर्ष वर्ग)

जीवन तथा मृत्यु में गोदुग्ध की सहायता

गोदुग्ध में वे सभी तत्त्व पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं जिनकी शरीर को आवश्यकता है। उनकी ही सहायता से शरीर बढ़ते, रग पट्ठे दृढ़ होते और घिसे हुए रग पठों की मरम्मत होती रहती है। ये सभी तत्त्व गोदुग्ध में जीवन को देने वाले, स्फूर्ति देने वाले, जीवित रूप में विद्यमान रहते हैं। जिस प्रकार मृत्यु का प्रथम चिह्न रक्त विकृति (खून का बिगाड़) है अर्थात् सफेद या पीला पड़ जाना है, उसी प्रकार जीवन का प्रथम चिन्ह गोदुग्ध है। जीवन और मृत्यु के संग्राम (लड़ाई) में मनुष्य जाति का पहला और अन्तिम शस्त्र गोदुग्ध ही है। इसकी सहायता से मनुष्य शरीर के २५ मिलियन कोषाणु (cells' पालन पोषण (परवरिश) पाते हैं, बढ़ते हैं और स्वस्थ रहते हैं। सामान्यतया दूध और पानी दोनों द्रव पदार्थ प्रतीत होते हैं, परन्तु वस्तुतः गोदुग्ध में टमाटर से दुगने और गाजर मूली आदि से कुछ अधिक ठोस तत्त्व हैं। गाढ़े शरबत जैसी वस्तु बनस्पति और प्राणी में ही पाई जाती है इसे प्रोटोप्लाज्मा (ढालने या बनाने वाली वस्तु) जीवन शृंखला की पहली कड़ी यहीं से आरम्भ होती है। इसमें कार्बन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस; पोटाश, सलफ, चूना, मैग्नेशिया, लोहा थोड़ी बहुत मात्रा में पाया जाता है। किस प्रकार से ये मसाले आपस में मेल खाते है यह बात अभी तक ज्ञात नहीं हुई है। सब से अधिक आश्चर्यप्रद बात यह है कि इस प्रोटोप्लाज्म में जीवन के चिन्ह विद्यमान होते हैं गोदुग्ध में पूर्वोक्त तत्त्वों के अतिरिक्त ल्यूकोसाइट सैल्ज (श्वेताणु) पाये जाते हैं. जो कि रक्त के रक्ताणुओं की अपेक्षा श्वेताणुओं से बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। श्वेताणु जितने ही मनुष्य शरीर में अधिक होंगे ही उतना उसका शरीर रोगों से साम्मुख्य (मुकाबला) करने के लिये समर्थ होगा। जब किसी समय कोई रोग का जर्म मनुष्य शरीर में प्रवेश करता है, तो यही सफेद वर्दी वाले सिपाही मनुष्य-दुर्ग की रक्षा के लिये रोगाणुओं से जा भिड़ते हैं और प्रायः उनको मार देते हैं गोदुग्ध में जो श्वेताणु होते हैं वे ही मनुष्य शरीर में विद्यमान श्वेताणुओं की सहायता के लिये पहुँचते हैं। दूध का एक गिलास पीने के थोड़े ही काल के पश्चात् इन श्वेताणुओं की संख्या में अति वृद्धि हो जाती है, अर्थात् उनकी संख्या दूध पीने के पश्चात् पहले से चौगुणी हो जाती है। मनुष्य के शरीर में सवा पांच सेर से अधिक रक्त होता है। इस रक्त में इन श्वेताणुओं की संख्या रक्ताणुओं की संख्या की अपेक्षा बहुत कम होती है, अर्थात् ३५० के मुकाबले में केवल १ है, तो भी इनकी कुल संख्या ८० अरब के लगभग होती है, इन श्वेताणुओं का एक भाग अधिक लेसदार होने के कारण यह गुण रखता है कि वह सब प्रकार के कणों पर (कोयला, धूल, अनाज, बैक्टीरिया, रोगाणु आदि) पर चिपट जाता है। इस विशेषता के कारण ही हमारा ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। यह कोष (cell) जिसका व्यास १ मिलिमीटर के १२५ वें भाग से अधिक नहीं होता, उस समय से अधिक महत्त्व पा गया है जब से डा० मैकनीकाफ ने यह बात सिद्ध कर दी है कि जो बैक्टीरिया इनमें फंस जाते हैं वे इनके अन्दर ही मर जाते हैं। इस गुण के कारण ही उसने इनका नाम Phagocyter cell (खा जानेवाले कोष) रक्खा है। इनकी इस क्रिया का नाम फैगोसाइटोसिस (Phagocytosis) है। इनका जीवन हमारा ध्यान आकर्षण करने योग्य है। परन्तु इसकी ओर अभी तक बहुत कम खोज की गई है। घोड़े के रक्त से श्वेताणु भिन्न भिन्न माध्यमों में प्रवेश कराये गये थे। इन माध्यमों में कार्बन के बहुत छोटे छोटे कण विद्यमान थे। वे शरीर के तापमान में ३० मिनिट तक रक्खे

रहे । इनमें से बहुत सों ने कार्बन को खा डाला । सूक्ष्म दर्शक यन्त्र से यह ज्ञान करने का प्रयत्न किया गया कि कितने श्वेताणुओं ने कार्बन के कणों को खाया है । इनके अनुपात से फैगोसाइटस के मान और मूल्य (कदर और कीमत का पता चला है । फैगोसाइट ने अपने असली माध्यम अर्थात् रक्त के सीरम में रखे जाने पर ६०० में से ३०० ने कार्बन के कणों को खालिया, अर्थात् ५० प्रतिशत ने कार्बन को खा लिया । रक्त में खटास आ जाने पर फैगोसाइटोसिस निर्बल पड़ जाता है । फैगोसाइटस आयु के अनुसार अपना काम करते हैं । सीरम में एसिड मिला देने से केवल २७·प्रतिशत ने ही कार्बन के कणों को खाया ।

अतः सर अलमोर्थ राइट (Sir Almorth Wright) ने यह सिद्ध कर दी है कि कई प्रकार के बैक्टीरिया, इसके पहिले कि उन पर फैगोसाइट्स वार (हमला) करें, मूर्छित (बेहोश) किये जावें, बहुत समय बैक्टीरिया विष छोड़ते हैं और इसका प्रभाव फैगोसाइटोसिस पर बहुत खराब होता है । जीवित ही नहीं अपितु मरे हुए बैक्टीरिया में भी विष विद्यमान रहता है । कैल्सियम की थोड़ी मात्रा मिलाने से ही फैगोसाइट्स की क्रिया बहुत तीव्र हो जाती है । उदाहरण के लिये प्राकृतिक (कुदरती) मीडियम में ५ प्रतिशत कैल्सियम क्लोराइड के बढ़ाने से फैगोसाइट्स की शक्ति में १२ प्रतिशत वृद्धि हो गई । यह प्रभाव और भी प्रत्यक्ष हुआ जब कि यह कैल्सियम की मात्रा इन फैगोसाइटस की अपेक्षा जो प्राकृतिक सीरम में थे, कैल्सियम क्लोराइड और क्लोराइड आफ सोडियम के घोल में रखे हुए फैगोसाइट में बढ़ा दी गई ।

कैल्सियम के साथ जो प्रयोग किया गया उस प्रयोग में कैल्सियम के आने के पश्चात् प्रतीत हुआ कि फैगोसाइट्स का काम नशे जैसा, अर्थात् बहुत तीव्र प्रभाव होता है । बहुत से डाक्टर निमोनिया-हृदय का शक्ति में; क्षय में स्पर्शजन्य रोगों में कैल्सियम का बहुत अधिक प्रयोग इसीलिये करते हैं । जो लोग चूने के भट्टों में काम करते हैं उन पर क्षय का आक्रमण कभी नहीं सुना गया । हौलैंण्ड के चूना बुझाने वाले व्रणों को चूना लगा कर ठीक कर लेते हैं ।

नोटः—सभी पदार्थ थोड़ी मात्रा में मिलाने से अच्छा प्रभाव देते हैं, परन्तु अधिक मात्रा में मिलाने से उनका प्रभाव खराब हो जाता है, क्योंकि ये फैगोसाइट्स की क्रिया को घटा देते हैं, अर्थात् प्रोटोप्लाज्म को चेष्टा रहित स्तब्ध कर देते हैं ।

इस प्रकार घोड़ों के निमोनिया और गायों के थनों के रोगों में फ्रांस, डेन्मार्क और हौलैण्ड में तारपीन का तेल जो चिकनाई को अपने अन्दर हल करने वाली वस्तु है, प्रयोग किया जा रहा है । इसका अर्थ यह है कि नशे वाली चिकनाई में इन होने वाली और चिकनाई को हल करने वाली वस्तुओं को अधिक प्रमाण में लेने से फैगोसाइट्स की असली मात्रा को नहीं बढ़ा सकते । गाय का दूध स्वयं फैगोसाइट्स को रक्त में बढ़ाता है ।

यदि किसी अवस्था में अजीर्ण, आमवात, गठिया, एसिडिटी हो तो गौ का दूध फैगोसाइट्स को नहीं बढ़ायेगा । क्योंकि इन रोगों में अम्लता (एसिडिटि) रक्त में बढ़ जाती है, अम्लता दूर करने के लिये चूने का पानी या खाने का सोडा दूध में मिला कर देना चाहिये ।

गोदुग्ध के महत्व के सम्बन्ध में डाक्टरों की सम्मितियां

१—होपकिन साहब, जिन्होंने प्लेग के टीके का आविष्कार किया है । कहते हैं कि गाय का घी प्रयोग करने से प्लेग के कीटाणु मर जाते हैं । इसलिये प्लेग के दिनों में प्रत्येक व्यक्ति को प्रातःकाल गाय का दो चम्मच शुद्ध घी सेवन करने से प्लेग नहीं होता ।

२—कुष्ठ रोग के लिये गाय के दूध का सेवन लाभदायक है । रोगी को नमक खाना छोड़ देना चाहिये । तोफतुल मोमिन पुस्तक में यह भी लिखा है कि गाय का दूध आयु को बढ़ाता है और यकृत् (जिगर) को पुष्टि देता है ।

३—यूनान का प्रसिद्ध वैद्य बू अली सीना लिखता है कि गाय का दूध पाचन शक्तिवर्धक और बुद्धिवर्धक है । मृगी, सुजाक, और पाण्डुरोग के लिये अत्यन्त लाभदायक है । शरीर को सुडौल बनाता है ।

४—यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि गौ के दूध को ७०° शतांश पर गरम करने से उसके विटामिन पर प्रभाव नहीं पड़ता, परन्तु ६८° शतांश पर दस मिनिट तक रखने से उसकी स्कर्वी रोग की नाशक शक्ति नष्ट हो जाती है।

दूध के विटामिन दूध देने वाले पशुओं में दूध देने का समय लम्बा होने में अन्तिम दिनों में नहीं रहते। यह गौ का दूध भी स्कर्वी रोग को हटाने की शक्ति नहीं रखता। ऐसा अनुमान होता है कि स्वयं गौ के दूध में, अर्थात् जब ब्याने के थोड़े दिन रह जावें तब खारों के बढ़ जाने से स्कर्वी हटाने का गुण नहीं होता, क्योंकि बच्चों में मां का दूध पिलाने से भी स्कर्वी रोग हो गया।

५—दूध को उबालने से कैल्सियम स्ट्रेट अलग होकर नीचे बैठ जाता है।

६—जैसा कि शराब, अफीम, कोकेन इत्यादि नशे वाली वस्तुओं से अप्राकृतिक शक्ति उत्पन्न होने के पश्चात् अत्यधिक निर्बलता अनुभूत होती है, इनके प्रयोग से रक्त का दबाव भी बढ़ जाता है। इसके विपरीत गौ का दूध स्वाभाविक दशा में शक्ति और जोश दिलाने वाला उन्मादक (हर्षोत्पादक) पदार्थ है। इसका प्रयोग करने के पश्चात् कोई भी कुप्रभाव नितान्त नहीं होता। फ्रांसीसी गवर्नमैंट को दूध की जब यह विशेषता ज्ञात हुई तो उसने शराब के सब स्वामियों को आज्ञा दे दी कि काफी, चाय, कहवा, सब भान्ति की हल्की शराबों की अपेक्षा गौ के दूध की ही खपत और फरोख्त के लिये प्रयत्न किया जाय।

(मेरीलैण्ड का डाक्टर एल. के. हर्षवर्ग.)

७—अमेरिकन दुग्धालयों के वैज्ञानिक अपने अन्वेषण के आधार पर लिखते हैं कि गोदुग्ध के इस महत्त्व के कारण ही हिन्दू लोगों के धार्मिक ग्रन्थों (१४०-२००० B.C.) में भोजन में और यज्ञों में गौ के दूध और मक्खन तथा घी को एकमात्र उपयोग करने के लिये कहा गया है।

गाय और भैंस के दूध के गुणों में तुलना

१. भैंस का दूध—गर्म, भारी, वीर्यवर्धक, चिकना, वायुकारक, आलस्यजनक, मन्दाग्नि करने वाला तथा छूत की बीमारियों का लाने वाला, क्रोध और द्वेष भाव को पैदा करने वाला, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है—विशेषतया बच्चों, रोगियों, गर्भवती स्त्रियों, बूढ़ों और विद्यार्थियों के लिये हानिकारक है।

२—गाय का दूध—तेज, बल, वीरता, बुद्धि का विकास, पुरुषार्थ, रोगहारिणी शक्ति देने वाला है, तथा छूत की बीमारियों के कीटाणुओं को नष्ट करने वाला है।

कैरोटीन, आयोडीन गाय के दूध में पाये जाते हैं भैंस के दूध में नहीं। कैरोटीन ही विटामिनों के प्रभाव को सुरक्षित और स्थिर रखता है। गाय के दूध में विटामिन ए. बी. सी. डी.ई. होते हैं। भैंस के दूध में विटामिन नाम मात्र (मामूली) होते हैं ई. नहीं होता। कैरोटीन के अभाव से भैंस के दूध के विटामिन शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। विटामिन ए. भोजन को शीघ्र पचाता है। ए. विटामिन गाय के दूध में अधिक होता है भैंस के दूध में कम।

३—भैंस अधिक गर्मी और सर्दी को सहन नहीं कर सकती अतः इसके दूध का पीने वाला असहिष्णु होता है पुरुषार्थी नहीं होता, आलसी होता है।

४—एक ग्राम में एक ही भैंसा स्वतन्त्र रहना चाहता है। दो भैंसे हों तो वे एक दूसरे के साथ लड़ेंगे और एक के मर जाने पर ही दम लेंगे। सांड एक ग्राम में कई प्रेम से रह सकते हैं। गाय दूसरी गाय के साथ प्रेम के साथ रहती है। यदि किसी कारण एक गाय को पृथक् कर दिया जाय तो उसे अच्छा नहीं लगता, यह उसके प्रेम का ही गुण है। गाय अपना स्वार्थ पीछे किन्तु स्वामी का स्वार्थ पहिले देखती है। गाय उच्च सभ्यता का प्रतिनिधि है, भैंस नहीं। गाय और भैंस का दूध पीने वालों के गुणों में भी यह भेद पाया जाता है, अतः गाय का दूध सभ्यता बढ़ाने वाला है भैंस का नहीं।

५—गाय के दूध में रहने वाला प्रोटीन सुगमता के साथ पच जाता है, क्योंकि वह भैंस के दूध के प्रोटीन से मृदु (मुलायम) होता है। भैंस के दूध का प्रोटीन कठोर होने से दुष्पच होता है।

६—गाय के दूध के गुणों का प्रभाव अध्यात्म उन्नति के लिये विशेष सहायक है। भैंस के दूध के गुणों का प्रभाव अध्यात्म उन्नति में बाधक है।

(हस्तलिखित वसुन्धरा पुस्तक से)

———

कामधेनु

(श्री सुखदेव शास्त्री मन्त्री स्नातक सभा गुरुकुल भैंसवाल रोहतक)

ऋग्वेद में आया है—

'अनड्वान् दाधार पृथ्वीमुत द्याम् ।'

बैल से ही पृथ्वी का पालन हो रहा है, बैल के सहारे पर ही पृथ्वी स्थित है। बैल न हो तो पृथ्वी में अन्न की उत्पत्ति कैसे की जाय ? खेती करने के लिये वेद भगवान् स्वयं आदेश दे रहे हैं–"कृषिमित्कृषस्व" खेती कर। खेती का आधार गाय का पुत्र बैल ही है।

मुसलमानी समय में भी भारतीय जनता गौ के लिये बड़ी श्रद्धा रखती थी। अधिक मात्रा में गायें पाली जाती थीं। जनता गौ हत्या का विरोध करती थी ! बाजार में खुले रूप से गौ-मांस बेचते हुये एक कसाई की गर्दन को वीर शिवाजी ने तलवार से अलग कर दिया था। इस प्रकार से मुस्लिम काल में भी गोहत्या पूर्ण रूप से तो नहीं, किन्तु समय-समय बन्द होती रही है।

अंग्रेजी सेनाओं के लिये पर्याप्य मात्रा में मांस प्राप्त करने के लिये नौजवान गौवों का वध बड़े जोरों से हुआ। पिछले युद्ध में अमेरिकन फौजिओं के लिये गाय के मांस की बड़ी मांग की गई। उस समय ८० रु० मन बैल या गाय का मांस बिकने लगा। व्यापारियों ने लोभ के वशीभूत होकर नौजवान गाय तथा बैल तखड़ी (तुला) पर चढ़ा दिये। अंग्रेज तथा मुसलमान भी इनके राज्य में प्रचुर मात्रा में मांसाहार करने लगे। अंग्रेजों ने कोई पाबन्दी नहीं लगाई। इसी प्रकार से अन्य भारतीय लोग भी खाते ही थे। यह प्रथम कारण है कि अंग्रेजों ने हमें निर्बल बनाने और दूध घी की कमी करने के लिये गाय के मांस का उपयोग किया।

गोहत्या का दूसरा कारण है कि विदेशों से भारी मात्रा में चमड़े का व्यापार करना तथा अपने देश में भी जूता आदि बनाने के लिये चमड़े की देश में भारी खपत होना। इसी कारण से चमड़े के लिये चार करोड़ गायों तथा बछड़ों का अधिक वध होने लगा। अंग्रेजी काल में सरकारी अनुमान से देश में ९२ लाख गायों का वार्षिक वध होता था। गांव में जो पशु चोरी से मारे जाते थे, उन्हें मिला दिया जावे तो यह संख्या एक करोड़ तक पहुँच जाती थी। इसी प्रकार फौजी डेयरी फार्मों में उत्पन्न होने वाले बछड़े-बछड़ी, कटड़े-कटड़ी, तुरन्त या दो सप्ताह के होने पर ही मार दिये जाते थे जो बहुत अच्छी नसल के होते थे। इनकी भी संख्या अनुमान तीस-पैंतीस हजार से कम नहीं थी। चमड़े, चर्बी व खालों के अधिक व्यापार के विषय में सन् १९४५ में अमेरिका स्थित व्यापार कमिश्नर श्री कृपलानी ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया था कि "भारत से बछड़े तथा अन्य छोटे पशुओं की खालों की मांग बहुत अधिक होती जा रही है। अनुमान है कि युद्ध के तत्काल पश्चात् ही अमेरिका वार्षिक चालीस लाख चमड़ों की खपत करेगा। इसी प्रकार अमेरिका के अतिरिक्त जो देश खालें खरीदेगा वह इंगलैंड होगा।" इसी प्रकार अखिल भारतीय जूता एसोशियेशन के प्रधान श्री कैसर अहमद जो उन दिनों अमेरिका में थे, ने न्यूयार्क की ग्लोब एजेन्सी को निम्न वक्तव्य दिया था कि—भारत में अब जूता बनाने के बारह कारखाने हैं। जिन में नित्यप्रति पचास हजार जोड़ी जूते बनाये जाते हैं। अब हमारी योजना है कि इन कारखानों की संख्या साठ करदी जाय, जिनमें नित्य तीस लाख जोड़ी जूते तैयार होंगे। इतने जूते तैयार करने के लिये वार्षिक—साढ़े तीन करोड़ से अधिक खालों की अधिक आवश्यकता होगी। उन दिनों केवल कारखानों में तैयार होने वाले जूतों के लिये ही अनुमान ९८ लाख पशु मारे गये। इन दिनों भी अनुमान दस लाख गायें केवल देश के कारखानों की आवश्यकता पूरी करने के लिये ही मारी जाती हैं। सन् १९४३ की खाल रिपोर्ट के अनुसार गाय

की हल्की खालें देने वाला भारत ही संसार भर में सबसे बड़ा देश है। एक तिहाई मांग यहीं से पूरी करने के लिये चार करोड़ से अधिक गायों व बैलों तथा नन्हें बछड़ों का वध हुआ।

गोहत्या का तीसरा कारण यह है कि वनस्पति घी, मक्खन निकले दूध का पाउडर तथा दूध घी की मिलावट। वनस्पति घी आदि सस्ते मिले, इनके सामने शुद्ध घी दूध नहीं ठहर सका। वनस्पति वास्तव में मूंगफली आदि का बिगड़ा हुआ तैल है। घी का रङ्ग-रूप केवल खरीदने वाले को घी का धोखा देकर बेचा जाता है। किसी पौष्टिक पदार्थ की वृद्धि नहीं होती, वरन् कास्टिक सोडा निकल आदि के प्रयोग से यह ठीक हजम नहीं होता, इसका बड़ा भाग व्यर्थ चला जाता है। यह तेल की अपेक्षा घटिया चीज है। पशुओं द्वारा प्राप्त शुद्ध घी की बिक्री पर बुरा प्रभाव डालता है तथा घी की प्रतिस्पर्धा करके सभी जगह बिक रहा है। वनस्पति घी के विषय में हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रिंसिपल श्री गोड्बोले के लेखानुसार तो वनस्पति में विटामिन या पौष्टिक पदार्थों के लिये शार्क मछली का तेल ही मिलाया जाता है जो कि धार्मिक दृष्टि से भी त्याज्य है। इसी प्रकार इसे यदि किसी सद्यः प्रसूता स्त्री को खाने के लिये दिया जाय तो वह या तो मर जायगी, या फिर कभी सन्तान ही न होगी। हो जाय तो जल्दी ही मर जायगी। अतः यह भी गौ आदि पशुओं के पालन के मार्ग में एक विशेष बाधक हो रहा है। इसमें अनेकों भारतीय अपना पुरुषत्व खो बैठे हैं। इसके विषय में ८ फरवरी सन् १९४० में महात्मा गांधी ने हरिजन सेवक में लिखा था कि "यदि वनस्पति घी इसी तरह से चलता रहा तो पशु केवल दर्शनीय चीज रह जायेंगे।" इसी तरह से सन्त विनोबा भावे ने भी वनस्पति घी का विरोध किया है। मक्खन निकला दूध चूर्ण प्रायः विदेशों में पशुओं का भोजन है। इन दिनों यहाँ पर बड़ी संख्या में आ रहा है। अंग्रेजी राज्य में सन् १९४४ में अठारह हजार मन आया। ढाई तोले चूर्ण आधा सेर पानी में गरम करने से दूध जैसी चीज तैयार हो जाती है। जो दूध के नाम से दूध में मिलाकर तथा दही जमा कर बिकती है। कुछ मिठाइयां भी बनती हैं। यह वनस्पति तेल या नकली घी तथा चूर्ण, दूध की मिलावट को बढ़ाकर तथा शुद्ध दूध-घी सस्ता करके किसान को बेकार करते तथा दुधार पशुओं का निकम्मा और व्यर्थ बनाकर हानि पहुंचा रहे हैं, गोहत्या का चौथा कारण है ट्रैक्टर, ट्रक, रासायनिक खाद।

देश में बैलों तथा दूध देने वाले पशुओं की कमी पूरा करने का यत्न अंग्रेजी सरकार ने नहीं किया, किन्तु इस कमी को पूरा करने के लिये सरकारी सहायता देकर ट्रैक्टरों, ट्रकों से खेती कराने का यत्न किया। इसीलिये विदेशों से ट्रैक्टर आदि मंगवाये। किन्तु जिस देश के किसान जमीन के छोटे-छोटे भागों में खेती करते हैं, जहाँ खेती तथा पशु एक ही व्यवस्था के अभिन्न अङ्ग हों, वहाँ ट्रैक्टर लाभदाक नहीं। ट्रैक्टर का खरीदना—मरम्मत करना, तथा ठीक रखना भी किसान की पहुँच से बाहर है। वैसे भी एक ट्रैक्टर लगभग १२ हजार रुपये में आता है। और यदि ट्रैक्टर ले भी लिया जाय तो वह दूध नहीं दे सकता, तथा खाद भी नहीं दे सकता। दूध घी से अंग्रेजों को क्या प्रयोजन था। उन्हें तो इस देश को सर्वनाश की ओर ले जाना था, महान् खेद की बात है कि कांग्रेस सरकार ने भी अपनी पञ्चवर्षीय योजना में भी ट्रैक्टरों के लिये तीस करोड़ रुपया रक्खा है। जिससे उनकी वृद्धि में प्रोत्साहन मिल रहा है तथा पशुधन को हानि पहुंच रही है। इसी प्रकार ट्रकों से भी पशुओं को पहुँची है। भारत का किसान और उसके बैल, जब खेती से समय बचता है या जब खेतो का काम नहीं होता तब, बैल-गाड़ियों के किराये द्वारा अपना एवं बैलों का निर्वाह करता है। इस देश में ८७ लाख बैल गाड़ियां है जिससे अनुमान एक करोड़ आदमियों और दो करोड़ पशुओं को काम मिलता है। दुःख की बात है कि आज ट्रकों की संख्या बढ़ती जा रही है। उन्हें सरकार की ओर से प्रोत्साहन मिल रहा है। इसी प्रकार रासायनिक खाद भी पशुधन तथा जमीन को स्थायी रूप से नष्ट करने वाली चीज है। रासायनिक खाद की बाबत कितने ही बड़े-बड़े विशेषज्ञों का निश्चय है कि वह कुछ समय के लिये खेती की पैदावर को बढ़ाती है, पर स्थायी रूप में जमीन को निकम्मा बनाती है और वह भारी मूल्य देकर

विदेशों से मंगवानी पड़ती है तथा देश में बांटने का खर्च होता है । यह भी अंग्रेजी सरकार की ही देन है—जिससे पशुधन नष्ट हो । पशुओं का खाद बिना पैसे मिलता है, किन्तु विदेशियों की नकल जो करनी है । पञ्चवर्षीय योजना के अनुसार देश में दो हजार दो-सौ चालीस करोड़ मन गोबर और अनुमानतः इतना ही गोमूत्र बिना परिश्रम के पशुओं से मिलता है । यह गोबर तथा गोमूत्र हमारी सारी जमीन को उर्वरा करने को पर्याप्त है । इस प्रकार से अनेक षड्यन्त्र अंग्रेजों ने बनाये जिससे कि भारतीय जनता दिनों दिन पूर्णरूप से अंग्रेजों के ही समान होती चली गई । अंग्रेजों ने पर उपकारी पशु गाय आदि की हत्या की सीमा को अन्तिम सीमा तक पहुंचा दिया । गोहत्या के बारे में इससे अधिक और क्या लिखा जाय ? अंग्रेजों ने अपने दो-सौ वर्ष के राज्य में भारत को सर्वप्रकार से पंगु बनाकर सर्वनाश के गहरे गर्त्त में धकेल दिया ।

अब तो देश गाये के घी, दूध बिना रोगों का घर बन चुका है । देश में रोगों की बाढ़ आई हुई है । चारों तरफ हाहाकार मचा हुआ है । भारतीय सन्तान निर्बल होकर क्षय रोग से पीड़ित हो रही है । भारतीय बच्चों को दुग्ध, घृत नहीं मिल रहा है । इसीलिये भारतवर्ष में क्षय रोगियों की संख्या पचास लाख तक पहुँच गई है । विलायती बी० सी० जी० के इंजेक्शन लगा कर क्षयरोग की रोकथाम का प्रयत्न हो रहा है तथापि जब तक श्रद्धापूर्वक गौ का महत्त्व न समझा जायगा तब तक काम बिगड़ता ही जायगा । गौ की रक्षा शारीरिक तथा आर्थिक व बौद्धिक उन्नति को दृष्टि में रखते हुये सभी प्रकार से उपादेय ही है ।

वैद्यक के जितने भी योग हैं, सभी में गाय का घी, दूध, दही, मूत्र, गोबर आदि-आदि वैद्यों के द्वारा उपयोगी बताये जाते हैं । वैद्यक के ग्रन्थ चरक, सुश्रुत में भी गाय के ही घी-दूध की बड़ी प्रशंसा की गई है । यह शारीरिक रोगों की अमूल्य औषधि है । सभी रोगों में यही उपयोगी बतायी गयी है । जैसा कि धन्वन्तरि के मत से गोदुग्ध—

"पथ्यं रसायनं बल्यं हृद्यं मेध्यंगवांपयः"

अत एव भारतीय आर्य "पंचगव्य" का ही प्रायशः सेवन करते थे । इसी से हमारे पूर्वज घी, दूध का सेवन कर सौ वर्ष की आयु पाते थे । एक यह भी अनुभूत बात है कि गाय का घी, दूध खाने-पीने से मनुष्यों का कद लम्बा हो जाता है । और अगर दस पन्द्रह वर्ष तक लगातार गाय के घी, दूध का सेवन किया जाय तो बांझ स्त्री की भी सन्तान होजाती है । इस प्रसंग पर मुझे राजा दिलीप की गोभक्ति का स्मरण हो जाता है, जिन्होंने गोसेवा द्वारा पुत्र का मुख देखा था, आज के समय में भी यदि कोई पुरुष गोसेवा करे तो उसे अवश्य ही यथाकामना फल प्राप्ति हो सकती है । इसका अर्थ यह हुआ कि गाय के सहवास और उसके दूध में कोई पुरुषत्व-आधायक चमत्कारिणी शक्ति है स्वयं गाय की प्रजनन शक्ति उसके बुढ़ापे तक बनी रहती है उसकी जीवनी शक्ति भी अद्भुत होती है । लूले, लंगड़े और अपंग पशु भी आर्थिक दृष्टि से अति लाभकारी हैं—जैसे कि सरकारी पशु विशेषज्ञ डा० रायट यथा सर आर्थर आलवर की सन् १९३० व ३२ की रिपोर्ट के अनुसार एक पशु की केवल गोबर की आमदनी एक वर्ष की १३ रुपये थी, आज के महंगे के भाव के अनुसार उसकी आय ४०) रु० से कम नहीं । गोमूत्र की आमदनी इसके अतिरिक्त है जो ३० रु० से कम नहीं है । यदि भस्मों में गोमूत्र के प्रयोग की गणना की जाय तो एक वर्ष में एक गाय के मूत्र से कई हजार रुपये की भस्में तैयार की जा सकती हैं । यह स्पस्ट मत हरयाणा भूमि के प्रसिद्ध तपस्वी कर्मठ विद्वान् ब्रह्मचारी भगवान् देव जी आचार्य गुरुकुल झज्झर का है ।

अतः इन अनुपयोगी कहे जाने वाले गाय आदि पशुओं से मरणपर्यन्त लाभ ही लाभ है । कहने का अभिप्राय सारा यह है कि—

मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः । इति

सर्वोत्तम रसायन (टानिक)

❋ बलदामृत ❋

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है, इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजला) की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास (खांसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपैदिक), श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आयी निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढङ्ग की एक औषधि है।

छोटी शीशी २)—बड़ी शीशी ५)

—(:—:)—

कुछ महानुभावों की सम्मतियां

"आर्य आयुर्वैदिक फार्मेसी" गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की रसायनशाला में निर्मित 'बलदामृत' का सेवन किया। वास्तव में मन्दाग्नि एवं मस्तिष्क की निर्बलता निवारण करने में अनुपम रामबाण सम अमृत औषध है। मेरे रोग को दो ही दिनों में नष्ट कर मुझे शक्ति-सम्पन्न बनाया। और प्रतिदिन मेरी क्षुधा प्रदीप्त होने लगी। मैं मस्तिष्क का कार्य दिन भर करने पर भी नहीं थकता हूँ। यहीं रह कर मैंने २५ दिन में ३०३ श्लोक ब्रह्मर्षि विरजानन्द-चरित के निर्माण किये। अनेक रोगों पर (जो विज्ञापन में वर्णित हैं) सचमुच अतुल लाभकर बलप्रद औषध रसायन है। 'हाथ-कंगन को आरसी क्या ?'

मेधाव्रताचार्य पो० पेवला (नासिक)
'दयानन्द दिग्विजय' महाकाव्यकार

बलदामृत का तो कहना ही क्या ? इसने तो 'औषध मीठी होते हुए लाभप्रद होनी कठिन है' इस उक्ति को भी बिल्कुल झूठ सिद्ध कर दिया है। यह जितनी मीठी है उतनी ही गुणकारक भी है। पुराने नजले और जुकाम, खांसी, फेफड़ों की कमजोरी के लिये बहुत अच्छी सिद्ध हुई है। हमारे एक मिस्त्री जी को पुराना जुकाम (पीनस) समाप्त हो गया। खून तो यह पर्याप्त मात्रा से बढ़ाती ही है।

बलवीरसिंह (मद्रास)

अनुमान तीस वर्ष से मैं उत्तर भारत के सब भागों—विशेषतया ग्रामीण जनता में वैदिक धर्म के प्रचारार्थ भ्रमण करता रहा हूँ। प्रचार कार्य में अनियमितता होने से स्वास्थ्य में हानि पहुंचना अवश्यंभावी है। इस कारण मैं प्रायः च्यवनप्राश आदि औषधियों का प्रयोग करता रहा। गुरुकुल झज्जर की रसायन शाला का विज्ञापन मैंने "सम्राट्" साप्ताहिक में पढ़ा। "बलदामृत" सेवन करने की इच्छा हुई। मुझे यह कहने में अतीव प्रसन्नता है कि बलदामृत के थोड़े सेवन से ही मेरे स्वास्थ्य में अपूर्व लाभ हुआ। नजला और जुकाम आदि शिकायतों से पिण्ड छुट गया। मैं अब भी बलदामृत का सेवन करता हूँ। यह औषधि मुझे बड़ी गुणकारी सिद्ध हुई है।

पृथ्वीसिंह बेधड़क कविरत्न-आर्योपदेशक

सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली।

ओ३म्

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की बहुमूल्य औषधियाँ

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इस के लगाने से आंखों के सब रोग-जैसे आंख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट) दूर का कम दीखना (लांग साइट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आंख के सब रोगों की राम बाण औषध है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ स्वच्छ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है। सेवन विधि-पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रातः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ॥) शीशी

कुछ महानुभावों, की सम्मतियां

I have used Netra Jyoti Surma. After a great search I have found a really good eye soother. I have put my whole family on it.

P. P. Kumaria

(भावार्थ) मैंने नेत्र ज्योति सुर्मे का प्रयोग किया। बहुत बड़ी खोज के पीछे यथार्थ में एक बहुत श्रेष्ठ आंखों को शान्त करने वाली औषध प्राप्त हुई। मैंने अपने सारे परिवार के लिये यह (गुरुकुल झज्जर का सुर्मा) प्रयोग करने के लिये दे दिया है।

आर. आर. कुमरिया प्रिंसिपल गवर्नमेंट कालेज रोहतक

२—ऐनक लगवाने पर भी पढ़ने-लिखने में विशेषता के कारण आंखों पर दबाव पड़ता था। इसलिये मैं कभी कभी कोई नेत्रसुर्मा प्रयोग में लाता रहा, परन्तु विशेष लाभ प्रतीत नहीं होता था। गुरुकुल झज्जर के नेत्र ज्योति सुर्मा के थोड़े समय के प्रयोग ने ही मुझे पूर्ण लाभ पहुँचाया। अब आंखें थकती नहीं। मुझे पूरा सन्तोष है।

जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती संस्थापक सम्राट् देहली

३—"नेत्र ज्योति सुर्मा" का प्रयोग मैंने किया और मेरा अनुभव है कि यदि "नेत्र ज्योति सुर्मा" का प्रयोग लगातार किया जावे तो अधिकांश नेत्र रोगों से मुकि प्राप्त हो सकती है।

फतहचन्द अध्यापक

टी.आई.टी. हाईस्कूल भिवानी

त्रिफलादि घृत और नेत्र ज्योति सुर्मा

४—एक रोगी जिसकी आंखें लाल रहती थीं, बहता था, पीड़ा के साथ साथ दृष्टि भी न्यून हो गई थी। मैंने उसे एक मास तक प्रातः सायं त्रिफलादि घृत गोदुग्ध के साथ सेवन कराया तथा दोनों समय नेत्र ज्योति सुर्मा आंखों में डाला। इस से उसकी आंखें सर्वथा रोगरहित व ठीक हो गईं।

मैं अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि नेत्र ज्योति सुर्मा और त्रिफलादि घृत रसायनशाला गुरुकुल झज्जर के जितने गुणकारी सिद्ध हुए हैं उतने किसी अन्य फार्मेसी के नहीं। इन से आश्चर्यजनक लाभ होता है।

वैद्य सोमवीर आर्य आयुर्वेदाचार्य M.A.M.S.

५—हम ने इस सुर्मे को अनेक जड़ी बूंटियों के रसों से भावना देकर निरन्तर छः मास के घोर परि से तैयार किया है। मैंने इसका सैंकड़ों रोगि अनुभव किया है। बच्चे, बूढ़े, स्त्री, पुरुष स सकते हैं। आंखों में शान्ति पहुँचाता है। प्र प्रयोग के लिये बहुत ही अच्छा सुर्मा है।

भगवानदेव आचार्य

गुरुकुल झज्जर रोहतक

१—रोहतक में मिलने का पता—
गुरुकुल फार्मेसी, रेलवे रोड (रोहतक)
२—देहली में मिलने का पता—
"नवजीवन सञ्चारक कम्पनी"
आर्य समाज मन्दिर, सीताराम बाज़ार—देहली
३—दादरी में मिलने का पता—
वैद्य सोमवीर आर्य औषधालय
रेलवे रोड—डालमिया दादरी

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजिस्टर्ड) रोहतक

संस्था समाचार

गुरुकुल झज्जर की विशेषता

अंग्रेजी राज्य में अंग्रेजी को प्रोत्साहन दिया गया, परिणामस्वरूप अंग्रेजी भारतीय मस्तिष्क में बैठ गई जो निकालने पर भी नहीं निकलती। संस्कृत को ऐच्छिक विषय बना दिया था, उस पर भी संस्कृत के पाठ्यक्रम को ऐसा जटिल बना दिया जिससे बालक के मस्तिष्क पर रूप रटने आदि का भार पड़े और वह संस्कृत को जटिल भाषा समझकर ऐच्छिक विषय के रूप में भी न ले सके। इतना ही नहीं, संस्कृत कालेज में भी अर्वाचीन ग्रन्थों को ही रक्खा। जिनसे दश-दश, बारह-बारह वर्ष एक एक विषय में लगा कर भी पढ़ने वाला यह नहीं कह सकता कि उस विषय पर उसका अधिकार हो गया है।

विश्व की समस्त भाषाओं की जननी संस्कृत पर यह कुठाराघात महर्षि दयानन्द जी महाराज से न देखा गया। उन्होंने जहाँ स्वराज्य के लिये जनमत को जागृत किया, वहाँ पाठ्यक्रम में रामायण-महाभारत कालीन पाठ्यप्रणाली ही को उपयोगी बतलाया और विश्व की समस्त यूनिवर्सिटियों के समक्ष एक विशेष पाठ्यक्रम को रक्खा जिसका उन्होंने अपने मुख्य ग्रन्थों में निर्देश किया है। अपने लोकप्रसिद्ध अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश और संस्कार विधि में तो उन्होंने शिक्षा क्रम का पूरा-पूरा विवरण (चार्ट) ही दे दिया है।

महर्षि ने इस शिक्षा क्रम में चालीस विषयों का निर्देश किया जिसे आजकल की एक यूनिवर्सिटी तो क्या सब मिलकर भी नहीं पढ़ा पातीं।

उन्होंने अपने इस शिक्षा क्रम के विषय में "जितनी विद्या इस (आर्ष पाठ विधि) रीति से बीस-इक्कीस वर्ष हो पाती है, उतनी अन्य प्रकार से शत वर्ष में भी नहीं हो सकती" ऐसा निर्देश किया है।

प्राचीन ऋषि-महर्षि तत्ववेत्ता होते थे। उनके बनाये हुए ग्रन्थों को ही इस आर्ष शिक्षा क्रम में स्थान दिया है। और अर्वाचीन क्षुद्राशय मनुष्यों के ग्रन्थों का पठन-पाठन वर्जित बतलाया है। उन्होंने लिखा कि है कि "महर्षि लोगों का आशय जहाँ तक हो सके वहाँ तक सुगम और जिसके ग्रहण में समय थोड़ा लगे इस प्रकार का होता है। और क्षुद्राशय लोगों की मनसा (अभिप्राय) ऐसी होती है कि जहाँ तक बने वहाँ तक कठिन रचना करनी जिसको बड़े परिश्रम से पढ़कर अल्प लाभ उठा सकें जैसे पहाड़ का खोदना और कौड़ी का लाभ होना और आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना ऐसा है जैसा एक गोता लगाना, बहुमूल्य मोतियों का पाना"

इतना ही नहीं महर्षि ने स्वकालीन पञ्जाब के राज्यपाल को पाठविधि लिखकर भी भेजी थी।

प्रसन्नता की बात है कि गुरुकुल झज्जर ने इसी प्राचीन आर्ष शिक्षाप्रणाली को स्थान दिया है।

आर्य समाज के प्रारम्भिक दिनों में आर्य समाज में विद्वानों की कमी थी। जो भी विद्वान् थे वह अर्वाचीन पठन-पाठन प्रणाली से पढ़े हुए थे। उनका अभिमत था कि संस्कृत व्याकरण में बिना लघुकौमुदी के पढ़े अष्टाध्यायी में प्रगति हो ही नहीं सकती। परन्तु पाठक गण यह जान कर प्रसन्न होंगे कि गुरुकुल में बिना लघुकौमुदी आदि के पढ़े-पढ़ाये ही अष्टाध्यायी का अध्ययन होरहा है "संस्कारोत्तरकालं ब्राह्मणाः व्याकरणं स्माधीयते" अर्थात् वेदारम्भ संस्कार के उपरान्त ब्राह्मण व्याकरण को पढ़ा करते थे, ऐसा महाभाष्य का उल्लेख मिलता है। उस समय तो लघुकौमुदी थी नहीं, जब उस समय बिना लघुकौमुदी की सहायता के व्याकरण को पढ़ा जा सकता था तो आज भी कोई कारण नहीं जो न पढ़ाया जा सके।

प्रभु की अनुकम्पा और महर्षि के आशीर्वाद से यह आर्ष शिक्षाक्रम सफल हो रहा है। प्रथम श्रेणी के ब्रह्मचारी पातञ्जल महाभाष्य का अध्ययन कर चुके हैं। समय भी पांच वर्ष से अधिक नहीं लगा है। महर्षि ने महाभाष्य पर्यन्त अधिक से अधिक साढ़े चार वर्ष का समय लिखा है। वह शत प्रतिशत ठीक ही है। व्याकरण

के उपरान्त निरुक्त, छन्द और अलङ्कारों का भी ब्रह्मचारी अध्ययन कर चुके हैं।

हरियाणा प्रान्त के केन्द्रिय स्थान झज्जर में ऐसे गुरुकुल की आवश्यकता थी जो पूरी हो रही है। सिद्धान्त में भी ब्रह्मचारी आर्यकुमार परिषद् की सिद्धान्त शास्त्री और सिद्धान्त वाचस्पति आदि परीक्षायें उत्तीर्ण कर चुके हैं।

नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्री आचार्य भगवान् देव जी के निरीक्षण में ब्रह्मचारियों का आचार बहुत ऊंचा है। ब्रह्मचारी प्रतिभासम्पन्न दिखाई देते हैं। महर्षि के सिद्धान्तों में अभिरुचि और साधारण रहन-सहन यहां की विशेषता है।

भारतीय संस्कृति के उपासक, भारत सरकार के गृहमन्त्री सुयोग्य विद्वान्, माननीय श्री डा० कैलाश नाथ जी काटजू ने गुरुकुल को देखकर प्रसन्नता प्रकट की। उनके निम्न उद्‌गार पठनीय हैं—

"आज गुरुकुल आया, अधिक आनन्द हुआ, सुन्दर काम हो रहा है। फिर आने की कामना लेकर जारहा हूं"

माननीय डा० काटजू जी ने गुरुकुल की गोशाला की गायों के विषय में जब यह सुना कि यहाँ १५ सेर दूध देने वाली गायें भी हैं तो बड़े ही प्रभावित हुए और आश्चर्य प्रकट किया और कहा कि ऐसे भी स्थान हैं जहाँ पर लीपने के गोबर के लिये गाय को पालते हैं। उन्होंने अवकाश मिलने पर गुरुकुल में ठहरने की इच्छा प्रकट की।

रसायनशाला

प्रान्त में गुरुकुल का प्रभाव बढ़ता जारहा है। गुरुकुल की एक सौ सैंतीस बीघे भूमि है जिसमें कृषि होती है। रहट वाले दो कुंए भूमि में बने हुए हैं जिनसे सिंचाई होती है। यह भूमि गुरुकुल के स्वावलम्बी होने में बड़ी साधक है। गोशाला का भी यह सहारा है। साथ ही आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला (फार्मेसी) भी बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है। दो वर्ष के स्वल्प से समय में इसका विशाल रूप हो गया है। पचास सहस्र रुपये की औषध विक्री के लिये इसमें हैं। औषध सारी शास्त्रोक्त ढङ्ग पर तैयार की जाती हैं जो कि बड़ी उपादेय सिद्ध हुई हैं। इस समय गुरुकुल के लिये निम्न आवश्यकतायें हैं:—

गुरुकुल की आवश्यकतायें

१—विद्यालय भवन दश कमरे	२५०००)
२—गोशाला भवन आठ कमरे	२४०००)
३—औषधालय भवन चार कमरे	१००००)
४—कर्मचारियों के लिये भवन	११०००)
५—यज्ञ शाला भवन	१००००)
६—धर्मशाला भवन	५०००)
७—भण्डार भवन	५०००)
८—आर्ष पाठ विधि कोष	१०००००)
९—आयुर्वेद महाविद्यालय भवन तथा चालू खर्च	१०००००)

सात्विक दान

दानवीर सेठ श्री शेरसिंह जी आर्य मोहल्ला बावरा रोहतक ने गुरुकुल की आर्य आयुर्वैदिक रसायन शाला (फार्मेसी) के लिये एक चूर्ण करने वाली मशीन, तथा एक गोली बनाने वाली मशीन, जिनका मूल्य दो सौ पचास रुपये हैं प्रदान की हैं। इसी प्रकार उन्होंने सात सौ पचास रुपये के मूल्य की श्रृङ्ग, गोदन्ती, लोह, रूपामाक्षिक, मुक्ताशुक्ति इत्यादि भस्में और कजली जिन सब का भार साढ़े पन्द्रह सेर तथा मूल्य ७५०) प्रदान की है। इस १०००) सात्विक दान के लिये श्रीमान् सेठ जी को बधाई तथा धन्यवाद।

भवन निर्माण के लिये दान

मातनहेल निवासी श्रीमान् जगराम जी आर्य ने नवीन भवन निर्माण के लिये ५०१) प्रदान किये हैं श्री जगराम जी आर्य बड़े ही श्रद्धालु आर्य हैं। समय-समय पर गुरुकुल के कार्यों में भी सहयोग देते रहते हैं। इस शुभ सात्विक दान के लिये उन्हें बधाई।

आयुर्वेद महाविद्यालय

श्री सूबेसिंह जी आर्य गढ़ी बोहर, श्री दफेदार दयाराम जी आर्य झापड़ौदा तथा श्री मा० सुखलाल जी आर्य घेवरा देहली निवासी तीनों सज्जनों ने आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये एक सौ एक, एक सौ एक रुपये प्रदान किये हैं। आशा है अन्य महानुभाव भी आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये सहयोग देते रहेंगे। तीनों सज्जनों को बधाई तथा धन्यवाद

निवेदक-मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल झज्जर।

आर्य आयुर्वदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्झर (रजिस्टर्ड) रोहतक की

बहुमूल्य औषधियों का संक्षिप्त सूचीपत्र

चयवनप्राश—उत्तम स्वादिष्ट रसायन है, शरीर की निर्बलता, दिल की धड़कन, पुरानी खांसी, दमा, क्षय, तपेदिक, को दूर करके बलवान् बनाता है।

मूल्य २) पाव, ७) सेर

नेत्रज्योति सुर्मा—आंख के प्रत्येक रोग जैसे पानी बहना, दुखना, खुजली, कुकरे आदि को दूर करके नेत्र ज्योति बढ़ाता है। मूल्य ॥)

कुकरे फोले रोहे के लिये विशेष सुर्मा १)

नेत्रामृत—लाली, कड़क, धुन्ध, ढलकवा, रोहे तथा भयंकरता से दुखती आंखों के लिये जादू भरा विचित्र योग है। बड़ी शीशी ।।=), छोटी ।=)

बलदामृत—हृदय, उदर, एवं मस्तिष्क रोगों में रामबाण है। श्वास, कास, यक्ष्मा तथा फेफड़ों की निर्बलता दूर करके अतीव बल देती है, सुमधुर रसायन है। मस्तिष्क का कार्य करने वाले विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त लाभदायक है ५) शीशी, नमूना २)

ज्वरामृत प्रत्येक प्रकार के ज्वर की अत्युत्तम औषध है। नए पुराने बिगड़े हुए मलेरिया, विषमज्वर में यह अमृत का काम करती है । ५) शीशी, छोटी २)

बालरोगामृत—बालकों के हरे पीले दस्त, अपच, अजीर्ण, तथा दांत निकलते समय के सभी रोग दूर करके बालकों को मोटा ताजा बनाता है।

४) शीशी, छोटी शीशी २)

व्रणामृत—भयंकर फोड़े फुन्सी, गले सड़े घाव तथा नासूर (सरह) रोगों की अद्वितीय औषध है। १) शीशी

पाचनामृत—मंदाग्नि, अरुचि, अजीर्ण, पेट का फूलना, भारीपन, शूल, जी मचलाना आदि पेट के सभी रोगों को दूर करता है। जिगर तथा तिल्ली की महौषध है। ५) शीशी, छोटी शीशी २)

रक्तपित्तामृत—शरीर के मुख नासिका गुदा आदि किसी भी मार्ग से तथा सांप के काटने, बबासीर तथा अन्य किसी भी रोग के कारण कितनी ही अधिक मात्रा में खून गिरता हो उसे बन्द करता है। रक्तपित्त की अचूक औषध है। ४) शीशी

स्वप्नदोषामृत—स्वप्नदोष से हताश युवकों के लिये अमृत का काम करती है। प्रमेह तथा वीर्यसम्बन्धी समस्त रोगों को समूल नष्ट करती है।

४) बड़ी शीशी, २॥=) छोटी शीशी

प्रसूतामृत--यह प्रसूता स्त्री (जच्चा) के सभी रोग, ज्वर, कास, अतिसार (दस्त) सब आदि रोगों को समूल नष्ट करके प्रसूता की निर्बलता दूर करके बल प्रदान करता है। ४) बड़ी शीशी

स्त्रीरोगामृत—यह स्त्रियों के प्रत्येक रोग में रामबाण है। रक्त व श्वेतप्रदर तथा मासिक धर्म के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। प्रसूत रोग नष्ट करता है।

४) बड़ी शीशी

कर्णरोगामृत—कान से पीप आना, बहरापन, कर्णपीड़ा आदि कर्णरोगों को समूल नष्ट करता है। प्रतिदिन के सेवन से कानों का कोई रोग नहीं होने पाता।

१) शीशी

पामामृत—यह पामा (खुजली), दाद इत्यादि चर्मरोगों की अत्युत्तम औषधि है। १) शीशी

अर्शरोगामृत—अर्शरोग (बबासीर) खूनी हो या बादी हो प्रत्येक प्रकार की बबासीर में रामबाण औषधि है। बबासीर की इससे बढ़ कर कोई औषधि नहीं। खून आने को तो लेते ही बन्द कर देती है।

एक मास के सेवनार्थ १०)

शीतपित्तामृत—यह शीतपित्त अर्थात् (छपाकी) पित्त निकलने के रोगों को दूर करती है। पुरानी से पुरानी छपाकी इससे समूल नष्ट होती है।

एक मास सेवनार्थ ४)

बालरोगामृत रस—बालकों के प्रत्येक रोग, हरे पीले दस्त, वमन, अजीर्ण, अपचन तथा दांत निकलते समय के सभी रोग, ज्वर, खांसी आदि को दूर करता है। तथा बालकों को मोटा करता है।

६) शीशी, छोटी शीशी १)

सूखियारोगामृत रस—जिन गृहस्थों के बच्चे इस सूखियारोग से सूख सूख कर मरते हैं। उनके लिये यह अमृत है, सूखिया रोग की अनुपम औषधि है।

एक मास सेवनार्थ ६)

सूखिया रोगामृत तेल—उपरोक्त गुण—६) रुपये

नपुंसक संजीवनामृत स्वप्नदोषादि रोगों तथा अन्य अप्राकृतिक कारणों से जो पुरुष नपुंसक (नामर्द) हो चुके हैं उनके लिये यह औषधि अमृत के समान लाभदायक है। पुनः पुरुषत्व प्रदान करती है।

५) रुपये

दन्त रक्षक मञ्जन—दांतों से खून पीप का आना, दांतों का हिलना, कृमिरोग, दन्त पीड़ा आदि दांतों के सब रोग दूर करके दांतों को मोती के समान चमकाता है। ॥) शीशी

दन्त रक्षक तेल—दांतों तथा मुख के सभी रोग दूर करता है। प्रतिदिन के प्रयोग से दांत मजबूत होते हैं। कोई रोग नहीं होता। दन्त पीड़ा आदि सब रोग नष्ट होते हैं। ॥) शीशी

संजीवनी तेल—औषध यथा नाम तथा गुण वाली है। कटे फटे घावों को बहुत जल्दी भरता है। अन्दर की चोट की भी उत्तम औषधि है। जादू भरा प्रभाव रखती है। ५) बड़ी शीशी, नमूना ॥=)

ब्राह्मी आंवला तेल—मस्तिष्क की निर्बलता व उष्णता को दूर करता है। बालों को काला करता है। गंज बालों के झड़ने को दूर करता है। मृगी, पागलपन हिस्टीरिया आदि में भी इसका उपयोग हितकर है।

४) पाव

हमारी फार्मेसी में सब घृत शास्त्रीय विधि अनुसार उत्तम गोघृत से बनाये जाते हैं। अतः सर्वश्रेष्ठ हैं—

ब्राह्मीघृत—स्वरभंग, मृगी, अपस्मार तथा हिस्टीरिया आदि रोगों के लिये उत्तम है। दिमाग की कमजोरी दूर करता है। स्मरण शक्ति को बढ़ाता है। दिमागी काम करने वालों के लिये अत्युत्तम है।

४) आध पाव, ३२) सेर

महात्रिफलादि घृत—आंखों की ज्योति बढ़ाता है। आंखों की कमजोरी, रतोन्धी, नेत्रपीड़ा अर्थात् सभी नेत्ररोगों को दूर करता है। दिमाग के थक जाने या सिर में चक्कर आने की उत्तम औषधि है।

४) आध पाव, ३२) सेर

अमृत घृत—सब प्रकार के विषों की अचूक औषध है। स्थावर (संखियादि) जंगम (सर्पादि) के विषों का शमन करता है। ४) आध पाव, ३२) सेर

बृहत्‌शतावरी घृत—रक्तपित्त, शरीर के किसी अंग से खून का निकलना, सिर या किसी अंग में जलन होना, मूत्र का लग कर आना और धातुवों की क्षीणतादि रोगों के लिये बहुत लाभदायक है। हृदयरोग को नष्ट कर पुरुषत्व को बढ़ाता है। ४) आध पाव, ३२) सेर

महावासादि घृत—रक्तपित, खांसी, स्वरभेद, गुल्म रोगों के लिये उत्तम है। रक्तपित्त (शरीर के किसी अंग से खून निकलना) रोग की तो एक मात्र अचूक औषधि है। ५) आध पाव, ४०) सेर

फलघृत—स्त्रियों के गर्भाशय के सब रोगों को दूर करता है। जिन स्त्रियों को गर्भ नहीं ठहरता, या ठहर कर गिर जाता है या कमजोर सन्तान होती है। स्त्रियों के शरीर या कमर दर्द के लिये बहुत अच्छा है। स्त्रियों के आर्तव तथा पुरुषों के वीर्यदोष दूर होते हैं।

४) आधा पाव, ३२) सेर

सुकुमार कुमार घृत—पेशाब का कष्ट से आना, कब्ज, कमरदर्द, योनिशूल आदि के लिये उत्तम है।

४) आध पाव, ३२) सेर

हम सभी तैल उत्तम तिल का तेल स्वयं निकलवा कर सिद्ध करते अतः गुणों में उत्तम होते हैं।

महानारायण तैल—पक्षाघात अर्धाङ्ग शरीर के किसी भाग का खराब हो जाना, गठिया, सब तरह के वायु रोगों की उत्तम औषधि है। ४) आध पाव

नारायण तैल—उपरोक्त गुण हैं— ३) आध पाव

महालाक्षादि तैल—पुराने बुखार तथा क्षय रोग में इस तेल की मालिश से ज्वर तथा जलन दूर होती है। मोतीझारादि रोगों की निर्बलता इस से दूर होती है। कमजोर बच्चे इसकी मालिश से हृष्ट-पुष्ट बनते हैं।

३) आध पाव

लाक्षादि तैल—उपरोक्त गुण हैं।

२॥) आध पाव

मरीच्यादि तैल—खाज, फोड़े फुन्सी तथा दाद इत्यादि चर्मरोगों के लिये बहुत उत्तम है। ४) पाव

विषगर्भ तैल—यह तेल शारीरिक दर्दों के लिये बहुत लाभदायक है। ४) पाव

वात नाशक तैल—यह वात रोगी के दर्द उपशमन के लिये अत्यन्त हितकर है। ३) आध पाव

वृहत्कासीसादि तैल—बवासीर के मस्सों को समूल नष्ट करता है भगन्दर के लिये, गुदापाक तथा घाव नासूर आदि के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

४) आध पाव

महाबलादि तैल—दुबले शरीर को पुष्ट करता है। सातों धातु बढ़ाता है। कास, श्वास राजयक्ष्मा, दाह और और पुराने ज्वर में उपयोगी है। ३) आध पाव

बलादि तैल—उपरोक्त गुण हैं। २॥) आध पाव

रस व गुटिका

अग्निकुमार रस—बदहज्मी, दस्त, और पेट फूलने के लिये है। ।॥) तोला

आनन्द भैरव रस—ज्वर तथा दस्तों में इसका उपयोग किया जाता है। ॥=) तोला

अजीर्ण कंटक रस—अजीर्ण, बादी, हैजा में लाभप्रद है। ।॥=) तोला

इच्छाभेदी रस—यह तेज जुलाब की औषध है, कब्जी होने पर इसका प्रयोग करना चाहिये।

।=) तोला

नवज्वरांकुश रस—इसका भी प्रयोग कब्ज में ही दस्तों के लिये किया जाता है। ॥=) तोला

कस्तूरी भैरव रस (बृहत्)—तीव्र वायु का वेग, उग्र सन्निपात और नाड़ी कमजोर होने पर शीघ्र लाभ करता है। ६४) तोला

गंगाधर रस—दस्त, ग्रहणी, अतिसार में उपयोगी है। २॥) तोला

चन्द्रोदय वर्ति—आंख के रोगों की उत्तम औषध है। ॥) तोला

चन्द्रप्रभावटी—बवासीर, खून की कमी, कमजोरी तथा प्रमेह की अत्युत्तम औषधि है। बदन की सुस्ती दूर होकर पुनः चुस्ती आ जाती है। १) तोला

चन्द्रकला रस—प्रमेह की उत्तम औषध है। सूत्र में दाह होने पर विशेष लाभ करता है। १॥) तोला

नवायस लोह—जिगर की कमजोरी, कामला, प्रमेह, और पुराने बुखार में इसका सेवन किया जाता है। इस से जिगर की कमजोरी दूर होती है, खून बढ़ता है। १।) तोला

पुनर्नवा मण्डूर—पाण्डुरोग, बवासीर, विषमज्वर की उत्तम औषधि है। १।) तोला

मरीचादि वटी—इसके सेवन से सभी प्रकार के कासरोग नष्ट होते हैं। १॥=) छटांक

महाज्वरांकुश—सब प्रकार के ज्वरों में लाभ करता है। ॥=) तोला

मृत्युञ्जय रस—चढ़े ज्वर को उतारने के लिये बहुत उपयोगी है। ॥=) तोला

सुदर्शन रस—ज्वर, तथा यकृत के रोगों में विशेष लाभदायक है। २) तोला

उदर सुधा रस—पेट के प्रत्येक प्रकार के रोग के लिये अमृत का काम करता है। पेट का कोई रोग नहीं रहने पाता। ३) तोला

सुपारीपाक—प्रमेह और स्त्रियों के श्वेत व रक्त प्रदर रोग की बहुत उत्तम औषधि है। इसके सेवन से धातु का पतलापन और प्रदर दूर होता है। शरीर को पुनः शक्तिशाली बनाता है। मूल्य ३) पाव

वासावलेह—दमा, पुरानी खांसी, ज्वर तथा तपेदिक में बहुत लाभप्रद है। मूल्य २।) पाव

वातकुलान्तक रस—इसके सेवन से अपस्मार, मूर्छा, वातव्याधि आदि रोग नष्ट होते हैं। मू० १५) तो०

स्वर्णमालतीवसन्त—मलेरिया, पुराने बुखार तथा क्षयरोग के लिये बहुत उपयोगी है। मूल्य २४) तोला

अभ्रक भस्म—यह उत्तम रसायन है, खांसी दमा क्षयादि रोगों में तथा निर्बलता में विशेषतया दी जाती है। मूल्य ३) तोला

कुरङ्गश्रृङ्गभस्म—पसलियों के दर्द के लिये बहुत लाभदायक है। सामान्य ।-) तोला, उत्तम १) तोला

गोदन्ती हरताल भस्म—खांसी और बुखार के लिये बहुत उत्तम है। मूल्य ।-) तोला

प्रवाल भस्म—स्वप्नदोष, खांसी, दमा, क्षय रोग में बहुत लाभ करती है। मूल्य १॥) तोला

प्रवाल भस्म—(चन्द्रपुटी) प्रमेह, कास तथा उष्णता को दूर करती है। मूल्य २) तोला, उत्तम ४) तोला

मुक्ता भस्म—खांसी, क्षय, दमा तथा निर्बलता में उपयोगी है, उष्णता कम करती है, हृदय को शक्ति देती है। मूल्य ≈) माशा, ६०) तोला

मण्डूर भस्म—जिगर की खराबी, पित्त की अधिकता, खून की कमी, पाण्डु व कामला आदि की विशेष औषधि है। मूल्य ॥=) तोला

मुक्ता शुक्ति भस्म—क्षय, संग्रहणी के लिये अत्युत्तम है। मूल्य साधारण १) तो०, उत्तम १॥) तो०

लोह भस्म—जिगर की कमजोरी, खून की कमी, हृद्रोग, क्षय तथा साधारण निर्बलता के लिये उत्तम है। इसके सेवन से खुन बढ़ता है। मूल्य २॥) तोला

वराट भस्म—भूख न लगना, दस्त, पेट दर्द आदि के लिये उत्तम है। मूल्य ।−) तोला

स्वर्ण माक्षिक भस्म—प्रमेह, पाण्डु, हृदय की निर्बलता और गण्डमाला में उपयोगी है। मू० १॥) तो०

शंख भस्म—पेट का दर्द, आंव, खट्टे डकार आदि के लिये विशेष हितकर है। मू० ।−) तो० विशेष १) तो०

रौप्य माक्षिक भस्म—पाण्डु, प्रमेह, बवासीर, शोथ, नेत्ररोग और शरीर की कमजोरी को दूर करती है। मूल्य १) तोला

हजरूल यहूद भस्म—पथरी रोग की प्रारम्भिक अवस्था में देने से पथरी को गला कर बहा देती है। पेशाब साफ लाती है। मूत्रकृच्छ्र, पेशाब के जलन को दूर करती है। मूल्य १) तोला

वङ्ग भस्म—प्रमेह की खास दवा है, धातु सम्बन्धी प्रत्येक रोग में हितकर है। मूल्य ३) तोला

त्रयोदशाङ्गगुग्गुलु—वात व्याधि की अत्युत्तम औषध है। प्रत्येक प्रकार का बाय, अर्धाङ्ग गठिया आदि रोगों को दूर करता है। मूल्य २) तोला

योगराज गुग्गुलु (बृहत्) वायु के रोगों पर उत्तम है, जोड़ों का दर्द, गठिया, बाय, कमर दर्द, हाथ पैर की कम्पनादि के लिये उत्तम औषध है। २॥) तोला

लक्ष्मी विलास रस – सब प्रकार के वात श्लेष्म के विकारों को दूर करता है। जुकाम, खांसी, हृदय की निर्बलता और शिर दर्द के लिये बहुत लाभदायक है। १॥।) रु० तोला

अश्वगन्धादि चूर्ण—स्वप्नदोष, इन्द्रिय दुर्बलता के लिये एवं विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त हितकर तथा पुष्टिकर है। मूल्य ॥=) छटांक

लवङ्गादि चूर्ण--क्षयरोग में अरुचि, अजीर्ण, अतिसार व खांसी के लिये उत्तम है। मूल्य ।।) छटांक

लवण भास्कर चूर्ण---अग्निमान्द्य के लिये अच्छा है। भूख लगाता है, अरुचि दूर करता है, दस्त साफ आता है। मूल्य ॥=) छटांक

सितोपलादि चूर्ण---खांसी, क्षय, पुराने बुखार और हाजमे की निर्बलता की उत्तम दवा है।

उत्तम २) छटांक साधारण १।=) छटांक

सुदर्शन चूर्ण---जिगर, तिल्ली तथा मलेरिया ज्वर के लिये बहुत लाभदायक है। मूल्य ॥−) छटांक

हिंग्वष्टक चूर्ण---अपचन, दस्तों का आना, वायु गोला; पेट का अफरना तथा पेट दर्द आदि के लिये उतम है। १।) छटांक, उत्तम २) छटांक

त्रिफलाचूर्ण—पेट को नियमित रखता है। मन्दाग्नि, मलबन्ध, पुराने दस्त, पेट दर्द में बहुत उपयोगी है। नेत्रों के लिये हितकारी है। मूल्य ॥) छटांक

आसवारिष्ट

अभयारिष्ट---जिगर की बीमारियों तथा कब्ज को हटाता है। बवासीर के मस्सों को सुखाता है। २) पौण्ड

अशोकारिष्ट---स्त्रियों के श्वेत प्रदर और सब प्रकार के योनि रोगों की उत्तम दवा है। २) पौण्ड

अमृतारिष्ट---पुराने ज्वर तथा मलेरिया के सब प्रभावों को हटाता है। तिल्ली की अच्छी दवा है। २) पौण्ड

अश्वगन्धारिष्ट—मूर्छा, उन्माद, पागलपन, साधारण निर्बलता, ज्ञानतन्तुओं की निर्बलता और वायु की बीमारियों में बहुत अच्छा है।

मूल्य २।) पौण्ड, मधुयुक्त ३।) पौण्ड

अर्जुनारिष्ट—हृदय रोगों में इसका सेवन लाभदायक है । २) पौण्ड

अहिफेनासव---अतिसार, शूल व हैजे में अत्यन्त हितकर है । मूल्य १।।) औन्स

कनकासव—खांसी और दमा के लिये बहुत उपयोगी है । २) पौण्ड

कुटजारिष्ट—संग्रहणी या पुराने दस्तों के लिये बहुत अच्छा है । पाचनशक्ति को बढ़ाकर दस्तों को रोकता है । मूल्य २) पौण्ड

कुमार्यासव—जिगर के रोगों के लिये विशेष उपयोगी है । कब्ज वायु गोला, बवासीर की उत्तम औषध है । स्त्रियों के मासिक धर्म के लिये लाभप्रद है । २।।) पौण्ड, मधुयुक्त मूल्य ३।।) पौण्ड

खदिरारिष्ट—कुष्ठ त्वचा की बीमारियों के लिये बहुत उत्तम है । मूल्य २) पौंड, मधुयुक्त ३) पौण्ड

दशमूलारिष्ट—खांसी, मन्दाग्नि, इन्द्रिय दुर्बलता के लिये उत्तम है स्त्रियों के प्रसूत रोग को दूर करता है बलवीर्य वर्धक है ।
मूल्य ३) पौण्ड, कस्तूरी युक्त ४) पौण्ड

द्राक्षासव—पुरानी खांसी, तपेदिक, भूख न लगना, कब्ज, थकावट तथा कमजोरी को दूर करके शरीर को शक्ति देता है । उत्तम टानिक है मूल्य २।) पौण्ड

लोहासव–जिगर व तिल्ली के विकार वा ज्वर के कारण पाण्डु रोग होने पर यह विशेष लाभदायक है । मूल्य २) पौण्ड

रोहितकारिष्ट–यकृत-प्लीहा (जिगर-तिल्ली) वायु गोला आदि उदर रोगों में लाभदायक है । मूल्य २) पौंड

सारस्वतारिष्ट --दिमाग का थकना तथा बात भूल जाना, गला बैठना आदि रोग दूर होते हैं । स्मृति तथा नेत्रज्योति बढ़ती है । दिमागी काम करने वालों के लिये बहुत उत्तम है । बुद्धिवर्धक है । मूल्य २) पौण्ड

सारिवाद्यासव–खून की खराबी की सर्वोत्तम औषध है । स्वप्नदोष, प्रमेह दूर होकर धातु पुष्ट करता है । फोड़ा फुन्सी त्वचा के सभी रोग दूर होते हैं । स्त्रियों के श्वेत व रक्त प्रदर नाशक है । जिगर ठीक काम करने लगता है । मूल्य २) पौण्ड

बब्बूलारिष्ट–इसके सेवन से अतिसार खांसी, क्षय, उरःक्षत और सोमरोग, रक्तपित्त, कुष्ठादि रोग नष्ट होते हैं । मूल्य २) पौण्ड

बांसारिष्ट–क्षय की खांसी, सूखी, पुरानी खांसी, श्वास और रक्तपित्त के लिये रामबाण है । मूल्य २) पौंड

महामञ्जिष्ठाद्यरिष्ट---सब प्रकार के कुष्ठ, वातरक्त, मेद बढ़ना तथा श्लीपद रोग को दूर करता है ।
मूल्य २) पौंड

भृङ्गराजासव---दमा, खांसी तथा निर्बलता, बुढ़ापा नाशक है । मूल्य ३) पौण्ड

शिरीषासव---स्थावर (संखिया आदि), जङ्गम (सर्प बिच्छू) विष नाशक है तथा रक्त शोधक है ।
मूल्य ५) पौण्ड

कालिन्दासव---यकृत की कमजोरी के लिये बहुत अच्छा है । पाचक एवं रोचक है, रक्तपित्त को भी दूर करता है । मूल्य ३) पौण्ड

कदम्बारिष्ट---सब प्रकार के बुखारों को दूर करके शक्ति प्रदान करता है । मलेरिया की उत्तम औषध है ।
मूल्य ३) पौण्ड

मधुमेहासव---मधुमेह की एकमात्र अचूक औषध है । मूल्य ५) पौंड

गोक्षुरासव---सब प्रकार के मूत्र सम्बन्धी दोष दूर करता है । प्रमेह के लिये भी अत्यन्त हितकर एवं बलवर्धक है । मूल्य ३) पौंड

पारिभद्रासव---इसका सेवन खून की खराबी अर्थात् खाज खुजली दाद चम्बल इत्यादि प्रत्येक चर्म रोगों के लिये अत्यन्त उपयोगी हैं । अतीव रक्त शोधक है । मूल्य २) पौंड

कासमर्दासव---प्रत्येक विष उपद्रव से बचाता है तथा रक्त शोधक है । मूल्य ४) पौंड

बावच्यासव—श्वेत कुष्ठ की अत्युत्तम औषधि है ।
मूल्य ३) पौण्ड

उदरसुधासव—पेट के प्रत्येक रोग के लिये रामबाण है, पेट दर्द तो देते के साथ ही बन्द हो जाता है ।
मूल्य १) औन्स

गन्धकारिष्ट—दस्त; वमन, तथा हैजे के लिये अत्यन्त हितकर है । मूल्य १) औन्स

श्वासरोगारि रस—यह रस हमने विशेष विशेष परिश्रम से तैय्यार किया है। शत प्रतिशत अनुभूत है। दमे के लिये अत्युत्तम औषध है। मूल्य ३) तोला

शुद्ध मधु—बिना किसी मिलावट का शुद्ध मधु औषध अनुपान व कास आदि के लिये। मूल्य ४॥) सेर

हवन सामग्री—शास्त्रोक्त सुगन्धित पुष्टिकारक हवन सामग्री कीटाणुनाशक मिलती है। मूल्य १) सेर

—विशेष नियम—

१- एजेन्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है। १०००) की एक साथ दवाई लेने वालो या इस से अधिक पर ३० प्रतिशत कमीशन देते हैं।

२-वी. पी. से मंगाने वाले सज्जनों को चौथाई मूल्य पहले पेशगी भेजना चाहिये। उधार का नियम नहीं है।

३-हम माल बड़ी सावधानी से भेजते हैं। यदि मार्ग में रेलवे या डाक कर्मचारियों की असावधानी से माल में नुकसान हो तो हम उसके जिम्मेवार नहीं हैं।

४-पत्रोत्तर के लिये जवाबी कार्ड भेजें।

हमारी एजेन्सियां

१-गुरुकुल फार्मेसी, रेलवे रोड, रोहतक।

२-नवजीवन संचारक कम्पनी, आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली।

३-वैद्य सोमवीर आयुर्वेदाचार्य राजवीर मार्केट रोड, डालमिया दादरी, महेन्द्रगढ़

४-जगराम आर्य ग्राम-पोस्ट मातनहेल जि० रोहतक।

५-फतहसिंह आर्य ग्राम पोस्ट रैय्या जि० रोहतक।

६-अतरसिंह आर्य माजरा, पोस्ट जहाजगढ़ जिला रोहतक।

७-कुरड़ाराम आर्य दातौली पोस्ट चिड़िया जिला महेन्द्रगढ़।

८-शिवनारायण आर्य पंचगामा पोस्ट बाढ़ड़ा, जिला महेन्द्रगढ़।

९-दुलीचन्द आर्य आर्यनगर पोस्ट बाढड़ा जिला महेन्द्रगढ़।

१०-बलराम जी वैद्य ग्राम पोस्ट नोनासाजरा जिला रोहतक।

११-दलीपसिंह आर्य ग्राम लूलोढ़ पोस्ट गोरिया जिला रोहतक।

१२-प्यारेलाल आर्य ग्राम पोस्ट भापड़ोदा जिला रोहतक।

१३-कुन्दनलाल आर्य ग्राम पोस्ट इमलोटा जिला महेन्द्रगढ़।

१४-परशुराम जनरल मर्चेंट झज्जर जिला रोहतक।

१५-सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज देहली।

गोवध बन्द करने के लिये ३१ करोड़ हिन्दुओं की
मांग क्रान्तिकारी विचारों के साथ।

'गोरक्षण'

मासिक पत्र में पढ़िये
गोसेवा में भाग लेने के लिये आज ही
२॥) रु० वार्षिक (दो रुपया आठ आना)

मनिआर्डर से भेज कर ग्राहक बनिये। नमूना के लिये।-) का टिकट अवश्य भेजिये। नमूना मुफ्त न मांगिये। गोरक्षा प्रचार के लिये हर प्रकार की सहायता नीचे के पते पर भेजिये।

मैनेजर—'गोरक्षण'
पो० रामनगर, बनारस (उ०प्र०)

परम पिता परमात्मा की कृपा से पूज्य स्वामी वेदानन्द जी महाराज की आंख का मोतिया का आपशन श्रीमान् डा० मथुरादास जी के कर कमलों से सफल रहा। इस समय स्वामी जी महाराज राजपुर रोड़ कोठी नम्बर २० देहली हस्पताल में हैं।

मुख्य अ० स्वा० अभयानन्द सरस्वती। उपदेशक गुरुकुल खेड़ा खुर्द (देहली)

शोक प्रस्ताव

गुरुकुल झज्जर रोहतक के ब्रह्मचारियों तथा कार्यकर्ताओं का यह अधिवेशन गुरुकुल चित्तौड़ के स्नातक, कर्मठ विद्वान् श्री पं० धर्मव्रत जी वेदवागीश के असामयिक देहावसान पर हार्दिक शोक प्रकट करता है। दयालु प्रभु दिवङ्गत आत्मा को सद्गति तथा शोक सन्तप्त परिवारिक जनों को सान्त्वना प्रदान करे।

विश्व प्रिय शास्त्री उपाचार्य,

अवश्य पढ़िये

हैदराबाद सत्याग्रह के सफल सेनानी, परिव्राजकाचार्य, श्री स्वा० स्वन्तत्रानन्द जी महाराज द्वारा लिखित

पूर्वी अफ्रीका और मारीशस आदि में भारतीयों का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक संघर्ष तथा वहां का आंखों देखा वृत्तान्त

भूमिका लेखकः—

भारत सरकार की ओर से मारीशस में भूतपूर्व कमिश्नर एवं प्रसिद्ध पत्रकार श्री धर्मयशदेवजी

स्वामी जी ने विदेशों में जो महान् कार्य किया, इस पर अनेक विदेशी पत्र एवं लेखक चिल्ला उठे। इस पुस्तक में आपको स्वामी जी के उस महान् कार्य का दिग्दर्शन एवं विदेशी पत्र के उन लेखों की नकल, विदेशों में धर्म प्रचार एवं अपने अधिकारों की रक्षार्थ आर्यवीरों द्वारा किये गये त्याग, संघर्ष, एवं बलिदान की रोमाञ्चकारी कहानी, अनेक देशों का चित्ताकर्षक वर्णन, वहाँ की भाषा, संस्कृति, धार्मिक स्थिति, विचित्र रीति रिवाज, सामाजिक अवस्था आदि अनेक विषय पढ़ने को मिलेंगे। २०० से अधिक पृष्ठ, आर्यवीरों एवं यात्रा सम्बन्धी अनेक दुष्प्राप्य एवं बहुमूल्य चित्र, ऊपर तिरंगा आवरण होने पर भी मूल्य केवल २।) ही रखा गया है।

आप सच मानिये

उक्त पुस्तक पढ़कर आप घर बैठे ही विदेश यात्रा का आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। स्वामी जी जैसे अनुभवी यात्री द्वारा लिखी गई इस पुस्तक को पढ़ आप इतना अनुभव प्राप्त करेंगे जो सहस्रों रुपया व्यय करके की आप अन्यथा प्राप्त नहीं कर सकते। ऐसी उत्तम पुस्तक की धड़ा-धड़ विक्री हो यह स्वाभाविक ही है। अतः शीघ्रता कीजिये, अन्यथा आपको पछताना पड़ेगा।

महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी

[लेखक—प्रसिद्ध विद्वान् श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, स० मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, सम्पादक "सार्वदेशिक"।

सजिल्द, लगभग २०० पृष्ठ, ऊपर आर्ट कागज पर महर्षि एवं महात्मा जी का दुरंगा चित्र। मूल्य २)]

महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी इस युग में दो ऐसे महापुरुष हुए हैं जिनकी धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विचारधारा ने इस युग का निर्माण किया है। अनेक अंशों में जहां ये दो महापुरुष एकमत थे वहां कुछ एक बातों में उनका परस्पर मतभेद भी था। उन दोनों के विचारों की समता एवं भेद को जाने बिना वर्तमान राजनीति को समझना कठिन है। इस पुस्तक में श्री पं० धर्मदेव जी ने दोनों महात्माओं के धर्म, समाज, तत्वज्ञान तथा राजनीति आदि विषयक विचारों का निष्पक्ष रूप से अनुशीलन किया है।

पुस्तक के अन्त में परिशिष्ट रूप में रामनाम, हिन्दू-मुस्लिम एकता, अहिंसा, आदि महत्वपूर्ण विषयों पर पं० धर्मदेव जी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा एवं महात्मा गांधी के बीच सन् १९४७ ई० में हुए पत्र व्यवहार की प्रतिलिपि भी दे दी गई है जिससे महात्मा जी के उन के बलिदान से पूर्व जो विचार थे उनका पता चलता है और इस प्रकार पुस्तक का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है।

प्रकाशक—वैदिक साहित्य सदन,
लाल दरवाजा, सीताराम बाजार, देहली।

हमारे द्वारा प्रकाशित एवं प्रचारित पुस्तकें

१. मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प २॥)
२. वैदिक गीता ३)
३. स्वा० दयानन्द और महात्मा गांधी २)
४. अफ्रीका की यात्रा २।)
५. कर्त्तव्य दर्पण ॥।)
६, हितैषी की गीता ॥।)
७. कृषि विज्ञान ॥।)
८. चकबन्दी कानून ॥)।
९. संस्कृतांकुर १।)
१०. संस्कृत कथा मंजरी ।-)
१. ब्रह्मचर्य शतकम् ॥=)
२. श्रुति-सुधा ≡)
३. ब्रह्मचर्य के साधन
भाग १, २ प्रातः जागरण आदि ।-)
भाग ३ दन्त रक्षा ≡)
भाग ४ व्यायाम सन्देश छपेगी
भाग ५ स्नान, संध्या, यज्ञ ।=)
४. ब्रह्मचर्यामृत—
बाल संस्करण ।=)
साधारण संस्करण =)॥
५. तम्बाकू का नशा—
बाल संस्करण ।=)
साधारण संस्करण =)॥
१६. पापों की जड़ शराब—
बाल संस्करण ।-)
साधारण संस्करण ≡)॥
१७. सदाचार पंजिका ॥)
१८. हित की बातें -)॥
१९. नेत्र रक्षा ≡)
२०. व्यायाम का महत्व ≡)
२१. आदर्श ब्रह्मचारी =)।
२२. कन्या और ब्रह्मचर्य ≡)
२३. आर्यकुमार गीतांजलि भाग १, २ ।=)
२४. रामराज्य कैसे हो ? ≡)
२५. सिख और यज्ञोपवीत ≡)
२६. आर्यसमाज की आवश्यकता ।)
२७. पंजाब की भाषा -)
२८. आर्यसमाज के नियमोपनियम =)
२९. आर्योद्देश्य रत्नमाला -)
३०. महर्षि दयानन्द का कार्य -)
३१. महर्षि दयानन्द गोरक्षा -)॥
३२. क्या हम आर्य हैं ? ६० प्र० -)
३३. स्वामी श्रद्धानन्द ॥)
३४. स्वा० आत्मानन्दजी -)
३५. वैदिक सन्ध्या पद्धति -)
३६. वैदिक सध्न्या हवन पद्धति ≡)
३७. वैदिक सत्संग पद्धति ।=)

प्रचारित साहित्य

१. फलों की पंचायत ।=)
२. फोटोग्राफी की कहानी ।=)
३. मोटर कार " ।=)
४. वायुयान " ।=)
५. जलयान " ।=)
६. रेडियो " ।=)
७. बिजली " ।=)
८. सिनेमा " ।=)
९. भाप " ।=)
१०. रेल " ।=)
११. वीरों की कहानियाँ ।=)
१२. अनमोल हीरे ।=)
१३. ब्रह्मचर्य =)
१४. तम्बाकू के काले कारनामे ।=)
१५. बाल क्रान्ति गीत =)॥
१६. भले रहो चंगे रहो ॥)
१७. सरल चिकित्सा ।=)
१८. ऊर्ध्वाङ्ग व्याधि-विज्ञान १)
१९. प्राणायाम विधि ।)
२०. विद्यार्थी जीवन रहस्य ॥।)
२१. आगे बढ़ो १।)
२२. सफलता की कुञ्जी १।)
२३. महर्षि दयानन्द ॥=)
२४. महात्मा सुकरात २।)
२५. शेखसादी ॥=)
२६. मेजिनी १)
२७. मार्टिन लूथर १)
२८. क्यों, क्या, कैसे ? ॥-)
२९. आर्थिक कहानियाँ १)
३०. राजनीति ज्ञान कोष १।)
३१. ईषप नीति निकुञ्ज भाग २, ३, ॥।=), ॥।=), ॥।=)
३२. इस हाथ करो उस हाथ मिले ≡)
३३. संध्या रहस्य १)
३४. बाल शिक्षा =)।
३५. धर्म शिक्षा -)॥
३६. वेदों की आवश्यकता -)॥
३७. Cow Protection =)
३८. सत्यार्थप्रकाश शंका समाधान।
३९. वैदिक वीर तरङ्ग ।)
४०. दयानन्द और वेद ।)
४१. स्वा०दयानन्द और आर्यसमाज ।)
४२. राजनीति कथा माला १)
४ . राष्ट्र की सम्पत्ति ।)
४४. वैदिक विनय भाग १ २)
४५. पद्य माला ≡)
४६. धर्मज्ञान भाग १,२,३,४ ।=), ।), ।), ।=)
४७. हिन्दी प्रकाश ॥)
४८. मेरी पोथी (छोटी) =)
४९. " " (बड़ी) १, २ ॥=), १।)
५०. मदीयम् पुस्तकम् ॥)
५१. मरुभूमि सेवा कार्य १)
५२. व्याकरण विनोद ॥-)
५३. संयुक्ताक्षर बोध १॥।)
५४. समाज सुधार के गायन =)

वैदिक साहित्य सदन आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार देहली ६ ।

हरयाणा प्रान्त के प्रधान गुरुकुल निःशुल्क आर्ष पाठविधि के केन्द्र

गुरुकुल झज्झर रोहतक का

बत्तीसवां वार्षिक महोत्सव

फाल्गुन कृष्णा त्रयोदशी, चतुर्दशी सम्वत् २०१० विक्रमी तारीख २ और ३ मार्च सन् १९५४ ई० मंगलवार, बुधवार का समारोह से मनाया जायेगा। भारी संख्या में पधार कर महोत्सव की शोभा बढ़ावें।

इस अवसर पर आर्यजगत् के महान् नेता सर्वश्री पूज्यपाद स्वामी आत्मानन्द जी महाराज वैदिक साधना आश्रम यमुनानगर अम्बाला, श्री पूज्यपाद स्वामी व्रतानन्द जी महाराज संस्थापक गुरुकुल चित्तौड़-गढ़, श्री पूज्य स्वामी सन्तोषानन्द जी महाराज, शास्त्रार्थ महारथी पूज्य पं० रामचन्द्र जी देहलवी, सैद्धान्तिक विद्वान् श्री पूज्य जगदेवसिंह जी शास्त्री सिद्धान्ती, श्री पूज्य आचार्य राजेन्द्रनाथ जी शास्त्री देहली आदि च्चकोटि के विद्वानों तथा प्रान्तीय और केन्द्रिय धारा सभाओं के कतिपय सदस्यों को निमन्त्रित किया गया है।

वेद से महायज्ञ

महोत्सव से लगभग एक सप्ताह पूर्व वेद से महायज्ञ प्रारम्भ होगा। पूर्णाहुति ता० ३ मार्च बुधवार को ातःकाल १० बजे होगी। इस अवसर पर यज्ञोपवीत ग्रहण करने वाले सज्जनों को यज्ञोपवीत प्रदान किये जायेंगे। महायज्ञ की सफलता के लिये हवन के प्रेमी सज्जन कम से कम एक समय का घी अवश्य भेजें तथा पड़ौसियों और इष्ट मित्रों से भिजवा कर पुण्य के भागी बनें।

नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश

भारतीय स्वराज्य संग्राम में गुरुकुलों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया है इसलिये अंग्रेज सरकार गुरुकुलों को विद्रोही समझती रही। स्वराज्य में रामायण-महाभारतकालीन शिक्षा प्रणाली का भविष्य उज्ज्वल होगा। अपने होनहार बालकों को गुरुकुल में प्रविष्ट करा कर उनके जीवन को सफल बनायें। राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा सब भाषाओं की जननी देववाणी संस्कृत की उच्च शिक्षा का प्रबन्ध गुरुकुल में है। अध्यापन विभाग के लिये सुयोग्य विद्वान् सहयोग दे रहे हैं।

नवीन भवन निर्माण

नवीन भवन निर्माण के लिये जो सज्जन १०१) प्रदान करेंगे उनका नाम पत्थर पर अङ्कित किया जायगा। ५०१) प्रदान करने वाले सज्जन के नाम का नवीन भवन पर पत्थर लगाया जायेगा। १००१) तथा २५०१) प्रदान करने वाले सज्जनों के नाम से छोटा कमरा तथा बड़ा कमरा बनवाया जायेगा। प्रेमी न अपने समाज तथा ग्राम के नाम से भवन बनवायें। अपने पूर्वजों की स्मृति में भवन बनवाने का ा अवसर है।

निवेदक

शरसिंह एम. ए., एम. एल. ए.
प्रधान

प्यारेलाल आर्य
मन्त्री

भगवान्देव
आचार्य

टि० १--गुरुकुल की प्रबन्धकारिणी सभा का साधारण वार्षिक अधिवेशन ता० २ मार्च मङ्गलवार की सायङ्काल रात्रि को ८ बजे से प्रारम्भ होगा। सभा की सदस्यता का शुल्क १०) है। १०१) प्रदान करने वाले आजीवन सदस्य कहलायेंगे।

२--अपने बिस्तर और कपड़े साथ लावें।

ग्राहकों से नम्र निवेदन

हम सुधारक का 'गो-अङ्क' विशेषाङ्क जनवरी-फरवरी (पौष-माघ) दोनों महीनों का प्रकाशित कर आपकी सेवा में भेज रहे हैं। अगला अङ्क फाल्गुन (मार्च) में गो-अङ्क का परिशिष्टाङ्क निकालने का विचार है। गो-अङ्क पढ़कर इसके विषय में अपनी शुभ सम्मति अवश्य भेजने की कृपा करें। यह गो-अङ्क पहुंचने पर छः मास के सुधारक के अङ्क आपके हाथ में पहुंच गये, अतः यदि आपने अभी तक इसका लागत मात्र मूल्य २) नहीं भेजा है तो तुरन्त ही मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें। गो-अङ्क के परिशिष्टाङ्क में 'आयुर्वेद शास्त्र में गोदुग्ध चिकित्सा' 'गोघृत चिकित्सा' 'गोदधि तथा गोतक्र चिकित्सा' 'गोमूत्रचिकित्सा' 'गाय-भैंस के दूध के गुणों की तुलना' आदि अनेक उपयोगी विषयों पर लेख होंगे, जिनको पढ़कर तथा लाभ उठाकर आप प्राचीन ऋषियों के गुण गायेंगे। जो सज्जन ग्राहक नहीं हैं उनको यह गो-अङ्क ।।।) में मिलेगा।

❀ 'व्यायाम-सन्देश' विशेषाङ्क ❀

सुधारक का यह अङ्क फरवरी मास का न होकर अप्रैल-मई का 'व्यायाम सन्देश' विशेषाङ्क होगा, जिसका मूल्य लगभग दस आने के होगा। जो सज्जन इसका २) वार्षिक चन्दा भेज कर ग्राहक बन चुके हैं या बन जायेंगे, उन्हें यह अङ्क बिना विशेष मूल्य के साधारण अंक के रूप में मिलेगा। इस अङ्क में देशी-विदेशी, सभी प्रकार के व्यायामों की रीति और लाभ-हानि का प्रकाश किया जायेगा। इसमें आसनों के चित्र, आधुनिक भीम प्रो० राममूर्ति के दण्ड-बैठक की चित्र सहित विधि, मुग्दर-चालन आदि अनेक व्यायामों की उत्तम सामग्री दी जायेगी, जिसका एक स्थान पर मिलना दुर्लभ होगा। यह व्यायाम सन्देश नाम की पुस्तक ब्र० भगवान् देव जी द्वारा लिखित, जिसकी जनता पर्याप्त समय से मांग कर रही थी, आप को सुधारक के विशेषाङ्क के रूप में भेंट की जायेगी। अतः आप सबका कर्तव्य है कि सुधारक के अधिक से अधिक ग्राहक बनाकर सहयोग देने की कृपा करें।

व्यवस्थापक 'सुधारक'

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष १
अङ्क ७-८
गुरुकुल झज्जर, फाल्गुन-चैत्र सं० २०१० वि०, मार्च-अप्रैल १९५४, दयानन्दाब्द १२९
वार्षिक मूल्य २)
इस अङ्क का ।।।)

❀ गो-विशेषाङ्क का परिशिष्टाङ्क ❀

॥ गावो हि विश्वस्य मातरः ॥

हे मांसाहारियो ! तुम लोग जब कुछ काल के पश्चात् पशु न मिलेंगे तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं ? हे परमेश्वर ! तू क्यों इन पशुओं पर (जो कि विना अपराध मारे जाते हैं) दया नहीं करता ? क्यों उन पर तेरी प्रीति नहीं है ? क्या इन के लिये तेरी न्यायसभा बन्द हो गई है ? क्यों उनकी पीड़ा छुड़ाने पर ध्यान नहीं देता ? और उनको पुकार नहीं सुनता, क्यों इन मांसाहारियों के आत्माओं में दया प्रकाश कर निष्ठुरता, कठोरता, स्वार्थपन और मूर्खता आदि दोषों को दूर नहीं करता ? जिससे ये इन बुरे कामों से बचें।

—ऋषि दयानन्दः

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक

सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्त वाचस्पति

सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

सब प्राणियों की दाया गोमाता

(श्री ब्र० सत्यवीर सिद्धान्त वाचस्पति, गुरुकुल झज्जर)

मयोभूर्वातो अभिवातूस्रा ऊर्गस्वतीरोषधीरारिशन्ताम् ।
पीवस्वतीर्जीवधन्याः पिबन्त्ववसाय पद्वते रुद्र मृड ॥
ऋ० १० । १६६ । १

(मयः भूः वातः) आरोग्य उत्पन्न करने वाला वायु (अभिवातु) बहता रहे, (ऊर्जस्वतीः) बल देने वाली (उस्राः) गौवें (ओषधीः आरिशन्ताम्) वनस्पतियां खाकर पुष्ट होवें, (पीवस्वतीः) बलवान् (जीवधन्याः) जीवों की दाया गौवें (पिबन्तु) उत्तम पानी पीवें। हे (रुद्र) दोषनाशक (अव-साय) बचाने वाले (पद्वते) गौ को (मृड) सुख दे।

(भावार्थ) गमेर्डोः—उणादि शास्त्र के इससूत्र से गौ शब्द की व्युत्पत्ति होती है। 'गच्छतीति गौः' अर्थात् चरती-फिरती वा चलने-फिरने का जिसका स्वभाव है। गोमाता गोचर भूमि में अनेक प्रकार की उत्तम औषधियाँ भक्षण करती हैं तथा स्वच्छ वायु में प्रातः से सायं तक घूमती रहती है। अतः वह पुष्ट होकर अनमीवा = रोग रहित, अयक्ष्मा = यक्ष्मा (तपेदिक) आदि रोगों से सर्वथा मुक्त होती है। तथा 'शुद्धाः अपः सुप्रपाणे पिबन्तोः' जलाशयों में शुद्ध जल का पान करती हुई सब प्रकार के रोगों से सुरक्षित रहती हुई स्वस्थ व सदैव प्रसन्न रहती हैं। इन कारणों से गोमाता सब जीवों की बलवती दाया के समान दुग्ध, घृत, तक्र, दधि आदि अमृतरूपी पदार्थ प्रदान करके पालन-पोषण करती है। अतः ऐसी सुखदायी गोमाता की रक्षा और सेवा करना सुख चाहने वाले प्रत्येक मनुष्य का परम कर्तव्य है। किन्तु सर्व प्राणियों में श्रेष्ठ कहलाने वाला यह मनुज की सेवा करने के स्थान पर निर्दयी कसाई बनकर इसके गले पर छुरी चलाता है, उपकार का बदला अपकार से देता है, इस कृतघ्नता का भी कोई ठिकाना है। आरोग्य से बढ़कर इस संसार में हमारे लिये कल्याणकारी क्या हो सकता है जिसे गोमाता हमें बिना स्वार्थ के प्रदान करती है। हमारे शास्त्रों में लिखा है "धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यम्मूलमुत्तमम्" अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जिनकी प्राप्ति के लिये सबने मनुज देह धारण की है। इनकी प्राप्ति का मुख्य हेतु आरोग्य ही है। और इस पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति गोमाता की कृपा से सहज में ही आरोग्य प्राप्त करके हो सकती है। अतः ओ मनुष्य! तू आखें खोल और अपने कर्तव्य को पहचान, अपना सर्वस्व लगाकर गोमाता की सेवा और रक्षा करने में तत्पर हो जा, इसी में तेरा कल्याण है।

हवन सामग्री

यह सामग्री सैकड़ों सुगन्धित, पौष्टिक, बलवर्धक औषधियों से तैयार की जाती है। ऋतु अनुकूल ताजा और शुद्ध सामग्री का ही यज्ञ करना महत्व रखता है। दैनिक हवन के प्रेमियों ने इसे अपनाया है। यज्ञ-महायज्ञ और संस्कार तथा पर्वों के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

मूल्य १) सेर

सम्पादकीय—

गोवध पाप! महापाप!!

संसार में "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना को भरने वाली विश्व कल्याण की प्रतीक विश्ववारा भारतीय संस्कृति में जननी और जन्म भूमि को स्वर्ग से बढ़कर सम्मानित किया गया है। जननी तो बालक का पालन-पोषण करती है वह भी अपने ही बालक का। साथ ही जननी का प्रेम बाल्य-अवस्था में ही बालक से अधिक रहता है, अवस्थान्तर प्राप्ति पर वह प्रेम कम हो जाता है। परन्तु गाय की दृष्टि में अपने-पराये का कोई भेद-भाव नहीं। यह तो बाल, युवा, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सब का पालन करती है। इसलिये "गौर्में माता" के अनुसार भारतीय भक्त जन गाय को माता कह कर पुकारते हैं और गाय का सत्कार करते हैं।

"उत्ता दाधार पृथिवीम्" अर्थात् बैल ने ही पृथिवीस्थ प्राणिसमुदाय को धारण कर रक्खा है। बैल ही एकमात्र निर्वाह का साधन है इसलिये "वृषभः पिता मे" के अनुसार बैल प्राणिमात्र का पिता है।

मुद्रास्फीति के इस युग में आज कल रुपया-पैसा, कागज के नोट भले ही धन कहलायें। परन्तु भारत का वास्तविक धन तो गाय, अश्व आदि ही हैं। जिनके बिना प्राणिमात्र का निर्वाह नहीं। वैदिक साहित्य में जहाँ मानव के कल्याण के लिये प्रार्थना की गयी हैं वहाँ गाय, अश्व आदि के लिये भी प्रार्थनायें की गयी हैं। पृथिवी की रक्षा के साथ गाय की रक्षा को भी महत्त्व दिया गया है, गोबर पृथिवी का पर्याय माना गया है। गाय को अघ्न्या कहा गया है। "अन्तकाय गोघातकम्" के अनुसार गाय को मारने वाले को मृत्यु दण्ड का विधान वेद में वर्त्तमान है।

गाय की उपयोगिता को देखते हुए ही महर्षि च्यवन महाराज ने सम्राट् नहुष को कहा था कि "गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किञ्चिदिहाच्युत" हे राजन्! मैं गाय के समान दूसरा धन भूमण्डल पर नहीं देखता। गाय ही एक ऐसा धन है जो मानव के काम आता है।

संसार के पितामह भीष्म ने महाराज युधिष्ठिर को

पयसा हविषा दध्ना शकृता चाथ कर्मणा,
अस्थिभिश्चोपकुर्वन्ति, शृङ्गैर्बालैश्चभारत।

हे धर्मराज युधिष्ठिर! गायें अपने जीवनकाल में दूध, घी, दही, तक्र से हमारा पालन-पोषण करती हैं। इतना ही नहीं, गायें अपने गोबर से भी हमारा उपकार करती हैं। और जीवनकाल में ही क्या मरने के उपरान्त भी गायें अपने चर्म, हड्डी, सींगों और केशों से भी हमारा उपकार करती हैं, इससे अधिक क्या कहा जा सकता है? गाय मानव का सर्वस्व है।

गाय और बैल गर्मी, सर्दी, वर्षा आदि का कोई विचार नहीं करते। हर समय मानव का उपकार करते हैं। गाय का तो मूत्र भी बड़ा उपयोगी है। अनेक रोगों में अचूक औषध है। वैद्यक में बड़ी महिमा गोमूत्र की है।

यही गाय महाभारत काल में योगेश्वर भगवान् कृष्ण की राजनीति का सहारा रही। गाय के पालन से भगवान् कृष्ण गोपाल कहलाये। उन्होंने गोपाल कहलाने में अपना महत्त्व समझा, राजा कहलाने में नहीं।

राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी के चर्खे का सहारा भी गाय ही रही। गान्धी जी ने गोरक्षा के प्रश्न को स्वराज्य से बढ़कर बतलाया। उन्होंने जब तक गाय का वध होता है गाय का दूध न पीने की भीष्म प्रतिज्ञा की और अन्त समय तक उसे निभाया। गान्धी जी ने कहा था "हम गोरक्षा का अर्थ शास्त्र समझे होते तो आज जितनी गोहत्या होती है उतनी न होने देते. इस देश में फी आदमी गाय की संख्या जितनी कम है, उतनी कहीं नहीं है।"

और भी—

"मेरे नजदीक गोवध और मनुष्य दोनों एक ही चीज हैं।"

विश्वकल्याण एवं विश्वशान्ति के परम उपासक महर्षि दयानन्द जी महाराज ने परतन्त्र भारत में जहाँ स्वराज्य की भावना को जागरित किया वहाँ भारतीय स्वराज्य तथा भारतीय विकास के लिये गोहत्या को बाधक समझा। उन्होंने अपने लोक विख्यात अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—"जब आर्यों का राज्य था तब यह महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे। तभी आर्यावर्त्त व अन्य देशों में बड़े आनन्द में मनुष्य प्राणी रहते थे। क्योंकि दूध, घी बैल आदि पशुओं की बहुतायी होने से अन्न रस पुष्कल होते थे—जब से विदेशी मांसाहारी इस देश में आकर गौ आदि पशुओं को मारने वाले राज्याधिकारी हुए हैं तब से क्रमशः आर्यों के दुःखों की बढ़ती होती जा रही है।"

महर्षि ने देखा कि गोहत्या से देश की भयंकर हानि हो रही है। दूध और घी दिन प्रतिदिन महंगा होता जा रहा है। पर्याप्त मात्रा में लोगों को खाने के लिये नहीं मिल पाता, इसी से देशवासियों के शरीर दुर्बल और निर्बल होते जा रहे हैं। बहुविध रोग मनुष्यों को घेरे हुए हैं। लोग अकाल में ही कराल काल के कवल बनते जा रहे हैं। "जीवेम शरदः शतम्" की भावना मनुष्य में दिखाई नहीं देती। कृषि के उपयोगी बलवान् और पुष्ट बैल नहीं मिल रहे। बैलों की संख्या भी दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है। और राजाओं के राजा किसान भी भूखों मर रहे हैं। इसलिये उन्होंने गोरक्षा को अपने कार्यक्रम का अंग बनाया और इसमें अपने को लगा दिया।

अंग्रेजी राज्य था, समय विपरीत था। अंग्रेज सरकार हिन्दू-मुसलमान में झगड़े करा कर राज्य करना चाहती थी। झगड़ों का मुख्य साधन अंग्रेज ने गाय को ही बनाया था। परन्तु महर्षि दयानन्द जी महाराज अद्भुत प्रतिभा सम्पन्न थे। उनका सहसा ही दूसरे पर प्रभाव पड़ता था। गवर्नर जनरल के एजेन्ट कर्नल ब्रूक से जब महर्षि की पौन घण्टे तक बातचीत हुई तो कर्नल ब्रूक साहब ने गाय की उपयोगिता को स्वीकार कर लिया था और महर्षि से निवेदन किया था कि गोवध निषेध मेरे अधिकार में नहीं, आप लाट साहब से मिलें। ब्रूक साहब ने एक चिट्ठी लिख कर महर्षि को दी थी कि यह चिट्ठी लाट साहब को दिखलावें।

कहा जाता है महर्षि ने लाट साहब से भी कहा था कि भारतवर्ष से जाकर आप इण्डिया कौन्सिल के सदस्य बनेंगे। वहाँ आप गोवध बन्द कराने का यत्न करें। कहते हैं लाट साहब ने यत्न करने का वचन भी दिया था।

इसी प्रकार जोन्स साहब ने महर्षि से बातचीत कर गोमांस न खाने की प्रतिज्ञा की थी। अनेकों मुसलमान और ईसाई भी महर्षि के व्याख्यान श्रवण कर गोभक्षक से गोरक्षक बन गये थे।

महर्षि को विश्वास था कि अंग्रेज सरकार तो लोकमत का आदर करेगी और तत्काल गोवध को बन्द कर देगी। महर्षि दो करोड़ व्यक्तियों के हस्ताक्षर करा कर एक निवेदन पत्र तत्कालीना महारानी विक्टोरिया के पास भेजना चाहते थे। भारत के सब प्रान्तों में जनता के हस्ताक्षरों के लिये निवेदन पत्र भेजे जा चुके थे। लाखों व्यक्तियों के हस्ताक्षर हो चुके थे। महर्षि का विचार था कि वह स्वयं इङ्गलैण्ड जाकर निवेदन पत्र उपस्थित करेंगे। परन्तु दैव ने साथ न दिया। देश तथा अवाक् गायों का दौर्भाग्य था कि महर्षि का देहावसान हो गया और सारा काम अधूरा ही रह गया। उसकी पूर्ति आज स्वराज्य को प्राप्त हुए भी छः वर्ष हो गये हैं—नहीं हो सकी है।

दूध, घी, दही तथा गोबर से भी जो गाय मानव का उपकार करे। मूत्र भी जिसका औषध के रूप में काम आये। मरने के उपरान्त भी गाय की खाल के जूते मानव के पैर को कण्टकाकीर्ण होने से बचायें। हड्डी सींग और बाल भी जिसका मानव के उपयोग के लिये हो। ऐसा उपकारक मानव का कौन होगा? भारतीय ऋषि-महर्षियों तथा महात्माओं ने गाय को महोपकारक कहा है। भारतीय जीवन में गाय तो गाय ही है। अहिंसा की साक्षात् मूर्ति है उसका भी वध। पाप! घोर पाप!! महा पाप!!! वह भी अपने राज्य में। इससे अधिक पतन भारत का और क्या होगा?

(शेष पृष्ठ ४५ पर)

गौ के दूध तथा भैंस के दूध का वैज्ञानिक विश्लेषण

[श्री डा० रामस्वरूप जी, रिटायर्ड वैटरिनरी एसिस्टैण्ट सर्जन सांपला (रोहतक)]

पाश्चात्य देशों में अब से कुछ समय पहले गोदुग्ध के गुणों को भली भाँति नहीं जानते थे। लेकिन अब अमेरिका, यूरोप वालों ने गोदुग्ध की वैज्ञानिक जाँच पड़ताल शुरू की हुई है। इसमें सैकड़ों उपयोगी तत्त्व उचित अनुपात से मिले हैं। इन तत्त्वों को एक साथ अलग से बनाना असम्भव है। इसका स्थान लेने वाला ऐसा ही पौष्टिक दूसरा कोई पदार्थ नहीं मिला और न ही हो सकता है। दूध में प्राप्त होने वाले कुछ पुष्टिकारक तत्त्वों का अभी तक निर्णय भी नहीं हो सका है। और वैज्ञानिक अब इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि आयु, आरोग्य, बल, वीरता, तेज वाले जिन देशों के लोग दूध, दही, मक्खन का अधिक सेवन करेंगे वहाँ की जनता दीर्घ आयु, बलवान् , वीर और तेजस्वी होगी। उस देश की मृत्यु संख्या घट जावेगी और रोग भी कम हो जायेंगे : इसलिये अमेरिका, इङ्गलैण्ड, फ्रान्स, इटली, आस्ट्रेलिया, डेन्मार्क, जर्मनी इत्यादि की सरकारें दूध, दही मक्खन के प्रयोग को बढ़ाने का बहुत प्रयत्न कर रही हैं।

सब गायों का दूध एक समान नहीं होता। (१) गौ की जाति। (२) गौ की आयु के अनुसार (३) उसके ब्याने की अवधि के अनुसार (४) सरदी गरमी मौसम के अनुसार (५) प्रातःकाल व सायंकाल के दूध में (६) गौ की खुराक के अनुसार (७) गौ के साथ प्रेम व कठोरता का व्यवहार करने से (८) स्वतन्त्रता के साथ गोचर भूमि में चरने से (९) एक ही स्थान पर बाँध कर खिलाने-पिलाने से (१०) गौ के भाव के अनुसार (११) रोगी निरोगी होने से (१२) बछड़ा व बछड़ी होने से (१३) बच्चे के मौजूद होने या मृत्यु हो जाने इत्यादि बातों से दूध के स्वरूप व गुणों में बहुत भेद हो जाता है।

रङ्ग चिकित्सा से यह सिद्ध है कि सूर्य किरण द्वारा शीशियों के बनावटी रङ्ग से पानी पर जो अद्भुत परिणाम होता है उससे रोग नष्ट हो जाते हैं। ऐसे ही गायों के रङ्गों से भी होता है। (१) सफेद (२) लाल (३) पीली (४) तांबे रङ्ग की (५) नीली (६) काली इत्यादि गायें जब धूप में घास चरती हैं तो अपने रङ्ग और मुलायम चमड़े के द्वारा बलवान् प्राण तत्त्वों का सूर्य (अल्ट्रावायलेट) किरणों से आकर्षण करके रोगों को नाश करने वाली शक्ति को प्राप्त करती हैं। अमेरिका, यूरोप में दूध द्वारा ही चिकित्सा करने के चिकित्सालय खुलते जारहे हैं।

दूध एक अद्भुत अमृत है, वैज्ञानिकों ने इस अमृत का विश्लेषण करने से पता लगाया है कि दूध में जादू भरा हुआ है और इसको उत्पन्न करने वाली गाय भी कितनी ही विलक्षण जादूगरनी है और सर्वत्र सुख, सम्पत्ति, स्वास्थ्य, समृद्धि का रामराज्य छा देती है। तभी तो गाय को कामधेनु कहा गया है। गौ के दूध में जिन तत्त्वों का पता लग चुका है वे निम्नलिखित हैं। इनके अतिरिक्त और भी तत्त्व हैं जिनके गुणों का अभी तक पता नहीं लग पाया है। दूध के प्रोटीन में १९ एमिनोएसिड होते हैं, मक्खन में ११ प्रकार के चिकने एसिड होते हैं और ६ विटामिन और ८ जीवाणुहीन किण्व और २५ धातुजतत्त्व तथा एक शर्करा फासफोरस के योग १४, नत्रजनीय तत्त्व और कुछ अज्ञात तत्त्व।

(१) इन सब के लाभ अलग-अलग हैं। ये दान्त, हड्डी और आरोग्य के रक्षक, खून और दिल की कमजोरी

को दूर करते हैं व बलवान् बनाते हैं और पाचक रस हैं। खुराक को पचाने व जिगर की खराबी और चमड़े की बीमारियों को दूर करते हैं।

(२) लैक्टोज, ग्लूकोज—ये पाचक रस हैं, हृदय और रक्त की निर्बलता को दूर करते व बलवान् बनाते हैं।

(३) मक्खन के ११ स्नेह पदार्थ हैं। वे शरीर में बल व गरमी पहुंचाने के लिये आवश्यक हैं और मक्खन को गरम करने से कई चिकने एसिड नष्ट हो जाते हैं और इस तरह से घी के गुणों में मक्खन के गुणों की अपेक्षा कमी हो जाती है।

(४) प्रोटीन–इसमें केसीन, एलब्यूमिन व ग्लोब्यूलीन होते हैं। यह मांस व तन्तुओं के बनाने में काम करते हैं। एलब्यूमिन–इसके गुण अण्डे की सफेदी की तरह हैं और इसमें गन्धक की पर्याप्त मात्रा होती है। ग्लोब्यूलिन—यह बड़ी जरूरी है। यह कृमियों वाली बीमारियों से शरीर को बचाती है। एलब्यूमिन—स्त्री के दूध से गौ के दूध में अधिक होता है। इसलिए यह अधिक उत्तम व श्रेष्ठ है।

(५) ऐन्ज़ाइम्स—यह पाचक रस हैं और विष से बचाने वाले हैं। गरम करने से सुस्त पड़ जाते हैं, अधिक गरमी से मर जाते हैं।

(६) खाद्योज—यह महत्त्वपूर्ण हैं। शरीर की बढ़न व स्वास्थ्य को ठीक रखने के चौकीदार हैं। खून के साथ बहने वाला मसाला अगर कहीं गलत रास्ते पर जा रहा है तो उसे उचित स्थान की ओर भेज देते हैं। अभी तक इनका पूरे तौर पर काम समझ में नहीं आया है।

गौ और भैंस के दूध के गुणों में भेद

(१) गाय का दूध मधुर, स्निग्ध, शीतल, वात-पित्त-कफ नाशक, फेफड़े के लिये लाभकारी, क्षय रोग को दूर करने वाला तथा नस और नाड़ियों को स्निग्ध करने वाला है। अस्थिमार्दव (Reckets) से क्षीण होने वाले बालक के लिये गाय का दूध अमृत के समान प्राणवर्धक है। जिन बालकों के नेत्रों को ज्योति क्षीण होगई है या जो रक्तक्षय या पाण्डु रोग से पीड़ित हैं उनके लिये भी यह अत्यन्त उपकारी औषध है। बराबर सेवन करने से सभी व्याधियाँ दूर होती हैं एवं बुढ़ापा शीघ्र नहीं आता। धारोष्ण पीने से अमृत तुल्य है, यह दो घण्टे में पचता है।

(२) भैंस का दूध उपर्युक्त कई रोगों के लिये तो बिलकुल निकम्मा है तथा कई रोगों पर कुछ लाभकारी है भी तो बहुत कम मात्रा में। वह मधुर, भारी गर्म, वीर्यवर्धक, चिकना, कफ और वायुकारक, आलस्य पैदा करने वाला, मन्दाग्नि कारक तथा छूत की व्याधियों को बुलाने वाला है। धारोष्ण जहर है, नौ घण्टे में पचता है। पीने से नींद सताती है। अनिद्रारोग में औषध रूप में दिया जाता है। उसमें बड़ी गरमी रहती है, इसी लिये भैंस के दूध आदि पदार्थों के गुण शीघ्र ही शरीर से बाहर हो जाते हैं और देर तक शरीर में शक्ति को नहीं रख सकते।

(३) गौ के दूध में विटामिन ए. डी. बहुत अधिक होते हैं। गौ तेज धूप में गोचर भूमि में चर कर अपने दूध को सूर्य किरणों द्वारा उपयोगी बनाती है और भैंस नहीं चर सकती।

(४) गोदुग्ध में आयोडीन और कैरोटीन होते हैं जो भैंस के दूध में नहीं होते। कैरोटीन ही विटामिनों के गुणों को सुरक्षित रखता है।

(५) गो दुग्ध का प्रोटीन जो अधिक आसानी से पच जाता है और वीर्यवर्धक है। और छूत के रोगों को भगाने वाला है। एक से दो घण्टे में पच जाता है। पुरुषार्थ, शान्ति, चुस्ती लाने वाला सात्विक आहार है।

(६) गौ का दूध दैवी और भैंस का दूध आसुरी है। काम, क्रोध, लोभ, राग द्वेष, आलस्य, मन्दाग्नि-कारक, गरम, भारी मन्द बुद्धि तामसी आहार है। भैंस के दूध के मक्खन के परमाणु जल्दी शरीर से खारिज हो जाते हैं। क्योंकि गरम तासीर है और ६ घण्टे में पचता है। यदि ३ वर्ष तक भैंस का दूध, मक्खन काफी मात्रा में सेवन किया जावे और दुर्भाग्य से केवल रोटी-सब्जी ही मिले तो कमजोरी से सिर चकराने लगेगा। गौ के दूध, मक्खन, घी का पर्याप्त मात्रा में ३ वर्ष तक सेवन किया जावे और २ वर्ष तक

गौ का दूध मक्खन घी प्राप्त न हो सके तो शरीर का बल वैसा ही बना रहेगा यह सिद्ध है।

(७) एन्जाइम्स--खमीरा पैदा करने वाले तत्त्व जो भोजन पचाने में सहायता देते हैं और शरीर में पैदा होने वाले विष तथा टोमैन्स नाम के विष तत्त्वों को शरीर से अधिक निवारण करते हैं। भैंस के दूध में कम और गौ के दूध (कच्चे) में भैंस की अपेक्षा बहुत अधिक होते हैं।

(८) गोदुग्ध में नमक तत्त्व भैंस की अपेक्षा अधिक पचाने योग्य होते हैं।

(९) गाय के दूध में ब्यूटिरीन तथा दूसरी कोमल चर्बियाँ अधिक रहती हैं। इसलिये जल्दी पच जाता है।

(१०) भैंस की अपेक्षा गाय के स्वभाविक कच्चे दूध में पाचक रसों की प्रचुरता रहती है और शरीर के विषों को दूर करता है। अतः गौ का दूध कुष्ठ एवं क्षय आदि रोगों को करने वाला है।

वैज्ञानिक विश्लेषण

	पानी	स्नेहपदार्थ	शक्कर	प्रोटीन	क्षार
गाय	८६·२७	४·८०	४·७८	३·३२	·७३
माता (मानवीय)	८७·४१	३·७६	६·२९	२·२३	·३१
भैंस	८२·१४	७·४	४४.८१	४·७८	·८३

ऊपर के आँकड़ों से पता लगता है कि गाय और माँ के दूध में बहुत समानता है। इसलिए गाय के दूध में थोड़ा पानी और चीनी मिला देने से मनुष्य के बच्चे का पालन मजे में हो जाता है। क्यों न हो, गाय और माँ की प्रकृति में भी तो सादृश्य है। दोनों के ९-१० मास में बच्चा होता है, तथा दोनों के सात मास के बच्चे भी जीते हैं और आठ मास के मर जाते हैं। यही कारण है कि प्राचीनकाल में गोदुग्ध पान करके ऋषि लोग संसार का कल्याण कर सके थे। सादे जीवन तथा उच्च विचार वाले महर्षियों की सन्तान हम आज चटोरेपन के अनन्यभक्त हो रहे हैं। हम शक्ति के लिये भोजन नहीं करते, बल्कि जीभ के स्वाद के लिये करते हैं।

दूध में रहने वाले स्नेह पदार्थ का जो विशेष मूल्य होता है, वह उसके पुष्टिकारक गुण के कारण है। तेल, चर्बी, मक्खन, घी आदि सब पदार्थ शरीर के अन्दर जाकर एकसा ही काम करते हैं, पर मक्खन या घी से जो अधिक काम होता है उसका कारण मक्खन या दूध में रहने वाला विटामिन कैरोटीन (Carotine) है। सहज पच सकने अथवा शरीर के द्वारा अधिक ग्रहण करने के योग्य होने के कारण घी-मक्खन अन्य स्नेह पदार्थों से श्रेष्ठ नहीं माने जाते, क्योंकि नारियल का तेल घी की अपेक्षा अधिक आसानी से पच जाता है। इनकी विशेषता विटामिन कैरोटीन के कारण ही है जो तेल चर्बी आदि में नहीं है। किन्तु यह नहीं भूलना चाहिये कि विटामिन कैरोटीन केवल गाय के ही दूध में है, भैंस के दूध में नहीं।

गाय के दूध के स्नेह पदार्थ में जहाँ यह २० यूनिट है वहाँ भैंस के दूध के स्नेह पदार्थ में २ यूनिट से भी कम है। गाय के दूध को उबालने पर उसकी मलाई में जो पीला रङ्ग आता है वह इस कैरोटीन पदार्थ के कारण ही आता है। भैंस के दूध में यह पदार्थ नहीं है इसलिए उसका नवनीत [मक्खन] घी एकदम सफेद होता है। इस सफेदी को ढकने के लिये इसमें एक प्रकार का पीला रङ्ग मिलाकर बहुत से लोग बड़े शहरों में इसे गाय के घी के नाम से ऊँचे मूल्य पर बेचते हैं।

अंग्रेजी में एक कहावत है—Cow milk and honey are the root of beauty [गोदुग्ध और और मधु सौन्दर्य के मूल कारण हैं]। डाकटरों का यह अनुभव है कि धारण शक्ति को तीव्र बनाने तथा उसको टिकाये रखने में यह बहुत सहायक है। किन्तु वह गुण भैंस के दुध में नहीं हैं।

स्कौटिश [Scotish] अनाथालय में इसका प्रयोग करके देखा गया तो भैंस का दूध पीने वाले बच्चे धड़ाधड़ बीमार पड़ने लगे। पूना 'एग्रीकलचर कालेज' के अध्यापक रायबहादुर जे० एल० सहस्रबुद्धे ने इसका प्रयोग छोटे बच्चों पर करके देखा था। उनकी रिपोर्ट

से पता लगता है कि बच्चे मन्द बुद्धि और रोगी होने लगे। गाय और भैंस के दूध का प्रयोग घोड़ी के बच्चों पर भी करके देखा जा चुका है। जो बच्चे भैंस के दूध पर पळे थे, सुस्त थे तथा गर्मी सहन नहीं कर सकते थे. तथा घोड़ों के स्वभाविक गुणों से रहित थे। डा० एन०एन० गोडबोले ने भी भैंस और गाय के दूध को पूरी-पूरी खोज की है और बतलाया है कि कार्बोहाईड्रेट आदि वर्तमान होने के कारण गाय की मलाई ऐसी सुपच और मानव स्वभाव के अनुकूल है कि तुरन्त पचकर वीर्य उत्पन्न करती है। इसके विपरीत भैंस के दूध की मलाई को पचाने के लिये मनुष्य की अन्तड़ियों को बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। भोजन पचाने के लिये अन्तड़ियों में नमक है। पर भैंस के दूध को पचाने के लिये वह पर्याप्त नहीं है फलत: जिस नमक से हड्डी बनती है, अन्तड़ियों को उसे हठात् भैंस के दूध को पचाने में खर्च करना पड़ता है। यही कारण है कि छोटे बच्चों को यह दूध नहीं पचता तथा इसके व्यवहार से उनका यकृत् (Lever) बेकाम हो जाता है। साथ ही गाय के घी में आयोडीन (Iodine) है जो भैंस के घी में नहीं। उसमें विटामिन 'ए' बहुत है, वह जलदी पचता है, दर्द और बीमारी के काम में आता है। ये सब बातें भैंस के घी में नहीं हैं। हम लोग मूर्ख हैं कि बच्चों को भैंस का दूध पिला-पिला कर उन्हें मन्दबुद्धि बना रहे हैं।

बहुधा यह प्रश्न उठाया जाता है कि भैंस के दूध में गाय के दूध से दुगनी मलाई होती है तथा भारतवर्ष के दुग्धोत्पादन में ५० प्रतिशत भाग भैंस के दूध का ही है। राजकीय कृषि अनुसन्धान संघ Government Agricultural Research Society के पशु जनन (CattleBreeding) विभाग का पाँचवां सम्मेलन सन् १९४२ के नवम्बर में दिल्ली में हुआ था। उसमें इन पंक्तियों के लेखक ने बिहार सरकार की ओर से गैर-सरकारी सदस्य मनोनीत होकर भाग लिया था। वहाँ भी गाय भैंस वाला प्रश्न उपस्थित हुआ। इन पंक्तियों के लेखक की भैंस विरोधी युक्तियों के विरोध में उड़ीसा सरकार के डिपुटी वेटरिनरी डाइरेक्टर (Deputy Vererinari Director) डा० कोडा ने यही बातें कही थीं। मद्रास सरकार के भेड़ विशेषज्ञ मि० आर० डब्ल्यू० लिटल वुड (Mr. R. W. Lettlewood) ने तो यहाँ तक कहा था कि गाड़ी में जब हम आरहे थे, तब एक आदमी ने हमको बतलाया कि देखो भैंस अनाज का 'बीरा' खा रही है। तात्पर्य यह है कि मोटा खराब और रद्दी चारा खाती है। गाँधी जी के गोसेवा संघ के सदस्य सरदार बहादुर सर दातारसिंह ने भी दबे जबान भैंस का थोड़ा पक्ष लिया था, उसी प्रकार आसाम और बंगाल के सदस्यों ने भी।

ऊपर की बातों पर यदि ठण्डे दिल से विचार किया जाय तो यह धारणा बिलकुल गलत निकलेगी। कल्पना कीजिये, एक रुपया खर्च करने पर एक लंगड़ा आम मिला और २ रुपये खर्च करने पर दो खट्टे आम मिले, तो आप ही सोचें कि एक रुपये वाला सौदा ठीक रहा या दो रुपये वाला। भैंस से गाय के दूध में आधी मलाई है, पर गाय के पालन में भैंस के पालन से खर्च भी तो आधे से कम ही पड़ता है। गाय के दूध-घी के गुणों का चौथाई भाग भी तो इसमें नहीं है। 'स्वर्ण भस्म' तो अत्यन्त कम मात्रा में खाई जाती है, तो क्या थाली भर दाल-भात उसकी बराबरी कर सकेंगे? भैंस को अलग कर यदि हम चारा बचा सकें तो उससे पलकर हमारी गायें खूब प्रचुर मात्रा में दूध देने लगेंगी, और फिर से पूर्ववत् दूध की नदियाँ बहने लगेंगी। यूरोप में गाय के प्रति सेर दूध पीछे जितनी मलाई निकलती है, वह हमारी गायों की मलाई के अनुपात से आधी है। यदि भैंस के बिना उन लोगों का काम चल सकता है, जो सिर्फ दूध के लिये ही गायें पालते हैं, तो दूध और किसान के लिये हमारा गाय को पालना कितना बड़ा महत्व रखता है। दूसरी बात यह है कि 'भैंस मोटा-सोटा रद्दी चारा खाती है' पर अच्छी फसल चोरी करके चराते हैं—यह वे ही जानते हैं जो देहात में रहते हैं। साथ ही एक भैंस को चराने के लिये एक विशेष चरवाहे की आवश्यकता है लेकिन आठ दस गायों के लिये एक ही चरवाहा पर्याप्त है।

(शेष पृ० १२ पर)

गो-मूत्र चिकित्सा

ले०—भगवान्देव आचार्य गुरुकुल झज्झर

गोमाता वास्तव में गुणों की खान है। गोमाता के सभी पदार्थ अमृत तुल्य हैं। गोमाता के दुग्ध-घृतादि पदार्थ तो सर्वगुण सम्पन्न हैं ही, किन्तु घृणा की दृष्टि से देखा जाने वाला एवं व्यर्थ समझा जाने वाला गोमाता का मूत्र भी असंख्य गुणों से भरपूर है। महर्षि धन्वन्तरि जी महाराज गोमूत्र की नामावलि लिखते हुए गोमूत्र के गुणों की महिमा निम्न प्रकार से वर्णन करते हैं।

गोमूत्र के नाम—गोमूत्र, गोजल, गोम्भ, गोपानीय, गोसव, गवाप, गोकीलाल, गोनीर, सुरभी जल, यह ९ नाम गोमूत्र के हैं।

गोमूत्र के गुण

गोमूत्रं तिक्तोष्णं सक्षारं लेखनं सरम्।
लघ्वग्निदीपनं मेध्यं पित्तलं कफवातजित्॥

अर्थात् गोमूत्र तिक्त, उष्ण, क्षार से युक्त तथा लेखन (नेत्र के फूले को काटने वाला) और विरेचन (दस्तावर) है। जठराग्नि को दीपन करने वाला, मेधा-बुद्धिवर्द्धक, पित्तकारक तथा कफवातनाशक है। राजनिघण्टुकार पं० नरहरि ने उपरोक्त गुणों को ही दर्शाते हुए 'त्वग्दोषघ्नम्' यह गोमूत्र का विशेष गुण दर्शाया है अर्थात् गोमूत्र चर्मरोगों एवं त्वचा सम्बन्धी रोगों के लिये अत्यन्त हितकारी है।

भावप्रकाश निघण्टु के रचयिता पं० भावमिश्र जी ने भी गोमूत्र के गुण निम्न प्रकार से लिखे हैं—

शूलगुल्मोदरानाहकण्ड्वक्षिमुखरोगजित्।
किलासगदवातामवस्तिरुक्कुष्ठनाशनम्॥
कासश्वासापहं शोथकामलापाण्डुरोगहृत्।

अर्थात् गोमूत्र शूल, गुल्म, उदररोग, अनाह (अफारा), खुजली, नेत्र तथा मुख सम्बन्धी रोग, किलास (कुष्ठभेद), वात, आम, वस्तिसम्बन्धी रोग, कुष्ठ (कोढ), कास (खांसी) श्वास, शोथ, कामला, पाण्डु रोग को नष्ट करने वाला होता है।

कण्डूकिलासगदशूलमुखाक्षिरोगान्
गुल्मातिसारमरुदामयमूत्ररोधान्।
कासं सकुष्ठजठरकृमिपाण्डुरोगान्
गोमूत्रमेकमपि पीतमपाकरोति॥

अर्थात् केवल गोमूत्र पान करने से खुजली, किलास रोग, शूल, मुख तथा नेत्र सम्बन्धी रोग, गुल्म अतिसार, वातरोग, मूत्ररोध, कास (खांसी), पाण्डु (पीलिका), कुष्ठ (कोढ) आदि दुःसाध्य रोग भी शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

सर्वेष्वपि मूत्रेषु गोमूत्रं गुणतोऽधिकम्।
अतो विशेषात्कथने मूत्रं गोमूत्रमुच्यते॥

सभी मूत्रों में गोमूत्र उत्कृष्ट एवं अधिक गुणवान् है। अतएव आयुर्वेद शास्त्र में मूत्र कहने से गोमूत्र का ही ग्रहण किया जाता है। अतः महर्षि धन्वन्तरि जी ने भी लिखा है 'मूत्रप्रयोगसाध्येषु गव्यं मूत्रं प्रयोजयेत्' अर्थात् जितने भी योग आयुर्वेद शास्त्र में मूत्र द्वारा सिद्ध करने का निर्देश किया हो, वहाँ गोमूत्र का ही ग्रहण करना चाहिये। क्योंकि गोमूत्र ही मूत्रों में सर्वोत्तम है।

शूलगुल्मरुजानाहकामलापाण्डुरोगहृत्।
कषायं तिक्ततीक्ष्णं च पूरणात्कर्णशूलनुत्॥

अर्थात् गोमूत्र शूल, गुल्म आदि रोगों को नष्ट करता ही है। तथापि कर्णशूल आदि रोग भी गोमूत्र को कान में डालने से शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

महर्षि धन्वन्तरि जी महाराज ने मूत्र के गुण का वर्णन करते हुए लिखा है कि गुल्मारुचि विषश्वित्रकुष्ठार्शांसि जयेल्लघु'' अर्थात् गोमूत्र गुल्म (गोले) अरुचि, विष, अर्श (बवासीर) और श्वेत कुष्ठादि भयंकर रोगों की विशेष औषधि है। यह इन रोगों को लघु (शीघ्र) जीत लेता है।

धातुओं की शुद्धि

स्वर्ण (सोना) रजत (चाँदी) ताम्र (ताम्बा) बङ्ग (जस्त) सीसक (सीसा) कली आदि धातुओं को तपा तपा वा गला-गला कर गाय के दधि (दही) तक्र (छाछ) तथा गाय के मूत्र में अनेक बार डुबोते हैं। इस प्रकार करने से प्रत्येक धातु के मल दोष दूर हो जाते हैं और धातुयें शुद्ध हो जाती हैं। शुद्ध धातुओं की ही भस्में बनाई जाती हैं जो अनेक प्रकार के भयंकर रोगों में रामबाण के समान काम करती हैं। यह भस्में ही आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के प्राण हैं। जो असाध्य कहे जाने वाले रोगों को भी समूल नष्ट करती हैं। मृतप्राय; रोगियों में भी जीवन डाल देती । आयुर्वेद के सभी प्रसिद्ध रसों में इन्हीं धातुओं की भस्में डाली जाती हैं। अशुद्ध धातुओं की भस्मों का प्रयोग विष के समान हानिकारक है। गोमूत्र भी इनकी शुद्धि का एक कारण है। शुद्ध होने से ही इन धातुओं की भस्में अमृत के समान लाभदायक होती हैं। विषों को अमृत बनाना ही गोमूत्र का काम है। अनेक विष और उपविषों की शुद्धि भी गोमूत्र के द्वारा ही होती है।

विषद्रुम (कुचिला)

विषद्रुम अर्थात् कुचिला जो भयङ्कर मारक विष है, गोबर अथवा गोमूत्र द्वारा ही शुद्ध करके वैद्य लोग अनेक प्रकार के भयंकर रोगों में उपयोग करते हैं। अर्दित वायु, अर्द्धाङ्ग (लकवा, पालिक) रींगन बाव (रांघड़) आदि भयंकर वात रोगों को शुद्ध कुचले का विधिपूर्वक प्रयोग समूल नष्ट कर डालता है। विष को भी अमृत बनाने वाली शक्ति गोमाता के व्यर्थ समझे जाने वाले मूत्र में है।

वच्छनाग

वत्सनाभ जिसको वचनाग, मीठा विष, मीठा तेलिया और हलाहल (प्राणहार) भी कहते हैं। यह एक प्रकार का कन्द है। इसके नामों से ही आप समझ गये होंगे कि यह संखिया से भी अधिक मारक विष है। अतएव इसके हलाहल आदि नाम हैं। यह भी गोमूत्र के द्वारा ही शुद्ध किया जाता है। वात और कफ के रोगों को दूर करने के कारण रस, रसायन, अमृत आदि अनेक नाम आयुर्वेद शास्त्र में इसके लिखे हैं। आयुर्वेद के सैकड़ों प्रसिद्ध योगों का यह अङ्ग है। यह संखिया से भी उग्र विष गोमाता के मूत्र की कृपा से भी अमृत का रूप धारण करता है।

जयपाल (जमालगोटा)

जयपाल अर्थात् जलालगोटा भी गोमाता के मूत्र और गोमय (गोबर) तथा गो दुग्ध आदि के द्वारा शुद्ध किया जाता है। यह विरेचन (जुलाब) के लिये प्रयोग में आता है। इच्छाभेदी आदि रसों का यह मुख्य अङ्ग है। यह शुद्ध हुवा हुवा विधिपूर्वक प्रयोग किया जाये तो अनेक प्रकार के उदर रोगों को दूर करता है। इस विष को भी अमृत बनाने का गौरव गोमूत्र को ही है।

कनक (धतूरा)

कनक अर्थात् धतूरा एक विष है। इसके खाने से लोग मर जाते हैं। इसके बीजों का प्रयोग विषम ज्वर (मलेरिया) आदि रोगों में किया जाता है। गोमूत्र में १२ घण्टे भिगोने से यह विष शुद्ध होकर अमृत के समान हो जाता है। श्वास, कास आदि रोगों को दूर करता है।

खपरिया

खपरिया को पोटली में बान्ध कर एक हाण्डी जो गाय के मूत्र से भरी हो उसमें लटका दें और उसके नीचे बराबर तीन दिन तक आग जलाते रहें। इस प्रकार खपरिया शुद्ध हो जाता है। चक्षु सम्बन्धी रोगों को दूर करने के लिये अंजन अर्थात् सुर्मे में डाला जाता है। जो राजयक्ष्मा (तपेदिक) जैसे भयंकर रोगों को दूर करने के लिये प्रयोग किया जाता है। खपरिया को रसायन गोमाता का मूत्र ही बनाता है।

गुग्गुलु (गूगल)

गुग्गुलु अर्थात् गूगल जो वात रोगों को दूर करने वाले प्रसिद्ध वृहद्योगराज गूगल, त्रयोदशाङ्ग गूगल आदि आयुर्वेद के प्रसिद्ध योगों का मुख्याङ्ग व प्राण है। जिन योगों के प्रयोग से भयङ्कर वात रोग नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं। इन में जो शुद्ध गूगल डाला जाता है उसकी शुद्धि गोमूत्र में उबाल व पका कर ही की जाती है। गोमाता के कहाँ तक गुण गायें, जिसका मूत्र भी अमृत के समान उपयोगी है। और जिसके विधिपूर्वक सेवन करने से सैकड़ों रोग बिना एक कौड़ी खर्च किये दूर किये जा सकते हैं। समय पड़ने पर उसका किस प्रकार सामान्य व्यक्ति प्रयोग करके लाभ उठा सकता है। नीचे लिखी हुई पंक्तियां पढ़ कर आप स्वयं अनुभव करेंगे और लाभ उठायेंगे।

यकृत् (जिगर) बिकार वा रोग

जब यकृत् अर्थात् जिगर अधिक बढ़ जाता है और इसमें हर समय पीड़ा रहती है तो गोमूत्र को गरम करके इसमें ऊनी वस्त्र या फलालैन का भाग उसमें भिगो कर यकृत् अर्थात् जिगर को बार २ सेकें। इससे पर्याप्त लाभ होकर पीड़ा दूर होती है।

गोमूत्र १ तोला, नागकेशर १ तोला, पीपल १ तोला, सौंठ १ तोला पिछली तीनों औषधियों को बारीक चूर्ण करके गोमूत्र में मिला लें। इसमें से ३ माशे औषध लेकर ६ माशे शहद मिलाकर प्रतिदिन प्रातःकाल रोगी को चटायें। इससे यकृत् के सब रोग दूर होते हैं।

केवल गोमूत्र को छान कर रोगी को पिलाने से जिगर में पर्याप्त लाभ होता है।

मण्डूर

मण्डूर जो लोहे का सैकड़ों वर्ष पुराना मैल होता है उसको अग्नि पर बार बार गरम करके गोमूत्र में बुझायें, इस प्रकार बार-बार बुझाने से शुद्ध होकर यह लाल रङ्ग का हो जाता है और पीसने योग्य बन जाता है। इसको बारीक पीसकर गोमूत्र की भावना देकर एक हाण्डी में बन्ध करके गजपुट की अग्नि से फूँक देवें। इसी प्रकार बार-बार करते रहें। जब पीसने योग्य और सर्वथा लाल रङ्ग का हो जावे तो मण्डूर भस्म तैय्यार है। इसका दो रत्ती से चार रत्ती तक जल, गोमूत्र, तक्र (छाछ) या गाय के दूध के साथ सेवन करने से जिगर के सब विकार दूर होते हैं। बढ़ी हुई तिल्ली को भी उसका प्रयोग ठीक करता है।

प्लीहा (तिल्ली)

पीपल बड़ा गोमूत्र में घिसकर बच्चों को पिलाने से तिल्ली आदि रोग दूर होते हैं।

शंखभस्म, वराटिका (कौड़ीभस्म), मुक्ताशुक्ति भस्म, मण्डूर भस्म इनमें से कोई १ रत्ती से ४ रत्ती तक रोगी की अवस्था भेद से गोमूत्र के साथ सेवन करने से यकृत और प्लीहा रोग दूर होते हैं।

लवणादि योग

सैंधानमक और राई समान भाग लेकर चूर्ण बना दो माशे की मात्रा में गोमूत्र के साथ लेने से यकृत् और प्लीहा रोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

लशुनादि योग

लहसुन, पीपलामूल, हरड़, सबको समान भाग लेकर सबको एकत्र (एक स्थान पर अर्थात् इकट्ठी) कूट, कपड़ छान कर नीम्बू के रस या जल में घोट कर १-१ माशे की गोलियाँ बना, १-१ गोली प्रातः-सायं गोमूत्र के साथ खाने से यकृत्, प्लीहा रोग नष्ट होते हैं।

विडङ्गादि चूर्ण

वायविडङ्ग, अजवायन, चीता प्रत्येक १-१ भाग, देवदारु, सौंठ, पुनर्नवा (सांठी) प्रत्येक २-२ भाग सबको लेकर, कपड़ छान कर चूर्ण बनावें, ३ माशे की मात्रा में इसे गोमूत्र के साथ खाने से बढ़ी हुई प्लीहा और यकृत रोग दूर हो जाते हैं।

मानकादि गुटिका

मानकन्द, लाल अपामार्ग, गिलोय, वासा (अडूसा) की जड़, शालपर्णी, सेन्धा नमक, चित्रक मूल, सौंठ, ताड़ की मूल, प्रत्येक ३-३ तोला, विडनमक सोंचर नमक; यवक्षार, पीपल, प्रत्येक १-१ तोला, सबको कूट कपड़छान कर चूर्ण बना ८ सेर गोमूत्र में पकावें, जब गाढ़ा हो जाये तब अग्नि से नीचे उतार ले और ठण्डा होने पर उसमें १९ तोले शहद मिलाकर चने के समान गोलियाँ बनावे और सुखाकर रख लेवे। इसके सेवन से यकृत्,

प्लीहा और उदररोग नष्ट होते हैं। इसमें गोमूत्र के मिश्रण से तीक्ष्णता विशेष मात्रा में है। अतएव यकृत् और प्लीहा को बहुत शीघ्र गला देती है तथा अग्नि को दीप्त करती है।

अभयालवण

यह आयुर्वेदशास्त्र का एक प्रसिद्ध योग है। इसमें भी गोमूत्र पर्याप्त मात्रा में पड़ता है। यह औषध बढ़े हुए यकृत्, प्लीहा (तिल्ली जिगर), सब प्रकार के गुल्म तथा उदर रोगों को निश्चय से दूर करता है।

वाप्यादिलौह, लोकनाथ रस, लोहमृत्युञ्जय आदि ौषधियाँ भी गोमूत्र के साथ सेवन करने से यकृत्, ीहा रोग शीघ्र नष्ट होते हैं।

अर्श (बवासीर) के मस्से बृहत्काशीसादि तैल से ना किसी कष्ट के समूल नष्ट हो जाते हैं। यह तैल ायुर्वेद का प्रसिद्ध योग है। इसमें गोमाता का मूत्र तैल चतुर्गुणा डाला जाता है। इसके अतिरिक्त और भी औषधियां डाली जाती हैं किन्तु गोमूत्र इसका विशेष ंग है। गोमूत्र की जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है।

जब पाण्डव अज्ञातवास को जाते हैं। तब सहदेव राजा विराट् से कहता है कि—

वृषभांस्तान् जानामि राजन् पूजितलक्षणान्।
येषां गंधमुपाघ्राय अपि वन्ध्या प्रसूयते॥

अर्थात् हे राजन्! उन श्रेष्ठ बैलों वा गायों को मैं जानता हूँ जिनके मूत्र को सूँघने मात्र से वन्ध्या भी पुत्र लाभ कर सकती है। निश्चय ही गोमाता का मूत्र विचित्र गुणों से युक्त है।

वैज्ञानिक रीति से भी गोमूत्र में फास्फेट, पोटाश, लवण, नाइट्रोजन, यूरिया, यूरिक एसिड होते हैं। जिन महीनों में गौ दूध देती है उस समय गौ माता के मूत्र में लैक्टोज विद्यमान रहता है। हृदय और मस्तिष्क के रोगों में लैक्टोज बहुत लाभ करता है। आठ मास की गर्भवती गाय के मूत्र से हारमौन्ज तैय्यार किये जाते हैं जिनसे पार्क डेविस जैसी कम्पनियाँ लाखों रुपया कमा रही हैं। इस प्रकार गोमाता का मूत्र भी अनन्त गुणों से सम्पन्न है। गोमूत्र के प्रयोग से अनेक प्रकार के विषों का प्रभाव भी नष्ट होता है।

(१) बाम्बी की मिट्टी को गोमूत्र में घोलकर चींटी या मक्खी के काटे हुए को तुरन्त लाभ होता है। जहरीली मक्खी और भिरड़ आदि के काटने पर लगाने पर भी लाभ होता है।

(२) मीठा तेलिया शुद्ध, सुहागा सफेद, काली मिर्च, नीला थोथा शुद्ध इन चारों वस्तुओं को समतोल लेकर भली भान्ति बारीक पीसलें और बन्दाल के रस में खरल करके एक-एक माशे की गोलियां बनायें, आवश्यकता पड़ने पर गोमूत्र के साथ प्रयोग करें, इससे सब प्रकार के विष उतर जाते हैं। यहाँ तक कि विषैले सांप का भी विष उतर जाता है।

(३) शिरीष का छिलका, जड़, पत्ते, बीज इन सबको गोमूत्र में पीसकर शरीर पर मालिश करने से सब प्रकार के विषों का प्रभाव नष्ट हो जाता है।

विस्तार भय से संक्षेप में ही गोमूत्र के कुछ उपयोग दिये गये हैं। पाठक भली भान्ति इस निश्चय पर पहुंच गये होंगे कि गाय का दूध-घी ही क्या, गोमूत्र भी अमृत के समान प्राणिमात्र का हित करता है।

(पृष्ठ ८ का शेष)

गौ के मुकाबले में भैंस नहीं ठहर सकती

१—मिस्टर स्मिथ भारत के राजकीय दुग्धालय के विशेषज्ञ ने कहा था कि "यदि मुझे २५ साल का वक्त मिले और आवश्यक धन खर्चने को दिया जाय तो मैं इस अन्तर में इस किस्म की गायें पैदा कर दूंगा जिनके मुकाबले में भैंस किसी हालत में भी नहीं ठहर सकेगी। धन की दृष्टि से भैंस गाय का मुकाबला न करने के कारण दूध देने वाले जानवरों की सूची से निकाल दी जावेगी। अब भी हिन्दुस्तान में १०००० पौंड वार्षिक दूध देने वाली गायें मिलती हैं, और भैंस एक भी नहीं और न भविष्य में मिलने की आशा है।"

२—भारत की गाय सब विलायती गायों से बेहतर हैं। बैल तो दुनिया में सबसे बेहतर माने गये हैं। विलायती गाय ३० पौंड खुश्क चारा खाकर ६० प्रतिशत दूध में परवर्तित करती है और भारतीय गाय २० पौंड चारा खाकर ७५ प्रतिशत उसे दूध में बदल देती है। इस प्रकार पता लगता है कि भारतीय १० पौंड कम खाकर भी १५ प्रतिशत अधिक दूध बनाती है।

प्राचीन भारत और गोमाता

(लेखक--ब्र० वेदव्रत भाष्याचार्य, सिद्धान्तवाचस्पति, गुरुकुल झज्जर)

हमारे पूर्वज "गौर्मे माता वृषभः पिता मे" गाय मेरी माता है और बैल मेरा पिता है, पालयिता है, इस वचनानुसार गायों को माता के सदृश मानकर उनका पालन और रक्षण करते थे। अत एव पुरातन समय में गायें अत्यधिक और मनुष्य कम थे किन्तु अब गोपालन के स्थान को गोवध ने ले लिया है इसलिए गायें दिन प्रतिदिन न्यून होती जा रही हैं और मनुष्यों की वृद्धि हो रही है। महाभारत के समय मनुष्य सोलह करोड़ थे और गायें छयानवें करोड़, किन्तु अब मनुष्य ४० करोड़ हैं और गायें केवल दो ही करोड़ शेष रह गई हैं। अनुपात से पहले एक मनुष्य के भाग में ६ गायें आती थीं किन्तु अब २० मनुष्यों के भाग में एक गाय आती है। पहले प्रत्येक मनुष्य यथाशक्ति गायें पालता था और जो बड़े बड़े राजा महाराजा होते थे वे सहस्रों और करोड़ों गायें पालते थे। स्वयं भगवान् कृष्ण ने बाल्यकाल में गायें चराईं और आगे चलकर वे राजा बने। तब "कृषि गोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्" गौ की रक्षा और पालन-पोषण करना वैश्य का प्रधान और स्वभाविक कर्म बतलाया। महर्षि मनु ने भी अपनी स्मृति में यही विधान किया।

चक्रवर्ती सम्राट् युधिष्ठिर जब राज्यच्युत हुए उस समय महाभारत में लिखा है उनके पास आठ लाख गायें थीं—सहदेव राजा विराट् से कहता है—

पञ्चानां पाण्डुपुत्राणां ज्येष्ठो भ्राता युधिष्ठिरः।
तस्याऽष्टशतसाहस्रा गवां वर्गाः शतं शतम्॥
अपरे शतसाहस्रा द्विस्तावन्तस्तथाऽ परे।
तेषां गोसंख्य आसं वै तन्तिपालेतिमां विदुः॥
(विराट्पर्व अ० ११)

अर्थात् पांचों पाण्डवों में बड़े भाई महाराज युधिष्ठिर थे उनके यहाँ आठ लाख गायें थीं, उनके सौ-सौ और हजार-हजार तथा लक्ष-लक्ष गायों के वर्ग (समूह) थे, मैं उनका स्वामी और संख्या करने वाला था इसलिए मुझे महाराज ने 'तन्तिपाल' का पद दिया था। और मेरा नाम अरिष्टनेमि है। इसी प्रकार राज विराट् के पास भी एक लाख गायें थीं। प्राचीन काल में हमारे गोवंश की अत्यधिक उन्नति थी और हमारे पूर्वज गायों को बढ़ाने की विधि को जानते थे। सहदेव राजा विराट् से कहता है—

क्षिप्रं गावो बहुला भवन्ति,
न तासु रोगो भवतीह कश्चन।
तैस्तैरुपायैर्विदितं ममेतदेतान्नि,
शिल्पान्नि मयि स्थितानि॥

मैं ऐसे उपायों को जानता हूं जिनसे गायें शीघ्र ही बहुत हो जाती हैं और उनके सब रोगों की चिकित्सा भी जानता हूं। और ऐसे-ऐसे बैल या साण्डों को भी जानते थे जिनके मूत्र को सूंघने से ही वन्ध्या (बांझ) को भी सन्तान हो जाती थी—

वृषभांश्चापि जानमि राजन् पूजितलक्षणान्।
येषां मूत्रमुपाघ्राय अपि वन्ध्या प्रसूयते॥

अर्थात् मैं ऐसे वृषभों (साण्डों) को भी जानता हूँ जिनके मूत्र सूंघने से ही (खाने पीने की कोई आवश्यकता नहीं) वन्ध्या को भी सन्तान हो जाती है।

गाय आदि पशु सुख पूर्वक जल पीते रहें इस हेतु बड़े-बड़े तडाग बनाने का अति महत्त्व था—

सकुलं तारयेत् सर्वं यस्य खाते जलाशये।
गावः पिबन्ति सलिलं साधवश्च नराः सदा॥

अर्थात् जिसके खुदवाये हुए तालाब में गायें और श्रेष्ठ नर सर्वदा जलपान करते हैं वह मनुष्य सम्पूर्ण कुल का उद्धार करता है। प्यासी गौ को पानी पीते हुए हटाना ब्रह्महत्या समझी जाती थी। भीष्म पितामह युधिष्ठिर जी से कहते हैं–

गोकुलस्य तृषार्त्तस्य जलार्थे वसुधाधिप।
उत्पादयति यो विघ्नं तं विद्याद् ब्रह्मघातिनम्॥

हे राजन्! जो पानी पीने की इच्छा वाली गायों को पानी नहीं पीने देता, उन्हें हटाता है उसे ब्रह्मघाती समझना चाहिए। अर्थात् वह ब्रह्महत्या के अपराधियों में गिनना चाहिये।

यज्ञादि की दक्षिणा में ब्राह्मणों को राजा सहस्रों गायें दान देते थे। राजा नृग ने अनेक बार दश-दश सहस्र तथा लक्ष-लक्ष गायें ब्राह्मणों को दक्षिणा में दी थीं। इसी प्रकार विदेहाधिपति महाराज जनक ने स्वर्ण से मण्डित सींगों वाली एक सहस्र गायें महर्षि याज्ञवल्क्य को दी थीं। अभिमन्यु के विवाह के पश्चात् महाराज युधिष्ठिर ने ब्राह्मणों को हजारों गाय, विविध रत्न तथा वस्त्र आभूषण आदि दान दिये थे

ब्राह्मणेभ्यो ददौ वित्तं यदुपाहरदच्युतः।
गोसहस्राणि रत्नानि वस्त्राणि विविधानि च।
(महा॰ विराट्॰ अ॰ ७२)

इस प्रकार अनेक प्राचीन उदाहरण गोदान के विषय में महाभारतादि प्राचीन ग्रन्थों में लिखे हैं। प्राचीन काल में गोदान का अत्यधिक महत्त्व था—"दानानामपि सर्वेषां गवां दानं प्रशस्यते" अर्थात् सब दानों में गाय का दान सर्वश्रेष्ठ है। और भी देखिये—

सुवर्णशृंगैस्तु विराजितानां,
गवां सहस्रस्य नरः प्रदानात्।
प्राप्नोति पुण्यं दिवि देवलोक—
मित्येवमाहुर्दिवि देवसंघाः॥
(महाभारत)

अर्थात् स्वर्ण से सुशोभित सींगों वाली एक हजार गायों के दान करने से मनुष्य देवलोक को प्राप्त करता है, ऐसा विद्वान् लोग कहते हैं।

अमृतं वै गवां क्षीरमित्याह त्रिदशाधिपः।
तस्माद्ददाति यो धेनुममृतं स प्रयच्छति॥
(महा॰ अनु॰ अ॰ ६६)

अर्थात् गायों का दूध ही अमृत है ऐसा महाराज इन्द्र ने कहा है। अतः जो धेनु का दान करता है वह मानो अमृत का दान करता है।

गावः शरण्या भूतानामिति वेदविदो विदुः।
तस्माद् ददाति यो धेनुं शरणं संप्रयच्छति॥

अर्थात् गायें प्राणियों को शरण देती हैं उनका दुग्धादि से पालन पोषण करती हैं, ऐसा वेदज्ञ विद्वानों का मत है अतः जो गाय का दान देता है, मानो वह शरणार्थी मनुष्य को शरण देता है।

एक बार युधिष्ठिर जी ने भीष्म पितामह से पूछा कि महाराज दोनों में श्रेष्ठ दान कौनसा है? उत्तर में भीष्म जी कहते हैं—

हिरण्यदानं गोदानं पृथिवीदानमेव च।
एतानि वै पवित्राणि तारयन्त्यपि दुष्कृतम्॥

स्वर्ण दान, गोदान और भूमिदान ये तीनों श्रेष्ठ हैं, यह पापी का भी उद्धार करते हैं। युधिष्ठिर जी फिर प्रश्न करते हैं कि भूमि आदि का दान तो सब नहीं कर सकते अतः जिस वस्तु का सब मनुष्य दान कर सकें या जिसके दान का वेद में विधान हो, उसका मुझे उपदेश करें। भीष्म जी कहते हैं—

तुल्यनामानि देयानि त्रीणि तुल्यफलानि च।
सर्वकामफलानीह गावः पृथ्वी सरस्वती॥

अर्थात् गौ का दान करना चाहिये इसके तीनों अर्थ हो जाते हैं–गाय, भूमि और विद्या। इन तीनों के दान को सदृश माना गया है। जो गुरु शिष्य को विद्या दान करता है वह भी गाय और भूमि दान के तुल्य फल को प्राप्त करता है। "तथैव गाः प्रशंसन्ति न तु देयं ततः परम्" इसी प्रकार गायों की सभी प्रशंसा करते हैं इनसे बढ़कर और कोई दान नहीं है।

मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।
वृद्धिमाकाङ्क्षता नित्यं गावः कार्याः प्रदक्षिणाः॥

सब को सुख देने वाली गायें सब प्राणियों की माता हैं अतः उनकी वृद्धि चाहने वाले को उनकी प्रति दिन

प्रदक्षिणा अर्थात् सेवा आदि करनी चाहिये। क्योंकि यदि सेवा न की जाये तो ये शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं। विदुर जी ने भी धृतराष्ट्र से यही कहा था।

असद्वृत्ताय पापाय लुब्धायानृतवादिने।
हव्यकव्यव्यपेताय न देया गौः कथञ्चन॥

अर्थात् पापी, लोभी, मिथ्याभाषी और यज्ञादि न करने वाले राक्षस को कभी किसी भी अवस्था में गाय नहीं देनी चाहिये। आजकल गायें किसी को भी बिना विचारे ही दे दी जाती हैं और फिर उनका मांस चर्मादि के लिए वध किया जाता है यह शास्त्र के विरुद्ध है। "न वधार्थं प्रदातव्या" वध के लिए गायें नहीं देनी चाहियें और "गोजीविने न दातव्या" गायों से व्यापार आदि करके जीने वालों को भी गायें नहीं देनी चाहियें।

वैसे तो सभी अब तक गौ को माता कहते हैं किन्तु उनके साथ माता का सा व्यवहार नहीं करते। कई भाई जब गाय, बछड़े आदि लेने के लिए जाते हैं तब यदि वह बैठा हुआ है तो उसको जूता पहने हुए ही ठोकर मारकर उठाते हैं। यह व्यवहार उचित नहीं, इसके लिए महाभारत में लिखा है—"सन्ताडया न तु पादेन" अर्थात् गायों को पांव से नहीं मारना चाहिये। इनकी तो पूजा करनी चाहिये क्योंकि ये सुख की निधि हैं "मङ्गलायतनं देव्यस्तस्मात्पूज्याः सदैव हि"। प्राचीन पुरुष ऐसा ही करते थे इसी लिये तो वे कहते थे "गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्" गायें हमारी हैं और हम गायों के हैं जब तक गायें जीवित हैं तभी तक हम जीवित हैं। हमारे पूर्वजों के गाय के प्रति कितने उदात्त विचार थे। इसीलिए तो महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है "गौ आदि पशुओं के नाश होने से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है" (गोकरुणानिधि)

प्राचीन भारत में गायें बेची नहीं जाती थीं। पातञ्जल महाभाष्य में लिखा है—"गाव उत्कालितपुंस्का वाहाय च विक्रयाय च स्त्रिय एवावशिष्यन्ते" अर्थात् बधिया किये बैल ही बेचने और भार वहन के लिए होते थे, गायें बेची नहीं जाती थीं। महाभाष्य के टीकाकार नागेशभट्ट ने भी लिखा है—"प्रायेण बलीवर्दा एव वाह्यन्ते विक्रीयन्ते च" प्रायः बैल ही भारवाहन और विक्रय के कार्य के लिये होते हैं। एक बार देवराज इन्द्र ने ब्रह्मा जी से प्रश्न किया—

जानन् यो गमापहरेद्विक्रीयाच्चार्थकरणात्।
एतद्विज्ञातुमिच्छामि क्व नु तस्य गतिर्भवेत्॥

अर्थात् जो मनुष्य जानकर गौ को हरता है अथवा धन के निमित्त बेचता है उसकी क्या गति होती है, मैं यह जानना चाहता हूँ। तब ब्रह्मा जी ने गौ बेचने वाले के विषय में कहा—

ये दोषा यादृशाश्चैव द्विजयज्ञोपघातके।
विक्रये चापहारे च ते देषा वै स्मृताः प्रभो॥
(महा० अनु० अ० ७४ श्लोक ५)

अर्थात् जो दोष या पाप ब्राह्मण के यज्ञ को नष्ट करने में होते हैं वे ही गौ को बेचने तथा हरण करने में भी होते हैं। इस प्रकार प्राचीन काल में गाय बेचना बड़ा भारी पाप समझा जाता था।

गाय ही क्या, उसके दूध का बेचना भी पाप समझा जाता था "क्षीरविक्रयिकाश्चैव ते वै निरयगामिनः" अर्थात् जो दूध बेचने वाले हैं वे नरक में पड़ते हैं। दूध बेचने वालों की "दुग्ध विक्रयी" कह कर निन्दा करते थे। अभी तक भी ऐसे स्थान या घर हैं जिन में दूध मांगने से तो मिल सकता है किन्तु मूल्य से नहीं। क्योंकि वे दूध बेचने में अपने कुल का अपमान समझते हैं। हमारे प्रान्त में अभी तक लोकोक्ति प्रसिद्ध है—"जिसने दूध बेच दिया उसने पूत बेच दिया।"

हमारे पूर्वज गाय को बेचते भी कैसे, वे तो इसे अमूल्य सम्पत्ति समझते थे। गौ के विषय में भीष्मपितामह ने महाराजा युधिष्ठिर को राजा नहुष और महर्षि च्यवन की एक प्राचीन घटना सुनाई थी। घटना इस प्रकार है—

महर्षि च्यवन जल कल्प करने के लिये गंगा और यमुना के जल में समाधि लगाये बैठे थे। एक दिन वहां पर कहीं से निषाद (मछली मारने वाले) आ पहुँचे और उन्होंने नदी में जाल फैलाकर सब मछलियों तथा जल जन्तुओं को प्रसन्नता पूर्वक बाहर निकाल लिया। साथ में महर्षि च्यवन भी समाधि लगाये खिंच आये। उनको जाल में देख सभी निषाद घबराये और हाथ जोड़

कर उनके पांवों में पड़ गये । जाल से खिंचने तथा जल के अभाव से सब मछलियाँ व्याकुल हो गईं । उनको देखकर महर्षि के अन्दर दयाभाव आ गया और वे लम्बे-लम्बे श्वांस लेने लगे । तब निषादों ने कहा—

अज्ञानात्कृतं पापं प्रसादं तत्र नः कुरु ।
करवाम प्रियं किं ते तन्नो ब्रूहि महामुने ॥

हे महामुने ! अज्ञान वश आप को जाल में खींच कर बड़ा भारी पाप किया है । अतः क्षमा करें और हमें आज्ञा दीजिने कि हम आप की क्या सेवा करें । तब महर्षि च्यवन ने कहा कि—

"प्राणोत्सर्गं विसर्गं वा मत्स्यैर्यास्याम्यहं सह" अर्थात् यदि ये मछलियां जीवेंगी तो मैं भी जीवन धारण करूंगा अन्यथा नहीं । यह सुन वे सब निषाद राजा नहुष के पास गये और वृत्तान्त कह सुनाया ।

राजा नहुष भी महर्षि के प्राणों को संकट में जान तत्काल पुरोहित और मन्त्रिगण के साथ वहाँ पहुँचे और हाथ जोड़ कर कहा—

करवाणि प्रियं किन्ते तन्मे ब्रूहि द्विजोत्तम ।
सर्वं कर्त्तास्मि भगवन् यद्यपि स्यात्सुदुष्करम् ॥

हे द्विजोत्तम मुने ! आज्ञा दीजिये मैं आप की क्या सेवा करूं । भगवन् मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ चाहे कितना ही दुष्कर कार्य क्यों न हो । तब महर्षि च्यवन ने कहा कि इन निषादों ने आज बड़ा भारी परिश्रम किया है अतः इनको मेरा तथा मछलियों का मूल्य चुका दें । राजा नहुष ने उसी समय पुरोहित को आज्ञा दी कि निषादों को एक हजार मुद्रा दे दें । यह महर्षि च्यवन ने कहा—

सहस्रं नाहमर्हामि किंवा त्वं मन्यसे नृप ।
सदृशं दीयतां मूल्यं स्वबुद्ध्या निश्चयं कुरु ॥

हे राजन् ! आप क्या समझते हैं, एक सहस्र मुद्रा मेरा उचित मूल्य नहीं है अतः आप अपनी बुद्धि से निश्चय कर मेरा उचित मूल्य दें । फिर राजा ने एक लाख, फिर एक करोड़, आधा राज्य और सम्पूर्ण राज्य देने को कहा, किन्तु महर्षि च्यवन प्रसन्न न हुए उन्होंने कहा—

अर्धं राज्यं समग्रं च मूल्यं नार्हामि पार्थिव ।
सदृशं दीयतां मूल्यमृषिभिः सह चिन्त्यताम् ॥

हे पार्थिव ! आप का आधा या सम्पूर्ण राज्य मेरा मूल्य नहीं है अतः आप ऋषियों से विचार कर मेरा उचित मूल्य दीजिये । यह सुन राजा नहुष अति दुःखित हुआ, उसने ऋषियों से विचार किया । तब एक वनस्थ मुनि ने कहा कि मैं आपको ऋषि का यथोचित मूल्य बता सकता हूँ । राजा ने कहा कि महाराज आप महर्षि का उचित मूल्य बता कर मेरा मेरे कुल तथा देश का उद्धार कीजिये । तब मुनि ने बतलाया—

अनर्घेया महाराज द्विजा वर्णेषु चोत्तमाः ।
गावश्च पुरुषव्याघ्र गौर्मूल्यं परिकल्प्यताम् ॥

हे राजन् ! ब्राह्मण वर्ण सब वर्णों से उत्तम है अतः उसका कोई मूल्य नहीं आंका जा सकता, ठीक इसी प्रकार गौ भी अनर्घेय है उसका भी कोई निश्चित मूल्य नहीं लगाया जा सकता, अतः आप ऋषि के मूल्य में एक गौ दे दें । राजा नहुष ने ऐसा ही किया, एक गाय निषादों को देकर कहा कि हे महर्षे अब आप उठिये, मैंने एक गाय देकर आपको खरीद लिया है । तब महर्षि च्यवन यह कहते हुए उठ गये ।

उत्तिष्ठाम्येष राजेन्द्र सम्यक् क्रीतोऽस्मि तेऽनघ ।
गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किंचिदिहाच्युत ॥१॥
कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव ।
गवां प्रशस्यते वीर सर्वपापहरं शिवम् ॥२॥
गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते ।
अन्नमेव सदा गावो देवानां परमं हविः ॥३॥
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठिता ।
गावो यज्ञस्य नेत्र्यौ वै तथा यज्ञस्य ताः मुखम् ॥४॥
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च ।
अमृतायनं चैता सर्वलोकनमस्कृताः ॥५॥
(महा० अनु० पर्व)

अर्थात् हे पृथिवीपते अब मैं उठता हूँ, आपने मेरा उचित मूल्य देकर खरीद लिया है क्योंकि इस संसार में गायों से श्रेष्ठ और कोई धन नहीं है । हे राजन् ! गायों के विषय में कथा करना तथा सुनना, दान देना और

दर्शन करना भी श्रेष्ठ सुखदायक एवं पापनाशक है। ये गायें ही लक्ष्मी (धन) का मूल स्रोत हैं, इनसे ही सदा भोज्य पदार्थ तथा देवताओं की श्रेष्ठ हवि (घृत दुग्धादि) उत्पन्न होती है । स्वाहाकार वषट्कार का भी यही हेतु हैं, गायों के घृतादि से ही यज्ञ सम्पन्न होता है, अतः इनको यज्ञ का मुख (मुख्य साधन) समझना चाहिये । ये गायें ही दूध रूपी अमृत को देती हैं और इनके पुत्र भार वहन करते हैं । ये गायें ही अमृत का मूल स्थान हैं अतः ये समस्त संसार के वन्दनीय हैं ।

पाठक वृन्द ! इस घटना से समझ गये होंगे कि प्राचीन ऋषियों की दृष्टि में गाय का कितना मान और मूल्य था । इसी प्रकार महर्षि पतञ्जलि ने भी गौ को सर्वश्रेष्ठ धन माना है—*"भोगवानयं देश इत्युच्यते यस्मिन् गावः सस्यानि च वर्तन्ते" (महाभाष्य ५।१।६) अर्थात् वही देश धनाढय है जिसमें गायें और खेती विद्यमान हैं ।

प्राचीन समय में आज की भांति मद्य और मांस का सेवन नहीं किया जाता था । "सुरा मलमन्नानाम्" मद्य को अन्न का मल समझ छूते तक न थे और गौ के दूध को "अमृतं वै गवां क्षीरम्" अमृत समझते थे एवं "पयो भक्षाः दिवं यान्ति" मोक्ष मार्ग का साधक समझ कर उसका पान करते थे । वेद का भी यही आदेश है—"वीतं पातं पयस उस्रियायाः" अर्थात् गाय के घी-दूध को खाओ-पीवो । गायों का मांस नहीं खाया जाता था । 'न चासां मांसमश्नीयात्' अर्थात् गायों का मांस न खावे ।

विक्रयार्थं हि यो हिंस्याद्भक्षयेद्वा निरङ्कुशः ।
घातयानं हि पुरुषं येऽनुमन्येयुरर्थिनः ॥
घातकः खादको वापि तथा यश्चानुमन्यते ।
यावन्ति तस्या रोमाणि तावद्वर्षाणि मज्जति ॥
(महा० अनु० अ० ७४ श्लो० ३-४)

अर्थात् विक्रय के लिये गो-हिंसा करे या स्वयं खाये तथा जो मारने वाले का अनुमोदन करे उन (मारने, खाने और अनुमति देने वाले) सभी का जितने गौ के शरीर पर रोम हैं उतने वर्ष तक दुःख सागर में बेड़ा गर्क हो जाता है । वेद में भी गोघ्न को प्राणदण्ड की आज्ञा दी गई है ।

'तेषां शीर्षाणि हरसाऽपि वृश्च'। 'यदि नो गां 'सि ...तं त्वा सीसेन विध्यामः । इत्यादि ।

यज्ञादि में मांस प्रक्षेप आदि का विधान न था—'घृतेन जुहुयादग्निम्' गोघृत से अग्निहोत्र करने का स्पष्ट विधान था और गौ का दूध, दही आदि ही यज्ञ का परम साधन था—'ऋते दधिघृतेनेह न यज्ञः संप्रवर्तते' अर्थात् दूध और दही के बिना यज्ञ किया नहीं जा सकता, अत एव गाय को "यज्ञांगं कथिता गावः" यज्ञ का अङ्ग समझते थे ।

"घृतं प्राशेत्" गौ का घी खावे और—

पुष्ट्यर्थमेताः सेवेत शान्त्यर्थमपि चैव हि ।
पयो दधि घृतं चासां सर्वपापप्रमोचनम् ॥

शरीर की पुष्टि तथा शान्ति के लिए गायों की सेवा करें क्योंकि इनका दूध दही तथा घी सब पापों को (दुर्बलताओं को) नष्ट करता है । वेद में भी लिखा है—"पुष्ट्यै गोपालम्" । संसार में दुर्बल रहना भी पाप है । इसको गायें दूर करती हैं अतः ये पाप नाशक हैं । पुष्टि का दूसरा साधन अन्न है वह भी इन से ही मिलता है—

एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते ।
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च ॥

इनके पुत्र (बैल) धान्यों और बीजों को कृषि द्वारा उत्पन्न करते हैं । गायें सर्वथा ही उपकारक हैं—

पयसा हविषा दध्ना शकृता चाथ चर्मणा ।
अस्थिभिश्चोपकुर्वन्ति शृङ्गैर्बालैश्च भारत ॥
(महा० अनु० अ० ६६ श्लो० ३६)

अर्थात् गायें दूध, घी, दही, गोबर से तथा मरने के पश्चात् चर्म, हड्डी और बालों से भी मनुष्यों का उपकार करती हैं । सार यह है—

गावो लोकान् तर्पयन्ति क्षरन्त्यो,
गावश्चान्नं संजनयन्ति लोके ।
यस्तं जानन्न गवां हार्दमेति,
स वै गन्ता निरयं पापचेताः ॥

गायें दुग्ध से मनुष्यों को तृप्त करती हैं और मनुष्यों के लिये अन्न उत्पन्न करती हैं । जो कोई इस बात को जानता हुआ भी इनकी अन्न, जल और चारे से सेवा करके हार्दिक प्रेम को प्राप्त नहीं करता वह पापी शीघ्र ही दुःख सागर में गोता लगायेगा, इस में कोई सन्देह नहीं ।

* * *

---

*"भोगो धनमुच्यते" भोग का अर्थ है धन ।

ऋषियों की भूमि पर गो-संहार

[ले०—ब्र० राजवीर भाष्याचार्य सिद्धन्तशास्त्री गुरुकुल झज्जर]

गौ का स्थान माता से भी उन्नत माना है। किसी कवि ने कहा है कि—

जननी जनकर दूध पिलाती केवल साल छमाही भर।
गोमाता पय सुधा पिलाकर रक्षा करती जीवन भर॥

गोरक्षा का प्रश्न साम्प्रदायिक नहीं; किन्तु धार्मिक सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से परमावश्यक है। भारत देश कृषि प्रधान है। यहाँ पर ६० प्रतिशत मानवों के जीवन का आश्रय खेती है, अतः प्रत्येक दशा में गोवंश की रक्षा करना हमारा ही नहीं किन्तु मानव मात्र का परम धर्म है। गोरक्षा के बिना स्वराज्य प्राप्ति निरर्थक है यतः गोरक्षा आन्दोलन के प्रथम संचालक महर्षि दयानन्द जी लिखते है कि—"गौ आदि पशुओं के नाश से राजा और प्रजा का नाश हो जाता है। हा! कितने दुःख की बात है कि जिस सस्य श्यामला आर्यवसुन्धरा पर एक-एक गाय के रक्षणार्थ बड़े बड़े सम्राटों के जीवन बलि हो जाते थे, आज उसी देवभूमि में प्रतिमिनिट २५ गायों के गले पर कटार चलाई जाती है कितना घोर हत्याकाण्ड है। हमारे पूर्वज सब ही गायें रक्खा करते थे। रामायण में अयोध्या का वर्णन करते समय बाल्मीकि जी लिखते हैं कि—

वाल्यसंनिचयः कश्चिदासीदस्मिन्पुरोत्तमे।
कुटुम्बी यो ह्यसिद्धार्थोऽगवाश्वधनधान्यवान्॥

बालकाण्ड सर्ग ६ श्लोक ७

अर्थात् श्रेष्ठ अयोध्या नगरी में एक भी प्राणी भूखा निर्धन न था और एक भी कुटुम्ब ऐसा न था जिसमें अश्व तथा गौ न पाली जाती हो। उस समय यहाँ पर दूध दही की नदियाँ बहा करती थीं। यहाँ का गोधन ही मुख्य धन था। एक बार राजा दशरथ ने अश्वमेध यज्ञ किया, यज्ञ के निर्विघ्न समाप्त हो जाने पर राजा दशरथ ने होता के लिये पूर्व दिशा का राज्य, अध्वर्यु के लिये प्रतीची दिशा, ब्रह्मा के लिये दक्षिण दिशा, उद्गाता के लिये उदीची दिशा का राज्य दक्षिणा में दे दिया, तो ऋषियों ने कहा—"न भूम्या कार्यमस्माकं नहि शक्ताःस्म पालने" अर्थात् हे राजन्! हम भूमि का क्या करेंगे, हम तो पालने में असमर्थ हैं। हमें तो—

मणिरत्नं सुवर्णं वा गावो वा यद्वा समुद्यतम्।
तत्प्रयच्छ नृपश्रेष्ठ धरण्या ,, प्रयोजनम्॥

बा० स० १४२।४८

अर्थात् हे राजा! भूमि से हमें क्या प्रयोजन। हमें तो गाय सुवर्णादि धन प्रदान करो। तब राजा दशरथ ने उनको—

गवां शतसहस्राणि दश तेभ्यो ददौ नृपः॥

बा० स० १४२।५६

दश सहस्र गायें दक्षिणा में दीं। इसी प्रकार दशरथ ने पुत्रों की उत्त्पत्ति के पीछे—ब्राह्मणेभ्यो ददौ वित्तं गोधनानि सहस्रशः॥ ब्राह्मणों के लिये हजारों गायें धनादि दिया।

॥ गोरक्षा के लिये स्त्रीवध ॥

जब विश्वामित्र जी राम लक्ष्मण को यज्ञरक्षार्थ ले गये थे, तो उनको मार्ग में राक्षसी ताटकी मिली। तब राम ने कहा कि स्त्री को मारना क्षत्रिय का धर्म नहीं है अब महर्षि विश्वामित्र ने राम को उपदेश दिया और कहा—

नहि ते स्त्रीवधकृते घृणा कार्या नरोत्तम ॥१७॥
गोब्राह्महितार्थाय जहि दुष्टपराक्रमाम् ॥
बा० स० २५ श्लोक १५

अर्थात् हे नरों में श्रेष्ठ राम ! तुम्हें स्त्रीवध के लिये घृणा नहीं करनी चाहिये अतः गायों और ब्राह्मणों के हित के लिये इस दुष्टा को मार दो । तब राम ने कहा—

गोब्राह्मणहितार्थाय देशस्य च हिताय च ।
तव चैवाप्रमेयस्य वचनं कर्तुमुद्यतः ॥
बा० स० २६२।५

अर्थात् गौ, ब्राह्मण और देश के हित के लिये मैं आपके वचन से इस निकृष्ट कर्मके करने को तैयार हूँ और उस राक्षसी को मार कर गौ और ब्राह्मणों का कष्ट निवारण किया ।

जब महाराजा दशरथ ने चारों पुत्रों के विवाह के पीछे प्रभात काल में गोदान किया था तब भी रामायण में लिखा है कि—

गवां शतसहस्रं च ब्राह्मणेभ्यो नराधिपः ।
एकैकशो ददौ राजा पुत्रानुद्दिश्य धर्मतः ॥
बा० स० ७२१।२२

सुवर्ण शृंग्यः संपन्नाः सवत्साः कांस्यदोहनाः ॥
२३१ श्लोक

पुत्रों को उद्देश्य करके राजा दशरथ ने एक-एक ब्राह्मण को स्वर्ण से मण्डित सींगों वाली बछड़े सहित हजार-हजार गायें दान में दीं । वैदिक काल में गोधन ही मुख्य धन था, दक्षिणा में अधिकतर गोदान ही दिया जाता था । वेदों में गोपालन को प्रधान धर्म माना है । सृष्टि के आदि से आर्य लोग गोपालन करते आये हैं। यज्ञकर्म इसी के ही आश्रय पर है ! प्रतिदिन के धार्मिक और व्यावहारिक जीवन में इसकी अपेक्षा बनी ही रहती है । धार्मिक कामों में दूध, दही,घृत पद-पद पर उपयोग में लाये जाते हैं । आर्य संस्कृति इस भावना से परिपूर्ण है कि—"यद् गृहे दुःखिता गावः स याति नरके नरः" अर्थात् जिसके घर में गायें दुःखी हैं, अच्छी प्रकार सेवा नहीं होती, भूखी रहती हैं वह मनुष्य नरक (दुःख विशेष) को प्राप्त होता है । जिस पुण्य भू पर भगवान् कृष्ण गायें चराते थे, जहाँ पर पानी मांगने पर भी दूध ही पिलाया जाता था (इतना अधिक दूध होता था), जहाँ चक्रवर्ती सम्राट् गोपालन अपना परम धर्म समझते थे, जिस गोवंश की रक्षार्थ भूपाल दिलीप ने अपने प्राणों को अर्पण किया, जिसके लिये वीर शिवाजी ने अपनी दुष्टदमनी तलवार उठायी और जीवन भर लड़ता रहा, जिसकी दयनीय दशा को देख कर महात्मा गौतम बुद्ध ने सारे राज्यपाट पर लात मारी और गो-रक्षार्थ प्रचार किया, जिसकी रक्षार्थ महाराणा प्रताप ने भयङ्कर जंगलों को छान डाला, जिस गोमाता के दुःख को सहन कर महर्षि दयानन्द जी ने सर्व प्रथम गोरक्षा आन्दोलन छेड़ा और सर्वस्व अर्पण किया, आज उस सर्व हितकारी गोमाता का ऋषियों की पवित्र भूमि पर मारा जाना कितना भारी पाप है और भारत के ललाट पर कलंक है । जिसकी हत्या करना आदि सृष्टि से यवन काल तक महा पाप व हानिकर समझा जाता था, जिसका वध यवन शासकों ने भी हानिकर समझा था और अकबर, हुमायूँ, बहादुरशाह तथा बाबर आदि मुस्लिम सम्राटों ने गोवध निषेध कानून अपने राज्य में प्रचलित किया था । किन्तु दुर्भाग्य है भारत देश का जो यह पाप आज भी यहां हो रहा है ।

भारत को स्वतन्त्र हुये ६ वर्ष हो गये हैं । १५ अगस्त १९४७ को हमारा देश पांच हजार वर्षों की दासता रूपी शृङ्खलाओं से मुक्त हुवा था । यही दिन भारतवर्ष के इतिहास में स्वर्णाक्षरों से अंकित रहेगा । इस दिन को लाने के लिये न जाने कितने व्यक्तियों ने अपने प्राणों को बलि दी, कारागार के कठोर दुःख सहे, न जाने कितनों के अरमान धूल में मिले थे, न जाने कितने फांसी के तख्ते पर झूले, कितने ही गोली के निशाने बने । इसी दिन उन देशभक्त दयानन्द और सुभाष का स्वप्न पूरा हुवा था, हमारा सौभाग्य है कि हमें यह दिन देखने को मिला । हम सोचते थे कि अंग्रेज मांसभक्षक होने से गोवध कराता था और इन्होंने ही यह दुष्कर्म प्रारम्भ किया था, अतः इसके चले जाने पर गोमाता के प्राणों की रक्षा अवश्य होगी और गोहत्या बन्द हो जायगी, किन्तु अभी गोरा अंग्रेज ही गया है, काला अंग्रेज शेष है । अंग्रेज अपनी अंग्रेजियत छोड़ गया । कांग्रेसी नेता

स्वराज्य प्राप्ति से पूर्व अंग्रेजों का घोर विरोध करते थे तथा जनता को आश्वासन दिलाते थे कि हमारे हाथ में राज्य आते ही गोवध बन्द हो जायगा, जैसे कि बालगंगाधर तिलक ने कहा था कि "जब हम स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे तो ५ मिनट में एक कलम से गोवध निषेध कानून पास कर देंगे" परन्तु गोमाता आज भी पुकार-पुकार कर कह रही है कि "हे दूध पीने वालो! मेरी रक्षा करो, मैं तुम्हें घास खाकर माता के समान अमृत समान दूध पिलाती हूँ। तुम्हीं मेरे गले पर छुरी चलाते हो तुम, तो कुत्ते से भी निकृष्ट हो गये हो, यह कृतघ्नता का पाप तुम्हें लगेगा। अतः इस पाप से बचने के लिये मुझे न मारो, मुझे न मारो" विश्ववन्द्य बापू ने वर्धा में गो सेवा परिषद् के उद्घाटन के समय कहा था कि "गोसेवा करो सब की रक्षा हो जायगी" वे तो गोहत्या के प्रश्न ो स्वराज्य से भी बढ़कर मानते थे। गोसेवा में ईश्वर ो सारी मूक सृष्टि की रक्षा करना है। आज बापू जी आदर्शों को मानने वाले श्री जवाहरलाल नेहरू जी ल्सा में व्याख्यान देते हुये कहते हैं कि "मेरी सरकार ई कानून इसे रोकने का नहीं बनायेगी" यह है गांधी-ादियों की दशा! जो कि कहते हैं कि हम बापू जी के हने पर चलते हैं। कितने दुःखकी बात है, ईश्वर सुबुद्धि दान करें। जिस देश में घी-दूध भक्षण कर भीम, र्जुन समान महाबली योद्धा होते थे, आज उनकी न्तान की यह अवस्था, इतनी निर्बलता केवल ोहत्या के कारण ही हुई है। आज हमारे देश में ति व्यक्ति दूच के उपयोग की औसत प्रतिदिन २॥ टांक है जब कि दूसरे देशों की यही औसत-आस्ट्रेलिया में २२ छटांक कनाडा में २८ छ०, डेन्मार्क में २० छ० तथा अमेरिका में १७ छ० है। ऐसी अवस्था में हम कैसे स्वस्थ रह सकते हैं। आज शुद्ध घी—दूध ढूंढने पर भी कठिनता से ही मिलता है, हमारे देश में प्रायः वनस्पति घी खाते हैं। अधिकतर नगरों में जो कि स्वास्थ्य के लिये बहुत ही हानिकर है। भारत में गाय को दूध देने की शक्ति भी बहुत ही घट गई है। हमारे यहां की गाय औसतन प्रति वर्ष ६ मन दूध देती है जबकि दूसरे देशों में यह औसतन १४ गुणा है। डेन्मार्क में एक गाय औसतन १२६ मन दूध देती है। कितनी भारी क्षति है। इससे बचने के लिये सरकार को तत्काल ही गोवध बन्दी का कानून प्रचलित करना चाहिये। यदि सरकार बन्द न करे तो जनता को चाहिये कि आन्दोलन करें और सरकार को बाधित करें। प्रजातन्त्रीय राज्य में प्रजा की मांग की कब तक अवहेलना होती रहेगी। जिस जवाहरलाल ने कई लाख जनसमूह के सम्मुख १५ अगस्त सन् १९४७ को कहा था कि मैं तो तुम्हारा सेवक हूँ। आज से सारे मनुष्य राजा हैं। आज वह जनतंत्र—राज्य में जनता की आवाज न सुनेंगे! अब नहीं सुनें तो न सुनें, पर वह समय दूर नहीं है जब की यह मांग पूरी न हो, अवश्य ही होगी। हमारा राष्ट्र सम्पत्ति-समृद्धिशाली व सुखी होगा तो केवल गोपालन से, गाय ही हमारी दरिद्रता और निर्बलता को हटाने में समर्थ है।

गोमहिमा

जिसके बछड़े कृषि कर्म करने, अन्न उत्पन्न करने, भार वहने, जल सींचने और यात्रा करने में मुख्य साधन हैं। जिसका अमृत तुल्य दूध पुष्टिप्रद, बलदायक और वीर्यवर्द्धक है। जिसका घी आयुवर्द्धक, यज्ञ का प्रधान निमित्त और बुद्धिदायक है, जिसका गोमय खाद के काम में एवं घरों में लेपन के द्वार पवित्र रखने वाला है; भोजन निर्माणार्थ इन्धन है के प्रयोग में आता है, जिसका मूत्र रोगनाशक भस्म शुद्धिकृत और असाधारण गुण वाला है, जिसके मरने पर भी शरीर उत्तम खाद उत्पन्न करे, जो जंगल में तिनकों को चर कर हमें दुग्धामृत का पान कराये, जो एक जन्म में केवल दूध से ही २५७४० मनुष्यों को तृप्त करे; यदि उसे मारा जाये तो हो सकता है अधिकाधिक ८० मनुष्य तृप्त हो सकें, तो फिर इतने तुच्छ लाभ के लिये सर्व हितकारी गाय का हनन करना महापाप क्यों न हो। यह स्वतन्त्र भारत के इतिहास में महा कलंक है। आज लाखों एकड़ भूमि होने पर भी भारतीय प्रजा अन्न से पीड़ित है इसका एक मात्र कारण बैलों का अभाव अर्थात् गोवध है। कितनी आश्चर्यजनक वार्ता है कि जो देश दूसरों के लिये अन्न देता था आज वह अपना भी निर्वाह न कर सके। दूध के अभाव में भारत सरकार

विदेशों से कृत्रिम दूध मंगाने में अरबों रुपया व्यय कर रही है जो कि स्वास्थ्य के लिये महाहानिकारक है। भारत के आबालवृद्ध सभी दूध घृतादि के न मिलने से शक्तिहीन हो गये हैं। प्राचीन भारत में दूध बेचना पाप समझते थे, प्रतिदिन गायों की संख्या कम होती जा रही है प्रायः जनता रोगग्रस्त रहती है तथा अस्पतालों की शोभा बढ़ाती है। सरकार जहाँ कृत्रिम दूध मंगाने में धन व्यय करती है, फिर विदेशी औषधियों के मंगाने में भी अरबों रुपया व्यय करती है। यदि सरकार इतना रुपया गाय के पालन में व्यय करे तो न दूध और औषधियां मंगानी पड़ें, न अन्न की आवश्यकता रहे। आज जो सरकार के सामने अन्न-संकट है उसकी पूर्ति हो जाये, कोई भी प्राणी भूखा न मरे। घी इत्यादि अमृत पदार्थ पुष्कल मात्रा में प्राप्त हो सकें, जिससे देश शक्तिशाली होगा। यदि सरकार इसी भांति चलती रही तो भारतीय संस्कृति एवं वैदिक सभ्यता के प्राण गोधन के नाश से देश का सर्वनाश निश्चित है। जबकि विदेशों में गोहत्या नहीं होती। अपितु गोवंश की बढ़ती कर रहे हैं पर इस राम-कृष्ण की पुण्य भूमि पर गोवध हो रहा है। यदि गोवध चलता रहा तो जनता और सरकार में एक भयंकर संघर्ष होगा और वह अवश्यम्भावी है, इसको सरकार ही रोक सकती है इसका एक मात्र उपाय है 'गोवध निषेध कानून' भारत में शीघ्रातिशीघ्र प्रचलित करें। वेद के अनुसार जब तक "गोघातक के लिये प्राणदण्ड" यह कानून प्रचलित न हो तब तक गोहत्या रुकना असम्भव है।

इस वेद के आदेशानुसार आज भी नयपाल राज्य में गोघातक को प्राण दण्ड दिया जाता है यह वहां पर कानून प्रचलित है।

गोघातक को प्राणदण्ड वेद सम्मत है ॥

यजुर्वेद में आता है कि "अंतकायगोघातकम् ॥

य० अ० ३० ।१८॥

अर्थात् गाय के मारने वाले को प्राण दण्ड दो। अथर्व वेद में आता है कि—

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम् ।
तंत्वा सीसेन विध्यामो यथा नो सो अवीरहा ॥
अ० १। १६। ४॥

अर्थात् यदि कोई गाय घोड़ा आदि उपकारी जीव की हत्या करता है, उसे शीशे की गोली से उड़ा दें जिससे वह पुनः न मार सके। ऋग्वेद में तो

योऽघ्न्याया भरति क्षीरमग्ने,
तेषां शीर्षाणि हरसापिवृश्च ॥
ऋ० १०। ८७। १८॥

राजा का परम कर्त्तव्य है कि जो अघ्न्या अर्थात् न मारने योग्य गायों का हनन करता है उसके शिर को वज्र से कटवा दे। शास्त्रों में तो गौ को मारने व कष्ट देने वाले को प्रायश्चित्तीय बताया है। गोहत्या वेदानुसार महापाप है। पुराणों में आता है कि—यावन्ति तस्या रोमाणि तावद् वर्षाणि मज्जति अर्थात् गाय के शरीर में जितने रोम हैं, उतने वर्षों तक गाय को मारने वाला नरक (दुःख विशेष) भोगता है। महाभारत में वेदव्यास जी लिखते हैं।

अघ्न्या इति गवां नाम क एता हन्तुमर्हति ॥
महा० शा० अ० २६३ ॥

गाय को अघ्न्या नाम से कहा जाता है, इन्हें कौन मार सकता है। और भी आता है कि "गौर्मे माता वृषभः पितामे" अर्थात् गौ मेरी माता के समान है, बैल पिता के। इस प्रकार महाभारत में गाय को माता की उपमा दी है। यतः वह हमको माता के समान पालती है अतः सर्व मान्य है।

वेद में गोस्थान

वेदों में गोमाता का बहुत ही उच्चस्थान है। वेदों में तो गोहत्या निषेध के सैकड़ों मंत्र आते हैं, जैसे कि—"गां मा हिंसी" य० १३।४३। गाय को न मार। "चतुष्पात् पाहि" य० १४।८॥ "घृतेनाक्तौ पशूं स्त्रायेथाम्" य० ६।११॥ चार पैर वाले उपकारी गायादि पशुओं का पालन करो। हे घी को चाहाने वालो व यज्ञकारको! गायादि पशुओं की रक्षा करो।

"मा गामनागामदितिं वधिष्ट" ऋ० ८।१०१।१२॥ अखण्डनीय गाय का वध मत करो। "घृतं दुहानमदितिं जनायाग्ने मा हिंसीः" य० १३॥४६॥ अर्थ—हे अग्नि के समान क्रूर मनुष्य सब जनों के लिये घी से पूरण करने वाली तथा न मारने योग्य गाय की हत्या मत कर, वेद

में गाय के दूधादि को ही पथ्य भोजन बताया है। "अवसाय पद्वते रुद्रमृड" ऋ० १०।१६९।१॥ इस पर यास्क मुनि लिखते हैं "पद्वदवसं गावः पथ्यदनम्" अर्थात् हे रोगनाशक प्रभो! पथ्य भोजन के साधन गाय के लिये कल्याण करो। वेद में गाय को अघ्न्या कहा है "अघ्न्याऽहन्तव्या भवति" निरु ११।१४॥ इस पर देवराजयज्वा लिखते हैं कि "अघस्य दुर्भिक्षादेः हन्त्री" इसी प्रकार दुर्गाचार्य लिखते हैं "अघ्न्या कस्मात्! साहि सर्वस्यैवाऽहन्तव्या भवति" अर्थात् गाय को अघ्न्या इसलिये कहते हैं कि यह न मारने योग्य होती है और दुर्भिक्षादि दुःखों से बचाती है। यही तो कारण है जो आज हमारे देश में स्थान स्थान पर अकाल होते हैं क्योंकि गाय के न होने से यज्ञ नहीं होते और "यज्ञाद्भवति पर्जन्यः" यज्ञ से वृष्टि होती है। वर्षा के न होने से ही अकाल पड़ता है अतः सरकार इस ओर ध्यान दे, यदि दुर्भिक्ष से जनता को बचाना चाहती है। जिस राजा के राज्य में दुर्भिक्ष पड़ता है उसे बड़ा पाप लगता है, नेहरु जी इससे बचें। वेद में गाय को अही कहा है जिसका अर्थ है "अही अहन्तव्या भवतीति" अर्थात् गौ अवध्य है। और "गम्यतेऽनया क्षीरादिरिति" इससे दूधादि की प्राप्ति होती है। वेद में गौ को अदिति कहा है। इसका अर्थ है "अदिति अखंडनीया भवति पुनः पुनरपि दुह्यमाना न क्षीयत इति वा" अर्थात् गाय अखंडनीय है (नाश न करने योग्य) और बार-बार दुही जाने पर भी क्षीण नहीं होती। गौ को पूजनीय होने से वेद में मही नाम से कहा है। "मह्यते पूज्यते मनुष्यैरुपभोगसाधनत्वात्" गाय माता के तुल्य माननीय है। जो गायों का पालन करते है उन्हें यह क्षीरादि से तृप्त करने में समर्थ है अतः वेद में इसे शक्वरी कहा है। अथर्व वेद में गाय को लात मारना भी निषेध है "जो गाय को पैर से ठुकराता है मैं उसको समूल नष्ट कर देता हूँ'. अथर्व १३।१।५६॥ इत्यादि प्रमाणों से सिद्ध है कि दूधप्रदात्री अन्नदात्री पूजनीय गाय के वध का वेद सर्वथा निषेध करता है किन्तु गौ पालने का आदेश देता है। इसलिये अय! वेद के मानने वालो आर्य वीरो! एक बार फिर करवट बदलो और जाग जावो। यह समय आ गया है आर्यत्व दिखाने का इसे मत जाने दो। अय! ऋषि संतानो! तपोधन ऋषि मुनियों की पवित्र भूमि पर गोवध हो रहा है, तुम कहाँ पड़े सो रहे हो, तुममें वीर शिवा जी का रक्त है उसी की तरह गोरक्षार्थ आगे बढ़ो। कर्मठ श्री कृष्ण और आनन्द कन्द दयानन्द की आत्मायें पुकार-पुकार कर कह रही हैं कि गोरक्षा करो! गो रक्षा करो!! गो रक्षा करो!!! तभी सारे संसार में सुख शान्ति का राम राज्य होगा। यही भगवती श्रुति का सन्देश व उपदेश है।

गोमाता की अपूर्व देन तक्र और दधि

[लेखक—ब्र० राजवीर भाष्याचार्य, सिद्धान्तशास्त्री गुरुकुल झज्जर]

गाय का तक्र (छाछ) एक अपूर्व पदार्थ है। आयुर्वेद में इसकी बहुत महिमा गाई गई है। अन्य पशुओं की अपेक्षा गो तक्र बड़ा गुणकारी व लाभप्रद है, इसको अमृत की उपमा दी है। राज निघण्टु के कर्ता नरहरि जी लिखते हैं—

न तक्रसेवी व्यथते कदाचिन्नतक्रदग्धाः प्रभवन्ति रोगाः।
यथा सुराणाममृतं सुखाय तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः॥

अर्थात् गाय का तक्र सेवन करने वाला मनुष्य कदापि रोग से ग्रस्त नहीं होता और तक्र से नष्ट हुये रोग पुनः उत्पन्न नहीं होते, यथा देवताओं के सुख के लिये अमृत है तथा इस मर्त्यलोक में मनुष्यों के लिये तक्र अमृत तुल्य है। गोतक्र अति स्वादिष्ट, रक्तशुद्धिकृत्, बुद्धि-शक्ति-वर्धक, धातु वर्धक और आरोग्यप्रद है। वैद्यक शास्त्र में इसकी महिमा भूरि २ गाई है। छाछ पीने से भोजन शीघ्र पचता है और आंतें शुद्ध हो जाती हैं। गाय की छाछ पीने से रक्त का वेग आंतों की ओर बढ़ जाता है। इसीलिये संस्कृत के किसी कवि ने कहा कि "भोजनान्ते किं पेयम्" अर्थात् भोजन के पश्चात् क्या पीना चाहिये तो उत्तर दिया है "तक्रम्" गाय का ही तक्र पीना चाहिये!

स्वास्थ्य के विशेषज्ञ प्राचीन ऋषि मुनियों ने लिखा है कि गाय की तक्र का नित्य सेवन करने से कोई रोग नहीं होता और वृद्धावस्था के चिह्न निर्मूल हो जाते हैं, आयु बढ़ती है, रोगियों को तो सदा गाय की ही लस्सी पीनी चाहिये। वैद्यक शास्त्र में गोतक्र का बड़ा ही उपयोग होता है। संग्रहणी अतिसारादि सैकड़ों भयंकर रोग तो इसके सेवन से समूल नष्ट हो जाते हैं तथा मनुष्य पूर्ण स्वस्थ हो जाते हैं। सुवर्णादि धातु भी इससे शुद्ध की जाती हैं। गाय का तक्र तो अमृत समान है। यह निर्धनों को भी सुलभ है।

गव्यं त्रिदोषशमनं पथ्ये श्रेष्ठं तदुच्यते।
दीपनं रुचिकृन्मेध्यमर्शोदरविकारजित्॥
॥ धन्वन्तरीयनिघंटु ॥

अर्थ—गाय का तक्र तीनों दोषों का शमन करने वाला है। पथ्यों में उत्तम, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला, रुचिकारक, मेधाबुद्धिजनक, अर्श (बवासीर) और उदर के सब विकारों को दूर करता है। और भी कहा है—

तक्रं त्रिदोषशमनं स्वादुपाकरसं लघु।
वीर्योष्णं मूत्रकृच्छ्रघ्नं कषायमम्लमग्निदम्।
अम्लेन वातं मधुरेण पित्तं कफं कषायेण निहन्ति-
सद्यः॥

गाय का तक्र त्रिदोषनाशक, पचने में स्वादु, स्वादु रस से युक्त, लघु (हल्का) ऊष्ण वीर्य, मूत्रकृच्छ्र रोग का नाश करने वाला, कषैला, खट्टा और अग्निदीपक है। गोतक्र खट्टेपन से वात का, मधुरपन से पित्त का तथा कषैलेपन से कफ का नाश करने से त्रिदोष नाशक कहाता है। गोतक्र स्वादिष्ट ग्राही, प्रमेह, मेह, अर्श, पाण्डु, संग्रहणी, कोष्ठबद्धता भगन्दर, उदर, प्लीहा, गुल्म ((गोला), श्वेतकुष्ठ, उदरकृमि, घी का अजीर्ण, विषमज्वर और शूलादि अनेकों रोगों को नष्ट करता है।

गोतक्र के भेद—

इसके मुख्य तीन भेद हैं—

समुद्धृतघृतं तक्रमर्धोद्धृतं च यत।
अनुद्धृतघृतं तक्रमित्येवं त्रिविधं स्मृतम्॥

एक समुद्धतघृततक्र—जिसमें से घी निकाल लिया जाता है।

दूसरा अर्धोद्धृतघृततक्र—जिसमें से आधा घी निकाला जावे।

तीसरा अनुद्धृतघृततक्र—जिसमें से तक्र निकाला ही न हो।

कोई २ इसके पाँच भेद भी मानते हैं जो कि निम्नलिखित हैं—घोलं तु मथितं तक्रमुदश्विच्छच्छिकापि च।

अर्थात्—१ घोल, २ मथित, ३ तक्र, ४ उदश्वित, ५ छच्छिका।

इन भेदों से तक्र पाँच प्रकार का है—

ससारं निर्जलं घोलं मथितंत्वसरोदम्।
तक्रं पाद जलं प्रोक्तमुदश्वित्त्वर्द्ध वारिकम्॥
छच्छिका सार हीना स्यात स्वच्छा प्रचुरवारिका।

अर्थ—घोल जो तक्र मलाई सहित मथा गया हो और जिसमें पानी न डाला गया हो उसे घोल कहते हैं।

मथित—जो तक्र मलाई निकाल कर बिना जल डाले मथा गया हो उसे मथित कहते हैं।

तक्र—जिसमें तीन भाग दही तथा एक भाग जल डाला हो उसको तक्र कहते हैं।

उदश्वित–जिसमें आधा दही और आधा पानी डाला हो वह तक्र मथने पर उदश्वित् कहाता है।

छच्छिका—जिसमें जल की मात्रा अधिक उसको सारहीन स्वच्छ छच्छिका (छाछ) कहते हैं।

गाय के तक्र के गुण—

अनुद्धृघृतं सान्द्रं गुरु विद्यात्कफात्मकम्।
बलप्रदन्तु क्षीणानामशोफातिसारकृत॥

घृतयुक्त तक्र गाढ़ा गुरु (भारी) कफ कारक क्षीण मनुष्यों को बल देने वाला तथा आम सूजन और अतीसार (दस्त) को दूर करता है।

वातपित्त हरं घोलं मथितं कफपित्तनुत्।
तक्रं ग्राहि कषायाम्लं स्वादु पाकं रसं लघु॥
वीर्योष्णं दीपनं वृष्यं प्रीणनं वातनाशनम्।
ग्रहण्यादिमतां पथ्यं भवेत्संग्राहि लाघवात्॥
किंचिद् स्वादु विपाकित्वान्न च पित्तप्रकोपणम्।
अम्लोष्णं दीपनं वृष्यं प्रीणनं वातनाशनम्॥
कषायोष्ण विकाशित्वाद् रौक्ष्याच्चापि कफापहम्।

अर्थात्—गाय का घोल तक्र वात-पित्त नाशक है।

मथित—हृदय के लिये प्रिय, रुचिप्रद, कफ-पित्त नाशक है।

तक्र—मलरोधक, कषैला, अम्ल (खट्टा) पाक में मधुर व रस में भी स्वादु हैं।

हलका उष्णवीर्य अग्नि—प्रदीपक वीर्यवर्द्धक तृप्तिकारक वात नाशक और संग्रहणी अतिसारादि रोगों में पथ्य है। तक्र हलका होने से ग्राही, स्वादुपाकी होने से पित्त को कुपित नहीं करता। अम्ल, उष्ण, दीपन, वृष्य, प्रीणन, वातनाशक, कषाय, उष्ण, विकाशि और रूक्ष होने से कफ का नाश करता है।

उदश्वित् कफकृद्बल्यं श्रमघ्नं परमं मतम्।
छच्छिका शीतला लघ्वी पित्तश्रमतृषाहरी॥
वातनुत्कफनुत्सा तु दीपनी लवणान्विता।

अर्थात्—उदश्वित् कफकारक बलवद्धक और परम श्रम व आम नाशक है। छच्छिका (छाछ) शीतल हलकी पित्तनाशक श्रमहारक तृषानिवारक और लवण के साथ छांछ वातनाशक कफहारक और अग्नि को दीपन करती है।

तक्र का निषेध—नैव तक्रं क्षदेद्यान्नोष्णकाले न दुर्बले।
न मूर्च्छाभ्रमदाहेषु न रोगे रक्तपित्तजे॥

अर्थ—उष्णकाल में क्षत में दुर्बलता मूर्च्छा भ्रम दाह और रक्तपित्तज रोग में तक्र अपथ्य है।

वातेऽम्लं शस्यते तक्रं शुण्ठी सैन्धवसंयुतम्।
पित्ते स्वादु सितायुक्तं व्योपक्षारयुतं कफे॥
हिंगुजीरयुक्तं घोलं सैन्धवेन च संयुतम्।
भवेदतीव वातघ्नमर्शोतिसारं हृत्परम्॥
रुचिदं पुष्टिदं बल्यं बस्ति शूलविनाशनम्।
मूत्रकृच्छ्रे तु सगुडं पांडुरोगे सचित्रकम्।

अर्थ—वात में खट्टा तक्र सोंठ तथा सैंधा नामक के साथ उत्तम है। पित्त में शक्कर मिला हुआ तथा मधुर तक्र उत्तम है। कफ की वृद्धि में सोंठ और पीपलि युक्त तक्र उत्तम है। हींग, जीरा तथा सैंधा नमक मिला हुआ घोल अत्यन्त वातनाशक, बवासीर, अतिसार नाशक है। रुचि बलप्रद पुष्टिदायक तथा बस्तिशूल नाशक है। गुड़ डाला हुआ घोल मूत्रकृच्छ्र को रोकता है और चीता (चित्रक) युक्त घोलतक्र पाण्डुरोग में उत्तम है।

तक्र में नमक मिला कर पाँच सात दिन तक जब भूख प्यास लगे। तब निरन्तर पिया जाये तो भयंकर से भयंकर पाण्डु कामलादि रोग समूल नष्ट होते हैं।

संग्रहणी रोग—संग्रहणी एक भयंकर रोग है यह मंदाग्नि और जठराग्नि के निर्बलता के कारण ग्रहणी कला के बिगड़ने से उत्पन्न होता है, साधारण मे साधारण भोजन भी पचता नहीं है और दस्तों के द्वारा बाहर निकल जाता है, रोगी दिन प्रतिदिन निर्बल हो जाता है, संग्रहणी रोगियों के लिये तक्र अमृत के समान लाभप्रद है। किन्तु वह गाय की दही में चौथा भाग जल डाल कर खूब बिलोया हुआ हो, उसमें से सब मक्खन निकाल लेना चाहिये, इसके अन्दर मक्खन विद्यमान् न रहना चाहिये।

आरम्भ में एक युवक रोगी को आध सेर दही का तक्र बना कर प्रयोग करना चाहिये। पुनः शनैः २ प्रतिदिन दो २ छटांक बढ़ाते जावें। इस प्रकार लगभग एक सप्ताह में ही रोगी की पाचन शक्ति इतनी तीव्र हो जायगी कि वह एक पाव से एक सेर प्रतिदिन बढ़ाता जायेगा और उसे पचा भी सकेगा। प्रतिदिन रोगी की शक्ति व पाचन की शक्ति को देख कर तक्र की मात्रा बढ़ाते जाना चाहिये। तक्र के साथ लवण-भास्कर चूर्ण हिंग्वादि चूर्ण जैसी साधारण औषधी ही के प्रयोग से संग्रहणी रोग समूल नष्ट हो जाता है। संग्रहणी के लिये स्वर्णप्रपटी लोहप्रपटी आदि प्रपटियाँ करपूर रस आनन्द भैरवादि अनेक रस आयुर्वेद शास्त्र में विद्यमान् हैं। रोगी की प्रकृति और शक्ति के अनुसार विचारशील वैद्य को करने चाहियें। विधि पूर्वक गोतक्र के साथ किसी औषधि का प्रयोग कराया जाये तो भयंकर से भयंकर संग्रहणी रोग समूल नष्ट हो जाता है। इसीलिये तो गो माता के तक्र को मनुष्यों के लिये आयुर्वेद शास्त्र में अमृत कहा है। तक्र संग्रहणी ही नहीं बढ़े हुए यकृत् (तिल्ली) प्लीहा मन्दाग्नि कोष्ठबद्धता तथा सभी उदर विकारों को विधिपूर्वक सेवन करने से दूर भगाता है।

सुवर्ण (सोना) राजत (चांदी) ताम्र (तांबा) जस्त (कली) आदि धातुओं को जब शुद्ध किया जाता है तो इन सबको तपा-तपा कर गला २ कर गाय की

दही की छाछादि में बार २ बुझाया जाता है। इस प्रकार करने से इन धातुओं को शुद्ध करके भस्में बनायी जाती हैं, जो कि आयुर्वेद के योगों के प्राण हैं।

गाय की दही के मट्ठे को पर्याप्त मात्रा में पिलाने से भांग का नशा दूर होता है।

भिलावा भूल से अधिक खा जाने से शरीर में बहुत उष्णता (गर्मी) होती हो तो गाय की दही मिश्री मिला कर बार २ पिलाने से पूर्ण लाभ होता है।

भिलावे से उत्पन्न सूजन पर—तिल अखरोट की गिरी चिरोंजी नारियल की गिरी इन सबको गाय के दूध में पीस कर लेप करें तीन घंटे पश्चात् लेप को धोकर इस स्थान को दही की गाढ़ी छाछ से धो डालें। पुनः तीन घण्टे पीछे ऊपर लिखित लेप करें तीन घण्टे के बाद पुनः छाछ से धो डालें। इस प्रकार दो तीन दिन में ही भिलावे से उत्पन्न सब सूजन विकार दूर होते हैं।

पेट में वायु हो तो पीपल और नमक मिला कर गाय की छाछ पीने से पूरा २ लाभ होता है।

संग्रहणी अतिसार और अर्श के ऊपर गोतक्र पिलावें, रक्त शुद्धि होकर बल पुष्टि और वर्ण सरस होता है। ४० दिनों तक केवल गोतक्र पीने से कठिन से कठिन संग्रहणी और उदर रोग मिट जाते हैं।

कोष्ठबद्धता होने पर छाछ में अजवाइन और विड नमक मिलाकर पिलाने से पूर्ण लाभ होता है।

काँच चूर्ण खाने पर गाय का तक्र व दही पिलाना चाहिये। कनेर के विष पर भी गो दही का तक्र देशी शकर मिला कर पिलाना चाहिये।

सूचन, व्रण (फोड़ा) की तीक्ष्ण पीड़ा और दाह के होने पर गोदधि कपड़े में बांध कर उसका पानी निकाल दें उस दही को पीड़ा वाले स्थान पर बांधनेसे दर्द तुरन्त दूर होता है और रोगी को शान्ति प्राप्त होती है। गोदही के छाछ से सन्धिवात पथरी अजीर्णादि रोगों में भी पूरा-पूरा लाभ होता है।

गोतक्र बनाने की सरल विधि

गाय का धारोष्ण कच्चा दूध भी जमाया जाता है परन्तु एक उफान का दूध ही जमाना ठीक है। दही जमा कर सेर दही पीछे पाव पानी मिला कर बिलोने से उत्तम तक्र तैय्यार होता है।

गो-दधि-गुणाः—

स्निग्धं विपाके मधुरं दीपनं बलवर्धनम्।
वातापहं पवित्रं च दधिगव्यं रुचिप्रदम्॥

अर्थ—गाय का दही स्निग्ध, पाक में मधुर, जठराग्नि दीपक बलवर्धक, वातविनाशक, परम पवित्र, रुचिकारक, शीतल और आम नाशक है।

उक्तं दध्नामशेषाणां मध्ये गव्यं गुणाधिकम्॥

अर्थात् सब दहियों में गाय का दही सबसे अधिक गुणकारी है।

अरोचके पीनसे कासकृच्छ्रे,
शीत ज्वरे तद्विषम-ज्वरे च।
दुर्नामरोगे ग्रहणीगदे च,
गव्यं प्रशस्तं दधि सर्वदैव॥

अर्थः—गाय का दही अरुचि, पीनस, कास, (खांसी) मूत्रकच्छ्र, शीतज्वर, विषमज्वर, दुर्नामरोग (बवासीर) और संग्रहणी रोग में हितकारी है।

गोदही के भेद—

आदौ मन्दं ततः स्वादु स्वाद्वम्लं च ततः परम्।
अम्लं चतुर्थमत्यम्लं पंचमं दधि पंचधा॥

अर्थात् दही मन्द, स्वादु, स्वाद्वम्ल, अम्ल, अत्यमल के भेद से पाँच प्रकार का होता है।

मन्दादि दधि के लक्षण और गुण—

मन्द मन्दं दुग्धवदव्यक्तरसं किंचिद्घनं भवेत्।
मन्दं स्यात्सृष्टविण्मूत्रं दोषत्रय विदाहकृत्॥

अर्थ—जो दही दूध के समान, अव्यक्त रसवाला (जिसमें मधुर अम्लादि के स्वाद का ज्ञान न हो) और जो कुछ गाढा हो उसे मंद कहते हैं। मन्द दही मल मूत्र को करने वाला तथा त्रिदोष और दाह को उत्पन्न करने वाला है।

स्वादु—यत् सम्यग्घनतां यातं व्यक्तस्वादुरसं भवेत्।
अव्यक्ताम्लरसं तत्तु स्वादु विज्ञैरुदाहृतम्॥
स्वादु स्यादत्यभिष्यंदि वृष्यं मेदः कफावहम्।
वातघ्नं मधुरं पाके रक्त पित्त प्रसादनम्॥

जो दही अच्छी प्रकार गाढ़ी हो और जिसमें स्वादुरस प्रतीत हो तथा अम्लरस प्रकट न हो उसको

विद्वान् स्वादु कहते हैं। स्वादु, दही अत्यन्त अभिष्यंदि, वीर्यवर्द्धक मेद तथा कफवर्धक वातनाशक, पाक में मधुर और रक्त पित्त को कुपित करता है।

स्वाद्वम्ल—स्वाद्वम्लं सान्द्रमधुरं कषायानुरसं भवेत्।
स्वाद्वम्लस्य गुणाज्ञेयाः सामान्यदधिवज्जनैः ॥

जो दही अम्ल व मधुर रसयुक्त गाढा कुछ कषैले रस से युक्त होता है उसे स्वाद्वम्ल कहते हैं। इसके गुण सामान्यदधि के समान अर्थात् मधुर, खट्टा, रुचिप्रद, पवित्र, अग्निदीपक, हृदय को प्रिय, पुष्टिकारक और वात नाशक हैं।

अम्ल—यत्तिरोहितमाधुर्यं व्यक्ताम्लत्वं तदम्लकम्।
अम्लं तु दीपनं पित्तरक्तश्लेष्म विवर्द्धनम् ॥

अर्थात् जो दही मधुर न हो किन्तु खट्टा हो उसे अम्ल के नाम से कहते हैं। यह अग्निदीपक पित्तरक्त और कफवर्द्धक होता है।

अत्यम्ल—तदत्यम्लं दंतरोमहर्षदण्ठादिदाहकृत्।
अत्यम्लं दीपनं रक्तवातपित्त करं परम् ॥

अर्थ—जो दही अत्यन्त खट्टा हो जिसके भक्षण से दांत हर्षित तथा रोमांच हो जाय और कण्ठादि में दाह हो उसे अत्यम्ल कहते हैं। यह अग्नि प्रदीपक, रक्तविकार वात और पित्त को अत्यन्त उत्पन्न करता है। सदा मधुर दधि का ही सेवन करना चाहिये क्योंकि मधुर दही रोगनाशक और खट्टा दही रोगकारक है। गो दही के ऊपर जो चिकना भाग और घन पदार्थ होता है वह सर कहाता है। यह मधुर गुरू वीर्यवर्द्धक वातनाशक तथा खट्टा होता है और वस्तिरोग के लिये शान्तिप्रद तथा पित्त कफवर्द्धक है। दही के पानी को मस्तु कहते हैं यह ग्लानिनाशक बलप्रद हलका नाड़ियों की शुद्धि करने वाला आनन्दप्रद कफतृषा तथा वात नाशक और मल के संचय को तोड़ने वाला है।

गोदही में कुछ प्रसिद्ध योग—

१—हल्दी का चूर्ण १ तोला, ८ तोले गोदधि में मिला कर कुछ दिन के सेवन करने से पाण्डु कामलादि रोग समूल नष्ट हो जाते हैं।

२—गोदही के मथित अर्थात् मट्ठे (जिसमें जल न डाला गया हो) के साथ गंगाधर चूर्ण प्रयोग करने से भयंकरातिसार दस्त भी तुरन्त रुक जाते हैं।

३—पाड व आम के वृक्ष का मृदु (कोमल) वल्कल (छाल) ६ माशा लेकर उसे पीसकर गोदही में पीने से सब प्रकार के अतिसार दस्त बन्द हो जाते हैं।

४—अजमोदामोचरस धायःपुष्प और सोंठ इन चारों को समान भाग लेकर अत्यन्त बारीक पीसकर १ माशे से ३ माशे तक गोदधि के तक्र के साथ दिन में दो तीन बार लेने से सब प्रकार के अतिसार (दस्त) नष्ट हो जाते हैं।

५—आयुर्वेद के प्रसिद्ध योग लाई चूर्ण को गोतक्र के साथ दिन में दो तीन बार लेने से रक्तातिसार दूर होता है।

६—यदि कोई भूल से जमाल गोटा खा जाये तो गोदही के तक्र में मिस्री और धनिये का चूर्ण मिलाकर बार-बार पिलाने से जैपाल के कारण लगे हुए भयंकर वमन और दस्त बन्द हो जाते हैं।

७—दही में देशी शक्कर मिलाकर सायंकाल खाने से प्रतिश्याय (जुकाम व नजला) तुरन्त समूल नष्ट हो जाता है।

८—दही से सिर धोने से मस्तिष्क को ठंडक पहुंचती है। बालों की जड़ें मजबूत हो जाती हैं। बाल चिरकाल तक काले रहते हैं।

* * *

गो-घृत चिकित्सा

(ले०—ब्र० यज्ञदेव भाष्याचार्य सिद्धान्तवाचस्पति गुरुकुल झज्जर रोहतक)

महर्षि धन्वन्तरि जी महाराज घृत के निम्नलिखित नाम लिखते हैं—

घृतमाज्यं हविः सर्पिः पवित्रं नवनीतजम् ।
अमृतं चाभिघारश्च जीवनीयं प्रकीर्तितम् ॥१४४॥

धन्वन्तरीय निघन्टौ, षष्ठो वर्गः

अर्थात्--घृत, आज्य, हवि, सर्पि, पवित्र, नवनीतज, अमृत, अभिघार और जीवनीय यह नौ नाम घृत के कहे हैं ।

इससे भिन्न राजनिघण्टु में यह नाम तथा होम्य, आयु, तैजस् यह तीन नाम और अधिक मिलते हैं ।

शालिग्राम निघण्टु में भी इन से भिन्न पुरोडाश, नवनीतक, वह्निभोग्य, आज, तोयद, पीथ, भोजनार्ह जीवन यह आठ नाम और मिलते हैं ।

इस प्रकार घृत के गुण भेद से २० नाम कहे हैं । यह जठराग्नि तथा भौतिकाग्नि को दीप्त करता है, शरीर को भी खाने से कान्तिमय बनाता है, इसलिए इसका नाम घृत है । इसके सेवन से मनुष्य कान्तिमान् तथा हृष्ट-पुष्ट होता है, इसलिये इसे आज्य कहते हैं । इससे हवन किया जाता है इसलिये इसकी होम तथा हवि नाम हैं । यह द्रव पदार्थ होने के कारण सर्पि कहाता है । यह शुद्ध पवित्र है तथा मन, बुद्धि को पवित्र करता है, अतः इसे पवित्र कहा है । यह नवनीत अर्थात् मक्खन से बनाया जाता है अतः इसे नवनीतज तथा नवनीतक कहते हैं । यह अमृत के समान गुणकारी होने से अमृत कहाता है । यह यज्ञ में डाला जाता है, आहुतियाँ दी जाती हैं अतः इसे अभिघार कहा है । यह जीवन अर्थात् आयु व शरीर को बढ़ाता है और कहा भी है कि "आयुर्वै घृतम्" आयु के बढ़ाने वाला है । वेद में भी आया है "घृतेन त्वं तन्वं वर्धस्व" यजु १२-४४ अर्थात् तुम संस्कृत घृत से शरीर को बढ़ाओ इसलिये घृत को जीवनीय तथा आयु कहते हैं । यह तेजोमय है और सेवन किया हुआ मनुष्यों को तेजस्वी बनाता है, इसलिये इसे तैजस् कहते हैं । यह यज्ञीय द्रव्य होने से पुरोडाश कहाता है । यज्ञ के लिये घृत आवश्यक है । इसे अग्नि का भोग्य होने से ही वह्निभोग्य कहते हैं । यह सब नाम घृत के गुण भेद से हैं । वास्तव में घृत यथानाम तथा गुणकारी सिद्ध हुवा है, हमने इसका अनेक रोगियों पर अनुभव किया है ।

महर्षि धन्वन्तरि जी महाराज ने गोघृत के गुण इस प्रकार लिखे हैं—

शस्तं धीस्मृतिमेधाग्निबलायुः शुक्रचक्षुषाम् ।
बालवृद्धप्रजाकान्तिसौकुमार्यस्थिरार्थिनाम् ॥१४५॥
क्षतक्षीणपरीसर्पशस्त्राग्निग्लपितात्मनाम् ।
विपाके मधुरं शीतं वातपित्तविषापहम् ।
चक्षुष्यं बल्यमग्रयं च गव्यं सर्पिर्गुणोत्तरम् ॥१४६॥

धन्वन्तरीय निघण्टौ षष्ठो वर्गः

अर्थात्—गाय का घी बुद्धि, स्मरणशक्ति, मेधा (धारणावती बुद्धि) अग्नि (जाठराग्नि) बल, आयु, वीर्य, नेत्र ज्योति, बालक-बूढ़े, प्रजा, (सन्तान) कान्ति, (तेज) तथा सौकुमार्य (युवावस्था) की स्थिरता के लिये हितकारी व लाभदायक है । गाय का घी पाक में मधुर और शीतल है । वातरोगों, पित्तरोगों तथा सब प्रकार के विषों (जहरों) को नष्ट करने वाला है । क्षतक्षीण, (निर्बल) परीसर्प रोग तथा शस्त्र और अग्नि से पीड़ितों के लिये लाभदायक है । चक्षु के लिये हितकारी अर्थात् नेत्र ज्योति

वर्धक है। अत्यन्त, बलवर्धक और सबसे अधिक गुण वाला है।

सुश्रुत शास्त्र में भी गोघृत के गुण इसी प्रकार लिखे हैं। श्री नरहरि जी राजनिघण्टु में इससे भिन्न निम्नलिखित गुण गोघृत के लिखते हैं।

अर्थात् गाय का घी, वातश्लेष्महारक, श्रमनिवारक, हृदय को हितकारी, व शरीर को स्थिरता देने वाला है। और यह भी लिखते हैं कि—

गव्यं हव्यतमं घृतं बहु गुणं भोग्यं भवेद्भाग्यतः ॥२०४
राजनिघण्टौ पंचदशो वर्गः

गौ का घी हव्यतम अर्थात् हवन करने के लिये सर्व श्रेष्ठ और बहु गुण युक्त है, यह बड़े सौभाग्यशाली मनुष्यों को ही खाने को मिलता है। यथार्थ में गोपालक ही शुद्ध गोघृत का सेवन कर सकते हैं। शालिग्राम निघण्टु में गाय के घृत के गुण यों लिखे हैं।

गाय का घी अमृत के समान गुणकारी और रसायन है तथा सब घृतों में उत्तम है। यही प्रशंसनीय है। भाव प्रकाश निघण्टु में भी गोघृत को इससे भिन्न, कुरूपतापाय, तथा राक्षस नासक, मंगलरूप रसायन, सुन्दर सम्पूर्ण घृतों में उत्तम बताया है।

चरक शास्त्र में भी सूत्रस्थान अध्याय २७ में गोघृत को विषनाशकादि बताया है। तथा विधिपूर्वक सेवन किया जावे तो शोष और ज्वर को भी दूर करता है तथा भिन्न २ विधानों द्वारा सहस्रों प्रकार की शक्ति रखने वाला तथा सहस्रों कर्म करने वाला बताया है।

सचमुच गोघृत का यदि विधि-पूर्वक सेवन किया जावे तो अनेक प्रकार के भयङ्कर रोगों का नाश करने के लिये अमृत के समान काम करता है। आयुर्वेद के सहस्रों प्रसिद्ध योग हैं जिनके अन्दर गन्धक का प्रयोग किया जाता है। किन्तु यदि अशुद्ध गन्धक का प्रयोग कोई रोगी किसी मूर्ख वैद्य की भूल से कर ले तो अनेक प्रकार के कोढ़ जैसे भयङ्कर रोगों में फँस जाता है। निघण्टु में लिखा भी है—

अशोधितो गन्धक एष कुष्ठं,
करोति तापं विषमं शरीरे।
सौख्यं च रूपं च बलं तथौजः,
शुक्रं विहन्त्येव करोति चास्रम् ॥
भावप्रकाश धातुवर्ग १०६२ श्लोक

भावार्थ—अशुद्ध गन्धक कोढ, विषम ज्वर, सूजन तथा रक्त विकार उत्पन्न करता है। रूप, बल, ओज, तथा वीर्य का नाश करता है। और जब इस अशुद्ध गन्धक को गोघृत में सात वार पिघलाकर गोदुग्ध में सात वार डाला जाता है तब यह शुद्ध होकर कोढ़ आदि भयङ्कर रोगों का नाश करने में अमृत के समान काम करता है।

शुद्ध गन्धक के गुण निघण्टु में इस प्रकार लिखे हैं—

गन्धक ... कण्डु विसर्प जन्तुजित्।
हन्ति कुष्ठं क्षयप्लीहाकफवातान् रसायनः ॥
(१०८ धातु वर्ग)

अर्थात्—गन्धक खुजली, विसर्प, कृमि, कोढ़, क्षय, प्लीहा, कफ, तथा वात को नष्ट करता है, तथा रसायन है।

यह गुण गोघृत की कृपा से ही इसमें आते हैं। यही नहीं जब शुद्ध गन्धक शुद्ध पारे के साथ बारीक पीसी जाकर कजली का रूप धारण करती है तब तो आयुर्वेद के सभी रसों का यह प्राण बन जाती है। इसी शुद्ध गन्धक की कृपा से आयुर्वेद के सभी प्रसिद्ध रस जादू के समान प्रभावकारी तथा ऐलापैथी आदि सभी पैथियों व चिकित्सा पद्धतियों के प्रेमियों के मिथ्याभिमान को दूर भगाने वाले हैं। पारे गन्धक की शुद्ध कजली जिस योग में डालते हैं वह औषधी दस गुणी प्रभावशाली हो जाती है। और वह औषध जितनी पुरानी होती जाती है उतनी ही अधिक गुणकारी हो जाती है। इन्हीं रसों की कृपा से वैद्य लोग जिन रोगों को ऐलापैथी वा डाक्टर लोग असाध्य कहकर छोड़ देते हैं उनकी खम्भ ठोककर चिकित्सा करते हैं। यथार्थ में यह सब कृपा गौ माता के अमृत रूपी घृत की ही है।

आयुर्वेद शास्त्र में सैकड़ों प्रकार के घृत गौ माता के शुद्ध गोघृत से तैयार किये जाते हैं। जो भयङ्कर रोगों को दूर करने में रामबाण का काम करते हैं। कुछ प्रसिद्ध घृतों के विषय में संक्षेप से लिखता हूँ।

१—त्रिफलादि घृत—इस घृत में त्रिफला, बांसे का रस, बकरी का दूध, तथा गोघृतादि बहुतसी औषधियां डाली जाती हैं। जिनमें गोघृत की ही मुख्यता है।

आयुर्वेद शास्त्रों में ये सब योग स्पष्ट लिखे हैं। यह घृत आँखों के लिये अत्युत्तम है। इसकी जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है। ऋषियों की अपार कृपा है। सेवन कर लाभ उठाओ और उनके गुण गाओ। आँखों के समस्त रोगों के लिये रामबाण है। इसके सेवन से नेत्रों का कोई रोग नहीं रहता। इससे रतोंधी, आँखों को खुजली, पानी आना, धुंध, जाला, इत्यादि सब दूर होते हैं। आँखें निर्मल होकर चमकने लगती हैं। सौ वर्ष तक नेत्रज्योति नवयुवकों के समान बनी रहती है। मोतियाबिन्द में भी लाभदायक है। आँखों के छोटे बड़े सब रोगों में हितकारी है। इसकी सुगम तथा स्पष्ट निर्माण विधि आचार्य भगवानदेव जी कृत 'नेत्र रक्षा' पुस्तक में अंकित है।

२—ब्राह्मी घृत – इसमें ब्राह्मी का रस, गोघृत, कुठ, निशोथ, हल्दी, आंवला आदि अनेक औषधियाँ डाली जाती हैं, जिनमें गोघृत ही प्रधान है। इस घृत को खाण्ड वा दूध में मिलाकर खाया जावे तो इससे आवाज बहुत साफ हो जाती है, स्मरण शक्ति तीव्र हो जाती है। स्वरभंग, मृगी, अपस्मार (पागलपन) तथा हिस्टीरिया आदि रोगों में प्रयुक्त होता है। दिमाग की निर्बलता को दूर करता है। मेधा बुद्धि वर्धक है, कुष्ठ, बवासीर, प्रमेह, में लाभ करता है। दिमागी काम करने वालों के लिये अत्युत्तम औषध है।

३—महाबांसादि घृत—रक्तपित्त, खांसी, स्वरभेद, हलीमक गुल्म रोगों में उत्तम है। रक्तपित्त (शरीर के किसी भी अंग से खून निकलना) रोग के लिये तो यह एकमात्र अचूक औषध है। हमने इसको कई रोगियों पर अनुभव किया है। हमारे एक ब्रह्मचारी को नकसीर में किसी भी प्रकार की औषधि से लाभ नहीं हुआ। उसके लिये भी इस घृत ने अमृत का काम किया। अब उसकी नकसीर बन्द है।

४—अमृत घृत—इसमें गाय का घी तथा मूत्र, बकरी का मूत्र, शिरस की छाल इत्यादि अनेक औषधियां पड़ती हैं। जिनमें गोघृत ही मुख्य कारण है। यह घृत सब प्रकार के विष स्थावर (संखियादि), जंगम (सर्प–विच्छूविषादि) को दूर करता है। अपस्मार, उन्माद, क्षय, भूतग्रह, उदर विकार, पाण्डु, कृमि, प्रमेह, प्लीहा, कामला, हनुस्तम्भ, आदि रोगों में भी विशेष लाभकारी है। विष नाश करने में तो अमृत का काम करता है। चरकसंहिता के अध्याय २३ श्लोक २४७ में कहा है—

हन्यात्संजीवयेच्चापि विषोद्बन्धधृतान्नरान् ।
नाम्नेदममृतं सर्वविषाणां स्याद् घृतोत्तमम् ॥

अर्थात्—विष तथा गले में रस्सी आदि के बांधने से मृतसदृश पुरुषों को पुनः जीवन प्रदान करता है; इसी लिये इसका नाम अमृत घृत है। यह सब विष-नाशक घृतों में श्रेष्ठ है। और यदि केवल गोघृत का ही सेवन विषों में किया जावे तो केवल गोघृत भी सब प्रकार के विषों में पर्याप्त लाभ करता है। हरी चोलाई की जड़ १ तोला, जल के साथ पीसकर इसमें गोघृत मिलाकर पिलाने से भयंकर उष्ण (पित्त) प्रकृति का विष दूर हो जाता है।

५—फलघृत–इसमें गोघृत और अष्टवर्ग, लक्ष्मणादि अनेकों औषधियां पड़ती हैं। जिसमें गोघृत ही मुख्य है। यह स्त्रियों के गर्भाशय के सभी रोगों को दूर करता है। जिन स्त्रियों को गर्भ नहीं ठहरता, या ठहर कर गिर जाता है या सन्तान निर्बल होती है उनके लिये अत्युत्तम है, स्त्रियों के शरीर या कमर दर्द के लिये बहुत उत्तम है। स्त्रियों के आर्तव दोष तथा पुरुषों के वीर्य दोष दूर होते हैं। जिनके बच्चे मर जाते हैं उन गृहस्थों को इसका सेवन करना चाहिए। जिनके कन्यायें ही होती हैं उनके इसके सेवन से पुत्र उत्पन्न होता है। इसका अनुभव प्रायः सभी वैद्य लोग जानते हैं। सन्तान रूपी फल प्रदान करने में समर्थ है अतः इसका फलघृत नाम प्रसिद्ध है। प्रत्यक्ष में प्रमाण क्या? इसका सेवन करने वाले इसका फल प्राप्त करते हैं।

६—बृहत्पंचगव्य घृत—अपस्मार अर्थात् मृगी जिसकी चिकित्सा डाक्टरों के पास कुछ भी नहीं है। इसको समूल नष्ट करने के लिये आयुर्वेद का प्रसिद्ध बृह-

स्पंचगव्य घृत जादू के समान प्रभाव रखता है। सब प्रकार की अपस्मार (मृगी) इससे निश्चय से दूर होती है। इस घृत में गाय के गोबर का रस, गाय का दूध, गाय की दही तथा गाय का पुराना घी, और गाय का मूत्र, तथा दशमूलादि औषधियां पड़ती हैं। इसके अतिरिक्त मूर्छा, अपतन्त्रक, उन्माद चौथैया ज्वर आदि रोग भी नष्ट होते हैं।

७—सुकुमार कुमारक घृत—पेशाब का कष्ट से आना, कब्ज, कमर दर्द, योनिशूल आदि के लिये उत्तम है।

८—वृहत्शतावरी घृत—(रक्तपित्त) शरीर के किसी अंग से खून निकलना, सिर या किसी अंग में जलन होना, मूत्र का लगकर आना, और धातुवों की क्षीणता आदि रोगों के लिये बहुत लाभदायक है। हृदय रोग को नष्ट कर पुरुषत्व को बढ़ाता है।

९—वृहत् अश्वगन्धा घृत—दुर्बलता, मृगी, मूर्छा, आदि रोगों में अत्यन्त उपयोगी है। धातु विकार आदि को नष्ट करके शरीर को बलवान् बनाता है।

१०-पंचतिक्त घृत—फोड़े, फुन्सी, कुष्ठ, दुष्टव्रण, नासूर, बवासीर, भगन्दर, पाँचों प्रकार की खांसी, हृद्रोग वात, पित्त और कफ के सम्पूर्ण रोग दूर करता है।

११-अर्जुन घृत—इसका सेवन करने वाला, हृदय की गति रुक जाने (हार्टफेल) से नहीं मरता। यह हृदय को शक्तिशाली बनाता है।

१२—अशोक घृत—स्त्रियों के सभी रोग इससे अच्छे होते हैं। रजोदोष और प्रदर रोग की अत्युत्तम औषध है।

१३—कामदेव घृत—इसके सेवन से धातु पुष्ट होती है। बल-वीर्य की वृद्धि होकर नपुंसकता दूर होती है।

१४ - काशीसादि घृत—इसकी मालिस से कोढ़, दाद, खुजली, वातरक्त के फोड़े, उपदंश, दुष्ट घाव, नासूर, भगन्दर और मकड़ी के घाव का जहर दूर होता है।

१५—महाचैतस घृत—यह घृत उन्माद (पागलपन), अपस्मार (मृगी), मूर्छा आदि रोगों में उत्तम है। इससे भिन्न अन्य भी सैंकड़ों घृत गाय के घी से बनते हैं। जिनमें से कुछ को संक्षेप से रोग सहित लिखता हूँ।

१६—मंजिष्ठाद्य घृत—हिचकी, श्वास, मन्दाग्नि, संग्रहणी कुष्ठ के लिये।

१७—कटुक घृत—जीर्ण ज्वर, यकृत्, प्लीहा, उदरशूलादि के लिये।

१८—अग्नि घृत—मन्दाग्नि, अर्श, प्लीहा, उदरविकारादि के लिये।

१९—चांगेरी घृत—मूत्रविकार, ज्वर, कास, श्वासादि के लिये।

२०—दाधिक घृत—गुल्म, पेट का दर्द, अपचन आदि के लिये।

२१—वासाद्य घृत—कास, श्वास, प्रतिश्याय, विषविकार, क्षय ज्वरादि के लिये।

२२—दशांग घृत—वायु गोला, तापतिल्ली, जिगर की खराबी, कृमिरोगादि के लिये।

२३—लशुनादि घृत-गुल्म, वादी, बवासीर, उदर रोग, प्लीहा, योनिरोगादि के लिये।

२४—नाराच घृत—वायुगोला, उदावर्त, प्लीहा, बवासीरादि के लिये।

२५—नीलनी घृत—कुष्ठ, गुल्मरोग, पेट के रोग, शौचादि के लिये।

२६—विश्वादि घृत—वायगोला, उदावर्त, पाण्डुरोगादि के लिये।

२७—षट्पल घृत—कफ, गुल्म, संग्रहणी, मन्दाग्नि आदि के लिये।

२८—महाषट्पल घृत—पाण्डु, क्षयरोग, पीनस, वातरोगादि के लिये।

२९—नील घृत—पामा, (खुजली) सफेद कोढ़ आदि के लिये।

३०—महानील घृत—कुष्ठ, भगन्दर, अर्श, कृमि, चर्मरोगादि के लिये।

३१—बिल्वक घृत—पुराना बुखार, पेट के कीड़े, कुष्ठ, सूजन, पाण्डुरोग आदि के लिये उत्तम है।

३२—चव्याद्य घृत—प्रवाहिका, मूत्रकृच्छ्र, गुदा और पेढ़ू के दर्द के लिये।

३३—धान्वन्तर घृत—प्रमेह, कुष्ठ, गुल्म, वातरक्त, प्लीहा, उदरविकार, बवासीरादि रोगों के लिये।

३४—कुमार कल्याण घृत—बालकों के दांत निकलते समय आदि के सभी रोग दूर करके बलिष्ठ बनाने के लिये बहुत उपयोगी है ।

३५—बीजपूरकाद्य घृत—उदर, हृदय, पसलीदर्द, हिचकी श्वास, भगन्दर, प्रमेहादि के लिये ।

३६—महागोर्याद्य घृत—सब प्रकार के घाव, सिर के घाव नासूरादि के लिये ।

३७—दूर्वाद्य घृत—रक्तपित्त आदि रोगों के लिये उत्तम है ।

३८—द्राक्षाद्य घृत—कामला, पाण्डु, अर्श, ज्वर, खांसी आदि के लिये ।

३९—शंखपुष्पाद्य घृत—बुद्धि, मेधा, तथा आयु बढ़ाने के लिये ।

४०—सारस्वत घृत—विद्यार्थियों; दिमागी काम करने वालों के लिये ।

४१—श्वदंष्ट्राद्य घृत—हृदयशूल, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेहादि के लिये ।

४२—महावज्रक घृत—विसर्प, ज्वर, कामला, शरीर पीड़ा आदि के लिये ।

४३—रोहितक घृत—प्लीहा, प्लीहाशूल, हृदयशूलादि के लिये ।

४४—विल्वाद्य घृत—आमातिसार, प्लीहा, वायुविकारादि के लिये ।

४५—द्विपंचमूलाद्य घृत—सम्पूर्ण उदर रोगों के लिये ।

४६—ब्राह्म घृत—प्लीहा, उदररोग, पेट के दर्द, यकृतादि के लिये ।

४७—कण्टकारी घृत—श्वास, कास, स्वरभेद के लिये ।

४८—व्युषणाद्य घृत—खांसी, ज्वर, गुल्म, अरुचि आदि के लिये ।

४९—पटोलादि घृत—मुख, नासिका, नेत्र, दन्तरोगादि के लिये ।

५०—विन्दु घृत—सम्पूर्ण उदर विकार, शूल, अफरा आदि के लिये ।

५१—दाड़िमादि घृत—हृदयरोग, पाण्डु, गुल्म, अर्श, प्लीहादि के लिये ।

५२—चित्रकादि घृत—गुल्म, प्लीहा, पेट फूलना, अरुचि ज्वरादि के लिये ।

५३—शीत कल्याणक घृत—प्रदर, हलीमक, मद, भ्रमादि के लिये ।

५४—नारसिंह घृत—बल वीर्य वृद्धि के लिये परम रसायन है ।

५५—अग्नि घृत—संग्रहणी, गुल्म, प्लीहा, मन्दाग्नि आदि के लिये ।

५६—भल्लातकादि घृत—सम्पूर्ण कफविकार, प्लीहा, उदरविकार खुजली आदि के लिये उत्तम है ।

५७—पिप्पल्यादि घृत—जीर्णज्वर, शिरःशूल, गुल्म, उदररोग क्षयादि के लिये उपयोगी है ।

५८—जीवन्त्यादि घृत—तिमिररोग, रतौन्धी, नेत्ररोगों के लिये ।

५९—पंचगव्य घृत—अपस्मार, मूर्छा, अपतन्त्रक, उन्माद, चौथिया ज्वरादि के लिये ।

६०—दशमूलादि घृत—खांसी, श्वास, वायु-कफ विकार, प्रसूतिविकार आदि के लिये ।

६१—कल्याण घृत—उन्माद, अपस्मार, ज्वर, कास, शोथक्षय आदि के लिये उत्तम है ।

६२—महाकल्याणक घृत—वृष्य है । रसायन है तथा वाजीकरण के लिये उत्तम है ।

६३—सप्ताङ्ग घृत—बुद्धि और आयु बढ़ाने तथा वायु कफ रोग नाश के लिये ।

६४—अष्टाङ्ग घृत—उन्माद ,मृगी, हिस्टीरिया, आदि रोगों के लिये ।

६५—महा पैशाचिक घृत—चोथैय्या ज्वर, पागलपन, अपस्मार आदि के लिये ।

वृहत्कण्टकारी घृत—पांचों प्रकार की खांसी, हिचकी, श्वास कफरोगादि के लिये उत्तम है ।

६७—जात्यादि घृत—फोड़ा, फुन्सी सब प्रकार के घावों के लिये ।

६८—कसेरुक घृत—रक्तपित्त, ज्वर, विसर्प, वायु आदि रोगों के लिये ।

६९—वृहत्पंचमूलादि घृत—योनिरोग, गुल्म, पेट के रोगों के लिये ।

७०—हिंग्वादि घृत—पेट का दर्द, पेट फूलना, वातगुल्मादि के लिये ।

७१—शुकनासादि घृत—अपतन्त्रक, हिस्टीरिया, मृगी आदि के लिये ।

७२—अवाक्पुष्प्यादि घृत—खूनी, वादी बवासीर, अतिसार, मूत्रावरोध आदि के लिये उत्तम है ।

७३—समदुग्धक घृत—बल, वीर्य, ओज, आयु, संभोग-शक्ति बढ़ाने के लिये उत्तम है ।

७४—गोर्याद्य घृत--सब प्रकार के घाव नासूर आदि के लिये उत्तम है ।

७५—शुंठी घृत--वातसंग्रहणी के लिये उत्तम है ।

७६—शृंगादि घृत--रक्तपित्त (शरीर से खून निकलना) रोग के लिये बहुत उपयोगी है ।

ये अति संक्षेप से प्रसिद्ध-प्रसिद्ध घृत दिये हैं । इनसे भिन्न अन्य भी बहुत से आयुर्वेद के घृत इसी प्रकार गोघृत से बनते हैं, जो विस्तारभय नहीं से लिखे ।

पुराने गोघृत के गुण

गाय के पुराने घृत में भी मृगी आदि रोगों को दूर करने के गुण विद्यमान हैं । निघण्टु में महर्षि धन्वन्तरि जी ने पुराने घृत के गुण इस प्रकार लिखे--

सर्पिः पुराणं तिमिरं श्वासपीनसकासनुत् ।
मूर्छाकुष्ठविपोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥ १५६ ॥
योनिकर्णाक्षिशिरसां शूलघ्नं शोथजित्परम् ।
हन्ति दोपत्रयं भेदि व्रणशोधनरोपणम् ॥१५७॥

धन्वन्तरीय निघण्टौ सुवर्णादि पष्ठो वर्ग:

अर्थात्—पुराना गोघृत, तिमिररोग (नेत्ररोग), प्रतिश्याय (जुकाम) श्वास, खांसी, मूर्छा, कुष्ठ सब प्रकार के विष, उन्माद, ग्रह की पीड़ा तथा मृगीरोग का नाशक है । गर्भाशय सम्बन्धी रोग, कर्ण सम्बन्धी रोग पीड़ादि तथा नेत्र सिर सम्बन्धी पीड़ादि रोगों को दूर करता है । अर्थात्—सूंघने तथा सिर की मालिस से सिर की पीड़ा दूर होती है, सब प्रकार के शोथ को दूर करने में परम हितकारी है । त्रिदोष नाशक है । विरेचक (दस्तावर) है । व्रण अर्थात् सब प्रकार के फोड़ों को शुद्ध करके भरता है ।

राज निघण्टु में पुराने गोघृत के अन्य भी गुण पाये जाते हैं—

आयुर्वृद्धिं वपुषि दृढतां
सौकुमार्यं च कान्तिं बुद्धिं धत्ते ।
स्मृतिबलकरं शीतविध्वंसनञ्च ॥२१५॥

राजनिघण्टु

पुराना गोघृत आयु बढ़ाता है, शरीर को दृढ़ करता है । सुकुमारता, कान्ति, बुद्धि, स्मृति और बल बढ़ानेवाला है । शीत के रोगों को नष्ट करता है । इस पुराने घृत को हमने कई रोगों पर अनुभव किया, वास्तव में अतीव गुणकारी है ।

पुराने गोघृत के लक्षण

वर्षादूर्ध्वं भवेदाज्यं पुराणं तत्त्रिदोपनुत् ॥१६॥

भावप्रकशे घृतवर्गः

अर्थात् एक वर्ष का रखा हुवा घृत पुराना कहाता है और वह त्रिदोषनाशक है ।

यथा यथाखिलं सर्पिः पुराणमधिकं भवेत् ।
तथा तथा गुणैः सर्वैरधिकं तदुदाहृतम् ॥१७॥

भावप्रकाशे घृतवर्गः

अर्थात्—घृत जितने-जितने अधिक पुराने होते जाते हैं उतने ही उनके गुण अधिक बढ़ते जाते हैं ।

धन्वन्तरि जी महाराज पुराने घृत का लक्षण इस प्रकार लिखते हैं--

उग्रगन्धि पुराणं स्याद्दशवर्षोत्थतं ।
लाक्षानिभं रसे शीतं तद्धत्सर्वग्रहापहम् ॥१५८॥

धन्वन्तरीय निघण्टौ सुवर्णादि षष्ठोवर्गः

अर्थात्—दश वर्ष का रखा हुवा, उग्रगन्ध वाला, तथा लाख के समान लाल रंग वाला जो घृत है वह पुराना घृत कहाता है, और वह सर्वरोगों में लाभदायक है ।

महाघृत के लक्षण तथा गुण

महर्षि धन्वन्तरि जी ने महाघृत के लक्षण इस प्रकार लिखे हैं—

एकादशशतं वत्सरानुषितं घृतम् ।
रक्षोघ्नं कुम्भसर्पिः स्यात्परतस्तु महाघृतम् ॥१५६॥

धन्वन्तरीय निघण्टौ पष्ठोवर्गः

अर्थात्—ग्यारह सौ वर्ष के रखे हुए पुराने घृत को कौम्भघृत कहते हैं । इससे अधिक वर्ष के रखे हुए घृत

को महाघृत कहते हैं। ऐसे पुराने घृत राक्षस रोगों को अर्थात् कीटाणु से लगने वाले प्लेगादि रोगों का समूल नाश करते हैं। प्लेगादि महामारी जब कभी फैलती है तो भी सामान्यतया गोघृत सेवन करने वाला भी मनुष्य इससे सुरक्षित रहता है। ऐसा देखा गया है।

निघण्टु में महाघृत के गुण इस प्रकार हैं—

पेयं महाघृतं भूतैः कफघ्नं पवनाधिकैः।
बल्यं पवित्रं मेध्यं च विशेषात्तिमिरापहम् ॥
सर्वभूतहरं चैव घृतमेतत्प्रशस्यते।

धन्वन्तरीय० षष्ठोवर्गः

जो पित्त प्रकृति के मनुष्य हैं, जिनको वायु के रोग अधिक होते हैं ऐसे प्राणियों वा मनुष्यों को महाघृत का सेवन करना चाहिए। यह कफनाशक है। बलदायक है, पवित्र है, मन बुद्धि को पवित्र करता है। मेधाजनक है, विशेतया तिमिररोग (वातादि से उत्पन्न हुए नेत्र विकार) को नष्ट करता है।

परन्तु भोजन में सामान्यतया इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। भोजन में तो ताजा घृत ही सेवन करना चाहिये, उसी का शास्त्रों में विधान है।

निघण्टु में आता है—

योजयेन्नवमेवाज्यं भोजने तर्पणे श्रमे।
वलक्षये पाण्डुरोगे कामलानेत्ररोगयोः॥

भावप्रकाशे घृतवर्गः

अर्थात्—नवीन घृत, भोजन, दर्पण, परिश्रम, बलक्षय, पाण्डुरोग, कामला तथा नेत्ररोग इन सबमें प्रयोग करना चाहिये। पुराना तथा महाघृत विशेष रोगों में ही सेवन करें।

गोनवनीत (मक्खन) के गुण

महर्षि धन्वन्तरि जी महाराज मक्खन के गुण इस प्रकार लिखते हैं—

नवनीतं नवं हृद्यं ग्राहिरोचनदीपनम्।
क्षयारुच्यर्दितप्लीहग्रहण्यर्शोविकारनुत् ॥ २३० ॥
चक्षुष्यं शिशिरं स्निग्धं वृष्यं जीवनबृंहणम्।
क्षीरोद्भवं हिमं ग्राहि रक्तपित्ताक्षिरोगनुत् ॥ २३१ ॥
स्मृतिक्षुधाग्निशुक्रोजःकफमेदोविवर्धनम् ।
वातपित्तविषोन्मादशोथलक्ष्मीज्वरापहम् ॥ २३२ ॥
सर्वस्नेहोत्तमं शीतं मधुरं रसपाकयोः ॥ २३३ ॥

धन्वन्तरीय निघण्टौ षष्ठोवर्गः

नया नवनीत (मक्खन) हृदय के लिये हितकर है, संग्राही है, रोचक अर्थात् रुचिकारक है, जाठराग्नि को तेज करता है। क्षय (तपेदिक) अरुचि, अर्दित (लकवा) प्लीहा (तिल्ली) संग्रहणी, अर्श (बवासीर) आदि विकारों को नष्ट करता है। नेत्र के लिये हितकारी है। शीतल और स्निग्ध है, बलदायक है। जीवन अर्थात् आयु बढ़ाने वाला है। दूध से उत्पन्न हुआ यह नवनीत शीतलग्राही है। रक्तपित्त तथा चक्षुरोगों को नष्ट करने वाला है। स्मरण शक्ति, क्षुधा, जाठराग्नि, शुक्र, ओज (कान्ति) कफरोग और मेद को बढ़ाने वाला है। वातपित्त के रोगों तथा सब प्रकार के विषयों को दूर करता है। उन्माद, शोथ और ज्वर को दूर करके कान्ति बढ़ाता है। सब घृतों में उत्तम है। रस और पाक में शीतल और मधुर है।

यह नवनीत छोटे बालकों के लिये तो अमृत है। थोड़ी मात्रा में शहद वा मिश्री मिला कर खिलाना चाहिये। इसी लिये इसका नाम शिशुप्रिय है।

बराबर नागकेशर और मिश्री नवनीत में मिला कर खिलाया जावे तो बवासीर का खून आना बन्द हो जाता है। रक्तपित्त रोग को दूर करने में श्रेष्ठ है।

नवनीत में थोड़ी मिश्री मिला कर खिलाने से फल घृत जैसा फल पाया जाता है। गर्भाशय के सब रोग दूर करता है, सन्तान दाता है। बहुत से वैद्य मिश्री में कोई रंग मिला कर पुड़िया बना कर औषधि बता कर सेवन करवाते हैं। यह गर्भाशय के समस्त रोग दूर करने की उत्तम औषध है। वास्तव में यह सब मक्खन का ही गुण है।

सर्प के काट खाने पर जब खून बहने लगता है तो मक्खन और नागकेशर के सेवन करने से खून बन्द हो जाता है। इसीलिये इसको 'विषापहम्' विष दूर करने वाला कहा है।

राजनिघण्टु में श्री नरहरि जी ने इसको वातरोगनाशक, खांसी को दूर करने वाला, कृमिरोगनाशक, तथा शूल दर्दों को दूर करने वाला लिखा है। साथ ही थका-

वट दूर करने वाला, तृप्तिकारक, तृषा को शमन करने वाला बताया है।

चरक शास्त्र में भी नवनीत को संग्राही, दीपन, हृदय को हितकारी, बवासीर नाशक, अर्दितरोग (लकवा) नाशक एवं रुचिकारक बताया है।

–वातार्श (बादी बवासीर) पर गोघृत–

१—जमीकन्द एक कन्द होता है, इसे गीली मिट्टी में लपेट कर भाड़ में दे देवें, जब मिट्टी लाल हो जाय तो यह पक जाता है। पुनः मिट्टी उतार दें और कन्द का छिलका भी उतार लें। पुनः इस कन्द के छोटे-छोटे टुकड़े काट कर घी में भून लेवें। इसको एक तोले से दो तोले तक गोदुग्ध के साथ सेवन करें, कुछ दिन के प्रयोग से वातार्श (बादी बवासीर) रोग नष्ट हो जाता है।

२—गोघृत से वातार्श के मस्से नष्ट करने के लिये जादू भरा योग आपकी सेवा में निवेदन करता हूँ। प्रायः बादी बवासीर के रोगियों को मस्सों के कारण बहुत कष्ट हुवा करता है। पीड़ा के कारण चलना तो दूर रहा, रोगी बैठ भी नहीं सकता। मस्से फूल जाते हैं, मलबन्ध (कब्ज) बहुत अधिक रहता है, ऐसी अवस्था में दो प्याज लेकर भूभल में इस प्रकार भूनें कि वह आधे भुन जावें। पुनः उनका छिलका उतार कर कुण्डी-डण्डे से खूब रगड़ कर चटनी सी बना लेवें। इसको गोघृत में भून लेवें और टिकिया बना कर गरम-गरम से ही मस्सों को सेकें और टिकिया को मस्सों पर ही बान्ध देवें। मस्सों को बांधते ही रोगी की भयङ्कर पीड़ा दूर होकर उसे शान्ति मिलती है और रोगी सो जाता है। और कुछ दिन में अपना सब काम करने लगता है। मस्सों को समूल नष्ट करने के लिये आयुर्वेद के बृहत्कासीसादि तैल का प्रयोग करना चाहिये।

–पाण्डु (कामला) रोग पर गोघृत–

१—त्रिफले का रस वा काढ़ा एक से दो तोला तक लेकर इसमें ६ माशे घी, १ तोला शहद मिलाकर कुछ दिन पीने से पाण्डु और कामला नष्ट हो जाते हैं।

२—हरी हल्दी का रस दो तोले वा चूर्ण एक तोला लेकर उसमें ६ माशे गाय का घी, ९ मासे वा एक तोला शहद मिला कर सेवन करने से पाण्डु और कामला नष्ट हो जाते हैं।

–धतूरे व भिलावे के विष पर गोघृत–

१—शुद्ध गोघृत थोड़ा सा गरम करके अधिक मात्रा में पिलाने से धतूरे का विष दूर होता है।

२—सूजन के स्थान पर गोघृत चुपड़ने से भिलावे की सूजन दूर होती है।

३—हरी चौलाई का रस निकाल कर इसमें गाय का मक्खन मिला कर लगाने से भिलावे के सूजनादि विकार निश्चय से दूर होते हैं।

–हिंगु तथा कुचिला शुद्धि–

इस गोघृत की कृपा से हींग की शुद्धि होती है जो कि हिंग्वष्टकादि अनेक आयुर्वेद के प्रसिद्ध योगों में पड़ कर वात के भयङ्कर रोगों को भी दूर करती है। कुचिले को भी गोघृत में भून कर शुद्ध किया जाता है जो कि आयुर्वेद के अनेक प्रसिद्ध रसों में अपना स्थान रखता है। तथा उनमें पड़कर अनेक भयङ्कर वात के रोग रांघड़ आदि को भी दूर करता है। इन दोनों की शुद्धि का यश इस गोघृत को ही है। पागल कुत्ते के काटने से यदि शरीर में कोढ हो जाये तो निम्नलिखित योग काम में लावें। आंवलासार गन्धक ६ माशे, नीला थोथा ६ माशे, जयपाल की गिरी ६ माशे, तीनों को बारीक पीस कर १० तोला घी मिलावें और ताम्बे के पात्र में डाल कर एक सौ एक बार जल से धो डालें। इस घी को रोगी के शरीर पर लगावें और उसको ३ घण्टे तक आग के आगे सिकावें, इससे रोगी के सारे शरीर पर बाजरे के समान दाने निकल आवेंगे, दूसरे दिन शरीर पर गोबर मल कर स्नान करने से शरीर शुद्ध तथा नीरोग हो जायेगा।

"भांग तथा अफीम विषनाशक गोघृत"

भांग के नशे वा विष से मनुष्य पागल हो जाता है उसे दूर करने के लिये गोघृत परम उपयोगी है।

(शेष पृ० ३८ पर)

✻ गो-दुग्ध चिकित्सा ✻

(ले०—आचार्य भगवान्देव जी गुरुकुल झज्जर)

गो दुग्ध पौष्टिक भोजन ही नहीं, परन्तु अनेक प्रकार के भयङ्कर रोगों को दूर करने के लिये अत्यन्त लाभप्रद औषध भी है, इस लेख में इसी पर विचार किया गया है कि किस रोग के रोगी को दूध किस प्रकार लेना चाहिये।

चतुर्थभागं सलिलं निधाय यत्नाद्यदावर्तितमुत्तमं तत्।
सर्वामयघ्नं बलपुष्टिकारि वीर्यप्रदं क्षीरमतिप्रशस्तम्॥

दूध में $\frac{1}{4}$ चौथा भाग जल मिलाकर औटावे, जब वह जल जल जावे तब सेवन करे, वह दूध श्रेष्ठ सर्वरोग नाशक बलवर्द्धक पुष्टिकारक वीर्यजनक और अत्यन्त प्रशंसा योग्य है। रोगियों को इसी प्रकार पका कर दूध पान करावे। यह सभी रोगियों के लिये सामान्य नियम है।

वात रोगों पर गोदुग्ध का प्रभाव

वायु के जितने भी रोग हैं उन पर गोदुग्ध का सेवन रामबाण के समान कार्य करता है। एक फौजी सिपाही जिसके कटि (कमर) के नीचे के भाग को वायु सर्वथा मार गया था, उसके पैर किञ्चित् मात्र भी नहीं हिलते थे। करवट भी स्वयं नहीं ले सकता था। एक वर्ष फौजी सरकारी हस्पताल में रहा। इन्जैक्शन और सारी डाक्टरी चिकित्सा विफल (फेल) हो गई। अन्त में दो-तीन मास तक केवल गाय के दूध पर ही रख कर मैंने चिकित्सा की। आपको आश्चर्य होगा कि उसके पैरों में जीवन आ गया और वह लाठी के सहारे चलने लगा।

रोगन वाव (गृध्रसी) के कितने ही रोगियों की मैंने गोदुग्ध भोजन के रूप में देकर चिकित्सा की, वह शीघ्र ही भले-चङ्गे हो गये। जिनके हाथ व पैर वायु के कारण सूख जाते हैं ऐसे कितने ही रोगी दुग्ध सेवन के साथ चिकित्सा करके मैंने ठीक किये हैं। एक रोगी को लकवा मार गया, उसका एक हाथ एक पैर एक कान एक आंख तथा जिह्वा बेकार हो गये। न हाथ उठता था न पैर से चल सकता था, एक आँख से दीखना तथा एक कान से सुनना बन्द हो गया। बोलता तो वह सर्वथा नहीं था। उसे औषध चिकित्सा के साथ भोजन के रूप में पर्याप्त मात्रा में गोदुग्ध और गोघृत का सेवन कराया। जादू समान प्रभाव हुआ। हाथ-पैर कान-आँख सब पूर्ववत् कार्य करने लगे, जिह्वा से भी बोलना आरम्भ कर दिया। रोगी लोभी प्रकृति का था जितना दुग्ध हम सेवन कराना चाहते थे, बार-बार समझाने पर भी उसने उतने दुग्ध का सेवन नहीं किया। अतः जिह्वा में कुछ तुतलापन रह गया। वायु के सैंकड़ों रोगियों पर मैंने गोदुग्ध का अनुभव किया। जादू के समान आश्चर्यजनक प्रभाव गोदुग्ध का भोजन के रूप में देने से होता है। मैं यह यत्न करता हूँ कि रोगी केवल गोदुग्ध पर ही रहे, भोजन वा जल कुछ भी न ले। भूख लगे तब दूध, प्यास लगे तब दूध। यह तो सामान्य गायों के दूध का प्रभाव है! यदि काली गाय का दूध प्राप्त हो और उसका सेवन वात रोगियों को कराया जाय तो सोने पर सुहागे वाला कार्य हो। यदि लोग घरों पर गाय रक्खें और गायों के दुग्ध का सेवन करें तो वायु के रोग क्या कोई भी रोग नहीं हो सकता।

रक्तपित्त

हमारे पड़ोस में एक निर्धन किसान को मुख से पर्याप्त मात्रा में खून की वमन होती थी। सारा रक्त दो-चार वमन होकर निकल जाता था और वह मृत प्राय

हो जाता था। उसके घर पर गाय थी उसके दूध से उसे कुछ लाभ होता था। जिन दिनों वह गाय दूध देती उसका रोग दबा रहता था। निर्धन होने से कोई चिकित्सा भी नहीं कर सकता था। उसने अपने एक लड़के को गोपाल=पाली रखकर जो बच्छिया उस गाय ने दी, पालनी आरम्भ कर दी। कुछ वर्ष में उसके घर गाय ही गाय हो गयीं। पर्याप्त मात्रा में गोदुग्ध हो गया। गोदुग्ध के सेवन से वह रोग भी जाता रहा। अनेक बछड़ों के बैल बन गये, बछड़ियों की गायें बन गयीं। गोदुग्ध से भयंकर रोग भी समाप्त हो गया।

हमारे एक होनहार ब्रह्मचारी को नकसीर बहुत आती थी। यहां तक कि जाड़े में नकसीर आती, अनेक चिकित्सायें की, किन्तु पूर्ण लाभ नहीं हुआ। धूप में चलने, थोड़ा परिश्रम वा व्यायाम आदि करने से नकसीर आने लगती थी। मैंने महा बांसादि घृत जिसमें गोघृत तथा गो दुग्ध पड़ता है बनाकर गोदुग्ध के साथ सेवन कराया। जादू समान प्रभाव हुआ। नकसीर उसके सेवन से पहिले ही दिन रुक गयी, नहीं तो एक दिन रात में दो-दो बार हो जाती थी। गोमाता का दूध यथार्थ में अमृत है।

आठ-सात वर्ष हुए तब मैंने गाय के धारोष्ण दूध के इन्जैक्शन अपने कार्यकर्त्ताओं तथा नवीन प्रविष्ट विद्यार्थियों पर जिनके पेट में पहले से ही प्लीहा (तिल्ली) बढ़ी हुई थी अनुभव किया। मैं एक सप्ताह में. मास में एक बार इन्जैक्शन करता था। दो चार इन्जेक्शनों से सबकी तिल्लियाँ कट गईं। आश्चर्यजनक लाभ हुआ।

ज्वर और दूध

जीर्णज्वरे कफे क्षीणे क्षीरं स्यादमृतोपमम्।
तदेव तरुणे पीतं विषवद्हन्ति मानवम॥

दूध जीर्ण (पुराने) ज्वर कफ और निर्बलता में अमृत के समान है और वही दूध नये ज्वर में पिया हुआ विष के समान मनुष्य को मार देता है।

आयुर्वेद के (१) सितादिक्षीर (दूध) (२) पञ्चमूलीक्षीर (दूध) ये प्रसिद्ध दोनों योग गोदुग्ध में कुछ औषध उबाल कर तैयार किये जाते हैं। ये पुराने से पुराने (जीर्ण) ज्वर को समूल नष्ट कर डालते हैं। सुश्रुत में लिखा है—

अतिसार का रोग बहुत पुराना हो, अपान वायु सर्वथा बन्द हो, बहुत कष्ट से थोड़ा-थोड़ा मल बार-बार निकलता हो, प्यास से रोगी तङ्ग हो, ऐसी अवस्था में गोदुग्ध तीन पाव एक पाव जल मिलाकर उबाले। जल के सर्वथा जल जाने पर जब केवल दूध रह जाये, ऐसा दूध रोगी को दिया जाये तो अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होता है।

संग्रहणी का रोग जब पुराना हो जावे और रोगी निर्बल हो तो दुग्धवटि नाम की औषध जो गाय के दूध के साथ-साथ खरल करके बनाई जाती है जिसका सेवन गोदुग्ध के साथ कराते हैं। जल के स्थान पर भी तथा भोजन के स्थान पर भी गाय का दूध पिलाते हैं। जो रोगी एक-दो छटाँक दूध नहीं पचा सकता वह २० सेर तक दूध पीने तथा पचाने लगता है। और भला-चङ्गा हो जाता है। उस समय गोदुग्ध जादू के समान प्रभाव करता है।

बवासीर के मस्से

गाय के दूध में खरल करके एक लेप घोंघची आदि औषधियों से तैय्यार किया जाता है। वह मस्सों को दूर करने के लिये अत्यन्त अनुपम औषध है।

मूर्छा, हिस्टीरिया, अपस्मार आदि

आध सेर गोदुग्ध और आध सेर जल दोनों को मिलाकर अग्नि पर चढ़ावें, इसमें अश्वगन्ध नागोरी ६ माशे, शितावर ६ माशे डाल दें और इतना पकायें कि केवल दूध शेष रह जाये। उसे मल छान कर मिश्री मिलाकर पिलायें। इस दूध के साथ मूर्छादि रोगों की जो भी औषध दी जायेगी वह सोने पर सुहागे का काम करेगी अर्थात् अधिक लाभप्रद सिद्ध होगी।

पाण्डु रोग

गाय के दूध में सोंठ का चूर्ण १ माशे से ६ माशे तक मिलाकर पीने से कामला पाण्डुरोगादि नष्ट होते हैं।

अजीर्ण अफारा रोग

येषां न सात्म्यं क्षीरेण पीते चाध्मानकारकम्।
तेषामर्द्धजलं दत्वा नागरं पिप्पलीयुतम्।
आवर्त्तयेत्क्षीरशेषं तत्पीत्वा सुखमश्नुयात्॥

जिनको दूध नहीं पचता और जिनको पीने से अफारा हो जाता है उन्हें दूध में $\frac{१}{२}$ आधा भाग जल डालकर १ तोला सौंठ और १ तोला पीपल डालकर औटावें। जल के जल जाने पर नीचे उतार कर उसे खूब लोट-पोट करे अर्थात् तरड़ावे। तदनन्तर सेवन करने से पच जाता है।

क्षीणानां दुर्बलानां च तथा जीर्णज्वरार्दिते।
दीप्ताग्निनामतन्द्राणां श्रमशोषविकारिणाम्॥
व्यवायिनामल्परेतः श्वासिनां विषमाग्निनाम्।
तथा च राजयक्ष्माणां क्षीरपान विधीयते॥

क्षीण दुर्बल जीर्णज्वर से पीड़ित, जिनकी जठराग्नि दीप्त है। तन्द्राहीन, पुरुषार्थी, परिश्रम व्यायाम करने वाले, शोषयुक्त (सूखे हुए) थके हुए, मैथुन करने से निर्बल हुए क्षीण वीर्य वाले, श्वास रोग वाले, विषम अग्नि वाले और राजयक्ष्मा रोग वाले मनुष्यों को गोदुग्ध सेवन करना चाहिए। भावमिश्र जी भावप्रकाश निघण्टु में लिखते हैं—

दुग्धं सुमधुरं स्निग्धं वातपित्तहरं सरम्।
सद्यः शुक्रकरं शीतं सात्मयं सर्वशरीरिणाम्॥
जीवनं बृहणं वल्यं मेध्यं वाजीकरं परम्।
वयः स्थापनमायुष्यं सन्धिकारि रसायनम्॥

दूध मधुर, स्निग्ध, वात तथा पित्त नाशक रेचक, वीर्य को शीघ्र उत्पन्न करने वाला, शीतल सर्वप्राणियों को लाभ दायक, जीवनरूप, पुष्टिकारक, बलदायक, बुद्धि को उत्तम करने वाला, आयुवर्द्धक, सन्धानकारक और अत्यन्त वाजीकरण है।

विरेकवान्ति वस्तीनां तुल्यमोजो विवर्द्धनम्।
जोर्णज्वरे मनो रोगे शोषमूर्च्छा भ्रमेषु च॥
ग्रहण्यां पाण्डुरोगे च दाहे तृषि हृदामये।
शूलोदावर्त्त गुल्मेषु वस्तिरोग गुदाङ्कुरे॥
रक्तपित्ताऽतिसारे च योनिरोगश्रमक्लमे।
गर्भस्रावे च सततं हितं मुनिवरैः स्मृतम्॥

विरेचन, वमनक्रिया तथा वस्तीक्रिया (एनेमा) के अनुकूल ही ओजवर्द्धक है। जीर्ण ज्वर, मानसिक रोग, उन्माद, शोष, मूर्छा, भ्रम, संग्रहणी, पाण्डुरोग, दाह, तृषा, हृदयरोग, शूल, उदावर्त, गुल्म, वस्तिरोग, बवासीर, रक्तपित्त, अतिसार, योनिरोग परिश्रम (थकावट) ग्लानि और गर्भस्रावादि इन सब रोगों में ऋषि-मुनि लोगों ने दूध को हितकारी माना है।

बाल वृद्धक्षतक्षीणाः क्षुद्व्यवायकृशाश्चये।
तेभ्यः सदाऽतिशयितं हितमेतदुदाहृतम्॥

जो बालक वृद्ध (बूढा) क्षतवाला (चोट लगी हो) क्षीण निर्बल) भूख से दुर्बल वा अन्य कारणों से दुर्बल के लिये दूध अत्यन्त हितकारी है। गोदुग्ध किस प्रकार भयङ्कर विषों के प्रभाव को नष्ट करता है, इस विषय में कुछ योग आपकी सेवा में लिखता हूँ।

१—गाय के दूध में गोघृत मिलाकर पीने से धतूरे का विष दूर होता है।

२—अशुद्ध भिलावा जो विष है यदि शरीर के किसी अङ्ग पर इसका तैल लग जावे तो भयंकर सूजन तथा खुजली उत्पन्न करता है। गोदुग्ध में अखरोट की गिरी घोट कर सूजन पर लगायें और इसी को गोदुग्ध के साथ खाने से सूजन और खुजली दूर होगी।

३—भिलावे का धुँआ लग जाने से शरीर आँख और मुख पर आई सूजन अम्बा हल्दी, सांठी चावल, दूध, हल्दी और चावलों के बासी पानी में पीसकर इसमें गोदुग्ध मिलाकर सूजन पर लेप करने से लाभ होगा।

४—भिलावा भूल से अधिक खाजाने से शरीर में बहुत उष्णता (गर्मी) बढ़ गई हो तो गाय की दही मिश्री मिलाकर बार-बार पीने से पूर्ण लाभ होता है।

५—काले तिल, काली मिट्टी दोनों को गोदुग्ध में पीस कर लेप करने से भिलावे की सूजन दूर होती है।

६—गोघृत और गोदुग्ध दोनों मिलाकर पर्याप्त मात्रा में पिलाने से भाङ्ग का नशा दूर होता है।

७—जंगली काण्टेदार चुलाई की जड़ घोट कर गोदुग्ध के साथ पिलाने से सब विष दूर होते हैं।

८—चुलाई की जड़ को जल के साथ पीसकर टिकिया बनायें उससे चौगुना गाय का घी लें और गाय के घी से चौगुना गाय का दूध लें, सब को मिलाकर कली वाले पात्र में मन्द अग्नि से पकावें जब केवल

घी रह जाये तो तब निथार कर छान लें इसमें से एक तोले से दो तोले तक प्रतिदिन सेवन करने से चूहों का विष दूर होता है।

९—धतूरे की जड़ ६ माशे से एक तोले तक रगड़ छान कर दूध के साथ घोट कर पिलाने से उन्मत्त (बावला) कुत्ते का विष दूर होता है।

१०—गोदूध में घी मिलाकर बार-बार पिलाने से संखिया का विष दूर होता है।

११—मीठा तेलिया का विष खाये हुए कुछ समय व्यतीत हो जाये तो निर्विषी का चूर्ण दो तोले घी मिले हुए दूध के साथ प्रयोग कराने से विष दूर होता है।

१२—घी और दूध मिलाकर पिलाने से सब प्रकार के विष दूर होते हैं।

१३—तुलसी के पत्ते १ तोला काली मिर्च १ माशा पीपल २ माशे इन तीनों को कूट पीस कर १ पाव जल में उबालें। आधा रहने पर मल छान कर थोड़ा गर्म किया हुआ गोदुग्ध १ छटांक मिलावें तथा ½ छटांक मिश्री डाल कर पिलाने से विषम ज्वर (मलेरिया) दूर होता है।

(पृ० ३४ का शेष)

१—गोघृत ४ तोले, सोंठ १ तोला दोनों को मिलाकर खाने से भांग का नशा तथा विष दूर होता है।

२—गोघृत गरम करके कई बार पिलाने से अफीम का नाश तथा प्रभाव दूर होता है।

स्वर्णवसन्तमालती और वसन्तमालती योग भी गाय के ताजा मक्खन के बिना तैय्यार नहीं होते जो कि जीर्ण ज्वरादि भयङ्कर रोग की प्रसिद्ध औषध हैं। वास्तव में गोघृत विविध विधान से बड़े-बड़े भयङ्कर रोगों को शान्त करने का सामर्थ्य रखता है। यह अपने अनेक गुणों के कारण ही अमृत कहलाता है और इसकी देन का श्रेय गोमाता को ही है। यदि गोघृत के गुणों पर विस्तार से विचार किया जावे तो एक मोटी पुस्तक बन सकती है। यह अति संक्षेप से गोघृत के गुण दर्शाये हैं। विस्तार भय से यहां नहीं लिखे जा सकते। गोघृत को इसीलिये सहस्र कर्म करने वाला कहा है। इसीलिये गोघृत अमृत समान गुणकारी है।

गोमयोपयोग तथा चिकित्सा

[लेखक—ब्र० वेदव्रत भाष्याचार्य, सिद्धान्तवाचस्पति गुरुकुल झज्जर]

व्याकरण के नियमानुसार गाय के गोबर को ही गोमय कह सकते हैं भैंस आदि को नहीं। क्योंकि 'गोश्च पुरीषे' सूत्र से पुरीषाभिधेय में गोशब्द से 'मयट्' प्रत्यय करने से गोमय शब्द की सिद्धि होती है। 'गाः पुरीषं गोमयम्' अर्थात् गाय का मल। अतः जहाँ कहीं शास्त्रों में गोमय का विधान है वहाँ सर्वत्र गाय का गोबर ही ग्रहण करना चाहिये।

धन्वन्तरीय निघण्टु में गोमय के चार नाम अर्थात् पर्यायवाची शब्द दिये हैं—"गोमयं गोपुरीषं स्याद्गोविष्ठा गोमलं च तत्" अर्थात् गोमय, गोपुरीष, गोविष्ठा, और गोमल। गोमय चिकना, दुर्गन्ध नाशक, शोधक, सारक, वीर्यवर्धक, पोषक तथा कान्तिप्रद है।

गोबर मुख्यतया लेपन, खाद, रोग चिकित्सा और जलाने के काम आता है। क्रमशः इन पर लिखता हूं।

लेपन—गाय के गोबर से यज्ञशाला, पाकशाला, भोजनशाला तथा गृहादिकों का लेपन करना चाहिये, यदि वो कच्चे हों तो। गोमय से लेपन करने से स्थान स्वच्छ, दुर्गन्ध रहित, सुन्दर एवं स्वास्थ्यप्रद बन जाता है। गोबर के विषय में महर्षि दयानन्द जी महाराज सत्यार्थप्रकाश समुल्लास १० में लिखते हैं—

"(प्रश्न) जो गाय के गोबर से चौका लगाते हो अपने गोबर से क्यों नहीं लगाते? और गोबर के चौके में जाने से चौका अशुद्ध क्यों नहीं होता? (उत्तर) गाय के गोबर से वैसा दुर्गन्ध नहीं होता जैसा कि मनुष्य के मल से, [गोमय] चिकना होने से शीघ्र नहीं उखड़ता न कपड़ा बिगड़ता न मलीन होता है, जैसा कि मिट्टी से मैल चढ़ता है वैसा सूखे गोबर से नहीं होता। मिट्टी और गोबर से जिस स्थान का लेपन करते हैं वह देखने

में अति सुन्दर होता है, और जहां रसोई बनती है वहाँ भोजनादि करने से घी मिष्ट और उच्छिष्ट भी गिरता है उससे मक्खी कीड़ी आदि बहुत से जीव मलिन स्थान के रहने से आते हैं। जो उसमें झाड़ू लेपनादि से शुद्धि प्रतिदिन न की जावे तो जानो पखाने के समान वह स्थान हो जाता है। इसलिये प्रतिदिन गोबर मिट्टी झाड़ू से सर्वथा शुद्ध रखना और जो पक्का मकान हो तो जल से धोकर शुद्ध रखना चाहिये"।

गोमय से लेपन के विषय में स्कन्द पुराण में भी लिखा है—

लक्ष्मीश्च गोमये नित्यं पवित्रा सर्वमङ्गला।
गोमयालेपनं-तस्मात् कर्तव्यं पाण्डुनन्दन ॥

अर्थात् गोबर में परम पवित्र और सर्व कल्याण-कारिणी लक्ष्मी वास करती है अतः गोमय से लेपन करना चाहिये।

गोबर में लक्ष्मी निवास करती है इस विषय में महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ८२ में एक पौराणिक कथा आती है। उसमें बतलाया है कि लक्ष्मी ने गायों से प्रार्थना की कि मुझे निवास के लिये अपने शरीर में स्थान दो, किन्तु गायों ने यह कह कर निषेध कर दिया कि तुम अति चञ्चल हो, किसी के भी पास नहीं ठहरती हो और हम तो स्वभाव से ही हृष्ट पुष्ट और सुन्दर हैं। फिर लक्ष्मी की अत्यधिक प्रार्थना पर गायों ने अपने गोबर तथा मूत्र में निवासार्थ लक्ष्मी को स्थान दे दिया।

इस कथा का वास्तविक अभिप्राय यह है कि गाय के गोबर तथा मूत्र की बहु मूल्य खाद बनती हैं और उसको खेतों में डालने से अत्यधिक मात्रा में भूमि धान्यादि के रूप में लक्ष्मी उगलती है।

जिस भूमि में हम अन्न, चारा आदि उत्पन्न करते हैं उसकी उत्पादन शक्ति कम हो जाती है, जिस प्रकार मनुष्य के शरीर को स्थिर तथा कार्य करने के योग्य रखने के लिये भोजन अत्यावश्यक है उसी प्रकार भूमि उत्पादन शक्ति को स्थिर रखने तथा बढ़ाने के लिये खाद रूपी भोजन भी बहुत आवश्यक है अन्यथा भूमि कालान्तर में ऊसर (बञ्जड़) हो जाती है तथा कृषि करने के लिये अयोग्य बन जाती है। इस लिये खाद को भूमि का प्राण समझना चाहिये। आज-कल दो प्रकार की खाद प्रचलित है एक गोबर गोमूत्र आदि से बनी हुई तथा दूसरी बनाई हुई। वैज्ञानिक कृत्रिम खाद जिसे कहते हैं। वैज्ञानिक कृत्रिम खाद गोबर की खाद के गुणों की अपेक्षा निकृष्ट सिद्ध हुई है। और इसका मूल्य भी बहुत अधिक है जिससे साधारण भारतीय निर्धन कृषक उसका प्रयोग करने में असमर्थ है। गोबर आदि से बनी हुई खाद इसकी अपेक्षा श्रेष्ठ है और उसको थोड़े ही परिश्रम तथा व्यय से निर्धन कृषक भी प्राप्त कर सकता है।

प्रायः देखा जाता है कि गोबर आदि की खाद बनाने के लिये उसे वैसेही डालकर ढेर लगा देते हैं। जिससे गोबर की उष्णता वायु वृष्टि आदि के द्वारा नष्ट हो जाती है और उस खाद की उत्पादन शक्ति क्षीण हो जाती है। अतः खाद तैयार करने का यह विधि अनुचित तथा हानिकारक है। इस प्रकार डाल देने से खाद गलती भी विलम्ब से है और उसका कुछ भाग कच्चा भी रह जाता है। इसलिये गड्ढा खोद कर उसमें गोबर आदि को डालना और जब गड्ढा भर जावे तो उसे मिट्टी डालकर ढक देना चाहिये। इस प्रकार खाद की शक्ति भी क्षीण नहीं होती और गोबर गलकर दो या तीन मास में खाद बन जाती है। इस प्रकार बनी हुई खाद को जिस भूमि में डाला जाता है उसकी उत्पादन शक्ति बहुत बढ़ जाती है।

वर्षाकाल को छोड़ कर प्रायः गोबर के उपले बनाकर उसे इन्धन के स्थान पर जलाया जाता है, किन्तु इसे इन्धन के स्थान पर जलाना महामूर्खता का काम है। यह ठीक है कि निर्धन कृषिकों के इन्धन की समस्या बहुत कुछ हल हो जाती है किन्तु इस प्रकार गोबर को जलाने से भूमि को खाद कम मिलती है जिससे उसकी उत्पादन शक्ति क्षीण हो जाती है। भूमि से हम पदार्थों का ग्रहण तो करें किन्तु परिवर्तन में उसे कुछ भी न दें तो इस एक पक्षीय व्यापार से भूमि अनुपजाऊ हो जाती है। इसलिये गोबर को इन्धन

के स्थान में जलाना न चाहिये। गोबर तो किसान का सोना है यदि इसे भूमि में डालें तो भूमि सोना उगलती है।

गोबर स्वास्थ्य के लिये अति लाभदायक है केवल गोबर से ही सैकड़ों रोगों की चिकत्सा की जाती है। गोबर में वैज्ञानिकों ने १ मन्थोल, २ अमोनिया, ३ फीनोल, ४ इण्डोल, ५ फौर्मलीन, ६ फास्फोरिक-एसिड, ७ चूना, ८ सिल्कर और ९ नाइट्रोजन, आदि घटक माने हैं। गोबर में रोग के कीटाणुओं को खा जाने वाले कीटाणु रहते हैं, जिन से रोगों की चिकत्सा करने में अत्यधिक सहायता मिलती है ।

विदेशों में भी गोमय के विषय में पर्याप्त अन्वेषण तथा अनुभव किया गया है। इटली के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० जी० ई० बर्गेंड ने गोबर के अनेक प्रयोग करके सिद्ध किया है कि ताजे गोबर से तपेदिक, मलेरिया और हैजे के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। उनका यह भी मत है कि क्षय की आरम्भिक अवस्था के कीटाणु तो गोबर की गन्ध से ही समाप्त हो जाते हैं। इटली वाले अब भी हैजे के रोगी को गाय का गोबर पानी में मिलाकर पिलाते हैं। इसी अद्भुत गुण के कारण इटली के क्षयचिकित्सालयों को प्रतिदिन गाय के गोबर से लीपते हैं।

हमारे यहाँ भी चौका लगाकर भोजन बनाने की प्रथा प्रचलित है वह इसी कारण से प्रचलित हुई होगी । उसका एक कारण स्वच्छता भी है। अब यह प्रथा रूढ़ि रूप में आगई है।

न्यूयार्क टाइम्स ने भी लिखा है कि रोग जन्तुओं को नष्ट करने के लिये गोमय का बहुत ही महत्व है।

मद्रास के प्रसिद्ध डा० कींग का कहना है कि गाय के गोबर में हैजे के जन्तुओं को नष्ट करने की अद्भुत शक्ति है! मिर्गी, हिस्टरिया न्यूरेस्थिनिया, चित्तभ्रम, मस्तकभ्रम, मूर्च्छा, खुजली, चकत्ते, पित्त, जल जाने, कोढ़ और फोड़े फुन्सियों में गोबर लाभदायक है।

(१) पञ्चगव्य के सेवन से जिसमें गोमय भी सम्मिलित है अपस्मार, मृगी, तथा वायु सम्बन्धी रोग शान्त होते हैं।

(२) गाय के गोबर को सारे शरीर में मलकर बैठने धूप में बैठने से खुजली आदि चर्म रोगों की निवृत्ति होती है।

(३) पेट में छोटे-छोटे कृमि हो जावें तो गाय के गोबर की राख २ तोला १० तोले जल में मिलाकर वस्त्र से छान कर ३ दिन तक सायं प्रातः पीने से कृमि मर जाते हैं ‘

(४) गाय के गोबर को जलावें जब उसका धूआं निकल जावे तब पानी में बुझाकर चूर्ण करलें, इससे दान्तों का मल दूर होता है और मसूड़ों की पीड़ा भी शान्त हो जाती है।

(५) गाय के गोबर को शरीर में मलकर गर्म जल से स्नान करने से खाज पामा पित्त आदि त्वचा रोग शान्त होते हैं।

(६) मृतगर्भ को बाहर निकालने के लिये गाय के दूध में गाय के गोबर का रस मिलाकर पिलाना चाहिये।

(७) गाय के कोबर की राख को वस्त्र से छानकर चेचक (माता) के घावों में भरने से उनका पानी सूखकर वे ठीक हो जाते हैं। उनका यही सरल और सस्ता उपाय है ।

(८) सूखे गोबर तथा नमक के पुराने पात्र (हांडी) को पीस कर शरीर पर मलने से अधिक पसीना आना बन्द हो जाता है।

(९) पित्त प्रकृति के सर्प के काटने पर जो सूजन आ जाती है वह गाय के गोबर से दूर होती है। सर्प के काटने पर जब रोगी बेहोश हो जाता है जिसे लोग मरा हुआ समझते हैं, उसे गाय के गोबर में दबाने से ठीक होता देखा गया है।

(१०, गाय के गोबर में जमालघोटा आदि अनेक विष शुद्ध कर अमृत बनाये जाते हैं।

(११) कैथ के रस को गोबर के रस में मिला कर कुछ मधु मिलाकर प्रयोग करने से चूहों का विष दूर होता है।

संस्था परिचय

गुरुकुल झज्जर

नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश

गुरुकुल झज्जर में राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा सब भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा के अध्ययन का समुचित प्रबन्ध है। धार्मिक परीक्षाओं का भी अच्छा प्रबन्ध है। सब विभागों के लिये सुयोग्य विद्वानों का सहयोग मिल रहा है। महर्षि दयानन्द प्रदर्शित पाठ्यक्रम के आधार पर व्याकरण आदि विषय के अध्ययन के लिये अच्छा स्थान है। आचार की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है।

सब की समाप्ति पर नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश होगा। प्रवेश पत्र कार्यालय से मंगायें।

प्रवेश नियम

१—गुरुकुल में वही सज्जन अपने बालक को प्रविष्ट करायें जिनकी धारणा बालक को समाज और राष्ट्र का सेवक बनाने की हो।

२—बालक की आयु कम से कम ८ वष तथा अधिक से अधिक १० वर्ष होनी चाहिये।

३—१० वर्ष से अधिक आयु व्युत्पन्न बालक ही श्री आचार्य जी की अनुमति पर स्थान पा सकेगा।

४—गुरुकुल में किसी प्रकार का कोई शुल्क नहीं, केवल २५) प्रवेश शुल्क प्रवेश समय देना होता है।

५—भोजन व्यय का १२०) वार्षिक वर्ष के प्रारम्भ में अगाऊ देना पड़ता है। इस व्यय से गुरुकुल वर्ष भर घृतरहित भोजन देता है।

६—घृत का मासिक प्रबन्ध संरक्षक को करना पड़ता है।

७—वस्त्रों तथा पुस्तकादि का व्यय भी संरक्षक ने देना पड़ता है।

८—अध्ययन काल में अवकाश घर जाने के लिये नहीं मिलता।

९—वर्ष के प्रारम्भ में भोजन के लिये जमा किया हुआ धन बालक के चले जाने पर वापस नहीं किया जायेगा।

१०—प्रवेश कराने के लिये आवेदन पत्र कार्यालय से मंगायें।

११—प्रवेश कराते समय वर्षभर का भोजन व्यय अगाऊ १२०) तथा प्रवेश शुल्क २५) अर्थात् १४५) जमा करायें।

१२—बालक के लिये ऋतु के अनुकूल वस्त्र, बिस्तर, थाली, लोटा, एक सन्दूक अवश्य होना चाहिये।

आयुर्वेद महाविद्यालय—

गुरुकुल झज्जर में आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये एक लाख रुपये की आवश्यकता है। पचास सहस्र रुपये इस वर्ष इकट्ठे करने हैं। पचास सहस्र रुपये इकट्ठे हो जाने पर कार्य प्रारम्भ हो जायेगा। चन्दा चयन समिति

गाय के गोबर के विषय में बम्बई हाईकोर्ट के जज श्री गोविन्द रानडे जी ने अपने जीवन चरित्र में एक अद्भुत घटना लिखी है। वे लिखते हैं कि मेरे प्रपितामह के कई कन्यायें हुईं उनमें से एक भी जीवित न रहती थी, इससे वे चिन्तित एवं दुःखित रहते थे। एक दिन उनको एक महात्मा ने बतलाया कि आप एक गौ पालें और उसको गेहूं खिलावें। उसके गोबर में जो गेहूं निकलें उनको धो—सुखा कर आटा बनाकर उसकी रोटी आप दोनों खावें तथा दोनों स्त्री-पुरुष एक वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करें। उन्होंने ऐसा ही किया। इसके फल स्वरूप श्री रानडे जी के पितामह का जन्म हुआ।

उपर्युक्त लेख से यह भली भान्ति प्रतीत हो जाता है कि गाय के गोबर में कितने अद्भुत गुण हैं। वास्तव में गाय की प्रत्येक वस्तु ही परम कल्याणकारक है। इसी लिये कहा है—'गावः सर्वसुखप्रदाः'।

ने चन्दा एकत्रित करना प्रारम्भ कर दिया है। आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये जनता में बड़ा उत्साह दिखाई देता है। जिस स्थान परभी जाते हैं, हजार पांच सौ रुपये इकट्ठे हो जाते हैं। आठ-दस दिन के दौरे में आठ-दस हजार रुपये एकत्रित हो गये हैं। जिनकी सूचि निम्न है। इनमें जो वचन हैं वह भी ता० २, ३ मार्च सन् १९५४ ई० को होने वाले गुरुकुल के वार्षिक-महोत्सव पर पूरे हो जायेंगे।

ग्रामीण जनता बड़े उत्साह से सहयोग दे रही है। लाडपुर निवासी मा० रतीराम जी की माता श्रीमती छोटोदेवी जी ने अपना चाँदी का कड़ा भी श्री आचार्य जी को भेंट कर दिया। आसौधा निवासी श्री महाशय खुशीराम जी आर्य ने एक दूध की गाय तथा नम्बरदार श्री नेकीराम जी आर्य टीकरी कलां निवासी ने एक गाय गुरुकुल को प्रदान की। यद्यपि ग्रामीण जनता की आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं है, तथापि उसकी हार्दिक भावना गुरुकुल के साथ है। आशा है पचास हजार रुपया शीघ्र ही एकत्रित हो जायेगा। हम गुरुकुल की ओर से सब सहयोगी सज्जनों को हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

ग्राम बालन्द रोहतक

श्री महाशय रामपत जी	१०१)
श्री मुंशीराम जी	१०१)
श्रीमती मन्नोदेवी धर्मपत्नी	
श्री महाशय रामपत जी	५१)
,, महाशय चन्दूलाल जी	२५)
,, दफेदार मनफूलसिंह जी	२०)
,, रिसलदार भरतसिंह जी	१०)
,, मेहरसिंह जी	१०)
,, जागेराम जी	१०)
,, रिसालसिंह जी	१०)
,, मुंशीराम जी	१०)
,, बनवारीलाल जी	१०)
कुल योग	३५८)

वचन

श्री जमा० शेरसिंह श्री छोटूराम जी	१०१)
,, महाशय शिवदत्त जी	२५)
,, ,, सुखलाल जी	२५)
,, ,, सुखराम जी	२५)
,, लाला गोपीराम जी	१०)
,, पं० मुंशीराम जी	१०)
कुल योग	१९६)

दुलीना रोहतक

	वचन-प्राप्त
रायबहादुर श्री रणधीरसिंह जी	११०१) २०२)

बादली रोहतक

श्री सम्पूर्णसिंह जी सुपुत्र रा०ब० रणधीरसिंह जी	१०१)
,, कप्तान रामस्वरूप जी	१०१)
,, दुलीचन्द जी	१०१)
,, पं० थानसिंह जी	१०)
कुल योग	३१३)

वचन

रिसलदार श्री सन्तराम जी	१०१)
श्री महाशय गिरवरसिंह जी	१०)
,, चन्दराम जी	१०)
कुल योग	१२१)

लाडपुर रोहतक

श्री म० जीतराम जी	१२१)
,, ,, चुन्नाराम जी	१०१)
विभिन्न महाशयों से	२६)
श्री मा० दीपचन्द जी	२५)
,, गूगनसिंह जी	१०)
,, मा० रतीराम जी	१०)
नम्बरदार श्री प्रतापसिंह जी	१०)
श्री अमृतसिंह जी	१०)
,, प्रभुदयालु जी	१०)
हरिजन पंचायत	१०)
श्री केहरसिंह जी	१०)
,, फकीरसिंह जी	१०)
,, सोहनसिंह जी ज्ञानीराम जी	१०)
कुल योग	३६३)

श्री छोटो देवी माता जी	
मा० रतीराम जी	कड़ूला चांदी का एक

वचन

श्री निहालसिंह जी	२५)
,, दिलीपसिंह जी	१०)
,, सोहनसिंह जी	१०)
,, सूरतसिंह जी	१०)
कुल योग	५५)

कासनी रोहतक

श्री लज्जेराम जी	५)

वचन

श्री महाशय जुगलाल जी	५०३)
,, मा० दीपचन्द जी	१०१)
,, तेजराम जी	२५)
,, रामस्वरूप जी	२५)
कुल योग	६५३)

खेड़का रोहतक

श्री महाशय इन्द्राज जी	१०१)
,, भीमसिंह चन्दगीराम जी	१५)
,, मनफूलसिंह जी	१०)
,, पृथीसिंह सुपुत्र निहाल जी	१०)
,, इन्द्राज जी	१०)
,, श्रीराम जी	१०)
,, रामपत जी	१०)
,, धूपराम रामप्रसाद श्रीचन्द जी	१०)
कुल योग	१७६)

वचन

श्री महाशय इन्द्राज जी	४००)
,, रामकिशन जी	१०१)
,, चन्दगीराम जी	१०१)
,, मांगेराम जी	१०१)
,, कमलसिंह जी	१०)
,, रामजीलाल जी	५)
कुल योग	७१८)

खूंगाई रोहतक

श्री सरपंच राममेहर जी	२५)
,, भीमसिंह जी	१०)
,, गिरधारी जी	१०)
,, भूपसिंह जी	१०)
,, रामकलां दाताराम जी	१०)
,, पोपराम रामभगत जी	१०)
कुल योग	७५)

वचन

श्री मेजर मेहरचन्द जी	१०१)
,, जुगलाल जी	१०१)
,, शीशराम जी	१०)
,, हरनन्द जी	१०)
कुल योग	२२०)

खेड़ी जट्ट रोहतक

श्री धर्मसिंह जी सु० रामलाल जी	१०५)
,, उमरावसिंह जी रामप्रसाद जी	१०१)
,, चिरंजीलाल जी सरपंच	२५)
,, सुखलाल जी सु० शिवलाल जी	२५)
,, हरकेराम श्री रामस्वरूप श्री शङ्कर	२५)
विभिन्न व्यक्तियों द्वारा	२०)
श्री तेजसिंह जी	२५)
,, अमृतसिंह जी	१५)
,, चिम्मन लखीराम जी	१५)
,, भगवाना जी	१५)
२) रतीराम ११) श्री नन्दलाल जी	१३)
श्री सूरतसिंह जी	१०)
,, पोहकर जी श्री प्यारेलाल जी	१०)
,, कृपाराम जी	१०)
,, रूपराम जी	१०)
,, बनीसिंह जी	१०)
,, सूबे० छतरसिंह जी	१०)
,, रिस० जुगलाल जी	१०)
,, सूबेदार जागेराम जी	१०)
कुल योग	४६४)

वचन

श्री मा० मङ्गलीराम जी	१०१)
,, रामसिंह जी	१०१)
दफे० छोटूराम हजारीसिंह जी	१०१)
श्री सरपंच चिरंजीलाल जी	८०)
,, न्यादर जी	१०)
,, दरियावसिंह जी	१०)
,, रतनलाल श्री प्रभु जी	१०)
,, कमलसिंह जी	१०)
कुल योग	४२३)

जहाँगीरपुर, रोहतक

श्री मुख्त्यारसिंह सरपन्च	१०१)
श्री महाशय नन्दलाल जी	१०१)
,, पं० गङ्गाराम जी	२५)
कुल योग	२२७)

कलोई रोहतक

श्री मा० घीसुराम हरनामसिंह जी	१०१)
,, किशनसिंह जी	१०)
कुल योग	१११)

वचन

श्री मा० घीसुराम हरनामसिंह जी	४००)
,, प्रतापसिंह जी सरपन्च	५०१)
दफेदार हरनरायणसिंह जी	१०१)
,, महाशय जुगललाल जी	१०१)
,, मनोहरलाल जी	२५)
कुल योग	११२८)

खेड़ी आसरा

सूबेदार श्री अमीरसिंह जी	१०१)
रिस० रामस्वरूप जी	२५)
कुलयोग	१२६)

वचन

श्री सूरतसिंह जी कम्पाउडर	१०१)

लोवा (नूना माजरा)

श्री भरतसिंह जी आर्य पन्च	२५)
,, महाशय भयराम जी	५०)
,, नान्हेराम जसराम जी	३०)
,, भगवान्सिंह जी	१५)
,, नान्हेराम जी	१५)
,, जमादार लखीराम जी	२५)
,, रामकला जी	१५)
,, हरिसिंह जी	१०)
,, सोहनलाल जी	१०)
कुल योग	१९५)

वचन

श्री भरतसिंह जी पञ्च	७६)
महाशय भयराम जी	५१)
श्री भगवानसिंह जी	१०)
,, रामकला जी	१०)
कुल योग	१४७)

नूणा माजरा

श्री हीरासिंह उमरावसिंह जी	१०१)
कप्तान रामस्वरूप जी	५०)
श्रीलाल जी प्रधान	२५)
मा० श्रीराम जी	२०)
श्रीराम हरफूल जी	१५)
,, शेरसिह जी	१०)
,, गिरधारी जी	१०)
,; रतीराम जी	१०)
,, मांगेराम जी	१०)
,, बलराम जी वैद्य	१०)
कुलयोग	२६१)

वचन

कप्तान चन्दरूप जी	१०१)
महाशय दिलीपसिंह जी	१०१)
श्री बलराम जी आर्य वैद्य	९१)
,, मा० श्रीराम जी	८१)
कुल योग	३७४)

टीकरी कलां

महाशय लेखराम काशीराम जी	१०१)
,, श्री होशियारसिंह जी	१०१)
कुल योग	२०२)

वचन

श्री महाशय चिरञ्जीलाल जी	१०१)
,, प्रतापसिंह जीवनसिंह जी	१०१)
सू० मेजर मङ्गलसिंह जी	१०१)
श्री प्रभूदयाल नेतराम जी	१०१)
नम्बरदार दरियावसिंह जी	५१)
श्री ला० श्रीकृष्ण इच्छाराम जी	५०)
श्री महाशय टेकराम जी	२५)
श्री लेखराम शिवराम जी	२५)
श्री खजान सिंह खुशीराम जी	२५)
श्री रणजीतसिंह जी	२५)
श्री जमादार थानसिंह जी	१०)
श्री दिलीपसिंह जी	१०)
कुलयोग	६२५)
नम्बरदार नेकीराम जी	एक गाय

आसौधा

श्री महाशय खुशीराम जी	एक गाय

शोक समाचार

ढाकला रोहतक निवासी श्री बा० रूपचन्द जी आर्य धर्मभावना के धनी व्यक्ति थे। इस मास में उनका सहसा ही देहावसान हो गया।

उन्होंने अपने जीवन काल में १००२) गुरुकुल को नवीन भवन निर्माण के लिये प्रदान किये थे। और अन्तिम समय में १०००) रुपये गुरुकुल को दान देने के लिए वह निर्देश कर गये हैं। ऐसे गुरुकुल सहयोगी का सहसा ही उठ जाना गुरुकुल की भारी क्षति है। हम गुरुकुल की ओर से स्वर्गीय आत्मा के लिए परमात्मा से सद्गति की प्रार्थना करते हैं और शोक सन्तप्त पारिवारिक जनों के शोक में समवेदना प्रकट करते हैं।

निवेदक
मुख्याधिष्ठाता

(पृष्ठ ४ का शेष)

अंग्रेजी राज्य में तो अंग्रेजों को रोते थे। अंग्रेज गया। गये हुए भी सातवां वर्ष है। अब किसका दोष है?

गाय की उपयोगिता को समझते हुए मुगल सम्राट् बाबर ने अपने उत्तराधिकारी पुत्र हुमायु को निर्देश किया था कि "गोहत्या से परहेज करना"

प्राचीन भारत में सृष्टि के आदि से महाभारत पर्यन्त लाखों शताब्दियों तक गाय भारत के आर्थिक दृष्टिकोण का आधार रही। लाखों मनुष्यों का पालन-पोषण गाय से होता रहा। गाय कामधेनु कहलाई।

विदेशी राष्ट्र आज गाय की उपयोगिता को समझ रहे हैं। वह अपने २ देशों में गोवंश की उन्नति, नस्ल-सुधार आदि कामों में जुट गये हैं। परिणाम स्वरूप वहाँ पर दस २० वर्षों के स्वल्प से समय में ही गायें द्विगुणा दूध देने लगी हैं। उदाहरण के लिये लैटविया एक छोटा सा देश है। वहाँ पर सन् १९३० से सन् १९३५ तक केवल पाँच वर्ष के स्वल्प से समय में गाय के दूध की आय का माध्यम ३० प्रतिशत बढ़ गया। इङ्गलैण्ड में भी चालीस वर्षों में द्विगुणा होगया। डेनमार्क तो प्रसिद्ध हो ही गया है। अन्य देश भी गोरक्षण की योजना बना रहे हैं।

साथ ही विदेशी राष्ट्र—'स्कूल मिल्क' योजना बना रहे हैं उनका कहना है कि प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम ६ छ० दूध तो प्रतिदिन मिलना ही चाहिये। ६ छ० से अधिक जितना भी मिल सके अच्छा है।

भारत में जहाँ गाय के दूध की आय का वार्षिक माध्यम छः सात मन है वहाँ जर्मन इङ्गलैण्ड डेनमार्क आदि देशों में भारत से दस पन्द्रह गुणा अधिक सत्तर,

अस्सी और नव्वे मन के लगभग वार्षिक माध्यम दूध की आय का होगया है। और पुनरपि वह देश गोवंश की उन्नति में लगे हुए हैं।

कहा जाता है भारत में कभी दूध की नहरें बहती थीं, परन्तु आजकल तो ३ छ० से भी कम प्रतिदिन दूध प्रत्येक व्यक्ति के भाग में आता है, जब कि इसमें भैंस बकरी आदि का दूध सम्मिलित है। ऐसा भयानक अधः पतन भारत का कभी हुआ होगा! इतिहास साक्षी नहीं—

गायों की संख्या भी इतनी कम है कि राष्ट्रपिता गाँधी जी के "इस देश में फी आदमी गाय की संख्या जितनी कम है उतनी कहीं नहीं है" शब्दों में ही गाय की संख्या बहुत थोड़ी है। परन्तु पुनरपि गायों की गर्दनों पर कुल्हाड़ा चलाया जा रहा है। प्रतिदिन लाखों की संख्या में गायें काटी जा रही हैं। जब कि गान्धी जी गाय की हत्या को अपनी हत्या कहा करते थे। विदेशी सरकार के सामने तो गान्धी जी विवश थे, उनका वश न चलता था। यदि आज गान्धी जी सौभाग्य से जीवित होते तो अपने राज्य में गायों की नृशंस हत्या को देखकर क्या कहते? सोचें और ठण्डे दिल से सोचें। आज गान्धी जी का आत्मा क्या कहता होगा? अपने जनतन्त्र राज्य को सातवाँ वर्ष है, कितनी हत्या इस समय में हुई होगी, अनुमान ही लगाया जा सकता है। गान्धी जी की कल्पना के राज को देखना है। स्वराज्य को सुराज्य बनाना है। देश को उन्नत, स्वावलम्बी, सर्वसम्पन्न बनाना है तो समय की माँग है कि अब तक बन्द न करने का प्रायश्चित्त किया जाये और गोहत्या को बन्द कर दिया जाये।

गोरक्षण में शक्ति को लगाया जाय, नहीं तो देश पिछड़ जायेगा। परिणाम बुरा होगा। भारत की भावी सन्तान हम को हंसेगी। गान्धी जी का आत्मा अभिशाप देगा कि मेरे अनुयायी मेरे स्वप्नों का भारत न बना सके।

स्वराज्य को सातवां वर्ष है, यदि अंग्रेजों के गमन पर ही गोवध बन्द कर गोरक्षण नस्ल सुधार आदि कामों में शक्ति को लगाया होता तो आज कम से कम लैटविया की भाँति तो दूध ३० प्रतिशत बढ़ गया होता।

समय है सरकार जनमत का आदर करे और गोवध को बन्द करे, नहीं तो जनता को चाहिये कि वह अपने निर्वाचित किये हुए भारतीय संसद तथा प्रान्तीय विधान सभाओं के सदस्यों से माँग करे कि तुम हमारे प्रतिनिधि हो। गोवध बन्द कराओ, नहीं तो त्याग पत्र देकर वापस आजाओ। यही एक सीधा और पक्का मार्ग है। इसके अतिरिक्त "नान्यःपन्था विद्यतेऽयनाय"

सुधारक का गोविशेषाङ्क सफल रहा। उसका परिशिष्टाङ्क भी पाठकों के सामने है, इसमें गाय के दूध, घी, दही, तक्र तथा गोबर पर गवेषणात्मक दृष्टि से प्रकाश डाला गया है। आशा है पाठकों के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

तत्काल फलप्रयोग (द्वितीय भाग)

इस पुस्तक में कुछ दिन में हिस्टीरिया ठीक, सन्तानदाता, शर्तिया पुत्रोत्पादक, अफीम छुड़ाने वाला, पेट में मरा बच्चा तुरन्त निकले, कुछ दिन में प्रदर का शर्तिया इलाज, गर्भाशथ के बीसों रोगों पर रामवाण योग, श्वेत प्रदर की चिकित्सा, राजयक्ष्मा का शर्तिया इलाज, गर्भस्राव पर रामवाण, प्रसूत रोगों और योनिविकारों का शर्तिया इलाज, आदि-आदि महिला रोगों पर २०१ रामबाण प्रयोग हैं। पृष्ठ संख्या १६२ है।

साधारणसंस्करण का २), राजसंस्करण २॥), पोस्टेज अलग। आज ही चार रुपया मनीआर्डर से भेजकर रजिस्ट्री से उक्त पुस्तक और 'आयुर्वेद चिकित्सक' वर्ष भर प्राप्त कीजिए।

—सम्पादक 'आयुर्वेद चिकित्सक'
लाखाभवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर

विरजानन्द संस्कृत परिषद्

सीताराम बाजार दिल्ली,
ऋषि बोधोत्सव, १९५४

प्रिय महोदय, नमस्ते ।

यह आप भली-भांति जानते हैं कि संसार को भ्रातृत्व, एकता, उदारता, सुख एवं शान्ति का पाठ पढ़ाने वाला अधिकतम साहित्य संस्कृत भाषा में ही है। वैदिक संस्कृति और सभ्यता का महान् संदेश, जिसके द्वारा महान् और उदात्त आत्माओं ने प्रेरणा प्राप्त कर मानव जीवन को प्रभावित किया, इसी भाषा म लिखित संहित्य में ओतःप्रोत है । इस कारण यह अति आवश्यक है कि संसार में संस्कृत भाषा का प्रचार अधिक से अधिक हो। संस्कृत के प्रचारार्थ एवं वर्तमान युग में संस्कृत के आदि प्रचारक महात्मा विरजानन्द के स्मारक रूप में "विरजानन्द संस्कृत परिषद्" के नाम से एक संस्था भी स्थापित है। जिस की ओर से संस्कृत-प्रसून, संस्कृत विनोद, संस्कृत विज्ञ तथा संस्कृत प्रवीण— इन चार संस्कृत परीक्षाओं का आयोजन किया गया है।

इन परीक्षाओं में छः मुख्य विशेषतायें ये हैं--

१. प्रत्येक परीक्षा में उत्तीर्ण होने का प्रमाण-पत्र दिया जाता है ।

१. प्रत्येक व्यक्ति चाहे जिस परीक्षा में बैठ सकता है।

३. प्रत्येक परीक्षा में उपाधि दी जाती है।

४. इन्हें इस प्रकार बनाया गया है कि घरेलू काम-काज एवं साधारण शिक्षा प्राप्त करते हुये भी परीक्षार्थी इन्हें दे सकें।

५. सभी पाठ्य पुस्तकें शिक्षात्मक एवं ज्ञान वर्धक हैं।

६. परीक्षा शुल्क बहुत ही कम है।

आपसे विनीत प्रार्थना है कि आप इन परीक्षाओं का प्रचार अपने गुरुकुलों, स्कूलों, कालिजों, पाठशालाओं, समाजों, आर्य कुमार सभाओं एवं अन्य संस्थाओं और धर्म स्थानों में करने की कृपा करें, और साथ ही स्थानीय स्त्री-पुरुषों, बालक-बालिकाओं को प्रेरित करें कि वे अधिक से अधिक संख्या में इन में साम्मलित हों। चारों परीक्षाओं में मिलाकर जहां न्यून से न्यून ५ परीक्षार्थी हो जायें और कोई विश्वस्त सज्जन केन्द्राध्यक्ष बनना स्वीकार कर लें, वहां केन्द्र स्थापित कर दिया जाता है। इन परीक्षाओं की पाठविधि, परीक्षाओं की नियमावली, केन्द्र स्थापनार्थ आवेदन पत्र, तथा परीक्षार्थी-आवेदन-पत्र पत्र डाल कर मंगवाये जा सकते हैं ।

आपको सूचनार्थ निवेदन है कि ये परीक्षायें अक्टूबर १९५४ में दशहरे और दीपावली के बीच पड़ने वाले रविवारों को होंगी। निश्चित तिथि की सूचना बाद में दी जावेगी।

परीक्षार्थी-आवेदनपत्र २० जौलाई, १९५४ तक बिना विलम्ब शुल्क के तथा, ३१ जौलाई तक ।) प्रति आवेदन पत्र विलम्ब शुल्क सहित स्वीकार किये जा सकेंगे।

आशा है आप संसार को सुख, शान्ति एवं आनन्द प्रदान करने वाले साहित्य से परिपूर्ण इस देवभाषा के प्रचार यज्ञ में अपना सहयोग प्रदान कर हमें कृतार्थ करेंगे।

आपके उत्तर की प्रतीक्षा में— भवदीय

जगन्नाथ
बी. ए., एल. एल. बी., जे. डी.
प्रभाकर, सिद्धान्त शास्त्री, परीक्षा मंत्री ।

प्रशंसा

अपने साहित्य की प्रशंसा हम स्वयं नहीं करते। वास्तविक प्रशंसा वह है जो दूसरे करें। हमारे साहित्य की उपयोगिता इसी से सिद्ध है कि—

(१) राजस्थान सरकार ने हमारी निम्न पुस्तकों को राजस्थान में इण्टर कालिज तक की शिक्षण संस्थाओं और पुस्तकालयों के उपयोगार्थ स्वीकृत किया है—

❀१. मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)
❀२. महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी	२)
❀३. पूर्वी अफ्रीका और मारीशस में भारतीय संघर्ष	२।)
४. वेद में स्त्रियां	१॥)
५. शिवा बावनी	॥)
❀६. व्यायाम का महत्व	≡)
❀७. ब्रह्मचर्य के साधन (१, २ भाग)	।–)
❀८. हितैषी की गीता	॥।)
९. नेत्ररक्षा	≡)
१०. पापों की जड़ अर्थात् शराब	।–) =)॥
११. हमारा शत्रु अर्थात् तम्बाकू का नशा	।=) =)॥
१२. दन्त रक्षा	≡)
❀१३. कृषि विज्ञान	॥।)

(२) उपरोक्त पुस्तकों में से अन्तिम छः पुस्तकें उत्तर प्रदेशीय सरकार ने पंचायत पुस्तकालयों के उपयोगार्थ स्वीकृत की हैं।

(३) निम्न पुस्तकें भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं के पाठ्य-क्रम में निर्धारित हैं—

१. आदर्श ब्रह्मचारी	।)
२. ब्रह्मचर्यामृत बालसं० ।=), साधारण	=)॥
३. व्यायाम का महत्व	≡)
❀४. महर्षि दयानन्द और महात्मा गान्धी	२)
❀५. मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)

(४) निम्न पुस्तकें विरजानन्द संस्कृत परिषद् की परीक्षाओं में निर्धारित हैं—

❀१. वैदिक गीता	३)
❀२. संस्कृतांकुर	१।)
३. संस्कृत कथा मंजरी	।–)
४. ब्रह्मचर्य शतकम्	॥=)

(५) हमारी निम्न पुस्तकों को ब्रह्मचर्य शिक्षण समिति ने अपने शिविर में स्वाध्यायार्थ निर्धारित किया है—

१. ब्रह्मचर्यामृत	।=), =)॥
२. वैदिक सत्संग पद्धति	।=)

(६) हमने अपने जीवन के चार साल के अल्पकाल में ही ३,००,००० से अधिक छोटी-बड़ी पुस्तकों का प्रकाशन किया है तथा एक प्रकाशन का चौथा, तीन के तीसरे और आठ प्रकाशनों के द्वितीय संस्करण प्रकाशित किये हैं।

हमारे प्रकाशनों की लोकप्रियता का इससे बढ़ कर प्रमाण नहीं हो सकता, आप भी हमारे साहित्य से स्वयं लाभ उठाइये तथा अपने इष्ट मित्रों को भी लाभान्वित होने की प्रेरणा दीजिये। विस्तृत सूची-पत्र मुफ्त मंगावें।

❀इन पुस्तकों का परिचय दूसरी ओर देखें।

निवेदक—

वैदिक साहित्य सदन,
आर्य समाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली ६.

हमारे अष्ट रत्न

१. मनोविज्ञान तथा शिव संकल्प—(सजिल्द) मू० २॥) ले० स्वामी आत्मानन्द सरस्वती । योग अभ्यासियों, भक्ति मार्ग के पथिकों और विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ है । पहला संस्करण हाथों-हाथ समाप्त हो गया था । इस दूसरे संस्करण की भी थोड़ी ही प्रतियां शेष रह गई हैं । शीघ्र मंगाइये, अन्यथा कहीं ऐसा न हो कि आपको पश्चात्ताप करना पड़े ।

२. महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी—(सजिल्द) मू० २) ले०—पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति । इस युग में दो ऐसे महापुरुष हुए हैं जिनकी धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विचारधारा ने इस युग का निर्माण किया है । अनेक अङ्गों में जहां ये दो महापुरुष—ऋषि दयानन्द और महात्मा गांधी —एकमत थे, वहां कुछ एक बातों में उनका परस्पर भेद भी था । उन दोनों के विचारों की समता एवं भेद को जाने बिना वर्तमान राजनीति को समझना कठिन है । इसमें दोनों महात्माओं के धर्म, समाज, तत्वज्ञान तथा राजनीति विषयक विचारों की निष्पक्ष रूप से तुलना की गई है इसका महत्त्व इसी से जाना जा सकता है कि यह भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की परीक्षाओं के पाठ्य-क्रम में निर्धारित है ।

३. पूर्वी अफ्रीका और मारीशस में भारतीय संघर्ष—मू० २।) ले०—स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी महाराज । अनेक चित्रों से आभूषित इस पुस्तक में श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी महाराज द्वारा की गई मारीशस, टांगानीका, केनिया, यूगैंडा आदि देशों की यात्रा का विशद विवरण सरल एवं रोचक भाषा में दिया गया है । इन देशों की धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक अवस्था, वहां पर भारतीय संस्कृति का प्रचार एवं उसकी रक्षार्थ किये गये संघर्ष का वर्णन दिया गया है । एक बार आरम्भ कर देने पर पुस्तक छोड़ने को मन नहीं चाहता ।

४. ब्रह्मचर्य रक्षा के साधन—ब्रह्मचर्य रक्षा के साधनों को भली भांति समझने के लिये आचार्य भगवान् देव जी ने यह लेखमाला आरम्भ की है, जो कि ग्यारह भागों में समाप्त होगी । इसके प्रथम एवं द्वितीय संयुक्त भाग में प्रातः जागरण, चक्षुः-स्नान उषः-पान तथा शौच आदि के महत्त्व तथा प्रकार, तृतीय भाग में दांतों की उपयोगिता तथा उनके पुष्ट बनाने की विधि, तथा पंचम भाग में स्नान का समय, स्थान एवं वास्तविक विधि और संध्या की उपयोगिता तथा यज्ञ आदि पर सप्रमाण प्रकाश डाला गया है । मूल्य क्रमशः ।-), ≡), ।=) है । शेष भाग भी यथासमय प्रकाशित होंगे ।

५. हितैषी की गीता—मू० ॥।) इसमें भगवद् गीता के श्लोकों का सुन्दर एवं सरस हिन्दी दोहों में अनुवाद है । अक्षर मोटे और सरल होने के कारण यह सर्व साधारण के लिये और भी अधिक उपयोगी हो गई है । प्रथम चार पुस्तकों में से कोई एक लेने पर मूल्य ॥)

६. कृषि विज्ञान—मू० ॥।) ले०—प्रिं० शिवसिंह जी एम० ए० । इसमें खेती-बाड़ी सम्बन्धी बहुत सी आवश्यक बातों का वर्णन किया गया है । प्रत्येक व्यक्ति को इसे पढ़कर लाभ उठाना चाहिये ।

७. वैदिक गीता—(सजिल्द) मू० ३) परिवर्धित एवं संशोधित तृतीय संस्करण, सुन्दर दुरंगी छपाई । आज तक गीता के कितने ही भाष्य हो चुके हैं । किन्तु किसी भी विद्वान् का आजतक यह साहस नहीं हो सका था कि गीता-रत्न पर आई हुई रेत मिट्टी को अपनी तीक्ष्ण लेखनी से दूर करे और उसके शुद्ध और उज्वल स्वरूप को जनता के सम्मुख रखे । यह श्रेय पुस्तक के लेखक स्वामी आत्मानन्द जी महाराज को ही प्राप्त है कि उन्होंने इस काम को इतनी सफलतापूर्वक पूरा किया है । गीता एवं कृष्ण भक्तों के लिये यह अनोखा ग्रन्थ है ।

८. संस्कृतांकुर—मू० १।) ले०—स्वामी वेदानन्द जी 'तीर्थ' । यह संस्कृत सीखने वालों के लिये अपूर्व पुस्तक है । जो इस प्रकार लिखी गई है कि साधारण सा पढ़ा लिखा व्यक्ति भी बिना किसी विशेष सहायता के संस्कृत सीख सकता है । इसमें रटन्त की भी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती । स्कूलों के आठवीं श्रेणी के विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त लाभदायक है ।

धन्यवाद

सुधारक के १० ग्राहक बनाने वाले सज्जन के नाम एक वर्ष तक सुधारक बिना मूल्य भेजा जाता है । कितनों ने बिना इस इच्छा के कर्तव्य भावना से ग्राहक बनाये हैं। सुधारक के निम्नलिखित प्रेमियों ने अनेक ग्राहक बना कर हमें सहयोग दिया है। इनमें से ऐसे सज्जन भी अनेक हैं जिन्होंने पचास-पचास तथा इनसे भी अधिक ग्राहक बनाये हैं। कितने ही ऐसे भी होंगे जिनका हम नाम भी नहीं दे सकें हैं, उनके नाम अग्रिम अङ्कों में दे दिये जायेंगे। सब सहयोगियों के प्रयत्न के लिये हम हृदय से आभारी हैं। और भी नवीन ग्राहक बनाकर सुधार कार्य में हमें सहयोग देंगे ऐसी आशा है ।

१. श्री वैद्य कर्मवीर जी नरेला ।
२. ,, रणधीरसिंह जी डिस्ट्रेक्ट बोर्ड रोहतक ।
३. ,, मौजीराम जी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड रोहतक ।
४. ,, राजपाल जी रेल्वे रोड़ रोहतक ।
५. ,, भीष्मप्रताप जी शास्त्री बहु अकबरपुर ।
६. ,, सोमवीर जी वैद्य दादरी ।
७. ,, मा० प्रतापसिंह जी बिरहीकलां ।
८. ,, मा० उदयराम जी मेई (गलकटा)
९. ,, भरतकुमार जी शास्त्री पञ्चग्राम ।
१०. ,, सुखदेव जी शास्त्री आसन ।
११. ,, मा० दीपचन्द जी कासनी ।
१२. ,, मा० शिवराम जी सतनाली ।
१३. ,, मा० चन्दराम जी बिरहीकलां ।
१४. ,, मा० नत्थूराम जी खूंगा कोठी जीन्द ।
१५. ,, सेवाराम जी आर्योपदेशक पूठ खुर्द देहली ।
१६. ,, मुख्याध्यापक रामरिछपाल जी चान्दवास ।
१७. ,, रिसालसिंह जी महाराणा ।
१८. ,, अतरसिंह जी गढ़ माजरा ।
१९. ,, फतहसिंह जी रैया ।
२०. ,, मा० हरकेराम जी सुंडाना ।
२१. ,, मा० रामस्वरूप जी अहीर कालेज रिवाड़ी ।
२२. ,, मा० मांगेराम जी निडाना ।
२३. ,, मा० शिवनारायण जी पञ्चग्राम ।
२४. ,, रघुवीरसिंह जी हैडमास्टर हस्तशाल ।
२५. ,, दुलीचन्द जी बादली ।
२६. ,, पं० मोहनाचार्य जी वेदज्ञ हैदराबाद ।
२७. ,, पं० टेकराम जी भापड़ौदा ।
२८. ,, मा० छतरसिंह जी तलाव ।
२९. ,, मा० दीपचन्द जी बिरहीकलां ।
३०. ,, भूपसिंह जो बसई ।
३१. ,, सुखदेव जी शास्त्री रोहतक ।
३२. ,, मा० भरतसिंह जी रोहतक ।
३३. ,, पं० सोहनलाल जी लूखी ।
३४. ,, आचार्य सुरेन्द्रकुमार जी हाईस्कूल कवाली ।
३५. ,, रवीन्द्रनाथ जी शास्त्री हाई स्कूल रेवाड़ी ।
३६. ,, मा० जगमाल जी बिगोआ ।
३७. ,, शीशराम जी सिपाही देहली ।
३८. ,, देवेन्द्रनाथ जी शास्त्री समयपुर बादली ।
३९. ,, मा० दरयावसिंह जी ढाकला ।
४०. ,, जगदेवसिह जी सिद्धान्ती सम्राट् प्रेस देहली ।
४१. ,, जगन्नाथ जी बी०ए०एल०एल०बी० देहली ।
४२. ,, मनफूलसिंह जी डीघल ।
४३ ,, विश्वमित्र जी 'निराला' भटगांव ।
४४ ,, सत्यव्रत जी हैदराबाद ।
४५ ,, रतीराम जी बी० टी० श्रेणी रोहतक ।
४६ ,, मामराज जी गौरीपुर ।
४७ ,, बलराम जी वैद्य नूना माजरा ।
४८ ,, जागेराम जी देवली ।
४९ ,, मा० भागेराम जी चमराड़ा ।
५० ,, भरतसिंह जी शास्त्री किढ़ौली
५१ ,, बलबीरसिंह जी रिटौली ।

सात्विक दान

कीटकलां निवासी श्री महाशय धर्मसिंह जी ने दस आर्य विद्वानों के नाम एक वर्ष सुधारक भेजने के लिये २०) दान दिये हैं। इन महाशय जी को इस शुभ सात्विक दान के लिये हार्दिक बधाई । अन्य धनी मानी आर्य महानुभाव भी इस प्रकार का शुभ सात्विक दान देकर सुधार कार्य में सहयोग दें ।

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक की

बहुमूल्य औषधियां

वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य में एक मास के लिये विशेष रियायत [न्यूनता]

च्यवनप्राश

इसी ऋतु के ताजे आँवले से तैयार किया गया स्वादिष्ट, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य ७) सेर, ५ सेर लेने पर ६) सेर

स्वप्नदोषामृत

इस भयङ्कर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग को दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे, पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। मूल्य ५) रुपये

सूखा रोगामृत

जिन गृहस्थों के बालक सूखा रोग (मसान) से सूख-सूख कर मरते हैं। अनेक प्रकार चिकित्सा करने पर भी कोई लाभ नहीं होता। ऐसे निराश रोगियों के लिये यह औषधि अचूक है। सहस्रों रोगियों पर अनुभूत है। इसके अतिरिक्त बालक के हरे पीले दस्त, अजीर्ण, अरुचि, दाँत निकलते समय के रोग, वमन, निर्बलता और ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखे। मू० १ मास के सेवन तथा मालिश के लिये १२)

पाचनामृत

मन्दाग्नि, अरुचि; अजीर्ण (कब्ज), पेट का फूलना, पेट का भारीपन, शूल, जी मिचलाना, वमन, खट्टी डकार आदि पेट के सभी रोगों को नष्ट कर भूख को बढ़ाता है। आंतों के सब रोगों को दूर कर पाचन शक्ति को बल देता है। पुराने से पुराने तिल्ली जिगर की अचूक औषधि है।

मूल्य एक शीशी ४)

पामामृत (दाद खुजली)

यह सब ही खुजली दादादि चर्म रोगों के लिये अत्युत्तम औषध है। खुजली सूखी हो या पकने वाली, यह सब प्रकार की खुजली के लिये रामबाण औषध है। इसके प्रयोग करने के पश्चात् किसी अन्य औषधि की आवश्यकता नहीं। दाद को जड़ से नष्ट करती है।

मूल्य २)

बाल रोगामृत

बालकों के हरे पीले दस्त, अपच, अजीर्ण (कब्ज), अरुचि, दांत निकलते समय के रोग, सूखिया (मसान) रोग, वमन, निर्बलता, ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखें।

मूल्य छोटी शीशी २) एक शीशी ५)

कर्ण रोगामृत

कान से पीप आना, बहरापन और प्रत्येक प्रकार की कर्ण पीड़ा को दूर करने के लिये यह उत्तम औषधि है। प्रति दिन सेवन करने से कानों का कोई रोग नहीं होता और मस्तिष्क की शुष्कता दूर होती है।

मूल्य एक शीशी १)

ज्वरामृत

यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की रामबाण औषध है। बिगड़े हुये मलेरिया, विषम ज्वर को दूर करने में अद्वितीय औषध है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन सिर दर्द, स्वप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है।

सेवनविधि—मात्रा १ तोला से २ तोला तक समान जल मिलाकर, बढ़े हुये ज्वर में गरम जल मिलाकर तथा उतरे हुये में ताजा जल मिलाकर दिन में तीन बार लेवें। आवश्यकतानुसार अधिक बार भी ले सकते हैं।

मूल्य छोटी शीशी २) बड़ी शीशी ५)

उदर सुधा रस

यह रस उदर के प्रत्येक प्रकार के रोग के लिये अमृत का काम करता है। पेट का कोई रोग रहने नहीं पाता। मरोड़ तथा दर्द को तो देते के साथ ही शान्त करता है। अजीर्ण दूर करके आरोग्य प्रदान करता है।

मूल्य ३) तोला

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है, इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजले) को महौषधि है। वीर्यवर्द्धक कास (खांसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपेदिक) श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढङ्ग की एक ही औषधि है।

छोटी शीशी २) मूल्य ५) प्रति शीशी

ब्राह्मीघृत

यह घृत आयुर्वेद शास्त्र की विधि के अनुसार बनाया गया है। इसका सेवन कुष्ठ (कोढ़) मृगी (हिस्टीरिया), मस्तिष्क की निर्बलता, चक्कर आना, याद किये हुये पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है और जिसकी स्मरण शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिये श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी, दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष, सब प्रकार के धातु प्रमेह को दूर करता है, इसके सेवन से स्मरण शक्ति खूब बढ़ती है।

मूल्य आध पाव ४) एक सेर ३२)

सञ्जीवनी तैल

मूर्च्छित लक्ष्मण को चैतन्य देने वाली इतिहास-प्रसिद्ध बूटी से तैयार किया गया यह तैल घावों को भरने में जादू का काम करता है। भयङ्कर फोड़े फुन्सी, गले-सड़े जख्मों तथा आग से जले जख्मों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भर कर ठीक कर देता है। खून का बहना तो तुरन्त ही बन्द हो जाता है। चोट की भयङ्कर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है। मूल्य छोटी शीशी ।।=) बड़ी शीशी ५)

फाये में भरकर बार-बार चोट आदि पर लगायें।

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इसके लगाने से आंखों के सब रोग-जैसे आंख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट), दूर का कम दीखना (लांग साइट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आंसे के सब रोगों की राम बाण औषध है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ स्वच्छ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है। सेवन विधि-पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रातः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ।।) शीशी

स्त्रीरोगामृत

यह स्त्रियों के प्रत्येक रोग में रामवाण है। रक्त व श्वेतप्रदर तथा मासिक धर्म के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। प्रसूत रोगों को नष्ट करता है।

मूल्य ५) बड़ी शीशी।

नपुंसक संजीवनामृत

स्वप्नदोषादि रोगों तथा अन्य अप्राकृतिक कारणों से जो पुरुष नपुंसक (नामर्द) हो चुके हैं। उनके लिये यह औषधि अमृत के समान लाभदायक है। पुनः पुरुषत्व प्रदान करती है।

ब्राह्मी आंवला तैल

यह मस्तिष्क की निर्बलता, व उष्णता को दूर करता है। बालों को काला करता है। गंज बालों के झड़ने को दूर करता है। मृगी, पागलपन, हिस्टीरिया, आदि में भी इसका उपयोग हितकर है।

मूल्य ४) पाव।

अमृतघृत

यह घृत सब प्रकार के विष स्थावर (संखियादि) जंगम (सर्प बिच्छू विषादि) को दूर करता है। अपस्मार, उन्माद, क्षय, भूतग्रह, उदरविकार, पाण्डु, प्लीहा, कामला, हनुस्तम्भ आदि रोगों में विशेष लाभकारी है, विषनाश करने में तो अमृत का काम करता है। यह मृत सदृश पुरुषों को भी जीवन प्रदान करता है। अतः इसे अमृत कहा है। यह सब विषों के नाशक घृतों में श्रेष्ठ है।

मूल्य ४) आध पाव ३२) सेर

हत् योगराज गूगल

यह वात रोगों के लिये रामवाण औषध है। जोड़ों का दर्द गठिया, अर्धाङ्ग, लकवा, रींगनबाव, हाथ पैरों का कम्पन, पीठ जांघ आदि की पीड़ा, हाथ पावों का सूखना आदि वायु रोगों को दूर करने के लिये इसके समान कोई औषध नहीं है।

१ तोला मूल्य २॥) शीशी।

फलघृत

यह स्त्रियों के गर्भाशय के सभी रोगों को दूर करता है। जिन स्त्रियों को गर्भ नहीं ठहरता, या ठहर कर गिर जाता है, या सन्तान निर्बल होती है, उनके लिये अत्युत्तम है। स्त्रियों के शरीर या कमर दर्द के लिये बहुत उत्तम है। स्त्रियों के आर्तव दोष तथा पुरुषों के वीर्य दोष दूर करता है। जिनके बच्चे मर जाते हैं। उन गृहस्थों को इसका सेवन करना चाहिये। जिनके कन्यायें ही होती हैं इसके सेवन से पुत्र उत्पन्न होता है। इसका अनुभव तो सेवन करके ही किया जाता है। संतान रूपी फल का देने वाला यथा नाम तथा गुणकारी है। प्रत्यक्ष में प्रमाण क्या। सेवन करें और फल प्राप्त करें।

मूल्य ४) आध पाव ३२) सेर।

१—यदि आप उत्तम औषधियां प्राप्त करना चाहें तो सब प्रकार के आसव-अरिष्ट, रस, भस्में, अवलेह, पाक, चूर्णादि हम से मंगा कर देखें। उत्तम रीति से हम शास्त्रोक्त विधि से बनाते हैं।

स्वास्थ्यवर्धक चाय

यह चाय स्वदेशी, ताजी एवं शुद्ध जड़ी बूटियों से तैयार की गई है। वर्तमान चाय की भांति यह नींद और भूख को न मार कर खांसी, जुकाम, नजला, सिरदर्द, खुश्की, अजीर्ण, थकान, सर्दी आदि रोगों को दूर भगाती है। मस्तिष्क एवं दिल को शक्ति देती है।

मू० १ छटांक ।)

रियायत के विषय में आवश्यक सूचना

इनके अतिरिक्त हमारे यहाँ आयुर्वेद की सभी प्रसिद्ध औषधियां शास्त्रोक्त रीत्यनुसार तैयार होती हैं तथा उचित मूल्य पर मिलती हैं ।

च्यवनप्राश के अतिरिक्त अन्य सब औषधियों को १०) के मूल्य से अधिक एक साथ लेने पर १२॥) प्रतिशत, २५) से अधिक लेने पर २५) प्रतिशत कमीशन दिया जावेगा । ५०) से अधिक लेने पर कमीशन के अतिरिक्त पैकिंग तथा डाकव्यय माफ कर दिया जायेगा ।

कोई भी ग्राहक रियायत के दिनों में पेशगी अगाऊ भेज कर साल भर तक रियासती मूल्य से औषधियां प्राप्त कर सकते हैं ।

हमारी एजेन्सियां

१—गुरुकुल फार्मेसी रेलवे रोड रोहतक ।
२—नवजीवन संचारक कम्पनी, आर्यसमाज मन्दिर सीताराम बाजार देहली ।
३—वैद्य सोमवीर आयुर्वेदाचार्य, मार्केट रोड डालमियां दादरी महेन्द्रगढ़ ।
४—जगराम आर्य ग्राम पोस्ट समचाना जि० रोहतक ।
५—फतहसिंह आर्य ग्राम पोस्ट रैय्या जि० रोहतक ।
६—अतरसिंह आर्य माजरा पोस्ट जहाजगढ़ जि० रोहतक
७—कुरड़ाराम आर्य दातोली पोस्ट चिड़िया जिला महेन्द्रगढ़ ।
८—शिवनारायण जी आर्य पंचगामा पोस्ट बाढ़ड़ा जिला महेन्द्रगढ़ ।
९—दुलीचन्द आर्य आर्यनगर पोस्ट बाढ़ड़ा जि. महेन्द्रगढ़
१०—बलराम आर्य वैद्य ग्राम पोस्ट नोनामाजरा जिला रोहतक ।
११—मा० दलीपसिंह आर्य लूलोढ़ पोस्ट गोरिया जिला रोहतक ।
१२—प्यारेलाल आर्य ग्राम पोस्ट भापड़ौदा जि० रोहतक
१३—कुन्दनलाल आर्य ग्राम पोस्ट इमलोटा जि. महेन्द्रगढ़
१४—परशुराम आर्य जनरल मर्चेण्ट झज्झर जि० रोहतक
१५—सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज देहली ।
१६—श्री रघुवीरसिंह बोडा, ग्राम-पोस्ट-एलम जिला मुजफ्फरनगर ।

इन से भिन्न अन्य भी बहुत सी छोटी-छोटी एजेन्सियां हैं ।

आर्य महाविद्यालय किरठल [मेरठ] का ३४वां वार्षिकोत्सव

१२-१३-१४ मार्च सन् ५४ को होगा।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में देववाणी संस्कृत, वैदिक सिद्धान्तों तथा आर्य समाज का ठोस प्रचार करने वाली यह एक अद्वितीय संस्था है। बनारस की शास्त्री, आचार्य आदि उच्चतम संस्कृत परीक्षाओं के साथ-साथ वैदिक साहित्य के शिक्षण का समुचित प्रबन्ध है। इस संस्था के अनेक स्नातक विभिन्न क्षेत्रों में बड़ी सफलता के साथ समाज सेवा कर रहे हैं। विशेष परिचय के लिये पत्र व्यवहार करें ।

रघुवीरसिंह शास्त्री—मंत्री

गोवध बन्द कराने के लिये
३६ करोड़ हिन्दुओं की मांग
क्रान्तिकारी विचारों के साथ !
"गोरक्षण"

गोसेवा में भाग लेने के लिये आज ही
—२॥) वार्षिक गोदान—
भेजकर ग्राहक बनिये । नमूने के लिये ।-) का टिकट भेजिये । नमूना मुफ्त नहीं भेजा जाता । धार्मिक संस्थाओं और छात्रों को अर्ध मूल्य में । ग्राहक बनाने वालों को भरपूर कमीशन दिया जाता है । गोवध बन्दी कराने तथा गोरक्षा प्रचार के लिए स्वयं ग्राहक बनें तथा औरों को बनावें । चन्दा मनीआर्डर से नीचे लिखे पते पर भेजिए ।

मैनेजर—"गोरक्षण" रामनगर बनारस ।

पृष्ठ ५४ का शेष

शीतपित्तामृत

यह शीत पित्त अर्थात् छपाकी पित्त निकलने के रोगों को सर्वथा दूर करने वाली औषध है। पुरानी से पुरानी बिगड़ी हुई शीत पित्त छपाकी इससे दूर हो जाती है। इसके प्रयोग से इसका मूल ही नष्ट हो जाता है।

मूल्य ४) एक मास के सेवनार्थ।

दन्त रक्षक मंजन

दांतों से खून वा पीप का आना, दांतों का हिलना, दांतों के कृमि रोग, सब प्रकार की दांतों की पीड़ा तथा रोगों को दूर भगाता है और दांतों को मोतियों के समान चमकाता है। मूल्य १ शीशी ।।)

त्रिफलादि घृत

यह घृत आंखों के लिये अत्युत्तम है। इसकी जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है, यह आंखों के समस्त रोगों के लिये रामबाण है। इसके सेवन से नेत्रों का कोई भी रोग नहीं रहता। इससे रतौंधी, आंखों की खुजली; पानी जाना, धुंधजाला इत्यादि सब रोग दूर होते हैं, आंखें निर्मल होकर चमकने लगती हैं। सौ वर्ष तक नेत्र ज्योति नवयुवकों के समान बनी रहती है। मोतियाबिंद को भी लाभदायक है। आंखों के छोटे बड़े सब रोगों को हितकारी है।

मूल्य आध पाव ४ एक सेर ३२)

रक्त पित्तामृत

शरीर के मुख, नासिका, गुदा आदि किसी भी मार्ग से तथा सांप के काटने, बवासीर तथा अन्य किसी भी रोग के कारण कितनी ही अधिक मात्रा में रक्त [लहू] निकलता हो, इसको कुछ ही मात्रा देने से तुरन्त रुकता है। पित्तज्वर, हाथ पांवों की जलन, हृदय व दिल की धड़कन आदि पित्त के सभी रोगों में रामबाण है।

मू० ४)

व्रणामृत

भयङ्कर फोड़े, फुन्सी, गले-सड़े पुराने जख्मों तथा अनेक वर्षों के नासूर [सरह] आदि रोगों की अद्वितीय औषध है। दिनों का काम घण्टों व घण्टों का काम मिनटों में करती है। मूल्य एक शीशी १)

प्रसूतामृत

यह प्रसूता स्त्री [जच्चा] के सभी रोगों अर्थात् ज्वर, कास [खांसी], अतिसार [दस्त] आदि रोगों को दूर करता है। प्रसूता की निर्बलता को दूर कर पुनः बल जीवन और शक्ति प्रदान करता है। अत्यन्त लाभदायक औषध है। मूल्य ५)

दन्त रक्षक तैल

दांतों तथा मुख के सभी रोग दूर करता है। प्रतिदिन के प्रयोग से दांत मजबूत होते हैं। कोई रोग नहीं होता। दन्त पीड़ा आदि सभी रोग नष्ट होते हैं। इसका प्रतिदिन दातुन की तरह प्रयोग करना चाहिये।

मूल्य ।।) शीशी

अर्शरोगामृत

यह औषधि सब प्रकार के अर्श (बवासीर) के लिये रामबाण का काम करती है। हमारी रसायनशाला में इसे तैयार करने के लिये कई मास तक भरसक प्रयत्न किया गया है। इसकी तीन-चार मात्रा के सेवन मात्र से ही खून का आना तो तुरन्त बन्द हो जाता है। यह औषधि जादू के समान तुरन्त प्रभाव दिखाती है। प्राचीन आयुर्वेद का इसे चमत्कार कहना चाहिये। संसार में इससे बढ़ कर अर्श के लिये कोई औषधि नहीं।

सेवन विधि—एक से दो गोली तक प्रातः-सायं धारोष्ण दूध के साथ सेवन करें। यदि कोष्ठबद्धता (कब्ज) के कारण मल त्यागते समय रक्त आता है तो गोली लेते समय एक तोले से दो तोले तक इसबगोल के साथ मिला कर सेवन करें। मूल्य एक मास के लिये १०)

बालरोगामृत रस

बालकों के प्रत्येक रोग, हरे पीले दस्त, वमन, अजीर्ण, अपचन तथा दांत निकलते समय के सभी रोग, ज्वर खांसी आदि को दूर करता है। तथा बालकों को मोटा करता हैं।

मूल्य एक मास की औषधि ६) नमूना १)

ग्राहकों से नम्र निवेदन

इस सुधारक का 'गो-अङ्क' का परिशिष्टांक मार्च-अप्रैल (फाल्गुन-चैत्र) दोनों महीनों का प्रकाशित कर आपकी सेवा में भेज रहे हैं। यह-अङ्क पढ़कर इसके विषय में अपनी शुभ सम्मति अवश्य भेजने की कृपा करें। यह अङ्क पहुँचने पर आठ मास के सुधारक के अङ्क आपके हाथ में पहुंच गये, अतः यदि आपने अभी तक इसका लागत मात्र मूल्य २) नहीं भेजा है तो तुरन्त ही मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें। गो-अङ्क के परिशिष्टाङ्क में 'आयुर्वेद शास्त्र में गोदुग्ध चिकित्सा' 'गोघृत चिकित्सा' 'गोदधि तथा गोतक्र चिकित्सा' 'गोमूत्र चिकित्सा' 'गाय-भैंस के दूध के गुणों की तुलना' आदि अनेक उपयोगी विषयों पर लेख हैं, जिनको पढ़कर तथा लाभ उठाकर आप प्राचीन ऋषियों के गुण गायेंगे। जो सज्जन ग्राहक नहीं हैं उनको यह अङ्क ।॥) में मिलेगा।

❀ 'व्यायाम-सन्देश' विशेषाङ्क ❀

सुधारक का यह अङ्क मार्च-अप्रेल मास का न होकर मई-जून का 'व्यायाम सन्देश' विशेषाङ्क होगा, जिसका मूल्य लगभग दस आने के होगा। जो सज्जन इसका २) वार्षिक चन्दा भेज कर ग्राहक बन चुके हैं या बन जायेंगे, उन्हें यह अङ्क बिना विशेष मूल्य के साधारण अंक के रूप में मिलेगा। इस अंक में देशी-विदेशी, सभी प्रकार के व्यायामों की रीति और लाभ-हानि का प्रकाश किया जायेगा। इसमें आसनों के चित्र, आधुनिक भीम प्रो० राममूर्ति के दण्ड-बैठक की चित्र सहित विधि, मुग्दर-चालन आदि अनेक व्यायामों की उत्तम सामग्री दी जायेगी, जिसका एक स्थान पर मिलना दुर्लभ होगा। यह व्यायाम सन्देश नाम की पुस्तक ब्र० भगवान् देव जी द्वारा लिखित, जिसकी जनता पर्याप्त समय से मांग कर रही थी, आप को सुधारक के विशेषाङ्क के रूप में भेंट की जायेगी। अतः आप सबका कर्तव्य है कि सुधारक के अधिक से अधिक ग्राहक बनाकर सहयोग देने की कृपा करें।

व्यवस्थापक 'सुधारक'

पता

ग्राहक संख्या ५४6

सेवा में— श्री जगदीशचन्द्र जी
℅ मुरारी ब्रादर्स
मु०
कमलानगर
पो०
देहली
जि०
Delhi

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

ओ३म् सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष १
अङ्क ११

गुरुकुल झज्झर रोहतक, आषाढ़ सं० २०११ वि०
जुलाई १९५४, दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

भारतीय स्वातन्त्र्य युद्ध के क्रान्तिकारी अग्रणी

श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा

सन् १८५७ के भारतीय स्वातन्त्र्य का प्रथम प्रयत्न विफल होने पर भी जिन क्रान्तिकारी भारतीय नेताओं ने स्वतन्त्रता आन्दोलन को पुनः चालू किया उन में श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा सर्वोच्च स्थान रखते हैं। आपने युग विधाता महर्षि दयानन्द से राजनीतिक शिक्षण लेकर भारत और विदेशों में भारतीय परतन्त्रता की बेड़ियों को काटने में अग्रणी का कार्य किया। आप ने इसीलिये इङ्गलैण्ड, फ्रांस और स्वीट्जरलैण्ड आदि देशों में रह कर स्वतन्त्रता आन्दोलन को आगे बढ़ाया। स्वातन्त्र्य-वीर सावरकर जी आदि क्रान्तिकारी नेताओं ने आपसे ही विदेशों में अध्ययन करते समय राजनीतिक कार्य विधि का परिचय प्राप्त किया। आपने कुछ वर्षों तक ही भारत में कार्य करके विदेशों में ही रहना स्वीकार कर लिया था। ऋषि दयानन्द से आपका पत्र-व्यवहार सदा चलता रहता था। आपका देहावसान फ्रांस में ही हुआ।

—✻✻—

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्झर, रोहतक
सह सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

[श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न—प्रणीतम्]

मन्त्र—इयं समित् पृथिवी द्यौर्द्वितीयोतान्तरिक्षं समिधा पृणाति। ब्रह्मचारी समिधा मेखलया श्रमेण लोकांस्तपसा पिपर्ति ॥ (अथर्व० ११।५।४)

इयं समिद्गौः प्रथमाऽपरा द्यौ—
उतान्तरिक्षं समिधा पृणाति।

श्री ब्रह्मचारी समिधा सुमौञ्ज्या
श्रमेण लोकांस्तपसा पिपर्ति ॥२२॥

अर्थः—यह पृथिवी पहली, द्युलोक दूसरी और अन्तरिक्ष तीसरी समिधा है, दृष्टान्त रूप से प्रतिदिन होम करते हुए उत्तम ब्रह्मचारी आचार्य रूप अग्नि में डाली गई तीन समिधाओं को पूरित करता है। एवं वह समिधा, मेखला श्रम और तप से लोक=संसार की पालना व पूर्ति=तृप्ति करता है।

पदार्थजातं पृथिवी नभस्थं
विज्ञाय वर्णी गुरुदेवपादात्।
मौञ्ज्याञ्चितोऽलं तपसा श्रमेण
ब्रह्मावबोधं लभते सुधीन्द्रः ॥२३॥

अर्थः—मेधावी कटिबद्ध तत्पर ब्रह्मचारी गुरु चरणों में उपस्थित होकर पृथ्वी, द्यु व आकाशस्थ सम्पूर्ण पदार्थों को जानकर तप एवं परिश्रम से ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

विज्ञानदीप्त्या कटिबद्धताभिः
परिश्रमेणाथ तपःक्रमेण।
सुब्रह्मचारी सुगुरौ कृशानौ
सामित्समिद्धो जनतां धिनोति ॥२४॥

अर्थः—उत्तम ब्रह्मचारी श्रेष्ठ आचार्य रूप अग्नि में पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौ तीनों समिधाओं से क्रमशः स्थूलसंसार, भूः-अग्नि-प्राण व सूक्ष्मसंसार, भुवः-वायु-अपान एवं दिव्यसंसार, आत्मा-स्वः-आदित्य और व्यान ज्ञान प्राप्त करके समिद्ध=दीप्त हुआ विज्ञान दीप्ति, कटिबद्धता, परिश्रम एवं तप से जनता को संतृप्त करता रहता है।

ब्रह्माण्डवत् पिण्डगतं समस्तं
विज्ञाय वस्तुव्रजमात्मलीनः।
स ऊर्ध्वरेता व्रतिनां धुरीणः
प्रीणाति वर्णान् निजपुण्यवृत्तैः ॥२५॥

अर्थः—वह ऊर्ध्वरेता अध्यात्मरत व्रतीन्द्र, ब्रह्माण्डवत् पिण्डस्थ समस्त वस्तु समुदाय को जान कर अपने सच्चरित्र से ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य और शूद्र चारों वर्णों की पालना करता है।

एधोवत्स्वं मानसं नैजदेह—
माचार्याग्नौ ब्रह्मचारी जुहोति।
व्योम्नो ज्ञानं पार्थिवञ्चाधिगम्य
प्रोन्नेतुं स स्वान्तकायौ समर्थः ॥२६

अर्थः—ब्रह्मचारी समिधा की न्याई आत्मा-मन और शरीर को आचार्य रूप अग्नि में होम करता है=समर्पित करता है=तादात्म्य बनाता है। वहाँ से आकाशीय व पार्थिव ज्ञान प्राप्त करके क्रमशः मन और शरीर को अत्युन्नत करने में समर्थ हो जाता है।

आत्मानञ्च ब्रह्म दिव्यानलेऽसौ
हुत्वा दिव्यं ज्ञानमाप्नोति वर्णी।
दीप्तध्येयं लोकमानस्त्रिलोके
जैवीं शक्तिं वर्द्धयत्यद्भुताञ्च ॥२७

अर्थः—वही ब्रह्मचारी परब्रह्मरूप दिव्य अग्नि में आत्मा की आहुति देकर दिव्यज्ञान=ब्रह्मज्ञान=मोक्षानुभूति सम्पादन करता है। तथा त्रिलोकी में उज्ज्वल=महान् ध्येय को लक्षित करके आत्मा की सब प्रकार की अद्भुत शक्तियों को बढ़ाता है।

सम्पादकीय—

इसलाम और ईसाई मतों के प्रचार से भारतीय राष्ट्र को अपार क्षति पहुंची है। यद्यपि आर्यावर्त्त में पहिले भी अनेक साम्प्रदायिक-मतमतान्तर थे, परन्तु इन मतान्तरों में दार्शनिक मतभेद रहते हुये भी राष्ट्र की सामाजिक और राजनीतिक समस्या में कुछ भी विभिन्नता नहीं थी। इसलाम और ईसाइयत की जन्मभूमि अभारतीय है अतः इन दोनों सम्प्रदायों के प्रचार से भारत के भीतर अभारतीयता हो जाती है। इसलाम को स्वीकार करने पर किसी भी भारतीय नवीन मुसलमान को राम-कृष्ण, गंगा-यमुना, वेद-शास्त्र, व्यास-दयानन्द, गौ-घोड़ा आदि पर श्रद्धा न रहकर रुस्तम-सोहराब, दजला-फरात, कुरान-हदीस, मोहम्मद-अली, ऊंट-भेड़ आदि पर अकीदत हो जाती है। जिन माता पिता, कुल और राष्ट्र में जन्म लिया है वे गैर जंचते हैं और गैर अराष्ट्रिय तत्वों को अपना समझने लगता है। गौ जैसे महोपकारी पशु को आर्य जाति ने माता का स्थान दिया है, परन्तु इसलाम में उसको मारना और खाना जायज करार दिया गया। भारतीय संस्कृति और सभ्यता के विरुद्ध आचरण करना मानो इसलामी संविधान ही है। ईसाइयत के प्रचार में उपयु'क्त इसलामीयत के सब दोष विद्यमान हैं हो। इन सब से आगे बढ़ कर एक दोष यह भी है कि ईसाई प्रचारकों को अमेरिका आदि विदेश पानी की भाँति रुपया बहाने के लिये खुली सहायता देते हैं। इसी के बल-बूते पर ईसाई प्रचारक भारत के शोषित, पीड़ित, उपेक्षित, दरिद्र, दुःखी वर्ग को रुपये के लोभ में फांस कर ईसाई बना लेते हैं। ऐसा भारतीय नव ईसाई भी अपने 'रविव्रत' नाम स्वरूप को त्याग कर 'Robert' बनने में गौरव अनुभव करने लगता है। उसको और तो दूर रहा भारतीय रहन सहन और खान पान से भी घृणा हो जाती है। पाकिस्तान बन जाने पर ईसाईयों को यह साहस हो गया है कि निर्धन दीन दुखियों को ईसाई बनाकर ईसाई-स्थान की माँग की जावे। इस का स्पष्ट उदाहरण भी सामने आ चुका है। बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश और आन्ध्र आदि से घिरे अत्यन्त गरीब क्षेत्र के रहने वाले (जिनको अत्यन्त भ्रम के कारण आदिवासी आदि नामों से पुकारा जाता है) लोगों को बहुत बड़ी संख्या में लोभ लालच देकर ईसाई बना डाला गया है। इसी संख्या के आधार पर "झारखण्ड" प्रदेश के पृथक् राज्य की माँग की जा चुकी है। ट्रावनकोर में ईसाई बहुमत राज्य है ही। वहाँ स्वामी शङ्कराचार्य की जन्म भूमि में एक भी हिन्दू नहीं है। सब ईसाई बना लिये गये। आसाम की नागा आदि पर्वतीय जातियों को ईसाइयों ने भड़काकर पृथक् स्वतन्त्र राज्य की माँग करवाई। उन लोगों ने भारतीय प्रधान मन्त्री श्री नेहरू का स्वागत भी नहीं किया। भारतीय सेना की एक टुकड़ी मारडाली थी। यह चित्र बतलाते हैं कि ईसाई मिशनरियों का प्रचार भारत के लिये अत्यन्त संकटमय है।

इन दोनों संकटों को युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने आज से ८० वर्ष पूर्व ही ताड़ लिया था और इसका सफल उपाय "शुद्धि" बतला दिया था। परन्तु हिन्दू नामक जीव इतना पिछड़ गया है कि इस के अंग कटते रहते हैं और यह गधे की भांति पड़ा-पड़ा कान मारता रहता है। फिर भी ऋषि के मार्ग पर चल कर आर्यसमाज ने इन संकटों को हटाने में पूरा यत्न किया और उसका फल भी मिला। इस समय कोई समझदार व्यक्ति ईसाई अथवा मुसलमान बनने को तैयार नहीं, परन्तु भूख से पीड़िन व्यक्ति धर्म पर कैसे आरूढ़ रहे? वह लौकिक लाभ के लिये ईसाई मिशनरियों के रुपये के बनाये जाल में फंस कर भारत विरोधी बाड़े में चला जाता है।

ईसाई कुचक्र को तो भारत सरकार ने कुछ समझ भी लिया है परन्तु भारत असाम्प्रदायिक राज्य घोषित होने से निःशंक ईसाई मिशनरी अपने कुचक्र के जाल को फैलाते जा रहे हैं। इसलाम संकट को अभी भारतीय सरकार देख नहीं रही है। किसी दिन पाकिस्तानी कुचक्र पड़ने से भारतीय राष्ट्र के सत्ताधारियों की आंखें खुलेंगी। परन्तु "तब क्या होत है जब चिड़िया चुग गईं खेत" वाली लोकोक्ति हो जायेगी।

आर्य समाज इन संकटों से सावधान है। यथा शक्ति इनको दूर करने में लगा रहता है परन्तु इसके साधन अत्यन्त सीमित हैं। गोहत्या निरोध के विषय में सब से पूर्व अंग्रेजी राज्य के प्रचण्ड ताप में ऋषि दयानन्द ने यत्न किया। यद्यपि यत्न सफल नहीं हुआ, परन्तु प्रभाव जम गया। आर्य समाजी लोगों को विश्वास था कि देश स्वतन्त्र होने पर गोहत्या जैसा पाप नहीं रहेगा। उस समय कांग्रेस नेताओं ने भी यही आवाज़ उठाई थी कि गो हत्या बन्द की जावे। आर्य समाज ने अपने वैदिक प्रचार के कार्य को शिथिल करके कांग्रेस को स्वराज्य प्राप्ति के पवित्र कार्य में भरपूर सहयोग दिया। परन्तु आज अत्यन्त खेद से कहना पड़ता है कि कांग्रेसी नेता और भारत की केन्द्रिय कांग्रेस सरकार गोहत्या को बन्द करने करवाने के लिये कानून बनाने को तैयार नहीं। ऐसी अवस्था में आर्य समाज कैसे शान्त रह सकता था। भारत में गोहत्या के पाप के विरुद्ध जोरदार प्रचार किया। आर्यों ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों से गोहत्या के विरुद्ध सक्रिय पग उठाने के लिये बार बार मांग की। अधिकारी अधिकारी ही होता है। परन्तु जनमत का डण्डा जोर से सिर पर पड़ने लगा।

इसी समय हैदराबाद में अष्टम आर्य महा सम्मेलन हुआ जिसमें आर्यों की एकस्वर से मांग उठी कि गोहत्या बन्द करवाने के लिये तुरन्त आवश्यक पग उठाया जावे। यद्यपि सार्वदेशिक नामधारी आर्य नेताओं ने गोहत्या विरोध सम्बन्धी जो प्रस्ताव स्वीकार किया उसमें पर्याप्त ननुनच है (क्योंकि इन सार्वदेशिक आर्यनेताओं में कुछ... हैं) परन्तु आर्य जनता के सामने झुकना ही पड़ा और आर्य जगत् के सर्वमान्य कर्मठ सेनानी पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज को गोहत्या बन्द करवाने और ईसाई मिश्नरियों के जाल को नष्ट करने लिये सर्वाधिकारी नेता स्वीकार किया। समस्त आर्य जगत् में प्रसन्नता और उत्साह की लहर दौड़ गई। पूज्य स्वामीजी ने जिस कुशलता और नीतिमत्ता से हैदराबाद के आर्य सत्याग्रह को चलाया था उसका भारत राष्ट्र पर व्यापक प्रभाव हुआ था। आर्य जनता को आपके व्यक्तित्व पर पूर्ण विश्वास है।

पूज्य स्वामीजी महाराज ने यह दुस्सह कार्यभार संभाल लिया है। हम प्रत्येक आर्य और आर्य संस्थाओं से बलपूर्वक निवेदन करते हैं कि श्री स्वामीजी महाराज के सामयिक आदेशों का पूर्ण रीति से पालन किया जावे। यदि इस समय हम चूक गये तो भारत राष्ट्र भारत ही नहीं रहेगा। ईसाई मिश्नरियों के जाल के तोड़ने में किसी का विरोध नहीं है। केन्द्रिय सरकार को भी इस संकट का अनुभव होने लगा है, अतः इस कार्य में जितनी शक्ति लगाई जावेगी, उससे कहीं अधिक गोहत्या को कानून से बन्द करवाने में लगानी पड़ेगी क्योंकि गोहत्या को कानून से बन्द करने में केन्द्रिय सरकार स्वयं बाधा डाल रही है। राज्य सरकारों को भी इस कानून के बनाने में निरुत्साहित करती है। गोसदन खोलने का आडम्बर रचा जाता है। कांग्रेस दल सत्तारूढ, है अतः पार्टी राज्य होने के कारण कांग्रेस सत्ता को हाथ में बनाये रखने के लिये जनता के वोट चाहती है। इस कारण गोहत्या के विरोधी तत्वों के वोटों को प्राप्त करने के लिये कानून बनने देना उसे इष्ट नहीं। यह ठीक है कि कांग्रेसियों का अधिकांश मांग गोहत्या को बन्द करवाने में कानून बनवाने से सहमत है परन्तु भारतीय कांग्रेस के अध्यक्ष (जो कि भारतीय राष्ट्र के प्रधानमन्त्री भी हैं) श्री जवाहरलाल नेहरू के सामने सत्य प्रकट करने से भी भय खाते हैं। सेठ गोविन्ददास भारतीय लोकसभा के एक सदस्य ने भारत में कानून से गोहत्या बन्द करवाने का एक बिल रखा हुआ है। सेठ जी स्वयं कांग्रेसी और नेहरू—प्रशंसक हैं। सत्याग्रह को अवैध समझते हैं। परन्तु आप के बिल को पास न होने देने में अनेक विध अड़चनें डाली जाती हैं। लोकसभा के गत अधिवेशन में जब बिल पर विचार होना था तब कांग्रेस के महामन्त्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल (यह महाशय भी लोकसभा के सदस्य हैं) ने कांग्रेसी लोकसभाई सदस्यों को चुपचाप लोक सभा भवन से खिसका दिया। जिन लोगों को भारतीय जनता ने अपना वोट देकर लोक सभा में भेजा वही लोग भारतीय जनता की सर्वसम्मत मांग कि "गोहत्या कानून से बन्द की जाय" को ठुकरा कर सभा

भवन से चले गये। श्री नेहरूजी बार-बार गोहत्या बन्द करवाने को राजनीतिक स्टण्ट कह चुके हैं, अतः यथासामर्थ्य नेहरूजी कानूनन गोहत्या बन्द नहीं होने देना चाहते। परन्तु वह स्वयं जनतन्त्रवादी हैं। लोकमत के सामने उनको झुकना ही पड़ेगा। इस कारण गोहत्या बन्द करवाना "नेहरू को जनमत के सामने झुकाना" है। अतः आर्यों को विचार करना है कि इस कठिन काम में सारी शक्ति लगानी पड़ेगी। यह साधारण खेल नहीं है। इस घरेलु शक्ति सन्तुलन में आर्य नेताओं की परीक्षा भी होगी। आर्य जनता में कोई विकल्प नहीं है। आर्य नेताओं की जांच हो ही जावेगी।

भारत गोहत्या निरोध समिति के मन्त्री सर्वेसर्वा ला० हरदेवसहाय इस कार्य में प्राणपन से जुटे हुये हैं। आप ने अपना समस्त जीवन इसी पवित्र कार्य में लगाया हुआ है। भारतीय सरकार की गोरक्षा-गोसदन की पोल श्री लालाजी ही खोलते हैं। सरकारी आंकड़ों द्वारा आप गोहत्या का भीषण रूप सर्वसाधारण के सामने रख रहे हैं। श्री जवाहरलाल नेहरू के सामने लोकसभा के लिये खड़े होने वाले ब्रह्मचारी प्रभुदत्त ने अपनी सारी शक्ति इसी काम में लगाई हुई है। इधर आर्य जगत् ने भी सर्वाधिकार पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज को समर्पित कर दिये हैं। अतः समय आगया है कि इस भीषण पाप को भारत से मिटाया जाय।

आर्यो! पूज्य स्वामीजी के आदेश की प्रतीक्षा कीजिये। सब तैयारी कर लीजिये। उनका आदेश मिलते ही धन-जन जो भी वे आज्ञा देवें, ननुनच किये बिना उनको सौंप दिया जाय। जैसे आर्यों ने दुर्दान्त मतान्ध निजाम को झुका कर धार्मिक अधिकार प्राप्त किये थे, उसी भांति अब भारत से गोहत्या को सर्वथा मिटाना है। इसमें जो भी जिस ओर से भी बाधा पड़े उस बाधा को दूर करना ही होगा। बाधा डालने वाले चाहे अपने हों, चाहे गैर हों। पूज्य स्वामीजी की रणभेरी के नाद को सुनने के लिये तैयार हो जाइये। गोमाता की रक्षा का यश आप के हाथ में है।

"अमर सन्देश"

[श्री आनन्द बी० टी० अलीपुरी सोनीपत]

बताऊं "दयानन्द" क्या कर गया।
सच्चाई का पथ वह बता कर गया॥
किया जिस ने विष से ही अमृत का पान।
वह मुक्ति का मारग बताकर गया॥
वह गाए का प्यारा वह गोपाल था।
वह कर्तव्य अपना निभा कर गया॥
निडर था दिलावर बड़ा शूर था।
सुधा शक्ति की वह पिला कर गया॥
जगाने को आया था 'आनन्द" वह।
जो भारत को अपने जगा कर गया॥
मनाए न क्यों कर तेरी याद को।
(१) तू दीपक था रस्ता बता कर गया॥

---

(१) (स्वामी)

आयुर्वेद का भविष्य और वैद्यों को चेतावनी

आचार्य हरदयाल वैद्य, प्रधान बोर्ड आफ आयुर्वैदिक एण्ड यूनानी सिस्टम आफ मैडिसिन
पूर्वी पंजाब, अमृतसर

७-१-५४ के हिन्दुस्तान दैनिक पत्र ने हिन्दु विश्वविद्यालय बनारस के उस भाषण को प्रकाशित किया है जो स्वास्थ्य मन्त्रिणी राजकुमारी अमृतकौर जी ने आयुर्वेद कालिज के विद्यार्थियों को दिया है। इस भाषण में केन्द्रिय स्वास्थ्य मन्त्रिणी महोदय ने अपने हृदयंगत आयुर्वेद सम्बन्धी विचारों को स्पष्ट शब्दों में पेश किया है। आयुर्वेद के प्रति इस से पूर्व अनेक बार इसी प्रकार के विचार केन्द्रिय स्वास्थ्य मन्त्रिणी महोदय की ओर से प्रसारित होते रहे हैं।

स्वास्थ्य मन्त्रिणी महोदया के इस विचार को कि आयुर्वेद की तरक्की सिर्फ वैज्ञानिक ढङ्ग से ही सम्भव है न सिर्फ आयुर्वेदज्ञ ही प्रत्युत समग्र संसार ध्रुव-सत्य मानता है। किसी भी विज्ञान की वैज्ञानिकता उपयोगिता और अनुपयोगिता की सच्ची परख इतिहास की कसौटी पर हुआ करती है। इतिहास से बढ़कर अन्यत्र सत्यांकन प्राप्त होना सम्भव नहीं।

इतिहास आयुर्वेद की वैज्ञानिकता और उपयोगिता का पूर्ण समर्थन करता है। केवल समर्थन ही नहीं करता बल्कि यह भी घोषित करता है कि जब से सृष्टि आरम्भ हुई है आयुर्वेद द्वारा ही जन कल्याण साधित होता चला आ रहा है। एवं संसार की समस्त चिकित्सा पद्धतियों के प्रति आयुर्वेद की एक विशेष देन है। अपने भाषण में उन्होंने चित्र क एक रूप को व्यक्त किया है। चित्र के दूसरे रूप में यह नियम भी अनिवार्य स्थिति रखता है कि किसी भी प्राचीन विज्ञान, कला और संस्कृति को जब तक राज्य संरक्षण प्राप्त नहीं होता तब तक उसका प्रचार और उन्नति सम्भव ही नहीं।

यह ठीक है कि एलोपेथी का विज्ञान कुछ दिशाओं में आयुर्वेद से आगे हो गया है, परन्तु इस उन्नति के कारण में क्या राज्य संरक्षण का सदियों से भरपूर हाथ विद्यमान नहीं है? मैं बड़ी नम्रता से स्वास्थ्य मंत्रिणी महोदय से यह पूछना चाहता हूं कि आयुर्वेद की उन्नति और उसे अपने मनमाने वैज्ञानिक मंच तक लाने के लिए केन्द्र की ओर से कौन सा मार्ग वा उपाय अपनाया गया है? ब्रिटिश गवर्नमेंट की नीति आयुर्वेद के प्रति "विष कुम्भं पयोमुखम्" वाली रही है। उस काल में आयुर्वेद तो एक ओर रहा भारत की किसी भी कला वा विज्ञान की उन्नति को जान बूझकर धराशायी बनाने के कूटनीतिक हथकण्डे प्रयोग में लाए जाते रहे हैं। इतिहास की इस साक्षी को कोई भी झुठला नहीं सकता कि मानचैस्टर के एकाधिपत्य के लिए भारतीय जुलाहों के अंगूठे काटे गए थे। आयुर्वेद को निर्मूल करने और जनता के हृदय में उसके प्रति लघुभाव और घृणा उत्पन्न करने के विचार से ही भारतीय वैद्यों को "रोगी प्रमाण पत्र" (Certificate of Illness) तथा "स्वास्थ्य प्रमाण पत्र" (Certificate of fitness) देने का राज्य संचालकों की ओर से निषेधाज्ञाएं प्रसारित की गई थीं।

परम्परागत दासता की इस मनोवृत्ति की झलक अभी तक भी राज्य कर्मचारियों की ओर से जनता को देखने के लिए मिल ही जाती है।

राजकुमारी अमृतकौर जी ने अपने भाषण के आरम्भ में ही यह आश्वासन भी दिया कि "भारत सरकार आयुर्वेद के विकास में दिलचस्पी रखती है" मगर श्रोताओं के कर्ण-पटों से अभी इन शब्दों के प्रकम्पन भी दूर न हुए होंगे जब उन्होंने दूसरे ही क्षण में यह भी कह दिया कि "जब मिश्र और चीन जैसे प्राचीन देशों ने आधुनिक चिकित्सा प्रणाली को ही अपनी राष्ट्रिय चिकित्सा सेवा का आधार बनाया है तब भारत में किसी अन्य चिकित्सा

प्रणाली का आश्रय लेना एक अक्षम्य अपराध होगा ।

"भारत सरकार आयुर्वेद से दिलचस्पी रखती है" यह अच्छे और लुभावने शब्द हैं । परन्तु इनकी आत्मा का हनन, आपके इस निर्णय से हो जाता है कि "अन्य चिकित्सा प्रणाली का आश्रय लेना एक अक्षम्य अपराध होगा" ।

इस विषय की स्थिति की गहराई में जाने वाले यदि यह अनुमान करलें कि आयुर्वेद और अन्य देशी चिकित्सा प्रणालियों का केस एक ऐसे न्यायाधीश के सामने उपस्थित है, जिसने दोनों पक्षों के विचार व युक्तिएं सुनने से पूर्व ही अपने मन को एक पार्टी के पक्ष में बना लिया है तब अनुचित न होगा । यह सम्भव हो सकता है कि स्वास्थ्य मन्त्रिणी महोदया का निकट सम्पर्क डाक्टरों और एलांपेथी के वातावरण से सम्बन्ध रखता हो और उसकी छाप उनके मन पर हो, परन्तु इस समय वे सामूहिक रूप से सभी की आशाओं और न्याय का केन्द्रिय स्वरूप रखती हैं । आयुर्वेद का दृष्टिकोण, विषयगाम्भीर्य उसकी मौलिक सत्ताएं और सिद्धान्त एवं उसकी वैज्ञानिक सरणी को समझने और समझाने का निकट सम्बध उन्हें प्राप्त नहीं । इसलिए आयुर्वेद और अन्य चिकित्साओं के सम्बन्ध में आपके ऐसे वक्तव्य स्वाभाविक हो सकते हैं ।

कभी-कभी पदारूढ व्यक्ति अपने मनोप्रिय भावों को बलात् व्यक्तियों और देशों पर ठूंस देना चाहते हैं ।

यदि अपनी कलाओं, विद्याओं, साहित्य और संस्कृति को अपनाना और उठाना एवं अपनी आवश्यकताओं को अपने देशीय साधनों और उपकरणों द्वारा पूर्ण करने की चेष्टा करना ही अक्षम्य अपराध है तब भारत सरकार व्यर्थ ही पंचवर्षीय योजना को चालू करके महा अक्षम्य अपराध कर रही है । इस ओर भी उन्हें शीघ्र ध्यान देना चाहिए । पंचवर्षीय योजना में जिन उद्योगों को प्रोत्साहन देकर आत्म निर्भर होने की 'बातें सोची जा रही हैं, वे उद्योग विश्व के अन्य देशों में उतनी ही उच्चकोटि की उन्नति पाए हुए हैं जितनी उन्नति एलोपेथी की समझी जा रही है । ऐसी स्थिति में भारतीय चिकित्सा शास्त्र पर सरकार अपना वरद हस्त न डाले ऐसा कोई कारण नहीं है ।

आयुर्वेद के अस्तित्व को कायम रखने के लिए उस के भक्तों और सेवकों से यह मांग की जा रही है कि आप ऐलोपेथी जैसा एक महल बना कर दिखाएं तब स्वास्थ्य मन्त्रिणी महोदया यह विचार करेंगी कि उस महल को बरकरार रखना अक्षम्य अपराध होगा या नहीं । हमें यह चुनौती स्वीकार है । प्रत्येक वैद्य और हकीम इस काम में जुट जाने के लिए तैयार है । परन्तु हम न्याय की जिज्ञासा स्वतन्त्र राष्ट्र के नागरिक बनने, स्वतन्त्र देश के कलाकारों की श्रेणी में गिने जाने एवं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आत्म-निर्भर होने की इच्छा से स्वतन्त्र भारत की सरकार से यह मांग करते हैं कि हमें भी साधन, समय एवं आर्थिक सहायता इस ओर अग्रसर होने के लिए दी जाए । साधन क्षमता दिए बिना यह आश्वासन निश्चय ही सारहीन हो जाता है— कि सरकार आयुर्वेद से दिलचस्पी रखती है । आयुर्वेद की उन्नति के लिए कालिजों की आवश्यकता है, आतुरालय चिकित्सालय, रसायनशाला, प्रयोग शाला, अनुसंधानशाला, वानस्पतिक-उद्यान आदि के बिना यह किसी के वश की बात नहीं कि वह सक्रिय कदम उठा कर किसी अच्छे परिणाम पर पहुँच सके ।

अपने भाषण के अगले अंश में राजकुमारी अमृतकौर जी ने कहा कि "आधुनिक चिकित्सा प्रणाली इस हद तक प्रगति कर चुकी है और मानव कल्याण के साधन और तरीके उसके पास इतने अधिक हैं कि उसके स्थान पर आयुर्वेद या अन्य किसी चिकित्सा प्रणाली की प्रतिष्ठा करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता" ।

स्वास्थ्य मन्त्रिणी महोदया अपने इन विचारों से भले ही सन्तुष्ट हो । परन्तु स्वतन्त्रराष्ट्र और प्रत्येक विषय में आत्म निर्भरता प्राप्त करने वाले देश भक्तों को ये विचार सन्तुष्ट नहीं कर सकते ।

वर्तमान काल में बौद्धिक विचारों में तुलनात्मक आंकड़ों को अधिक महत्त्व प्राप्त है । क्या ही अच्छा होता यदि स्वास्थ्य मंत्रिणी महोदया उन आंकड़ों को भी

प्रत्यक्ष कर लेतीं जो यह व्यक्त करने में सहायक होते कि कितने प्रतिशत भारतीय जनसमुदाय आधुनिक चिकित्सा प्रणाली के साधनों और तरीकों से लाभ उठा रहा है, जिनकी बहुलता और प्रगति के गीत गाए जा रहे हैं। ये साधन और तरीके सम्भवतः १५ प्रतिशत काम आ रहे हैं। अत्यन्त निर्धन और व्याधि पीड़ित भारत की ८५ प्रतिशत जनता आयुर्वेद और देशीय चिकित्सा से लाभान्वित हो रही है। इन आंकड़ों की प्रत्यक्षता सरकार द्वारा स्वयं स्वीकार करने पर भी यह धारणा कि उसके स्थान पर आयुर्वेद या अन्य किसी प्रणाली को प्रतिष्ठित करने का प्रश्न ही नहीं उठता प्रत्येक आयुर्वेद प्रेमी को आयुर्वेद के भविष्य पर चिन्ता करने का निमंत्रण देता है।

स्वतन्त्र देशों के नागरिक अपना यह कर्तव्य समझते हैं कि देश हर किसी का है और उसकी उन्नति और विकास की जिम्मेवारी हर किसी की है। परन्तु यहाँ दासता की मनोवृत्ति की गहरी छाप देश के नेताओं से यह कहलवा रही है कि "सुपरीक्षित भारतीय चिकित्सा विज्ञान को" विकास में लाना अक्षम्य अपराध होगा।

आयुर्वेद के किसी ऋषि-मुनि या आचार्य की बात इसलिए मान्य नहीं कि वह आप्तोपदेश है बल्कि इस लिए वह मान्य है कि उसके पीछे हजारों वर्षों का अनुभव है। यह अनुभव आज वैज्ञानिक युग में भी वैज्ञानिक कसौटी पर सोलह आने ठीक उतर रहा है। पारद, गंधक, ताम्र, हरताल, मनःशिला, अफीम, हरड़, जयपाल आदि सैंकड़ों द्रव्य आज विज्ञान की कसौटी पर परखे जाने पर भी उन्हीं गुणों को दर्शा रहे हैं जिन गुणों को आयुर्वेद ने अपने अन्वेषणों के आधार पर व्यक्त किया था। इस पर भी यदि विज्ञान को विश्वास न हो तो पुनः अनुभव कर के देख सकता है। आयुर्वेद के इन विशाल अनुभवों की मान्यता से इन्कार करना किसी भी विज्ञानवेत्ता के लिए सम्भव नहीं। इस तरह का दुराग्रह किसी भी विज्ञान के लिए शोभा नहीं देता। प्रत्येक स्थल पर पश्चिमी प्रकाश को ही अपना पथ-प्रदर्शक मानने से पूर्व की समस्त कृतियां धराशायी हो जाएंगी। प्रारम्भ से ही जनकल्याण साधन करने वाले भारतीय चिकित्सा शास्त्र के विज्ञान के तथ्यों की उपेक्षा न होनी चाहिए। हमें जरा ठंडे दिल से तथ्यों पर विचार करना चाहिए। न तो तथ्यों से आंख मींचनी चाहिए और न उन्हें अतिरंजित करना चाहिए। प्रत्येक विज्ञान और उसके आविष्कारों में आदान-प्रदान की भावना से ही देश की स्वतन्त्रता और जन-कल्याण निहित है।

इस में भी संदेह नहीं कि वर्तमान युग में वैद्यों को अपने ध्येय की पूर्ति के लिए प्रचुरता से वैज्ञानिक साधन उपलब्ध हो सकते हैं, उन्हें अपनी उन्नति के लिए प्रयोग में लाकर अपने पूर्व विज्ञान को हस्तामलकवत् करने का यत्न करना चाहिए।

—————

देवता यदि आप बन जायं, बनें—
पर मनुष्य होना बहुत दुःसाध्य है।
जीवन में उत्कर्ष तथा सामंजस्य लाने के लिये मानव हृदय में मानवता के विचार उद्बुद्ध करने के लिये, गिरते हुए नैतिक स्तर में चारित्र्य बल लाने के लिये, लोक-हित की पावन भावनाओं से ओत-प्रोत, सुखद, बलप्रद, प्रेरक भावनाओं से युक्त, साहित्य मनीषियों का एकमात्र निराला पत्र—
'चरित्र निर्माण' 'सचित्र मासिक'
प्राप्ति स्थान—निर्माण कार्यालय
ऋषिकेष (देहरादून) उ० प्र०

हमारे कारखाने में यज्ञ तथा पूजा आदि का सर्व प्रकार का सामान तैयार किया जाता है
निर्माता
सीताराम आर्य एण्ड सन्ज़
१७६ लाजपतराय मार्कीट, देहली।

क्या आधुनिक शिक्षा प्रणाली श्रेयस्कर है

(ले०—ब्र० सत्यवीर आर्य सिद्धान्त वाचस्पति)

शिक्षा का तात्पर्य है कि लौकिक जीवन के अङ्ग प्रत्यङ्गों को विकसित करते हुये परलोक जीवन को सम्यक् और परिपूर्ण बनाना । आज-कल की जो शिक्षा प्रणाली है वह केवल पेटपूजा का ही साधन है। इस कुशिक्षा-प्रणाली से किसी भी प्रकार की उन्नत्ति नहीं हो सकती। आज भारत की प्राचीन शिक्षा प्रणाली एक अनाथ के समान है, इसका कोई संरक्षक नहीं। आज की इस कुशिक्षा से लाखों नवयुवकों का जीवन नष्ट हो रहा है। इसका कारण यह है कि आज कल की शिक्षा प्रणाली बहुत ही दूषित है। किन्तु हमारे नेता अभी तक भी इस कुशिक्षा पर लट्टू हैं। अभी थोड़े ही समय की बात है कि भारत सरकार के उप शिक्षा मन्त्री श्री केशवदेव मालवीय जी ने कहा था कि "वर्तमान शिक्षा प्रणाली सही है। इसमें परिवर्तन किये जाने पर देश के विकास में बाधा पड़ेगी" किन्तु देश के राष्ट्रपति से लेकर साधारण अध्यापक तक जिस शिक्षा से ऊब उठे हों, जिसको कि महर्षिदयानन्द जी ने अनार्य शिक्षा प्रणाली कहकर पुकारा हो और जिसका प्रारम्भ ही नौकर शाही के पुर्जे ढालने के लिये लार्ड मैकाले ने किया हो, आज उसी शिक्षा प्रणाली को भारत सरकार के उत्तरदायी उप-शिक्षा मन्त्री श्री मालवीय जी सर्वथा सिद्ध करते हों तो समझिये कि मौलाना आजाद का शिक्षा विभाग देश को शिक्षा की प्रगति से दूर ही रखना चाहता है। आज की शिक्षा से वही दास-मनोवृति के मानव बनाये जाते हैं जो कि पढ़कर नौकरी में ही जा फंसते हैं। जिन्हें अपने देश की संस्कृति तथा सभ्यता का न ज्ञान ही होता और न उस पर चलने का प्रेम । श्री मालवीय जी ऐंग्लो इण्डियन बनाने वाली इस कुशिक्षा को सम्भवतः इसीलिये अच्छा समझते हैं कि इसके अभाव में उन जैसों की मार्केट का बाजार भाव गिर जायेगा। वरन् , इसी शिक्षा प्रणाली को अच्छा कहने से मौलाना आजाद प्रसन्न होंगे और बनी रहेगी उनकी उपशिक्षा मन्त्री पद की कुरसी। किन्तु मालवीय जी को सचेत रहना चाहिये कि देश अब ऐसे निकम्मे नेतृत्व वहन करने के लिये कदापि सहमत नहीं है। आज तो युग की मांग है कि हाथ पैरों से निकम्मा बनाने वाली माता पिता और गुरु जनों का आदर न रखने वाली अविनम्र हठी अनुशासनहीन उद्दण्ड युवक बनाने वाली इस कुशिक्षा प्रणाली का अन्त करके ही दम लिया जावे। ब्रह्मचर्य शिक्षा के अभाव में विलासिता जनक यह शिक्षा प्रणाली आज इतनी निकम्मी हो गई है कि इसमें परिवर्वन की ही नहीं किन्तु आमूल चूल अन्त की आवश्यकता है। आज की शिक्षा कैसी है, इसके विषय में राजर्षि पाराशर जी लिखते हैं—

"चातुर्थं चाकरीमात्रे कौशलं बूटपालिशे।
भाले लिखति चेतावत् शिक्षा पाश्चात्यचालिता ॥१॥
बी. ए. पर्यन्तशिक्षायां सहस्राणां तु विंशतिः।
व्ययी भवति वित्तन्तु केवलं दासवृत्तये ॥ २ ॥
एम. ए. पर्यन्तमुत्तीर्ण इतिहासे प्रतिष्ठितः।
छात्रो वक्तुं न शक्नोति रावणः कस्य सुतोऽभवत् ॥३
आंगलजानां तु को राजा कदा चाभूत् सः।
इति सर्वं विजानाति न जानाति स्वकीयं गृहम् ॥४॥

अर्थात्—आधुनिक शिक्षा पद्धति में क्या विशेषता है, वह यह है कि—नौकरी में चतुराई बूट पालिश में कुशलता और अपने शरीर में स्त्रियों जैसे शृङ्गार करने और अपने शिर में रेलवे लाईन जैसी मांग निकालने में ही इनकी बुद्धिमत्ता है। बी. ए. पर्यन्त पढ़ने में हजारों रुपए नष्ट हो जाते हैं। किन्तु बाद में तो दो ही अक्षर हाथ आते हैं बी. ए.। आज हजारों एम. ए., बी. ए. पास हैं और उनको इतिहास (हिष्ट्री) का प्रमाण पत्र

भी मिल चुका है, किन्तु वे इतिहास प्रसिद्ध रावण के पिता का नाम नहीं बता सकते। बाल ब्रह्मचारी भीष्म के पिता का नाम क्या था, मातृ-पितृ-भक्त श्रवण के पिता का नाम क्या था? किन्तु यदि उनसे पूछा जाये कि अंग्रेजी साम्राज्य का उत्थान-पतन किस प्रकार हुआ तो बता देंगे! किन्तु अपने पूर्वजों के विषय में कुछ भी नहीं जानते। यह है आधुनिक शिक्षा का फल। इनका स्वास्थ्य भी बहुत दयनीय हो जाता है। जैसे कवि ने कहा भी है—

"मैट्रिक मरने से बचे, बी. ए. हैं बेहाल।
एम. ए. मरन पधारिये, यह शिक्षा का हाल ॥१॥
'यह आधुनिक शिक्षा किसी विध प्राप्त भी कुछकर सके
तो लाभ क्या बस क्लर्क बनकर पेट अपना भरसके ॥२
लिखते रहो जो सिर झुकाकर आपनोंकी गालियां।
तो दे सकेंगी रात को दो रोटियां घरवालियां ॥३॥

यदि हमने अंग्रेजी शिक्षा को यहां से निकालना है तो सब से पहिले हमको अपनी मातृ-भाषा देववाणी के लिये पग उठाना होगा। हमारे प्रतिष्ठित व्यक्ति अंग्रेजी की जो वकालत करते हैं वह हमारी सांस्कृतिक दासता का प्रमाण है। वास्तव में हम भारतीय ही एक ऐसे हैं जो विदेशी भाषा को अपनी शिक्षा का माध्यम बनाये हुये हैं, इससे अधिक लज्जा व हीनता की बात और हो ही नहीं सकती। शिक्षा का माध्यम देशी भाषा होना चाहिये। जब तक हम अंग्रेजी माध्यम को हटाकर अपनी भाषा संस्कृत को उसके स्थान पर प्रतिष्ठित नहीं करते तब तक भारत अपना सिर ऊंचा करके खड़ा हो ही नहीं सकता" ये शब्द ६-जनवरी १९५४ को केन्द्रिय सूचना मन्त्री श्री बालकृष्ण विश्वनाथ केस्कर जी ने कहे थे। जब अंग्रेज यहां से चले गये फिर उनकी शिक्षा का प्रचार स्वतन्त्र भारत में कैसा? जिस प्रकार अंग्रेज अपनी भाषा को नहीं छोड़ते इसी प्रकार हमको भी अपनी मातृभाषा संस्कृत को नहीं छोड़ना चाहिये। जैसे कि पं० पाराशर जी ने कहा है।

त्याज्या ननु परभाषा परराज्यमिव भारत।
अस्मात्त्यक्त्वा ह्यपरभाषां स्वभाषां पठेन्नरः ॥१॥
मातृभाषां परित्यज्य परभाषां पठन्ति ये।
तत्र यान्ति हि ते पापाः यत्र सूर्यो न भासते ॥२॥
यत्पापं ब्रह्महत्यायां यत्पापं कपिला-वधे।
तत्पापं समाप्नोति यः स्वभाषां नावगच्छति ॥३॥
यः स्वभाषां परित्यज्य परभाषामुपासते।
कामधेनुं परित्यज्या वाञ्छति दुर्भगां खरी ॥४॥

अर्थात्—जो अपनी भाषा को नहीं जानता और न जानने का प्रयत्न करता और दूसरों की भाषा को पढ़ता है। वह ऐसे नरक में जाता है जहाँ पर सूर्य भी प्रकाशित नहीं होता। और जो पाप ब्रह्महत्या में और कपिला गाय के बध में होता है वह उसको लगता है जो अपनी भाषा को छोड़कर दूसरों की भाषा को पढ़ता है वह ऐसा मूर्ख है जैसे कि एक कामधेनु गौ को छोड़कर गधी के पीछे भागता है। और जैसे अमृत रूपी गङ्गाजल को छोड़कर किसी दुर्गन्धित तालाब का पानी पीता है। और यदि इस कुशिक्षा का अन्त करना है तो दूसरा पग हमें परतन्त्र भारत के स्वतन्त्रता युद्ध में भाग लेने वाले गुरुकुलों की उन्नति की ओर उठाना होगा। जिनको कि अंग्रेज सरकार विद्रोहियों का अड्डा समझती रही। किन्तु भारत के स्वतन्त्र होते ही भारत सरकार ने गुरुकुलों को विषयुक्तान्नवत् छोड़ दिया उनको किसी भी प्रकार की सहायता नहीं दी जा रही है। और हमारे शासकों के विचार गुरुकुलों के प्रति निम्न प्रकार के हैं। "इस प्रगति शील युग में पांच हजार वर्ष पुरानी पद्धति को फिर लाने की क्या आवश्यकता है? शिक्षा देने के जब सरल से सरल साधन आविष्कृत हो रहे हैं, तब लोहे से भी कठोर बालू से भी सूखे अष्टाध्यायी के सूत्रों को रटने और भाष्य की फाक्किकाओं का नीरस बालू फांकने में क्या औचित्य है? नव्यविज्ञान की फलप्रद सुरम्य-वाटिका को छोड़कर संस्कृत दर्शन और व्याकरण की कंकरीली संकरीली गलियों में सुकुमारमति कुमार कुमारियों को भटकाना क्या सहायक व उपयोगी हो सकता है? आराम के सब साधनों के होते हुये भी आधे शरीर पर वस्त्र पहना कर नंगे पांव विद्यार्थियों को वर्षों तक उनके चौथाई जीवन को नीरस बनाये रखना कहां की

बुद्धिमत्ता है ? जो संस्कृत किसी देश की राज-भाषा नहीं है, जिसका राजकार्य में कोई अधिकार नहीं, उसमें इतना श्रम करना रेते को छानना है। किन्तु नहीं यह उनकी मिथ्या कल्पना और भ्रम ही है। मुख और लाङ्गूल रहित अंग्रेजी लिपि को रटते २ विद्यार्थियों की आयु का एक अच्छा भाग नष्ट हो जाता है और साथ में तन मन धन तीनों चौपट। किन्तु हमारे नेता अंग्रेजी पर लट्टू हैं। क्या कारण है अंग्रेजी और उर्दू लिपी वाले तो हिन्दी और संस्कृत पढ़ना अपने धर्म के विरुद्ध समझें और इन हिन्दुओं से केवल दो रोटियों के लिये चाहे संसार भरकी रद्दी भाषाओं और लिपियों को पढ़ डालो। यदि हमें नव-भारत का निर्माण करना है। इस सुन्दर देव भूमि से कुरीतियों को भगाना है। प्राचीन भारत का स्वर्णिम प्रभात देखना है। जन जीवन को दिव्यलोक से प्रकाशित कर देश तथा समाज की डूबती नैय्या को पार लगाना है तो आधुनिक शिक्षा प्रणालियों में आमूल चूल परिवर्तन कर प्राचीन शिक्षा पद्धति को अपनाना नितान्त आवश्यक है। आज के शिक्षणालय एक प्रकार की दुकानें हैं। जहाँ पर विद्यार्थी विद्या रूपी सोदा मोल लेते हैं, और अध्यापक वर्ग विद्या विभाग के एजेण्ट हैं। उन्होंने सोदा बेच दिया और जो संभाल सके संभाल ले वरना पैसा और समय खोकर बैठा रहे। किन्तु आर्षशिक्षा प्रणाली में तो आचार्य के चरित्र की छाप ब्रह्मचारी पर पड़ती है। कविवर अकबर ने कहा है।

"कोर्स तो लफ्ज ही सिखाते हैं।
आदमी आदमी बनाते हैं॥ १॥

बिना सच्चे गुरु के मनुष्य में मनुष्यता नहीं आसकती, बिना मनुष्यता के सारी विद्या निरर्थक है। किसी कवि का वचन है।

"साक्षरा विपरीताश्चेद्राक्षसा एव केवलम्।
विपरीतोऽपि सरसः सरसत्वं न मुञ्चति॥१॥

अर्थात् साक्षर शब्द को विपरीत करने से राक्षस बन जाता है अर्थात् पढ़ा-लिखा मनुष्य यदि विपरीत आचरण करे तो रावण की तरह राक्षस बन जाता है किन्तु सरस अपनी सरसता को नहीं छोड़ता। यदि गुरुकुल पद्धति का उत्थान करना चाहते हो तो सबसे पहिले संस्कृत को अपनाना होगा। प्राचीन काल में तो राजा से लेकर गडरिये तक भी संस्कृत के विद्वान् होते थे, जैसे कि राजा भोज ने एक बार प्रातः शीत-ऋतु में गडरिये से पूछा "किं शीतं न बाधति" गडरिया उत्तर देता है—"शीतं तु न बाधते राजन् बाधति तव बाधते" अर्थात् राजन् ठंड तो नहीं लग रही। किन्तु आप की "बाधति" मुझे बींध रही है, क्योंकि "बाधति" ऐसा प्रयोग व्याकरणानुसार अशुद्ध है। और भोज़ ने तो अपने नगर में घोषित कर रखा था कि—

कुम्भकारोऽपि यो विद्वान् स तिष्ठतु पुरे मम।
ब्राह्मणोऽपि योऽविद्वान् स गच्छेत्पुराद्बहिः॥१॥

अर्थात् यदि कोई कुम्हार भी विद्वान् हो वह मेरे नगर में रहे; किन्तु ब्राह्मण भी यदि कोई मूर्ख है वह नगर से निकल जावे। रामायण और महाभारत के समय भी वेदों के विद्वान् और संस्कृतज्ञ होते थे। जैसे कि रामायण में आता है–बालब्रह्मचारी हनुमान् की राम लक्ष्मण जी से जब पहली बार भेंट हुई थी, तब हनुमान् जी उनसे संस्कृत में वार्त्तालाप करते हैं। उसको देख कर राम लक्ष्मण से कहता है—

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेवं प्रभाषितुम्॥१॥
नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्।
बहु व्याहरताऽनेन न किंचिदपशब्दितम्॥२॥
संस्कारक्रमसंपन्नामद्रुतामविलम्बिताम्।
उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदयहारिणीम्॥३॥

अर्थात्–ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का जानने वाला विद्वान् ही इस प्रकार बोल सकता है अन्य नहीं॥१॥

निश्चय ही इसने सम्पूर्ण व्याकरण अनेक बार सुना है क्योंकि बहुत व्यवहार करते हुए भी इसने किसी भी अपशब्द का उच्चारण नहीं किया॥२॥

यह अत्यन्त शुद्ध द्रुतादि दोष रहित कल्याणकारिणी हृयहारिणी वाणी का उच्चारण करता है॥३॥

और इसी प्रकार रावण के विषय में आता है—

षडङ्गवेदविदुषां क्रतुप्रवरयाजिनां।
शुश्राव ब्रह्मघोषान्स विरात्रे ब्रह्मरक्षसाम्॥१॥

आर्यमुनिजी ने भी राम के विषय में कहा है, साङ्गवेदवित् राम थे। "सकल कलाभिरामता को चरित बखानना बाल्मीक को काम"। इसी प्रकार महाभारत में कौरव और पाण्डवों के विषय में आता है—

सर्वे त्वरितरथाश्शूराः सर्वे युद्धविशारदाः।
सर्वे वेदविदश्चैव सर्वे सर्वास्त्र कोविदाः ॥१॥
वेदाध्ययनसम्पन्नास्तेऽभवन् ब्रह्मचारिणः।
ते तत्र नियताः कालं कंचिदूपुर्नरर्षभाः ।२॥

अर्थात् पाण्डव और कौरव वेदों के विद्वान् और शस्त्रास्त्रों के ज्ञाता थे।

२६ दिसम्बर १९५२ को भारत के प्रथम राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी ने कलकत्ता विश्वविद्यालय में भाषण देते हुये कहा था कि "वर्तमान शिक्षापद्धति-केवल क्लर्क तथा दफ्तर के बाबू ही तैय्यार करने में समर्थ है। इसमें चरित्र निर्माण के लिये कोई स्थान नहीं, और न ही इसमें चरित्र निर्माण का कोई महत्त्व समझा जाता है। आज की शिक्षा प्रणाली से मुझे कोई सन्तोष नहीं" राष्ट्रपति जी को तो तब तक सन्तोष न होगा जब तक कि हमारा देश प्राचीन शिक्षा प्रणाली को न अपनायेगा।

यदि भारत शीघ्र ही आर्ष शिक्षा प्रणाली को अपना ले तो सारे संसार का गुरु बन जाये, जैसे कि पहिले था। तब तो भारत वासी गर्व से कह सकें—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्वमानवाः।

और सत्य तो यह है कि जो हमारी प्राचीन शिक्षा पद्धति का विरोध करेगा तो हमें यह कहने में किंचित् भी संकोच न होगा। कि वह भारत का घोरतम शत्रु है न कि हितैषी, क्योंकि यही शिक्षा पद्धति भारतोत्थान में समर्थ है। जिस प्रकार भारत के विधान निर्माण के लिये "विधान परिषद्" की स्थापना की गई थी, उसी प्रकार देश के धुरन्धर शिक्षा वेत्ताओं द्वारा राष्ट्रिय दृष्टिकोण की पूर्ति करने वाली एक-"विद्यार्य सभा" अर्थात् "शिक्षा परिषद्" की-स्थापना भारत सरकार की ओर से की जानी चाहिये, जिसके अध्यक्ष अर्थात् शिक्षामंत्री हमारे उपराष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् जैसे महापण्डित होने चाहियें। उस परिषद् के द्वारा ही वर्णोच्चारण की शिक्षा से वेदवेदाङ्ग की शिक्षा तक अध्ययनाध्यापन का प्रबन्ध किया जाना चाहिये जिसका कि उल्लेख महर्षि दयानन्द जी ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश और संस्कारविधि में किया है। तभी यह देश इस पिशाचिनी शिक्षाप्रणाली से पार पाकर सर्वतोमुखी विकासमयी प्रगति कर सकता है।

मातृ-शक्ति

(हरिश्चन्द्र 'नाज़' गढ़ी घसीटा सोनीपत)

गाय हम सब की माता है, यह जीवन की निर्माता है।
प्राणों की प्राणाधार यही, है सुखों का भण्डार यही॥
पशुओं की है सरदार यही, मानव में है अवतार यही।
रोगों का है उपचार यही, सब जग की पालनहार यही॥
संसार का सारा सार यही, ईश्वर का है दातार यही।
कहते थे कृष्ण मुरार यही, गाय हम सब की माता है॥
और जीवन की निर्माता है ॥१॥

पृथ्वी का बोझ इसी पर है, जीवन का इस पर निर्भर है।
तारों के बीच सुधाकर है, अमृत का मानो सागर है॥
उपयोगी जिसका गोबर है, माता का हर गुण सुन्दर है।
हर देश में जिसका आदर है, भारत में खूब निरादर है॥
चलता जल्लाद का खंजर है, माता को पुत्र मिटाता है।
गाय हम सब की माता है ॥२॥

मोहन, मन मोहन आया था, जिसने इक दृश्य दिखाया था।
गौओं को आप चराया था, फिर वह गोपाल कहाया था॥
भारत का मान बढ़ाया था, अरु जीवन सफल बनाया था।
जब ऋषि दयानन्द आया था, उसने भी यह बतलाया था॥
और वेद भी यह बतलाता है।
गाय हम सब की माता है॥ ३॥

जिससे हम लाभ उठाते हैं, उसको हानि पहुंचाते हैं।
निर्दयी बनकर इतराते हैं, लजाते न शरमाते हैं॥
माता को खूब सताते हैं, न दूध की लाज बचाते हैं।
खुद को मानव बतलाते हैं, और पापी बनते जाते हैं॥
बस कहना हमको आता है।
गाय हम सब की माता है॥
और जीवन की निर्माता है॥ ४॥

नेत्र ज्योति सुर्मा

इसके सेवन से आंखों का कोई भी रोग नहीं रहने पाता। यह आंखों के समस्त रोगों को दूर करने में रामबाण का काम करता है।

कुछ महानुभावों की सम्मतियां

बहुत वर्ष हुए मुझे आंखों में निर्बलता प्रतीत होने लगी थी। अतः ऐनक लगाने की आवश्यकता पड़ी। कुछ वर्षों से मैं अनुभव कर रहा था कि मेरी आंखों की ज्योति और मन्द पड़ गई और मैं दूसरी ऐनक की आवश्यकता अनुभव करने लगा। अपने पुत्र के कहने पर मैंने रसायनशाला गुरुकुल झज्जर का 'नेत्र ज्योति' सुरमा प्रयोग में लाना आरम्भ कर दिया। इसके दो ढाई मास के प्रयोग से ही अब मैं न केवल दूसरी ऐनक की आवश्यकता ही अनुभव नहीं करता, अपितु सुरमे के प्रयोग से मेरी आंखों की ज्योति बढ़ गई है। आंखें हल्की रहती हैं और मस्तिष्क का भारीपन दूर हो गया। रसायनशाला गुरुकुल झज्झर ने इतने अच्छे और साथ में सस्ते सुरमे का आविष्कार करके बड़ा भारी उपकार का काम किया है। परमात्मा से प्रार्थना है कि आपकी रसायनशाला की उन्नति हो।

रामचन्द्र गोयल नोटैरी पब्लिक, देहली राज्य
तथा आफिसर लायड्ज़ बैंक, नई देहली।

रसायनशाला गुरुकुल झज्झर के नेत्रज्योति सुरमा के सेवन से मेरे पिता जी आंखों में बहुत लाभ हुआ। और सचमुच बहुत ज्योतिप्रद है। —रामस्वरूप अध्यापक
स्कूल कुण्डल जिला रोहतक।

सुरमे तो पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं परन्तु इतना लाभप्रद और सस्ता सुरमा बाजार में मिलना कठिन ही नहीं असम्भव है। स्वयं मेरी माता जी ने इस नेत्र ज्योति सुर्मे का प्रयोग किया था और इसको अत्यन्त लाभदायक पाया। यह रसायनशाला गुरुकुल झज्झर का नेत्रज्योति सुर्मा नेत्रों के लिये एक बहुत अच्छा और सस्ता सुर्मा है। —रघुवीरसिंह मुख्याध्यापक
मिडिल स्कूल हस्तशाल देहली राज्य

मैं अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि नेत्रज्योति सुर्मा और त्रिफला घृत रसायनशाला गुरुकुल झज्झर के जितने गुणकारी सिद्ध हुए हैं। उतने किसी अन्य फार्मेसी के नहीं। इनसे आश्चर्यजनक लाभ होता है।

वैद्य सोमवीर आर्य आयुर्वेदाचार्य M. A. M. S.

मैंने अनेक दर्जन नेत्र ज्यति सुर्मा आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्झर का सैंकड़ों रोगियों पर प्रयोग किया। सुर्मा बहुत ही अच्छा है। आबालवृद्ध-वनिता जिस पर भी मैंने इसका प्रयोग, किया उन पर इस ने रामबाण के समान काम किया। दुखती आंखों में तो जादू का काम करता है। आंखों के समस्त रोगों की अचूक औषधि है। —बनवारीलाल ग्राम कासनी जिला रोहतक

I have used Netra Jyoti Surma. After a great search I have found a really good eye soother. I have put my whole family on it.

R. R. Kumaria
Principal Govt. College Rohtak

(भावार्थ) मैंने नेत्र ज्योति सुर्मे का प्रयोग किया। बहुत बड़ी खोज के पीछे यथार्थ में एक बहुत श्रेष्ठ आंखों को शान्त करने वाली औषध प्राप्त हुई। मैंने अपने सारे परिवार के लिय यह (गुरुकुल झज्झर का सुर्मा) प्रयोग करने के लिये दे दिया है। आर. आर. कुमरिया
प्रिंसिपल गवर्नमेंट कालेज रोहतक :

मैंने रसायनशाला गुरुकुल झज्झर के बनाये हुये नेत्र ज्योति सुर्मे का अनेक रोगियों पर प्रयोग किया। बहुत लाभदायक है। मेरी माता जी की आंखें बहुत दिन से खराब थीं, लाली थी, पानी बहता था, कम दिखाई देता था। उन पर इस सुर्मे का प्रयोग किया। थोड़े ही दिन में सब रोग दूर हो गये एवं आंखें ठीक हो गईं। इतना लाभदायक और सस्ता सुर्मा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। प्रत्येक भाई को इसका सेवन करके लाभ उठाना चाहिये। —दिलीपसिंह अध्यापक
स्कूल गोरिया जिला रोहतक।

हमने इस सुर्मे को अनेक जड़ी बूटियों के रसों से भावना देकर निरन्तर छः मास के घोर परिश्रम से तैयार किया है। मैंने इसका सैंकड़ों रोगियों पर अनुभव किया है। बच्चे, बूढ़े, स्त्री, पुरुष सभी लगा सकते हैं। आंखों में शान्ति पहुंचाता है। प्रतिदिन के प्रयोग के लिये बहुत ही अच्छा सुर्मा है। भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्झर रोहत

बलदामृत

यह हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है। बलदायक सर्वोत्तम रसायन है। इसकी जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है।

कुछ महानुभावों की सम्मतियां—

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला द्वारा निर्मित "बलदामृत" का सेवन गुरुकुल झज्झर में रहते हुए मैंने किया था जिस के द्वारा शरीर में बल तथा स्फूर्ति का अनुभव हुआ। औषधि सचमुच बहुत उत्तम है। तथा निर्बलों को बल देने वाली है।

मुनि देवराज विद्यावाचस्पति
स्नातक गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार)

"बलदामृत" औषधि ने मेरे अन्दर जवानी का सचार किया। साथ-साथ च्यवनप्राश का भी प्रयोग, दोनों के कारण मेरे अन्दर वह फुर्ती है कि जो कभी २० साल की आयु में थी। आज मेरी आयु ५० साल की है परन्तु "आर्य आयुर्वेदिक फार्मेसी गुरुकुल झज्झर" की दोनों औषधियों के द्वारा मेरे जीवन में बचपन की लहर दौड़ रही है। च्यवनप्राश तो वह है जो च्यवन ऋषि ने खाया था जितनी भी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। अगर इन दवाइयों के होते हुए भी कोई वृद्ध है तो उसकी नासमझी है।

पृथ्वीसिंह बेधड़क कविरत्न आर्योपदेशक

रसायनशाला गुरुकुल झज्झर में निर्मित बलदामृत की जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है। जैसा नाम वैसा काम। बलदा तो बलदा ही है। शक्ति का पुजारी कौन इसको न चाहेगा। खांसी, जुकाम, नजला, अपचन को शीघ्र दूर करने वाली शक्तिवर्धक औषध बालक, युवा, वृद्ध सब के लिये लाभकारी है। इसका जितना भी प्रचार हो अच्छा है।

पं० विश्वप्रिय शास्त्री साहित्यरत्न शेरपुर बिजनौर

१—हमारे यहां समस्त आयुर्वेदीय औषधियां जैसे रस, रसायन, धातु, उपधातु की भस्में, वटी, चूर्ण, आसव, अरिष्ट, घृत, तैल, अवलेह, पाक, क्षार, मरहम आदि अत्यन्त सावधानी एवं शास्त्रोक्त विधि से बनाई जाती हैं। तथा उचित मूल्य पर वितरण की जाती हैं।

ज्वरामृत

यह ज्वर की एक मात्र अचूक औषध है किसी भी प्रकार का ज्वर क्यों न हो तुरन्त दूर भगाती है। ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है।

कुछ महानुभावों की सम्मतियां--

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्झर की निर्मित ज्वरामृत औषधि का ज्वर से पीड़ित कई मित्रों पर मैंने प्रयोग किया और इसने तुरन्त अपना चमत्कार दिखाया। डाक्टरों के इस दावे को कि "मलेरिया केवल कुनेन इत्यादि से ही ठीक हो सकता है आयुर्वेद में ऐसी कोई औषधि नहीं है।" झूठा कर दिया है। डाक्टरों की कुनेन तो एक मलेरिया को दूर करती है और उसके स्थान पर कई अन्य रोग रोगी को दे देती है। परन्तु ज्वरामृत तो वास्तव में ज्वर पीड़ित रोगियों के लिये अमृत है। मैं तो अपने प्रत्येक भाई-बहिन से यह प्रार्थना करूंगा कि व्यर्थ में इंजैक्शनों इत्यादि पर २०, ३० अथवा पचास रुपये अपने शरीर को अधिक रोगी बनाने के लिए व्यय करने के स्थान पर इस अमृत का सेवन करें और लाभ उठावें। —रघुवीरसिंह B. A. B. T.
मुख्याध्यापक मिडिल स्कूल हस्तशाल देहली राज्य

रसायनशाला गुरुकुल झज्झर द्वारा निर्मित "ज्वरामृत" औषधि का प्रयोग मैंने स्वयं अपने दो भाइयों तथा अपने गांव के कई रोगियों पर किया है। जिस को इसका सेवन कराया, जादू जैसा प्रभाव दिखाया। ज्वर को तुरन्त शान्त करके रोगी को स्वास्थ्य प्रदान कराती है। ज्वर की यह रामबाण औषध अनुभूत है। दिलीपसिंह अध्यापक
स्कूल गोरिया जिला रोहतक

मैंने गुरुकुल झज्झर की निर्मित ज्वरामृत का अनेक छोटे बालकों पर प्रयोग किया। इसकी एक दो मात्रा से ही ज्वर दूर भागता है। अत्यन्त गुणदायक है।

हरकेराम B. A.
ग्राम ठीठ जिला रोहतक

२—हमारी रोहतक, देहली तथा दादरी में तीन सोल एजेन्सियां हैं। इनसे पृथक् अनेक छोटी-छोटी एजेन्सियां है जिनके द्वारा एक दर में औषधि वितरण की जाती हैं। एजेन्टों की आवश्यकता है। पत्र व्यवहार करें। तथा धन एवं यशलाभ करें।

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्झर (रजि०) रोहतक

हमारे प्रकाशन

(एक दृष्टि में)

नये प्रकाशन

१. व्यायाम सन्देश	१)
२. आसनों के व्यायाम	॥)
३. सदाचार पंजिका	॥)
४. दृष्टान्त मञ्जरी	२)
५. काश्मीर यात्रा	॥)
६. बिच्छू विष चिकित्सा	=)
७. दयानन्द और गोरक्षा	-)॥
८. आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
९. चकबन्दी कानून	॥)
१०. संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय	॥)
११. स्वामी विरजानन्द (प्रेस में)	१।)

पूर्व के प्रकाशन

१२. ब्रह्मचर्य के साधन—	
भाग १,२ (प्रातः जागरणआदि)	।-)
भाग ३ (दन्त रक्षा)	≡)
भाग ४ (व्यायाम संदेश)	१)
भाग ५ (स्नान, संध्या, यज्ञ)	।=)
१३. ब्रह्मचर्यामृत—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)॥
१४. तम्बाकू का नशा—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)॥
१५. पापों की जड़ शराब—	
बाल संस्करण	।-)
साधारण संस्करण	=)॥
१६. ब्रह्मचर्य शतकम्	॥=)
१७. संस्कृतांकुर	१।)
१८. संस्कृत कथा मञ्जरी	।-)
१९. श्रुति सुधा	≡)
२०. हित की बातें	-)॥
२१. आर्यसमाज की आवश्यकता	।)
२२. आ० स० आवश्यकता (छोटी)	-)
२३. स्वा० श्रद्धानन्द	)॥
२४. क्या हम आर्य हैं (६० प्रश्न)	-)
२५. नेत्र रक्षा	≡)
२६. व्यायाम का महत्त्व	≡)
२७. आदर्श ब्रह्मचारी	।)
२८. कन्या और ब्रह्मचर्य	≡)
२९. स्वा० आत्मानन्द जी	-)
३०. महर्षि दयानन्द का कार्य	-)
३१. आर्योद्देश्य रत्न माला	-)
३२. आर्यसमाज के नियमोपनियम	=)
३३. वैदिक संध्या पद्धति	-)
३४. वैदिक संध्या हवन पद्धति समाप्त	
३५. वैदिक सत्संग पद्धति	।=)
३६. कर्त्तव्य दर्पण	॥)
३७. हितैषी की गीता	।॥)
३८. कृषि विज्ञान	।॥)
३९. सिख और यज्ञोपवीत	≡)
४०. पंजाब की भाषा	-)
४१. आर्य कुमार गीतांजली भाग १, २	।=)
४२. रामराज्य कैसे हो ?	≡)
४३. मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)
४४. वैदिक गीता	३)
४५. अफ्रीका की यात्रा	२।)
४६. स्वा० दयानन्द और म० गांधी	२)
४७. बाल विवाह से हानियां—समाप्त	

नवीन साहित्य

(३१-१२-५२ के बाद के हमारे प्रकाशनों का संक्षिप्त परिचय)

१. व्यायाम सन्देश—लेखक : आचार्य भगवान्देव—मूल्य १)—इसमें व्यायाम संबन्धी अनेक आवश्यक बातें यथा—व्यायाम क्यों करें, कब करें, कितना करें, कौनसा करें, कैसे करें, देशी तथा विदेशी व्यायामों की तुलना एवं उनके हानि लाभ, दण्ड, बैठक के फोटो—चित्र होने के कारण इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है।

२. आसनों के व्यायाम—लेखकः भाष्याचार्य वेदव्रत गुरुकुल झज्जर (रोहतक)—मू० ॥) इसमें तीन दर्जन से अधिक आसनों का परिचय, उनके करने की विधि एवं लाभ समझाये गये हैं। प्रत्येक आसन का फोटो—चित्र इस पुस्तक की अपनी विशेषता है।

३. सदाचार पञ्जिका—ले० शारदा प्रभाकर—(मू० ॥)—यह डायरी आपके जीवन को अवश्य ही उच्च एवं नियमित बनाने में सहायता देगी। इसकी विशेषता यह भी है कि यह आपको डायरी का काम भी देगी तथा जिस तारीख से भी आप इसका उपयोग आरम्भ करेंगे तभी से आगे एक वर्ष के लिये काम देगी।

४. दृष्टान्त मञ्जरी—ले० पं० जगत्कुमार शास्त्री—मू० २) सजिल्द इसमें अनेक महापुरुषों की जीवनियों से ११४ घटनायें दी गई हैं जिनका पाठ पाठकों में सत्य, न्याय प्रियता, साहस, परिश्रम, मनोबल. देश भक्ति, समाज प्रेम, सेवा, धैर्य आदि गुणों को संचार करेगा। विद्यार्थियों के लाभार्थ यह मोटे अक्षरों में छापी गई है। प्रत्येक लेखक, व्याख्याता तथा अध्यापक के पास इसकी एक प्रति अवश्य रहनी चाहिये।

५. काश्मीर यात्रा—ले० श्री जगन्नाथ बी० ए०, एल० एल० बी० – मू० ।।)—इसमें काश्मीर सम्बन्धी प्रत्येक तथ्य—यथा वहां का इतिहास, रहन-सहन, उपज, ऋतु, दर्शनीय स्थान, नदी-नाले, होटल एवं उनके किराये इत्यादि का पूरा-पूरा विवरण दिया गया है। यह पुस्तक काश्मीर सम्बन्धी बाजार में मिलने वाली किसी भी हिन्दी पुस्तक की अपेक्षा अधिक अच्छी और सस्ती है। काश्मीर न जा सकने वाले व्यक्ति भी इसे पढ़ कर घर बैठे काश्मोर यात्रा का कुछ आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

६. बिच्छू विष चिकित्सा—ला० आचार्य भगवानदेव—मू० =)—इसमें बिच्छू के विष को दूर करने के लिये १०० नुस्खे दिये गये हैं।

७. दयानन्द और गोरक्षा—पं० लक्ष्मीदत्त दीक्षित एम० ए०—मू० -)॥—प्रचारार्थ ७) सैंकड़ा (मोटे अक्षर २४ पृष्ठ) गोरक्षा आन्दोलन को तीव्र गति देने एवं इस आन्दोलन के वास्तविक दृष्टिकोण को जनता के समक्ष रखने के लिये इसका प्रचार करना प्रत्येक संस्था एवं गोभक्त का कर्तव्य है।

८. आर्य सिद्धान्त दीप—ले० पं० मदनमोहन विद्यासागर—मू० १।)—आर्य सिद्धान्तों पर अपने ही ढङ्ग की अनोखी पुस्तक। आर्य सिद्धान्तों का वास्तविक स्वरूप एवं परिचय जानने के लिये इसका स्वाध्याय अत्यन्त आवश्यक है। इसकी एक प्रति प्रत्येक समाज, कुमार सभा, लेखक एवं व्याख्याता के पास अवश्य होनी चाहिये। पुस्तक क्या है गागर में सागर भरने की कहावत को सत्य सिद्ध करती है।

९. चकबन्दी कानून—ले० चौ० बलवन्तसिंह एम० एल० ए०—मू० ।।)—इसमें चकबन्दी के साथ, चकबन्दी कैसे होगी, चकबन्दी का कानून इत्यादि अनेक विषय अत्यन्त सरल भाषा में समझाये गये हैं। प्रत्येक किसान, जमींदार एवं वकील को इसके स्वाध्याय से लाभ उठाना चाहिये।

१०. संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय—ले० श्री पं० जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती भू० पू० आचार्य गुरुकुल किरठल—मू० ।।)—वेदों से लेकर आज तक के प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थों के निर्माण का समय, लेखक का नाम तथा उनका विषय इत्यादि इसमें दिये गये हैं। यह संस्कृत पाठशालों एवं परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में लगाने योग्य अनुपम पुस्तक है। इसकी विशेषता इसी से सिद्ध है कि यह 'विरजानन्द संस्कृत परिषद्' की संस्कृत परीक्षाओं में निर्धारित है।

११. स्वामी विरजानन्द—(प्रेस में) ले० श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज मूल्य १।)—अनेक वर्ष हुए श्री पं० देवेन्द्रनाथ जी ने महर्षि दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द का जीवन चरित्र लिखा था। उसे समाप्त हुए भी कई वष बीत गये। तब से महर्षि दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द जी महाराज के जीवन चरित्र की बड़ी मांग थी। इसी मांग को दृष्टि में रखते हुये स्वामी जी महाराज का यह प्रामाणिक जीवन चरित्र लिखा गया है। इसमें स्वामी जी सम्बन्धी अनेक ऐसी नवीन घटनाओं को दे दिया गया है जिनका पता बहुत से भाइयों को अभी तक नहीं था।

वैदिक साहित्य सदन
आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली ६.

संस्था समाचार

गुरुकुल झज्जर में नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश प्रारम्भ हो गया है । प्रवेश नियम निम्नलिखित हैं—

प्रवेश नियम तथा उद्देश्य

१. गुरुकुल में महर्षि दयानन्द जी द्वारा प्रतिपादित आर्ष पाठविधि के अनुसार वेद वेदाङ्ग और शास्त्रों की पढ़ाई होती है ।

२. भोजन सात्विक होता है जिसमें नमक मिर्च मसाला तथा गुड़ शक्कर आदि किसी भी प्रकार का मीठा सम्मिलित नहीं है ।

३. जीवन सरल सादा और तपस्यामय व्यतीत करना पड़ता है, ब्रह्मचारी के आचार-विचार पर विशेष नियन्त्रण रक्खा जाता है ।

४. गुरुकुल में अपने बालकों को वे ही सज्जन प्रविष्ट करावें जिनकी धारणा बालक को समाज और राष्ट्र का सेवक बनाने की हो ।

५. बालक की आयु कम से कम आठ वर्ष तथा अधिक से अधिक १० वर्ष होनी चाहिये । १० वर्ष से कम आयु का व्युत्पन्न बालक ही श्री आचार्य जी की विशेष अनुमति से प्रविष्ट किया जा सकेगा ।

६. गुरुकुल में किसी प्रकार का कोई शुल्क (फीस) नहीं लिया जाता, केवल २५) प्रवेश समय देना पड़ता है ।

७. भोजन व्यय १२०) वार्षिक वर्ष के प्रारम्भ में अगाऊ देना पड़ता है, इस व्यय से गुरुकुल वर्ष भर घृत रहित भोजन देता रहता है । बालक के किसी कारण से वर्ष के मध्य में चले जाने पर यह धन लौटाया नहीं जाता ।

८. घृत का मासिक प्रबन्ध संरक्षक को करना पड़ता है और वस्त्र, पुस्तक आदि का व्यय भी संरक्षक ही देता है ।

९. अध्ययन काल में किसी प्रकार भी अवकाश (छुट्टी) घर जाने के लिये नहीं मिलता ।

१० बालक के लिये ऋतु के अनुकूल वस्त्र, बिस्तर, थाली, लोटा, कटोरी तथा एक सन्दूक प्रवेश समय अवश्य लायें ।

११. सदाचारी, त्यागी, तपस्वी, समाज तथा राष्ट्र सेवी कर्मठ विद्वान् बनाना गुरुकुल का उद्देश्य है ।

१२. प्रवेश कराने के लिये आवेदन पत्र कार्यालय से मंगवायें ।

सात्विक दान

देहली प्रान्त में महरौली के समीप देवली ग्राम में ता० ८ जून से १६ तक ऋग्वेद से यज्ञ हुआ इस शुभावसर पर श्री १०८ श्री स्वामी निर्भयानन्द जी महाराज ने २००) आर्ष पाठविधि के लिये गुरुकुल झज्जर को प्रदान किये हैं । श्री स्वामी जी महाराज के इस सात्विक दान के लिये हार्दिक बधाई । आशा है अन्य ऋषिभक्त आर्य सज्जन भी आर्ष पाठविधि के लिये सहायता प्रदान करेंगे जिससे आर्ष पाठविधि के लिये भी स्थिर कोष एकत्रित हो सके ।

चार सौ दश रुपये का दान

ब्र० सोमवीर जी के पिता श्री महाशय भागेराम जी ने चार सौ दश रुपये गुरुकुल के लिये प्रदान किये । जिनमें से उनकी इच्छानुसार ३७५) की एक सुन्दर गाय गोशाला के लिये मोल ले ली गई है । आशा है गाय का दान देने वाले अन्य सज्जन भी श्री महाशय जी का अनुकरण करेंगे ।

गुरुकुल में आयुर्वेद महाविद्यालय के भवन निर्माण के लिये ईंटें आ रही हैं । अन्य सामान के आ जाने पर चिनाई का काम प्रारम्भ हो जायेगा ।

प्रसन्नता की बात है कि महाविद्यालय के लिये सहयोग मिल रहा है ।

ढाकला ग्राम से १००२) श्री स्व० बाबू रूपचन्द जी द्वारा गत वर्ष प्राप्त हो ही गये थे ।

श्री मा० दरियावसिंह जी ने २०१) का वचन दिया है, जिनमें से १००) प्राप्त हो चुके हैं। ४०१) भी शीघ्र ही प्राप्त हो जायेंगे।

इस वर्ष आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये भी ढाकला ग्राम निवासी श्री बा० रामनाथ जी के भ्राता श्री जुगलाल जी तथा श्री सेठ ज्ञानीराम जी ने एक सौ एक, एक सौ एक रुपये प्रदान करने का वचन दिया है।

बेरी से १४६१) की वचन के रूप में नामावली गत अङ्क में निकल चुकी है उसके उपरान्त निम्न धन प्राप्त हुआ है।

२००) श्री महाशय सूरतसिंह जी
२३) श्री सूबेदार टेकचन्द जी
१५) श्री चन्द्रभानु जी आर्य

बेरी से निम्न धन के लिये वचन मिला है।

श्री महाशय सूरतसिंह जी	३०१)
,, सूबेदार टेकचन्द जी	४८)
,, सूबेदार मनसाराम जी	१०१)
,, गोर्धनसिंह जी मोटर वाले	१०१)
,, रामनरायण आर्य	१०१)
,, रामस्वरूप श्री भगवान्सिंह जी उपदेशक	१०१)
,, सूबेदार मेजर अमीलाल जी	१०१)
,, जोतराम जी आर्य	१०१)
,, छज्जूराम जी आर्य	१०१)

तीन सहस्र रुपये दान

गुरुकुल में आतुरालय (इण्डोरपेशन) के भवन निर्माण के लिये जिला रेडक्रास सोसाईटी रोहतक ने तीन सहस्र रुपये प्रदान किये हैं। इससे पहले ५००) रुपये बिस्तरों के लिये प्राप्त हो चुके हैं। गुरुकुल ग्रामीण जनता का केन्द्र है। इसके आतुरालय के लिये जितना भी अधिक सहयोग प्राप्त हो सके उतना ही अधिक लाभ होगा।

रेडक्रास सोसाइटी को इसके लिये हार्दिक बधाई।

निवेदक—मुख्याधिष्ठाता

विरजानन्द संस्कृत परिषद्

संस्कृत की इस परिषद् का नाम "विरजानन्द संस्कृत परिषद्" है। इस परिषद् का उद्देश्य संस्कृत भाषा का प्रचार करना एवं उसके माध्यम द्वारा वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार करना है। भारतीय संस्कृति का जो संसार की संस्कृतियों में सर्वश्रेष्ठ और मानव जीवन के लिये कल्याणकर है, सच्चा परिचय संस्कृत भाषा के ज्ञान से ही हो सकता है। आज इस स्वतन्त्र राष्ट्र भारत को भारतीय संस्कृति के सच्चे पुजारी की, जो विश्व के महायुद्ध भीषण वातावरण को शान्तिमय बना सके बहुत ही आवश्यता है।

अतः सुसंस्कृत और सत्यप्रिय आत्माओं से सविनय निवेदन है कि वे इस परिषद् का सदस्य बनने का सुप्रयत्न अवश्य करें।

संस्कृत प्रचारिणी इस परिषद् का सदस्य बनने में उनको आत्मा और देश का सच्चा कल्याण निहित है।

जो सदस्य इस परिषद् का सदस्य बनना चाहें वे परिषद् का पूरा परिचय और सदस्यता का प्रार्थना पत्र तथा नियमावली प्राप्त करने के लिये निम्नलिखित पते पर पत्र डालें।

पता—
सेवा में—श्रीमती सरोज अग्रवाल
c/o श्री रामेश्वरदास गुप्त, पारसदास भवन
कूचा सुखानन्द, चाँदनी चौक—देहली

सम्मति

"सुधारक" के लेखों को देख कर प्रसन्नता हुई। "सर्व-सुधार चरित्र निर्माण पर आश्रित है।" चरित्र निर्माणार्थ ब्रह्मचर्य शिविर की योजना बना कर जो कार्य आपने किया है वह अत्यन्तोपयोगी है।

गो विषयक लेखों में आपकी गोभक्ति अनुकरणीय है। श्रद्धापूर्वक किये हुये आपके इस पवित्र कार्य में प्रभु आपको सफलता प्रदान करें। और "सुधारक" के प्रयत्नों से विश्व का सुधार हो।

सत्यप्रिय वं० सा० आ० यमुनानगर

साहित्य परिचय

ग्रामोत्थान पत्रिका—

यह ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगरिया राजस्थान का मासिक पत्र है। सम्पादक श्री मनफूलसिंह जी बी० ए० तथा संस्थापक तपोनिष्ठ कर्मयोगी श्री पूज्य स्वा० केशवानन्द जी महाराज हैं।

भाषा सरल तथा आकार-प्रकार सुन्दर और ठोस सामग्री से ओत-प्रोत यह पत्रिका ग्रामीण जनता का प्रतिनिधित्व करती है। पञ्चायत विषयक प्रश्नों तथा शङ्काओं का समाधान सुन्दर ढङ्ग पर किया जाता है। "एक दिन की बात" "वचनामृत" क्या आप जानते हैं" "पञ्चायत चुटकले" "सस्ता डाक्टर" पत्रिका के स्थायी स्तम्भ है। यह पत्रिका ग्राम पंचायतों, पुस्तकालयों, पाठशालाओं तथा शिक्षण संस्थाओं के लिये उपयोगी तथा संग्राह्य है। हम इसकी उन्नति की कामना करते हुए संस्थापक और सम्पादक महोदयों को बधाई देते हैं।

माता—श्री मातृ केन्द्र गाजियाबाद उ० प्र० से प्रकाशित "माता" मासिक पत्र है। प्रधान सम्पादक श्री मोहन स्वामी तथा सम्पादक श्री राजेन्द्र प्रकाश गुप्त हैं। साइज इसका $\frac{\text{१८} \times \text{२०}}{\text{८}}$ तथा मूल्य ४) वार्षिक है। नाम से सुन्दर, भाषा सरल, भाव गम्भीर, आकार प्रकार आकर्षक अपने ढङ्ग का अनूठा आध्यात्मिक पत्र है। सिनेमा आदि के गन्दे गानों से उच्छृङ्खलता के समय में ऐसे आध्यात्मिक पत्रों की बड़ी आवश्यकता है। आन्तरिक सभी लेखों से सहमत न होते हुए भी हम इसको उपयोगी समझते हैं और उन्नति की कामना करते हैं।

मांसाहार—३२ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य है -) लेखक श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक तथा प्रकाशक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली हैं। लेखक ने मानव संबंधी प्राकृतिक आहार का विवेचन अच्छे ढङ्ग पर किया है। मांस खाने को अप्राकृतिक सिद्ध किया है। भोज्य-अभोज्य सम्बन्धी पदार्थ को मनुष्य इसे पढ़ कर भली प्रकार जान सकेगा। हम इसके प्रकाशन पर लेखक को बधाई देते हैं और चाहते हैं कि यह पुस्तक नवयुवकों के हाथ में पहुँचे।

चरित्र निर्माण—निर्माण कार्यालय ऋषिकेश, देहरादून से प्रकाशित यह एक मासिक पत्र है। आकार प्रकार से सुन्दर तथा चरित्र सम्बन्धी लेखों से सुशोभित है।

भारत का भूत काल दो-चार दश-पांच शताब्दी ही नहीं, लाखों शताब्दियों तक समुज्ज्वल रहा। पृथ्वी तल के मानव भारतीय विद्वानों की चरण छाया में चरित्र की शिक्षा पाते रहे। भारत सब देशों का गुरुराज कहलाता रहा। परन्तु वर्त्तमान भी भारत का ऐसा देदीप्यमान हो तभी हमारा सौभाग्य है। यह सब चरित्र को ऊँचा उठाने से ही होगा। यह 'चरित्र निर्माण' पत्र इस विषय में भारी काम करेगा। इसके प्रकाशन पर प्रकाशक और सम्पादक महोदयों को हम बधाई देते हैं।

स्वास्थ्य—कालेड़ा कृष्ण गोपाल अजमेर से प्रकाशित स्वास्थ्य मासिक पत्र है। साईज $\frac{\text{२०} \times \text{३०}}{\text{८}}$ तथा मूल्य तीन रुपये तथा पृष्ठ ४० हैं।

स्वास्थ्य सम्बन्धी सामग्री को अच्छे ढङ्ग से प्रस्तुत किया गया है। स्वास्थ्य जिन व्यक्तियों का अच्छा नहीं है, उनके लिये आयुर्वेदिक ढङ्ग पर बढ़िया प्रयोग उपस्थित किये गये हैं। अनेक विषयों पर भावपूर्ण गम्भीर लेख हैं। ऐसे पत्रों की आवश्यकता किसी से छिपी नहीं है। इसका प्रकाशन सराहनीय है।

वालण्टियर—लश्कर ग्वालियर मध्यभारत से प्रकाशित कायस्थ समाज का यह मुख पत्र है। सम्पादिका श्रीमती सुखदेवी चौधरी है। कायस्थ समाज की बुराइयों का उन्मूलन करने वाला यह अनूठा पत्र है। इसने

समाजोत्थान के लिये भारी काम किया है, यह इसमें प्रकाशित विवरण से ज्ञात होता है। हम इसकी सफलता चाहते हैं।

विश्वप्रिय शास्त्री

शिक्षा सुधा—मण्डी धनौरा मुरादाबाद से प्रकाशित "शिक्षा सुधा" एक उपयोगी मासिक पत्रिका है। वार्षिक मूल्य तीन रुपये हैं। सम्पादक स्वामी रामकुमार अग्रवाल तथा सम्पादक श्री वीरेन्द्रकुमार बी० ए० विशारद। गीत कहानियों तथा साहित्यिक लेखों के साथ-साथ अन्य अनेक विषयों पर भावपूर्ण लेख हैं। पत्रिका का नाम बड़ा ही सुन्दर है। आशा है यह पत्रिका शिक्षा विषयक ठोस सामग्री पाठकों के सामने रक्खेगी। हम इसकी उन्नति चाहते हैं।

दक्षिण भारती—अफजल गंज हैदराबाद दक्षिण से प्रकाशित दक्षिण भारती मासिक का "दक्षिण भारत इतिहास विशेषाङ्क" हमारे सामने है। पृष्ठ संख्या ७६, आकार-प्रकार सुन्दर, मूल्य इस अङ्क का १) तथा वार्षिक ६, है। अङ्क ने इतिहास विषयक बढ़िया सामग्री पाठकों के लिये प्रस्तुत की है इसकी जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है। इतिहास के विद्यार्थियों के लिये संग्राह्य सामग्री अङ्क में विद्यमान है। हम इसका अधिक से अधिक प्रचार चाहते हैं।

हमारे कुसंग ?

(ले० रामदयालु ए० पी० देहली)

मैंने सन् ४२ में 'हिन्द इण्टर कालिज कोसीकलां' से हाई स्कूल की परीक्षा पास की और उसके कुछ दिन बाद मैं देहली रहने लगा। उन दिनों हमारे बोर्डिङ्ग में 'रामहेत' नाम का एक कहार सिर पर बालों में तेल, मुँह में पान और सिल्की कुर्ता आदि से बहुत बनठन कर रहा करता था। उसकी पास ही के एक दूसरे होस्टल के रसोइया से शीघ्र ही 'समानशीलव्यसनेषु सख्यम्' उक्ति के अनुसार गहरी मित्रता हो गई। बस फिर क्या था। रामहेत प्रतिदिन भंग और चरस, गांजे आदि का प्रयोग करने लगा। हां, कभी-कभी नये उस्ताद के कथनानुसार अन्य कई चस्के भी लगते। हमारे छात्रावास निरीक्षक (श्री जे० पी० शर्मा) उसे बार-बार यही समझाते कि रामहेत! अपने वेतन को व्यर्थ बातों में न गँवा। तेरी औरत को बच्चा हुआ है, उसे भी कुछ भेज दे। इस वाहियात फैशन के चक्र में न पड़ कर ही तेरा कुछ भला हो सकता है अन्यथा उस बुड्ढे रसोइया के साथ रह कर तो तू बर्बाद हो जायगा।

परन्तु इन बातों से उसके कान पर क्या जूं चलती, उसका बाजार बराबर गरम रहा। बल्कि अब तो वह अपने उस्ताद से नये-नये पाठ लेने लगा। रात उसकी सिनेमा देखने में जाती, तो दिन बुड्ढे के पास दम लगाने में। यही क्रम चलता रहा। किसी को क्या मालूम था कि इसका क्या परिणाम होगा? 'जब गीदड़ की मौत है तो गांव की ओर भागता है' के ठीक अनुकूल रामहेत भी अपने पथ पर इतना अग्रसर हुआ कि उसकी चरमसीमा आ गई। अस्तु—

यह मैं पहले कह चुका हूं कि मैं देहली रहने लगा था। एक दिन मैं दीवानहाल से लालकिले की ओर जा रहा था कि मार्ग में 'लाल जैन मन्दिर के पास' एक पागल को बड़बड़ाते हुए दूर से देखा। जब मैं उसके पास पहुंचा तो वह मेरे पैरों पर था। मैंने कहा—रामहेत! क्या हाल है? वह जै राम जी करके कुछ न बोला। पर कई बातें कहने और पूछने पर उसने एक-दो बातें कीं। उस समय जैसे ही उधर से एक मोटर आई कि वह चिल्ला उठा—आगी बैठी बैठी इत्यादि।

उसके बाद भी मैंने उसे कई बार देखा परन्तु जै राम जी के अतिरिक्त कुछ न कहा। यह है उस कुसंग का परिणाम कि आज रामहेत देहली की गलियों में पागल हुआ फिर रहा है और उसकी स्त्री घर बैठी आंसू बरसा रही है। आज कल हमारे समाज में न जाने कितने ही इस प्रकार के नौनिहाल अपने इस पवित्र उद्धार के जीवन को भार बना डालते हैं। उसका एक मुख्य कारण है कुसंग।

कबिरा संगत साधु की, हरै और की व्याधि।
संगत बुरी असाधु की, आठों पहर उपाधि॥

सम्मतियाँ

गुरुकुल झज्जर (जि० रोहतक) के मासिक पत्र 'सुधारक को देख कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। देश स्वतन्त्र होने पर भी भारतीय समाज अनेकों कुप्रथाओं, कुरीतियों, रूढ़ियों और भयङ्कर अन्ध विश्वासों में जकड़ा रहा है। अतः जब तक समाज में क्रान्तिकारी सुधार न किये जायेंगे, राजनीतिक स्वतन्त्रता पंगु ही रहेगी। आशा है 'सुधारक' समाज की यह सेवा करके समाज तथा राष्ट्र को सुदृढ व बलवान् बनाने में सफल होगा। पत्र ने जहां समाज-सुधार जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य का बीड़ा उठाया है वहाँ केवल २) वार्षिक शुल्क (चन्दा) रख कर भारत के निर्धन समाज के आर्थिक सङ्कटों का भी खूब अनुभव किया है। हमारे विचार में 'सुधारक' आकार तथा उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए देश के समस्त हिन्दी पत्रों में सस्ता पत्र है। आशा है ग्राम पंचायतें, ग्राम पुस्तकालय व पाठशालायें, समाज-सुधारक संस्थायें तथा हिन्दी भाषा-प्रेमी-जन इस को शीघ्र ही अपनायेंगे।

सम्पादक—'ग्रामोत्थान पत्रिका' मई
संगरिया (राजस्थान)

"सुधारक" का जनवरी-फरवरी का "गो विशेषांक" मिला। हम उसकी प्रशंसा करते हैं। जितने लेख हैं, विद्वत्ता से परिपूर्ण हैं। एक ही विषय होते हुए भी प्रत्येक लेख अपने ही दृष्टिकोण से सम्पूर्ण है। गोरक्षा के महत्त्व का प्रतिपादन, सामाजिक, आर्थिक, मानवीय, स्वास्थ्यहित तथा धार्मिक दृष्टिकोणों से अत्युत्तम किया गया है। आचार्य भगवान् देव जी का लेख "गोदुग्ध अमृत है" गवेषणा पूर्ण है। डॉ० रामस्वरूप जी का लेख "आहार द्रव्य में गोदुग्ध का महत्त्व" उनकी विद्वत्ता का परिचायक है। छपाई आदि भी उत्तम है। हम इस पत्र के लिये उज्ज्वल भविष्य की आशा रखते हैं।

सम्पादक 'स्वास्थ्य' मासिक अजमेर

गुरुकुल झज्जर से प्रकाशित 'सुधारक' का गोविशेषांक हमारे सामने हैं। गोवध निषेध आन्दोलनको देखते हुए, विशेषांक एक परम उपयुक्त संग्रह है सुधारक ने इसे प्रकाशित कर गो-सेवा में भाग लिया है। सुधारक सरल एवं सुन्दर है। लेख पढ़ने योग्य हैं। हम इसकी सफलता की कामना करते हैं।

कृष्णमोहन स्वामी सम्पादक "माता" गाजियाबाद

पुरुष को कार्यवान और संतानोत्पादक बनाने वाली महौषधि

अकसीर नं० २०

यह वही औषधि है जिसके बल पर ७० साल के बूढ़े भी संतान योग्य हैं। बूढ़ों को जवान और जवान को जवांमर्द बनाती है, शीघ्र पतन, स्वप्नदोष और वीर्य के पतलेपन को दूर करती है। नवीन रक्त उत्पन्न होकर शरीर में ओज और मुख पर लालिमा की कान्ति बढ़ती है। नजला, जुकाम, खांसी के जो अभ्यस्त हों, अथवा जिन्हें जोड़ों या स्नायुओं की पीड़ा ने सता रखा हो, उनको भी यह अक्सीर नं० २० स्वास्थ्यप्रद है।

सूल्य ६४ गोली ४) रु०, ३२ गोली २) रु०
वी० पी० मंगवाने से ।-) का खर्च और बढ़ जाता है, चाहे एक शीशी मंगवाएं या चार।

पत्र व्यवहार या तार का पता—

अमृतधारा, देहरादून

विज्ञापक—

मैनेजर अमृतधारा फार्मेसी लि०
देहरादून, (यू० पी०)

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा
के
कुछ महत्वपूर्ण निर्णय

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की साधारण सभा के अधिवेशन में जो ३० अप्रैल को श्री आचार्य द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि की अध्यक्षता में हुआ, ब्रह्मपारायण यज्ञों के समर्थन के अतिरिक्त निम्नलिखित निर्णय किये गये।

विचारणीय विषय संख्या १२

१—श्री पं० लोकनाथ जी तर्कवाचस्पति के "हाथ जोड़ झुकाय मस्तक वन्दना हम कर रहे" इत्यादि गान के सम्बन्ध में धर्मार्य सभा की २९-४-१९५४ की अन्तरंग सभा के प्रस्ताव को पढ़कर सुनाया गया और उसका एक के अतिरिक्त सर्व सम्मति से समर्थन किया गया जो निम्नलिखित था–

सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि इस गान के भाव उत्तम होने पर भी कुछ शब्द भ्रम एवं आपत्तिजनक हैं। उदाहरणार्थ "यज्ञरूप प्रभो और यज्ञ पुरुष महिमा" इत्यादि। श्री लोकनाथ जी को आदेश दिया जाता है कि इस भजन के शीर्षक में "प्रभु प्रार्थना और यज्ञरूप प्रभो" के स्थान पर पूजनीय प्रभो। इस प्रकार के परिवर्तन करदें जिससे यह सर्वमान्य हो जाय।

श्री पं० लोकनाथ जी ने ऐसा परिवर्तन करना स्वीकार कर लिया।

एक विवाह विषयक निश्चय का स्पष्टीकरण

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की साधारण सभा का यह अधिवेशन ९-३-१९५३ की धर्मार्य की अन्तरंग सभा के एक विवाहादि विषयक निम्नप्रस्ताव का समर्थन करता है। कि २७-४-५३ की सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की साधारण सभा का यह निर्णय कि—

२—वैदिक सिद्धान्तानुसार एक पुरुष की एक समय में एक ही स्त्री होनी चाहिये, एतद्विरुद्ध आचरण करने वाला आर्यसमाज का आर्यसभासद नहीं रह सकता।

किसी व्यक्ति के आर्यसमाज में प्रवेश से पूर्व सम्पन्न एक से अधिक विवाहों पर लागू न होगा किन्तु आर्यसमाज में एक पत्नीव्रत पातिव्रत तथा नैतिक स्तर को ऊंचा रखने के लिये यह आवश्यक है कि ऐसे व्यक्ति आर्यसमाजों के अधिकारी न बनाये जायें और न रहें।

उपर्युक्त निर्णय स्त्रियों पर भी जो आर्यसमाज की सदस्या हैं अथवा बनना चाहती हैं समान रूप से चरितार्थ होगा; अर्थात् वैदिक सिद्धान्तानुसार एक स्त्री का एक समय में एक ही पति होना चाहिये और उसे पतिव्रत धर्म का पालन करना चाहिये। तद्विरुद्ध आचरण करने वाली आर्यसमाज की सदस्या नहीं रह सकती। यह स्पष्ट करना अनावश्यक है कि उपर्युक्त निर्णयानुसार किसी के लिये रखैल अथवा उपपति रखना सर्वथा वर्जित है क्योंकि इसे सभी जानते हैं।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति विद्यामार्तण्ड-मन्त्री

TEXMACO

TEXTILE MACHINERY DIVISION

RING SPINNING FRAMES

Of any gauge up to 3" and lift up to 8".

Drafting System 4 Roller self weighted with or without Pendulum Arm Weighting, 4 Roller saddle weighted, Casablanca 500 with or whitout Pendulum Arm Weighting, 500-A or E 10 B.

Roller Bearing Spindles.

Ball Bearing Jockey Pulleys.

Ball Bearing Front Top Rollers.

DRAWING FRAMES

Of 16" or 18" Gauge with one or two heads.

Belt or Motor driven.

Electric Stop Motion.

Automatic Locking Device.

9", 10" or 12" diameter Cans.

BOILER & HEAVY ENGINEERING DIVISION

Smoke Tube, Marine, Water Tube and Locomotive Boilers, Flues, Mechanical Stokers, Economisers, Chemical and Pressure Vessels Coal Handling Plant, Chimneys, Ductings, Cranes, Railway Wagons and Rolling Stock, Penstock Pipes, Sluices and Spillway Gates for Hydraulic Dam Projects.

Smoke Tube Boiler design in collaboration with M/S. Babcock & Wilcox of India Ltd.

For particulars please write to

TEXTILE MACHINERY CORPORATION LIMITED.

Belghurriah 24 Parganas West Bengal

पता

ग्राहक संख्या [illegible]

सेवा में—श्री जगदीशचन्द्र जी विद्य-

मु० मुरारी ब्रदर्स

पो० कमलानगर

जि० देहली

सुधारक के संबंध में सम्मतियां

'सुधारक !' सर्वकुधारजातं
निहत्य सद्भावमुदीर्य यत्नात्।
गृहे गृहे वीथि-प्रवीथिकासु
नृणां मनः पाणि-वचांसि शुन्ध्यात्॥

अर्थ—यह सुधारक सब कुरीतियों तथा दुर्गुणों को नष्ट करके, यत्नपूर्वक प्रत्येक घर तथा गली गली में सद्भावनाओं को उत्पन्न करके मनुष्य मात्र के मन वचन और कर्म को पवित्र करे।

श्री १०८ सत्यदेव जी वासिष्ठ
साङ्गोपाङ्ग वेदचतुष्टयी

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) से नवजात 'सुधारक' सचित्र मासिक पत्र प्राप्त हुआ। सुधारक में उपादेय, पठनीय और संग्रहणीय लेखों का संकलन हुआ है। प्रत्येक लेख में सुयोग्य लेखकों द्वारा प्रतिपादित विषय गाम्भीर्य और लेखन कला की सरलता पाठकों के मन का अपनी ओर आकर्षण करती है। स्वास्थ्य संरक्षक, ब्रह्मचर्य और बालोपयोगी लेखों के साथ-साथ सरल और घरेलु चिकित्सा स्तम्भों का उत्तम समावेश किया गया है।

सामयिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाले इस नव प्रसून का हम स्वागत करते हैं और संस्थापक, सम्पादक मण्डल एवं लेखकों को बधाई देते हैं।

आशा है ब्र० श्री भगवान्देव जी आचार्य द्वारा संचालित 'सुधारक' अपने नाम में निहित अर्थों का प्रतीक सिद्ध होगा।

आयुर्वेदाचार्यः—कविराज हरदयाल वैद्य वाचस्पति
K. R., A. V.. M. A. S., स्वर्णपदक प्राप्तकर्ता
रजिष्ट्रार बोर्ड आफ आयुर्वैदिक एण्ड यूनानी
सिस्टम आफ मेडीसन पूर्वी पंजाब

व्यायाम संदेश—विशेषांक मिला, पढ़ा, अभी सारा नहीं पढ़ पाया हूं। भगवत् कृपा से मैं स्वास्थ्य के लिये खाने-पीने में संयम और व्यायाम का ४० साल से अभ्यासी हूं। आसनों में ब्रह्मचर्य को दृढ़ करके मनुष्य के शारीरिक व बौधिक विकास बढ़ाने की अपूर्व शक्ति का मुझे खुद अनुव है। इसी के आधार पर इस शरीर में जीवात्मा को रख कर परमात्मा ने अविशेष को विशेष बनाया है। यह विशेषांक मुझे फिर भी प्रेरणा देता है। छोटे बालकों का तो मार्ग दर्शक ही है। भगवान् आप को इस कार्य के वास्ते ज्यादा से ज्यादा शक्ति दें। और देश के नवयुवकों खास कर हरयाणा इलाके (वीर भूमि) के वीर बालकों को सन्मार्ग में भगवान् प्रेरित करें।

स्वामी तुलसीराम (स्वर्गीय) सदस्य विधान सभा
उत्तर प्रदेश

'सुधारक':—संस्था की पत्रिका होने से इसका लक्ष्य शिक्षा, समाज सुधार और जनता का धार्मिक स्तर ऊँचा करना है। लेख उपयोगी हैं, सर्प-विष-चिकित्सा पर श्री आचार्य भगवान्देव का लेख अनुभव सात्विक है। ब्र० देवव्रत जी की 'आसनों का व्यायाम' लेखमाला भी उत्तम है।

आर्यमार्तण्ड (साप्ताहिक) अजमेर
(मासिक पत्रिका— गो-विशेषाङ्क)

सुधारक के प्रस्तुत विशेषांक में हमारी संस्कृति में 'गौ' का क्या महत्त्व है, इस पर विशेष रूप से प्रकाश डालते हुए गाय की उपयोगिता और स्वास्थ्यवर्धकता पर आधिकारिक लेख दिये गये हैं। यह विशेषांक गोरक्षा की ओर राष्ट्र का ध्यान आकृष्ट करेगा। गो-रक्षण के लिये किया गया यह प्रयत्न सर्वथा स्तुत्य है।

"आज" साप्ताहिक विशेषांक
ज्ञान मण्डल लिमिटेड बनारस

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

" वर्ष १
अङ्क १२

गुरुकुल झज्झर रोहतक, श्रावण सं० २०११ वि०
अगस्त १९५४, दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

आदर्श सेनानी स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने हैदराबाद आर्य सत्याग्रह का जिस सैनिक ढंग पर संचालन करके सफलता प्राप्त की थी उस के सामने सत्याग्रह के अद्वितीय संचालक महात्मा गान्धी जी ने भी शिरो नमन किया था। आर्यसमाज ने भारत से गोहत्या बन्द करवाने के लिये सर्व सम्मति से सर्वाधिकार देकर पुनः पूज्य स्वामी जी के सेनानीत्व पर पूर्ण विश्वास प्रकट किया है।

* * *

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्झर, रोहतक
सह सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

चन्दा समाप्

कृपया चन्दा भेजिये

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

[श्री पण्डित मेधाव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्]
(गताङ्क से आगे)

मन्त्रः—पूर्वो जातो ब्रह्मणो ब्रह्मचारी
घर्मं वसानस्तपसोदतिष्ठत् ।
तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्मज्येष्ठं
देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम् ॥
(अथर्व० ११।५।५)

श्लोकः—पूर्वो जातो ब्रह्मणो ब्रह्मचारी
तिष्ठत्यूद्ध्वं तापसं घर्ममाप्तः ।
तस्माज्ज्येष्ठं ब्राह्मणं ब्रह्मजातं
सर्वे देवाश्चामृतेनैव साकम् ॥२८॥

अर्थः—ब्रह्मचारी ब्रह्म से पहिले उत्पन्न हुआ है और वह तपोजन्य ज्योति = तेज को धारण करता हुआ ऊँचा उठता है = उन्नत हो संसार को उठाता है। पुनः उस से ब्रह्म-सम्बन्धी श्रेष्ठ ज्ञान अर्थात् ब्रह्म उत्पन्न होता है और सभी विद्वान् अमर-पद के साथ सम्बन्धित हो जाते हैं।

श्लोकः—सर्वोत्कृष्टा प्रथमरचना ब्रह्मणो ब्रह्मचारी
ब्राह्मं तेजः कठिनतपसा संवसानोऽध्यराजत
श्रेष्ठं ज्ञानं जगति विततं ब्रह्मसम्बन्धितस्मान्-
मर्त्या देवा अमरपदवीं यान्ति तज्ज्ञानलाभात् ॥२६॥

अर्थः—ब्रह्मचारी ब्रह्म की सब से उत्कृष्ट वा प्रथम रचना है, क्योंकि वह कठोर तप से ब्रह्म तेज रूपी वस्त्र को धारण कर विराजमान होता है। उसी से जगत् में ब्रह्मचर्य-सम्बन्धी ज्ञान फैलता है एवं उसके ज्ञान से लाभान्वित होकर मरणशील विद्वान् लोग अमर-पद को प्राप्त कर लेते हैं।

मन्त्रः—ब्रह्मचार्येति समिधा समिद्धः
कार्ष्णं वसानो दीक्षितो दीर्घश्मश्रुः ।
स सद्य एति पूर्वस्मादुत्तरं समुद्रं
लोकान्त्संगृभ्य मुहुराचरिक्रत ॥
(अथर्व० ११।५।६)

श्लोकः—समिधा ब्रह्मचार्येति समिद्धो विधिदीक्षितः
कृष्णाजिनं वसानोऽयं दीर्घश्मश्रुमनोरमः ॥३०॥

अर्थः—पूर्वोक्त समिधाओं से ज्ञान दीप्त हुआ-हुआ, ब्रह्मचर्य विधि से दीक्षित, कालामृगचर्म पहने हुए, लम्बी दाढ़ी मूँछ वाला, कान्तिमान् सुन्दर ब्रह्मचारी आता है।

स सद्य एति पूर्वस्मात्समुद्राज्ज्ञानसागरम् ।
लोकान् संगृह्य कर्माणि मुहुःकुर्वन्त्समन्ततः ॥३१॥

अर्थः—वह ब्रह्मचारी लोक-संग्रह करके पुनः चारों ओर से कर्म करता हुआ शीघ्र ही पहिले ज्ञान-समुद्र से दूसरे उत्कृष्ट ज्ञान-समुद्र को पहुँचता है।

[इन्द्रवंशावंशस्थोपजातिः]
युग्मम्—ज्ञानप्रभाप्रदीप्तमुखार्कमण्डलः
सुदीर्घकूर्च्चो विधिवत्सुदीक्षितः
कृष्णाजिनाभूषितवज्रविग्रहो—
वेदार्णवोत्तीर्णतरो व्रतीश्वरः ॥३२॥
स ब्रह्मचर्याश्रमपूर्वसागरात्
समेति सद्यो गृहितोत्तरार्णवम् ।
उत्साहयन् मंगलकर्मभिर्मुहुः
संगृह्य लोकाञ्जनमंगलार्थिनः ॥३३॥

अर्थः—ज्ञानप्रकाश से देदीप्यमान मुखरूपीसूर्य-मण्डल वाला, बढी हुई दाढी मूँछ से सुशोभित, शास्त्र विधि से व्रतग्रहण किये हुए, कृष्ण-मृग चर्म से वज्रमय शरीर को सजा कर, व्रतियों में श्रेष्ठ वह ब्रह्मचारो वेद रूपी समुद्र को तैर जाता है (स्नातक बन जाता है) और वह जन-कल्याण चाहने वाले लोगों को एकत्रित कर अपने मंगल कर्मों से बार-बार उनका उत्साह बढ़ाता हुआ शीघ्र ही ब्रह्मचर्याश्रम रूपी पूर्व-समुद्र से गार्हस्थ्य-रूपी उत्तर-सागर को प्राप्त होता है।

(क्रमशः)

सम्पादकीय——

पाठकवृन्द ! दयालु ईश्वर की महती कृपा से सुधारक का प्रथम वर्ष का (अगस्त मास का) अंतिम अङ्क आपकी भेंट कर रहे हैं। आर्थिक संकट, कार्य-बाहुल्य आदि अनेक बाधायें होते हुए सुधारक द्वारा जनता की सेवा करने का हमने भरसक यत्न किया है। प्रथम वर्ष ही 'गो विशेषाङ्क' तथा व्यायाम-सन्देश-विशेषाङ्क' सुधारक के दो विशेषाङ्क प्रकाशित किये हैं जो प्रायः सभी पाठकों को रुचिकर और समुपयोगी प्रतीत हुए। कितने पाठकों ने तो इनकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है और अपनी शुभ सम्मतियां भी भेजी हैं, जिनमें से कुछ सम्मतियां साथ-साथ सुधारक में प्रकाशित हो चुकी हैं।

जिस उत्कृष्ट रूप में 'सुधारक' को हम आप के सामने लाना चाहते हैं वह रूप तो सुधारक का तब बन सकता है जब आप सब ग्राहक तथा प्रेमी सज्जन इसके ग्राहकों की संख्या में पूर्ण शक्ति लगा कर वृद्धि करें। प्रत्येक ग्राहक दस-दस ग्राहक भी बनाकर हमें सहयोग दें तो हम सुधारक को आदर्श मासिक पत्रिका के रूप में आपके सन्मुख लाने में समर्थ हो सकते हैं, हम आप से इसके लिये कोई दाम नहीं मांगते, केवल ग्राहक बनाने का सहयोग चाहते हैं। सुधारक का वार्षिक मूल्य भी नाम मात्र लागत मूल्य से भी कम २) ही है इसका मूल्य बढ़ाने की भी हमारी इच्छा नहीं। यदि सब पूर्णरूपेण ग्राहक बनाने में सहयोग दें और सुधारक की ग्राहक संख्या पाँच हजार (५०००) तक पहुँचा दें तो फिर आप "सुधारक" का वह रूप देखेंगे, जिसकी आप स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकते।

अगस्त मास की पत्रिका के साथ प्रायः (कुछ को छोड़कर] सभी ग्राहकों का चन्दा समाप्त है। आप सब से नम्र निवेदन है कि इसी मास में आगामी वर्ष का चन्दा दो रुपये २) मनीआर्डर द्वारा भेज कर कृतज्ञ करें। कितने ही सज्जन ऐसे जिनका इस वर्ष का भी चन्दा हमें प्राप्त नहीं हुआ है, वे इस वर्ष का भी तथा आगामी वर्ष का दोनों मिला कर चार रुपये शीघ्र ही मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें।

इस वर्ष 'सुधारक' का केवल एक ही विशेषाङ्क निकालने का निश्चय है उस विशेषांक का विषय—१ वीर्य-रक्षा, २ हमारा भोजन, ३ सर्प विष और उसकी चिकित्सा, ४ प्राणायाम आदि में से कोई एक होगा। जिसे पाठकगण अधिक उपयोगी समझें हमें लिखने की कृपा करें। आप सब की सम्मति का भी इस विषय में ध्यान रक्खा जयेगा।

हमारे अनेक ग्राहकों के प्रति मास इस प्रकार के पत्र आते रहते हैं कि "हमें सुधाररक नहीं मिला" हमें भी इस बात का खेद हैं, किन्तु हमारा इसमें कोई दोष नहीं है। हम एक बार नहीं दो बार रजिस्टर में ग्राहक संख्या मिलाकर बड़ी सावधानी से 'सुधारक' भेजते हैं। डाकखाने वालों का कुप्रबन्ध ही इस का मुख्य कारण है। डाकविभाग के ओफिसरों को इस विषय में हम लिख भी चुके हैं। जब भी किसी ग्राहक का पत्र सुधारक न मिलने के विषय में आता है तब हम सुधारक द्वितीय बार भी भेज देते हैं। अब भी आप से प्रार्थना है—जिस किसी ग्राहक को यदि किसी मास का अंक न मिला हो वह लिखने की कृपा करें, हम पुनः भेज देंगे। साथ ही आपको अपने प्रान्त के पोस्ट मास्टर जनरल को भी इस विषय में पत्र अवश्य लिखना चाहिये, जिससे पोस्ट ओफिस की भूल के कष्ट से आप तथा हम दोनों बच सकें। अन्त में पुनः आप से प्रार्थना है कि आप अपना वार्षिक मूल्य २) तुरन्त ही मनीआर्डर

द्वारा भेज दें तथा अपने साथियों को भी ग्राहक बनाने की कृपा करें ।

विदेशों में वैदिक धर्म का प्रचार

महर्षि दयानन्द जी की आज्ञानुसार देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में ऋषि के भक्त वेद प्रचार करने में लगे हुए हैं। उन्हीं सच्चे ऋषि-भक्तों में से श्रीमान् माननीय त्यागी तपस्वी श्री आनन्द भिक्षु जी महाराज लगभग साढ़े पांच मास से मोरीशस टापू में वैदिक धर्म का नाद बजा रहे हैं । आपका गुरुकुल झज्जर तथा मुझ से विशेष स्नेह है । आपकी कृपा दृष्टि हम पर सदा बनी रहती है । आप विदेश प्रचारार्थ जाने से पूर्व भी गुरुकुल झज्जर में पधारे तथा ब्रचह्मारियों के कल्याणार्थ उपदेश देने की कृपा की । अब आपका पत्र मोरीशस से आया है । साथ ही आपने २५) सात्विक दान भेजने की महती कृपा की है । हम आपका बहुत बहुत धन्यवाद करते हैं तथा आपके आभारी हैं। आशा करते हैं कि भविष्य में भी इसी प्रकार कृपा दृष्टि बनाये रक्खेंगे। पत्र की प्रतिलिपि इस प्रकार है—

आर्यसमाज पोर्ट लुइस
मोरीशस
२६ जून ५४ ई०

श्री महामान्यवर आचार्य जी महाराज सादर नमस्ते

अत्र कुशलं तत्रास्तु ।

मैं ३ फरवरी से यहाँ वेद प्रचार कर रहा हूं । और २० जौलाई को दारुलसलाम चला जाऊँगा । यहाँ के लोग भारत के सच्चे भक्त हैं । और यज्ञ के बड़े ही श्रद्धालु हैं । यहाँ से प्राप्त दक्षिणा में से २५) रु० भेंट कर रहा हूँ स्वीकार कर अनुगृहीत करें । सब महानुभावों और ब्रह्मचारियों को सप्रेम नमस्ते। योग्यसेवा से कृतार्थ करें । शम् ।

दर्शनाभिलाषी
आनन्द भिक्षु वानप्रस्थ

संस्था समाचार

परमात्मा की अनुकम्पा एवं सहयोगियों के सहयोग से थोड़े से समय में ही गुरुकुल झज्जर में आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये लगभग अठारह सहस्र रुपये प्राप्त हो चुके हैं। इनके अतिरिक्त लगभग बारह सहस्र रुपये का वचन प्राप्त हुआ। यह वचनों वाला धन धीरे धीरे प्राप्त हो रहा है। यदि दानी सज्जन शीघ्रता करें और धन गुरुकुल में आ जाये तो तीस सहस्र के लगभग यह धन हो जाता है । पचास सहस्र रुपये एकत्र हो जाने पर कार्य प्रारम्भ हो जायेगा । इसलिये धन सञ्चय समिति बड़ी तत्परता के काम करना चाह रही है। महाविद्यालय के प्रेमी सज्जन अपने २ ग्राम में समिति को बुलायें ।

आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये पहली आवश्यक समस्या भवनों की है । भवनों की कमी को पूरा करने के लिये ईंटें, रोड़ी आदि सामान आ रहा है और भवन निर्माण का कार्य प्रारम्भ हो गया है ।

निवेदक—
मुख्याधिष्ठाता

गायत्री मन्त्र का मूल्य पाञ्च रुपये

[ले० श्री भगवान्देव जी आचार्य गुरुकुल झज्जर]

पचास वर्ष से अधिक काल व्यतीत हो गया, तब रोहणा (रोहतक) ग्राम की चौपाल में आर्यसमाज के उपदेशक प्रचार के लिये आये। वह आर्यसमाज के प्रचार का प्रारम्भिक काल था। उस समय के उपदेशक भी निराले प्रकार के ही होते थे, अतः उस प्रचार मण्डली के मुख्य उपदेशक पण्डित शम्भुदत्त जी भी उसी प्रकार के विचित्र उपदेशकों में से थे। वे सच्ची लग्न के प्रचारक और अपनी धुन के धनी थे। उनका जन्म एक पौराणिक ब्राह्मण के घर हुआ था। उस समय ब्राह्मण आर्यसमाज के बड़े विरोधी थे। ब्राह्मणों की पंचायत ने यह निर्णय दिया कि या तो आप आर्यसमाज को छोड़ दें, नहीं तो आप को जाति से बाहर कर दिया जायेगा। इस निश्चय के भय के कारण कई मुन्शीराम जी जैसे उपदेशक तो आर्यसमाज को छोड़ कर चले गये। परन्तु इस घटना ने पं० शम्भुदत्त जी के लिये 'सोने पर सुहागे' का काम किया। पण्डित जी बड़े पक्के और कट्टर आर्यसमाजी बन गये। उनकी प्रचार की लग्न दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़ती ही चली गई।

जाति बहिष्कृत होने पर उन्होंने अपना सारा जीवन आर्यसमाज के प्रचार में लगा दिया। इन जैसे उपदेशकों के विशेष पुरुषार्थ से हरयाणे के ग्राम-ग्राम में वैदिक धर्म का नाद बजने लगा। इसी प्रकार की धुन में मस्त होकर पण्डित जी ने अपना उपदेश चौपाल में देना आरम्भ किया। उपदेश देते हुए उन्होंने बीच में घोषणा की यदि कोई ब्राह्मण गायत्री मन्त्र सुना देगा तो उसे दो रुपये, वैश्य महाजन आदि सुनायेगा तो तीन रुपये, तथा अन्य छोटी जातियाँ जिन्हें लोग शूद्र कहते हैं उन में से कोई सुनायेगा तो चार रुपये पारितोषिक (इनाम) दिया जायेगा।

यह सुनकर सारी सभा में सन्नाटा छा गया। उनके बार-बार घोषणा करने पर भी कोई व्यक्ति गायत्री मन्त्र सुनाने के लिये अग्रसर नहीं हुआ। क्योंकि उस समय किसी को गायत्री मन्त्र याद ही नहीं होता था। इस पर उपदेशक महोदय ने बड़ा दुःख प्रकट किया और दुःख भरे शब्दों में इस प्रकार बोले "जिस आर्य जाति के छोटे-छोटे बालकों को भी वेद तक कण्ठस्थ होते थे, आज उसी ऋषियों की सन्तान में किसी को गायत्री मन्त्र तक याद नहीं।"

जब उन्होंने ये दुःख भरे शब्द कहे तब एक बालक उत्साह पूर्वक उठा और कहने लगा। पण्डित जी महाराज ! गायत्री मन्त्र तो मुझे याद है, किन्तु मेरे गुरु जी की यह आज्ञा है कि किसी को गायत्री मन्त्र सुनाना नहीं चाहिये, क्योंकि इसके सुनाने से सुनने और सुनाने वाले दोनों को पाप लगता है और गायत्री मन्त्र की शक्ति भी घट जाती है। इसी कारण से मैं गायत्री-मन्त्र सुना नहीं सकता।

पण्डित शम्भुदत्त जी ने बालक से पूछा कि "तू ने यह गायत्री-मन्त्र किस से और कैसे सीखा है ? तुम अपना और अपने गुरु जी का कुछ परिचय दो।"

बालक ने अपनी गायत्री-मन्त्र सीखने की घटना इस प्रकार बतलाई। "मैंने अपने बड़े बूढ़ों से भूत प्रेतों की कहानियाँ सुनी थीं। अतः जब कभी मैं पीपल के वृक्ष के नीचे से जाता या श्मशान भूमि में जाता तो भूत प्रेतों से बड़ा डर लगता था। अतः मैं रात्रि को तो कहीं बाहर निकलने का साहस नहीं

करता था और बड़ा भयभीत रहता था। इस भय-दूर करने का उपाय मिलने-जुलने वालों से पूछता रहता था। किसी सज्जन ने बतलाया कि यदि तुम गायत्री-मन्त्र याद कर लो तो तुम्हारी इतनी शक्ति बढ़ जायेगी कि भूत तुम्हारे पास भी नहीं फटकेंगे। यहाँ तक कि तुम उनको पीटकर भगा भी सकोगे।

मैंने गायत्री-मन्त्र सिखाने वाले की खोज आरम्भ की। खोज करने से पता लगा कि गायत्री-मन्त्र तो किसी पढ़े-लिखे ब्राह्मण के ही याद मिलेगा। हमारे स्कूल में बेरी निवासी ब्राह्मण पण्डित चिरञ्जीलाल जी पढ़ाते हैं। मैं उनकी सेवा में गया और गायत्री-मन्त्र सिखाने की प्रार्थना, की तो उन्होंने मेरी जाति पूछी। मैंने कहा कि मैं जाट हूं। तब पण्डित जी ने कहा कि जाट तो वर्णसङ्कर होते हैं, इनको गायत्री-मन्त्र सीखने का अधिकार नहीं है। पण्ठित जी का यह उत्तर सुनकर मुझे बड़ा कष्ट हुआ। और मैं सोचने लगा कि हे परमात्मन्! मुझे ऐसी पतित जाति में क्यों जन्म दे दिया, जिसको गायत्री-मन्त्र सीखने का भी अधिकार नहीं है। किन्तु मुझे गायत्री-मन्त्र सीखने की बड़ी उत्कट इच्छा थी, मैं पण्डित जी से बार बार सिखाने के लिये आग्रह ही करता रहा। तब उन्होंने यह कहा कि यदि तुम छः मास तक श्रद्धापूर्वक सेवा करोगे तो तुम्हारी यह इच्छा पूरी हो जायगी।

मैं उनकी आज्ञानुसार उनके घर झाड़ू लगाना, चूल्हा चौका करना, झूठे पात्र मांजना आदि सेवा कार्य छः मास श्रद्धा पूर्वक करता रहा। बीच-बीच में कभी-कभी गायत्री-मन्त्र सिखाने की भी प्रार्थना करता रहता था। एक दिन पण्डित जी ने गायत्री-मन्त्र सिखाने के लिये पाँच रुपये दक्षिणा लाने के लिये कहा। (उस समय के पाँच रुपये का मूल्य आज के पचास रुपये के बराबर होता है, लेखक)। मैं अपनी माता जी के पीछे पड़ गया और उनको बार-बार यह समझाता भी रहा कि भूत का भय दूर करने के लिये गायत्री-मन्त्र का सीखना अत्यन्त आवश्यक है। एक दिन प्रसन्न होकर माता जी ने पाँच रुपये दक्षिणा देने के लिये दे ही दिये। तब पण्डित जी ने छः मास की निरन्तर श्रद्धा पूर्वक सेवा से प्रसन्न हो तथा पाँच रुपया दक्षिणा लेकर मुझे गायत्री मन्त्र सिखाया। और साथ यह भी बताया कि गायत्री मन्त्र किसी को सुनाना नहीं, क्योंकि इसके सुनाने से सुनने वाले और सुनाने-वाले दोनों को पाप लगता है और गायत्री-मन्त्र की शक्ति भी न्यून हो जाती है।

मेरी गायत्री के प्रति श्रद्धा थी। गायत्री सीखते ही मेरा भूतों का भय दूर हो गया और मैं अपने आत्मा में इतना बल अनुभव करने लगा कि यदि मुझे कहीं भूत मिल जाये तो मैं उसे पीट सकता हूँ। यही बात मैंने अपने साथियों से कही। मेरे साथी कहने लगे—ग्राम से बाहर पीपल का वृक्ष है उसमें भूत रहता है, वहाँ अमावस्या के दिन रात्रि को बारह बजे जाओ तो भूत अग्नि फेंकता हुआ मिलेगा। उनके कथनानुसार भूत को देखने के लिये मैं अमावस्या की रात्री में गया। सचमुच मैंने क्या देखा कि पीपल के वृक्ष पर आग के अङ्गारे उछल रहे हैं। साहस करके आगे बढ़ ही गया और पीपल के वृक्ष पर जहाँ से अङ्गारे फेंके जा रहे थे पत्थर मारने आरम्भ किये। जब मेरे पत्थर आग फेंकने वाले भूतों को जाकर लगे तो वे भूत (जो यथार्थ में मेरे ही साथी थे, मुझे डराने के लिये भूत बन गये थे) मेरा नाम लेकर कहने लगे कि अमरसिंह! हम तो तुम्हारे साथी हैं, तुम्हें डराने के लिए ही ये अङ्गारे फेंकने आरम्भ किये थे, पत्थर मत फेंको, हमें चोट लग रही है। उस दिन के भूतों की पोल इस प्रकार खुल गई और इसी प्रकार मेरा भूतों का भय तो भाग ही गया।"

बालक की इस घटना को सुनकर पण्डित शम्भुदत्त जी ने बालक अमर सिंह को उठाकर छाती से लगा लिया और मेज पर खड़ा कर दिया और कहा—हम भी ब्राह्मण हैं और तुम्हारे गुरु हैं, तुम निर्भय होकर गायत्री मन्त्र सुनाओ, तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा और न ही गायत्री मन्त्र की शक्ति घटेगी। यह बात सुनकर बालक को विश्वास हो गया और उसने खड़ा हो कर गायत्री मन्त्र सुनाया।

गायत्री मन्त्र क्या था, हिन्दी की कुछ पंक्तियों का दोहा था, जिस में श्री कृष्ण जी के माधव आदि नाम थे। वह गायत्री इस रूप में सिखाई गई—

दोहा—राम कृष्ण बलदेव दामोदर,
हरि माधव मधुसूदन नाम।
कालीमर्दन कंसनिकन्दन,
देवकीनन्दन त्वं शरणम्॥
इतने नाम जपो निशिवासर,
जन्म जन्म के भय हरणम्।

इस को सुनकर पण्डित जी को हंसी भी आई और दुःख भी हुआ। छः महीने सेवा करवा कर और पांच रुपये दक्षिणा लेकर भी बालक के साथ कितना छल किया। बालक तो उस हिन्दी के दोहे को श्रद्धा के कारण गायत्री मन्त्र ही समझता था। बालक की श्रद्धा से प्रसन्न होकर पण्डित शम्भुदत्त जी ने चार रुपये पारितोषिक के दिये और उस को सच्चा गायत्री मन्त्र सिखाया, जो कि निम्न प्रकार से है--

ओ३म भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुवरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥

अमरसिंह चार रुपये लेकर हंसता कूदता अपनी माता जी के पास गया और जाकर कहा कि जिस गायत्री मन्त्र के सीखने के लिये पांच रुपये दक्षिणा दी थी उसके सुनाने से ही यह चार रुपये पारितोषिक रूप में मिले हैं। किन्तु माता जी! उस पण्डित ने छः महीने सेवा करवा कर और पांच रुपये दक्षिणा लेकर भी मुझे गायत्री मन्त्र नहीं सिखाया, एक हिन्दी का दोहा सिखा कर मेरे साथ छल किया। किन्तु आज एक सच्चे ब्राह्मण के दर्शन हुए हैं, जिसने सच्चा गायत्री मन्त्र सिखाया और चार रुपये भी दिये। वे महर्षि दयानन्द और वैदिक धर्म की जय बोलते हैं तथा अपने आप को आर्यसमाजी कहते हैं। धर्म की बड़ी अच्छी-अच्छी बातें सुनाते हैं।

माता जी ने बालक से कहा—बेटे! ऐसे धार्मिक पण्डित को तो अपने घर भोजन कराना चाहिये, इस लिए तू उन को अपने घर भोजन करने के लिए निमन्त्रण दे आ। किन्तु साथ-साथ यह भी कह देना कि हम जाट साध हैं, हमारे घर ब्राह्मण नहीं आते, इसलिए हम पण्डित जी को चावल, मीठा, घी, दूध आदि सीधा देदेंगे, वे बना कर खालेंगे।

बालक अमरसिंह ने पण्डित जी को भोजन के लिये निमन्त्रण दे दिया और माता जी वाली सारी बात कह सुनाई। पण्डित जी ने कहा कि हम नीच ऊंच का भेद और छूआछात को नहीं मानते। माता जी से कह देना स्नानादि करके शुद्ध प्रकार से भोजन बना लें, हम भोजन कर लेंगे। दूसरे दिन पण्डित जी ने उन के घर भोजन किया और माता जी ने अमसिंह के द्वारा चार रुपये पारितोषिक वाले और एक रुपया और मिलाकर पांच रुपये दक्षिणा के रूप में पण्डित शम्भुदत्त जी को "पुत्र! ब्राह्मणों के रुपये नहीं रखा करते" यह कहकर दिला दिये।

पण्डित शम्भुदत्त जी ने बालक अमरसिंह व और भी आर्यसमाज के सिद्धान्तों की अच्छी-अच्छ शिक्षायें दीं। इस के फल स्वरूप बालक अमरसि आगे चल कर कट्टर आर्यसमाजी बन गया औ मरण पर्यन्त बड़े उत्साह से आर्यसमाज का का करता रहा। पहले पटवारी रहते हुए अमरसिंह जी बादली, कुतानी आदि ग्रामों में वहाँ के निवासियों क आर्यसमाजी बनाया। फिर अनेकों वर्षों रोहतक जाट स्कूल में संरक्षक तथा अध्यापक के रूप में सेवा करते हुए हजारों बालकों पर आर्यसमाज का गहरा रंग चढ़ाया। नियम पूर्वक प्रातः सायं दैनिक सन्ध्या और साप्ताहिक हवन परिपाटी आर्य कुमार सभा की स्थापना करके डाली। आज भी सन्ध्यादि जाट स्कूल के छात्रावास में प्रचलित है इस का श्रेय मास्टर अमरसिंह जी को ही है।

उपरि लिखित घटना से पाठक गण समझ गये होंगे कि महर्षि दयानन्द के आने से पूर्व इस देश की कैसी भयङ्कर अवस्था थी। जन्म के आधार पर अपने आप को ब्राह्मण मानने वाले मिथ्याभिमानी वेद और धर्म का ठेका लिये हुए थे। वेद शास्त्र का पढ़ाना तो दूर रहा, गायत्री मन्त्र तक नहीं सिखाते

थे। आज महर्षि दयानन्द की दया से मनुष्य मात्र को बिना किसी भेद भाव के गायत्री मन्त्र सीखने का ही नहीं, वेद और सब धर्म-शास्त्र पढ़ने का जन्मसिद्ध अधिकार मिला हुआ है। इस अधिकार के फल स्वरूप जिन जातियों को वेद शास्त्र पढ़ने का अधिकार इन पाखण्डियों की धूर्तता से नहीं था। आज उन में से सैंकड़ों वेद शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित महर्षि दयानन्द की दया से उत्पन्न हो गये. तथा उन में से कितनों ने ही धर्म प्रचार के निमित्त अपना सारा अमूल्य जीवन समर्पित कर रखा है।

मनुष्य जाति पर महर्षि का कितना ऋण और उपकार है उसके व्याख्यान करने की शक्ति वाणी में, लिखने की शक्ति लेखनी में, कहां से आ सकती है? ज्यों-ज्यों समय बीतता जायेगा त्यों-त्यों यह मनुष्य-जाति ऋषि के उपकारों को समझती जायेगी।

* * *

आर्य! आशावादी बन!

छाई रहे हर ओर निराशा, ऐसी मन में मत रख आशा।
अपना यूँ न खो यौवन, आर्य आशावादी बन॥
जो चाहे तू कर सकता है, न तू जग में मर सकता है।
तेरा है अमर जीवन, आर्य आशावादी बन॥
जीवन का निर्माण है करना, और विश्व का राज है करना।
निकलना अब तनिक बन-ठन, आर्य आशावादी बन॥
संकट से तू मत घबराना, पथ से विचलित मत हो जाना।
चलना एकाग्र करके मन, आर्य आशावादी बन॥
तोड़ नहीं आशा की तारें, 'नाज़' अवश्य आयेंगी बहारें।
फिर से होगा हरा उपवन, आर्य आशावादी बन॥

—(श्री हरिश्चन्द्र "नाज़" गढ़ी घसीटा सोनीपत)

"यदि"

उठो तुम याद में नेता यदि विश्राम चाहते हो।
बजा दो नाद वेदों का यदि आराम चाहते हो॥
तुम्हारा बन्दा बैरागी बहादुर वीर शेवाजी।
बनो नलवा, औ प्रताप यदि तुम नाम चाहते हो।
उठो हिन्दी दिखाओ राजपूती शान तुम अपनी।
बनो दुर्गावती, राणा, यदि तुम काम चाहते हो॥
मैं समझा हूँ नहीं वे खूं तुम्हारा राजपूतों का।
उठो अब बहन भाई मिलयदि इनआम चाहते हो॥
दिया सन्देश स्वामी ने नहीं उसको भुलाना है।
यही काफी मिला "आनन्द" यदि पैगाम चाहते हो॥

—(श्री आनन्द बी० टी० अलीपुरी सोनीपत)

संस्कृत परीक्षायें

विरजानन्द संस्कृत परिषद् की परीक्षायें मास अक्टूबर १९५४ में होंगी। इस विषय में पाठविधि एवं नियमावली निम्न पते से मंगायें। निश्चित तिथि की सूचना बाद में दी जावेगी।

आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तिथि १५ अगस्त १९५४ कर दी गई है।

जगन्नाथ
बी० ए०, एल एल० बी०, जे० डी०,
प्रभाकर, सि० शास्त्री
परीक्षा मन्त्री,
विरजानन्द संस्कृत परिषद्
लाल दरवाज़ा, बाजार सीताराम, देहली।

सर्पविष की चिकित्सा

(लेखक--आचार्य भगवान्देव जी गुरुकुल झज्जर)

[३]

क्या आयुर्वेद शास्त्र में सर्पविष की चिकित्सा औषध नहीं है ? इस लेखमाला के लेखों को पढ़कर अनेक पाठकों ने यह जिज्ञासा वा आग्रह किया कि मैं इस विषय में विस्तार से लिखूँ । इस विषय में मेरी भी इच्छा लिखने की पर्याप्त दिनों से चली आती है। क्योंकि प्रतिवर्ष एक लाख से अधिक मृत्यु तो सांप के काटने से केवल भारतवर्ष में ही हो जाती हैं। लाखों मनुष्यं तथा अन्य प्राणियों को जो कष्ट सर्पादि विषैले जन्तुवों के काटने से होता है उसका अनुभव वे ही करते हैं जिन पर यह आपत्ति पड़ती है। अथवा इसका भली भांति ज्ञान सर्पविष चिकित्सकों को ही है। सर्प सभी स्थानों पर पाये जाते हैं। और सर्वत्र सभी प्राणियों को सदा इनका भय बना रहता है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को इन के विष की चिकित्सा का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यकीय है। ऐसी आपत्ति पड़ने पर मेरे लेख को पढ़ने वाले पाठक दुःखी प्राणियों की सेवा कर सकेंगे। और अधिक नहीं तो न्यून से न्यून जब तक कोई सफल चिकित्सक रोगी तक न पहुंच जाए तब तक उसकी प्रारम्भिक चिकित्सा द्वारा प्राण-रक्षा की जा सकेगी। इतना लाभ तो अवश्य उठा सकेंगे। इसी आशा से अनेक सफल चिकित्सकों तथा अपने अनुभव के आधार पर तथा इस विषय में जो हमारे आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थों में हमारे पूज्य ऋषि मुनियों ने अपनी तपस्या द्वारा अनुभव करके जो ज्ञान संसार के कल्याणार्थ हमारे तक पहुँचाया है वह सर्वसाधारण के लाभ के लिए विस्तार से इन लेखों में वर्णन कर रहा हूँ। सर्पविष की चिकित्सा से पूर्व सर्पों के कितने भेद वा जातीयां हैं। उनमें कौन से विषैले और कौन से निर्विप होते हैं। इत्यादि विषयों को खोल कर लिखता हूं। वैसे तो सर्पों कें बहुत भेद हैं। किन्तु महर्षि धन्वन्तरी जी सर्पों के दो भेद मानते हुए सुश्रुत में इस प्रकार लिखते हैं।

"तत्र दृष्टिनिश्वासविषा दिव्याः सर्पा भौमास्तु दंष्ट्राविषाः"

१—प्रथम दिव्य सर्प जिनकी दृष्टि और निश्वास मात्र से विष चढ़ता है और प्राणी के प्राणपखेरू उड़ जाते हैं। इस विषय में महर्षि जी अन्यत्र लिखते हैं।

असंख्या वासुकिश्रेष्ठा विख्यातास्तक्षकादयः।
महीधराश्च नागेन्द्रा हुताग्निसमतैजसः॥
ये चाप्यजस्रं गर्जन्ति वर्षन्ति च तपन्ति च।
ससागरगिरिद्वीपा यैरियं धार्यते मही॥
क्रुद्धा निश्वासदृष्टिभ्यां ये हन्युरखिलं जगत्।
नमस्तेभ्योऽस्ति नो तेषां कार्यं किंचिच्चकित्सया॥

अर्थ—वासुकि जिन में श्रेष्ठ है ऐसे तक्षकादि सांप असंख्य हैं, ये नागेन्द्र, होमाग्नि--समतैजस और पृथ्वी को धारण करने वाले महीधर आदि हैं। ये निरन्तर गर्जते हैं, बरसते हैं, तपते हैं। समुद्र, पर्वत द्वीप सहित पृथ्वी को इन्होंने धारण किया हुआ है। जो यह क्रुद्ध हो जावें तो इनके निश्वास और दृष्टि-मात्र से सम्पूर्ण जगत् नष्ट हो सकता है। इनके लिए नमस्कार है, उनकी चिकित्सा के विपय में कोई सम्बन्ध नहीं अर्थात् उनके विप की कोई चिकित्सा नहीं हो सकती। ऐसा दिव्य सर्पों के विपय में लिखा है। यह ऋपियोंका अलंकार सा प्रतीत होता है। अथवा पीछे का प्रक्षेप वा मिलावट है। इन दिव्य सर्पों का दर्शन वा श्रवण तो इस संसार में हो नहीं सकता। न आज तक किसी विद्वान् ने इस विपय पर प्रकाश ही डाला है। इन तक्षादि सर्पों की गाथायें पुराणों

में अवश्य आती हैं। न जाने इस युग में यह लुप्त ही हो गए हैं अथवा यह कल्पित हैं। महाभारत में यह घटना अवश्य लिखी है कि परीक्षित को तक्षक सर्प ने डसा था। यह उस काल का सबसे अन्तिम राजा था और सर्प के डसने से उनकी मृत्यु हो गई थी। महाभारत में लिखा है कि—

वेष्टयित्वा च वेगेन विनद्य च महास्वनम्।
अदशत्पृथिवीपालं तक्षकः पन्नगेश्वरः॥
॥ आदिपर्व ॥

अर्थात्-सर्पनाथ तक्षक ने शरीर से महाराजा परीक्षित के शरीर को लपेट करके अतिगर्जन के साथ उसे काट लिया। किन्तु इस जगत् में इनके अस्तित्व का कोई प्रमाण नहीं है।

२—दूसरा भेद महर्षि जी सर्पों का पार्थिव लिखते हैं। पार्थिव अर्थात् दंष्ट्राविष हैं जिनके विषय में महर्षि जी इस प्रकार लिखते हैं।—

ये तु दंष्ट्राविषा भौमा ये दशन्ति च मानुषान्।
तेषां संख्यां प्रवक्ष्यामि तथावदनुपूर्वशः॥

पृथ्वी के सांप दंष्ट्राविष वाले होते हैं। यह मनुष्यों को दांतों से काटते हैं। और इनकी दाढ़ों में विष होता है। इनकी संख्या के विषय में महर्षि जी ने सुश्रुत में इस प्रकार लिखा है—

अशीतिस्त्वेव सर्पाणां भिद्यते पञ्चधा तु सा।
दर्वीकरा मण्डलिनो राजिमन्तस्तथैव च॥
निर्विषा वैकरञ्जाश्च त्रिविधास्ते पुनः स्मृताः।
दर्वीकरा मण्डलिनो राजिमन्तश्च पन्नगाः॥

अर्थ—ऐसे सर्प अस्सी प्रकार के होते हैं, इनके भेद पांच हैं। यथा दर्वीकर, मण्डली, राजिमान्, निर्विष और वैकरञ्ज, यह फिर आकार की दृष्टि से तीन प्रकार के माने हैं। यथा दर्वीकर, मण्डली और राजिमान्। इनके भेदों के विषय में विस्तार से लिखते हैं।

१—दर्वीकर

सुश्रुत में लिखा है कि—

तेषु दर्वीकरा ज्ञेया विंशतिः षट् च पन्नगाः॥

अर्थ—उनमें दर्वीकर २६ प्रकार के होते हैं। दर्वी कड़छी को कहते हैं। कर का यहाँ फण के अर्थ में प्रयोग हुआ है। अर्थात् कड़छी के समान शिर वा फण वाले सर्पों को दर्वीकर कहते हैं। महर्षि जी दर्वीकरों के भेद इस प्रकार लिखते हैं—

तत्र दर्वीकराः—"कृष्णसर्पो महाकृष्णः, कृष्णोदरः, श्वेतकपोतो महाकपोतो, बलाहको, महासर्पः, शंखकपालो, लोहिताक्षो, गवेधुक्, परिसर्पः, खण्डफणः, ककुदः, पद्मो, महापद्मो, दर्भपुष्यो, दधिमुखः, पुण्डरीको, भ्रुकुटिमुखो, विष्किरः, पुष्पाभिकीर्णो, गिरिसर्पः, ऋजुसर्प, श्वेतोदरो, महाशिरा, अलगर्द, आशीविष, इति"

वैसे तो ऋषियों ने यह २६ प्रकार के माने हैं परन्तु जितने भी यह फण वाले सांप हैं सब इन में आ जाते हैं। यह अपने फण को जब इच्छा होती है प्रसारित करते अर्थात् फैलाते हैं इसी प्रकार संकुचित करते रहते हैं। कड़छी के समान फण होने के कारण इनका नाम फणी अर्थात् दर्वीकर पड़ा है ऊपर लिखे श्लोकों में इन्हीं के नाम दिये हैं, जिनका अर्थ इस प्रकार है—

१—काला सांप जो घोर काला हो, २. काले पेट वाला सांप, ३. सफेद कबूतर जैसे रंग वाला, ४. बड़े कबूतर के समान रंग वाला, अर्थात् जिसका सर्वथा कबूतरी रंग हो, ५. बादल के समान रंग वाला, ६. बड़ा सांप अर्थात् अजदाहा, ७. शंख के समान शिर हो, ८. लाल आंखों वाला, ९. गायों के समान रंग वाला, १०. हर समय घूमने वाला अर्थात् शिकारी सांप, ११. जिसके फण मध्य में से फटे हुए हों, १२ ककुद अर्थात् कलगी वाला सांप, १३. कमल के समान चिह्न वाला, १४. बड़े कमल के समान चिह्न वाला, १५. जिसका रंग कासनी के पुष्प के समान हो, १६. दही के समान अत्यन्त सफेद मुखवाला, १७. जिसके फण पर पुण्डरीक कमल का चिह्न हो, १८. जिसका भृकुटि के समान छोटा मुख हो, १९. अत्यन्त विषैला, २०. पुष्पों के गुच्छों के

समान रंग वाला, २१. पहाड़ी (पर्वतीय) सांप, २२. सीधा सांप; २३. सफेद पेट वाला, २४. जिसकी शिरायें मोटी मोटी हों, २५. जल में रहने वाला, २६. जिसका विष तुरन्त ही प्रभाव डाले। इस प्रकार के चिह्न और आकृतियां से इन सर्पों का चिकित्सकों को जानने का यत्न करना चाहिए।

इनके विषय में सुश्रुत में लिखा है कि—

रथाङ्गलाङ्गलच्छत्र स्वस्तिकाङ्कुशधारिणः।
ज्ञेया दर्वीकरः सर्पाः फणिनः शीघ्रगामिनः॥

अर्थात्-चक्र (पहिया), हल, छत्र, स्वस्तिक, (चौराहा) अंकुश आदि के चिह्न इनके फणों के उपरिभाग पर होते हैं। यह सभी फण वाले तथा शीघ्रगामी होते हैं। चरक शास्त्र में यह लिखा है कि 'दर्वीकरः फणी ज्ञेयः' अर्थात् फणवाले को ही दर्वीकर कहते हैं। कोई कोई सर्प तो इन में घोडे से भी तेज दौड़ने वाले होते हैं। जब ये क्रोध में आते हैं तो रुक कर और फण फैला कर आक्रमण करते हैं और प्राणी को काटते हैं। इन फणियरों को भोगी भी कहते हैं। ये गोखुर (Cobra) शंखचूर (King Cobra) फनेर, या कालीनाग, तथा केवट आदि नामों से प्रसिद्ध हैं। फण और शीघ्र चलना इनके मुख्य लक्षण हैं, ये अतिक्रोधी होते हैं। काटते समय क्रोध के कारण एक तिहाई के लगभग फण फैलाकर खड़े हो जाते हैं। कितने तो इन में इतने विषैले होते हैं कि जिनके काटने से मृत्यु कुछ ही मिनटों में हो जाती है। ऐसे सांप पुराने टूटे घरों और खण्डहरों में रहा करते हैं। यह दो से छः फीट तक लम्बे होते हैं। कोई कोई इनसे भी अधिक लम्बे होते हैं। इनमें से कुछ का रंग मटियाला, दूधिया, पीत, हरित, सुनहरा और ताम्रवर्ण का होता है। ये अत्यन्त विषैले सर्प साधारणतया दो सौ वर्ष अथवा इससे भी अधिक वर्ष तक जीते हैं। 'दिवा दर्वीकराः स्मृताः' ये दर्वीकर सांप दिन में घूमा करते हैं अथवा इनके घूमने का समय दिन ही है। इन में "दर्वीकरास्तु तरुणा.........मृत्युहेतवः," दर्वीकर सांप तरुण अवस्था अर्थात् जवानी में अधिक विषैले होते हैं। यह यदि काट जावें तो मृत्यु के कारण होते हैं।

इनके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इनकी स्मरण-शक्ति अतितीव्र होती है अतः अपने सताने वाले और मारने वाले को वर्षों के पीछे तक भी पहचानते हैं और पहचान कर काट लेते हैं। जिस किसी ने कभी ऐसे सर्प को मारने का यत्न किया हो और मरने से सर्प बच गया हो तो उससे सावधान रहना चाहिये, ऐसा सर्पविशेषज्ञों का मत है। जिस प्रकार दोष तीन होते हैं उसी प्रकार सांपों की प्रकृति भी तीन होती हैं। दर्वीकर साँप वात प्रकृति वाले होते हैं। दर्वीकर के काटने से उसके विष से रोगी की जो अवस्था होती है उसके विषय में सुश्रुत में इस प्रकार लिखा है।

"तत्र दर्वीकरविषेण त्वङ्नयननखदशानवदनमूत्रपुरीषदंशकृष्णत्वं रौक्ष्यं शिरसो गौरवं सन्धिवेदना कटिपृष्ठग्रीवादौर्बल्यं जृम्भणं वेपथुः स्वरावसादो घुर्घुरको जडता शुष्कोद्गारः कासश्वासौ हिक्का वायोरूर्ध्वगमनं शूलोद्वेष्टनं तृष्णा लालाश्रावः फेनागमनं श्रोतोऽवरोधस्तास्ताश्च वातवेदना भवन्ति।"

अर्थात्—दर्वीकर अर्थात् फण वाले साँप के कोटने से विष के कारण रोगी की त्वचा, नख, आंख, मुख, मूत्र, मल एवं दंशस्थान सब काले पड़ जाते हैं। रूक्षता (रूखापन) शिर में भारीपन, सन्धियों अर्थात् जोड़ों में वेदना (पीड़ा) कटि, पीठ, ग्रीवा में दुर्बलता, जम्भाई आना, कम्पन, स्वर का बैठना, गले में घर्घराहट, जड़ता, सुखे उद्गार, कास, श्वास, हिक्का (हिचकी), वायु का ऊपर को जाना, शूल, ऐंठना, प्यास, लार का गिरना, झाग का आना, स्रोतों का बन्द हो जाना, और वायु से होने वाली नाना वेदनायें (पीड़ायें) होती हैं यह सब वात के लक्षण हैं। वातज रोगों में जो लक्षण होते हैं, वही दर्वीकर सर्पों के काटने से होते हैं। क्योंकि दर्वीकर सांप वातप्रधान होते हैं। अतः उनके काटने से वायु के प्रकोप के विशेष लक्षण देखने में आते हैं। सांप के काटने से होने वाली अधिक

मृत्युयें दर्वीकर के काटने से होती हैं। यह भारतवर्ष के प्रत्येक भाग में मिलता ही है। इसके अतिरिक्त दक्षिणी एशिया के चीन आदि देशों व मलाया आदि द्वीपों में मिलता है। इसकी तीन जातियां प्रायः भारतवर्ष में मिलती हैं। पंजाब, राजस्थान, मध्यभारत तथा सौराष्ट्र में काले रंग का सर्प मिलता है, जिसके फन पर कोई स्पष्ट चिह्न नहीं होता। बङ्गाल में प्रायः ऐसे फणियर मिलते हैं जिनके फण पर श्वेत या मैले से रंग का चक्र का चिह्न मिलता है। दूसरी प्रकार का एक सर्प बङ्गाल में और भी मिलता है जिसके फण पर ऐनक का चिह्न मिलता है।

भारतवर्ष में प्रायः फणियर का रंग काला ही होता है, कहीं २ हल्का पीला अथवा बादामी रंग भी देखने में आता है। भूमि के रंग के अनुसार भी फणियरों का रंग देखने में आता है। पूर्वी अफ्रीका में लाल भूमि होने के कारण ईंट के समान लाल रंग के फणियर देखने में आते हैं। दक्षिणी भारत में काली भूमि होने के कारण फणियर का रंग स्लेट के समान काला होता है। सिन्ध आदि रेतीले देशों में दर्वीकरों का रंग रेत के समान ही होता है। फणियर को संगीत सुनने में बड़ी रुचि होती है। इसलिये सपेरे दर्वीकरों को ही पकड़ते हैं। बीन का स्वर तो इसको मोह ही लेता है। बीन, सितार, हारमोनियम आदि बाजों के स्वरों को सुनकर यह बिल से बाहर निकल आता है। जहाँ यह वीर होता है वहाँ डरपोक भी होता है। थोड़ा सा शब्द सुनकर भागने का यत्न करता है। और मनुष्य से बचने के लिये अपने आप को छुपाने का यत्न करता है। किन्तु अवसर पड़ने पर वीरता-पूर्वक आक्रमण भी करता है। दर्वीकरों में सबसे भयंकर विषैला सांप शेषनाग है। इसी को अंग्रेजी में (King cobra) तथा अन्य देशी भाषाओं में महानाग शंखचूर आदि कहते हैं। यह १८-२० फीट तक देखने में आता है। प्रायः इसकी लम्बाई १० वा १२ फीट ही होती है। इसके काटने से पक्षाघात हो जाता है और श्वास की गति रुकने से दस-पन्द्रह मिनट में मृत्यु हो जाती है। इसके काटने से हाथी जैसे पशु भी परलोक सिधार जाते हैं। जितने विष से एक मनुष्य मरता है, शेषनाग उस से दशगुणा विष एक बार के दंश में छोड़ देता है। शेषनाग के दर्शन घने जगलों तथा पर्वतों में ही होते हैं। कितने ही प्रान्तों के हिन्दू लोग शेषनाग की पूजा करते हैं। ऐसे भियंकर सांपों के काटने पर प्रायः चिकित्सक के पास पहुंचने का समय भी नहीं मिलता। पहले ही रोगी काल के ग्रास में समा जाता है। शेषनाग अपना निर्वाह सांपों को खाकर करता है। सांपों को भोजन केरूप में खाने के कारण इसका नाम भुजंगभुक् भी कहा है। यहां तक कि यह बड़े-बड़े अजगरों को भी खा जाता है। फिर मनुष्य जैसे प्राणी की क्या शक्ति है जो इस सर्प के काटने पर मृत्यु से बच सके। इसलिये इस भयंकर प्राणी शेषनाग से सर्वथा बच कर दूर रहना चाहिए। छेड़छाड़ नहीं करनी चहिये।

वैसे तो सभी दर्वीकरों के विषय में शास्त्रकार यही लिखते हैं कि—"दर्वीकराणां विषमाशुघाती" दर्वीकर अर्थात् फण वाले सांपों का विष शीघ्र ही प्राण नाश करता है। इसलिए यह सिद्ध ही है कि काले सांप का काटा हुआ तुरन्त ही मर जाता है। इसलिये काले सर्प का नाम सुनकर लोग प्रायः भयभीत हो जाते हैं। (क्रमशः)

सुधारक के विषय में सम्मति

यह पत्र आर्य जाति में विद्युत का सञ्चार कर अपने सुधा+र+क नाम को चारितार्थ करेगा। निर्भयता पूर्वक चतुर्दिक् क्रान्तिका सञ्चार कर आर्य जाति को गौरवान्वित करेगा। राष्ट्र के जीवन में आर्यत्व की विद्युत् का सन्चार हो, यही इस युग की सब से बड़ी पुकार है।

श्री शिवदयालु जी उपप्रधान
भारतीय जनसङ्घ उत्तर प्रदेश

"सुधारक" के ग्राहक बढ़ायें

राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान

(गुरुकुल के सम्बन्ध में चार प्रश्नों के उत्तर)

[ले०—श्री मुनि देवराज जी विद्या वाचस्पति]

(१)

[१]

प्रश्न—(१) गुरुकुल क्या है ?

प्रश्न—(२) गुरुकुल का उद्देश्य क्या है ?

प्रश्न—(३) गुरुकुल आश्रम-जीवन का लक्ष्य क्या है ?

प्रश्न—(४) वर्तमान काल में किसी के आगे हाथ पसारे बिना गुरुकुल कैसे चलाया जा सकता है ?

* * *

प्रश्न—(१) गुरुकुल क्या है ?

उत्तर—'कुल' शब्द का अर्थ है 'घर'। गुरुकुल शब्द का अर्थ हुआ गुरु का घर। गुरुकुल में अर्थात् गुरु के घर में ब्रह्मचारी (विद्यार्थी) भिन्न प्रकार का शिक्षण प्राप्त करने के लिये गुरु के पास निवास करते हैं, तब गुरु उनका उपनयन करके अपने पास उन्हें रखने को उद्यत होता है।

गुरु के लिये दूसरा शब्द आचार्य है। गुरु का अर्थ तो इतना ही है कि जो छात्र को उपदेश करे वह गुरु (गृणाति शब्दमुपदिशति यः स गुरुः)। आचार्य शब्द का अर्थ होता है जो समस्त पदार्थों का ज्ञान करावे, और सदाचार की शिक्षा दे, अथवा विद्यार्थी को सदाचारी रहने का अभ्यास करावे। (आचार्यः कस्मात्-आचिनोत्यर्थान् आचारं ग्राहयतीति च) समस्त पदार्थों का ज्ञान कराना यह क्रियात्मक शिक्षा द्योतक है। पदार्थ स्वरूप से भी विद्यार्थी के सामने उपस्थित किये जाते हैं और उनकी निर्माण प्रक्रिया भी विद्यार्थियों से पदार्थ-निर्माण कराकर सिखलाई जाती है। इस प्रकार ब्रह्मचारी को ब्रह्म अर्थात् सृष्टि के निर्माण की प्रक्रिया में सिद्धहस्त किया जाता है। सृष्टि निर्माण प्रक्रिया में सिद्धहस्त विद्यार्थी वास्तव में ब्रह्मचारी बन जाता है। ज्ञान और कर्म में निपुण होने के लिये, संकल्प करके जो विद्यार्थी अपने आप को गुरु व आचार्य के समर्पण कर देता है उसे आचार्य अपने पास लेता हुआ उसका उपनयन करता है। और उसके तीनों प्रकार के अज्ञान को दूर करता है। सृष्टि कैसे चल रही है, इसका ज्ञान (आधिदैविक ज्ञान) कराकर पहिला अज्ञान दूर करता है। सृष्टि के नियमों के आधार पर समाज और शरीर का निर्माण और निर्वाह किस प्रकार पारस्परिक सहयोग से हो रहा है, इसका ज्ञान कराकर (आधिभौतिक ज्ञान) विद्यार्थी के दूसरे अज्ञान को दूर करता है। तथा सम्पूर्ण रचना में चैतन्य तत्त्व और उसकी सहवर्तिनी शक्तियाँ किस प्रकार कार्य कर रही हैं, इसका ज्ञान (अध्यात्मिक ज्ञान) कराकर विद्यार्थी के तीसरे अज्ञान को दूर करता है। यह तीन अज्ञान तीन रात्रि हैं। पूर्वोक्त तीन प्रकार की अज्ञान रात्रियों को दूर करने के लिये जिज्ञासु विद्यार्थी को आचार्य अपने घर में (गृह में = गर्भ में) इस प्रकार सुरक्षित रखता है, जिस प्रकार बालक को माता अपने गर्भ में सुरक्षित रखती है। आचार्य ब्रह्मचारी बालक को सब प्रकार से सम्पन्न करता है। वेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में कहा है—"आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः। तं रात्रीस्तिस्र उदरे बिभर्त्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः॥"

(अथर्व० का० ११ सू० ५ मं० ३)

गुरुकुल में रहता हुआ ब्रह्मचारी शरीर, मन बुद्धि, आत्मा की सम्पूर्ण योग्यताओं से सम्पन्न हो जाता है। तब उसे देखने के लिये, अर्थात् उसकी जाँच-पड़ताल करने के लिये राष्ट्र के विद्वान् लोग गुरुकुल में इकट्ठे होते हैं; ऐसी वेद की आज्ञा है। इससे प्रतीत होता है कि ब्रह्मचारी का अपने शिक्षण-काल में गुरुकुल से बाहर जाना अर्थात् सामान्य जन-सम्पर्क में रहना वेद को अभीष्ट नहीं है। यदि ज्ञान-प्राप्ति की दृष्टि से गुरुकुल से बाहर जाना अभीष्ट ही हो तो आचार्य वा आचार्य के सदृश किसी विद्वान् कर्मकुशल मनुष्य के निरीक्षण में ब्रह्मचारी को बाहर जाना चाहिये। इसका अभिप्राय इतना ही है कि बाह्य प्रभावों से ब्रह्मचारी की रक्षा हो सके।

ब्रह्मचारी कहा ही उसको जा सकता है जिसका पृथ्वी से लेके परमात्मा तक सम्पूर्ण पदार्थों के ज्ञान-विज्ञान के ग्रहण करने का स्वभाव बन चुका हो। "ब्रह्मणि वेदे परत्मात्मनि वा चरितुं शीलं यस्य स ब्रह्मचारी" इसके लिये जिसने शरीर इन्द्रिय मन बुद्धि तथा अपनी सर्व वृत्तियों पर विजय प्राप्त कर ली हो वह ब्रह्मचारी कहलाता है। इस प्रकार हम समझते हैं गुरुकुल में रहते हुए ब्रह्मचारी का आचार्य के साथ ऐसा घनिष्ठ सम्बन्ध होता है, जो कभी टूट नहीं सकता, जिसके लिये देश और काल की दूरी बाधक नहीं होती। ऊपर ज्ञान और विज्ञान शब्द आये हैं, उनको भी यहाँ स्पष्ट कर देना आवश्यक है। किसी पदार्थ की रचना के सिद्धान्त का ज्ञान अर्थात् बौद्धिक ज्ञान यहाँ ज्ञान शब्द से अभीष्ट है। और उस ज्ञान का प्रयोगशाला में अथवा सृष्टि में प्रयोग द्वारा और निरीक्षण करके दिखलाने को विज्ञान कहा है। ज्ञान और विज्ञान दोनों परीक्षण द्वारा हुआ करते हैं। अतः किसी पदार्थ के शिक्षण देने में ज्ञान और विज्ञान दोनों सहायक होते हैं। कहीं पर ज्ञान प्रधान विज्ञान होता है। और किसी अन्य स्थान पर विज्ञान द्वारा ज्ञान की उपलब्धि कराई जाती है। आन्तर और बाह्य विकास कराने के लिये ज्ञान और विज्ञान दोनों की आवश्यकता है। तभी शिक्षण पूर्ण होता है। भगवद्गीता में श्रीकृष्णचन्द्र महाराज ने अर्जुन को कहा 'हे अर्जुन! मैं तुझे ज्ञान और विज्ञान दोनों का अब उपदेश करूँगा, जिसको जानकर फिर संसार में कुछ जानने योग्य नहीं रह जाता। कहा है—"ज्ञानं ते ऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः। यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातमवशिष्यते" यहाँ पर अर्जुन श्रीकृष्ण के शिष्य हैं और श्रीकृष्ण अर्जुन के गुरु व आचार्य हैं। भगवद्गीता के दूसरे अध्याय में, अर्जुन ने श्रीकृष्ण को कहा है कि मैं तेरा शिष्य हूँ और तेरी शरण में आया हूँ। तू मुझे शासन कर (शिष्योऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्) अर्जुन ने कहा है कि मैंने अपने आपको तेरे समर्पण कर दिया है इसलिये तू मेरा शासन कर, मुझे शिक्षा दे। इसी आधार पर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को (ज्ञानं ते ऽहं सविज्ञानम्--इत्यादि) कहा।

ऊपर के सम्पूर्ण कथन को इस प्रकार कह सकते हैं कि 'गुरुकुल' वह संस्था है जहाँ पर शिक्षार्थी अपनी सम्पूर्ण इच्छाओं का परित्याग करके और अपने आपको आचार्य के समर्पण करके उसके अनुशासन में रहते हुए, अपनी शक्ति के अनुसार पूर्ण विद्या को ग्रहण करने के लिये उद्यत रहते हैं।

प्रश्न—(२) गुरुकुल का उद्देश्य क्या है?

उत्तर– यह प्रश्न ऐसा ही है, जैसे किसी व्यक्ति ने अपना मकान बनवाना हो और उसके लिये अन्य साधन सामग्री के साथ ईंटें पड़ी हुई हों और वह पूछने लगे कि इन ईंटों का क्या उद्देश्य है। इन ईंटों में कुछ ईंटें कच्ची हैं, कुछ अधपकी हैं, और कुछ पकी हुई हैं। भवन निर्माण में सभी तरह की ईंटों की आवश्यकता होती है। कितनी ईंटें किस प्रकार की चाहियें इसकी सूचना मकान के सामान का हिसाब रखने वाला इन्जीनियर अपने काम करने वाले कुम्हार को दे देता है कि किस-किस प्रकार की कितनी-कितनी ईंटें तैयार करके इन्जीनियर को सुपुर्द कर दे। न तो ईंटें अधिक बचें और न कम रहें। इसी प्रकार राष्ट्रभवन के निर्माण कार्य में जिस-जिस प्रकार के विद्वान् राष्ट्र-संचालक को जितनी-जितनी

मात्रा में अभीष्ट हों उसकी सूचना गुरुकुल के आचार्यों को राष्ट्र संचालक द्वारा प्राप्त होती है। और उस सूचना के अनुसार आचार्य लोग राष्ट्र-निर्माण में काम आने वाले ब्रह्मचारी स्नातकों को तैयार करके राष्ट्र-संचालक के सामने उपस्थित करते हैं। राष्ट्र-संचालक उन उपस्थित व्यक्तियों को यथा-स्थान उपयुक्त करता है। इस प्रकार हम समझते हैं कि गुरुकुल का उद्देश्य पूर्ण विद्वान् और कर्मकुशल ऐसे व्यक्तियों को तैयार करना है जो राष्ट्र-निर्माण में यथास्थान पूर्ण उपयोगी हो सकें। और राष्ट्र-संचालक कार्यकर्ता विभिन्न कार्यों में उन व्यक्तियों को लगाकर पूर्णतया सन्तुष्ट हों। ऐसे ही स्नातकों के लिये मनु महाराज की आज्ञा है कि सामने से स्नातक आता हो तो राजा भी उसके लिये मार्ग छोड़ दे। इसका कारण यही है कि गुरुकुल के स्नातक राष्ट्र का आधार होते हैं। इसलिये कहा जा सकता है कि गुरुकुल का उद्देश्य ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न राष्ट्र के आधार व्यक्तियों को तैयार करना है।

इसके अतिरिक्त हम जानते हैं कि संसार के सब व्यक्ति चार भागों में विभक्त हैं (१) शिक्षक २. रक्षक ३. पोषक ४. सहायक। गुरुकुल के ब्रह्मचारी स्नातक, अपने स्वभाव के अनुकूल जो इस प्रकार के सामर्थ्य से युक्त होते हैं कि दूसरों को मार्गदर्शन करा सकें, शास्त्र का क्रियात्मक अध्यापन करा सकें, वे शिक्षक वर्ग में रखे जाते हैं। शिक्षक व्यक्ति राष्ट्र के अन्दर जनता को उसी प्रकार सुरक्षित रखते हैं, जिस प्रकार शरीर के अन्दर विद्यमान अंग प्रत्यङ्ग चर्म से ढके हुए सुरक्षित हैं, इसी प्रकार राष्ट्र की जनता शिक्षकवर्ग से ढकी हुई चर्मस्थानीय शिक्षकवर्ग को चर्म न कहकर शर्म कहते हैं। इसीलिये शर्म कहलाने वाले शिक्षक वर्ग के व्यक्ति अपने नाम के साथ शर्म्मा लगाते हैं। यह व्यक्ति सृष्टि के निर्माणकर्ता के नियमों को और सृष्टि के ज्ञान-विज्ञान को मनुष्यों के सामने उपस्थित करते हैं। इसीलिये ब्रह्म का निर्देश करने में उन्हें पुरानी भाषा में ब्राह्मण कहा जाता है। ब्राह्मण किसी जाति वा सम्प्रदाय का नाम नहीं है। परन्तु वे सब मनुष्य ब्राह्मण कहे जाते हैं जो पूर्वोक्त कर्म करने के लिये अपने स्वाभाविक प्रेरित गुणों के अनुसार पूर्वोक्त कर्म किया करते हैं। इसी प्रकार शरीर के ऊपर बाह्य आक्रमणों से रक्षा के लिए कवच धारण किया जाता है। कवच को वर्म कहते हैं। वर्म के सदृश राष्ट्र के जो व्यक्ति राष्ट्र पर होने वाले बाह्य आघातों व आक्रमणों से रक्षा करने के लिए उद्यत होते हैं उन्हें रक्षक कहा जाता है। यह रक्षक वर्म स्थानीय होने से राष्ट्र के वर्म हैं और अपने नाम के साथ इस भाव का द्योतक शब्द वर्मा लगाते हैं। रक्षकों के लिये पुराना शब्द क्षत्रिय है। क्षत्रिय शब्द का अर्थ है जो 'क्षत्' अर्थात् चोट आक्रमण या प्रहार से राष्ट्रकी रक्षा करे। इसलिये रक्षकों को उनके स्वभाव प्रेरित गुणों के अनुसार कर्म करने से पुरानी भाषा में क्षत्रिय कहा जाता है।

राष्ट्र के जो व्यक्ति राष्ट्र का भरण पोषण करते हैं वे पोषक कहलाते हैं। और पोषक व्यक्ति शिक्षकों और रक्षकों से सुरक्षित रहने के कारण गुप्त (सुरक्षित) कहे जाते हैं। और स्वभाव प्रेरित गुणों के अनुसार कर्म करने से अपने नाम के साथ 'गुप्त' शब्द लगाते हैं। राष्ट्र के साधारण प्रजावर्ग का नाम 'विश' है। विश वर्ग में जो व्यक्ति प्रविष्ट हैं उनका नाम वैश्य है, वैश्य वर्ग राष्ट्र की धन सम्पत्ति का उत्पादक है। इसी धन सम्पत्ति पर और उसके उत्पादकों पर राष्ट्र का भौतिक जीवन आश्रित है। वैश्यवर्ग के सुरक्षित रहने से राष्ट्र का जीवन सुरक्षित रहता है। इसलिये अपने स्वभावानुकूल गुणों के अनुसार कर्म करते हुए राष्ट्र के उपयोगी पदार्थों को उत्पन्न करने और राष्ट्र सम्पत्ति को बढ़ाने तथा उसे सुरक्षित रखने से वैश्यवर्ग के व्यक्ति अपने नाम के साथ साथ गुप्त लगाते हैं। जैसे शरीर में शरीर रूपी राष्ट्र के अन्दर के सब अङ्ग चर्म और वर्म से सुरक्षित व गुप्त रखे जाते हैं, उसी प्रकार राष्ट्र के सब उत्पादक व्यक्तियों को शर्मा और वर्मा लोग गुप्त रखते हैं।

जनता का चतुर्थ भाग जिसके ऊपर राष्ट्र के सम्पूर्ण व्यक्ति खड़े हुए हैं, वह भाग बड़े महत्त्व का है। जिस प्रकार पांव शरीर के सम्पूर्ण अङ्गों तथा भागों को अपने ऊपर सम्हाले हुए हैं, उसी प्रकार राष्ट्र के सम्पूर्ण भार को राष्ट्र का चतुर्थ वर्ग अपने ऊपर सम्हाले हुए है। यह वर्ग इतना समझदार है कि जहां जिस काम के लिये इसे आज्ञा होती है उस काम में सहायता देने के लिये सदा तत्पर रहता है। इसकी तत्परता शिथिल हो जाये तो राष्ट्र का कार्य सुचारू रूप से नहीं हो पाता। हम इस वर्ग को सहायकवर्ग कहते हैं। सामान्यतया तो राष्ट्र में रहने वाले सब ही व्यक्ति राष्ट्र के सेवक होते हैं, परन्तु चतुर्थ वर्गके व्यक्ति राष्ट्र की दृष्टि से सेवक होते हुए अपने उत्तरदायित्त्व के काम की दृष्टि से सहायक कहलाते हैं। उनकी सहायता के बिना सम्पूर्ण राष्ट्र ऐसा अपङ्ग और असमर्थ हो जाता है जैसे पैर कट जाने पर शरीर अपङ्ग और असमर्थ हो जाता है। सहायक व्यक्ति अपनी सहायता की अपेक्षा रखते हुये अपने स्वभावानुकूल गुणों के अनुसार सहायता का कर्म करते हुए प्रत्येक कार्य में शीघ्रगामी होते हैं। इसलिये इनको शूद्र कहा जाता है (शु-आशु कार्येषु द्रवणात्, द्रुतगामित्वाद्वा शूद्रः)। इस प्रकार चारों विभागों का उनके गुणकर्मानुसार गुरुकुलों में शिक्षा दिये जने से राष्ट्र का स्वरूप यथार्थ रीति से सम्पन्न होता है। इस प्रकार राष्ट्र के स्वरूप को सम्पन्न करना गुरुकुलों का उद्देश्य है।

गुरुकुल के उद्देश्य में यह समझ लेना है कि गुरुकुल सब प्रकार के साम्प्रदायिक भावों, जातीयता के बन्धनों और प्रान्तीयता के अभिमानों से मुक्त हैं, राष्ट्र का वह व्यक्ति जो किसी भी प्रकार साम्प्रदायिकता, जातीयता और प्रान्तीयता के संकुचित भावों से बद्ध है वह किसी भी प्रकार गुरुकुल के जीवन से सम्बन्ध में रहता हुआ कोई विशेष लाभ नहीं उठा सकता, क्योंकि गुरुकुल का उद्देश्य सब प्रकार के संकुचित भावों को दूर करके आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक उन्नति के साधनों से शिक्षार्थी को समुन्नत करके राष्ट्र को सम्पन्न करता है। जितनी राष्ट्र के व्यक्तियों में से संकुचितता दूर होती जायेगी उतना वे परमात्मा के ज्ञान के प्रकाश और कर्म से युक्त होकर परमात्मा के दिव्य अनुभव के योग्य राष्ट्र के व्यक्ति बन सकेंगे। इसलिये कहा जा सकता है कि राष्ट्र के व्यक्तियों को परमात्मा की विभूतियों से सम्पन्न होने की शिक्षा देना और उसका क्रियात्मक अभ्यास कराना गुरुकुलों का उद्देश्य है। पहिले दिखलाये गये मानव जाति के चार विभागों में से राष्ट्र का जो व्यक्ति मनोवैज्ञानिक निरीक्षण और परीक्षण के द्वारा जिस-जिस विभाग के अन्तर्गत होगा, उस उस विभाग के अनुसार उस उस व्यक्ति को उन्नत करना गुरुकुल का उद्देश्य है। (क्रमशः)

“आँख और ब्रह्मचर्य”

(लेखक—श्री दौलत राम हिन्दी प्रभाकर
ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगरिया)

आँख का और ब्रह्मचर्य का घनिष्ठ सम्बन्ध है। वीर्य नष्ट होने से आँखें खराब हो जाती हैं, यह बात अक्षरशः सत्य है। भारत के असंख्य अशिक्षित लोग रुपये के लोभ में या अन्य कारण से अथवा अपनी मूर्खता के कारण अपने भोले-भाले शिशुओं का विवाह कर देते हैं। यह विवाह ‘बालविवाह’ कहलाता है। लड़के कामाग्नि के वशीभूत होकर वीर्य का नाश कर लेते हैं। यह वीर्य जिसका कि मूल्य किसी भी प्रकार नहीं आँका जा सकता है, यों ही चला जाता है। नेत्रों के लिये ब्रह्मचर्य पालन उतना आवश्यक है जितना दीपक के लिये तेल। जिस प्रकार दीपक तेल के अभाव में बुझ जाता है उसी प्रकार वीर्य रूपी तेल के अभाव में नेत्र रूपी दीपक बुझ जाता है। वीर्यनाश का प्रभाव सर्वप्रथम नेत्रों पर ही पड़ता है। वीर्य के साथ-साथ आँखों का तेज निकल जाता है। जब मनुष्य खड़ा होता है तो उसकी आँखों के आगे अन्धेरा छा जाता है और कभी-कभी वह चक्कर खाकर भूमि पर गिर भी जाता है। अतः वीर्य की रक्षा के लिये प्रत्येक मनुष्य को ब्रह्मचर्य का पालन व व्यायाम करना चाहिये, जिससे कि वह आजीवन आँखों के देखने का लाभ उठाता रहे।

* * *

वैदिक साहित्य सदन, देहली द्वारा प्रचारित -साहित्य

चरित्र एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी

(१) जीवनामृत	१।)
(२) आगे बढ़ो	१।।)
(३) उपदेशामृत (चारों भाग)	६।।।=)
(४) सफलता की कुंजी	१)
(५) मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२।।)
(६) आत्म विकास	५)
(७) दृष्टान्त मंजरी	२)
(८) दृष्टान्त महासागर	२।।)
(९) कर्म रहस्य	२)
(१०) मानसिक शक्ति के चमत्कार	२।)
(११) अमृत वर्षा	२)
(१२) कल्याण मार्ग	१।)
(१३) आनन्द संग्रह	१।।)
(१४) मनुष्य का विराट्रूप	४।।)
(१५) विद्यार्थी जीवन रहस्य	।।।)
(१६) चरित्र निर्माण	२।।)
(१७) ब्रह्मचर्य ही जीवन है	१।।)
(१८) ब्रह्मचर्य महिमा	।=)
(१९) ब्रह्मचर्य के साधन(पांचों भाग)	१।।।=)
(२०) ब्रह्मचर्य के अनुभव	।।।)
(२१) ब्रह्मचर्य सन्देश	४।।)
(२२) व्यायाम संजीवनी	१)
(२३) स्वास्थ्य और योगासन	२)
(२४) योगासन	१।।)
(२५) व्यायाम संदेश	१)
(२६) आसनों के व्यायाम	।।)
(२७) सदाचार पंजिका	।।)
(२८) स्वास्थ्य शिक्षा	१।।)
(२९) स्वस्थ जीवन	१।)
(३०) भोजन द्वारा स्वाथ्य	१।।)
(३१) तम्बाकू के काले कारनामे	।=)
(३२) भले रहो चंगे रहो	।।)
(३३) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	२)
(३४) सरल चिकित्सा	।=)
(३५) ऊर्ध्वाङ्ग व्याधि विज्ञान	१)
(३६) मिटिरिया मैडिका (होम्यो)	५)
(३७) मिटिरिया मैंडिका (एलो)	४)
(३८) पशुचिकित्सा	४)
(३९) ध्यान योग प्रकाश	२)
(४०) पातञ्जल योग प्रदीप	१२)

(२) गृहस्थोपयोगी साहित्य

(१) आर्य जीवन और गृहस्थधर्म	।।=)
(२) आदर्श पत्नी	२।।)
(३) जीवन साथी	४)
(४) गृहस्थ जीवन रहस्य	२।।)
(५) विवाहित आनन्द	२)
(६) पत्नी पथ प्रदर्शक	१।।)
(७) सखा की सीख	।।।)
(८) माता का संदेश	१।।।)
(९) स्त्री सुबोधनी	६)
(१०) बहिनों की बातें	१।)
(११) वेद में स्त्रियां	१।।)
(१२) स्त्रियों की स्थिति	१।।)
(१३) सरल पाक विज्ञान	४)
(१४) Marriage & married life	१।।)

(३) धार्मिक साहित्य

वेद, दर्शन, उपनिषद् आदि तथा महर्षि दयानन्द के समस्त ग्रन्थ ।

(क) ईश्वरोपासना

१. प्रभु दर्शन	२।।)
२. प्रभु भक्ति	१।)
३. ईश्वर मिलाप	।।=)
४. संध्या रहस्य	१)
५. संध्या मंत्र	।।।)
६. चतुर्वेदीय सन्ध्या	।=)
७. ईश्वर भक्ति	२)
८. भक्ति सोपान	१।।)
९. वैदिक प्रार्थना	१।।)
१०. तत्व ज्ञान	३)
११. भक्ति दर्पण	१।)
१२. कर्तव्य दर्पण	।।।)

(ख) वैदिक सिद्धान्त

१. आस्तिकवाद	३)
२. ईश्वर की सर्वज्ञता	१)
३. ओंकार निर्णय	१।।)
४. आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
५. आर्यकुमार निबन्ध माला	१)
६. वैदिक धर्म प्रश्नोत्तरी	।।=)
७. मृत्यु और परलोक	१।)
८. दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	२।)
९. वैदिक सिद्धांत	१।।)
१०. भारत में मूर्ति पूजा	२)

११. वेद सिद्धान्त रहस्य	१।।)
१२. प्रमाण प्रकाश	१)
१३. आर्य सिद्धान्त और सिख गुरु	१।।।)
१४. कर्मफल	१।।।)
१५. पाप पुण्य	।।)
१६. धार्मिक शिक्षा (१० भाग)	५)
१७. वैदिक शिक्षा (दो भाग)	१)
१८. धर्म ज्ञान (चारों भाग)	१।)
१९. दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह (पूर्वार्द्ध)	२)
२०. दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह (उत्तरार्द्ध)	२।।)
२१. यवन मत समीक्षा	१।।)
२२. बौद्ध धर्म और वैदिक धर्म	१।।)
२३. बाल सत्यार्थ प्रकाश	१)
२४. शंकर भाष्य आलोचना	५)
२५. आर्य धर्म	।।)
२६. Catechism on Vedic Dharma	।।)
२७. धर्म का आदि स्रोत	२)
२८. भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	।।)
२९. आर्य संस्कृति के मूल तत्व	४)
३०. वैदिक संस्कृति	२।।)
३१. Vedic Culture	३।।)
३२. आर्य पर्व पद्धति	१।।)
३३. आर्य समाज क्या है ?	।।।)

(ग) वेद एवं अन्य ग्रन्थ

१. वेद रहस्य	२)
२. वैदिक सम्पत्ति	७)
३. स्वाध्याय संग्रह	२)
४. स्वाध्याय संदोह	६)
५. स्वाध्याय सुमन	३)
६. वेद का राष्ट्र गायन	१।)
७. सुभाषित रत्नावली	।।।=)
८. चतुर्वेदीय रुद्र सूक्त	२।)
९. बाल वेदामृत	।।।)
१०. वेद मंजरियां (चारों भाग	२)
११. वैदिक सूक्तियां	१।।।)
१२. वैदिक वीर गर्जना	।।।=)
१३. हमारा अक्षय कोष	१।)
१४. न्याय दर्शन	२)
१५. सर्व दर्शन मीमांसा	
१६. षड् दर्शन समन्वय	२)
१७ मनुस्मृति	५)
१८. आर्य स्मृति	१।।।)
१९. आर्योदय काव्यम् दो भाग	३)
२०. सूर सागर	८)
२१. धम्म पद	
२२. हिन्दी ज्ञानेश्वरी	५)
२३. वैदिक गीता	।), ३)
२४. हितैषी की गीता	।।।)
२५. विदुर नीति	।), १)
२६. कणिक नीति	≡)
२७. चाणक्य नीति	१=)
२८. विदुर प्रजागर	१)
२९. भर्तृहरिशतक	१)
३०. वैराग्य शतक	

(४) जीवनियां

।=) से ।।=) तक की सब महापुरुषों की छोटी-छोटी जीवनियों के अतिरिक्त:—

१. महर्षि दयानन्द (दो भाग) (पं० घासी राम)	१२)
२. दयानन्द प्रकाश (सत्यानन्द) सजिल्द	५)
३. दयान्द चित्रावली	२।)
४. महर्षि दयानन्द (इन्द्र)	२)
५. संगीत दयानन्द	१।।।)
६. Glimpses of Dayanand	१।।)
७. ऋषि बोध कथा	१।)
८. महर्षि दयानन्द (हरिश्चन्द्र)	।।)
९. आदर्श सुधारक दयानन्द	।।=)
१०. महर्षि दयानन्द (सटीक)	।।=)
११. दयानन्द कविता ।=),	।।।)
१२. देव दयानन्द	
१३. आर्य रत्न	
१४. स्वामी श्रद्धानन्द	१)
१५. स्वामी श्रद्धानन्द आत्मकथा	२।।)
१६. स्वामी विरजानन्द	१।)
१७. आर्य जगत् के उज्वल रत्न	।=)
१८. आर्य समाज के उज्वल रत्न	।।=)
१९. आचार्य राम देव	२।।)
२०. भीष्म व्रत	१।)
२१. शिवाबावनी	।।)
२२. वीर मराठे	२।।)
२३. हरिसिंह नलवा	१।)
२४. महापुरुषों के दर्शन	३।)
२५. सरदार भक्त सिंह	।=)
२६. मेवाड मार्तण्ड	१।।)
२७. हनुमान जीवन चरित्र	३।।)
२८. पंजाब के नवरत्न	३।।)
२९. महात्मा सुकरात	२।)
३०. महात्मा शेख सादी	।।=)
३१. महात्मा मेजिनी	१)
३२. महात्मा मार्टिन लूथर	१)

राजनीतिक सामाजिक एवं ऐतिहासिक

१. किसान कम्युनिष्ट	२।।)
२. राजनैतिक ज्ञान कोष	१।)
३. राजनैतिक कथा माला	१)
४. कम्यूनिज्म	२)

विद्यार्थी और धूम्र-पान

(लेखक—श्री उदयचन्द्र 'यादव' प्रथम वर्ष वाणिज्य लोहिया कालिज चूरु)

आज का मानव मस्ती की ओर झुका हुआ है। जिस ओर भी मस्ती का नाम सुन लेता है, उसी ओर अपने आपको मस्ती में मस्त होकर उस मस्त के लिये समर्पण कर देता है। उस मस्ती को प्राप्त करने के लिये आज का विद्यार्थी वर्ग भी किसी से पीछे नहीं रह पाया है। अपने माता और पिता की सम्पत्ति को बीड़ियों और सिगरेटों में लगाना अपना सौभाग्य समझना है। अर्थात् मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि वे उस सम्पत्ति को धूँवें का रूप धारण कर वाके वायु-मण्डल को भी दूषित कर देते हैं।

ये वे ही कर्णाधार हैं जिन पर आज विश्व यह टकटकी लगाये हुए देख रहा है कि भविष्य में ये मेरे सच्चे देश निर्माता बनेंगे। ऐसी परिस्थितियों में अब ईश्वर ही का सहारा है। देखते जायें परिणाम क्या कुछ निकले। सर्वप्रथम तो इस भयङ्कर विष से केवल उस धूम्रपान करने वाले का ही सर्वनाश नहीं होता, अपितु दूसरों पर भी बुरा ही प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिये एक मोटर में या एक रैलगाड़ी के डिब्बे में सैंकड़ों सज्जन बैठे रहते हैं। उनमें से या तो तम्बाकू न पीने वाला होता नहीं यदि होता भी है तो वह भी नहीं बच सकता क्यों कि जब दूसरे अपनी मस्ती को जगायेंगे तो वह धूँआ उस न पीने वाले व्यक्ति के भी नाक में जाकर अपना प्रभाव अवश्य ही डालेगा। अर्थात् उसका हृदय भी इससे दूषित हुए बिना रह नहीं सकता।

दूसरे उस धूम्रपान से वायु-मंडल भी इतना दूषित हो जाता है कि जो कीटाणु मनुष्य को जीवन प्रदान करने में सहायता देते हैं, वे उस वायु के स्पर्श हो जाने से ही नष्ट हो जाते हैं। जिससे सर्व-प्राणी-मात्र को अपने पूर्ण जीवन काल को व्यतीत करने से रोक देते हैं। अर्थात् उन प्राणियों का जीवन अल्पकाल में ही समाप्त हो जाता है। यह तो आप सभी जानते हैं कि एक प्राणी की हत्या करने से कितना पाप लगता है। और उस मस्ती के पुजारी ने तो न केवल एक प्राणी के प्राण छीने अपितु असंख्य प्राणियों के प्राण हर लिये। अब पाठकगण स्वयं विचार कर लें कि वह नशा करने वाला कितने पाप का भागी बना।

यहीं तक ही नहीं धूम्रपान करने से बल, शक्ति, वीर्य वा ब्रह्मचर्य का भी नाश हो जाता है। जितने भी तम्बाकू और अनेक नशे हैं इनसे शरीर में मस्ती या चुस्ती आ जाती है और इस चुस्ती से रक्त में भी उष्णता का प्रभाव अवश्य आ जाता है, जिसको मूर्ख भ्रमवश इस नशे को गर्मी वा चुस्ती वा शक्ति समझ बैठता है। डा० कैलाग "प्लेन फैक्टस्" नामक पुस्तक में लिखते हैं कि तम्बाकू का प्रभाव मनुष्य के आचार पर क्या होता है, उस बात को थोड़े ही लोग जानते हैं। बाल्यावस्था में इस दुर्व्यसन के लग जाने से शीघ्र ही कुवासनायें भड़क उठती हैं और कुछ ही वर्षों में सदाचारी तथा पवित्र युवक को कामवासनाओं की ज्वालामुखी बना देती हैं। उसके अन्तःकरण की कुवासनाओं से अश्लीलता तथा दुराचार का काला धुँआ निकलने लगता है। और देर तक तम्बाकू का प्रयोग करते रहने से नपुँसकता आ पहुँचती है।" इसी प्रकार विलायत और अंडमान देशों की स्त्रियां सन्तान से बचने के लिए अन्योपायों के साथ-साथ सिग्रेट भी पीती हैं। जिससे यह प्रकट होता है कि इसके पीने से सन्तान उत्पादन असम्भव हो जाता है। स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक एक स्थान पर तम्बाकू का खण्डन करते समय बतलाते हैं कि "जिस मनुष्य को ५० वर्ष जीना हो, वह तम्बाकू पीने से २० वा ३० वर्ष में ही मर जायेगा।" एक और चिकागू के सबसे प्रसिद्ध डा० सैंटहेंज अपने विचार प्रगट करते हैं कि—

‘ Nicotines eccite the heart to go faster. In the course of 24 hours a smoking heart may have to beat 30,000 extra times.” (Dr. Stein, Hans, Chicago) अर्थात् तम्बाकू के विष से हृदय गति रुक जाती है और जो सिग्रेट पीते हैं उनके हृदय को २४ घंटे में ३०,००० तीन सहस्र बार अधिक धड़कना पड़ता है।

इस प्रकार अनेक विद्वानों और डाक्टरों नें अपने-पने मत पृथक् पृथक् प्रकट किये हैं। जिनका सारांश ही निकलता है कि धूम्रपान एक भयंकर विष है जिसके योग करने से मनुष्य अपना तो नाश करता ही है ाथ-साथ जो सन्तान उत्पन्न करता है वह भी रोगी और निर्बल होती है।

पुरानी (अंग्रेजी) सरकार ने तो एक बार यह नियम बना दिया था कि १८ वर्ष से कम आयु वाला कुमार हुक्का या तम्बाकू नहीं पी सकता, लेकिन दुर्भाग्य के कारण उसका यथोचित पालन नहीं किया गया। तथा हमारी आज की (कांग्रेस) सरकार इसके निषेध के लिए कोई भी नियम नहीं बना सकी है। यह हमारी दुर्भाग्य की बात है। किन्तु हो सकता है कि आज की सरकार यह सोच रही हो कि आर्थिक संकट होने के कारण इसका पालन नहीं हो सकेगा। परन्तु जैसा भी हो सके सरकार को इसके लिये नियम अवश्य बनाने चाहियें। तभी देश का सुधार हो सकेगा।

मैंने जहाँ तक हो सका है इस विषय को समझाने का पूर्ण प्रयत्न किया है, यदि कुछ भी मेरे साथियों ने इससे लाभ उठाया तो मैं अपने प्रयत्न को सफल समझूँगा। मैंने अनेक विद्वानों और डाक्टरों की पस्तकों के अध्ययन करने पर ही यह लेख तैयार किया था। उक्त विद्वानों एवं डाक्टरों का मैं आभारी रहूँगा। “हमारा शत्रु अर्थात् तम्बाकू का नशा” नामक पुस्तक पूज्य भगवान् देव जी ने लिखकर धूम्रपान करने वालों का जो भला किया है उसको उक्त वर्ग के लोग (सदस्य) भूल नहीं सकते। प्रत्येक धूम्रपान करने वालों को इस पुस्तक को ध्यान से पढ़कर विचार करना चाहिए। अधिक तो क्या लिखूँ पूज्य आचार्यजी ने इस विषय को उस पुस्तक में “गागर में सागर” की भांति भर दिया है।

सुधारक के विषय में सम्मतियां

“सुधारक” सच्चे अर्थों में सुधारक ही है। यह प्रत्येक आयु वाले के लिये लाभदायक है परन्तु विद्यार्थियों के लिये तो विशेषतया जीवन परिवर्तन करने वाला होगा।

श्री रिसालसिंह जी आर्य मेम्बर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड रोहतक

* *

सुधारक को पढ़कर मैं हर्ष से गद्गद् हो गया। वास्तव में “सुधारक” सुधारक ही है।

श्री दीपचन्द जी बी० ए० त्यागी छात्रावास,
मुजफ्फरनगर

उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, मध्यप्रदेश राज्यों द्वारा स्कूलों एवं वाचनालयों के लिए स्वीकृत।

वार्षिक मूल्य—३)
प्रति अंक—।-)
शिक्षा-सुधा
सम्पादक-
वीरेन्द्र कुमार
B.A.विशारद

(शिक्षा सम्बन्धी एक मात्र सचित्र मासिक पत्रिका) जो १६ वर्ष से मासिक रूप में पाठकों की सेवा कर रही है, जिसमें स्कूल के अध्यापकों तथा विद्यार्थियों सम्बन्धी—

❀—परीक्षोपयोगी लेख
❀—साहित्यिक लेख
❀—विदेशों में शिक्षा
❀—शिक्षा-सिद्धांत
❀—स्वास्थ्य तथा कृषि सम्बन्धी लेख
❀—अध्यापक समाचार
❀—फुटपुट
❀—जीवन दाता जीवन
❀—कहानियाँ
❀—कविताएँ
❀—जनरल नालिज का प्रश्न-पत्र
❀—शिक्षा समाचार (भारत के)
❀—संसार समाचार

और इनके अतिरिक्त बच्चों के लिए ८ पेज बालबन्धु के छपते हैं। तुरन्त ही—

वार्षिक मूल्य तीन रुपया भेजकर ग्राहक बनिये।

इस पते पर—

मैनेजर---“शिक्षा-सुधा” मु०, पो० धनौरा
(मुरादाबाद)

पुरुष को कार्यवान और संतानोत्पादक बनाने वाली महौषधि

अक्सीर नं० २०

यह वही औषधि है जिनके बल पर ७० साल के बूढ़े भी संतान योग्य हैं। बूढ़ों को जवान और जवान को जवांमर्द बनाती है, शीघ्र पतन, स्वप्नदोष और वीर्य के पतलेपन को दूर करती है। नवीन रक्त उत्पन्न होकर शरीर में ओज और मुख पर लालिमा की कान्ति बढ़ती है। नजला, जुकाम, खांसी के जो अभ्यस्त हों, अथवा जिन्हें जोड़ों या [illegible] की पीड़ा ने सता रखा हो, उनको भी यह अक्सीर नं० २० स्वास्थ्यप्रद है।

मूल्य ६४ गोली ४) रु०, ३२ गोली २) रु० वी० पी० मंगवाने से १-) का खर्च और बढ़ जाता है, चाहे एक शीशी मंगवाएं या चार।

पत्र व्यवहार या तार का पता—

अमृतधारा, देहरादून

विज्ञापक—

मैनेजर अमृतधारा फार्मेसी लि०

देहरादून, यू० पी०

मध्य भारत शासन के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत

सुयोग्य, सुन्दर सामिग्री से भरपूर, एकांकी, कहानी, लेख व कविताओं के अतिरिक्त साहित्य समालोचना, बाल एवं महिला जगत् तथा उत्सव समाचार सहित प्रकाशित होने वाला—

राम चरित मानस

एवं भारतीय संस्कृति के प्रचार का सचित्र अद्वितीय

प्रधान सम्पादक श्री मानस जी शास्त्री } मासिक पत्र **मानस हंस** { स० सम्पादक श्री दामोदर-प्रसाद उपमन्यु साहित्य रत्न

अवश्य पढ़ें

यह रामचरित मानस के सुन्दर विवेचनात्मक टीका, लेख, शंका समाधान तथा सांस्कृतिक, साहित्यिक, धार्मिक, लेख, कहानी, कविताओं से युक्त पत्र अत्यन्त उपादेय है। वर्ष में एक विशेषांक, ११ साधारण अंक दिये जाते हैं।

इस वर्ष का विशेषांक "बृजलीला-अंक" है।

वार्षिक चन्दा ५≡) नमूना मुफ्त

एजेन्सी के लिये पत्र व्यवहार करें।

पता—व्यवस्थापक 'मानस हंस'
मानस मन्दिर हाथरस।

'सुधारक' के विषय में सम्मतियां

ऐसे समय में जब कि प्राचीन भारतीय संस्कृति पर भान्ति-भान्ति के प्रहार हो रहे हैं, जब दुराचार, भ्रष्टाचार तथा दुर्व्यवहार बढ़ता जा रहा है, 'सुधारक' द्वारा लोगों में सदाचार और सद्व्यवहार बढ़े, हरयाणा के गांव प्राचीन काल की भान्ति अपनी बनाई पंचायतों द्वारा कुटुम्ब की तरह बसें, उन्नत हों। 'सुधारक' पश्चिमीय सभ्यता के बढ़े हुए कुप्रभाव को रोकने में समर्थ हो।

ला० हरदेवसहाय जी मन्त्री भारत-गो-सेवक समाज

आज के समाज में अधिकांश युवकों की रुचि धार्मिकता तथा नैतिकता से हटकर भौतिकवाद और विलासता की ओर जा रही है, उसके लिये भारतीय संस्कृति के अनुकूल सुधार की बड़ी आवश्यकता है, जिस से अच्छे मानव बन सकें। मुझे पूर्ण निश्चय है कि 'सुधारक' अपने इस उद्देश्य में सफल होगा।

चौ० निहालसिंह जी 'तक्षक'
भू० पू० अर्थमन्त्री पेप्सु

ग्राम्य शिक्षणालय—“देहाती यूनिवर्सिटी”

[लेखक – प्रो० शेरसिंह जी एम० ए०, एम० एल० ए०]

रूस में १९१७ में जो क्रांति हुई और उन्हें प्रशिक्षित (trained) व्यक्तियों की कमी अनुभव हुई, तब उन्होंने भी इसी प्रकार जो अच्छे से अच्छे आदमी उन कामों के लिए मिल सके, उनका उपयोग किया। उदाहरणार्थ वहाँ शल्य (surgry) जानने वालों की कमी थी। उन्होंने ऐसे पहलवान, अपने चिकित्सालयों में रक्खे जो हाथ से टटोल कर हाथ से ही हड्डी को जमा देते थे। जब तक उनके पास सर्जनों की कमी पूरी न हो गई वे इन्हीं हड्डी जोड़ने वालों (bone settro) से काम लेते रहे। जिस क्षेत्र में जो उद्योग धन्धे चल सकते हैं वहाँ मोटे रूप में ही चाहे चलते हैं, परन्तु चल तो रहे हैं और उनके अच्छे जानकार भी ढूंढने से वहीं पर मिल भी सकते हैं। शिक्षालयों में उन उद्योग धन्धों की शिक्षा का प्रबन्ध भी साक्षरता के साथ साथ हो। जहाँ वह जानकार, परन्तु निरक्षर शिल्पकार विद्यालय में अपने शिल्प की शिक्षा दे, वहाँ स्वयं भी साक्षर बने और अपने विषय पर छपे हुए साहित्य का अध्ययन करके तथा समय समय पर केन्द्रिय शिल्पविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करके अपना विकास भी करे और शिक्षण में भी उन्नति करता जाये। इस प्रकार यही अपठित शिक्षक थोड़े ·दिनों में पढ़ लिख भी जायेंगे, अपने कार्य में उन्नति करेंगे और अच्छे शिक्षक बनकर आज जो कमी खटक रही है। इस प्रकार के प्रशिक्षित शिक्षकों की वह भी पूरी हो जायेगी।

हमारा देश कृषि-प्रधान देश है, इसलिये हमारे सब से बड़े उद्योग तो खेती और ·पशुपालन ही हैं। ग्राम्य-शिक्षालयों में हमें इनको महत्त्व देना होगा और इनकी सैद्धान्तिक (theoritical) तथा क्रियात्मक (practical) शिक्षा प्रत्येक ग्राम के विद्यालय में देनी होगी। अमेरिका और यूरोप के बहुत सारे राष्ट्रों ने कृषि की शिक्षा हाई स्कूलों और कालिजों में दी है। अमेरिका ने (peoples colleges) जन महाविद्यालय खोले, जिन में पुराने ढङ्ग की कोरी शिक्षा के स्थान पर कृषि उद्योग आदि की क्रियात्मक शिक्षा दी। (Land grant-colleges) भूमि अनुदान महाविद्यालय चलाये, जिनका सीधा सम्पर्क किसान से रहा और जो अनुसन्धान किये गये उन्हें किसान और जनसाधारण तक पहुँचाया गया। संयुक्तराष्ट्र अमरीका के पश्चिमी राज्य फ्लोरिडा (Flrida) आदि जो अमरीका के रेगिस्तान कहलाते थे। भूमि अनुदान महाविद्यालयों (Land grant colleges) के अनुसन्धानों के कारण ५० वर्ष के भीतर आज खिले हुये उद्यान से दीख पड़ते हैं। डेन्मार्क के लोक विद्यालय (peoples colleges) ने तो पिछली शताब्दी में उसे पश्चिम के उन्नत राष्ट्रों की पंक्ति में ला खड़ा किया। जर्मनी ने भी कृषि के साथ साथ उद्योग जोड़ कर उसे एक उद्योग (industry) का ही रूप दे दिया। इस प्रकार सभी उन्नत राष्ट्रों ने विद्यालय और जन साधारण के बीच की दीवार को निकाल दिया। कोलोराडो (सं० रा० अमरीका) के कृषि कालिज के वार्षिकोत्सव पर श्री मिल्टन आईजन होवर के दिये गये भाषण के शब्दों में

“The college no longer looked only to the law, medicine or the ministary. There are 3,000 occupation open to him. The days of aladence snobbry has changed to a lemoarate conception of evrication in relation to a rapidly developing society”

“आजकल कालिज का विद्यार्थी केवल कानून, डाक्टरी और बाईबल की शिक्षा की ओर ही नहीं देखता। उसके लिये तीन हजार धन्धे खुले हुए हैं। शिक्षा के दम्भ के दिन अब गये, शीघ्रता से बढ़ते हुए समाज की मांग को पूरा करने के लिए शिक्षा का दृष्टिकोण जनतन्त्री हो गया है।”

यह जनतन्त्री दृष्टिकोण अभी हमारे विद्यालयों में नहीं आ पाया है। प्रथम तो हमारे कालिजों और विश्व विद्यालयों में अनुसन्धान का काम बहुत थोड़ा होता है और होता भी है तो जन साधारण के लिए उसे उपयोगी बना कर उस तक पहुंचाने का यत्न नहीं किया जाता। उन्नत राष्ट्रों के विश्वविद्यालय नगरों में होते हुए भी आस पास ग्रामों में अपने प्रयोग स्थान (expriment station) चलाते हैं। जिनसे जन साधारण का सम्पर्क है, जनसाधारण की समस्याओं को लेकर उन पर अनुसंधान होता है, लोग अपनी कठिनाईयाँ भिजवाते हैं और उनपर खोज चलती है और किसान तथा शिल्पकार के पास पहुँचती है। इसी कारण आज उन राष्ट्रों के देहात उन्नत हैं और लोग देहात में रहना अधिक पसन्द करते हैं।

हमारे शिक्षणालयों को भी ग्रामीण की आवश्यकताओं को समझना होगा और समझकर उनको पूरा करना होगा।

[क्रमशः]

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक की

बहुमूल्य औषधियां

च्यवनप्राश

इसी ऋतु के ताजे आँवले से तैयार किया गया स्वादिष्ट, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सबके लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इस का निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है॥ मूल्य ७) सेर, ५ सेर लेने पर ६) सेर

स्वप्नदोषामृत

इस भयङ्कर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग को दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे, पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। मूल्य ५) रुपये

सूखा रोगामृत

जिन गृहस्थों के बालक सूखा रोग (मसान) से सूख-सूख कर मरते हैं। अनेक प्रकार की चिकित्सा करने पर भी कोई लाभ नहीं होता। ऐसे निराश रोगियों के लिये यह औषध अचूक है। सहस्रों रोगियों पर अनुभूत है। इसके अतिरिक्त बालक के हरे पीले दस्त, अजीर्ण, अरुचि, दाँत निकलते समय के रोग, वमन, निर्बलता और ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखे।

मूल्य १ मास के सेवन तथा मालिश के लिये १२)

पाचनामृत

मन्दाग्नि, अरुचि; अजीर्ण (कब्ज), पेट का फूलना, पेट का भारीपन, शूल, जी मिचलाना, वमन, खट्टी डकार आदि पेट के सभी रोगों को नष्ट कर भूख को बढ़ाता है। आंतों के सब रोगों को दूर कर पाचन-शक्ति को बल देता है। पुराने से पुराने तिल्ली जिगर की अचूक औषधि है। मूल्य एक शीशी ४)

पामामृत (दाद खुजली)

यह सब ही खुजली दादादि चर्म रोगों के लिये अत्युत्तम औषध है। खुजली सूखी हो या पकने वाली, यह सब प्रकार की खुजली के लिये रामबाण औषध है। इसके प्रयोग करने के पश्चात् किसी अन्य औषधि की आवश्यकता नहीं। दाद को जड़ से नष्ट करती है। मूल्य २)

बाल रोगामृत

बालकों के हरे पीले दस्त, अपच, अजीर्ण (कब्ज), अरुचि, दांत निकलते समय के रोग, सूखिया (मसान) रोग, वमन, निर्बलता, ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखें।

मूल्य छोटी शीशी २) एक शीशी ५)

कर्ण रोगामृत

कान से पीप आना, बहरापन और प्रत्येक प्रकार की कर्ण पीड़ा को दूर करने के लिये यह उत्तम औषधि है। प्रतिदिन सेवन करने से कानों का कोई रोग नहीं होता और मस्तिष्क की शुष्कता दूर होती है।

मूल्य एक शीशी १)

ग्राम्य शिक्षणालय—"देहाती यूनिवर्सिटी"

[लेखक - प्रो० शेरसिंह जी एम० ए०, एम० एल० ए०]

रूस में १९१७ में जो क्रांति हुई और उन्हें प्रशिक्षित (trained) व्यक्तियों की कमी अनुभव हुई, तब उन्होंने भी इसी प्रकार जो अच्छे से अच्छे आदमी उन कामों के लिए मिल सके, उनका उपयोग किया। उदाहरणार्थ वहाँ शल्य (surgry) जानने वालों की कमी थी। उन्होंने ऐसे पहलवान, अपने चिकित्सालयों में रक्खे जो हाथ से टटोल कर हाथ से ही हड्डी को जमा देते थे। जब तक उनके पास सर्जनों की कमी पूरी न हो गई वे इन्हीं हड्डी जोड़ने वालों (bone settro) से काम लेते रहे। जिस क्षेत्र में जो उद्योग धन्धे चल सकते हैं वहाँ मोटे रूप में ही चाहे चलते हैं, परन्तु चल तो रहे हैं और तके अच्छे जानकार भी ढूंढने से वहीं पर मिल भी कते हैं। शिक्षालयों में उन उद्योग धन्धों की शिक्षा का बन्ध भी साक्षरता के साथ साथ हो। जहाँ वह जान-ार, परन्तु निरक्षर शिल्पकार विद्यालय में अपने शिल्प ी शिक्षा दे, वहाँ स्वयं भी साक्षर बने और अपने विषय र छपे हुए साहित्य का अध्ययन करके तथा समय समय र केन्द्रिय शिल्पविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करके अपना कास भी करे और शिक्षण में भी उन्नति करता जाये। स प्रकार यही अपठित शिक्षक थोड़े दिनों में पढ़ लिख ी जायेंगे, अपने कार्य में उन्नति करेंगे और अच्छे शिक्षक नकर आज जो कमी खटक रही है। इस प्रकार के प्रशि-त शिक्षकों की वह भी पूरी हो जायेगी।

हमारा देश कृषि-प्रधान देश है, इसलिये हमारे सब ो बड़े उद्योग तो खेती और पशुपालन ही हैं। ग्राम्य-शिक्षालयों में हमें इनको महत्त्व देना होगा और इनकी सैद्धान्तिक (theoritical) तथा क्रियात्मक (practical) शिक्षा प्रत्येक ग्राम के विद्यालय में देनी होगी। अमेरिका और यूरोप के बहुत सारे राष्ट्रों ने कृषि की शिक्षा हाई स्कूलों और कालिजों में दी है। अमेरिका ने (peoples colleges) जन महाविद्यालय खोले, जिन में पुराने ढङ्ग की कोरी शिक्षा के स्थान पर कृषि उद्योग आदि की क्रियात्मक शिक्षा दी। (Land grant-colleges) भूमि अनुदान महाविद्यालय चलाये, जिनका सीधा सम्पर्क किसान से रहा और जो अनुसन्धान किये गये उन्हें किसान और जनसाधारण तक पहुँचाया गया। संयुक्तराष्ट्र अमरीका के पश्चिमी राज्य फ्लोरिडा (Flrida) आदि जो अमरीका के रेगिस्तान कहलाते थे। भूमि अनुदान महाविद्यालयों (Land grant colleges) के अनुसन्धानों के कारण ५० वर्ष के भीतर आज खिले हुये उद्यान से दीख पड़ते हैं। डेन्मार्क के लोक विद्यालय (peoples colleges) ने तो पिछली शताब्दी में उसे पश्चिम के उन्नत राष्ट्रों की पंक्ति में ला खड़ा किया। जर्मनी ने भी कृषि के साथ साथ उद्योग जोड़ कर उसे एक उद्योग (industry) का ही रूप दे दिया। इस प्रकार सभी उन्नत राष्ट्रों ने विद्यालय और जन साधारण के बीच की दीवार को निकाल दिया। कोलोराडो (सं० रा० अमरीका) के कृषि कालिज के वार्षिकोत्सव पर श्री मिल्टन आईजन होवर के दिये गये भाषण के शब्दों में

"The college no longer looked only to the law, medicine or the ministary. There are 3,000 occupation open to him. The days of aladence snobbry has changed to a lemoarate conception of evrication in relation to a rapidly developing society"

"आजकल कालिज का विद्यार्थी केवल कानून, डाक्टरी और बाईबल की शिक्षा की ओर ही नहीं देखता। उसके लिये तीन हजार धन्धे खुले हुए हैं। शिक्षा के दम्भ के दिन अब गये, शीघ्रता से बढ़ते हुए समाज की मांग को पूरा करने के लिए शिक्षा का दृष्टिकोण जनतन्त्री हो गया है।"

यह जनतन्त्री दृष्टिकोण अभी हमारे विद्यालयों में नहीं आ पाया है। प्रथम तो हमारे कालिजों और विश्व विद्यालयों में अनुसन्धान का काम बहुत थोड़ा होता है और होता भी है तो जन साधारण के लिए उसे उपयोगी बना कर उस तक पहुंचाने का यत्न नहीं किया जाता। उन्नत राष्ट्रों के विश्वविद्यालय नगरों में होते हुए भी आस पास ग्रामों में अपने प्रयोग स्थान (expriment station) चलाते हैं। जिनसे जन साधारण का सम्पर्क है, जनसाधारण की समस्याओं को लेकर उन पर अनुसंधान होता है, लोग अपनी कठिनाईयाँ भिजवाते हैं और उनपर खोज चलती है और किसान तथा शिल्पकार के पास पहुँचती है। इसी कारण आज उन राष्ट्रों के देहात उन्नत हैं और लोग देहात में रहना अधिक पसन्द करते हैं।

हमारे शिक्षणालयों को भी ग्रामीण की आवश्यकताओं को समझना होगा और समझकर उनको पूरा करना होगा।

[क्रमशः]

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक की

बहुमूल्य औषधियां

च्यवनप्राश

इसी ऋतु के ताजे आँवले से तैयार किया गया स्वादिष्ठ, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व वृद्ध सबके लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इस का निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है। मूल्य ७) सेर, ५ सेर लेने पर ६) सेर

स्वप्नदोषामृत

इस भयङ्कर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग को दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे, पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। मूल्य ५) रुपये

सूखा रोगामृत

जिन गृहस्थों के बालक सूखा रोग (मसान) से सूख-सूख कर मरते हैं। अनेक प्रकार की चिकित्सा करने पर भी कोई लाभ नहीं होता। ऐसे निराश रोगियों के लिये यह औषध अचूक है। सहस्रों रोगियों पर अनुभूत है। इसके अतिरिक्त बालक के हरे पीले दस्त, अजीर्ण, अरुचि, दाँत निकलते समय के रोग, वमन, निर्बलता और ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखे।

मूल्य १ मास के सेवन तथा मालिश के लिये १२)

पाचनामृत

मन्दाग्नि, अरुचि; अजीर्ण (कब्ज), पेट का फूलना, पेट का भारीपन, शूल, जी मिचलाना, वमन, खट्टी डकार आदि पेट के सभी रोगों को नष्ट कर भूख को बढ़ाता है। आंतों के सब रोगों को दूर कर पाचन-शक्ति को बल देता है। पुराने से पुराने तिल्ली जिगर की अचूक औषधि है।

मूल्य एक शीशी ४)

पामामृत (दाद खुजली)

यह सब ही खुजली दादादि चर्म रोगों के लिये अत्युत्तम औषध है। खुजली सूखी हो या पकने वाली, यह सब प्रकार की खुजली के लिये रामबाण औषध है। इसके प्रयोग करने के पश्चात् किसी अन्य औषधि की आवश्यकता नहीं। दाद को जड़ से नष्ट करती है। मूल्य २)

बाल रोगामृत

बालकों के हरे पीले दस्त, अपच, अजीर्ण (कब्ज), अरुचि, दांत निकलते समय के रोग, सूखिया (मसान) रोग, वमन, निर्बलता, ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखें।

मूल्य छोटी शीशी २) एक शीशी ५)

कर्ण रोगामृत

कान से पीप आना, बहरापन और प्रत्येक प्रकार की कर्ण पीड़ा को दूर करने के लिये यह उत्तम औषधि है। प्रतिदिन सेवन करने से कानों का कोई रोग नहीं होता और मस्तिष्क की शुष्कता दूर होती है।

मूल्य एक शीशी १)

ज्वरामृत

यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की रामबाण औषध है। बिगड़े हुये मलेरिया, विषम ज्वर को दूर करने में अद्वितीय औषध है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन सिर दर्द, स्वप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है।

सेवनविधि—मात्रा १ तोला से २ तोला तक समान जल मिलाकर, बढ़े हुये ज्वर में गरम जल मिलाकर तथा उतरे हुये में ताजा जल मिलाकर दिन में तीन बार लेवें। आवश्यकतानुसार अधिक बार भी ले सकते हैं।

मूल्य छोटी शीशी २), बड़ी शीशी ५)

उदर सुधा रस

यह रस उदर के प्रत्येक प्रकार के रोग के लिये अमृत का काम करता है। पेट का कोई रोग रहने नहीं पाता। मरोड़ तथा दर्द को तो देते के साथ ही शान्त करता है। अजीर्ण दूर करके आरोग्य प्रदान करता है। मूल्य ३) तो०

हलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा को जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है, इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजले) की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक कास (खांसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपेदिक) श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढंग की एक ही औषधि है।

छोटी शीशी २) मूल्य ५) प्रति शीशी

ब्राह्मीघृत

यह घृत आयुर्वेद शास्त्र की विधि के अनुसार बनाया गया है। इसका सेवन कुष्ठ (कोढ़) मृगी (हिस्टीरिया), मस्तिष्क की निर्बलता, चक्कर आना, याद किये हुये पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है और जिसकी स्मरण शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिये श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी, दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष सब प्रकार के धातु प्रमेह को दूर करता है, इसके सेवन से स्मरण शक्ति खूब बढ़ती है।

मूल्य आध पाव ४) एक सेर ३२)

सञ्जीवनी तैल

मूर्च्छित लक्ष्मण को चैतन्य देने वाली इतिहास प्रसिद्ध बूटी से तैयार किया गया यह तैल घावों को भरने में जादू का काम करता है। भयङ्कर फोड़े फुन्सी, गले-सड़े जख्मों तथा आग से जले जख्मों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भर कर ठीक कर देता है। खून का बहना तो तुरन्त ही बन्द हो जाता है। चोट की भयङ्कर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है। फाये में भरकर बार बार चोट आदि पर लगायें। मूल्य छोटी शीशी ।।=) बड़ी शीशी ५)

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इसके लगाने से आँख के सब रोग-जैसे आँख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट), दूर का कम दीखना (लांग साइट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आंखों के सब रोगों की रामबाण औषध है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आँखों को कमल की तरह साफ स्वच्छ रखता है। बुढ़ापे तक आँखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है। सेवन-विधि—पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रातः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ॥) शीशी

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजिस्टर्ड) रोहतक

तीन भागो में मूल्य १६॥ रु०

वाल्मीकि रामायण

(धारावाही सरस हिन्दी अनुवाद सहित)

अनुवादक प्रो० चन्द्रमणि विद्यालंकार, पालीरत्न। कागज—छपाई—बंधाई सब आकर्षक और बढ़िया। डाक पार्सल से व्यय २।) पड़ता है, परन्तु रेलवे पार्सल से बहुत कम। अनुवाद ऐसा मौलिक, चमत्कारी और हृदयग्राही है कि उपन्यास की तरह पढ़ने से छूटता नहीं। रामचरित्र का यथार्थ दर्शन और राम-राज्य का आदर्श चित्रण है। आबाल वृद्ध स्त्री-पुरुष सब के लिए नित्य पठनीय है। रामायण में खुद लिखा है—

"वाल्मीकि का यह आदि काव्य कर्तव्य बोधक है, यशदायक है, और आयुष्यप्रद है। संसार में जो मनुष्य नित्य इसे पढ़ता है, वह बुराइयों से छुटकारा पाता है, और कठिन से कठिन कामों को तर जाता है। रामायण के पढ़ने से लोग राम-जीवन से सब तरह के अभीष्ट वर पाते हैं। रजस्वला स्त्रियां इस पुरातन इतिहास को अपनाती व पढ़ती हुईं श्रेष्ठ पुत्रों को जनती हैं।"

अतः, यह पुस्तक घर, समाज, विद्यालयों की शोभा है, तथा पारितोषकों और विवाहों में भेंट की चीज है।

कल्याण-पथ

गीता का सुबोध, हृदयग्राही अनुवाद तथा गुरु-शिष्य, पिता-पुत्र आदि के कर्तव्यों का बोधक। मूल्य ।ǀ=)

स्वामी दयानन्द के सत्य अहिंसा के प्रयोग

ये प्रयोग मनुष्यों को उभारने वाले तथा समाज-सेवकों के पथ-प्रदर्शक हैं।

मूल्य ॥)

अध्यक्ष

भास्कर प्रेस, देहरादून।

अपनी भाषा में ही आपके विचारों का प्रतीक

सस्ता और अच्छा साप्ताहिक

जीवन

इसका उद्देश्य—

'साहित्य-क्षेत्र में प्रवाहित होकर जीवन की हर धारा और उसके छोटे मोटे सभी भागों को स्पर्श करना चाहता है।'

इसकी विशेषतायें—

- कठिन से कठिन विषय को जनता की भाषा में प्रस्तुत करने वाला।
- लोकरुचि को उन्नत करने वाला।
- आर्थिक लाभ के आगे न झुकने वाला।
- किसी दल या वाद विशेष से बंधा न होने के कारण स्वतंत्र, संयत और स्वस्थ सामग्री प्रस्तुत करने वाला।
- गुजराती मराठी आदि भारतीय भाषाओं के श्रेष्ठ लेखों का सुन्दर अनुवाद प्रकाशित करने वाला।
- सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक विचारों का विभिन्न दृष्टि-कोणों से विश्लेषण करने वाला आपका निजी पत्र।

इसलिये

परिवार के सभी सदस्यों, स्त्री-पुरुषों, भाई-बहिनों, पुत्र-पुत्रियों को पढ़ने दिया जा सकता है। यह पत्र आपके समूचे परिवार को सुपाठ्य व सात्विक मानसिक आहार देगा।

वार्षिक मूल्य चार रुपया

जीवन प्रकाशन
वल्लभविद्यानगर (गुजरात)

इसे कल पर न छोड़िये

- मंहगेपन में सस्ते और श्रेष्ठ का आदर्श रखने वाली।
- बदले हुए युग की क्रांतिकारी राष्ट्रीय विचार-धारा से ओतप्रोत।
- प्रत्येक माह अनेक कहानियों, लेखों, कविताओं, एकांकी तथा अन्य पर्याप्त, रोचक, पठनीय तथा संग्रहणीय सामग्री से विभूषित।
- लागत मात्र में सद्साहित्य की प्रचारिका।

वार्षिक — एक प्रति
डेढ़ रुपया — दो आने

दीप शिखा मासिक

सबसे सस्ती और श्रेष्ठ होने के कारण

बिहार, बंगाल, मध्य प्रदेश, मध्य भारत, राजस्थान, देहली, पंजाब, काश्मीर, पेप्सू, भोपाल, हैदराबाद आदि सुदूर स्थानों एवम् सम्पूर्ण उत्तर भारत के कोने-कोने में पहुंचने वाली एकमात्र पत्रिका में

विज्ञापन देकर लाभ उठाइये

विज्ञापनों की सुविधा के लिये भारत के सभी स्थानों पर ५०) से १५०) मासिक पर विज्ञापन-प्रतिनिधियों की आवश्यकता है। शीघ्र आवेदन करें।

आज ही वार्षिक मूल्य भेज कर ग्राहक बनें और बनायें। नमूना मुफ्त।

पता :—
दीप शिखा कार्यालय,
मेरठ (उ० प्र०)

TEXMACO

TEXTILE MACHINERY DIVISION

RING SPINNING FRAMES

Of any gauge up to 3″ and lift up to 8″.

Drafting System 4 Roller self weighted with or without Pendulum Arm Weighting, 4 Roller saddle weighted, Casablanca 500 with or whitout Pendulum Arm Weighting, 500-A or E 10 B.

Roller Bearing Spindles.

Ball Bearing Jockey Pulleys.

Ball Bearing Front Top Rollers.

DRAWING FRAMES

Of 16″ or 18″ Gauge with one or two heads.

Belt or Motor driven.

Electric Stop Motion.

Automatic Locking Device

9″, 10″ or 12″ diameter Cans.

BOILER & HEAVY ENGINEERING DIVISION

Smoke Tube, Marine, Water Tube and Locomotive Boilers, Flues, Mechanical Stokers, Economisers, Chemical and Pressure Vessels Coal Handling Plant, Chimneys, Ductings, Cranes, Railway Wagons and Rolling Stock, Penstock Pipes, Sluices and Spillway Gates for Hydraulic Dam Projects.

Smoke Tube Boiler design in collaboration with M/S. Babcock & Wilcox of India Ltd.

For particulars please write to

TEXTILE MACHINERY CORPORATION
LIMITED.

Belghurriah 24 Parganas West Bengal

नवयुवकों को स्वास्थ्य सन्देश

(श्री स्वामी शान्तानन्द जी महाराज आर्यसमाज ब्यावर)

१—युवा भ्रातृगण ! इसमें सन्देह नहीं कि तुम्हारे शरीर और मन उत्साह से पूर्ण और तुम्हारे ज्ञान-नेत्र सतेज हैं। परन्तु याद रक्खो तुम्हारा मार्ग कांटेदार झाड़ियों, साँप, बिच्छुओं और अदृश्य जन्तुओं से परिपूर्ण है। काल का रोग और भोग-रूपी जाल पग-पग पर बिछा हुआ है। इसलिये सावधान होकर पैर उठाना आरम्भ करो, कहीं ऐसा न हो कि उस कुएँ में जा पड़ो कि जिसका मुंह शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध रूपी सुनहरी पर्दे से ढका हुआ है और जिसके अन्दर गर्मी, सुजाक, प्रमेह, नपुंसकता, निर्बलता आदि रोग मृत्यु-रूपी साँप, बिच्छु, अजगर आदि तुम्हें डसने के लिये तैयार बैठे हैं।

२—तुम्हारी आयु के प्रथम पच्चीस वर्ष शरीर और आत्मा को दृढ़ और बलवान् बनाने की तैयारी के हैं। तैयारी के लिये साधनों की आवश्यकता है, साधन सम्पन्न बनो—यही मेरी इच्छा है।

३—सादा, सरल और परिश्रमी-जीवन व्यतीत करो, मोटा खाओ, मोटा पहनो।

४—पैदल चलने के अभ्यासी बनो, जहाँ तक बने सवारी से बचो।

५—शरीर का बाहिरी शृङ्गार और चमक शरीर को निर्बल और अन्तःकरण को मलीन कर देते हैं। जिसका पता बहुत दिनों के पश्चात् लगता है।

६—साधारण समयों में लंगोट और धोती हमारे देश, जल, वायु के अनुकूल वेश-भूषा है। लंगोट के अभ्यासी को बवासीर, प्रमेह, आंत-गोशा (हर्नियाँ) आदि रोग नहीं होते।

७—शरीर के सार-रूपी वीर्य को अपने खून में मिलाने का यत्न करो, जिसके खून में यह अमृत रस नहीं मिलता उसका खून मक्खन निकले दूध के समान है।

पता

ग्राहक संख्या 2046

सेवा में—श्री जगदीशचन्द्र जी विद्या-
(मुरारी बद

मु०

पो० कमलानगर देहल

जि०

८—सोने से पूर्व और जागने के पीछे दोनों समय व्यायाम आदि साधनों से इन्द्रिय रूपी घोड़ों को थका देना आवश्यक है नहीं तो यह जागृत और स्वप्न में भी सताते रहेंगे।

९—इस अमृत रस को पचाने के लिये व्यायाम, प्राणायाम, सात्त्विक-भोजन, विचारों की पवित्रता, सत्संग और ईश्वर-भक्ति साधनों का अभ्यास अवश्य करो।

१०—मन, वचन, कर्म से हर प्रकार के मैथुनों से बचो तथा ब्रह्मचर्य का पालन करो।

११—ज्ञानियों तथा वृद्ध पुरुषों का सत्कार करो तथा उनकी सत्य आज्ञा का पालन करो।

१२—सर्दियों में सूर्य के ताप का सेवन, खुले आकाश, खुली वायु में भ्रमण करो।

१३—मल-मूत्र के वेग को मत रोको, सोने से पूर्व मल-मूत्र को अवश्य त्याग दिया करो।

१४—सोने से पन्द्रह मिनिट पूर्व मस्तिष्क-कार्य, चिन्ता, क्रोध, निराशा तथा रोग की वार्ता आदि छोड़ दो, ओ३म् का जाप करते हुए सो जाओ।

१५—पीठ के बल न सोओ अपितु कर्वट के बल सोया करो। विशेषकर जब कि स्वप्नदोष का रोग हो तब दाँई कर्वट सोना चाहिये।

१६—वीर्य के बराबर नहीं कोई वस्तु जहान में।
वीर्य की नहीं रक्षा तो शत रोग है जान में॥

१७—विद्यार्थी युवाओ ! उपरिलिखित उपदेशों पर विश्वास करो, आचरण में लाओ।

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

DELHI

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

ओ३म्

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष २
अङ्क १

गुरुकुल झज्जर (रोहतक), श्रावण सं० २०११ वि०
सितम्बर १९५४, दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

आर्योपदेष्टा स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज

स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज आर्य समाज के आरम्भिक काल के उच्च कोटि के दिग्गज शास्त्रार्थ-महारथी, त्यागी, तपस्वी, निर्लेप, साधुमना, वैदिकधर्मोपदेष्टा संन्यासी थे। ब्रह्मचर्य को आधार मान कर आर्ष-शिक्षा-प्रणाली के सफल प्रचारक थे। जहां वे मौखिक शास्त्रार्थ के अप्रतिम योद्धा थे, वहाँ वैदिक सिद्धान्तों पर लिखने में भी अग्रेसर थे। किसी न किसी वैदिक सिद्धान्त पर प्रतिदिन एक ट्रैक्ट लिख डालना आप का साधारण कार्य था। वर्तमान आर्योपदेशक आपके कर्मठ और निःसंग जीवन से बहुत कुछ शिक्षा ले सकते हैं।

* * *

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्‌देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सह सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

कृपया चन्दा भेजिये

इस अंक की विषय सूची

विषय	लेखक	पृष्ठ
ब्रह्मचर्यमहत्वम्	श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न	३-४
सम्पादकीय		५-६
सुधार	पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज	७-८
गोचर भूमि	श्री डा० रामस्वरूप जी सांपला	९-१०
राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान	श्री मुनि देवराज जी विद्या वाचस्पति	१३ से १६
सर्प विष चिकित्सा	श्री आचार्य भगवान् देव जी	१७ से २०
संस्था समाचार		२३
सर्वनाश की जड़ हुक्का	श्री मिस्तरी चन्दगी राम जी नीमली	२५
ब्रह्मचर्य-महिमा (कविता)	ब्र० यज्ञपाल जी सि० शास्त्री पंचग्राम	२८

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—आर्यसमाज या वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं ली जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चौथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	९)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५% अधिक।

,, तृतीय १०% अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

(श्री पण्डित मेधाव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्)

[गताङ्क से आगे]

मन्त्रः—ब्रह्मचारी जनयन् ब्रह्मापो लोकं
प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम्।
गर्भो भूत्वाऽमृतस्य योनाविन्द्रो ह
भूत्वासुरांस्ततर्ह ॥
(अथर्व० ११।५।७)

युग्मम्—

जनयन् ब्रह्मचारी तद् ब्रह्मापो लोकमात्मवत्।
प्रजापतिं वसुं पूर्वं विराजं परमेष्ठिनम्।।३४॥

अमृतस्य ततो योनौ गर्भो भूत्वा वसन्नसौ।
इन्द्रो भूत्वा यथादित्यस्तमो हन्त्यसुराँस्तथा ।।३५॥

अर्थः—वह ब्रह्मचारी आत्म सदृश ज्ञान कर्म व लोक समुदाय को प्रकट करता हुआ शरीर उन्नति से वसु ब्रह्मचारी रूप प्रथम प्रजापति अवस्था को और परम= प्राणों में स्थिति वाली द्वितीय विराट् अवस्था को प्रकट करता हुआ, अन्त में अमृतयोनि=ज्ञान केन्द्र में गर्भभूत रह, इन्द्रनामक ब्रह्मचारी बन, असुरों=दैत्यों का ऐसे नाश करता है जैसे सूर्य अन्धकार का।

प्रजापतिं वसुं विद्याद् विराजं रुद्रसंज्ञकम्।
जानीयाच्चेन्द्रमादित्यं कर्मज्ञानार्हता यथा ।।३६॥

अर्थः—कर्म और ज्ञान की योग्यता के अनुसार स्थूल भूतों के अधिपति स्वरूप शारीरिक ब्रह्मचर्य के पालक प्राजपति ब्रह्मचारी की वसु संज्ञा, आन्तरिक प्राणों के अधिपति रूप मानसिक ब्रह्मचर्य के पालक विराट् ब्रह्मचारी की रुद्र संज्ञा और दिव्य आत्मिक शक्तियों के अधिपति, आत्मिक ब्रह्मचर्य के पालक इन्द्र ब्रह्मचारी की इन्द्र संज्ञा जानिए।

एकं वेदमधीत्य यो गुरुकुलान्निर्गम्य सन्त्स्नातको-
गार्हस्थ्यं कुरुते वसुस्स कथितो वेदौ च रुद्रस्तथा।
आदित्योऽमृतयोनिसद्गुरुगृहाद् वेदानथेन्द्रो व्रती
ब्राह्मक्षात्रबलेन सोऽसुरबलं हन्ति प्रजापीडकम् ।।३७॥

अर्थः—एक वेद पढ़ कर जो स्नातक गुरुकुल से निकल पच्चीस वर्ष की आयु में गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है वह वसु, दो वेद पढ़कर गुरुकुल से निकल छत्तीस वर्ष की आयु में जो गृहस्थ धर्म का पालन करता है वह रुद्र, इन्द्रव्रत को धारण करता हुआ चारों वेदों में पारंगत हो, अमृतयोनि रूप उत्तम आचार्य कुल से निकल कर अड़तालीस वर्ष की आयु में जो आदर्श गृहस्थ बनता है वह आदित्यसंज्ञक ब्रह्मचारी कहा गया है। वह ही ब्राह्म और क्षात्रबलों द्वारा प्रजापीड़क असुर बल का संहार करने में समर्थ है।

यद्वर्गीयं ब्रह्मचर्यं करोति
तद्वर्गीयं ब्रह्मचारी जगत्याम्।
कर्म ज्ञानं शिक्षयन्त्स्वानुरूपान्
शिष्यान् प्रज्ञान् व्यञ्जयत्येव लोकान् ।।३८॥

अर्थः—ब्रह्मचारी संसार में जिस श्रेणी के ब्रह्मचर्य को धारण करता है उसी वर्ग की योग्यता के अनुसार लोगों को श्रेष्ठ-श्रेष्ठतर, श्रेष्ठतम ज्ञान व कर्म की शिक्षा देता हुआ अपने सदृश मेधाशाली विद्वान् शिष्यों को आविर्भूत करता है।

सर्वश्रेष्ठो ब्रह्मचारी स इन्द्र,
स्तस्यादेशं गृह्णते सर्वदेवाः।
शक्तिं दैवीमाश्रितस्य प्रतीक्षां,
रक्षस्त्रस्ताः कुर्वते सत्यनेतुः ॥ ३९ ॥

अर्थः—ब्रह्मचारियों में इन्द्रसंज्ञक ब्रह्मचारी सर्वश्रेष्ठ

है क्योंकि उसके आदर्श को समस्त विद्वजन ग्रहण करते हैं। एवं राक्षसों से सन्त्रस्त मानव समुदाय दिव्यशक्ति सम्पन्न इस समुचित-पथ-प्रदर्शक नेता के आने की प्रतीक्षा करता रहता है।

मन्त्रः—आचार्यस्ततक्ष नभसी उभे इमे उर्वी
गम्भीरे पृथिवीं दिवं च।
ते रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तस्मिन्देवाःसंमनसो भवन्ति॥
(अथर्व० ११।५।८)

उपजातिः—आचार्य उर्वी नभसी उभे इमे,
तक्ष्णोत्यगाधे पृथिवीं तथा दिवम्।
ते ब्रह्मचारी तपसाऽभिरक्षति,
तस्मिन्सुराः संमनसो भवन्त्यहो ॥४०॥

अर्थः—आचार्य बहुत विस्तृत व बहुत गहरे इन दोनों नभः=द्यु और पृथिवी लोकों को घड़ देता है, अहो! ब्रह्मचारी उन (घड़े हुओं) की तपश्चर्या से सम्यक् रक्षा करता है। ऐसे ब्रह्मचारी में विद्वान् लोग समान मनवाले=अनुकूल हो जावे हैं।

मालिनी—विभुवररचितायां अद्भुताया इलाया
गुरुतरगहनायाः श्रीदिवो विस्तृतायाः।
अचलनियमजातं सुप्रबन्धञ्चतत्त्वा-
न्यवगमयति शिष्यं देशिकेन्द्रो व्रतीन्द्रम्॥४१॥

अर्थः—सर्वव्यापक प्रभु द्वारा अत्युत्तम प्रबन्ध व अटलनियम पूर्वक बनाई गई, अद्भुत गुण विशिष्ट, अत्यन्त गहन=दुर्जेय इस विस्तृत भूमि व द्यु लोक के तत्त्वों का सर्वविद्यानिष्णात आचार्य प्रवर अपने शिष्य उत्तम ब्रह्मचारी को बोध करा देता है।

द्यावापृथिव्योर्ऋततत्त्वबोधं
स ब्रह्मचारी तपसाऽवतीमाम्।
गुरुर्भुभूपुर्ऋणमोचनार्थं
तस्मिन्सुराः सम्मनसो भवन्ति ॥ ४२ ॥

अर्थः—आचार्य बनने की इच्छा करने वाला वह ब्रह्मचारी ऋषि-ऋण से अनृण के लिये द्यावापृथिवी के इस यथार्थ तत्त्वज्ञान की तपस्या द्वारा रक्षा करता है। विद्वान् लोग ऐसे तत्त्ववित् मेधावी ब्रह्मचारी के समान-मन-वाले अनुकूल रहते हैं।

श्लोक—मन्ये दिवं च पृथिवीं गहनां विशालां
निर्माय यच्छति गुरुर्व्रतिनेऽद्भुते ते।
संरक्षति व्रतिवरस्तपसाऽतुलेन
देवास्तदेकमनसोऽनुगुणा भवन्ति ॥ ४३॥

अर्थः—ये द्यु और पृथिवी लोक अत्यन्त दुर्ज्ञेय व विशाल हैं फिर भी आचार्य-शिल्पी आश्चर्य में डालने वाले इन लोकों के ज्ञान को ग्रहण करने में सुगम बनाकर व्रतपालक ब्रह्मचारी को मानो सौंप देता है। जिस की वह अपरिमित तपस्या से रक्षा करता है, उस समय त्रिलोकस्थ देव भी उसके अनुकूल वर्तते हैं=वर्ताव करते हैं।

मन्त्रः—इमाँ भूमिं पृथिवीं ब्रह्मचारी भिक्षामा-
जभार प्रथमो दिवं च।
ते कृत्वा समिधावुपास्ते तयोरार्पिता भुवनानि विश्वा॥
(अथर्व० ११।५।९)

श्लोक—प्रथमो ब्रह्मचारीमां पृथिवीं सुवसुन्धराम्।
दिवञ्चाहरति प्रज्ञो भिक्षारूपां विरांकटाम् ॥४४॥

अर्थः—उत्तम धन धान्य को धारण करने वाली इस भूमि व विशाल देदीप्यमान द्यु लोक का प्रज्ञाशाली सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मचारी भिक्षारूप में आहरण करता है।

ते कृत्वा समिधौ रम्ये उपास्ते गुरुपावकम्।
तयोर्मध्ये हि विश्वानि भुवनान्यर्पितान्यरम् ॥४५॥

अर्थः—फिर उन्हें आचार्य अग्नि में सुन्दर समिधाओं का रूप देकर उपासना करता है=तादात्म्यभाव शे अपने व आचार्य के हृदय को अभिन्न समझता है। इन दोनों लोकों के मध्य ही सब भुवन पूर्णरूप से अर्पित हैं=समाविष्ट हैं।

सर्वश्रेष्ठो ब्रह्मचारी सुभिक्षा-
माचार्यार्थं विस्तृतां गां दिवञ्च।
आहृत्यास्मै ज्ञानयज्ञेश्वराय
दत्ते भक्त्या संविधायेन्धने ते ॥४६॥

अर्थः—ज्ञान-पिपासु ब्रह्मचारी भिक्षारूप पृथिवी और द्यु लोक के विस्तृत ज्ञान को आहरण करके ज्ञानरूप आचार्यवर्य की ज्ञानाग्नि में विनय एवं श्रद्धा-भक्ति से समर्पित इन्धन बना देता है।

(क्रमशः)

सम्पादकीय——

सुधारक इस अंक से द्वितीय वर्ष में प्रवेश कर रहा है। गत वर्ष सुधारक ने चहुंमुखी सुधार पर बल दिया है। शारीरिक, सामाजिक, आत्मिक त्रिविध सुधार के लिये पर्याप्त लेख सामग्री प्रेमी पाठकों के सामने प्रस्तुत की है। सब सुधारों का सुधार ब्रह्मचर्य प्रणाली है। इस विषय पर प्रत्येक अंक में मननात्मक और क्रियात्मक पठनीय लेख दिये जाते हैं। हम वर्तमान चालू वर्ष में भी हम अपने ध्येय से दृढ़ता से चलने का संकल्प रखते हैं। हमारे संकल्प को परमब्रह्म प्रभु की दया और प्रेमी पाठकगण का सहयोग अपेक्षित है।

आज भी हमारा पवित्र आर्यावर्त्त देश कुरीतियों का घर बना हुआ है। यद्यपि समाज सेवक, देश हितैषी, धर्मात्मा सुधारक महानुभाव कुरीति निवारण और सद्गुण-प्रसारण का शुभ यत्न करते ही रहते हैं, परन्तु मानव स्वभाव के कारण जनता में नये अथवा पुराने दुर्गुण घुसते रहते हैं। इनकी निवृत्ति के लिये हमें सदा सन्नद्ध रहना ही चाहिये।

१—हमारा भोजन राजस से भी गिर कर महा तामस हो रहा है। जिस भूमि में प्याज, लहसुन और शलगम आदि से घोर घृणा की जाती थी, वहां आज इन तामस पदार्थों की तो बात ही क्या, खुले रूप में अण्डे, मछली तथा पशु-पक्षियों का मांस खाया जा रहा है। बड़े खेद से कहना पड़ता है कि विदेशी रंग में रंगे शिक्षित कहलाने वाले लोग इस भयङ्कर पतन में अपठित जनता से आगे निकले हुये हैं। यह कहने और लिखने की कुछ भी आवश्यकता नहीं कि इस दुष्ट भोजन प्रणाली ने बुद्धि, मन, आत्मा, और शरीर का ह्रास कर दिया है। देश का आर्थिक ढांचा लड़खड़ा गया है। वायुमण्डल विष से भर गया है अतः सर्वप्रथम हमें अपने खान-पान में सुधार करना आवश्यक है। अन्न, फल, दूध, आदि से बने पदार्थ ही भक्ष्य हैं। इनमें भी स्वप्रकृति के अनुकूल ग्रहण करने उत्तम हैं। मांस आदि हिंसाजन्य होने से अत्यन्त त्याज्य हैं। बड़े दुःख से कहना पड़ता है कि भारतीय सरकार अहिंसा का ढोल जोर-जोर से पीटती है, और गावों के पवित्र स्थलों तक मछली और मुर्गी पालने पर पूर्ण बल दे रही है। यह नितान्त हेय है।

२—नशों की भरमार भी कुछ कम नहीं। तम्बाकू का जहर तो व्यापक रूप धारण कर रहा है। बीड़ी और सिग्रेट के प्रचार ने तो नाश ही कर दिया। ३—४ वर्ष के बालक तक इस नाशकारिणी बीड़ी को पीते देख जाते हैं। इस महामारी से हमारे समाज के हृदय काले पड़ गये हैं। रेल और मोटर आदि में बैठ कर चलना तम्बाकू न पीने वाले के लिये एक भारी आपत्तिका कार्य बन गया है। इसी पर वश नहीं अफीम, भांग, धतूरा, और शराब आदि जाने क्या-क्या अपेय पीये जा रहे है। शराब को स्वदेशवासी ग्रामीण भाई दारु कहकर घृणा करते थे। कई आर्यजनों को हम स्वयं जानते हैं जिन्होंने मृत्यु का आलिंगन किया, परन्तु डाक्टरों के कहने पर भी शराब को छूआ तक नहीं। अब उन्हीं की सन्तान शराब के प्याले पर गिर चुकी है। हमने समझा था कि अंग्रेज के जाने पर यह रोग भी चला जावेगा परन्तु खेद और महान् खेद है कि कोई भी राजकीय समारोह सम्पन्न ही नहीं होता, जिसमें शराब सम्मिलित न हो। राज्य अधिकारियों का तो कहना क्या हमारे शासक मण्डल के मन्त्री आदि भी इस गड़े में गिर तेदेखे गये हैं। कूयें में ही भांग पड़ चुकी है। हमें इस दुर्गुण का डट कर प्रतिरोध करना होगा।

३—नाच स्वांग, गन्दे राग आदि बहुत कुछ नष्ट हो चुके थे, परन्तु सरकारी सहायता पाकर यह दुर्गुण सिर उठा चुके हैं। भारतीय सरकार विदेशों में संस्कृति के नाम नाचने-गाने वालों को भारतीय गरीब जनता के पैसे पर विदेशों की मौज करने भेज रही है। भारतीय संस्कृति के नाम पर लोक नृत्य हो रहे हैं। इस पापिष्ठ दृश्य में हमारे राष्ट्रपति और प्रधान मन्त्री तक सम्मिलित होते हैं। फिर खैर कहाँ? हमारे सहयोगी 'सुधारक' सहयोग प्रेमियों का यह मुख्य कर्तव्य है कि ऐसे कुकृत्यों का प्रबल रूप से विरोध करें; नहीं तो भारत फिर से वाममार्ग का गढ़ बन कर पतित हो जावेगा।

४—फैशनपरस्ती का क्या ठिकाना है। पंजाबियों की फैशनपरस्ती का रोना तो हमारे प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू समय-समय पर सुनाते ही रहते हैं। आर्यसमाज ने स्त्री जाति से पर्दे को दूर करने का प्रबल आन्दोलन किया है। परन्तु नये शिक्षित समुदाय ब्रिटिश पुत्रों की अवस्था कोई भला व्यक्ति देखे तो लज्जा के मारे उधर कभी जाने का नाम न ले। भारतीय पुत्रियां आज अर्द्ध नाग्नावस्था में पर पुरुषों के सम्पर्क में जाती देखी गई हैं। जब पुरुषों में फैशन जड़ पकड़ रहा है तो स्त्रियों में तो कहना ही क्या ? सरकारी बस्तियों में कोई कह नहीं सकता कि यह भारतीय देवियां है। इस महा दुष्ट व्यसन को नष्ट करने के लिये घोर आन्दोलन करना पड़ेगा।

५—यह समझा गया था कि देश की स्वतन्त्रता मिलने पर प्राचीन भारतीय आर्ष शिक्षा प्रणाली पर हमारी शिक्षा पद्धति का निर्माण किया जावेगा। अंग्रेजी और विदेशी प्रणाली विदा हो जावेगी, परन्तु हो रहा है इसके सर्वथा विपरीत। अंग्रेजी काल में जनता के हृदय में प्रचीन संस्कृत शिक्षा प्रणाली के प्रति विशेष अनुराग था। आज वह अनुराग तो है ही नहीं, अपितु संस्कृत शिक्षा के गढ़ गुरुकुल और विद्यालय लड़खड़ा गये हैं। सरकार उन्हीं गढ़ों का पोषण कर रही है जिन्होंने अंग्रेजी राज्य की जड़ें जमाईं और १५०-२०० वर्ष तक स्थिर रखा। परन्तु प्राचीन शिक्षा-संस्कृत की उपेक्षा की जा रही है। इस बात को अत्यन्त सावधानता से समझ कर भारतीय जनता को चलना होगा। यदि हमसमय पर नहीं सम्भले तो नाम तो देश का चाहे भारत रहे परन्तु भीतर सब कुछ अभारतीय हो जावेगा।

६—सामाजिक कुरीतियों को दूर करने में आर्य समाज ने अथक बल लगाया है। इसका प्ररिणाम भी हुआ था अच्छा ही; परन्तु अब फिर यह कुरीतियां हमारे समाज में घुस रही हैं। दृष्टान्त के लिये केवल विवाह संस्कार को ले लीजिये —आज भले पवित्र आचरण वाले घरों की सुयोग्य, सुशिक्षित, पवित्र आचरण की लड़कियों के लिये वर मिलने कठिन हो रहे हैं। लड़के वाले के मुँह में आग भरी है। पापी को रुपये चाहियें। ये सामाजिक राक्षस अपने लड़कों को बेचते हैं। गरीब की लड़की बेचने पर घोर निन्दा की जाती थी (यह ठीक था) परन्तु लड़कों के दाम उठाने वाले पापी समाज के अगुआ बने फिरते हैं। कुछ शर्म करना तो दूर रहा—इस कुकर्म में अपना मान समझते हैं। इस भयङ्कर व्याधि को जड़ से नष्ट करना ही होगा

७—गांवों की जनता को मुकदमेबाजी ने बुरी तरह तरह पीस डाला है। कचहरियों के डाकू इन भूखों की बाट देखते रहते है। २००बीघे की जोत करने वाले जमीदार किसान के शरीर पर पूरे चीथड़े भी नहीं, परन्तु कचहरियों में जाकर शहरी दलालों की कोठियां बना रहा है। घर में बच्चे कई महीने तक छाछ मांगते फिरते हैं, परन्तु डाकुओं को यह घी के टिन पहुँचा देता है। पंचायती प्रणाली पर चलकर इन मुकदमों को बन्ध करने में ही हमारी भलाई है नहीं तो पछताना और रोना ही पड़ेगा। जब इसके बच्चे पढ़ेंगे ही नहीं, तो उच्च शासन सत्ता को कैसे पकड़ सकते हैं। इधर इन कुरीतियों से धन रोककर बालकों को सदाचारी और सुशिक्षा करने में बल लगाना ही श्रेयस्कर है।

८—देश में अनेक प्रकार के अनाचार और व्यभिचार को नष्ट करके ब्रह्मचर्य पालन की क्रियात्मक शिक्षा देकर युवक को उन्नत और बलिष्ठ करना ही राष्ट्र रक्षा है।

—इन तथा अन्य इसी प्रकार के कुमार्ग को बन्ध करना और सन्मार्ग पर चलना-चलाना 'सुधारक' का उद्देश्य और कार्य है। सुधारक इस सुपथ से डिगेगा नहीं। इसके प्रेमी ग्राहक महानुभावों से निवेदन है कि इस पवित्र कार्य में सहयोग देकर सुधारक की शक्ति को बढ़ावें। सुधारक की शक्ति बढ़ाने का एक उपाय यह है कि प्रत्येक ग्राहक अपने समान एक नया ग्राहक और बनावे तथा उसको भी प्रेरित करे कि वह नवीन ग्राहक भी अन्य ग्राहक बनावे। यदि सुधारक की ग्राहक संख्या बढ़ती है तो पूरी शक्ति दुर्गुणों के नाश में लगाकर सद्गुणों को बढ़ाया जा सकता है। प्रभो ! हमें सामर्थ्य दे कि हम परस्पर मिल-जुल कर उन्नत बनें।

सुधार

(श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज, दीनानगर)

श्री वेदव्रत व्यवस्थापक "सुधारक" झज्जर ने लेख लिखने की प्रेरणा की है। उसी आधार पर ये पङ्क्तियाँ लिख रहा हूँ।

पञ्जाब सरकार ने सब से प्रथम मद्य निषेध की आज्ञा जिला रोहतक में दी। यह रोहतक निवासियों के सौभाग्य की बात थी।

जिला रोहतक में हुक्के के विरुद्ध गरीबदास जी ने तथाकथित अपने ग्रन्थ में लिखा है। इसलिये उस जिले के निवासी जो गरीबदासियों के सत्सङ्गी थे वे हुक्का नहीं पीते थे। और अन्य लोग प्रायः हुक्का पीते हैं। गरीबदासियों के अतिरिक्त जिला रोहतक में नाथ हैं, किन्तु इनका हुक्का पीना तो प्रधान है ही साथ-साथ मद्य पीनेवाले भी नाथ पर्याप्त मिलते हैं।

हुक्के की एक बात लिखता हूं। मैं एक बार चौधरी लालचन्द जी के गृह पर बैठा था, उस समय गोधूम २॥ तीन रुपये मन थी। मैंने चौधरी जी से कहा, भूमि का लगान अधिक है। इस में कमी होनी चाहिये।

उन्होंने इसका सीधा उत्तर न देकर कहा—मैं बात करता हूं, आप ध्यान से सुनें। उनके पास किसी ग्राम के लोग कार्यवश आये हुए थे। चौधरी जी ने उनसे कहा—

प्रश्न—आप का ग्राम कितनी कुटी का है?

उत्तर—जो था, वह कहा। लगभग पाञ्च छः सौ कुटी कहा।

प्रश्न—घर में बीर माणस मिलकर आठ दस होंगे?

उत्तर—हाँ होंगे, किसी के कम होंगे तो कहीं अधिक होंगे।

प्रश्न—सब माणस हुक्का तो पीते होंगे?

उत्तर—हाँ प्रायः सभी पीते हैं।

प्रश्न—एक दिन में एक माणस कितनी चिलम पीता है।

उत्तर—उन्होंने कोई सङ्ख्या बतलाई जो मुझे स्मरण नहीं।

प्रश्न—तम्बाकू का भाव क्या है?

उत्तर—जो था बताया।

प्रश्न—कितने तम्बाकू में कितना सीरा पड़ता है?

उत्तर—जो नियम था, वह उत्तर में कहा।

प्रश्न—एक माणस के हिसाब से एक मास में इतना व्यय हो गया। और वर्ष में इतना हो गया। एक गृह में दो वा तीन माणस मान लें, तो एक घर का तम्बाकू का व्यय इतने रुपये हो गया। पाञ्च सौ कुटी का ग्राम होने से एक ग्राम का तम्बाकू का व्यय इतना हो गया।

उसके पश्चात् चौधरी जी ने विषय बदला।

प्रश्न—तुम्हारे ग्राम का रकबा कितना है?

उत्तर—इतना है।

प्रश्न—मालिया एक बीघा का कितना है?

उत्तर—इतना है।

प्रश्न—ग्राम में नहरी भूमि है वा नहीं?

उत्तर—नहीं। सब बारानी ही है।

प्रश्न—आपके ग्राम का मालिया कितना है?

उत्तर—उन में से एक ने कहा—एक उगाही का इतना है। चौधरी जी ने दोनों उगाहियों का इतना हो गया, और बीघा के हिसाब से देखें तो इतना होता है।

जब चौधरी लालचन्द जी ने दोनों हिसाब लगा लिये, तब मुझे कहा—स्वामी जी! देख लें, इनके ग्राम का जितना मालिया है, तम्बाकू का व्यय उससे अधिक है। जो लोग तम्बाकू पर इतना व्यय कर सकते हैं, जो मालिया से अधिक है, उन पर मालिया क्यों कम किया जाय?

मुझे इससे पूर्व यह ज्ञात न था कि तम्बाकू पर इतना व्यय होता है। उसी दिन चौधरी जी के समझाने

से बोध हुआ, कि तम्बाकू पर हरयाणा निवासी पर्याप्त व्यय करते हैं। जो स्वास्थ्य के लिये भी हानि कारक है।

मद्य का व्यय तो इससे अधिक ही है। तब भी मद्य प्रतिदिन पीने वाले न्यून हैं। साधारण प्रजा में कभी-कभी पीने वाले अधिक हैं। जिला रोहतक में मद्य का पीना सरकारी तौर पर निषिद्ध है। अब सरकार चाहती है कि पंजाब के और जिलों में भी मद्य बन्द की जाय।

मुझे एक दिन एक अधिकारी ने यही कहा। मैंने उसे उत्तर दिया, कि मैं एकवार जिला गुड़गावाँ से प्रस्ताव भिजवा चुका हूं कि रोहतक की भाँति जिला गुड़गावाँ में भी मद्य का निषेध हो जाय। उसने पूछा, आपको निश्चय है या वैसे ही कहते हैं ? मैंने कहा, मैं उस सभा का प्रधान था, मैंने स्वयं यह प्रस्ताव सरकार को भेजा था। उसने उत्तर दिया, तब शराब बन्दी पर विचार करते समय जिला गुड़गावां पर अवश्य विचार किया जायेगा।

मैंने उससे कहा हरयाणा में मद्यप सर्वथा न थे। अब तो हैं, तो भी जालन्धर डिवीजन से न्यून ही हैं। द्य निषेध के लिये जालन्धर में कठिनाई होगी।

प्रायः कहा जाता है, सिख प्रायः सब मद्यप हैं। परन्तु मैं अनेकों को जानता हूँ जो मद्य नहीं पीते हैं। उनके गुरु ग्रन्थ साहिब में मद्य का निषेध है। जैसे—

जिस पीने मति दूर है, बाल पवे विच आप।
एसा मद भूल न पीचई, जो बाहर पछोताय ॥

भाई कान्हसिंह जी ने मद्य न पीने की बात लिखी है। आजकल सिखों के कई नेता हैं, जो मद्य के विरुद्ध हैं। तो भी अब तक पीने वालों की प्रधानता है। यही मानना पड़ता है।

हरयाणा वाले प्रायः मद्य के विरुद्ध हैं और सिख मद्य पीते हैं। सिख प्राय: तम्बाकू के विरुद्ध हैं और हरयाणा वाले तम्बाकू पीते हैं। दोनों सेना में योद्धा हैं, दोनों कृषि में दक्ष हैं। इसलिये मेरी सम्मति में यह तो हो जाना चाहिये कि *सरकारी नियमानुसार न कोई तम्बाकू (हुक्का) पी सके और न ही कोई शराब पीवे*। इसमें दोनों का आर्थिक भी भला है और स्वास्थ्य भी अच्छा हो जायेगा।

आशा है हरयाणा वाले इस पर विचार करने का कष्ट करेंगे। और सरकार न करे तो परस्पर बिरादरियाँ हुक्का बन्दी का नियम बना लेंगी।

ग्राहकों से निवेदन

"सुधारक" केवल सुधार के लिये ही चालू किया गया है। इस ने एक वर्ष पूरा करके दूसरे वर्ष में पग रख दिया है। इस प्रथम वर्ष में ही सुधारक के तीन विशेषाङ्क ग्राहकों को भेंट किये गये, जिन में बड़ी लाभप्रद लेख सामग्री पाठकों को भेंट की गई। ग्राहकों को वार्षिक मूल्य में ही यह भेंट दिये गये। सुधारक का वार्षिक मूल्य २) रु० मात्र है जो लागत से भी कम पड़ता है। अनेक सज्जनों ने इसकी प्रशंसा की है। हमने आरम्भ से ही अनेक सज्जनों, संस्थाओं और समाजों के पास सुधारक भेजा है, परन्तु आश्चर्य और खेद है कि पूरा वर्ष भर सुधारक पहुंचने पर भी महानुभावों ने २) रु० वार्षिक शुल्क नहीं भेजा है। इस प्रकार सुधार कार्य में सहयोग की अपेक्षा विघ्न पड़ता है जो कि सज्जनों के स्वभाव से बाहर है। मैं ऐसे सभी महानुभावों से नम्र निवेदन करता हूँ कि पिछले वर्ष और इस आगामी वर्ष का मूल्य ४) रु० अतिशीघ्र मनीआर्डर से भिजवा देवें। वी० पी० में अधिक खर्च व्यर्थ ग्राहक पर पड़ता है अतः वी० पी० पी० द्वारा पत्र नहीं भेजते। आशा है, सुधारक के प्रेमी ग्राहक तुरन्त अपना शुल्क भेजकर कृतार्थ करेंगे।

व्यवस्थापक—सुधारक

गोचर भूमि

(श्री डा० रामस्वरूप जी रिटायर्ड वेटर्नरी असिस्टेण्ट सर्जन सांपला)

प्राचीन काल में भारत देश में गोचर भूमि अधिकता से पाई जाती थी इसका कारण यह था कि राज्य की ओर से गोचर भूमि छोड़ी जाती थी और अन्य धनी लोग भी इसे पुण्य और यज्ञ के समान समझ कर अपने धन से मोल लेकर गोचर भूमि छोड़ते थे। महाराज मनु ने सृष्टि के आदि में समस्त भूमि का दसवां भाग छोड़ने का आदेश किया है। इसी प्रकार महामुनि याज्ञवल्क्य जी की स्मृति व पद्म पुराण वा नारदस्मृत्यादि ग्रंथों में सविस्तार गोचर-भूमि छोड़ने व उसकी रक्षा के कठिन नियमों का वृत्तान्त मिलता है। इसी प्रकार वेद में भी गायों को जंगल में चराने की आज्ञा है कि गायें गोचर-भूमि में अपनी इच्छा के अनुकूल घास जड़ी-बूटियां और औषधियाँ खाकर उनका सारा रस रूप दूध बनाती हैं। ऐसा दूध तुरन्त ही शरीर को नीरोग हृष्ट-पुष्ट बना देता था।

आज गायों के ह्रास का मुख्य कारण गोचर-भूमियों का न होना है। जिन २ देशों में गायों के लिये गोचर-भूमि और उनके खिलाने पिलाने का और उनको साफ सुथरा रखने का पूरा प्रबन्ध है वही देश आज उन्नति में अग्रसर हैं। कुछ वर्षों पहले का निम्नलिखित देशों का गोचर भूमि व जोती हुई भूमि का अनुपात इस प्रकार है—

अमरीका—१ : ६।
जर्मनी—१ : ६।
इंगलैंड—१ : ६।
जापान—१ : ६।
भारत—१ : २७।

इससे प्रकट है कि भारत को गोचर भूमि बढ़ाने की अत्यन्त आवश्यकता है। १६१३ ई० में किसी बोर्ड के सन्मुख गोचर भूमि की तंगी व कमी के प्रश्न पर विचार उपस्थित हुआ था। उक्त बोर्ड ने माननीय श्रीयुत एच० आर० सी० हेली की अध्यक्षता में विशेषज्ञों की समिति नियुक्त की। उस समिति ने निम्नलिखित परामर्श दिये—

१—गोचर भूमि छोड़ने की व्यवस्था कानून द्वारा होनी चाहिये। पशु चराने के अधिकार पर सभी प्रकार के नियन्त्रण आवश्यक समझे जाने चाहियें। स्थानीय अधिकारियों तथा म्युनिसिपल व जिला बोर्डों को चाहिये कि सब गोचर भूमियों की सीमायें बांध दें और उन पर किसी का अधिकार न होना चाहिये।

२—अनुपयोगी भूमि को खेती के योग्य बनाना आदि कार्य को कृषि विभाग के सहयोग से महकमे जंगलात के सहयोग द्वारा व्यवस्थित रूप में होना चाहिये। और इस प्रकार खेती के योग्य बनाई हुई भूमि को गोचर भूमि के रूप में छोड़ देना चाहिये।

३—वर्तमान गोचर भूमियों पर किसी का भी अधिकार न हो इसके लिये कानून बनना चाहिये और ऐसे कानून द्वारा म्युनिसिपल कमेटी व जिला बोर्डों को अधिकार दिये जायें कि वह अपनी आय का एक भाग गोचर भूमियाँ बनाने में खर्च करें।

४—सरकार तथा स्थानीय बोर्डों के खर्च से गोचर भूमियों को बढ़ाना चाहिए।

विशेष सूचना

कृषि सम्बन्ध में सम्राट् की ओर से राइल कमीशन जाँच (समिति) है, उसने भी गोचर भूमियां के विषय पर विचार करके १६२८ ईस्वी में अपनी रिपोर्ट दी थी। राइल कमीशन ने लिखा था कि पशुओं के चराने की सुगमताओं पर मुख्यरूप

से ध्यान देना चाहिए । ग्रामों की गोचर भूमियां में प्रायः आवश्यकता से अधिक पशु चराये जाते हैं। राइल कमीशन ने मुख्यरूप से पशुओं की उन्नति के लिये दो बातों पर ध्यान दिलाया है अर्थात् उनकी खुराक व नस्ल इन दोनों में से हम खुराक को प्रथम स्थान देते हैं। क्योंकि अच्छी नस्ल का आधार अच्छी खुराक है। उक्त कमीशन के सामने बड़े-बड़े भूमिपतियों ने गोचर भूमि बढ़ाने की सम्मति प्रकट की है श्री लाला लाजपतराय जी व पूज्य पं० मदन मोहन मालवीय जी व श्री महात्मा गांधी जी ने गोचर भूमियों के बढ़ाने के लिये बहुत ही यत्न किये किन्तु सफल न हो सके। वनस्पति घी की फैक्टरियों, भैंसों की वृद्धि और विदेशों से चमड़ा तथा हड्डी व सींगादि के व्यार और विदेश से ट्रैक्टरों की मांग, भूमि की चकवन्दी ने थोड़ी सी बची हुई गोचर भूमि को भी नष्ट कर दिया, और किया जा रहा है। अप्राकृतिक उपायों से पशु गर्भाधान की क्रिया के लिये लाखों रुपयों का व्यय किया जा रहा है। जिससे धन व नस्ल दोनों की हानि है यह भारत के लिये विशेष कर हरयाणे के लिये पूर्ण रूप से अनुचित है।

भारत देश में गोचर भूमियों की कमी हो जाने से दूध दही मक्खनादि के न मिलने से शारीरिक व बौद्धिक बल न बढ़ने से सारा भारत दुःखी और रोगी होता जा रहा है। अमरीका, योरुप, न्यूजीलैंड आदि देशों में गोचर भूमियों की अधिकता के कारण दूध दही की अधिकता से हर प्रकार की उन्नति कर गये हैं। भारत सरकार को इस बात की ओर ध्यान देकर गोचर भूमि की कमी समस्या को शीघ्र से शीघ्र पूरा करना चाहिये।

शेष आगे।

आर्य सिद्धान्त दीप

पुस्तक देखने को मिली। पुस्तक के यशस्वी लेखक महर्षि दयानन्द जी महाराज के अनन्य भक्त, श्री पं० मदन मोहन विद्यासागर जी सिद्धान्त मर्मज्ञ व्यक्ति हैं। इन्होंने एक-एक बात पर अच्छी प्रकार प्रकाश डाला है।

भोगवाद की बढ़ती हुई भावनाओं के समय ऐसी पुस्तक की विशेष आवश्यकता थी। पुस्तकालयों में इस पुस्तक का होना आवश्यक है। पाठ्यक्रम में ऐसी पुस्तकों को स्थान मिलना चाहिये। जिस प्रकार भी हो सके नवयुवकों के पास यह पुस्तक पहुँच सके, ऐसा उपाय करना चाहिये। आकार प्रकार से सुन्दर ठोस सामग्री से युक्त ऐसी अनुपम पुस्तक के लेखक के लिये बधाई।

भगवान्देव आचार्य

दृष्टान्त मञ्जरी

एक सौ चौदह सुन्दर तथा शिक्षाप्रद दृष्टान्तों से युक्त दृष्टान्त मञ्जरी पुस्तक हमारे सामने है इसके लेखक श्री पं० जगत्कुमार शास्त्री हैं, पुस्तक $\frac{२० \times ३०}{१६}$ पर, २१६ पृष्ठ वाली जिल्द युक्त है।

मूल्य दो रुपये है, प्रकाशक—वैदिक साहित्य सदन (आर्यसमाज मन्दिर) सीताराम बाजार देहली।

महापुरुषों के उपयोगी दृष्टान्तों ने पुस्तक की उपयोगिता को बढ़ा दिया है। पुस्तकालयों के लिये यह संग्राह्य वस्तु है। जन साधारण में इन दृष्टान्तों के प्रचार में यह पुस्तक अपना स्थान रक्खेगी लेखक और प्रकाशक दोनों को हार्दिक बधाई। पुस्तक की सफलता चाहता हूँ।

भगवान्देव आचार्य

वैदिक साहित्य सदन, देहली द्वारा प्रचारित साहित्य

५. चाणक्य राज सूत्र	।।=)
६. युद्ध नीति और अहिंसा	१।)
७. हिन्दुत्व	१।।)
८. भारतीय संविधान तथा नागरिकता	
९. भारतीय समाज शास्त्र	२)
१०. सन् उन्नीस सौ सतावन	
११. पाकिस्तान नग्न ताण्डव	
१२. आर्थिक कहानियाँ	१)
१३. भारत में अंग्रेजी अत्याचार	६)
१४. आजाद हिन्द फौज की कहानी	१।।)
१५. हिन्दू राष्ट्र की चिंगारियां	१।)
१६. राष्ट्रवादी दयानन्द	१।।।-)
१७. भारतवर्ष का इतिहास (रामदेव)	
१८. प्राचीन संस्कृति का इतिहास	
१९. आर्यसमाज का इतिहास	१।=)

(६) वैज्ञानिक साहित्य

१. खेती-बाड़ी गाइड	२।।)
२. कृषि विज्ञान	।।।)
३. कशीदाकारी	१।)
४. विज्ञान के चमत्कार	
५. हारमोनियम गाइड	२।।)
६. मोटर को कहानी	।=)
७. फोटोग्राफी की कहानी	।=)
८. वायुयान की कहानी	।=)
९. जलयान की कहानी	।=)
१०. रेडियो की कहानी	।=)
११. बिजली की कहानी	।=)
१२. सिनेमा की कहानी	।=)
१३. भाप की कहानी	।=)
१४. रेल की कहानी	।=)
१५. अंग्रेजी मिठाई बनाना	२।।)
१६. सरकट डायाग्राम्ज़ आफ रेडियो	३।।।)
१७. रंग साजी	२।।)
१८. प्रैक्टीकल घड़ी साजी	३।।)
१९. बूट पालिश	२।।)
२०. प्लास्टिक और उसके खिलौने	२।।)
२१. इलैक्ट्रिक गाइड	७)
२२. फाऊण्ड्री प्रैक्टिस	६)
२३. दर्जी मास्टर	२।।)
२४. बच्चों का रेडियो	१।)
२५. मोटर मकैनिक टीचर	६)
२६. खराद शिक्षा	३)
२७. बच्चों का टेलीफौन	१।)
२८. आयल इन्जन गाइड	६)
२९. वर्कशोप गाइड	३)
३०. इलैक्ट्रिक वायरिंग	४)
३१. रेडियो प्राइमर	३)
३२. रेडियो सर्विसिंग	६)
३३. गैस तथा इलैक्ट्रिक वैलडिंग	४।।)
३४. लाउडस्पीकर ऐम्पलीफायर	१।)
३५. आरमेचर बाइंडिंग	६)
३६. ट्रैक्टर गाइड	६)
३७. आयल व गैस इंजन	१०)
३८. साइकल रिपेरिंग	२।।)
३९. इलैक्ट्रिक प्लेटिंग	४।।)
४०. बच्चों के वैज्ञानिक खेल	१।)
४१. क्रूड आइल इंजन	४।।)
४२. वर्कशोप तथा खराद ज्ञान	६)
४३. इलैक्ट्रिक इंजीनियरिंग बुक	१०)
४४. बच्चों का वायरलैस	१।)
४५. स्टीम इंजन	६)
४६. साबुन शिक्षा	१।)
४७. मोटर ड्राइविंग	४।।)
४८. वायरलैस रेडियो गाइड	६)
४९. मोटर कार इन्स्ट्रक्टर	१०)

७—विविध

सब प्रकार की भजनावलियां

१. काश्मीर यात्रा	।।)
२. विदेशों में एक साल	२।)
३. चकबन्दी कानून (उ० प्र०)	।।)
४. महर्षि दयानन्द और गांधी	२)
५. पुष्पाञ्जलि	१)
६. अनमोल हीरे	।=)
७. फलों की पञ्चायत	।=)
८. वीर बच्चे	।=)
९. समाज सेवा	।।।)
१०. संस्कृत क्यों पढ़ें ?	।=)
११. क्यों, क्या, कैसे	।।=)
१२. ईषपनीति निकुञ्ज ३ भाग	२।।-)
१३. मेरी पोथी तीनों भाग	२)
१४. बहादुर राजकुमार	।-)
१५. होनहार बच्चे	।।)
१६. हूं दादा	।-)
१७. इतना तो जानें ही	१।।)
१८. सोने का घड़ा	।-)
१९. गीत मञ्जरी	।।)
२०. अकबर बीरबल विनोद	२।।)
२१. साहित्य दर्शन	५)
२२. मरुभूमि सेवा कार्य	१)
२३. संयुक्ताक्षर बोधिनी	।।)
२४. अन्त्याक्षरी मंजूषा	१।।)
२५. हिन्दी प्रकाश	।।)
२६. व्याकरण विनोद	।।-)

८—सामाजिक उपन्यास

१. चन्द्रनाथ	
२. गोरा	५)
३. देहाती समाज	२)
४. नगीना	३)
५. नाव दुर्घटना	४)
६. शेष प्रश्न	
७. गृह दाह	४)
८. मंझली दीदी	१।।)
९ बड़ी दीदी	१।।)
१०. सुप्रभात	२)
११. परिणीता	
१२. दहेज	
१३. पथ के दावेदार	४)
१४. प्रभा बाई	२।।)

९. संस्कृत साहित्य

१. संस्कृत वाङ्मय का सं० परिचय	॥)
२. ब्रह्मचर्य शतकम्	।=)
३. संस्कृत कथा मंजरी	।-)
४. संस्कृतांकुर	१।)
५. संस्कृत स्वयं शिक्षक (तीनों भाग)	५)
६. पंचतन्त्रम्	
७. वेदांगप्रकाश (१४ भाग)	१०॥=)
८. गद्यमय महाभारत	३)
९. अष्टाध्यायी	
१०. व्याख्यान माला	१॥)
११. हितोपदेश	
१२. संस्कृत सुधा	
१३. दयानन्द दिग्विजय	
१४. संस्कृत वाक्य प्रबोध	≡)॥
१५. मदीयम् पुस्तकम्	॥)
१६. चतुर्वेदीय रुद्रसूक्तम्	२।)
१७. व्यवहार भानु (संस्कृत)	।।।)
१८. संस्कृत प्रचारक (तीनों भाग)	।।।)

१०. प्रचार योग्य लघु पुस्तकें

१. ब्रह्मचर्यामृत	।=) तथा =)॥
२. पापों की जड़ शराब	।=), =)
३. हमारा शत्रु तम्बाकू	।=), =)॥
४. नेत्र रक्षा	≡)
५. स्वप्न दोष की चिकित्सा	=)॥
६. रामराज्य कैसे हो ?	≡)
७. व्यायाम का महत्व	≡)
८. आदर्श ब्रह्मचारी	।)
९. कन्या और ब्रह्मचर्य	≡)
१०. दन्तरक्षा	≡)
११. हित की बातें	-)॥
१२. इस हाथ करो उस हाथ मिले	≡)
१३. गो पूजा	=)
१४. वैदिक सन्ध्या पद्धति	-)
१५. दयानन्द और गोरक्षा	-)॥
१६. आर्यसमाज की आवश्यकता	।)
१७. आर्य कुमार गीताञ्जलि (१)	≡)
१८. ,, ,, (·)	≡)
१९. राष्ट्र की सम्पत्ति	।)
२०. स्वा० आत्मानन्द	-)
२१. गोमाता लक्ष्मी	।)
२२. दयानन्द का कार्य	-)
२३. समाज सुधार गायन	=)
२४. वैदिक संध्या पद्धति	-)
२५. बाल क्रांति गीत	=)॥
२६. पंजाब की भाषा	-)
२७. सिख और यज्ञोपवीत	≡)
२८. श्रुति सुधा	≡)
२९. क्या हम आर्य हैं ?	-)
३०. सिनेमा वा सर्वनाश	=)
३१. स्वामी श्रद्धानन्द	)।
३२. प्राणायाम विधि	।)
३३. वैदिक वीर तरंग	।)
३४. वेदों की आवश्यकता	-)॥
३५. बाल शिक्षा	-)॥
३६. धर्म शिक्षा	-)॥
३७. ब्रह्मचर्य	=)
३८. गीता हमें क्या सिखाती है	≡)
३९. आर्योद्देश्य रत्नमाला	-)
४०. सत्यार्थप्रकाश शं स०	।)
४१. बिच्छू विष चिकित्सा	=)
४२. आर्यसमाज के नियमोपनियम	≡)
४३. मृत्यु के बाद क्या करें	≡)
४४. स्वा० दयानन्द और वेद	।)
४५. दयानन्द का सं० परिचय	-)
४६. वैदिक शिष्टाचार	≡)॥
४७. ऋग्वेद का अक्ष सूक्त	=)
४८. वैदिक सूक्ति सुधा	≡)
४९. ब्रह्म पारायण यज्ञ	।)
५०. सन्ध्या [उर्दू]	-)॥
५१. गोहत्या क्यों ?	=)
५२. ब्रह्मचर्य महिमा	।=)
५३. वैदिक धर्म ही क्यों ?	=)
५४. मनुष्य बन	-)
५५. मूर्ति पूजा विचार	-)
५६. कविवर क्या लिखते हैं	)॥
५७. गायत्री माता	-)
५८. आस्तिक नास्तिक संवाद	-)
५९. ईश्वर सिद्धि	-)
६०. सुख का साधन	-)
६१. पितृ श्राद्ध विचार	-)
६२. ईश्वरोपासना	-)
६३. आर्यों का आदि देश	-)
६४. धर्म और अधर्म	-)
६५. कल्याणी बन	-)
६६. भारत में भयंकर ईसाई षड्यन्त्र	≡)
६७. मांस भक्षण	≡)
६८. महात्मा हंसराज	-)
६९. Cow Protection	=)
७०. मांसाहार घोर पाप	-)
७१. प्रजा पालन	≡)
७२. नया संसार	≡)
७३. आर्य शब्द का महत्व	-)॥
७४. चमड़े के लिये गोवध	-)

पुस्तक मिलने का पता—**वैदिक साहित्य सदन**

आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली ।

राष्ट्र-निर्माण में गुरुकुल का स्थान

(श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति)

२—गताङ्क से आगे

इस उद्देश्य की सफलता के साथ पूर्ति के लिये यह आवश्यक है कि राष्ट्र का कोई भी व्यक्ति अपने नाम के साथ कार्य सम्बन्धी योग्यता सूचक उपाधि आदि का निर्देश सूचक शब्द लगावे और इसके अतिरिक्त जात-पांत व सम्प्रदाय सूचक शब्द नाम के साथ किसी भी कार्य में लगाना अनुचित रहना चाहिये ।

प्रश्न— ३ गुरुकुल-आश्रम जीवन का लक्ष्य क्या है ?

उत्तर—गुरुकुल में शिक्षण पाने वाले ब्रह्मचारी का कार्यक्रम चार विभागों में विभक्त किया है। (१) अग्नि-सेवा (२) आचार्य-सेवा (३) गो-सेवा (४) मृत्यु-सेवा। इन चार सेवाओं के द्वारा ब्रह्मचारी का आश्रम जीवन, सुसम्पन्न और सुफल होता है। पहिली सेवा अग्नि सेवा है

१—अग्नि सेवा

स्थूल अर्थों में तो समझना चाहिये कि आश्रम में विद्यमान अग्नि कभी बुझे नहीं, उसको समिन्धन करते हुये कभी बुझने नहीं दिया जाता, यह एक चिन्ह है। अग्नि उत्पादक साधनों के सुगम और सुलभ होते हुए भी अग्नि को प्रज्वलित रखना आवश्यक है। आश्रम में प्रज्वलित अग्नि इस बात का सूचक है कि गुरुकुल जिस उद्देश्य को अपना ध्येय बनाकर स्थापित हुआ है वह ध्येय अग्नि है। और सदा हमारे हृदयों को प्रकाशित रखे, हमारे हृदयों में से गुरुकुल का ध्येय रूपी अग्नि कभी बुझने न पावे। इसको भौतिक अग्नि के चिन्ह रूप में सदा प्रज्वलित रखा जाता है। और उस भौतिक अग्नि में सायंः प्रातः आहुति डालते हुए कहा जाता है (अयमग्नि-र्गृहपतिर्युवा सायं प्रातः सौमनस्य दाता) सायंकाल और प्रातःकाल यह अग्नि जो गुरुकुल रूपी घर का स्वामी है गुरुकुल वासियों में से कभी बुझना नहीं चाहिये। युवा पुरुष की तरह सदा जीवित, जाग्रत, उत्साहसम्पन्न प्रज्वलित रहना चाहिये। सायंकाल और प्रातःकाल वह अग्नि प्रज्वलित रहता हुआ गुरुकुल के ध्येय के प्रति हमारी सद्भावनाओं को (सौमनस्य) को देने वाला रहे।

इसके अतिरिक्त गुरुकुल में प्रविष्ट होने वाले बालक को उसके माता-पिता ने जीवन के विशिष्ट-ध्येय को पूर्ण करने के लिये उसे उत्पन्न किया होता है। थिना किसी उद्देश्य के उत्पन्न किये गये बालक, गुरुकुल के योग्य नहीं होते। विवाहित दम्पति जिस अग्नि के सामने विवाह संस्कार करते हैं वहाँ उन्हें प्रतिज्ञा करनी होती है और भारी सभा में प्रगट करना होता है कि राष्ट्र के अमुक कार्य को प्रगति देने के लिये यह विवाह संस्कार कर रहे हैं। विवाह संस्कार के समय जिस अग्नि की उन्होंने प्रदक्षिणा की है, प्रतीक रूप में वह बाह्य अग्नि कभी बुझने नहीं पाता। इसी प्रकार उनके मन में प्रज्वलित हुआ जीवन का ध्येय रूपी अग्नि कभी बुझने नहीं पाता। इतना ही नहीं, परन्तु उसके सन्तान में भी वही अग्नि सङ्कल्प बल से प्रतिष्ठित हुआ होता है। इसी अग्नि के ज्ञान विज्ञान को ग्रहण करने के लिये अपने जीवन का ध्येय बनाकर गुरुकुल में वह बालक ब्रह्मचारी अपने ध्येय को पूर्ण करने की इच्छा से आत्म-समर्पण करके प्रविष्ट होता है। निरुद्देश्य खिलवाड़ के तौर पर गृहस्थधर्म का पालन करने वालों से उत्पन्न बालक लावारिस बालकों के समान होते हैं। वे गुरुकुल में प्रविष्ट होने योग्य नहीं होते। प्रात:सायं उन्हें अपने मनों में विद्यमान अग्नि को प्रज्वलित, उत्साहित करने के लिये आचार्य की अग्नि में समिधा का आधान करना होता है। इस प्रकार समिधाधान करते हुए अग्नि को प्रज्वलित रखना, उसे बुझने न देना, यह ब्रह्मचारी की अग्नि-सेवा है।

२—आचार्य-सेवा

ब्रह्मचारी के कार्य-क्रम में दूसरी सेवा आचार्य-सेवा है। आचार्य भी अग्नि है। अग्नि के धर्म सब के अनुभव में आते हैं—प्रकाश और गर्मी। आचार्य ज्ञान और विज्ञान से ब्रह्मचारी के मन को प्रकाशित करता है और उसे कर्मशील बनाने के लिये उत्साहित रखता है। ब्रह्मचारी को उत्साहित रखना ही उसे गर्मी पहुँचाना है। इस प्रकार ज्ञान-विज्ञान से अपने मन को प्रकाशित रखता हुआ ब्रह्मचारी अधिक से अधिक समय अपने को आचार्य की उपस्थिति में व समीपता में रक्खा करता है। आचार्य के समीप में रहना, यह आचार्य की सेवा है। इसके अतिरिक्त आचार्य की आवश्यकताओं को पूर्ण करते हुए, भौतिक सेवा भी करनी होती है।

ऐसा नियम है, कि यदि हमें दीपक से प्रकाश लेना हो, तो हमें ध्यान रखना पड़ता है कि दीपक में तैल-बत्ती बराबर बनी रहे और जलती रहे, तब हम उससे यथोचित प्रकाश लेते रहेंगे। यदि हमारा ध्यान तैल और बत्ती के सम्बन्ध में नहीं रहेगा तो दीवा बुझ जायेगा और हमें अन्धेरे में रहना पड़ेगा। बिजली का लैम्प होते हुए भी हमें यह ध्यान रखना पड़ता है कि विद्युत धारा का प्रवाह लैम्प में बराबर बना रहे। और लैम्प में लगे हुए तार जल न जावें। यदि विद्युत् धारा का प्रवाह बन्द हुआ अथवा लैम्प में लगे हुए तार जल गये, तो अन्धेरा हो जायेगा, और हमें अन्धेरे में रहना पड़ेगा। इसी प्रकार आचार्य से निकलते हुए ज्ञान और विज्ञान के प्रवेश से ब्रह्मचारी ने लाभ उठाना है तो ब्रह्मचारी को उचित है, कि वह अपने आचार्य को सेवाओं के द्वारा तथा जो उसने शिक्षण दिया है उस शिक्षण को प्रश्न-प्रतिप्रश्न के द्वारा आचार्य को प्रोत्साहन देता रहे कि जिससे आचार्य रूपी अग्नि मन्द न होने पावे। किसी मिठाई में जितना अच्छा मीठा डाला जाता है, मिठाई उतनी ही स्वादिष्ट बनती है। ब्रह्मचारी जितना अधिक अपनी जिज्ञासा और विनय आदि गुणों से आचार्य की सेवा करता रहेगा, उतने ही अधिक आचार्य उत्साहित रहेंगे और ब्रह्मचारी को ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न करेंगे।

कुएं में पानी विद्यमान है, परन्तु प्यासे व्यक्ति के पास, डोल और रस्सी (गुण) होनी आवश्यक है। डोल छोटा होगा तो कुएं में से पानी खींचने पर थोड़ा पानी मिलेगा—और बड़ा डोल होगा तो अधिक पानी मिलेगा, परन्तु बड़े डोल से पानी खींचने के लिए रस्सी दृढ (गुणों की प्रबलता, अधिकता) होनी आवश्यक है। साथ ही बड़ा डोल खींचने के लिये अधिक शक्ति वा योग्यता भी होनी चाहिये। इसी प्रकार आचार्य से ज्ञान-रूपी रस को ग्रहण करने के लिये ब्रह्मचारी में गुण और योग्यता तथा सामर्थ्य होना आवश्यक है। यदि ब्रह्मचारी में इनकी कमी है तो वह आचार्य में विद्यमान ज्ञान रूपी रस को ग्रहण नहीं कर सकता। इसलिये ब्रह्मचारी के लिये उचित है कि वह विद्या रूपी धन को प्राप्त करने के लिये सर्वदा अपनी पात्रता प्रगट करता रहे। उसकी पात्रता को जानते हुए आचार्य सर्वदा उत्साहित रहेंगे और ज्ञान की वर्षा करने के लिये कृपादृष्टि करते रहेंगे। यह आचार्य का तात्पर्य संक्षेप से प्रगट किया है।

३— गोसेवा

ब्रह्मचारी के दैनिक समय-विभाग का तीसरा विभाग गोसेवा है। गोसेवा का अर्थ है—गाय की सेवा। बिना गाय के न अग्निहोत्र हो सकता और न आचार्य की सेवा ही ठीक-ठीक हो सकती है। गुरुकुल में जो गायें रहती हैं, ब्रह्मचारी उन गायों की सेवा किया करते हैं। गाय ब्रह्मचारियों के साथ उनकी माताओं से भी अधिक उनको प्यार करती है। ब्रह्मचारी अपने हाथ से गायों का भोजन (चारा) तैय्यार करके गायों को खिलाते-पिलाते है। उनकी और उनके स्थानों की सफाई अपने हाथों से करते हैं। गायें उनकी सेवाओं को खूब समझती हैं और उनके प्यार से सम्मृद्ध हुआ दूध उन्हें देती हैं। इन गायों का दूध, दही, घी, मक्खन आदि पदार्थ अग्निहोत्र के लिये उपयोग में लाया जाता है, इसी कारण ये गायें, अग्निहोत्री गायें कहलाती हैं। इन अग्निहोत्री गायों से गुरुकुल ब्रह्मचर्याश्रम का वातावरण सात्विक, सुगन्धित, पुष्टिप्रद, मेधाजनक, बुद्धिवर्धक, नीरोग, स्वास्थ्यप्रद तथा शान्त रहता है।

इसके अतिरिक्त आचार्य के मुख से निकली हुई वाक् रूपी गौ का सेवन ब्रह्मचारी के लिये अत्यन्त आवश्यक है। और दूसरों के लिये भी ब्रह्मचारी अपनी वाक् रूपी गौ का प्रयोग इस प्रकार से करता है कि वह वाक् रूपी गाय किसी के मन को दुःख नहीं देती, प्रत्युत, उस गाय में विद्यमान ज्ञान रूपी रस-स्वाद का पान कर सुनने वाले सज्जन आनन्द में मग्न हो जाते हैं।

ब्रह्मचारी को यह सब शिक्षण अग्निहोत्री गायों की सेवा से प्राप्त होता है। इसलिये ब्रह्मचारी के दैनिक कार्यक्रम में गोसेवा को आवश्यक स्थान दिया गया है। गोसेवा का ब्रह्मचारी के जीवन में बड़ा महत्त्व है। इस महत्त्व का लाभ ब्रह्मचारी बिना गोसेवा के अन्य किसी प्रकार प्राप्त नहीं कर सकता।

४—मृत्यु—सेवा

अब इसके पश्चात् ब्रह्मचारी के दैनिक कार्यक्रम में चतुर्थ विभाग मृत्यु-सेवा का है। मृत्यु का अर्थ शतपथ ब्राह्मण में "अशनाया वै मृत्युः" इस वचन से मृत्यु का अर्थ अशनाया किया है। अशनाया का अर्थ है अपनी भोग्य सामग्री को प्राप्त करने की इच्छा और उसके लिये प्रयत्न।

इससे हमें यह बोध होता है कि गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को अपनी भोग्य सामग्री अर्थात् अन्न, वस्त्र और रहने को स्थान अपने पुरुषार्थ से तैयार करने चाहियें। वनवास के समय पंचवटी में श्री रामचन्द्र जी के आदेशानुसार राजकुमार लक्ष्मण जी ने सुन्दर कुटिया निर्माण करके खड़ी कर दी। रामचन्द्र जी उसको देखकर बड़े प्रसन्न हुए, उस से ज्ञात होता है कि पुराने समय में ब्रह्मचारियों को वेदादि सत् शास्त्रों की शिक्षा में पारङ्गत होने के साथ-साथ गृह-निर्माण आदि विद्या का क्रियात्मक शिक्षण भी अवश्य दिया जाता था। इससे यह स्पष्ट परिणाम निकलता है कि गुरुकुल में ब्रह्मचारियों को वेदादि सत्य शास्त्रों के अभ्यास के साथ-साथ यह शिक्षा दी जानी चाहिये कि वे अपना अन्न, वस्त्र और निवास योग्य गृह का निर्माण स्वयं विधिपूर्वक कर सकें।

श्रमी जीवन में श्रम करते हुए अपने प्राणों को व्यय करते हुये जीवन व्यतीत करने का नाम मृत्यु सेवा है। राष्ट्र के जिस व्यक्ति ने अपने ब्रह्मचर्यकाल में मृत्युसेवा की है अर्थात् केवल दिमागी शिक्षा न लेकर हाथ से काम करने का अभ्यास डाला है, और अपने हृदय को राष्ट्र की उन्नति के साथ सम्बद्ध किया है, वही ब्रह्मचारी पूर्ण विद्वान् होकर राष्ट्र का सच्चा सेवक कहलाने के योग्य होता है। इस प्रकार हम समझते हैं कि गुरुकुल में ब्रह्मचारी का आश्रमजीवन ४ घण्टे विद्याभ्यास में व्यतीत हो तो, आठ घंटे उस कर्मशील जीवन के व्यतीत करने चाहियें। यदि ७ या घंटे निद्रा व विश्राम के लिये लगावें तो, चार या पांच घंटे इसे अपने नित्य कर्म के शारीरिक तथा उपासना अग्निहोत्रादि के लिये लगाने होते हैं। इस प्रकार उसके गुरुकुल आश्रम जीवन के २४ घंटों का स्थूल रूप से कार्यक्रम होता है।

इस प्रकार ब्रह्मचारी को अपने गुरुकुल के आश्रम जीवन में पूर्वोक्त चार प्रकार की सेवाओं का अभ्यास करना होता है। ब्रह्मचारी के लिये जो नियम शास्त्रों में बताये गये हैं, तपस्या करते हुये पूर्णरीति से अपने जीवन में उनको ढालना ब्रह्मचारी के आश्रम-जीवन का लक्ष्य होना चाहिये। यदि इस लक्ष्य की पूर्ति में शिथिलता होगी तो, न वह विद्वान् बन सकेगा और न कर्मशील।

गुरुकुल आश्रम जीवन में रहते हुये ब्रह्मचारी को सर्वप्रथम मोह पर विजय पाने का अभ्यास करना होता है। तत्पश्चात् वह लोभ पर विजय पा सकता है। उसके पश्चात् उसे क्रोध और काम पर विजय पाने की सम्भावना होती है। इन वृत्तियों पर क्रमशः विजय पाने का अभ्यास करते हुये वह शूद्र अवस्था से ब्राह्मण अवस्था तक क्रमशः उन्नति करता जाता है। विद्या और कर्म में ब्रह्मचारी को निष्णात करते हुये, उसके जीवन को विकसित करना गुरुकुल आश्रम-जीवन का महान् लक्ष्य है।

प्रश्न—४ वर्तमान काल में किसी के आगे हाथ पसारे बिना गुरुकुल कैसे चलाया जा सकता है?

उत्तर—हम मानते है कि राष्ट्र की भूमि का वितरण इस प्रकार से होना चाहिये कि एक-एक गुरुकुल के लिये उतनी-उतनी भूमि उसके साथ संलग्न हो, जितनी-जितनी भूमि वहाँ के निवासियों का भरण-पोषण कर सकती हो।

हमारे राष्ट्र में गुरुकुलों का ऐसा जाल फैला हुआ हो कि सम्पूर्ण भूमि गुरुकुलों में विभक्त हो जाये । जितने व्यक्ति एक-एक गुरुकुल में रहते हों वे सब अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति अपने परिश्रम से करते हों । यदि अधिक उत्पत्ति हो तो वह उत्पत्ति राष्ट्र के गोदामों में चली जाये । गुरुकुलों को अपरिग्रहवृत्ति से रहना उचित है । इस प्रकार सम्पूर्ण राष्ट्र अपरिग्रह राष्ट्र होगा । राष्ट्र में जितनी बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं, वे सब परिग्रहवृत्तिका परिणाम हैं । अपरिग्रह वृत्ति से राष्ट्र में रुपये पैसे के चलन की आवश्यकता नहीं रहती । इसके हट जाने से सच्चे अर्थों में राष्ट्र सुखी, समृद्ध, शान्तिमय बनेगा । प्रत्येक व्यक्ति उद्यमी रहेगा निरुद्यमी नहीं । राष्ट्र के हर एक व्यक्ति को वह काम करना ही होगा जिस काम के करने के लिये वह पूर्णतया समर्थ हुआ है । किसी कार्य करने के लिये सामर्थ्य और निपुणता उसने गुरुकुल में शिक्षण प्राप्त करते हुये प्राप्त की है ।

राष्ट्र के व्यक्ति के लिये कोई काम छोटा या बड़ा लज्जाजनक नहीं होता । सब व्यक्तियों को सभी काम समय समय पर करने होते हैं । किसी भी काम में छोटापन या बड़ापन अथवा घृणा का भाव गुरुकुल में रहते हुये, राष्ट्र के व्यक्तियों में से दूर हो जाता है । किसी प्रकार का जातीयता, प्रान्तीयता और साम्प्रदायिकता का भाव गुरुकुल में रहते हुये नहीं रहता । गुरुकुल के व्यक्ति राष्ट्रहित की दृष्टि से, ज्ञान का सञ्चय व कर्म में निपुणता प्राप्त करते हैं ।

गुरुकुलों में सब प्रकार के हुनर ब्रह्मचारियों को सिखाये जाते हैं । गुरुकुल का ब्रह्मचारी हुनर और उद्योग में निपुण हो कर, स्वावलम्बी जीवन व्यतीत करने में समर्थ होता है । इस प्रकार गुरुकुल के ब्रह्मचारियों से बना राष्ट्र, सच्चे अर्थों में स्वतन्त्र राष्ट्र होता है । इस प्रकार उद्यम करते हुये, गुरुकुल निवासी धनिकों के सामने विना हाथ पसारे गुरुकुलों को स्वावलम्बी बना सकते हैं ।

गुरुकुल में कार्य करने वालों के लिये किसी प्रकार की आयु का प्रतिबन्ध नहीं होता । जो ज्ञान-विज्ञान के काम में निपुण होता है वह किसी भी आयु का क्यों न हो, गुरुकुल के लिये उपयोगी समझा जाता है । राष्ट्र के ऐसे व्यक्ति जो शिथिलाङ्ग या विकलाङ्ग हों, उन्हें राष्ट्र के चिकित्सालय या जेल (कारागर) में रहना उचित होता है । और उनके भरण-पोषण सम्बन्धी व्यय का भार सम्पूर्ण राष्ट्र पर पड़ता है ।

स्वतन्त्र राष्ट्र में शिशु तथा बालकों का पालन-पोषण शिशुशालाओं में होता है । जब वे बालक गुरुकुलों में प्रविष्ट होने योग्य होते हैं, तब उन्हें गुरुकुल में भेज दिया जाता है । जब शिक्षण समाप्त करके द्वितीय आश्रम के अधिकारी होते हैं, तब उन्हें राष्ट्र की ओर से गृहस्थ आश्रम में प्रवेश कराया जाता है । इसके अतिरिक्त जब निवृत्त जीवन के अधिकारी होते हैं तब उन्हें राष्ट्र की ओर से किसी गुरुकुल में शिक्षक के रूप में नियुक्त किया जाता है । निवृत्ति पाये हुये राष्ट्र के व्यक्ति जन कल्याण की दृष्टि से राष्ट्र धर्म के प्रचारक व मार्गदर्शक के रूप में राष्ट्र की ओर से नियुक्त किये जाते हैं ।

इस प्रकार राष्ट्र में जितने भी गुरुकुल होते हैं वे सब अपना कार्य, धनियों के सामने हाथ पसारे विना स्वावलम्बी जीवन व्यतीत करते हैं । ऐसे व्यक्तियों में अपने जीवन की आवश्यक्ताओं को कम से कम रखना और उन्हें अपने परिश्रम से पुरा करना यह लक्ष्य होना चाहिये । सब गुरुकुल निवासियों का जीवन तपोमय और संयमी होना चाहिये । गुरुकुल निवासियों के लिये विशेषत: आवश्यक है कि वे अपने जीवन में शृङ्गार से नितान्त पृथक् रहें । क्योंकि अनुभवी लोगों का कथन है कि "शृङ्गार—व्यभिचार की जननी है ।" गुरुकुल ब्रह्मचर्य आश्रमों में शृङ्गार और ब्रह्मचर्य यह दो साथ-साथ नहीं रह सकते । समय पा कर किसी न किसी रूप में दोष पैदा हो ही जाते हैं । दोषों के कारण शरीर, मन, बुद्धि, और आत्मा दुर्बल रोगी अनेक दुरितों के घर हो जाते हैं । (क्रमशः)

सुधारक के विषय में सम्मति

'सुधारक' सच्चे अर्थों में जनता में व्याप्त बुराईयों को दूर करने के लिये 'सुधारक' सिद्ध हो··· यह मेरी हार्दिक कामना है । —श्री पं० श्रीराम शर्मा

भूतपूर्व मन्त्री पञ्जाब सरकार

सर्पविष की चिकित्सा

(श्री आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर)

[४]

२—मण्डली

"द्वाविंशतिर्मण्डलिनः" मण्डली सांपों की बाईस संख्या होती है। सुश्रुत में लिखा है कि—

मण्डलैर्विविधैश्चित्राः पृथवो मन्दगामिनः।
ज्ञेया मण्डलिनः सर्पा ज्वलनार्कसमप्रभाः ॥२३॥
(कल्पस्थान)

जो सर्प नाना प्रकार के गोल-गोल मण्डलों से चित्रित होते हैं। चपटे धीमे चलने वाले अग्नि और सूर्य के समान कान्ति वाले सांपों को मण्डली कहते हैं। इनके शरीर पर अनेक प्रकार की चित्तियां होती हैं। अतः इनका नाम चित्तिदार भी है। इनके भेदों के विषय में सुश्रुत में इस प्रकार लिखा है "मंडलिनस्तु-आदर्शमंडलः, श्वेतमण्डलो, रक्तमण्डलः, चित्रमण्डलः, पृषतो, रोधपुष्पो, मिलिन्दको, गोनसो, वृद्धगोनसः, पनसो, महापनसो, वेणुपत्रकः, शिशुकोमदनः, पालिन्दिरः, पिङ्गलः, तन्तुकः, पुष्पपाण्डुः, षडङ्गो, अग्निकोबभ्रुः, कषायः, कलुषः, पारावतो, हस्ताभरणः, चित्रकः, एणीपद इति"

१—सुन्दर चितकेदार सांप, २—सफेद चितके वाला सांप, ३—लाल चित्तों वाला सांप, ४—चित्र के समान मंडल वाला सांप, ५. विशेष प्रकार के पुष्पों के चिह्न वाला सांप, ६—मिलिन्दक पुष्प के समान चिह्न वाला सांप, ७. गोनस पुष्प के समान चिह्न वाला सांप ८. बड़े गोनस पुष्प के समान चिह्नां वाला सांप, ९. जिसके शरीर पर कांटे हों ऐसा सांप, १०. जिसके शरीर पर बड़े-बड़े कांटे हों ऐसा सांप, ११. जिसका मुख बांस के पत्तों के समान हो ऐसा सांप, १२. छोटा सांप जा अत्यन्त सुन्दर हो, १३. पालिन्दिर नाम के पुष्प के समान चिह्न वाला सांप, १४. पीले रंग का सांप, १५. तन्तुक पुष्प के समान चिह्न वाला पीला या मटियाले रंग का सांप १६. षडङ्ग सांप (छः अंगों वाला), १७. अग्नि के समान चमकने वाला सांप, १८. नेवले के रंग का सांप, १९. केले के रंग का सांप, २०. केले के समान वा कबूतर के समान रंग वाला सांप, २१. हाथ के आभूषण के समान गोल सांप जिस पर अनेक प्रकार की चित्तियां हों, २२. मृग के समान गति वाला सांप, यह मंडली सापों के बाईस भेद हैं। चरकशास्त्र में लिखा है कि—

"मंडालिमंडलाफणाः" अर्थात् मंडली उनका नाम है जिन पर गोल-गोल चितके अर्थात् मंडल होते हैं और यह फणरहित होते हैं। यह कई अन्य नामों से भी प्रसिद्ध हैं। चित्ति (krait) चन्द्रबोर (Russells vipper) घूमनी, कौड़ियाला चित्तिकरैत। अंग्रेजी में इसे वाइपर (Viper) कहते हैं, क्योंकि इनमें से कुछ जातियों को छोड़ कर ये अंडे न देकर बच्चे ही देते हैं। वाइपर शब्द का अर्थ भी जीवित ही है। इस वंश की जातियां लगभग ११० हैं जो प्रायः सभी विषैले हैं। इनमें से कुछ तो ऐसे विषैले हैं कि उनका विष मनुष्य के लिए घातक है। कुछ मंडलियों के विष में न्यून शक्ति होती है, वे मनुष्य के प्राण नहीं ले सकते। इनमें अग्नि और सूर्य के समान कान्ति वाले जो सांप होते हैं वे अधिक विषैले हैं। मंडलियों के मुख्य लक्षण यह हैं कि ये मुख और पूँछ की तरफ से पतले और पेट की जगह से मोटे होते हैं। मंडली का शिर प्रायः चौड़ा चपटा और छोटे-छोटे वल्कलों से ढका होता है। ग्रीवा तङ्ग और पूंछ छोटी होती है। सिर इनके कुछ-कुछ त्रिकोण आकृति वाले होते हैं, शरीर इनका भरा हुआ और अच्छा मोटा होता है। कौड़ी के समान काले-पीले श्वेत वर्ण के चित्तों से

चित्रित होने के कारण इन्हें चितकौड़िया भी कहते हैं। हरियाणा में तो यह इसी नाम से प्रसिद्ध हैं। ये प्रायः घरों में या घरों के पास रहते हैं और चूहे आदि पकड़ कर खाते हैं। इनमें कितने ही चार फीट से आठ फीट तक लम्बे देखने में आते हैं। यह दर्वीकर की अपेक्षा कम विषैले होते हैं। यह देखने में शिथिल पड़े रहते हैं। इनमें से कुछ सर्प मंडली मारकर बैठते हैं। और चलते समय इनके शरीर का एक भाग दूसरे भाग के साथ रगड़ खाता है। जिससे रस्सी के रगड़ के समान शब्द उत्पन्न होता है। मनुष्य यह समझता है कि यह फुंकारता है, परन्तु रगड़ की गति से ही यह शब्द उत्पन्न होता है। यह छोड़ने वाले पर जब शिथिलता छोड़कर धावा करता करता है तब एक फुट अथवा इससे भी अधिक उछल कर काटता है। मंडली मारने वाले सर्पों की लम्बाई २० से २८ इन्च तक ही होती है। यह लगभग तीन इन्च मोटा और अत्यन्त विषैला होता है। बङ्गाल, बिहार आदि में इसको कालनागिनी कहते हैं। इसका प्रसिद्ध नाम फूरसा है। पित्तप्रकृति के होते हैं। चरकशास्त्र में लिखा है—

दर्वीकरा मण्डलिनो राजिमन्तस्तथैव च ।
सर्पा यथाक्रमं वातपित्तश्लेष्मप्रकोपणाः ॥

अर्थात् दर्वीकर वातप्रकृति के, मंडली पित्तप्रकृति के और राजिमान् कफ प्रकृति के होते हैं। अत एव क्रमशः ये वात, पित्त, कफ को प्रकुपित करते हैं। महर्षि धन्वन्तरि जी सुश्रुत में इनके विषय में इस प्रकार लिखते हैं- "मंडलिविषेण त्वगादीनां पीतत्वं शीताभिलाषः परिधूपनं दाहस्तृष्णा मूर्छा ज्वरः। शोणितागमनमूर्ध्वमधश्च मांसानामवशातनं श्वयथुर्दंशकोपः पीतरूपदर्शनमाशुकोपस्तास्ताश्च पित्तवेदना भवन्ति"।

मंडली सर्प के काटने से इसके विष का प्रभाव दंशित प्राणी पर पित्तप्रकुपित होने के समान पड़ता है। उसकी त्वचा नख, मल,—मूत्रादि पीले हो जाते हैं। ठंडी वस्तुएँ अच्छी लगने लगती हैं। सब वस्तुएँ पीली दिखाई देती हैं। सभी अंगों में संताप, दाह होता है। प्यास, मद, मूर्छा, सूजन, काटे हुए स्थान का सड़ना, मांस का विदीर्ण होना, मुख नासिकादि ऊर्ध्व मार्ग, गुदा मूत्रेन्द्रियादि अधः मार्गों से रक्त अर्थात् खून बहने लगता है। अनेक प्रकार के पीले सर्प दिखाई देते हैं। सर्पविष शीघ्र ही प्रकुपित हो जाता है। पित्तजन्य नाना प्रकार की वेदनायें होने लगती हैं। पीड़ा बहुत होती है। मांस में पीड़ा और सूजन हो जाती है। दंशस्थान से भी खून निकलता रहता है। पित्त कुपित होने के सारे लक्षण स्पष्ट दिखाई देते हैं। मंडली सांप रात्रि के पहिले, दूसरे और तीसरे पहर में घूमते हैं।

"वृद्धा मंडलिनः······मृत्युहेतवः" वृद्ध अर्थात् ढलती हुई अवस्था वाले मंडलो यदि काट लेवें तो मृत्यु के हेतु बनते हैं। जैसे हम पहिले लिख चुके हैं कि यह कुण्डली मार सुन्न सा पड़ा रहता है। किन्तु अपने शिकार को पकड़ने और शत्रु पर आक्रमण करने में बड़ा चुस्त और फुर्तीला होता है। सूर्यास्त के पश्चात् प्रथम तीन पहरों में यह अपने भोजन की खोज में निकल कर बाहर घूमता रहता है। दिन में कभी कभी दिखाई देता है। अतः इसे रात्रिसर्प कहते हैं। मूषक (मूसा) इसका प्यारा भोजन है। यह पानी से डरता है। पानी में घुसा हुआ इसे शायद ही किसी ने देखा हो। इसके विषय में यह सन्देह है कि यह जल भी पीता है या नहीं। इस कुण्डली मार कर बैठने वाले सांप को रसलमण्डली कहते हैं। यह छेड़ने पर इकट्ठा हो जाता है। क्रोध में तेजी से निरन्तर फुंकार मारता रहता है। आक्रमण करने के समय तो इसकी फुंकार भयङ्कर रूप धारण कर लेती है। इसकी फुंकार का शब्द सब सर्पों के शब्दों से ऊँचा होता है। इसकी फुंकार को सुन कर मनुष्य भयभीत हो जाता है। जब यह अपने फेफड़ों को वायु से भर कर नथुनों के द्वारा श्वास को बाहर फेंकता हुआ किसी निर्जन शान्त स्थान पर शब्द करता है तो इस का शब्द इन्जन के शब्द के समान प्रतीत होता है हरियाणा में यहगुरहेड़िया नाम से प्रसिद्ध है। फुरसा, कौड़िया, चितकौड़िया, धामन आदि प्रसिद्ध नाम वाले सांप भी मण्डली जाति के ही सांप हैं। भिन्न-भिन्न प्रान्तों में यह भिन्न-भिन्न नामों से प्रसिद्ध हैं।

कौड़िया

भारत में दसियों प्रकार के कौड़िया सांप मिलते हैं। यह भी अन्य मण्डलियों के समान रात को बाहर निकलते

हैं। रात में राही या सड़क की धूलि में पड़ा रहता है। इसलिये अधिक भयानक है। यह मार्ग के ठण्डे-ठण्डे रेत में लेटने में आनन्द लेता है और बहुत सीधा तथा डरपोक होता है। यह स्वयं काटने का कभी यत्न नहीं करता, परन्तु मार्ग में पड़े रहने के कारण पैर पड़ने पर काट लेता है। इनका जोड़ा ही प्रायः निकलता है। मैंढक और मूषक इनका प्यारा भोजन है। यह पतला और रङ्ग का चमकीला होता है। बीच-बीच में चौड़ाई की ओर सफेद रङ्ग की धारियाँ होती हैं। धारियाँ अकेली या दो-दो इकटठी पायी जाती हैं। इसका उदर श्वेत होता है। यह तीन से पांच फीट तक लम्बा होता है। इसका विष भी बड़ा तीव्र होता है। फणियर की अपेक्षा इसका विष पांच छः गुणा अधिक तीव्र होता है। कौड़िये के विष के लक्षण फणियर के समान होते हैं। भारतवर्ष में इसके काटने से वर्ष में पर्याप्त मृत्यु होती हैं। डाक्टर लोग इस की चिकित्सा के लिये कोई प्रतिविष रूप में इञ्जैक्शन नहीं तैय्यार कर सके हैं। इस निर्बलता को वे स्वयं भी स्वीकार करते हैं।

चितकौड़िया

यह भी मण्डली सर्पों की एक प्रसिद्ध जाति है। यह सांपों को बड़ी रुचि करके खाता है। इसकी लम्बाई ५-६ फीट, वा इससे अधिक भी होती है। यह कौड़िये के समान ही होता है। भेद केवल इतना है कि इसकी पीठ पर चौड़ी-चौड़ी पट्टियां होती हैं। पीठ पर पीली और काली पट्टियां बड़ी सुन्दर लगती हैं। पट्टियों की चौड़ाई एक से डेढ़ इन्च तक होती है। यह कौड़ियों की अपेक्षा अधिक विषैला है। यह भारतवर्ष में प्रायः सर्वत्र ही मिलता है।

धामन

यह मण्डली सांप बहुत तेज और फुर्तीला होता है। भागने में घोड़े को भी पीछे छोड़ देता है। इसलिये घोड़ा-पछाड़ भी इसका नाम पड़ गया है। यह शरीर से पतला और लम्बाई में ९ फीट वा इससे अधिक भी होता है। यह चूहे आदि हानिकारक जीवों को खाता है, इसलिये किसानों के लिये हितकारी है। यह विषहीन सांप गेहुओं के खेतों में मिल जाता है। भारत के कई प्रान्तों में इस के मारने पर मारने वाले पर जुर्माना किया जाता है। यह हल्के मटियाले रंग का होता है। इसके शरीर पर काले रंग के धब्बे होते हैं। इसकी आंखों में तेज होता है और सुन्दर होती हैं। इसी प्रकार अन्य भी मण्डली सर्पों की जातियां होती हैं।

३—राजिमान्

राजिल अर्थात् धारीदार सांपों को राजिमान् कहते हैं। "राजिमन्तस्तथा दश" यह सुश्रुत का वचन है। महर्षि धन्वन्तरि जी राजिमान् सर्पों के दश भेद मानते हैं। वे भेद निम्न लिखित हैं—

राजिमन्तस्तु—पुण्डरीको राजिचित्रो, अंगुलराजिः, विन्दुराजिः, कर्दमकः, तृणशोषकः, सर्षपकः, श्वेतहनुः, दर्भपुष्पश्चक्रकः, गोधूमकः, किक्किसाद इति।

१—जिस के शिर पर कमल के फूल का चिह्न हो और जिस की धारियां = लकीरें सुन्दर हों। २. जिस की धारियां अंगुली के समान हों। ३. जिस के शरीर पर विन्दुओं की धारियां हों। ४. जिस का रंग कीचड़ = गारा के समान है। ५. जिस के चलने से घास सूख जाती हो। ६. जिस का रंग सरसों के समान हो। जिस का जबड़ा श्वेत रंग का हो। ८. जिस का रंग कासनी के पुष्प के समान हो और चक्र-सदृश जिस के शरीर पर चिह्न हो। ९. जिस का रंग गोधूम = गेहूं के समान हो। १०. जो चातक पक्षी को खाने वाला हो। ये दश भेद राजिमान् सर्पों के हैं।

इस सुश्रुत के लेख से पाठकगण समझ गये होंगे कि जिन सर्पों के शरीर पर चिकनी नाना प्रकार के वर्णों की किसी के शरीर पर तिरछी, किसी के शरीर पर सीधी और किसी के शरीर पर बिन्दुओं के साथ अनेक तरह की रेखायें वा धारियां होती हैं उन को राजिमान् कहते हैं। इन धारियों के कारण ही इनको धारीदार और गण्डेदार भी कहते हैं। इन का शरीर खूब साफ चिकना और देखने में सुन्दर लगता है। इन की प्रकृति कफ प्रधान होती है इस लिये इनके डसने से प्रकुपित कफ के लक्षण प्रगट होने लगते हैं। इस विषय में महर्षि धन्वन्तरि जी ने लिखा है—

"राजिमद्विषेण शुक्लत्वं त्वगादीनां शीतज्वरो रोमहर्षः स्तब्धत्वं गात्राणामादंशशोफः सान्द्रकफशीकरवर्दि-

रभीक्षणमक्षणोः कण्डूः कण्ठे श्वयथुर्घुर्घुरकउच्छ्वासनिरोधस्तमः प्रवेशस्तास्ताश्च कफवेदना भवन्ति''।

राजिमान् सांपों के काटने से त्वचा नख आदि सफेद रंग के हो जाते हैं। शीतज्वर रोमाञ्च का होना, अङ्गों में शिथिलता वा जड़ता, दंशस्थान के चारों ओर सूजन, गाढ़े कफ का मुख से निकलना, बार-बार वमन होना, आंखों में खुजली, कण्ठ में सूजन और घर्घराहट, श्वास का थकना, अन्धेरी आना और कफ से होने वाली अनेक प्रकार की वेदनायें होने लगती हैं। सुश्रुत में लिखा है कि—

"रजन्याः पश्चिमे यामे सर्पाश्चित्राश्चरन्ति हि"

अर्थात् रात्रि के पिछले पहर में ही राजिमान् सर्प घूमते हैं। उन को राजिल और राजसर्प भी कहते हैं। उनके मुख्य लक्षण गण्डे रेखायें और धारियां तथा शरीर की सुन्दरतायें हैं।

"राजिमन्तो वयोमध्या जायन्ते मृत्युहेतवः"

राजिमान् सांप मध्यवय अर्थात् अधेड़ आयु में यदि काट ले तो मृत्यु के कारण बनते हैं।

४—निर्विष

महर्षि धन्वन्तरि जी विषैले सर्पों को तीन प्रकार का मानते हैं। जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं। 'निर्विषा द्वादशज्ञेयाः' जिन में विष की मात्रा थोड़ी होती है, वा होती ही नहीं, उन को निर्विष कहते हैं। उन के बारह भेद हैं, जिन के नाम नीचे लिखे हैं।

"निर्विषास्तु—गलगोली, शूकपत्रो, अजगरो, दिव्यको वर्षाहिक, पुष्पशकली, ज्योतीरथ क्षीरिका पुष्पक—अहिपताको अन्धाहिको गोराहिको वृक्षेशय इति"

१. जिस की ग्रीवा गोल हो, अथवा जिस की विष की गोली गल गई हो।

२. नोकदार नुकीले बालों वाला, अथवा जौ की तरह आगे से मोटा पीछे से पतला।

३. बड़ा अजदाहा बड़ा सांप।

४. बहुत चमकने वाला सांप, चन्दन पर रहने वाला

५. वर्षा ऋतु में निकलने वाला सांप।

६. जिस के शरीर के विविध स्थानों पर फूल के आकार हों।

७. ध्रुव तारे के समान जिस का शरीर हो।

८. खीरनी के फूल के रंग वाला अर्थात् दुधियाला

९. लम्बा सांप वा अविक्षिप्त सांप।

१०. भूमि में गडने वाले अन्धे सांप।

११. सफेद सांप।

१२. वृक्ष पर रहने वाला सांप।

यह १२ भेद निर्विष सांपों के हैं। अजगर, दुमुहो पानी का सांप भी इन्हीं में हैं। अजगर मनुष्य वा पशु को निगल तो जाता है परन्तु काटता नहीं। दुमुहो खेतों में मनुष्य के शरीर वा पैरों से लिपट तो जाती है परन्तु कोई हानि करती। बालक इस के साथ खेलते रहते हैं। इसी प्रकार जल में रहने वाले पनिया सांप के काट लेने से या तो विष चढ़ता ही नहीं, या बहुत कम चढ़ता है।

निर्विष सांपों के ऊपर के जबाड़े में दान्तों की दो पंक्तियां पाई जाती हैं और जबाड़े के बाह्य किनारे पर विषैले दान्तों के स्थानों में दान्तों की एक अधिक पंक्ति पाई जाती है और सामने बारीक दान्तों के द्वारा उक्त दोनों पंक्तिया मिलती हैं। प्रत्येक पंक्ति में १० से ३० तक कठोर दान्त पाये जाते हैं। इस के बिरुद्ध विषैले सर्पों के ऊपर के जाबड़े में दोनों ओर दान्तों की केवल एक ही पंक्ति पाई जातो है और दूसरी पंक्ति के स्थान में केवल दो-तीन वा चार पोले दान्त जो विष के होते हैं, पाये जाते हैं। कुछ लोगों का ऐसा मत है कि विष रहित सर्प अधिक लम्बे और मोटे होते हैं, उन की पूंछ और सिर श्वेत वर्ण के होते हैं।

(क्रमशः)

धन्यवाद

हम श्री रामकुमार जी यादव पंचायत अफसर डालमिया दादरी के बड़े आभारी हैं जिनके सहयोग से ग्राम पंचायतों ने "सुधारक" का बहुत स्वागत किया है। इसी प्रकार अन्य सज्जन भी सुधार कार्य में सहयोग प्रदान करेंगे।

—व्यवस्थापक

युवक और स्वप्नदोष

स्वप्नदोष एक ऐसा भयंकर रोग है, कि जिसके जाल से कोई सौभाग्यशाली ही युवक बचता है। यह विद्यार्थी तथा नवयुवकों को कुमारावस्था अर्थात् १४ वर्ष से १८ वर्ष की आयु के मध्य उभरती हुई युवावस्था में ही घेर लेता है। मेरे पास प्रतिवर्ष सैंकड़ों विद्यार्थी व युवकों के पत्र आते रहते हैं। अतः मैं अपने अनुभव के आधार पर यह बलपूर्वक कह सकता हूँ कि ९९ प्रतिशत इस भयंकर रोग में फंसे हुए पाये जाते हैं। कालिजों, हाईस्कूलों के विद्यार्थी तो निःसन्देह शतप्रतिशत इस रोग के आखेट (शिकार) बने हुए हैं। पीले मुरझाये हुए मुख पर अन्दर धंसी हुई आँखें निस्तेज और कान्तिरहित दुर्बल शरीर आदि चिह्न युवकों का इस रोग में फंसे हुए का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। यह भयंकर रोग मेरे देश के युवकों के शरीर को घुन की तरह खाकर निर्बल और जीर्ण-शीर्ण कर रहा है। कुसङ्ग, कुशिक्षा, कुत्सित विचार, मद्यमांसादि दुष्टभोजन, अधिक सोना, अधिक खाना, आलस्य प्रमाद में पड़े रहना, सिनेमा स्वांगादि देखना, नावल नाटकादि, गन्दी पुस्तकें पढ़ना, इस रोग के मुख्य कारण हैं। यदि भारत के युवक शुद्ध विचार, शुद्ध भोजन, सत्सङ्ग और स्वाध्याय करते हुये श्रद्धापूर्वक व्यायाम, प्राणायाम और सन्ध्या (ईश्वरभक्ति) नियमित रूप से करें, तो इस भयंकर रोग का सर्वथा उन्मूलन बिना किसी औषध-सेवन के भी हो सकता है। किन्तु आज का युवक इन साधनों पर श्रद्धा विश्वास नहीं रखता। औषधों का आश्रय लेना अधिक हितकारी समझता है। इसलिये विद्यार्थी और युवकों के इस दुःख को दूर करने के लिये हमने निम्नलिखित औषध अपनी रसायनशाला में बड़े परिश्रम से बनाई है। पर्याप्त नवयुवक इन से लाभ भी उठा चुके हैं। इस रोग की चिकित्सा में प्रमाद नहीं करना चाहिये। इसके अधिक बढ़ने पर मनुष्य नपुंसक (नामर्द) हो जाता है। हमारा स्वप्नदोषामृत रस तथा चूर्ण वीर्य को गाढ़ा तथा पुष्ट करके इस रोग को दूर करने में सफल हुवा है। इसके एक मास सेवन करने से कितने रोगियों का स्वप्नदोष तो सर्वथा नष्ट हो चुका है। इसके सेवन करने वालों का लाभ तो सब को होता है। किसी को ५० प्रतिशत किसी को ७५ प्रतिशत होता है। जिन युवकों को अजीर्ण कब्ज रहता हो, उन्हें बीच-बीच में त्रिफले का सेवन करते रहना चाहिये।

स्वप्नदोषामृत रस— यह रस स्वप्नदोष को दूर कतने की सर्वोत्तम औषध है। साथ ही वीर्य के मूत्र के आगे-पीछे या मध्य में आने वाले रोग को तुरन्त शान्त करता है। यह सब प्रमेहों के लिये भी अत्युत्तम औषध है। यह हताश तथा निराश युवकों को जीवन प्रदान करता है।

मूल्य ५) शीशी एक मासाथ

स्वप्नदोषामृत चूर्ण—यह चूर्ण धातु को पुष्ट करता है, बलदायक है। स्वप्नदोष के रोगी के लिये अत्यन्त हितकर है। दोनों औषध रस तथा चूर्ण साथ-साथ सेवन करने से आश्चर्यजनक लाभ होता है। साथ ही यह नपुंसकता (नामर्दी) के लिये भी लाभदायक है। यह प्रमेहनाशक है। यह चूर्ण विद्यार्थियों के लिये विशेष हितकारी है। मूल्य २) शीशी एक मास सेवनार्थ

१—दोनों दवाई एक मास की एक साथ मँगाने वालों से डाकखर्च एवं पैकिंग खर्च नहीं लिया जावेगा।

सेवन विधि—चूर्ण को एक मासे से तीन मासे तक प्रातः सायं दूध वा जल के साथ लेना चाहिये, रस की एक-एक गोली प्रातः सायं दूध वा जल के साथ लेनी चाहिये। जो विद्यार्थी वा युवक ब्रह्मचारी हों, उन्हें इसका सेवन जल के साथ ही करना चाहिये, भूल कर भी दूध से सेवन न करें। जो युवक निर्बल वीर्यहीन हों, उन्हें ताजे दूध अथवा गर्म किये हुए ठण्डे दूध के साथ प्रातः सायं सेवन करना चाहिये। खटाई, कच्चा मीठा, मिर्च, लहसन, प्याज इत्यादि उष्ण चीजों का पथ्य रखें।

अमृत घृत

यह घृत सब प्रकार के विष स्थावर (संखियादि) जंगम (सर्पबिच्छू विषादि) को दूर करता है। अपस्मार, उन्माद, क्षय, उदरविकार, पाण्डु, प्लीहा, कामला, हनुस्तम्भ, आदि रोगों में विशेष लाभकारी है। विषनाश करने में तो अमृत का काम करता है। यह मृत सदृश पुरुषों को भी जीवन प्रदान करता है। यह सर्व विष की अचूक और सर्वोत्तम औषध है। अतः इसे अमृत कहा है। यह सब विषों के नाशक घृतों में श्रेष्ठ है। यह सर्व विषों के नाशार्थ श्रेष्ठ घृत है।

मूल्य ५) आध पाव, ४०) सेर

फलघृत

यह स्त्रियों के गर्भाशय के सभी रोगों को दूर करता है। जिन स्त्रियों को गर्भ नहीं ठहरता या ठहर कर गिर जाता है या सन्तान निर्बल होती है। उनके लिये अत्युत्तम है। स्त्रियों के शरीर या कमर के दर्द के लिये बहुत उत्तम है। स्त्रियों के आर्तवदोष तथा पुरुषों के वीर्यदोष दूर करता है। जिनके बच्चे मर जाते हैं उन गृहस्थों को इसका सेवन करना चाहिये। जिनके कन्यायें ही होती हैं इसके सेवन से पुत्र उत्पन्न होता है। इसका अनुभव तो सेवन करके ही किया जाता है। संतान रूपी फल का देने वाला यथा-नाम तथा-गुणकारी है। प्रत्यक्ष में प्रमाण क्या। सेवन करें और फल प्राप्त करें।

मूल्य ४) आध पाव, ३२) सेर

ब्राह्मी घृत

इसके सेवन से कुष्ठ (कोढ़) मृगी (हिस्टेरिया) मस्तिष्क की निर्बलता, चक्र, आना, याद किये हुए पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है। और जिसकी स्मरण-शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिये श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष, सब प्रकार के धातु प्रमेह को दूर करता है। इसके सेवन से स्मरणशक्ति खूब बढ़ती है। मूल्य आधा पाव ४), एक सेर ३२)

त्रिफलादिघृत

यह घृत आंखों के लिये अत्युत्तम है इसकी जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है। यह आंखों के समस्त रोगों के लिये रामबाण है। इसके सेवन से नेत्रों का कोई रोग नहीं रहता। इससे रतोंधी, आंखों की खुजली, पानी जाना, धुंध, जाला, इत्यादि सब रोग दूर होते हैं। आंखें निर्मल होकर चमकने लगती हैं। सौ वर्ष तक नेत्र ज्योति नवयुवकों के समान बनी रहती है। मोतियाबिन्द को भी लाभदायक है। आंखों के छोटे बड़े सब रोगों को हितकारी है। मूल्य ४) आध पाव, ३२) सेर

महाबांसादि घृत

यह घृत रक्तपित्त, खांसी, स्वरभेद, हलीमक, गुल्म रोगों में उत्तम है। रक्तपित्त (शरीर के किसी भी अंग से खून निकलना) रोग के लिये तो यह एक मात्र अचूक औषध है। हमने इसको अनेक रोगियों पर अनुभव किया है। हमारे एक ब्रह्मचारी को नकसीर में किसी भी प्रकार की औषधि से लाभ नहीं हुवा, उसके लिये भी इस घृत ने अमृत का काम किया। अब उसकी नकसीर बन्द है।

मूल्य ५) आधा पाव, ४०) सेर

वृहत्शतावरी घृत

(रक्तपित्त) शरीर के किसी भी अंग से खून निकलना, शिर या किसी भी अंग में जलन होना, मूत्र का लगकर आना, और धातुवों की क्षीणतादि रोगों के लिये यह घृत अत्युत्तम है। हृदय रोगों को नष्ट करके पुरुषत्व को बढ़ाता है। मूल्य ३) आधा पाव, २४) सेर

वृहत्कण्टकारि घृत

इसके सेवन से सब प्रकार की खांसी, हिचकी, श्वास, कफरोगादि दूर होते हैं। दमे के रोगियों के लिये भी लाभदायक है। अनेक रोगियों पर अनूभूत घृत है।

मूल्य ४) आध पाव, ३२) सेर

हमारी रसायनशाला में प्रत्येक घृत शुद्ध गौघृत से बनाया जाता है। तथा अत्यन्त सावधानी परिश्रम से शास्त्र विधि से मन्दी-मन्दी अग्नि द्वारा सिद्ध किया जाता है। जिसमें कई घृत तो पच्चीस-पच्चीस तीस-तीस दिन में बनते हैं। अतः सर्वोत्तम हैं। हम बलपूर्वक कह सकते हैं ऐसे उत्तम घृत किसी रसायनशाला के नहीं हैं।

संस्था समाचार

१—गुरुकुल झज्जर

गुरुकुल झज्जर में भवननिर्माण का कार्य प्रारम्भ हो गया है। आयुर्वेद विभाग में सर्वप्रथम आतुरालय-भवन (इण्डोरपेशनहाल) का निर्माण हो रहा है। इसमें दश सहस्र रुपये की लागत का अनुमान लगाया गया है। इसके उपरान्त आयुर्वेद महा विद्यालय के लिये भवनों का निर्माण होगा। आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये जिन सज्जनों ने सहायता का वचन दिया है वे अपनी सहायता शीघ्र भिजवा कर अनुगृहीत करें। गत मासों में निम्न धन प्राप्त हुआ है।

७००) बेरी-रोहतक

८००) दाद्यां (वजीरपुर) बेरी, रोहतक

४००) कलोई (झज्जर) रोहतक

१०१) नूना माजरा-रोहतक

नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश

गुरुकुल में नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश हो रहा है। प्रवेश नियम कार्यायालय से मंगायें। गत मास के सुधारक में भी प्रवेश नियम निकल चुके हैं।

गुरुकुल में वे सज्जन ही अपने बालकों को प्रविष्ट करायें जिन की धारणा बालक को समाज और राष्ट्र का सेवक बनाने की हो। —मुख्याधिष्ठाता

२—कन्या गुरुकुल नरेला

कन्या गुरुकुल नरेला (देहली) का भवन निर्माण और धन संग्रह का कार्य श्री स्वामी व्रतानन्द जी महाराज तथा सूबेदार धीरज सिंह महपालपुर कर रहे हैं। पाठविधि का निश्चय किया जा रहा है। भवनों के नक्शे भी बनवाये गये हैं। आवश्यक भवनों के तैयार होने पर कन्याओं का प्रवेश किया जायेगा।

—कर्मवीर आर्य वैद्य, मन्त्री विद्यार्यसभा नरेला

सचित्र

"क्रान्तिदूत"

मू० ।।।) पृ० सं० १२०

आकर्षक मुखपृष्ठ, १५ चित्रों से सुशोभित
३४ आर्य विद्वानों के लेखों से अलंकृत

यह

"क्रान्तिदूत"

प्रत्येक नर नारी के घर में रहना आवश्यकीय है।

आज ही खरीदिये अन्यथा बाद में पछताना होगा।

मिलने का पताः—
ज्ञान गंगा कार्यालय
सुल्तान बाजार हैद्राबाद

देवता यदि आप बन जायें, बनें—
पर मनुष्य होना बहुत दुसाध्य है।

जीवन में उत्कर्ष तथा सामंजस्य लाने के लिये मानव हृदय में मानवता के विचार उद्बुद्ध करने के लिये, गिरते हुये नैतिक स्तर में चारित्र्य बल लाने के लिये, लोकहित की पावन भावनाओं से ओत-प्रोत, सुखद, बलप्रद, प्रेरक भावनाओं से युक्त, साहित्य मनीषियों का एक मात्र निराला पत्र—

'चरित्र निर्माण'

सचित्र "मासिक"

प्राप्ति स्थान—निर्माण कार्यालय
ऋषिकेश—(देहरादून) उ० प्र०

तीन भागों में | मूल्य १६॥ रु०

वाल्मीकि रामायण

(धारावाही सरस हिन्दी अनुवाद सहित)

अनुवादक प्रो० चन्द्रमणि विद्यालंकार, पालीरत्न। कागज—छपाई—बंधाई सब आकर्षक और बढ़िया। डाक पार्सल से व्यय २।) पड़ता है, परन्तु रेलवे पार्सल से बहुत कम। अनुवाद ऐसा मौलिक, चमत्कारी और हृदयग्राही है कि उपन्यास की तरह पढ़ने से छूटता नहीं। रामचरित्र का यथार्थ दर्शन और राम-राज्य का आदर्श चित्रण है। आबाल वृद्ध स्त्री-पुरुष सब के लिए नित्य पठनीय है। रामायण में खुद लिखा है—

"वाल्मीकि का यह आदि काव्य कर्तव्य बोधक है, यशदायक है, और आयुष्यप्रद है। संसार में जो मनुष्य नित्य इसे पढ़ता है, वह बुराइयों से छुटकारा पाता है, और कठिन से कठिन कामों को तर जाता है। रामायण के पढ़ने से लोग राम-जीवन से सब तरह के अभीष्ट वर पाते हैं। रजस्वला स्त्रियां इस पुरातन इतिहास को अपनाती व पढ़ती हुई श्रेष्ठ पुत्रों को जनती हैं।"

अतः, यह पुस्तक घर, समाज, विद्यालयों की शोभा है, तथा पारितोषकों और विवाहों में भेंट की चीज है।

कल्याण-पथ

गीता का सुबोध, हृदयग्राही अनुवाद तथा गुरु-शिष्य, पिता-पुत्र आदि के कर्तव्यों का बोधक। मूल्य ॥=)

स्वामी दयानन्द के सत्य अहिंसा के प्रयोग

ये प्रयोग मनुष्यों को उभारने वाले तथा समाज-सेवकों के पथ-प्रदर्शक हैं।

मूल्य ॥)

अध्यक्ष

भास्कर प्रेस, देहरादून।

सर्वनाश की जड़ हुक्का

(श्री—मिस्त्री चन्दगीराम नीमली (महेन्द्र गढ़)

हे मनुष्य ! तुझे परमपिता परमात्मा ने बुद्धि दी है । तेरे में और पशुओं में केवल यही भेद है कि तू बुद्धिमान् है और पशु विवेकहीन हैं । बुद्धि का कार्य निज हिताहित को जानना है । किन्तु हे मूर्ख मनुष्य ! जब तू बुद्धि से काम लेना छोड़ देता है तो नाना दु:खों को भोगता है । अनेकों कष्ट-क्लेश तेरे पीछे हाथ धोकर पड़ जाते हैं। "बिना विचारे जो करे सो पीछे पछताय" यह लोकोक्ति अक्षरशः सत्य है । वास्तव में जो बिना विचारे काम करते हैं वे मनुष्य ही नहीं, क्योंकि मनुष्य शब्द का अर्थ ही विचारशील है ।

आजकल बिना विचारे बालक से लेकर बुड्ढों तक सभी हुक्के रूपी भयङ्कर विष का पान कर रहे हैं । मैं भी हुक्का पीने के चक्र में बाल्यकाल से ही फंसा हुआ था। मैंने निज जीवन में हुक्का पीने से होने वाली हानियों का खूब अनुभव किया है । जब मैं हुक्का पीता था तब शिर में चक्र, हृदय में धड़कन, आंखों में से तारे से टूटते थे। सूखी खांसी का होना, कलेजे में जलन तथा शरीर में सदा थकावट रहती थी । मैं स्वप्नदोष से भी पीडित था। अत्यधिक हुक्का पीने से तो कब्ज भी हो जाती थी। अनुभव के आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि हुक्का पुरुषत्व शक्ति को भी कम करता है । और "बुद्धिं लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारि तदुच्यते" इस वचनानुसार हुक्का मदकारी होने से बुद्धि = स्मरणशक्ति का भी दिवाला निकाल देता है । हूक्का जठराग्नि को भी अति मन्द करता है । यही कारण है कि हुक्कापाड़ों को बिना हुक्का पीये शौच नहीं उतरता । और हुक्का पीने से विशेष हानि यह है कि हुक्का पीने वाला कभी ब्रह्मचर्य पालन में सफल नहीं हो सकता, क्योंकि हुक्का अत्यन्त उष्णताकारक होता है । ब्रह्मचर्य-पालन ही अमूल्य मनुष्य जीवन का मूल है । ब्रह्मचर्य-पालन के बिना सारा जीवन निस्सार एवं निरर्थक है । ब्रह्मचर्य सिद्धि ही मनुष्य जीवन की प्रथम सफलता है । यदि ब्रह्मचर्यकाल ही नशों में तथा विलासिता में व्यतीत हो गया तो सारे जीवन दुःख झेलने के सिवाय और कुछ नहीं है ।

जिनका ब्रह्मचर्य काल नशों एवं विलासिता के अतिरिक्त विद्याध्ययन आदि शुभ कर्मों में संयम पूर्वक व्यतीत होता है वे सारे जीवन सुख-लाभ करते हुये निज मानव जीवन को सफल बनाते हैं । ब्रह्मचर्याश्रम जीवन रूपी भवन की नींव है । जिस भवन की नींव निर्बल है, वह कभी सुखदायक और चिरस्थायी नहीं रह सकता। यदि निज जीवन से प्रेम है और मनुष्य जीवन को सफल बनाना है तो अवश्य इस हुक्का रूपी राक्षस से छुटकारा पाना होगा ।

धूम्रपान = हुक्क पीना एक भयंकर व्यसन है । जो लोग अज्ञान में इस के चक्र में आ जाते हैं उन्हें पुनः यह राक्षस सहजतया छोड़ता नहीं । मैं इसे हानिकारक समझा हुआ भी इस दुष्ट व्यसन से छुटकारा नहीं पा सका । परमपिता परमात्मा की दया से और श्री आचार्य भगवान्देव जी की महती कृपा से, घोर प्रयत्न करने से इस चक्र से जैसे तैसे निकल सका हूँ । केवल दो मास के अनुभव से ही मैं खांसी (तपेदिक का चौथा भाग) से विमुक्त हो गया। ब्रह्मचर्य रक्षा में भी पूरी पूरी सहायता मिली । अन्य भी सभी रोग बिना किसी अन्य चिकित्सा के स्वयं दूर हो गये ।

मैंने अपने जीवन में "दुष्ट व्यसनों में फंस जाने से मर जाना अच्छा है" इस महर्षि दयानन्द जी महराज के वचन का अच्छी प्रकार अनुभव किया है । महर्षि जी का यह वाक्य अक्षरशः सत्य होने से स्वर्णाक्षरों में उल्लेखनीय है । आशा है हुक्का पुजारी जन मेरे इन दो शब्दों पर ध्यान देते हुए, इस भयंकर विष को छोड़ अमृत का पान करेंगे ।

वार्षिक मूल्य ४) एक प्रति ।=)

माता

श्री अरविन्द साहित्य की उत्तर भारत की एक मात्र मासिक पत्रिका "माता" पांच वर्ष से नियमित रूप से प्रकाशित होकर भारतवर्ष तथा अन्य देशों में आध्यात्म की धारा बहा रही है।

कुछ विशेषतायें—उच्चकोटि के लेख; कहानी, कवितायें, आप के प्रश्न तथा साहित्य आलोचना आदि। छपाई सुन्दर एवं आकर्षक।

क्रान्तिकारी धारावाही उपन्यास "महाक्रान्ति" पढ़िये। आदर्श विज्ञापन के लिये स्थान खाली। एजेन्सी के लिये लिखें।

"माता" प्रकाशन के दो पुष्पः—'काव्यसंग्रह' आत्मज्ञान' ॥) एवं कहानीसंग्रह 'नवदीप' ।||)

प्रबन्धक "माता" कार्यालय
श्री मातृकेन्द्र गाजियाबाद (उ० प्र०)

हम प्रस्तुत करते हैं—
'अगस्त' ५४ में
"देशबन्धु"
का

॥ कहानी-विशेषाङ्क ॥

सम्पादक
अवन्तिका के तरुण तपस्वी, प्रौढ़-कलाकार
श्री महेश शरण जौहरी 'ललित'

पृष्ठ संख्या १२८ ❀ आकार डिमाई
रंगीन छपाई ❀ आकर्षक मुख पृष्ठ

मूल्य छः आने मात्र
देश के अनेक प्रतिष्ठित-अलबेले, मस्त कहानीकारों की कहानियों का संग्रह।
❀ विक्रेता अपनी प्रतियाँ पेशगी रकम सहित आज ही सुरक्षित करा लें।

प्रकाशक
'देशबन्धु' कार्यालय, मथुरा।

बहुमूल्य रत्नों से तुलने वाली पुस्तकें

इन अत्यन्त प्रामाणिक पुस्तकों में ऐसे प्रयोग और अनुभव दिये हैं, जिन्हें पिता भी अपने पुत्र से छिपाता है। पसन्द न आने पर मूल्य वापिस, इस से बढ़कर और क्या गारंटी होगी?

तत्काल फलप्रद प्रयोग (चार भाग) मूल्य ७।) रुपया
" (प्रथम भाग) १५० प्रयोग, १०० पृष्ठ १॥)
" (द्वितीय भाग) ३०० प्रयोग, १६० " २)
" (तृतीय भाग) ४५० प्रयोग, १७५ " २)
" (चतुर्थ भाग) प्रेस में १३६ " १।||)
सौ रोगों का सफल इलाज (पृष्ठ १९२) सजिल्द २)
अजिल्द १।||)
धर्मार्थ औषधालयों के प्रयोग (१०० पृष्ठ २५० योग) १।)
पथ्यदर्शक (प्रथम भाग) ३२ पृष्ठ ।)

'आयुर्वेद चिकित्सक' के ग्राहक बनें। वर्ष भर में १५०-१५० पृष्ठ के दो विशेषांक भी भेंट में देते हैं। वार्षिकमूल्य ४) नमूना ।-)

आयुर्वेदीय पुस्तकों, प्रामाणिक औषधों के लिये याद रखें—

वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री, संपादक 'आयुर्वेद चिकित्सक' लाखाभवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर।

गोहत्या निरोध पर बल लगाओ

भारत में आज भी गौमाता के गले पर छुरी चले तो इससे बड़ा कलङ्क क्या हो सकता है? गौ के लाभ बताने के लिये किसी पोथी अथवा प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं। गोहत्या का पाप हमें नाश की ओर ले जा रहा है। ऐ भारतवासियो! उठो! बढ़ो!! पूर्ण बल लगाओ!!! गोहत्या को बन्द करवाने में सब कुछ अर्पण कर डालो।

—भारतीय आत्मा

TEXMACO

TEXTILE MACHINERY DIVISION

RING SPINNING FRAMES

Of any gauge up to 3″ and lift up to 8″.
Drafting System 4 Roller self weighted with or without Pendulum Arm Weighting, 4 Roller saddle weighted, Casablanca 500 with or whitout Pendulum Arm Weighting, 500-A or E 10 B.

Roller Bearing Spindles.
Ball Bearing Jockey Pulleys.
Ball Bearing Front Top Rollers.

DRAWING FRAMES

Of 16″ or 18″ Gauge with one or two heads.
Belt or Motor driven.
Electric Stop Motion.
Automatic Locking Device
9″, 10″ or 12″ diameter Cans.

BOILER & HEAVY ENGINEERING DIVISION

Smoke Tube, Marine, Water Tube and Locomotive Boilers, Flues, Mechanical Stokers, Economisers, Chemical and Pressure Vessels Coal Handling Plant, Chimneys, Ductings, Cranes, Railway Wagons and Rolling Stock, Penstock Pipes, Sluices and Spillway Gates for Hydraulic Dam Projects.

Smoke Tube Boiler design in collaboration with M/S. Babcock & Wilcox of India Ltd.

For particulars please write to

TEXTILE MACHINERY CORPORATION
LIMITED.

Belghurriah 24 Parganas West Bengal

सुधारक

वैदिक धर्म का प्रचार, सामाजिक कुरीतियों का नाश, आर्ष ब्रह्मचर्य-शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धार, गोहत्या निषेध का प्रबल समर्थन, विद्यार्थी और युवकों में नवजीवन-संचार आदि श्रेष्ठ उद्देश्यों का प्रतिपादक यह सुधारक है। मूल लागत मात्र से भी कम केवल २) रु० वार्षिक और प्रतिमास २८ पृष्ठ में उत्तम सामग्री। स्वयं अभी ग्राहक बनें तथा अन्यों को बनावें।

व्यवस्थापक—'सुधारक'
गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

पता

ग्राहक संख्या
सेवा में श्री— जगदीशचन्द्र जी विद्या
मु० C/o मुरारी ब्रदर्स
पो० कमला नगर
जि० देहली

❋ ब्रह्मचर्य-महिमा ❋

लेखक—ब्र० यज्ञपाल सिद्धान्तशास्त्री, पञ्चग्राम (महेन्द्रगढ़)

करो ब्रह्मचर्य से प्यार, मानो बात हमारी ॥टेक॥
ब्रह्मचर्य से होवे सुख विशेष, मिट जायेंगे सारे क्लेश।
जीवन में मिलेगा आनन्द बहार, होंगी दूर सब बीमारी ॥१॥ करो ब्रह्मचर्य से…
परशुराम का कुठार जग में आया, सारा क्षत्रिय दल घबराया।
क्षत्रियों का किया ढेर मार-मार, यों बतलावै रामायण प्यारी ॥२॥ करो ब्रह्मचर्य से…
पवन पुत्र हुआ हनुमान, जिसको जाने सर्व जहान।
वह बल का था भण्डार, जिसने जलाई लंका सारी ॥३॥ करो ब्रह्मचर्य से…
ब्रह्मचर्य से मृत्यु पर विजय पावें, ऐसे वेद शास्त्र बतलावें।
मौत को दी थी ठोकर मार, अमर हो गये भीष्मजी ब्रह्मचारी ॥४॥ करो ब्रह्मचर्य से…
जब शंकराचार्य था देश में आया, जैनी दल सारा चकराया।
किया जैन मत को ख्वार, ब्रह्मचर्य की थी शक्ति भारी ॥५॥ करो ब्रह्मचर्य से…
अन्य आपको बतलाऊँ, सारी शंका तुम्हारी मिटाऊँ।
ऋषि दयानन्द का सहा ना वार, देश की बिगड़ी दशा सुधारी ॥६॥ करो ब्रह्मचर्य से…
पाखण्ड सारे दूर हटाकर, वेदों का पाठ पढ़ा कर।
मूर्ति पूजादि से किया छुटकारा, रोवें पण्डे और पुजारी ॥७॥ करो ब्रह्मचर्य से…
बिल्कुल ताजा हाल तुम्हें सुनाऊँ, शेष भ्रम भी आपका मिटाऊँ।
गुरुकुल झज्जर का उठाया सिर पै भार, गुण गावे हरियाणा-नारी ॥८॥ करो ब्रह्मचर्य से…
आर्षपाठ विधि को ऊँचा उठाके, अनार्ष-ग्रन्थों को दूर हटा के।
कर रहे देश का उद्धार, नाम है जिनका भगवान्देव ब्रह्मचारी ॥९॥ करो ब्रह्मचर्य से…
भाई लो सब ब्रह्मचर्य को धार, होगे तुम दुःख सागर से पार।
'यज्ञपाल' का तो है यही विचार, आगे मर्जी तुम्हारी ॥१०॥ करो ब्रह्मचर्य से…

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

ओ३म्

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः।।

वर्ष २
अङ्क २

गुरुकुल झज्जर (रोहतक), श्रावण सं० २०११ वि०
अक्टूबर १९५४, दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

आदर्श गुरु और शिष्य

* * *

आदित्य ब्रह्मचारी महातपस्वी

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

अपने गुरुवर

महर्षि स्वामी विरजानन्द सरस्वती

को

समावर्तन के अवसर पर

गुरुदक्षिणा में लौंग भेंट कर रहे हैं।

* * *

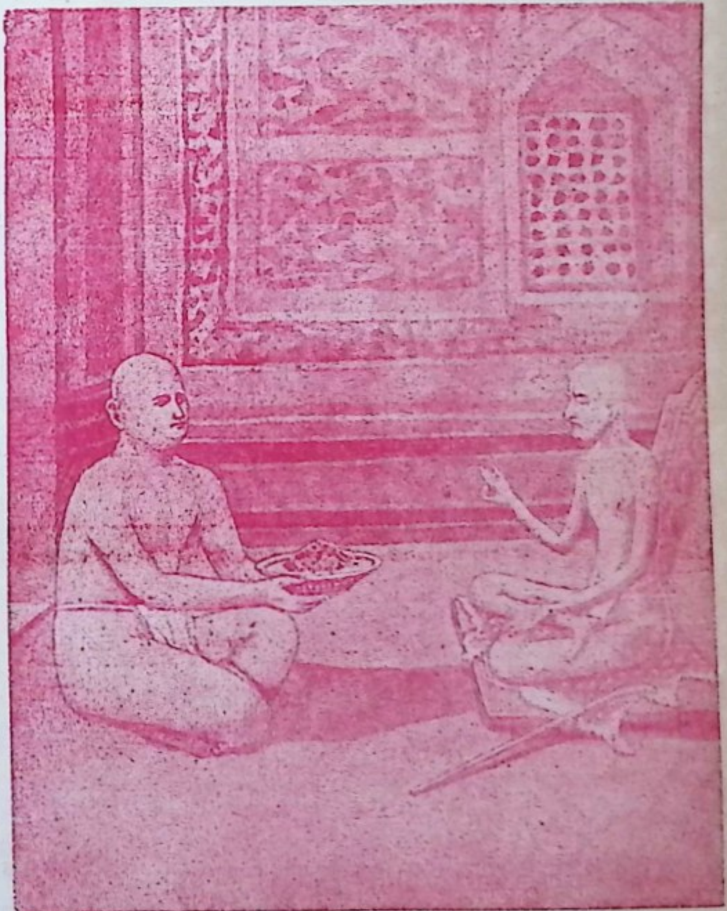

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सह सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

चन्दा समाप्त

इस अंक की विषय सूची

विषय	लेखक	पृ०
ब्रह्मचर्यमहत्वम्	श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न	३-४
सम्पादकीय		५-६
वैदिक सात मर्यादायें	ब्र० वेदव्रत भाष्याचार्य	७ से ११
यज्ञ का महत्व	श्री मिस्तरी बुद्धराम	१२
राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान	श्री मुनि देवराज जी विद्या वाचस्पति	१३ से १६
गो महिमा (कविता)	श्री म० हरस्वरूप जी	२१
संस्था समाचार		२२
दीपावली का वास्तविक स्वरूप	श्री पं० विश्वप्रिय शास्त्री	२३ से २६

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—आर्यसमाज या वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं ली जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है।

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संस्कृत में करें, उत्तर के लिये जवाबी कार्ड डालें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चौथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	९)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५% अधिक।

„ तृतीय १०% अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

(श्री पण्डित मेधाव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्)

[गताङ्क से आगे]

आचार्यवह्नौ समिधौ प्रतप्ते
विराजतो मङ्गलदे विशुद्धे ।
ते यज्ञशिष्टे सुगुरोः कृपातः
स विन्दते शिष्यवरः सुवर्णी ४७॥

अर्थः—आचार्यरूपी दहकती हुई ज्ञानाग्नि में समिधारूप द्यु व भूलोक का ज्ञान विशुद्ध = पापभंजक व कल्याणदायक हो जाता है। ज्ञानाभीप्सु श्रेष्ठ ब्रह्मचारी शिष्य बनकर, आचार्यवर्य की कृपा से यज्ञ शेष उन दोनों प्रकार के ज्ञानों को प्राप्त करता है। ब्रह्मचारी का प्रतिदिन भिक्षा लाकर आचार्य को समर्पित करने का यही प्रयोजन है।

त्रिलोकलक्ष्मीं लभते यदि व्रती
स्वभिक्षया तर्हि समर्पयत्यमूम् ।
गुरूत्तमायैव विनिःस्पृहस्ततो
जनैस्सुभिक्षार्हतमाय दीयताम् ॥४८

अर्थः—यदि ब्रह्मचारी अपनी शिक्षा द्वारा त्रिलोक की लक्ष्मी को भी प्राप्त करता है तो भी लोभ लालच से दूर रह कर उसे आचार्य श्रेष्ठ के ही अर्पण कर देता है। इस लिये हे मनुष्यो ? आप पूजापात्र ब्रह्मचारियों को धन-धान्यरूप उत्तम भिक्षा अवश्य दीजिये। इसका शुद्धरूप ज्ञानरूप में परिवर्तित होकर कुछ काल के अन्तर आपके ही समीप आ जायेगा।

दानं प्रदत्तं सुखदं सुपात्रे
संजायते यज्ञमयं जनेशैः ।
स ब्रह्मचारी प्रथमा यदीदृक्
सुदुर्लभः पुण्यवतैव लभ्यः ॥४९॥

अर्थः—सुपात्र ब्रह्मचारी के लिये उत्तम जनों द्वारा दिया गया सुखदायक दान यज्ञरूप हो जाता है, ऐसा दुर्लभ श्रेष्ठ ब्रह्मचारी भाग्यशालियों को ही मिल पाता है।

रोदस्योरन्तरे प्रान्ते ह्यन्तरिक्षं समागतम् ।
रोदसीवर्णनेनेत्थं संसारो वर्णितोऽखिलः ॥५०॥

अर्थः—द्यु और पृथिवी के बीच में अन्तरिक्षलोक भी आगया, अतः द्युलोक और पृथिवी लोक के वर्णन से सारे ही संसार का वर्णन हुआ समझना चहिये।

अर्वागन्यः परो अन्यो दिवस्पृष्ठाद् गुहा निधी निहितौ ब्राह्मणस्य। तौ रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तत् केवलं
कृणुते ब्रह्म विद्वान् ॥

(अथर्व० ११।५।१०)

अन्यः परो दिवस्पृष्ठादर्वागन्योऽस्ति भूतलात् ।
ब्राह्मणस्य पवित्रायां गुहायां निहितौ निधी ॥५१॥

अर्थः—एक भूतल से द्युलोक के पृष्ठ तक उरे का लोक है, दूसरा द्यु-लोक से परे है। इन दोनों का ज्ञान कोष ब्राह्मण की पवित्र बुद्धि में निहित है, छिपा हुआ है।

ब्रह्मचारी तपोवित्तस्तपसा तौ प्ररक्षति ।
केवलं तनुते विद्वांस्तद् ब्रह्म निधिसन्निभम् ॥५२

अर्थः—तपोनिष्ठ तपस्वी ब्रह्मचारी तप द्वारा इन दोनों कोषों की रक्षा करता है और केवल ब्रह्मवित् विद्वान् ही उस ज्ञानमय निधि का विस्तार करता है। (उपयोग करता है।)

आभूमेराद्युलोकं निधिमिव निहितं ज्ञानयुग्मं परस्ता-
त्स्वर्लोकादप्यमुष्मादपरमपि परं ब्रह्मविद्ब्रह्मनिष्ठः ।
सूक्ष्मप्रज्ञागुहायां वितरति गुरुराड् ब्रह्मचारीश्वराय
ज्ञानं संरक्ष्य शक्त्या जगति वितनुते ब्रह्मविद्वा-
न्स शिष्यः ॥५३॥

अर्थः—एक भूलोक से द्यु लोक पर्यन्त (देह से बुद्धि प्रकाश तक) का ज्ञान अपरा विद्या है, और दूसरा इस लोक से भी परे नित्य, अविनाशी दिव्यतत्त्व ब्रह्म का ज्ञान परा विद्या है, यह दोनों प्रकार का ज्ञान आचार्य की सूक्ष्मबुद्धिरूप गुहा में निधि तुल्य छिपा हुआ है। ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मनिष्ठ आचार्य-श्रेष्ठ सर्वोत्तम ब्रह्मचारी को इसका वितरण करता है = देता है। फिर वह ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मचारी उस ज्ञान की रक्षा करके अपनी दिव्य शक्ति से संसार में इस उच्चसम्पत्ति व ऐश्चर्य को फैलाता है।

नरेन्द्रकोषं च यथैव सैनिको
वली भुशण्डीवलतोऽभिरक्षति ।
तथान्तरज्ञाननिधिं व्रतीश्वर-
स्तपोबलेनैव विरक्षति ध्रुवम् ।।५४।।

अर्थः—जैसे बलवान् सैनिक बन्दूक के बल से राजा के कोष की सम्यक् रक्षा करता है, वैसे ही यह व्रतियों में श्रेष्ठ ब्रह्मचारी अपने तपोबल से आन्तरिक इस ज्ञान निधि की नित्य रक्षा करता रहता है।

मन्त्रः ११—अर्वागन्य इतो अन्यः पृथिव्या अग्नी समेतो नभसी अन्तरेमे। तयोः श्रयन्ते रश्मयोऽधि-दृढास्ताना तिष्ठति तपसा ब्रह्मचारी।।

(अथर्व० ११।५।११)

युग्मम्—अर्वागितोऽन्योऽस्ति वसुन्धराया-
दिवस्ततोऽन्योऽग्निरिमे समेतः।
तावन्तराग्नी नभसी तयोर्दृढा-
अधिश्रयन्ते वररश्मयो मिथः ।।५५।।

तान्ब्रह्मचारी तपसाऽधितिष्ठति
तपो हि तद् द्वन्द्वसहिष्णुताऽस्ति या।
शीतोष्णतृट्क्षुत्सुखदुःखयुग्मके-
ष्वपि श्रयेद् यः समतोलतां सदा ।।५६।।

अर्थः—एक अग्नि वसुन्धरा से परे है, दूसरी द्यु लोक से इधर है, ये दोनों अग्नियाँ इन दोनों लोकों के मध्य में एकत्रय होती हैं, जहां उनकी दृढ़ किरणें परस्पर में टकराती हैं। ब्रह्मचारी तप द्वारा उनका अधिष्ठाता बनता है = अधिपति हो उन किरणों को वशीभूत करता है। शीत-उष्ण, भूख-प्यास सुख दुःख आदि द्वन्द्वों में जो समतुलन रखता है। वह तपस्वी कहलाता है। इन द्वन्द्वों को सह जाना ही तप है।

स्वर्लोकवह्नेर्वसुधानलस्य
करास्समाघ्नन्ति मिथोऽन्तरिक्षे ।
आघातकारिष्वपि तेषु वर्णी
तिष्ठत्यकम्पः स्वतपोबलेन ।।५७।।

अर्थः—द्यु लोक और पृथिवीलोक की अग्नि की किरणें अन्तरिक्ष में आकार परस्पर टकराती हैं, चोट पहुंचाने वाली उन किरणों में भी ब्रह्मचारी अपने तपोबल से अविचलित रहता है।

मस्तिष्कतो ज्ञानमयः कृशानुः
स जाठराग्निश्च हृदन्तरिक्षे ।
विरोधिनौ तौ मिलतस्तयोस्तु
ध्रुवोऽनिशं तिष्ठति स व्रतीशः ।।५८।।

अर्थः—(इसी प्रकार देह में) मस्तिक से ज्ञानरूप अग्नि और उदर से जठराग्नि निकलकर परस्पर विरोधी भाव रखती हुई हृदयरूपी अन्तरिक्ष में आकर मिलती हैं=टकराती हैं उन दोनों के संघर्ष में जो नित्य प्रति स्थिर रहता है वह ब्रह्मचारियों में धन्य है।

स रश्मिगामी सुनटो यथा निजं
तोलं समालम्व्य चलत्यकम्पनः ।
तथाऽसिधाराव्रतिनां पुरन्दरो-
द्वन्द्वेष्वलं धैर्यतुलां विरक्षति ।।५९।।

अर्थः - जैसे रस्सी पर चलने वाला निपुण नट अपने बोझ को सन्तोलित करके बिना कांपते हुए सीधा चलता है वैसे ही तलवार की पैनी धार के समान तीक्ष्ण व कठोर व्रतों का पालन करने वाले श्रेष्ठ ब्रह्मचारी इन्द्र द्वंद्वों में पूर्णरूप से धैर्यरूपी तराजू को संतुलित रखता है।

जैसे गीता में भी उचित व्यवहार का निर्देश किया है—

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ।।

क्रमशः

सम्पादकीय—

वेद-प्रचार

ऋषि दयानन्द के कार्य क्षेत्र में उतरने से पूर्व आर्यावर्त्त की सब दिशाओं में अधोगति हो रही थी। देश भर में सहस्रों मतमतान्तरों ने जाल फैला रखा था। सामाजिक अवस्था छिन्न-भिन्न हो चुकी थी। वर्णाश्रम व्यवस्था लुप्त प्रायः थी। स्त्री जाति का अपमान साधारण घटना समझी जाती थी। आर्य जाति का एक बड़ा भाग पद दलित कर दिया गया था। आर्य जाति के अंग कट-कट कर विधर्मी हो रहे थे। खान-पान और रहन सहन एक बखेड़ा बन चुका था। ब्रह्मचर्य शिक्षा प्रणाली समूल नष्ट हो गई थी। कुरीतियां समाज को खा रही थीं। राजनीतिक दासता ने भारत को घेरा हुआ था। ईसाई और मुसलमान आर्य जाति को विश्व से मिटाने के स्वप्न ले रहे थे। सार यह है कि भारत राष्ट्र सब प्रकार से पतित हो चुका था।

ऐसे समय ऋषि दयानन्द भारतीय आकाश में सूर्य सम तेजः—पुञ्ज होकर चमके। स्वयं वे महायोगी और प्रकाण्ड शास्त्रवेत्ता थे। महर्षि स्वामी विरजानन्द जी सरस्वती से विद्या-कवच ग्रहण करके भारत भूमि में अवतीर्ण हुये। चारों ओर देखा और राष्ट्र की दुरवस्था को पहिचान कर उसे चङ्गा करने के लिये यत्नवान् हुये। उन्होंने योग दृष्टि से जांच कर निश्चय किया कि इन सब रोगों का एक ही सामूहिक उपाय है—"वेद प्रचार।" भारतीय ऋषि भूमि में बड़े-बड़े संस्कृतज्ञ विद्वान् भी वेद के पठन-पाठन और मनन से रहित हो चुके थे। इसी कारण भारत-भू कुमार्ग से घिर गई थी। ऋषि दयानन्द के वेद सूर्य का प्रकाश भारत में फैलाया। स्वयं वेद-भाष्य किया। जगह-जगह शास्त्रार्थ किये। देश के महारोग को जड़ से खोद कर नष्ट करने के लिये "सत्यार्थ प्रकाश" का प्रणयन किया। चारों दिशाओं में शास्त्र-शस्त्रास्त्र फैंके। इनका अपूर्व प्रभाव होने लगा। ऋषि ने दीर्घ-दृष्टि से देखा कि यह वेद प्रचार प्रणाली स्थिर की जावे। इसी विचार को मूर्त्त रूप देने के लिये ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना की। आर्यसमाज के नियम निश्चित किये। इन में "वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" यह तीसरा नियम स्थिर हुआ। बहुत थोड़े समय में ही ऋषि ने भारत में ही नहीं अपितु समस्त संसार में वैदिक जय घोष की गूंज फैला दी।

ऋषि के पश्चात् आर्य समाज में वैदिक धर्म पर सर्वस्व न्यौछावर करने वाले बलिदाता जन-नेता आगे आये उन्होंने वेद प्रचार में पूर्ण शक्ति लगाई। सब कुरीतियों पर एक साथ धावा बोल दिया। कहीं शास्त्रार्थ होता है, तो कहीं ईसाई-मुसलमानों की शुद्धि हो रही है। कहीं पतितों का उत्थान है, तो कहीं सामाजिक कुरीतियों के गढ पर आक्रमण किया जा रहा है। शिक्षा प्रचार के लिये पाठशाला, गुरुकुल, विद्यालय, स्कूल और कालिज खोले गये। स्कूल और कालिज खोले जाने का एक मात्र कारण यह था कि ईसाई मिश्नरियों द्वारा चलाये जा रहे स्कूल कालिजों में जाने से आर्य विद्यार्थियों को रोका जावे। यह कार्य सिद्धि भी हुई। एक बड़ी त्रुटि यह थी कि आर्यसमाज में आर्ष-शिक्षा प्रणाली चलाने वाले त्यागी तपस्वी विद्वानों की कमी थी। इस कारण साधारण अध्यापकों की आर्य संस्थाओं में नियुक्ति की गई। ऐसे अध्यापक पाश्चात्य शिक्षा के कुप्रभाव से परे न थे। इसीलिये संस्थाओं से यथेष्ट लाभ न हो सका।

संस्थावाद की इतनी वृद्धि हुई कि आर्यसमाज की सारी शक्ति इनका खर्च चलाने में ही खर्च होने लगी। वेद प्रचार पर ध्यान कम रह गया। आर्य प्रतिनिधि सभायें यद्यपि प्रचार करती रहीं परन्तु इन सभाओं ने भी अनेक संस्थाओं का भार उठा लिया। संस्थाओं के प्रबन्ध विषयक झगड़े बढ़े। चुनावों में पदाधिकार पर वैमनस्य

फैलाया जा रहा है। इसका परिणाम यह होना ही था कि वेद प्रचार की ओर से ध्यान हट गया।

स्वतन्त्रता आन्दोलन में आर्यसमाज ने पूर्ण शक्ति लगाई। यह अच्छा ही था, परन्तु अप्रत्यक्ष रूप में वेद-प्रचार भी इसके प्रभाव से न बच सका। स्वराज्य प्राप्ति की धुन में भाईचारे के प्रचार के कारण शास्त्रार्थ बन्द हुये। शुद्धि का द्वार बन्द हो गया। स्वतन्त्रता मिलने पर राजनीति में कार्य करने वाले आर्य शासन में पद-लोभ के कारण आर्यसमाज की संघटन शक्ति से परे हट गये। इससे वेद-प्रचार को भारी धक्का पहुँचा।

यद्यपि आर्यसमाज ने संस्थाओं पर भारी शक्ति खर्च की, परन्तु ये संस्थायें आर्य समाज के मार्ग का रोड़ा बन चुकी हैं। वेद प्रचार के मार्ग में सीधी बाधक बन चुकी हैं।

पहिले आर्य युवक आर्योपदेशक बनना गौरव समझते थे। अन्य लोग भी समय बचा कर प्रचार करना अपना मान और आदर मानते थे। परन्तु अब समय पलट गया है। कोई व्यक्ति प्रचारक बनना नहीं चाहता। क्योंकि प्रचारकों को आदर की दृष्टि से देखना आर्यसमाज में कम हो गया है। आर्य संस्थाओं तथा आर्य समाजों के उत्सवों पर प्रसिद्ध और तपे मंजे आर्योपदेशकों को वह आदर नहीं दिया जाता जो कि एक आर्य राजनीतिक नेता अथवा किसी राज्याधिकारी को दिया जाता है। जगह-जगह पर देखा जाता है कि आर्य समाज की अथक रक्षा करने वाले पूज्य संन्यासी अथवा दिग्गज विद्वान् की अपेक्षा आर्यों द्वारा किसी शराबी, मांसाहारी, भ्रष्टाचारी और अनाचारी शासनारूढ व्यक्ति का अधिक मान किया जाता है। भला ऐसी अवस्था में कौन उपदेशक पद की प्राप्ति की इच्छा करे। यह सब कारण राजनीतिक-पद-लोलुपता और संस्थाओं के धन बटोरने के निमित्त किया जाता है। अत्यन्त खेद से कहना पड़ता है कि ऋषि दयानन्द का नाम लेकर आर्यसमाजों और आर्य संस्थाओं के अधिकारी सहशिक्षा चला रहे हैं। ऋषि ने इस का घोर विरोध किया था, परन्तु संस्थाओं में रुपया लेने की इच्छा से यह पाप कर्म आज आर्य संस्थाओं में बढ़ता जा रहा है।

समय आ गया है कि आर्यसमाज अपनी जांच करे। आत्म निरीक्षण करे। अपना मुख पश्चिम की ओर से पूर्व की ओर करे। जो संस्थायें वेदप्रचार में बाधक हों उनका सुधार किया जावे। आर्यसमाज से उनका सम्बन्ध विच्छेद कर दिया जावे अथवा ऐसी पत्थर रूप बाधक संस्थाओं को अपने हाथ से ही तोड़ दिया जावे। ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन काल में फर्रुखाबाद में आर्ष पद्धति पर न चल न सकने के कारण स्वयं स्थापित पाठशाला को तोड़ दिया था। संस्था-मोह से आर्य समाज को दूर होना होगा। केवल उन संस्थाओं का भार आर्य समाज उठावे जो ब्रह्मचर्य आर्ष शिक्षा प्रणाली का साधन हों। चाहे छात्र जितने थोड़े हों परन्तु नियम से न हटा जावे। यही सब सुधारों का मूल है। व्यर्थ का भार आर्यसमाज से हटा कर वेदप्रचार में सम्पूर्ण शक्ति लगाई जा सकेगी।

आर्यसमाज तथा आर्य संस्थाओं के कार्यक्रम में वेद प्रकाश पर ही अधिक बल जगाया जावे। ऐसे अवसरों पर पूज्य संन्यासी तथा पण्डितों का सुसन्मान किया जावे जिस से आर्य विद्यार्थियों को तप, त्याग और विद्या में रुचि बढ़े। ब्रह्मचर्य के प्रचार से समस्त अनाचार नष्ट हो सकते हैं।

आज भी आर्य जगत् में ऐसे पूज्य संन्यासी और अन्य उपदेशकों की कमी नहीं है जो सर्वात्मना वेदप्रचार में संलग्न हैं। कमी हमारी यही है कि हम उनके उपदेशों से यथेष्ट लाभ नहीं उठा पाते। ऐसे ही आदरणीय संन्यासियों में ही एक श्री स्वामी आनन्दभिक्षु हैं जो कि भारत की सीमा को लांघकर मारीशस और अफ्रीका में वैदिक धर्म प्रचारार्थ भ्रमण कर रहे हैं। मारीशस में आपने सैकड़ों व्याख्यान दिये और कई सौ यज्ञ तथा यज्ञोपवीत कराये। शुद्धि कराई और वानप्रस्थाश्रम में एक सज्जन का प्रवेश कराया। आपने १८ आर्य नवयुवकों को वैदिक धर्मोपदेशक बनने के लिये तैयार किया है। यह युवक भारत में ही शिक्षा ग्रहण करेंगे। इस प्रकार आप वैदिक धर्म का प्रचार बड़ी तन्मयता से कर रहे हैं। ऐसे ही पूज्य महानुभाव आर्यों के लिये आदर के पात्र हैं। यदि आर्य लोग ऐसा करेंगे तो वैदिक धर्म के लिये उपदेशक बनने बनाने में उत्साह बढ़ेगा।

(शेष पृष्ठ ११ पर)

वैदिक सात मर्यादाएँ

(ले०—ब्र० वेदव्रत भाष्याचार्य, निरुक्ताचार्य, सिद्धान्त वाचस्पति गुरुकुल झज्जर)

मनु जी ने बतलाया हैं कि—

'पितृदेवमनुष्याणां वेदश्चक्षुः सनातनम्' (१--९४)

पितर, देव और साधारण मनुष्य सभी के लिये वेद ही सनातन चक्षु है, अर्थात् सभी को वेदरूपी ज्ञान-चक्षु से ही मार्ग को देखकर चलना चाहिये। वेद विहित कर्मों का अनुष्ठान और निषिद्ध कर्मों का त्याग करना चाहिये। किन्तु आजकल वेदों का पठन-पाठन न होने से प्रायः लोग इनसे अनभिज्ञ हैं। अनभिज्ञ ही नहीं, अपितु सहस्रों और लक्षों नर-नारी ऐसे मिलेंगे जिन्होंने दर्शन की तो बात दूर रही, वेदों का नाम तक न सुना होगा।

आधुनिक अधिकतर नर-नारियों ने केवल द्रव्योपार्जन ही अपना ध्येय बना रक्खा है, चाहे वह जघन्यतम उपाय या साधन से भी प्राप्त क्यों न हो, इसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं। वे मदान्ध की भान्ति द्रव्योपार्जनान्ध होकर अपनी मान-मर्यादा का किञ्चिन्मात्र भी ध्यान नहीं रखते। उठते-बैठते, खाते-पीते, उन्हें सर्वदा सर्वत्र यही ध्यान और धुन लगी रहती है कि रुपया किस प्रकार प्राप्त हो। टका ही आराध्य देव बना हुआ है—

टका धर्मः टका कर्म टका हि परमं पदम्।
यस्य गृहे टका नास्ति हा टका टकटकायते॥

प्राचीनकाल में सभी वेदों को धर्म समझकर पढ़ते थे, गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का अधिकार तभी होता था जब ब्रह्मचारी कम से कम एक वेद का अध्ययन कर चुके।

वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्।
अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहाश्रममाविशेत्॥
(मनुस्मृतिः)

व्याकरण महाभाष्य में भी लिखा है—

"ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च" ब्राह्मण का निष्प्रयोजन धर्म है कि वह अर्थ सहित साङ्गोपाङ्ग वेदों का अध्ययन करे।

नास्ति वेदात्परं शास्त्रम्। (अत्रि संहिता)
धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः॥
(मनुस्मृतिः)

वेद से बढ़कर अन्य कोई शास्त्र नहीं और धर्म = कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य कर्म के ज्ञान के लिये वेद ही परम प्रमाण है। आज का संसार वेद से विमुख हो रहा है, इसी लिये दीन-हीन और दुःखी है तथा व्यभिचार, चोरी, झूठ, हिंसा = मार काट, गोहत्या, नरहत्या, मद्य-मांस, तम्बाकू आदि का सेवन, दुर्भिक्ष, अनावृष्टि, अतिवृष्टि आदि अनेक दुष्कर्म तथा उत्पातों की भरमार हो रही है। ऋग्वेद में सात मर्यादाओं का उल्लेख है। जो इन मर्यादाओं के अनुसार अपना आचार व्यवहार नहीं रखता था उसको कठोर दण्ड मिलता था।

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासा-
मेकामिदभ्यंहुरोऽगात्।
आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीडे पथां
विसर्गे धरुणेषु तस्थौ॥
(ऋ० १०-५-६)

इस मन्त्र के पूर्वार्द्ध की व्याख्या करते हुये यास्काचार्य लिखते हैं—

"सप्तैव मर्यादाः कवयश्चक्रुस्तासामेकामप्यभिगच्छन्नंहस्वान् भवति -स्तेयं तल्पारोहणं ब्रह्महत्या भ्रूणहत्या सुरापानं दुष्कृतस्य कर्मणः पुनः पुनः सेवां पातकेऽनृतोद्यमिति" (निरुक्त २-५)

बुद्धिमानों ने सात ही मर्यादायें निश्चित की हैं, उनमें से यदि कोई एक का भी सेवन करता है तो वह पापी होता है। वे सात मर्यादायें ये हैं—

१. स्तेयम् = चोरी करना।
२. तल्पारोहणम् = परस्त्रीगमन।
३. ब्रह्महत्या = वेदविद् ब्राह्मणों की हत्या।
४. भ्रूणहत्या = गर्भपात।

५. सुरापानम्=शराब पीना।

६. दुष्कृतस्य कर्मणः पुनः पुनः सेवा=किसी पाप कर्म को बार-बार करना।

७. पातकेऽनृतोद्यम्=दुष्कर्म करने पर उसके छिपाने के लिये झूठ बोलना।

इन्हीं सात मर्यादाओं की मनु महाराज ने पाञ्च-महापातकों में गणना की है--

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः।
महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापि तैः सह ॥(११-५४)

ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी करना, गुरु की स्त्री से व्यभिचार और इनके संसर्ग में रहना–ये पांच महापाप हैं। अत्रि संहिता में भी इसी प्रकार लिखा है।

ब्रह्महा प्रथमश्चैव द्वितीयो गुरुतल्पगः।
तृतीयश्च सुरापोऽयं चतुर्थः स्तेन एव च ॥
पापानां चैव संसर्गः पञ्चकं पातकं महत् ॥

इन पापियों के लिये जो दण्ड या प्रायश्चित्त मन्वादि महर्षियों ने बतलाया है वह संक्षेप से लिखता हूँ।

१. ब्रह्महत्या—

निम्निलिखित पापियों को भी ब्रह्महत्या के सदृश माना गया है—

अनृतं च समुत्कर्षे राजगामि च पैशुनम्।
गुरोश्चालीकनिर्बन्धः समानि ब्रह्महत्यया ॥
(मनु० ११-५५)

अपने आपको श्रेष्ठ बतलाने के लिये झूठ बोलना अर्थात् न होते हुए भी "ब्राह्मणोऽहम्" "पण्डितोऽहम्" मैं ब्राह्मण हूँ, मैं पण्डित हूँ इत्यादि मिथ्या बतलाना। राजा के पास किसी पर मिथ्या दोषारोपण करना जिससे उसे मृत्यु का दण्ड मिले। अपने गुरु की मिथ्या प्रशंसा करना, ये तीनों भी ब्रह्महत्या के समान हैं।

ब्रह्महा द्वादश समाः कुटीं कृत्वा वने वसेत्।
भैक्ष्याश्यात्मविशुद्ध्यर्थं कृत्वा शवशिरोध्वजम् ॥
(मनु० ११-७२)

ब्रह्महत्या करने वाला आत्म-शुद्धि के लिये मरे हुये शव के शिर की ध्वजा बनाकर भिक्षा का अन्न खाता हुआ जङ्गल में कुटी बनाकर बारह वर्ष तक निवास करे।

अथवा—कृतवापनो नवसेद् ग्रामान्ते गोव्रजेऽपिवा।
आश्रमे वृक्षमूले वा गोब्राह्मणहिते रतः ॥
(मनु० ११-७८)

केश नख दाढ़ी मूछ आदि सब मुँडवा कर गौ तथा ब्राह्मणों की सेवा शुश्रूषा करता हुआ ग्राम के समीप गोशाला में या वृक्ष के नीचे निवास करे।

२—भ्रूणहत्या=गर्भपात—

हत्वा गर्भमविज्ञातमेतदेव व्रतं चरेत ॥
(मनु० ११-८७)

गर्भपात करने वाले के लिये भी ब्रह्महत्या के समान ही दण्डविधान है। यमस्मृति में इतना और विशेष उल्लेख है—

भ्रूणघ्ने देहि मे भिक्षामेनो विख्याप्य सञ्चरेत्।
एककालं चरेद् भैक्ष्यं तदलब्ध्वोदकं पिबेत् ॥

भ्रूणघाती अपने पाप को बतलाता हुआ कि "मुझ भ्रूणहा के लिये भिक्षा दे" इस प्रकार कहता सर्वत्र भ्रमण करता रहे और एक समय भिक्षा का भोजन करे, यदि भिक्षा न मिले तो जल पीकर सन्तोष करे।

३—सुरापान—

सुरा वै मलमन्नानां पाप्मा च मलमुच्यते।
तस्माद् ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्च न सुरां पिबैत् ॥
(मनु० ११-९३)

सुरा (शराब) अन्नों का मल है और मल का अभिप्रायार्थ है पाप, इसलिये ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य सुरापान न करें। 'यथैवैका तथा सर्वाः' (मनुस्मृति) जैसे एक प्रकार की शराब अपेय है उसी प्रकार सभी भांति की सुरा नहीं पीनी चाहियें। ऋग्वेद में भी "हृत्सु पीतासो युध्यन्ते दुर्मदासो न सुरायाम्" इत्यादि मन्त्र में सुरापान की निन्दा की है। निम्नलिखित कर्म भी सुरापान के सदृश ही माने गये हैं—

ब्रह्मोज्झता वेदनिन्दा कौटसाक्ष्यं सुहृद्वधः।
गर्हितानाद्ययोर्जग्धिः सुरापानसमानि षट् ॥
(मनु० ११—५६)

पढ़े हुए वेद को अनभ्यास से भूल जाना, वेदों की निन्दा करना, साक्षी देते समय झूठ बोलना, मित्र का वध करना, गर्हित=निषिद्ध लहशुन, प्याज, तम्बाकू आदि का सेवन करना और अनाद्य=अभक्ष्य मांस, मल मूत्र से

उत्पन्न शाक आदि का खाना—ये छः सुरापान के समान ही कर्म हैं।

अज्ञानाद्वारुणीं पीत्वा संस्कारेणैव शुध्यति।
मतिपूर्वमनिर्देश्यं प्राणान्तिकमिति स्थितिः॥
(मनु० ११-१४६)

अज्ञान से शराब पीने वाला संस्कार से शुद्ध हो सकता है किन्तु ज्ञानपूर्वक शराब पीने वाले के लिये प्राणान्तिक = मृत्यु दण्ड का विधान है।

सुरां पीत्वा द्विजो मोहादग्निवर्णां सुरां पिबेत्।
तया काये निर्दग्धे मुच्यते किल्विषात्ततः॥
(मनु० ११-९०)

यदि कोई द्विज = ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य मद्यपान कर ले तो वह अग्निरूपी सुरा का पान करे, उससे शरीर के भस्म हो जाने पर पाप से मुक्त होता है। यमस्मृति में भी मद्यप के लिये इसी प्रकार का दण्डविधान है।

स्त्रियों के लिये भी मद्यनिषेध का विधान है—

पतत्यर्धं शरीरस्य भार्या यस्य सुरां पिबेत्।
(प्रायश्चित्तमयूखे)

शास्त्रकारों ने पत्नी को अर्धाङ्गिनी माना है। अतः जिसकी स्त्री शराब पीती है उसका आधा भाग पतित हो जाता है—अर्थात् सुरापान करने से स्त्री अपने धर्म से पतित हो जाती है।

पतिलोकं ना सा याति या ब्राह्मणी सुरां पिबेत्।
इहैव सा शुनी गृध्री शूकरी चापजायते॥
(याज्ञवल्क्यस्मृति ३-२५६)

सब से श्रेष्ठ होने से तथा प्रधानाप्रधानन्याय से ब्राह्मणी का ग्रहण किया है। जो स्त्री सुरापान करती है वह पतिलोक को प्राप्त नहीं होती, अर्थात् मनुष्य योनि में जन्म नहीं मिलता, अपितु वह अपने दुष्कर्म के फलस्वरूप कुत्ते, गिध, सूअर आदि की योनि में जन्म लेती है।

४-तल्पारोहण = पर स्त्री गमन

परदाराभिमर्शेषु प्रवृत्तान्नॄन्महीपतिः।
उद्वेजनकरैर्दण्डैश्छिन्नयित्वा प्रवासयेत्॥
(मनुस्मृतिः ८-३५२)

परस्त्रीगामी पुरुषों को राजा उद्वेजनकरदण्ड = नाक, कान, ओष्ट आदि कटवाकर अपने देश से बाहर निकाल दे। अथवा—

पुमांसं दाहयेत्पापं शयने तप्त आयसे।
अभ्यादध्युश्च काष्ठानि तत्र दह्यत पापकृत्॥
(मनुस्मृतिः ८-३७२)

व्यभिचारी पुरुष को राजा लोहे के तप्त पलङ्ग पर डालकर अनेक स्त्री-पुरुषों के समक्ष जला दे और ऊपर से वहीं पर अन्य काष्ठ भी डाल दे जिस से वह पापी भस्मसात् हो जावे।

यदि स्त्री परपुरुषगामिनी हो तो उसे पति अपने घर में कैदी की भान्ति रक्खे, और वह फिर भी ठीक न रहे तो राजा उसे—

भार्तारं लङ्घयेद् या तु स्त्री ज्ञातिगुणदर्पिता।
तां श्वभिः खादयेद्राजा संस्थाने बहुसंस्थिते॥
(मनु० ८-३७१)

जो स्त्री पितृकुल में धन ऐश्वर्य के अधिक होने से या अपने सुन्दर रूपादि के घमण्ड से अपने पति को छोड़कर व्यभिचार करे तो राजा उस दुराचारिणी को जन-स्थान (सार्वजनिक जगह) में अनेक स्त्री, पुरुषों के समक्ष कुत्तों द्वारा मरवा डाले।

रेतःसेकः स्वयोनिषु कुमारीष्वन्त्यजासु च।
सख्युः पुत्रस्य च स्त्रीषु गुरुतल्पसमं विदुः॥
(मनु ११-५८)

कुटुम्ब की बहिन आदि, कुमारी, चाण्डाली, मित्र की स्त्री और पुत्रवधू इनसे व्यभिचार करना भी गुरुपत्नी समागम के सदृश ही है। अर्थात् इन पापियों को भी गुरुतल्पग के समान ही दण्ड मिलना चाहिये। मनु जी लिखते हैं—

गुरुतल्प्यभिभाष्यैनस्तप्ते स्वप्यादयोमये।
सूर्मीं ज्वलन्तीं स्वाश्लिष्येन्मृत्युना स विशुद्ध्यति॥
(मनु० ११-१०३)

गुरुपत्नीगामी तथा उपर्युक्त अन्य पापी, अपने पाप को सब के समक्ष प्रकट करता हुआ तपे हुये लोहे के पलङ्ग पर सो जावे। अथवा लोहमयी स्त्री प्रकृति

बनाकर उसका जलती हुई का आलिङ्गन करे, क्योंकि यह पापी मृत्यु से ही शुद्ध हो सकता है।

५—स्तेयम् = चोरी करना।

येन येन यथांगेन स्तेनो नृषु विचेष्टते।
तत्तदेव हरेत्तस्य प्रत्यादेशाय पार्थिवः॥
(मनुस्मृतिः ८-३३४)

जिस जिस अङ्ग से चोर चोरी करे उसका वही अंग राजा उसके पाप के छुड़ाने के लिये कटवा दे। यदि फिर भी चोर अपने स्वभाव को न छोड़े तो उसके लिये 'वधेन शुद्ध्यति स्तेनः' (मनु० ११--१००) इत्यादि श्लोक में वध की आज्ञा है।

६—पातकेऽनृतोद्यम् = पाप करने पर झूठ बोलना।

पाप को छिपाने के लिये झूठ बोलना दुगुणा पापी बनना है। पाप छिपने से कभी कम नहीं हो सकते, अपितु बढ़ते ही रहते हैं। हमारे शास्त्रों में सत्य को परम धर्म और असत्य को महापाप बतलाया है 'न हि सत्यात् परो धर्मो नानृतात्पातकं परम्' अर्थात् 'सत्य बराबर धर्म नहीं, झूठ बराबर पाप'। सर्वथा सत्य की ही विजय होती है 'सत्यमेव जयति नानृतम्' मनु जी ने भी कहा है—

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः॥

सर्वदा सत्य भाषण ही करना चाहिये वह भी अप्रिय = कर्ण कटु न हो, यथा काणे को काणा कहना इत्यादि। प्रिय तो बोलना चाहिये किन्तु वह भी मिथ्या न हो, यही सनातन वेदोक्त धर्म है।

दुर्जनों वा पापियों के संसर्ग से मनुष्य वैसा ही पापी बन जाता है। यथा महाभारत के समय भीष्म, द्रोण आदि के समक्ष द्रौपदी का दुर्योधन ने अपमान किया, किन्तु उन्होंने कुछ भी न कहा।

असतां सङ्गदोषेण साधवो यान्ति विक्रियाम्।
दुर्योधनप्रसङ्गेन भीष्मो गोहरणे गतः॥ (महाभारते)

दुर्जनों के संग से सज्जन भी बिगड़ जाते हैं यथा दुर्योधन के संसर्ग में रहने के कारण भीष्म-पितामह भी राजा विराट् की गायें चुराने के लिए गये। इस लिये पापियों के साथ कभी भूल कर भी न रहना चाहिये। सर्वदा अपने से श्रेष्ठ या उच्च महात्मा का सत्संग करना चाहिये।

इस प्रकार जब विपथगामी पापियों को दण्ड दिया जाता था तथा वेदशास्त्रों के अनुसार सब राजशासन आदि कार्य होते थे तब प्रथम तो कोई दुष्कर्म करता नहीं था, और यदि कोई कर भी देता था तो उसे कठोर दण्ड मिलता था या वध कर दिया जाता था। इसलिये सब सुखपूर्वक पवित्र जीवन व्यतीत करते थे। ऐसे ही समय में महाराज अश्वपति ने ऋषियों के समक्ष कहा था कि—

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥
(छान्दोग्योपनिषद्)

मेरे राज्य में न कोई चोर लुटेरा है और न कंजूस तथा शराबी ही है, सब अग्निहोत्रादि वैदिक कर्म करने वाले विद्वान् हैं मूर्ख कोई भी नहीं, तथा सबसे उत्तम बात यह है कि एक भी पुरुष दुराचारी नहीं फिर व्यभिचारिणी स्त्री तो हो कैसे सकती है। क्या आजकल का कोई भी राजा इस प्रकार कह सकता है?

यह "सप्त मर्यादा" मन्त्र के पूर्वार्द्ध की व्याख्या हुई। इसी मन्त्र के उत्तरार्द्ध में सुन्दर उपदेश दिया है कि जो व्यक्ति इन दुष्कर्मों में नहीं फंसता तथा वेदोक्त धर्म का पालन करता है वह सुख शाँति के भण्डार जीवनाधार परमात्मा को प्राप्त कर मोक्ष सुख का उपभोग करता है।

मनुजी ने भी यही कहा है—

श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः।
इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्॥
(अ० २ श्लो० ६)

जो मनुष्य श्रौत और स्मार्त धर्म का अनुष्ठान करता है वह इस संसार में यश का भागी होता है और मरकर अनुत्तम सुख (मोक्ष) का उपभोग करता है।

हमारे शास्त्रों में यम१ नियम२ आदि मोक्ष के साधन बतलाये हैं। मनुजी ने भी लिखा है—

वेदाभ्यासस्तपो ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः।
अहिंसा गुरुसेवा च निःश्रेयस्करं परम् ॥
(अ० १२ श्लों० ८३)

वेदों का पढ़ना पढ़ाना, ब्रह्मचर्यादि३ श्रेष्ठ तपों का अनुष्ठान करना, सब पदार्थों का यथार्थ ज्ञान४ प्राप्त करना, इन्द्रियों को वश में रखना, अहिंसा और गुरु-सेवा ये मोक्ष के श्रेष्ठ साधन हैं।

वेद सब विद्याओं का आदि स्रोत (उद्गम स्थान) है--

चातुर्वर्ण्यं त्रयो लोकाश्चत्वार आश्रमाः पृथक्।
भूतं भव्यं भविष्यं च सर्वं वेदात्प्रसिद्ध्यति ॥
(मनु० २-९७)

ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि चारों वर्ण, पृथिवी आदि तीनों लोक, तथा लोकान्तर, ब्रह्मचर्यादि चारों आश्रम, भूत भविष्यत् और वर्तमान जो भी कुछ पदार्थ-जात है सब वेद से सिद्ध होता है। इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को वेदों को अध्ययन कर अपनी मनुष्य योनि को सफल बनाना चाहिये। यदि मनुष्य जन्म पाकर भी कोई ईश्वरीय ज्ञान वेद से वञ्चित रहे तो उसका दुर्भाग्य ही है।

योऽनीधत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥
(मनु० २-१६८)

जो द्विज=ब्राह्मण क्षत्रिय तथा वैश्य वेद को न पढ़कर अन्यत्र परिश्रम करता है वह इसी जन्म में शीघ्र ही सपरिवार शूद्र बन जाता है।

सम्पूर्ण मन्त्र का शब्दार्थ इस प्रकार है—

(कवयः सप्त मर्यादाः ततक्षुः) बुद्धिमानों ने सात मर्यादायें निश्चित की हैं (तासां एकां इत्-अभ्यगात्) उनमें से एक का भी सेवन करने वाला (अंहुरः) पापी होता है। जो इनसे पृथक् रहता है वह (ह) निश्चयेन (आयोः स्कम्भे) जीवन के आधार (उपमस्य नीडे) सुख शान्ति के भण्डार [धाम] (पथां विसर्गे) नाना मार्गों से रहित परमेश्वर में एवं (धरुणेषु) उसकी धारक शक्तियों में (तस्थौ) स्थित रहता है, परान्तकाल तक मोक्ष सुख का उपभोग करता है। यही इस मानव जीवन का उच्चतम तथा अन्तिम ध्येय है। ओ३म् शम्

पृष्ठ ६ का शेष

इसी प्रकार शास्त्रार्थ, शुद्धि और गोहत्या निषेध आन्दोलन पर आर्यों को बल लगाना चाहिये।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि स्वयं तथा अप बालकों को आर्ष शैली के आधार पर संस्कृत ग्रहण क और करावें। फिर वेद का स्वाध्याय किया जावे। वेदाङ्ग पर मनन किया जावे। यह सब कुछ स्वाध्याय के बल से हो सकता है। शास्त्रों में वेद और वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय की बड़ी महिमा पाई जाती है। स्वाध्याय के बल से आर्य लोग आत्मिक उन्नति पथ पर आरूढ हो सकते हैं।

सुधारक का उद्देश्य यही है कि आर्यत्व का प्रचा हो। कुरीतियों से हटकर वेदोक्त कर्मकाण्ड पर चल जावे। इस प्रवृत्ति को बढ़ाने का मार्ग एक और केवल एव यही है कि हमें अन्य गौण बातों पर विशेष बल न देक वेदप्रचार पर ही पूर्ण शक्ति लगानी चाहिये। इसी हम अपनी बिगड़ी दशा को सुधार सकेंगे और आगे ब सकेंगे। वेद ही आर्यों का प्राण है। इसके रहते सब कु है इसके न होने पर कुछ भी नहीं। अतः सर्वात्मना वे प्रचार को आधार मानकर अपना कार्यक्रम बनाना आर्य का परम कर्तव्य है।

“सुधारक” पाठकों की दृष्टि में

‘व्यायाम सन्देश’ अंक अत्युत्तम है। प्रत्येक छात्र क लिये परमोपयोगी है। ऐसे सुन्दर अंक के लिये श्री आचार्य जी धन्यवाद के पात्र हैं।

श्री शिवपूजनसिंह वैदिक गवेषक
साहित्यालंकार, सि० वाचस्पति (कानपुर)

१—अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः। (योगदर्शन)

२—शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ॥ (योगदर्शने)

३—ब्रह्मचर्यं तप उत्तमम्। (सुभाषित)

४—ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः। (सां०)

यज्ञ का महत्व

(लेखक—मिस्त्री बुद्धराम आर्य कान्हौरी—गुड़गावाँ)

संसार में जितने भी शुभकर्म हैं उन सभी को यज्ञ शब्द से कह सकते हैं। क्योंकि यज्ञ की परिभाषा ऋषि-मुनियों ने 'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म' अर्थात् जितने भी श्रेष्ठ कर्म हैं वे सब यज्ञ हैं, अथवा यज्ञ निश्चय ही श्रेष्ठ कर्म है, की है। किन्तु हमारा यहां यज्ञ से अग्निहोत्र का अभिप्राय ही है।

प्राचीनकाल में जब सामूहिक एवं घर-घर में यज्ञ होते थे तब सभी प्रजा सुख, शान्ति से निज जीवन यात्रा व्यतीत करती थी। कभी दुर्भिक्ष नहीं होता था। समय-समय पर यथेच्छ वर्षा होती थी। किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं था। किन्तु जब से इस परम पवित्र कर्म का विलोप हुआ तब से लोग दुःखी और अधोगति को प्राप्त होते जा रहे हैं। आजकल यज्ञ का स्थान हुक्के और मद्यपानादि ने ग्रहण कर लिया है। महर्षि की कृपा से तथा आर्यसमाज के प्रचार से आजकल कुछ सज्जन लोगों के हृदय में यज्ञ के प्रति श्रद्धा और स्थान का अवशेष है। इसी लिए आजकल स्थान-स्थान पर यज्ञों का आयोजन होता रहता है। अस्तु !

झज्जर शहर में गतमास एक सप्ताह पर्यन्त एक यज्ञ का आयोजन हुआ। जिस में महात्मा टेकचन्द जी और श्री ब्रह्मचारी प्रभुदत्त आदि अनेक महानुभाव पधारे। यज्ञ की पूर्णाहुति २८-८-५४ को हुई। पूर्णाहुति के दिन मेरा भी सौभाग्य से जाना हुआ और गुरुकुल झज्जर में भवन निर्माण कर्तृमण्डल ने भी यज्ञ में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट की। वे भी निज कार्य छोड़कर मेरे साथ ही हो लिए। यज्ञ में श्री महात्मा जी के भाषण एवं श्री आचार्य भगवान्देव जी के व्याख्यान से अनेक महानुभावों ने धूम्रपानादि दुर्गुणों का त्याग किया। श्री आचार्य जी का व्याख्यान भी इसी विषय पर था—

"यज्ञ एक परम पवित्र कर्म है। कोई न कोई निज जीवन में खटकने वाले दोषों का ऐसे पवित्र अवसरों पर अवश्य परित्याग करना चाहिये। कुछ विचार करो, यदि मनुष्य प्रतिदिन एक अवगुण का परित्याग करे तो वर्ष भर में ३६५ दुर्गुण दूर होते हैं। यदि यह न हो सके तो वर्ष में ५२ सप्ताह होते हैं, यदि मनुष्य प्रति सप्ताह एक दुर्गुण का परित्याग करे तो ५२ दुर्गुणों से मुक्त हो है। यदि यह भी न हो सके तो साल में १२ मास होते हैं। यदि प्रति मास एक दुर्गुण का परित्याग करे तो १२ दुर्गुण छूट जाते हैं।"

इस भाषण को सुनकर अनेक सज्जनों के हृदय में उत्साह पैदा हुआ और उन्होंने महात्मा जी के समक्ष प्रतिज्ञा की कि आज से हम अमुक-अमुक दुर्गुणों से मुक्ति पाते हैं। जिन में हमारे भवन निर्माण कर्मचारी विशेष उल्लेखनीय हैं।

१—श्री महाशय शिवलाल जी सूलोधा (रोहतक)
२—श्री ,, रामनाथ जी ,, (रोहतक)
३—श्री ,, चन्द्रभान जी ,, (रोहतक)
४—श्री ,, छोटूराम जी ,, (रोहतक)
५—श्री मिस्त्री भगवान्देव जी आर्य शेरपुर (गुड़गावाँ)

उपर्युक्त व्यक्ति बाल्यकाल से ही हुक्के के चक्र में थे। हुक्का इन्हें बुरी तरह से चिपटा हुआ था ? इस विष का सर्वथा सहर्ष इन्होंने परित्याग किया। मिस्त्री जी ने निज क्रोधित स्वभाव को सुशील बनाने की प्रतिज्ञा की। और सभी ने यज्ञोपवीत भी धारण किया। मैं भी जब से ये कार्य के लिए मेरे पास आने लगे थे, तभी से हुक्के के छुड़ाने में प्रयत्नशील था। मैंने इनको लाभ हानि का भी परिज्ञान कराया। जिस से यह विष के प्याला इनके हाथ से छीन कर दूर फेंका जा सका। मैं भी यह प्रतिज्ञा करता हूं कि जिस प्रकार से इन व्यक्तियों के दुर्गुण मोचन में सहायक हुआ हूं आगे भी जहां कार्य करूँगा वहाँ भी इसी प्रकार यथाशक्ति प्रयत्न करूंगा। मैं प्रार्थना करता हूं कि परमपिता परमात्मा मुझे इस कार्य में अधिक शक्ति प्रदान कर सफलता देवे।

राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान

(श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति)

[३—गतांक से आगे]

सूचना—नीचे लिखी पङ्क्तियां प्रथम प्रश्न के अन्त में जोड़कर पढ़ें ।

"शूद्र को दास भी कहते हैं, दास का अर्थ स्लेव (slave) नहीं है, दास शब्द 'दस उपक्षये' धातु से बनाता है—दस्यन्ति उप = समीपे क्षियन्ति निवसन्तीति दासा:, कर्म कर्तुं तत्परा: सेवका:, सहायका:, एटेण्डेण्टसे (Attendants) । इस प्रकार सहायक वर्ग के व्यक्ति जो आदेशों को पूर्ण करने के लिये सर्वदा सन्नद्ध और उपस्थित रहते हैं, उनको दास शब्द से कहा जाता है ।"

पूर्वकाल में पड़ी हुई उनकी जड़ों और अंकुरों को दूर करना, पिछली आयु में अति कठिन हो जाता है। यह कठिनता उस प्रकार समझनी चाहिये जिस प्रकार कपड़े का ठीक प्रकार उपयोग न जानने वाला और न करने वाला व्यक्ति ,दृढ कपड़े को भी शीघ्र जीर्ण कर डालता है। और दरिद्रता के कारण नया कपड़ा खरीदने में असमर्थ हुआ, पुराने जीर्ण कपड़े में ही टिकलियां लगा लगा कर उसी जीर्ण कपड़े से अपना काम निकालना चाहता है और अपने किये पर पश्चात्ताप करता है कि उसने अपने असंयमित स्वभावों पर विजय न पाकर और कुसङ्ग में पड़कर अपना नाश कर लिया है । इसलिये गुरुकुल ब्रह्मचर्याश्रम जो राष्ट्रोन्नति का आधार है उसमें ब्रह्मचर्य व संयमी जीवन पर बड़ा बल दिया गया है । इसके बिना गुरुकुल के कार्य की सिद्धि नहीं हो सकती ।

वर्तमान राष्ट्र प्रणाली में जो कुछ हो सकता है वह इतना ही, कि गुरुकुल के पास अधिक से अधिक जितनी भूमि हो उस भूमि में कृषि और शाक-भाजी तथा फल फूल, साथ ही कपास उत्पन्न की जावे । इस सम्पूर्ण कार्य में जहां तक हो सके ब्रह्मचारी कार्य करें । कृषि के साथ गोसेवा अत्यावश्यक है, ये दोनों साथ-साथ चलते हैं। इन दोनों का विज्ञान किसी जानकार, निपुण, अनुभवी कृषक और गोसेवक को शिक्षक तथा निरीक्षक के रूप में रख कर भूमि और गायों की उन्नति कराई जाये । इस प्रकार जो व्यक्ति गुरुकुल में कार्य करते हों वे सब पारस्परिक, क्रियात्मक सहयोग से कार्य करें । गुरुकुल में उतने ही व्यक्ति रहें जितनों को गुरुकुल भूमि सम्भाल सकती है ।

जहां तक हो सके, गुरुकुल निवासियों का जीवन अर्पित और स्वावलम्बी हो, नौकर होकर कोई व्यक्ति न रहे, सब व्यक्तियों को गुरुकुल का अङ्ग होकर रहना चाहिये । इस प्रकार गुरुकुल का जीवन व्यतीत होते हुए, कुछ वर्ष के पश्चात् स्वावलम्बी तथा धनियों के आगे हाथ न पसारने वाला बन सकेगा । संख्या बढ़ाने का प्रयत्न दिखावे के लिये तथा नाम के लिये नहीं करना चाहिये । इसी प्रकार जिन व्यक्तियों को अपनी तपस्या और संयम द्वारा कम किया जा सकता है उनको क करना चाहिये । शेष सब कुछ स्थानीय विचारशील अनुभवी परिश्रमी निर्लोभी और जीवन समर्पण करने वाले कुशल व्यक्तियों पर निर्भर है । भूमि गोमाता है उस पर गाय, गोमाता का जीवन है ।

शिक्षकों का जीवन शिष्यों पर और शिष्यों का जीवन शिक्षकों पर आश्रित है । और सबका जीवन अपने अपने कर्मानुसार परमात्मा पर आश्रित है ।

हम समझते हैं, हमने इस विषय में पर्याप्त प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है, तो भी यदि किन्हीं महानुभावों को विशेष पूछने की आवश्यकता हो तो अवश्य पूछें, हम उत्तर देने का पूर्ण प्रयत्न करेंगे, क्योंकि इस विषय पर अधिक से अधिक विचार होने की आवश्यकता है ।

(५) गुरुकुलों का प्रसार ।

पुराने समय में गाँव-गाँव में गुरुकुल होने के कारण सम्पूर्ण राष्ट्र में गुरुकुलों का जाल बिछा हुआ था। प्रत्येक देवालय में एक योग्य विद्वान् शिक्षक रहता था, उसके पास छोटी छोटी अनेक कुटियों में ब्रह्मचारी (छात्र) ज्ञान विज्ञान की शिक्षा ग्रहण करते थे। जिस विषय का वह विशेषज्ञ होता था उस विषय को समझाने के लिये देवालय में मूर्ति और नक्शों की स्थापना होती थी। उन मूर्तियों और नक्शों के द्वारा उस विषय का विद्वान् = वह देव अपने ब्रह्मचारियों को उसी प्रकार अपने विषय का स्पष्टीकरण कराता था जिस प्रकार आजकल सामान्य अध्यापक नक्शों के द्वारा, और विषय को स्पष्ट करने वाले मौडल्स के द्वारा विद्यार्थियों को शिक्षणालयों के अन्दर ज्ञान ग्रहण कराया करते हैं।

गत समय प्रत्येक देवालय शिक्षणालय होता था। गांव के बाहर और समीप ये शिक्षणालय समाज के व्यक्तियों के लिये; शिक्षण के साथ-साथ प्रचार का कार्य भी करते थे। सायं और प्रातःकाल गांव के लोग उस विद्वान् शिक्षक (देव) के पास जाकर अनेक प्रकार की शिक्षा ग्रहण करते थे, जिससे उनके जीवन योग्य मार्ग में चलते थे और उनके जीवन में सुख तथा शान्ति विद्यमान रहती थी। जिस धार्मिक शिक्षण के लिये लोग तरसते हैं और चाहते हुए भी उत्तम जीवन की शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते, वह धार्मिक शिक्षा पूर्वोक्त प्रकार से देश में प्रसारित हो रही थी। ब्रह्मचारियों और उनके शिक्षक आचार्य के लिये गृहस्थी लोग प्रत्येक पक्ष या मास के पश्चात् या साप्ताहिक कुछ न कुछ भेंट के रूप में अर्पित किया करते थे। इस अर्पण में आटा, घी, दाल-शाक, सब्जी आदि साधारण पदार्थ तथा कुछ नक़द नारायण भेंट हुआ करती थी। इस प्रबन्ध के द्वारा ब्रह्मचारियों और उनके विद्वान् आचार्य देव का भरण-पोषण आदि कार्य सुव्यवस्थित चला करता था।

छोटे देवालयों में से शिक्षक द्वारा चुने हुये ब्रह्मचारी बड़े देवालयों में जाया करते थे, जहां उन्हें उच्चकोटि की ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा दी जाया करती थी। और इसी प्रकार वहां से चुने हुये ब्रह्मचारी अति उच्च शिक्षण प्राप्त करने के लिये अति उच्च शिक्षणालयों में जाया करते थे और अति उच्च शिक्षण का लाभ प्राप्त करते थे। सब का निर्वाह पूर्वोक्त प्रकार से दिखलाई गई भिक्षावृत्ति द्वारा हुआ करता था। समझदार ब्रह्मचारी स्वयं भी भिक्षावृत्ति के लिये समीप के ग्रामों में जाते और अपने आचार्यों की सेवा करते थे।

शिक्षण पद्धति में वेतन का कहीं प्रश्न नहीं था, किसी व्यक्ति के रोगी होने पर स्थानीय चिकित्सक बड़े भक्ति भाव से ब्रह्मचारियों की, आचार्यजनों की तथा ग्रामीण जनता की चिकित्सा किया करते थे। और उन चिकित्सकों को भी ग्रामीण जनता समय-समय पर अपने परिश्रम से प्राप्त फल का भागीदार बनाती थी, और किसी को भी वेतन की आवश्यकता नहीं थी।

प्रत्येक प्रकार के श्रमी-लोगों के लिये ग्रामीण जनता की ओर से भोजनालय और उपयोगी वस्तुओं के भण्डार होते थे, जहां से ग्रामीण जनता को भोजन वस्त्र आदि की उपयोगी सामग्री प्राप्त हो जाती थी। इस प्रकार वेतन का रुपयों के रूप में प्रचार होने और करने की आवश्यकता नहीं थी। ऐसा अपरिग्रह राज्य बड़ी शान्ति का धाम बनता था। मनुष्यों के पारिवारिक और सामाजिक कार्यों को गांव के लोग मिलकर उठा लेते थे। किसी को कोई कष्ट और चिन्ता नहीं होती थी।

पहले हम दिखा चुके हैं कि शिक्षण प्रणाली और चिकित्सा-प्रणाली किस प्रकार निःशुल्क हो सकती है और यह भी कहा जा चुका है कि अपरिग्रह-राष्ट्र होने के लिये हमें किस प्रकार आगे बढ़ना चाहिये। इसी को अधिक दृढ़ करने के लिये, आगे हम कुछ ऐसे निर्देश करना चाहते हैं; जिनके अनुसार कार्य करते हुये, हमारा राष्ट्र सब प्रकार से निर्दोष और दोष-मुक्त हो सकता है। सबसे पहले हमें यह देखना है, कि मनुष्यों को साधारणतः किन बातों की चिन्ता रहती है, और उन चिन्ताओं के कारण न तो वे राष्ट्र की उन्नति का ध्यान रख सकते हैं, और न ही अपने आपको, उत्तम राष्ट्र के योग्य बना सकते हैं। यदि जनता के व्यक्तियों पर से आगे कही जाने वाली चिन्ताएँ दूर करदी जायें. तो राष्ट्र के व्यक्तियों को, अपने आपको राष्ट्र

के योग्य हो सकने का पूर्ण अवसर मिलेगा, और राष्ट्र, संसार की दृष्टि में समुन्नत राष्ट्र बनेगा, तथा विभिन्न प्रकार की, दुरवस्थायें लोगों में से दूर हो जायंगी, और मुकदमे, इत्यादि का व्यर्थ झंझट लोगों में से दूर होकर सच्चे अर्थों में राष्ट्र समुन्नत और आदर्श राष्ट्र बनेगा। जिस राष्ट्र में कोई चोर नहीं रहेगा, और न कोई झूठ बोलने वाला होगा, न ऐसा होगा जिसके जीवन का कोई लक्ष्य नहीं। कोई मनुष्य निरक्षर नहीं रहेगा तथा न कोई कंजूस होगा, और इस राष्ट्र में व्यभिचारी, और व्यभिचारिणी का अस्तित्व न होगा। ऐसा आदर्श राष्ट्र अश्वपति के उस राष्ट्र के सदृश बनेगा, जिसके लक्षण ऊपर दिखलाये हैं, और जिसका वर्णन उपनिषदों में आया है। अश्वपति ने ऋषियों को कहा है—न मे स्तेनो जनपदे, न कदर्यो न मद्यपः।

नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥"

इस प्रकार का राष्ट्र बनाने के लिए सबसे पहली आवश्यकता इस बात की है, कि राष्ट्र में ऐसी शिशुशालाओं की स्थापना हो, जिन शालाओं में राष्ट्र के बच्चों का पालन-पोषण, राष्ट्र की दृष्टि रखते हुये, योग्य रीति से हो, जिस योग्य रीति से बच्चों का पालन-पोषण घरों में नहीं हो पाता। जब बच्चे शिक्षणालय में जाने के योग्य हो जायें, तब सबको, पहिले दिखाई गई राष्ट्रिय गुरुकुलों की प्रणाली में शिक्षण प्राप्त करने के लिये भेजा जाये। इन गुरुकुलों में राष्ट्र की दृष्टि से, राष्ट्र के बालक, योग्य शिक्षण प्राप्त कर सकेंगे। अपनी सामर्थ्य के अनुसार पूर्ण शिक्षण प्राप्त कर चुकने के पश्चात् द्वितीय आश्रम में प्रवेश करने के लिये, योग्य रीति से उनका प्रवेश संस्कार, राष्ट्र के निर्दिष्ट व्यक्ति करायेंगे। संस्कार में किसी प्रकार का अनुचित व्यय न होकर राष्ट्र की दृष्टि से वर-वधू के कर्तव्य समझाये जायेंगे, और उनको राष्ट्र हित की दृष्टि से ही सन्तान उत्पन्न करनी होगी। जब द्वितीय आश्रम की अवधि समाप्त हो जायगी, और द्वितीय आश्रम के व्यक्ति, विरक्त जीवन के इच्छुक होंगे, तब राष्ट्र के प्रमुख व्यक्तियों के द्वारा आज्ञा प्राप्त हुये वे व्यक्ति विरक्त जीवन व्यतीत करेंगे।

साथ ही उन्हें, राष्ट्रिय गुरुकुल शिक्षणालयों में शिक्षण कार्य करते हुये राष्ट्र के बालकों को, राष्ट्र हित की दृष्टि से, योग्य शिक्षण देना होगा। इसके पश्चात् जो व्यक्ति पूर्ण विरक्त हो जायंगे, उन्हें राष्ट्रिय प्रमुख व्यक्तियों के आदेशानुसार—राष्ट्रिय जनता को सन्मार्ग पर चलाने के लिए इतस्ततः घूम फिर कर, राष्ट्रोन्नति में भाग लेना होगा।

इस प्रकार हमारी समाजव्यवस्था, और राष्ट्र व्यवस्था सुन्दर रूप से चलती रहेगी। राष्ट्र के सब व्यक्तियों को कम से कम आठ घण्टा या समय-समय पर जैसा उचित हो, उसके निर्देशानुसार कार्य करना होगा। राष्ट्र के समस्त व्यक्ति कुछ न कुछ उत्पन्न करेंगे, और अपनी योग्यतानुसार सभी को, उत्पादक श्रम करते हुये समय का सदुपयोग करना होगा—जनता के मनोरञ्जन के लिये, राष्ट्र की ओर से ही, मनोरञ्जन शालायें रहेंगी। जितनी भी उत्पादक श्रम द्वारा उत्पत्ति होगी वह सब, राष्ट्र की ओर से खुले हुये, स्थानीय गोदामों में जायेगी और वहाँ से सबको, यथायोग्य भोग्य सामग्री प्राप्त होगी। इस व्यवस्था के अनुसार न तो राष्ट्र के अन्दर बेकारी होगी, न फिजूल खर्ची। अश्रमी न होने के कारण सब व्यक्ति उचित स्वस्थ रहेंगे, बड़े-बड़े न्यायालय और वाद-विवाद करने वालों की विशेष आवश्यकता न रहेगी।

इस प्रकार यह राष्ट्र, आदर्श राष्ट्र बन सकेगा। जिसमें लोगों का जीवन संयमी परस्पर सहायक होगा, और चुराने के लिये कोई वस्तु किसी के पास संगृहीत न रहने से चोरी का भाव व्यक्तियों में से दूर हो जायगा। चोरी न होने से असत्य भी लोगों में न होगा। लोगों का जीवन संयमी होने से ब्रह्मचर्य का पालन यथेष्ट रहेगा, लोभ और असंयम न रहने से, लोग स्वस्थ, दीर्घजीवी, सुखी और आनन्द का जीवन व्यतीत करने वाले होंगे, किसी प्रकार का कष्ट उनके ऊपर न आ पड़ेगा। किसी प्रकार की कर व्यवस्था का बोझ उन पर न होगा। क्योंकि सब व्यक्ति राष्ट्र के प्रति अपने आप को ज़िम्मेवार समझेंगे। जो व्यक्ति अति वृद्ध, अशक्त, अंगहीन होंगे, कुछ उत्पादक श्रम न कर सकेंगे, उनका बोझ सम्पूर्ण राष्ट्र पर पड़ेगा।

प्रश्न ६—दोष और उनका निवारण कैसे हो?

उत्तर—वर्तमान अर्थ-शास्त्री जिन्होंने अर्थशास्त्र की रचना की है, जिनका अर्थशास्त्र धनिकों को दृष्टि में रखकर बना हुआ है, जिसके मूल में द्रव्यों के विनिमय

करने के लिये माध्यम निश्चित करने का विचार विद्यमान है और जो सुगमता के लिये किसी द्रव्य के स्थान में धातु आदि सिक्के के रूप में निश्चित हुआ है। यह माध्यम का विचार द्रव्यों के पारस्परिक विनिमय के लिये तो ठीक है, परन्तु इसके साथ इसके अपने दोष भी उपस्थित हुये हैं।

द्रव्यों का विनिमय सिक्के के रूप में जो चल रहा है उससे हम समझ रहे हैं कि उस सिक्के में बड़ी भारी शक्ति है और उस शक्ति को जो मनुष्य जितना अधिक संग्रह करता है वह उतना ही अधिक धनी कहलाता है। एक स्थान में शक्ति के अधिक संचय हो जाने से शिखर के दूसरे स्थान में उस संचय के मुकाबिले में गर्त्त को प्रकट करना है। जिसके पास अधिक शक्ति है वह उस शक्ति के प्रयोग से अधिक-अधिक शक्तिमान् होता जाता है और उसके अधिक शक्तिमान् हो जाने से उसके मुकाबिले में दूसरी ओर विशाल गर्त्त उपस्थित होता जाता है। शक्ति का संतुलन राष्ट्र में न रहने से तथा इस संतुलन के अधिक अधिक बिगड़ते जाने से राष्ट्र में विविध समस्यायें खड़ी हो जाती हैं। इन समस्याओं को दूर करने के लिए जो प्रयत्न किए जाते हैं वे सब भी साक्षात् या परम्परया उस शिखर और गर्त्त की समस्या को हल नहीं कर पाते, प्रत्युत अनेक स्थानों में शिखर और गर्त्त को अधिक पुष्ट करते हैं। शक्तिमान् पुरुष अपनी शक्ति के द्वारा लोगों के श्रम को खरीद लेते हैं। श्रमी लोग अशक्त होने के कारण सर्वदा के लिये उनके दास और कृपापात्र बन जाते हैं।

द्रव्य विनिमय का जो पूर्वोक्त विचार किया गया है उस विचार के द्वारा धन और श्रम का संतुलन नहीं रह सकता। धन का धन के साथ भी संतुलन नहीं होता, और श्रम के साथ धन का संतुलन तो सर्वथा ही नहीं होता। श्रम का श्रम के साथ तो होता है इसी विचार को लेकर गीता के अन्दर संतुलन (समत्वयोग) का सिद्धान्त प्रकट किया गया है। और यह सिद्धान्त साथ ही रक्खा गया है कि राष्ट्र में रहने वाले सभी व्यक्तियों को राष्ट्र हित की दृष्टि से श्रमी होना चाहिए, अर्थात् बिना श्रम के कर्म के कोई मनुष्य न रहे। यह कर्म साधारण कर्म नहीं, परन्तु राष्ट्र हित की दृष्टि से यह कर्म करना लिखा है।

श्रीकृष्ण के समय में विभिन्न राष्ट्रों में अर्थ की विषमता के कारण वे ही सब दोष उत्पन्न हुए थे जिनके निवारण के लिये गीता में समत्व योग या संतुलन का सिद्धान्त दिखलाया गया है। इसी सिद्धान्त के आधार पर नीच-ऊंच का भेद-भाव हटाकर यह कहा गया है कि श्रीकृष्ण जिस प्रकार का राष्ट्र चाहते हैं उसमें सबको आगे बढ़ने के लिये समान अवसर प्राप्त होगा। स्त्री, वैश्य और शूद्र भी अपनी योग्यतानुसार आगे बढ़ते हुये ऊँचे से ऊँचे पद को प्राप्त करने के अधिकारी होते हैं। धन की विषमता के कारण उनके ये अधिकार उस समय के राष्ट्रों में उन व्यक्तियों में से छिन चुके थे, जिनका ऊपर निर्देश किया गया है। इसी विषमता के अन्दर इन लोगों को ऐसी दुरवस्था होगई थी कि भरी सभा में एक कुलीन स्त्री का अपहरण हो सकता था। इस विषमता को दूर करने के लिये श्रीकृष्ण ने जाति भेद का निवारण समता के सिद्धान्त पर किया है। इसके साथ ही श्रम से उत्पन्न हुआ फल लोगों के अपने पास रहे तो भी विषमता उपस्थित हो जायगी, इसलिये गीता में सिद्धान्त किया है कि अपने किये श्रम का फल श्रम करने वाले को मिलेगा यह धारणा मन से निकाल देनी चाहिये। इसका यह तात्पर्य हुआ कि श्रम जनित वस्तुओं के द्वारा भी मनुष्यों में विषमता उत्पन्न न हो, अर्थात् व्यक्तिगत सम्पत्ति को श्रीकृष्ण ने राष्ट्र प्रबन्ध में से निकाल दिया है। तब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि श्रम जनित सम्पत्ति किसके अधिकार में रहे? श्रीकृष्ण इसका निर्णय देते हैं कि श्रम सबको करना पड़ेगा और उस श्रम से उत्पन्न हुआ फल वा सम्पत्ति राष्ट्र की अर्थात् उसकी शासन व्यवस्था के आधीन रहेगी। वह शासन व्यवस्था ही लोगों के योग क्षेम अर्थात् निर्वाह किया करेगी, इसके लिये शासन व्यवस्था की ओर से स्थान स्थान पर वस्तु भण्डार अर्थात् गोदामों की स्थापना होगी और वहां से सब व्यक्तियों को सुविधानुसार यथोचित भोग्य द्रव्य प्राप्त हो सकेगा।

(क्रमशः)

गुरुकुल झज्जर की प्रसिद्ध औषधियां

१. नेत्र ज्योति सुर्मा—इसके लगाने से आंखों के सर्व रोग जैसे आंख दुखना, खुजली, जाला, फोला, रोहे कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट), दूर का कम दीखना (लांग साइट), प्रारम्भिक मोतियाबिन्दु आदि दूर होते हैं। आंखों के सब रोगों की रामबाण औषधि है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्में की प्रशंसा की है। लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। मूल्य ॥) शीशी।

२. नेत्र ज्योति सुर्मा (विशेष)—यह आंखों के उपरोक्त रोगों में विशेष लाभदायक है। मूल्य १) शीशी।

३. नेत्रामृत—यह दुखती आंखों के लिये जादू भरा विचित्र योग है। भयंकरता से दुखती हुई आंखें भी इसके एक दो दिन डालने मात्र से ठीक हो जाती हैं। साथ ही अन्य सभी नेत्र रोगों में हितकर है। मूश्य ।=) शीशी।

४. दन्तरक्षक मंजन—दांतों से खून या पीप का आना, दांतों का हिलना, दांतों के कृमि रोग, सब प्रकार की दांतों की पीड़ा तथा अन्यान्य सभी दन्त रोगों को दूर भगाता है। नित्य प्रयोगार्थ उत्तम मंजन है। मुल्य ॥) शीशी।

५. दन्तरक्षक तेल—इसके सेवन से मुख का तथा दांतों का कोई रोग रहने नहीं पाता। पायोरिया के लिये हितकर है। मुख की दुर्गन्धि को दूर करता है। मंजन तथा तेल दोनों का साथ प्रयोग अत्यन्त लाभकर है। मूल्य ॥) शीशी।

६. संजीवनी तेल--यह औषध यथा नाम तथा गुण वाली है। कटे-फटे घावों को बहुत जल्दी भरता है। अन्दर की चोट की भी उत्तम औषध है। जादू भरा प्रभाव रखती है। मूल्य ५) बड़ी शीशी ।=) छोटी।

७. व्रणामृत—यह फोड़े, फुन्सी, नासूर, गले-सड़े जख्मों को बहुत ही जल्दी ठीक करती है। मूल्य १) शीशी।

८. स्वास्थ्यवर्धक चाय—यह चाय स्वदेशी ताजी एवं शुद्ध जड़ी बूटियों से तैयार की गई है। यह वर्तमान चाय की भांति नीन्द और भूख को न मार कर, खांसी, जुकाम, नजला, सिरदर्द, खुश्की, अजीर्ण, थकान, सर्दी आदि रोगों को दूर भगाती है। मस्तिष्क एवं दिल को शक्ति देती है। नित्य प्रयोगार्थ उत्तम पेय है। मूल्य ।-) छोटी।

९. हवन सामग्री—यह सामग्री सुगन्धित, पौष्टिक, बलवर्धक, औषधियों से तैयार की जाती है। ऋतु अनकूल ताजा और शुद्ध सामग्री का ही यज्ञ करना महत्व रखता है। दैनिक हवन के प्रेमियों ने इसे अपनाया है। यज्ञों, महायज्ञों, संस्कारों तथा पर्वों के अवसर पर इसका अवश्य प्रयोग कीजिये। मूल्य १) सेर।

१०. बलदामृत—यह औषध हृदय उदर एवं मस्तिष्क रोगों में रामबाण है। श्वास, कास, यक्ष्मा तथा फेफड़ों की निर्बलता को दूर करके अतीव बल देती है। सुमधुर रसायन है। मस्तिष्क का कार्य करने वाले व्यक्तियों के लिये लाभदायक है। मूल्य ५) शीशी २० दिन के लिये पर्याप्त। छोटी शीशी २)।

११. च्यवनप्राश—शास्त्रोक्त विधि से तैयार किया हुआ स्वादिष्ठ सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है, जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्न दोष, प्रमेह, धातुक्षीणता अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है। मूल्य २) का पाव, ३।।।) का आधा सेर, ७) सेर तथा ५ सेर लेने पर ६) सेर।

१२. कर्णरोगामृत—यह कान के सब रोगों को दूर करती है। कान से पीप आना, बहरापन और प्रत्येक प्रकार के दर्द को अत्यन्त शीघ्र दूर करती है। प्रतिदिन के सेवन करने से कानों में कोई रोग नहीं होता। और मस्तिष्क की शुष्कता (खुश्की) दूर होती है।
मूल्य १) शीशी।

१३. ज्वरामृत—यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की रामबाण औषध है। बिगड़े हुए मलेरिया, विषमज्वर को दूर करने में जादू का काम करती है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन शिरदर्द, स्वप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है। किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है। तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है।
मूल्य ४) रुपये, छोटी शीशी २) रुपये।

१४. अर्श रोगामृत—यह खूनी तथा बादी दोनों प्रकार की बवासीर को दूर करती है। खून के आने को तो इसकी दो चार मात्रा ही बन्द कर देती हैं।
मूल्य एक मास के सेवनार्थ १०)।

१५. पामामृत—यह सब तरह की खुजली दादादि चर्म रोगों के लिये अत्युत्तम औषध है। खुजली सूखी हो या पकने वाली, यह सब प्रकार की खुजली के लिये रामबाण है। इसके प्रयोग करने के पश्चात् किसी अन्य औषधि की आवश्यका नहीं। दाद को भी दूर करती है।
मूल्य १) शीशी।

१६. पाचनामृत—मन्दाग्नि, अरुचि, अजीर्ण, (कब्ज) पेट का फूलना, पेट का भारीपन, शूल, वमन, जी मिचलाना, खट्टी डकार आदि पेट के सभी रोगों को नष्टकर भूख को बढ़ाता है। आंतों के सब रोगों को दूर कर पाचनशक्ति को बल देता है। पुराने से पुराने तिल्ली जिगर की अचूक औषध है।
मूल्य ४) रुपये शीशी।

१७. बालरोगामृत—बालकों के हरे पीले दस्त, अपच, अजोर्ण, (कब्ज) अरुचि, दांत निकलते समय के रोग, सूखिया (मसान) रोग, वमन, निर्बलता ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखें।
मूल्य छोटी शीशी २), बड़ी शीशी ४) रुपये।

१८. बालरोगामृत रस-इसके भी उपरोक्त गुण हैं। यदि दोनों साथ-साथ सेवन की जावें तो सोने पर सुहागा है। सूखिया रोग को एकदम दूर करती है।
मूल्य ६) शीशी, नमूना ।)।

१९. स्वप्नदोषामृत रस—इस भयंकर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग को दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है।
एक मास के सेवनार्थ ४) रुपये, छोटी शीशी २।=)।

२०. स्वप्नदोषामृत चूर्ण—यह अत्यन्त परिश्रम से तैयार किया गया है। अत्यन्त बलवर्धक है तथा समस्त धातु विकारों को नष्ट करके जीवन प्रदान करता है।
मूल्य छोटी शीशी १), बड़ी शीशी २)।

मिलने का पता—

एजेण्ट्स :—नवजीवन संचारक कम्पनी,

आर्यसमाज मन्दिर सीताराम बाजार, देहली ६।

ब्रह्मचर्य में सहायक पुस्तकें

आज कल हमारे देश में जो कुत्सित साहित्य प्रचलित है वह देश के बालक-बालिकाओं के लिये कितना हानिकारक है, यह सभी देशहितैषी प्रायः जानते हैं। आजकल गन्दे गीतों का, अश्लील चित्रों का और सिनेमा का प्रचार इतना बढ़ रहा है कि उससे हमारे अबोध बच्चे प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। यदि इस अवस्था में उन्हें सदुपदेश की शिक्षा न मिले और सत्संग न मिले तो उनका आचरण दूषित हो जाता है और वे सदाचार को खो बैठते हैं। उनको इस घातक वातावरण से बचाना आपका कर्तव्य है। नवयुवक ही राष्ट्र की भावी आशायें हुआ करते हैं। उन का सुधार सर्वथा अपेक्षित है। इसी भावना से प्रेरित हो हितैषी लेखकों ने निम्न ब्रह्मचर्य सम्बन्धी साहित्य लिखकर जनता का बड़ा उपकार किया है। आप इस साहित्य को अपने बालकों को पढ़ायें जिससे वह एक आदर्श और सदाचारी बालक बन सकें।

१—**ब्रह्मचर्यामृत** (ले० आचार्य भगवान्देव जी) यह पुस्तक ब्रह्मचर्य सम्बन्धी गहन मर्मों का निचोड़ है। इसमें ब्रह्मचारी के प्रत्येक कार्य का भली भांति ज्ञान कराया गया है। इसे प्रत्येक ब्रह्मचर्य प्रेमी युवक को अवश्य पढ़ना चाहिये। अनेकों युवकों के उद्धार का श्रेय इस पुस्तक के लेखक को प्राप्त है। मूल्य =)॥

२—**ब्रह्मचर्य के साधन** (ले० आचार्य भगवान्देव जी) ब्रह्मचर्य रक्षा के साधनों को भली भांति समझने के लिये लेखक ने यह लेखमाला प्रारम्भ की है, जो कि ग्यारह भागों में समाप्त होगी। इसके प्रथम तथा द्वितीय संयुक्त भाग में प्रातः जागरण, चक्षुःस्नान, उषःपान तथा शौचादि के महत्त्व तथा प्रकार, तृतीय भाग में दांतों की उपयोगिता तथा उनके पुष्ट बनाने की विधि, चतुर्थ भाग में व्यायाम क्यों आवश्यक है, कैसे करें, क्या लाभ हैं? सब विधिपूर्वक चित्र देकर दर्शाया है। तथा पांचवें भाग में स्नान का समय, स्थान एवं वास्तविक विधि और सन्ध्या की उपयोगिता तथा यज्ञादि का सप्रमाण प्रकाश डाला गया है। मूल्य क्रमशः ।-), ≡), १), ।=) हैं। शेष भाग भी यथा समय प्रकाशित होंगे।

३—**व्यायाम सन्देश** (ले० आचार्य भगवान्देव जी) इस पुस्तक की पर्याप्त समय से प्रतीक्षा की जा रही थी। ब्रह्मचर्य प्रेमी युवकों को अवश्य पढ़नी चाहिये। इसमें ब्रह्मचारी के लिये व्यायाम क्यों आवश्यक है, कितना करना चाहिये, कैसे करना चाहिये? इत्यादि समस्त विषयों पर प्रकाश डाला है। देशी तथा विदेशी सब प्रकार के व्यायाम के तरीके चित्र देकर दर्शाये गये हैं। पुस्तक सराहनीय है। मूल्य १)

४—**मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प** (ले० स्वामी आत्मानन्द जी महाराज) योगाभ्यासियों, भक्ति मार्ग के पथिकों और विद्यार्थी तथा ब्रह्मचारियों के लिये अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ है। पहला संस्करण हाथों हाथ समाप्त हो गया था। इस दूसरे संस्करण की भी थोड़ी ही प्रतियां शेष हैं। शीघ्र मंगाइये, अन्यथा कहीं ऐसा न हो कि आप को पश्चात्ताप करना पड़े। यह अपने ढंग की अनुपम पुस्तक है। सजिल्द मूल्य २॥) लागत मात्र

५—**ब्रह्मचर्य शतकम्** (ले० पं० मेधाव्रत जी कविरत्न) इसमें ब्रह्मचर्य सम्बन्धी १०० वेद मन्त्रों का सुन्दर सरल संस्कृत श्लोकों में स्वतन्त्र अनुवाद किया गया है। भाषा रोचक है। साथ-साथ हिन्दी अनुवाद भी किया है। ब्रह्मचर्य प्रेमियों को अवश्य पढ़नी चाहिये। मूल्य ॥=)

६—**ब्रह्मचर्य सन्देश** (ले० पं० सत्यव्रत जी) इसमें ब्रह्मचर्य के प्रत्येक विषय को वैज्ञानिक ढंग के साथ-साथ विस्तृत रूप से व्याख्या करके समझाया गया है। पुस्तक ब्रह्मचारियों के लिये अत्यन्त उपादेय है। पाश्चात्य एवं भारतीय मनोविज्ञान द्वारा अन्वेषण पूर्वक ब्रह्मचर्य के विषयों का निचोड़ है। मूल्य ४।)

ब्रह्मचर्य, सदाचार, एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी सभी अन्यान्य पुस्तकों का प्राप्ति स्थान—

वैदिक साहित्य सदन, आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली।

आवश्यक सूचना

आपकी सेवा में भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् द्वारा संचालित धार्मिक परीक्षाओं के विषय में आवश्यक सूचनायें लिख कर भेज रहे हैं। क्योंकि आवेदन पत्र भेजने का समय निकटतम है। इन परीक्षाओं में अधिक से अधिक आर्यकुमारों को बैठना चाहिये। इनके देने से उनका भविष्य उज्ज्वल होगा। इन परीक्षाओं द्वारा ही युवक आर्यसमाज के सम्पर्क में आ जाते हैं। इन परीक्षाओं से आर्य सिद्धान्तों का ज्ञान हो जाता है। आर्यसमाज के प्रति श्रद्धा और प्रेम बढ़ता है। आर्ष धर्म-ग्रन्थों का स्वाध्याय हो जाता है। युवक आर्योपदेशक बन कर जनता का पर्याप्त उपकार कर सकते हैं। इसमें आबाल-वृद्ध-वनिता सब बैठ सकते हैं। इसलिये इस कार्य में अधिक से अधिक सहयोग देना प्रत्येक नर-नारी का कर्तव्य है। साथ ही प्रत्येक परीक्षा का प्रमाण पत्र मिलता है। सद्ग्रन्थों का प्रचार होता है। परीक्षार्थी का मान होता है।

परीक्षाओं के संक्षिप्त नियम

१—यह परीक्षायें छः हैं (१) सिद्धान्त सरोज (२) सिद्धान्त रत्न (३) सिद्धान्त भास्कर (४) सिद्धान्त शास्त्री (५) सिद्धान्त वाचस्पति (६) साहित्य सरोज। २—इनका शुल्क क्रमशः १), २), ३), ४), ५) एवं ३) है, जो आवेदन पत्रों सहित परीक्षा मन्त्री के पास ३१ अक्टूबर तक अवश्य पहुँच जाना चाहिये। ३—यह परीक्षायें प्रतिवर्ष प्रायः जनवरी मास में रविवारों को होती हैं। जिस परीक्षा में जो परीक्षार्थी चाहे सम्मिलित हो सकता है। परन्तु सिद्धान्त-वाचस्पति परीक्षा में वे ही सज्जन बैठ सकेंगे जो सिद्धान्त शास्त्री, बी. ए., साहित्यरत्न, स्नातक परीक्षा में से कोई एक अथवा कोई अन्य समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण हो। जिसका प्रमाण पत्र पहले परीक्षा मन्त्री को प्रस्तुत करके आज्ञा लेनी पड़ेगी। ४—एक स्थान पर (सभी परीक्षाओं को मिलाकर) कम से कम दस परीक्षार्थी होने पर केन्द्र स्थापित किया जा सकता है। ५—किसी भी परीक्षा के छपे हुए आवेदन पत्र परीक्षा मन्त्री भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्, मुरादाबाद से आवश्यकतानुसार बिना मूल्य के मिल सकते हैं।

—: इन धार्मिक परीक्षाओं की पुस्तकों का प्राप्ति स्थान :—

इन छः परीक्षाओं की समस्त पुस्तकें आप हमारे यहां से उचित मूल्य पर प्राप्त कर सकते हैं। आप एक बार हम से पुस्तकें मंगा कर आजमाइये। हमारे व्यवहार से आप अवश्य सन्तुष्ट होंगे। इन के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार की (धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक) पुस्तकें हमसे मंगा कर लाभ उठावें। हमारा बड़ा सूची पत्र एवं परीक्षाओं की पाठविधि मुफ्त मंगा सकते हैं।

वैदिक साहित्य सदन, आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली।

देवता यदि आप बन जायें, बनें—
पर मनुष्य होना बहुत दुस्साध्य है।

जीवन में उत्कर्ष तथा सामंजस्य लाने के लिये, मानस हृदय में मानवता के विचार उद्बुद्ध करने के लिये, गिरते हुये नैतिक स्तर में चारित्र्य बल लाने के लिये, लोकहित की पावन भावनाओं से ओत-प्रोत, सुखद, बलप्रद, प्रेरक भावनाओं से युक्त, साहित्य मनीषियों का एक मात्र निराला पत्र—

"चरित्र निर्माण" सचित्र मासिक

प्राप्ति स्थान—निर्माण कार्यालय
ऋषिकेश—(देहरादून) उ० प्र०

आवश्यकता

भारत की प्रसिद्ध एशियन एश्योरेंस कम्पनी के लिये हर शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने के लिये उत्साही युवकों की आवश्यकता है, शीघ्र लिखें।

रामगोपाल "सुरेश" बीमा इन्स्पेक्टर
जनसेवक—कार्यालय
नहालावास, महेन्द्रगढ़।

गो-महिमा

(ले० श्री म० हरस्वरूप जी रिटौली (रोहतक)

जैसी माता जननी होती, ऐसी ही गऊ माता है।
दूध पिलाये प्यार लुटाये, दोनों का एक ही नाता है॥

(१)—अन्तर इतना बस दोनों में, और नहीं कुछ पाता है।
गऊ तो जननी बैल कमाऊ, वह मानव की दाता है॥
वह हल जोतें यह हल खैंचे, बोलो कौन चलाता है।
धरती माता अन्न जो देती, कहो कौन वह खाता है॥
जननी माता जन्म की दाता, बालेपन की माता है।
इससे आगे गऊ माता ही, जीवन की निर्माता है॥
अमृत का भण्डार यही है, सर्व सुखों की दाता है।
इसी कूख से बैल उपजता, जो दिन रैन कमाता है॥
नित्य प्रातः उठकर मानव, तुझ को शीश झुकाता है।
सत का जूआ कन्धे लेकर, तेरा हल चलाता है॥
बैल से बढ़कर मानव तेरा, दूजा कौन आता है।
सच तो कहो ऐ मानव जाति ! इससे भी प्यारा नाता है॥
जैसी माता जननी होती·····················

(२)—ओ भोले मानव ! यान करो कुछ भूले ही क्यों जाते हो।
घास फूस की खाने वाली, माँ से क्या-क्या पाते हो॥
दूध दही और घी मक्खन सब, अमृत जो तुम खाते हो।
बिना दिये कुछ भी माता को, प्रेम से इसके पाते हो॥
फिर भी इसके अमृतसागर, में तुम विष मिलाते हो।
अन्न छोड़ कर गऊ माता का; चीर कलेजा खाते हो॥
जिस दूध की मुंह पर धार बहे, उस ही को रक्त बनाते हो।
जिस माँ ने पाला दूधों से, उस माँ पर छुरी चलाते हो॥
दुष्ट कर्म कर करके भी तुम, जरा नहीं पछताते हो।
कर्म को शैतान के मानव, खुद को मनुष्य बताते हो॥
बस देख दशा गऊ माता की, रोना हमें यूँ आता है।
निर्बल नाता गऊमाता का, निशिदिन टूटा जाता है॥
जैसी माता जननी होती, ऐसी ही गऊ माता है।·····
दूध पिलाये प्यार लुटाये, दोनों का एक ही नाता है॥

"सुधारक" पाठकों की दृष्टि में

मुझे तो "सुधारक" इतना प्यारा लगता है जितनी शिशु को मां। क्योंकि यह भी मां की भान्ति हमारा सुधार करता है। इसलिये मैं एक अध्यापक के नाते से अध्यापक गण तथा विद्यार्थियों से प्रार्थना करता हूं कि सुधारक का अध्ययन करना मां के प्यार से कम नहीं।

वैद्य पूर्णचन्द 'प्रेमी'
अध्यक्ष
प्रेमी सुधा औषधालय, बालूनगर (पेप्सु)

सुधारक का "व्यायाम सन्देश" अङ्क वास्तव में संग्राह्य है।

श्री पं० चन्द्रमणि विद्यालंकार
अध्यक्ष
(भास्कर प्रेस, देहरादून)

श्री आचार्य भगवान् देव जी द्वारा सम्पादित सोपपत्तिक प्रमाणपरिपुष्ट "सुधारक" पत्र का अध्ययन कर विशेष तुष्टि एवं गोपालन में श्रद्धा हुई। यह पत्र आर्य जनता में अपनी गुण गरिमा द्वारा दिन प्रतिदिन विशेष जागर्ति करेगा।

इन्द्रदेव शास्त्री (खुब्बापुर)

सुधारक से नवयुवकों का ही कल्याण नहीं, अपितु भूमण्डल के बाल, वृद्ध, युवा सब का ही कल्याण निहित है। मैंने स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेक पुस्तकें देखीं, किन्तु "व्यायाम सन्देश" जैसी पुस्तक आज तक नहीं बनी, यह प्रथम प्रयास है। मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि लेखक की लेखनी चलती ही रहे, इससे भारत का भविष्य उज्जवल होगा।

(हरसिंह अध्यापक, खुहारी (मेरठ)

संस्था समाचार

आतुरालय

पाठकों तथा गुरुकुल प्रेमियों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि गुरुकुल झज्जर में आतुरालय भवन का निर्माण हो गया है। यह भवन $\frac{\text{२८}\times\text{१८}}{\text{१४}}$ फीट का है इसमें ८ रोगियों के लिये स्थान होगा। समीप में एक कमरा $\frac{\text{२७}\times\text{६}}{\text{१०}}$ फीट का तैयार हो गया है। यह कमरा औषधालय के लिये उपयुक्त रहेगा। नगरों की गन्दी वायु से दूर जङ्गल में सुरम्य स्थान में यह भवन बनाया गया है। भवन के सामने १००×१०० फीट का तालाब बनवाने की योजना है। जो ब्रह्मचारियों के स्नान तथा तैरने के काम भी आ सकेगा। गुरुकुल की गोशाला की गायों के पानी पीने के लिये गोघाट भी इस पर एक ओर होगा। गुरुकुल वनस्थली में जिसके एक ओर सुरम्य वाटिका भी है। बहुत ही अद्भुत और उपादेय यह तालाब होगा।

इस तालाब पर लगभग ८०००) व्यय होंगे।

उपरोक्त आतुरालय भवन (इण्डोरपेशण्ट हाल) में इस समय आठ रोगियों को ही स्थान मिल सकेगा। यह स्थान आने वाले रोगियों की दृष्टि से बहुत थोड़ा है। यदि कम से कम दो भवन इस प्रकार के बन जायें तो काम चल सकेगा, अधिक से अधिक रोगी स्वास्थ्य लाभ पा सकेंगे।

मासिक व्यय की समस्या भी सामने है। यदि कोई दानी सज्जन दो ढाई सौ रुपये मासिक के दान से सहायता कर सकें तो अनुपम कार्य होगा।

निवेदक— मुख्याधिष्ठाता

आर्य समाज निजामाबाद

दिनांक २६-८-५४ के प्रातः १० बजे आर्य समाज निजामाबाद में बृहत् सभा हुई जिसमें निम्न प्रस्ताव पास किए गए—

प्रस्ताव नं० १

गत १५ अगस्त १९५४ के शुभ अवसर पर निजामाबाद में गांधी जी की मूर्ति पर जिन दुष्टों ने पाकिस्तानी झण्डा लहराया, उनको आर्य समाज निजामाबाद घृणा की दृष्टि से देखता है तथा उनके फलस्वरूप उत्तेजित जनता द्वारा जो लूट-खसोट हुई उसकी भी निन्दा करता है। सरकार से प्रार्थना है कि झण्डा लहराने वालों का पता लगाए तथा गैर कानूनी हरकत करने वालों को उचित दण्ड दे।

प्रस्ताव नं० २

उपयुक्त घटना के सम्बन्ध में कुछ समाचार पत्रों में जो वृत्तान्त छपे हैं, जिनमें आर्य समाज निजामाबाद पर झूठा लांछन लगाया गया है, विशेष कर हमारा इकदाम, अंगारे (उर्दू) तथा तेलुगुदेशमु इत्यादि के नाम उल्लेखनीय हैं, जिनका आर्य समाज निजामाबाद पुरजोर खंडन करता है। क्योंकि इन उपद्रवों से आर्य समाज निजामाबाद का कोई सम्बंध नही है। आर्य समाज के अधिकारियों ने मुसलमानों की जो सहायता की उसकी प्रशंसा न केवल सरकारी अधिकारी बल्कि यहां के मुसलमान भी करते हैं। उपयुर्क्त समाचार पत्र अपनी जिम्मेदारी को न समझते हुए केवल अपना पेट पालने के लिए तथा हुकूमत को बदनाम करने के लिए उत्तेजनात्मक समाचार छाप देते हैं, जिससे जनता में अशान्ति फैलती है, सरकार को चाहिए कि उन पर आक्षेप ले। —मन्त्री

स्वनामधन्य खपड़िया बाबा—प्रवर्तित

"सुमति"

विविध विषय विभूषित निरपेक्ष मासिक पत्रिका

सम्पादक—श्याम सुन्दर द्विवेदी

धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक और साहित्यिक आदि विषयों के एक से एक उत्कृष्ट एवं उपादेय गवेषणा पूर्ण लेखों, मनोरंजक, शिक्षाप्रद कहानियों से इसके लेख साहित्य के अमूल्य निधि सिद्ध होते हैं। महिलाओं तथा युवकों से सम्बन्धित शिक्षाप्रद लेखों की विशेषता रहती है।

वार्षिक मूल्य केवल ६) एक प्रति का ॥=), नमूना मुफ्त दिया जाता है।

नोट—छः ग्राहक बनाने वाले सज्जनों को 'सुमति' का एक अंक साल भर निःशुल्क दिया जाता है।

पत्र व्यवहार का पताः—

'सुमति' कार्यालय चान्दपुर (बैरिया), बलिया

दीपावली का वास्तविक स्वरूप

(श्री पं० विश्वप्रिय शास्त्री साहित्यरत्न, गुरुकुल झज्जर)

पर्व कहिये या त्यौहार, मानव जाति में पर्व प्रथा-प्रारम्भ काल से ही चली आ रही है। भारत इस प्रथा में सब का अग्रणी रहा है। आजकल पर्वों का बड़ा विस्तार हो गया है। छोटे-मोटे पर्वों की गणना की जाये तो ३६५ दिन से कम न होगी। किसी-किसी दिन तो दो-दो और तीन-तीन पर्व पड़ जाते हैं।

पर्वों की वृद्धि शुभ की सूचक होनी चाहिए परन्तु दिखाई विपरीत ही देता है। आज मानव मानवता को छोड़कर दानवता को अपना रहा है। चेतावनी के लिए पर्व आते हैं और चले जाते हैं। परन्तु मानव अपने उद्देश्य में आगे की ओर नहीं बढ़ पाता। इसका एक ही कारण है कि हमने पर्वों को हर्षोल्लास की वस्तु ही मान लिया है। त्योहार का अर्थ भले ही आनन्दोल्लास हो, परन्तु पर्व का अर्थ मानव के ध्येय की पूर्ति कराना होना चाहिए।

पर्व-शब्द पालन और पूरणार्थक "पृ" धातु से (४।११३) उणादि से वनिप् प्रत्यय करने पर बनता है "पिपर्त्ति पर्व" जो पालन और पूर्त्ति करे वह पर्व कहलाता है।

प्रचलित उत्सव शब्द भी इसी अभिप्राय का द्योतक है। उद् उपसर्ग पूर्वक प्रसवैश्वर्यार्थक पु धातु से अच् प्रत्यय करने पर उत्सव शब्द सिद्ध होता है। जिसका अर्थ मानव के अन्दर ऐश्वर्य लाना है। मानव ने इस पर कभी विचार ही नहीं किया इसलिए पर्वों तथा उत्सवों से जीवन में कोई विशेष परिवर्तन दिखाई नहीं देता।

दीपमाला कहा जाये या दीवाली अथवा दीपावली, सबका अभिप्राय कार्तिक मास की अमावस्या को मनाये जाने वाले पर्व का ही है। जो समस्त भारत में उत्साह के साथ मनाया जाता है।

अन्य देशों में जाड़ा और गर्मी दो ही प्रधान ऋतु होती हैं। वर्षा भी इन ही में यदा कदा हो जाती है। परन्तु भारत में सौभाग्य से जाड़ा गर्मी और वर्षा यह तीन ऋतुएं वर्ष भर में चार-चार मास की होती हैं। यह तीन ही क्या, भारतीय तत्त्ववेत्ताओं ने वर्ष को छः ऋतुओं में विभक्त कर दिया है। वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिर यह छः ऋतुएँ हैं। आषाढ़ मास में सावनी की सस्य बोई जाती है और आश्विन मास के अन्त तक पक कर तैयार होती है। कार्त्तिकी अमावस्या तक शारदीय सस्य का अन्न किसान के घर में आ जाता है। इसलिए भारतीय कृषक वर्ग प्रफुल्लित हो दीवाली पर्व को मनाता है।

वर्षा कालीन श्रावण और भाद्रपद मास में निरन्तर वर्षा होती रहने के कारण मकानों में सूर्य की धूप नहीं लग पाती है इसलिए मकानों में नमी आजाती है। कितने ही मकान गिर पड़ते हैं कितने ही टूट जाते हैं। उनकी मरम्मत तथा लिपाई-पुताई भी इसी मास में होती है। साथ ही मलेरिया के प्रकोप को हटाने के लिए भी महान् यज्ञ हुआ करते थे। उन्हीं महायज्ञों में से शारदीय नवसस्येष्टि भी एक महान् यज्ञ ही है।

आजकल मच्छर के मरवाने के लिए सरकार को लाखों रुपया व्यय करना पड़ता है। परन्तु मच्छरों का समूल नाश नहीं हो पाता। प्राचीन आर्य इस बात को भली प्रकार जानते थे, सफाई स्वच्छता रखना तथा वायु के संशोधन के लिए हवन करवाना उनका अपने जीवन का मौलिक उद्देश्य था, इसलिए प्राचीन ग्रन्थों में यज्ञों का विधान मिलता है। नवसस्य के समागम पर भी यज्ञों का विधान है। मनुस्मृति में लिखा है कि—

सस्यान्ते नवसस्येष्ट्या तथार्त्वन्तेऽध्वरैः। मनु-४-२६।

अर्थात् नवीन सस्य के लिए सस्य के अन्त में हवन होने चाहियें।

इसी प्रकार ऋतु के अन्त में तथा मास के अन्त और मध्य में भी पौर्णमासी तथा अमावस्या के दिन बृहद् यज्ञों का विधान है। प्राचीन लोग मानव जीवन के लिए यज्ञ को आवश्यक समझते थे। आज भी उनका कुछ भग्नावशेष रूप मिलता है। ध्यानपूर्वक देखें तो ग्रामों में यज्ञ का विकृत रूप मिलता ही है। ग्रामीण लोग नवसस्य के अन्न से बनी हुई भोजन सामग्री को पहिले अग्नि की भेंट करते हैं और पुनः अपने प्रयोग में लाते हैं।

कार्त्तिकी अमावस्या दीवाली के दिन सब लोग मिलकर इस शारदीय नवसस्येष्टि में भाग लेते थे। वैश्य वर्ग का इसमें प्रमुख भाग था। परन्तु प्राचीन वैश्य आज के वैश्य से भिन्न थे। प्राचीनकाल में मानव-समाज आर्य और दस्यु दो भागों में विभक्त था। आर्यों में

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र यह चार विभाग थे। यह सब गुण कर्म स्वभाव के आधार पर ही विभाजन होता था। आर्यों और दस्युओं में तो बराबर लड़ाईयाँ होती रही हैं। परन्तु आर्यों में ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रों में कभी वर्ण के आधार पर लड़ाई हुई हो, इतिहास इस बात की साक्षी नहीं देता। क्योंकि विभाजन जन्मगत आधार पर न होकर गुण-कर्म स्वभाव पर था। इसके अनुसार वैश्य के भिन्न कर्मों का निर्देश मनु महाराज ने किया है—

पशूनां रक्षणं दानमिज्या ऽध्ययनमेव च।
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिरेव च॥ १।९० ॥

गाय आदि पशुओं का पालन (दान) विद्या, धर्म आदि की वृद्धि के लिए व्यय करना, अग्निहोत्र आदि यज्ञों का करना, वेद आदि शास्त्रों का पढ़ना, सब प्रकार के व्यापार करना, व्याज पर रुपया देना तथा खेती करना। परन्तु आज कृषक समुदाय अपने को वैश्यों से पृथक् समझता है। इसी प्रकार अन्य लोग भी छोटे-छोटे समुदायों में विभक्त हैं। जन्म परम्परा का यह विभाजन पारस्परिक रागद्वेष में ग्रस्त है। यदि प्राचीन वर्ण-व्यवस्था हो जाये तो देश विश्व शांति और विश्व-कल्याण की भावना से ओत-प्रोत हो जाये।

दीपावली का सामयिक रूप कैसे बना यह भी एक विचारणीय बात है। होली की चाँदनी प्रसिद्ध है। उसी प्रकार शारदीय पौर्णमासी की चाँदनी भी अपना विशेष स्थान रखती है। क्योंकि इन अवसरों पर आकाश स्वच्छ होता है, किसी प्रकार का कोई भूमिकण आकाश में नहीं होता।

कार्त्तिकी अमावस्या जैसा अन्धकार भी कहा जाता, है कि सम्वत्सर की ११ अमावस्याओं में नहीं होता। इसके विषय में महाकवि शूद्रक ने कहा है कि—

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः।
असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता॥

अन्धियारी अंगों में लिप सी गयी है आकाश काला-काला अंजन बरसा रहा है। इस अन्धियारी में दृष्टि इस प्रकार खराब हो गई है जिस प्रकार धूर्त्त पुरुष की सेवा व्यर्थ जाती है।

इस अन्धकार को दूर करने के लिये मानव के पास कोई साधन नहीं। सब से बड़ा साधन विद्युत् का कहा जा सकता है। वह भी काम में लाया ही जाता है। परंतु सर्वत्र तो विद्युत् नहीं है। अतः दीपों की पंक्तियां द्वारा प्रकाश कराते हैं। मकानों के ऊपर कण्डील जलाते हैं। यह सब कुछ प्रसन्नता का सूचक है। विद्युत् प्रकाश के लिए चाँदनी चौक देहली की दीवाली प्रसिद्ध है।

हर्ष के भाव द्योतित करने के लिए भी यदा-कदा दीवाली मनायी जाती है। स्वराज्य प्राप्ति पर १५ अगस्त को दीवाली मनायी गई, अब भी मनाई जाती है।

कहा जाता है कि लंका विजय के उपरान्त महाराज रामचन्द्र जी इसी दिन अयोध्या में वापस आये थे, और तब ही सर्वप्रथम दीवाली मनायी गई थी। तभी से दीवाली का रूप बना है। जो आज तक चला आ रहा है। भगवान् राम की लंका विजय की स्मृति में दीवाली मनाना प्रसन्नता की बात है। परन्तु भगवान् राम लंका विजय के उपरान्त दीवाली दिवस पर अयोध्या वापस आये थे यह बात किसी प्रकार भी ठीक नहीं है। क्योंकि लंका युद्ध का आश्विन मास में सम्भव नहीं हो सकता।

यदि घुणाक्षरन्याय से यह मान लिया जाये कि रावण-वध आश्विन शुक्ला दशमी को हुआ था और चौदहवें वर्ष की समाप्ति भी रावणवध के साथ थी, इसीलिये भगवान् राम पुष्पक विमान के द्वारा अयोध्या वापिस आये थे, तो दशमी से दीवाली तक का बीस दिन का समय कहाँ व्यतीत किया। क्या विमान के द्वारा बीस दिन लंका से अयोध्या आने में व्यतीत होते हैं?

पुराणों के अनुसार दीवाली का उपक्रम महाराज पृथु से हुआ। महाराज वेन के समय में पृथिवी ने सब प्रकार की औषधियों, घृत, दूध, स्नान आदि के सब प्रकार के पदार्थों को हड़प कर लिया, जिसके कारण प्रजा को बड़ा कष्ट हुआ। चहुं ओर हाहाकार मच गया। उस समय महाराज पृथु ने अपने प्रयत्नों द्वारा कार्त्तिकी अमावस्या वाले दिन पृथिवी से सारे पदार्थों को वापिस ले लिया। इसी प्रसन्नता को मनाने के लिये दीवाली का प्रारम्भ हुआ। पुराण के इस कथन से भले ही सहमत न हों। हाँ इतनी बात अवश्य है कि वर्षा के अभाव में अकाल पड़ गया होगा। कार्त्तिकी अमावस्या को महायज्ञ करा कर वृष्टि कराई होगी, तब पृथिवी हरी-भरी होगयी होगी। यही सम्भव भी है, वेदों में अनेक वर्षापरक सूक्त हैं।

"यज्ञाद् भवति पर्जन्यः" गीता में भी भगवान् ने यही तो कहा है। दीपावली ही भारतीय वैश्य समुदाय के व्यापार का अन्तिम दिवस है। कार्त्तिकी प्रतिपदा से नवीन वर्ष का प्रारम्भ होता है। यही सम्भव भी है। वर्षाकाल

में व्यापारियों का व्यापार ठप्प रहता है। भले ही थोड़ा चलता-चलाता रहता है। परन्तु वास्तव में नहीं के बराबर ही रहता है। ब्रिटेन में आर्थिक वर्ष अप्रैल से प्रारम्भ होता है और वर्ष का आरम्भ जनवरी मास से होता है। इसी प्रकार भारतीय नव संवत्सर चैत्र प्रतिपदा तथा आर्थिक संवत्सर कार्त्तिकी प्रतिपदा से होता है।

भारत में सायन और निरयण गणना प्रचलित है। जितने समय में पृथिवी सूर्य की एक प्रदक्षिणा कर लेती है। वह समय सायन वर्ष (Solaryear) कहलाता है। आकाश में नक्षत्र को एक स्थान पर देखकर पुन: उसी स्थान पर वह जितने समय में देखा जा सके वह समय निरयण (नाक्षत्र) वर्ष कहलाता है। यह नाक्षत्र वर्ष सायन वर्ष से लगभग २० मिनट बड़ा होता है। यदि सायन के अनुसार गणना की जाये तो आर्थिक संवत्सर ठीक कार्त्तिकी अमावस्या को ही ठीक बैठता है। परन्तु निरयण (नाक्षत्र) गणना हमारे यहाँ मुख्यतया प्रसिद्ध है। इसलिये २० मिनट का भेद होगया। देखने को तो २० मिनट का समय वर्ष भर में नगण्य ही है परन्तु कालान्तर में यह भेद बहुत बड़ा हो जाता है। जो आज सामने दृष्टिगोचर हो रहा है। तीन वर्षों में यह २० मिनट का स्वल्प सा समय बढ़ कर एक घण्टा हो जाता है। और ७२ वर्षों में २४ घण्टे (एक दिन रात) के बराबर हो जाता है। २१६० वर्षों में यह समय एक मास तथा २५९२० वर्षों में यह एक वर्ष के समान हो जाता है।

वसन्त सम्पात का दिन संवत्सर का प्रथम दिवस माना जाता है। यह वसन्त सम्पात सूर्य की बारह राशियों पर होता है। गणना भेद की दृष्टि से इसकी गति पीछे घटत रहती है। क्योंकि उपरोक्त २० मिनट का अन्तर गणन में है। अभी वसन्त सम्पात फाल्गुन में होता है। इसके उपरान्त माघ में होगा तथा तदुपरान्त पौष में। इस प्रकार इसकी गति धीरे-धीरे घटती जाती है। सूर्य की बारह की बारह राशियों पर चक्कर लगाने में इसके उपरोक्त लगभग छब्बीस सहस्र वर्ष व्यतीत होंगे। एक नक्षत्र पर वसन्त सम्पात लगभग नौ सौ छप्पन वर्ष तक रहता है। जब विशाखा नक्षत्र पर वसन्त सम्पात रहा होगा तब कार्त्तिकी अमावस्या को आर्थिक सम्वत्सर का अन्तिम दिवस होगा।

आजकल वसन्त सम्पात उत्तरा भाद्रपद के द्वितीय चरण पर है। तो विशाखा नक्षत्र से अब तक पीछे हटने में सोलह सहस्र सात सौ तीस वर्ष होगये होंगे। उस समय यह आर्थिक सम्वत्सर के नाम से मनाया जाता था।

आर्थिक अभिनव सम्वत्सर के अन्तिम दिन कार्त्तिकी अमावस्या दीवाली पर प्रसन्नता के रूप में दीप जलाये थे। साथ ही पारस्कर गृह्य सूत्र में रात्रि में होने वाले महान् यज्ञ का भी सुविशद वर्णन मिलता है। इस कार्त्तिकी अमावस्या को नव सम्वत्सर की पत्नी कहा गया है।

ये जनाः प्रवदन्ति रात्रिंधेनुमिवायतीम्।
सम्वत्सरस्य या पत्नी सा नोऽस्तु सुमंगली स्वाहा॥

सम्वत्सरस्य प्रतिमा या तां रात्रिमुपास्महे अर्थात् जो रात्रि सम्वत्सर की पत्नीरूप है जिस रात्रि का यज्ञ के द्वारा संवत्सर के साथ संयोग होता है वह रात्रि हमारे लिये कल्याणकारिणी हो। गौ की तरह आती हुई सम्वत्सर की प्रतिमा जो रात्रि है उस रात्रि की हम लोग उपासना करें।

कात्यायन गृह्यसूत्र में भी इस महान् यज्ञ को प्राजापत्य नाम से पुकारा गया है। शतपथ ब्राह्मण में प्राजापत्य नाम से ही वर्णन मिलता है परन्तु तैत्तीरीय श्रुति में सांवत्सरिक यज्ञ के नाम से ही इसकी प्रसिद्धि है।

कुछ भी हो आर्थिक नवसम्वत्सर महान् यज्ञ भी इसी अवसर पर होता था। ब्रिटेन आदि देशों में तो वर्षा की कोई पृथक् ऋतु नहीं, अतः उनका आर्थिक वर्ष अप्रैल से उपयुक्त जँचता है।

भारतीय वैश्य समुदाय के बहीखातों का परिवर्तन भी इसी दीवाली दिवस पर होता है। यह भी आर्थिक संवत्सर का द्योतक है। यदि सायन गणना प्रचलित हो जाये तो भेद का मूल ही समाप्त हो जाये।

सृष्टि के आदि में चैत्र मास के उपरान्त सर्वप्रथम नवसस्य शारदीय ही आयी होगी। कार्त्तिक से अगला आग्राहायण मास भी इस बात का द्योतक है कि कार्तिकी अमावस्या से ही व्यापार प्रारम्भ हुआ होगा।

कुछ लोगों का यह भी विचार है कि कार्त्तिक की अमावस्या दीपावली के अग्रिम दिवस से अभिनव संवत्सर का प्रारम्भ हुआ। यह उनका कथन ठीक नहीं है। हिमाद्रि में लिखा है कि—

चैत्र मासे जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्लपक्षे समग्रन्तु तदा सूर्योदये सति॥

भगवान् ब्रह्मा ने चैत्र मास के शुक्ल पक्ष के प्रथम दिवस (रविवार) को सूर्योदय के होने पर समस्त संसार को उत्पन्न किया।

रात्रि का जागरण भी इस बात का द्योतक है कि इस रात्रि को महायज्ञों की प्रथा थी, नहीं तो निष्प्रयोजन क्यों जागरण किया जाय ।

घरों की लिपाई-पुताई से बाह्य संशुद्धि तो संभव है । परन्तु आन्तरिक संशुद्धि बिना वायु की संशुद्धि के कभी नहीं हो सकती । और वायु के संशोधन के लिये हवन से अच्छा उपाय कोई नहीं है । नवीन वैज्ञानिक वायु संशोधन के लिये उपाय सोच रहे हैं परन्तु अभी तक कोई नवीन आविष्कार वायु संशोधन के लिये नहीं कर पाये हैं । हमारे शास्त्रों में हवन के रूप में पहले से विद्यमान् हैं ।

कहा जाता है कि यह दीवाली जुआरी और चोरों के शगुन मनाने का दिवस है । जुआरी जुआ खेलकर तथा चोर चोरी करके अपने भाग्य का निर्णय इस दिवस पर कर लेते हैं । इस दिवस पर जिसको आमदनी हो जाये वर्ष भर तक उसको आमदनी ही होती रहेगा । कोई-कोई दीवाली से एक सप्ताह आगे तक अपने भाग्य का निर्णय करते हैं । "चोर न प्यारो चाँदनी जैसो कालो रात" के अनुसार चोर दीवाली को अपनी समझते हैं । यह सब बातें अपने मनोरथ से घड़ ली हैं ।

"अक्षैर्मादीव्यः" पाशों से मत खेल "मा गृधः कस्यस्विद्धनम्" किसी की धन की आकांक्षा मत करो । ऐसा वेद का आदेश है । पता नहीं जुआ तथा चोरी की कलङ्किनी मनोवृत्ति से कब पीछा मानव समाज का छूटेगा ? प्रभु ही जाने ।

कहा जाता है कि कार्त्तिकी अमावस्या को उल्लू पर सवार होकर लक्ष्मी बाहर निकलती है । और जिस घर को सबसे स्वच्छ पाती है । तथा जहाँ पर जागरण होता है । उसी घर में उलूक वाहिनी लक्ष्मी प्रवेश कर जाती है । इसलिये लक्ष्मी की प्राप्ति के लालच में अपने घरों को सजाते हैं ।

यह सब कपोल कल्पित बातें हैं—लक्ष्मी प्रवेश नहीं करती । भला सोचिये तो सही ! दो ढाई अरब की जनसंख्या वाले इस संसार में दश बीस करोड़ तो मकान होंगे ही जिनमें मानव समाज निवास करता है । इतने सब में एक ही मकान सुरम्यतम होगा जिसमें लक्ष्मी प्रवेश करेगी । शेष घर लक्ष्मी से वञ्चित रह जायेंगे । साथ ही उलूक वाहिनी होने से लाखों मील लम्बे चौड़े संसार के सब घरों को १२ घण्टे के स्वल्प से समय में कैसे देख सकेगी । दिन में तो देखेगी कैसे ? दिन में तो उल्लू को निद्रा आ जाती है । उल्लू भी संसार में लाखों होंगे, लक्ष्मी वाही विशेष उल्लू पक्षी होना चाहिये ।

सत्य तो यह है कि इस उलूक वाहिनी लक्ष्मी से प्रभु बचाये । उससे तो प्राप्तकर्त्ता ही उलूक बन जाता है ।

लक्ष्मी जो वास्तविक लक्ष्मी है उसका निवास स्थान क्या होना चाहिये । इसके लिए महाभारत में एक आख्यान आया है । उसमें कहा गया है कि—श्रीः कुत्र वसति ? अर्थात् लक्ष्मी का निवास कहां पर है ? इसके उत्तर में लक्ष्मी की ओर से कहा गया है कि—

"उत्साहसम्पन्नमदीर्घसूत्रं क्रियाविधिज्ञं विनयोपपन्नम्"

अर्थात् मेरा निवास स्थान वह व्यक्ति हैं जो उत्साही जागरूक; कर्मण्य तथा विनयी हो । इसके विपरीत जो लोग आलसी, काहिल, सुस्त, निद्रालु और उद्दण्ड हैं लक्ष्मी उनके पास कभी नहीं फटकती ।

जो व्यक्ति उत्साह आदि गुणों को धारण न कर लक्ष्मी के लिये दीवाली पर जागरण करता है । वास्तव में वह लक्ष्मी की पूजा नहीं जानता ।

निर्णय सिन्धु में लिखा है कि :—

"यद्वा नवव्रीह्यादिभिरग्निहोत्रं कुर्यात्" अथवा नवान्नानि अग्निहोत्र्यै गवे खादयित्वा तस्याः पयसाग्निहोत्रंजुहुयात् । यद्वान्नेन ब्राह्मणान् भोजयेत् । अर्थात् नवीन अन्न से अग्निहोत्र करें । अथवा नवीन अन्न को यज्ञीय गाय को खिला कर उसके दूध से यज्ञ करें तथा नवीन अन्न के भोजन ब्राह्मणों को करायें ।

रोगों से बचने के लिये इस दिन सरसों के तेल की मालिश (मर्दन) करें करायें इससे खुजली आदि के रोग नहीं होने पाते ।

विष्णु स्मृति में लिखा है कि :—

तुलामकारमेषेषु प्रातः स्नानं विधीयते ।
हविष्यं ब्रह्मचर्यं च महापातकनाशनम् ॥

अर्थात् कार्त्तिक, माघ और बैशाख के महीनों में प्रातःकाल स्नान हविष्य अन्न गेहूं और चावल तिल आदि का भोजन करने से ठीक रहता है ।

दीवाली पर धान की खील बांटने की प्रथा है । यह सब प्राचीन महायज्ञों का ही अवशेष है । दीपावली को शारदीय नवसस्येष्टि के रूप में मनाया जाये । भारतीय आर्थिक संवत्सर भी दीपावली से ही प्रारम्भ होता है । वास्तविक विशुद्ध परम्परा को अपनाने में ही भला है । ओम् शम् ।

TEXMACO

TEXTILE MACHINERY DIVISION

RING SPINNING FRAMES

Of any gauge up to 3" and lift up to 8".
Drafting System 4 Roller self weighted with or without Pendulum Arm Weighting, 4 Roller saddle weighted Casablanca 500 with or whitout Pendulum Arm Weighting, 500-A or E 10 B.

Roller Bearing Spindles.
Ball Bearing Jockey Pulleys.
Ball Bearing Front Top Rollers.

DRAWING FRAMES

Of I6" or 18" Gauge with one or two heads.
Belt or Motor driven.
Electric Stop Motion.
Automatic Locking Device.
9", 10" or 12" diameter Cans.

BOILER & HEAVY ENGINEERING DIVISION

Smoke Tube, Marine, Water Tube and Locomotive Boilers, Flues, Mechanical Stokers, Economisers, Chemical and Pressure Vessels Coal Handling Plant, Chimneys, Ductings, Cranes, Railway Wagons and Rolling Stock, Penstock Pipes, Sluices and Spillway Gates for Hydraulic Dam Projects.

Smoke Tube Boiler design in collaboration with M/S. Babcock & Wilcox of India Ltd.

For particulars please write to

TEXTILE MACHINERY CORPORATION LIMITED.

Belghurriah 24 Parganas West Bengal

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा द्वारा

आर्य समाजों को आदेश

आर्य महा सम्मेलन का निर्णय क्रियान्वित करें

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा ने समस्त आर्यसमाजों, आर्य संस्थाओं, आर्य युवकों व युवतियों के लिये निम्न आदेश दिया है :—

"प्रथम आर्य महा सम्मेलन यह निश्चय करता है कि वैदिक धर्म के प्रचार और आर्य समाज की वास्तविक उन्नति की दृष्टि से कुमार, कुमारियों, युवकों और युवतियों में धार्मिक जागृति एवं नैतिक विकास का उत्पन्न करना अत्यन्त आवश्यक है। जिससे उनका चरित्र उत्तम बन सके। अतः यह सम्मेलन देश के समस्त आर्यसमाजों को आदेश देता है कि वे अपने आर्य-समाजों में अनिवार्य रूपेण आर्य कुमार सभाएँ एवं आर्यवीरदलों की स्थापना करें।

साथ ही सम्मेलन यह भी निश्चय करता है कि आर्यसमाजों, आर्य कुमारों की एकमात्र संस्था **भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् द्वारा संचालित धार्मिक परीक्षाओं के केन्द्रों की स्थापना करके** अधिक से अधिक संख्या में कुमार, कुमारियों, युवकों एवं युवतियों को उनकी परीक्षाओं में बैठायें।"

ये परीक्षायें सिद्धान्तसरोज, सि० रत्न, सि० भास्कर सि० शास्त्री तथा सि० वाचस्पति हैं। प्रत्येक वर्ष जनवरी मास में ये परीक्षायें ली जाती हैं। इन परीक्षाओं के केन्द्र भारत तथा अनेक विदेशों में स्थापित हैं। उत्तीर्ण विद्यार्थियों को प्रमाण पत्र तथा उपाधि पत्र प्रदान किये जाते हैं। योग्य विद्यार्थियों को पुरुस्कार भी दिये जाते हैं। जनवरी सन १९५५ में होने वाली परीक्षाओं के आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तिथि ३१ अक्तूबर सन् १९५४ है। पाठविधि मँगाने, नवीन केन्द्र स्थापित कराने एवं अन्य

पता

नाम में श्री— जगदीशचन्द जी

मु० c/o मुरारी ब्रदर्स

पो० कमलानगर

जि० देहली

जानकारी के लिये परीक्षा कार्यालय से पत्र

करें :—

प्रिंसिपल जगदीश प्रसाद अग्रवाल
एम० ए० एल० टी० एफ० आई० सी०
परीक्षामंत्री भा० आ० कु० प० मुरा

ग्राहकों से निवेदन

"सुधारक" केवल सुधार के लिये चालू किया है। इस ने एक वर्ष पूरा करके दूसरे वर्ष में पग लिया है। इस प्रथम वर्ष में ही सुधारक के तीन षाङ्क ग्राहकों को भेंट किये, जिन में बड़ी लेख सामग्री पाठकों को भेंट की गई। ग्राहकों वार्षिक मूल्य में ही यह भेंट किये गये। सुधारक वार्षिक मूल्य २) रु० मात्र है जो लागत से भी पड़ता है। अनेक सज्जनों ने इसकी प्रशंसा की हमने आरम्भ से ही अनेक सज्जनों, संस्थाओं समाजों के पास सुधारक भेजा है, परन्तु आश्चर्य खेद है कि पूरा वर्ष भर सुधारक पहुंचने पर भी महानुभावों ने २)रु० वार्षिक शुल्क नहीं भेजा है। प्रकार सुधार कार्य में सहयोग की अपेक्षा विघ्न है, जो कि सज्जनों के स्वभाव से बाहर है। मैं सभी महानुभावों से नम्र निवेदन करता पिछले वर्ष और इस आगामी वर्ष का मूल्य ४) अतिशीघ्र मनीआर्डर से भिजवा देवें। वी० पी० अधिक खर्च व्यर्थ ग्राहक पर पड़ता है अतः वी० पी० द्वारा सुधारक नहीं भेजते। आशा है, सुधारक प्रेमी ग्राहक तुरन्त अपना शुल्क भेजकर कृतार्थ करें

व्यवस्थापक—सुधारक

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

ओ३म्

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष २
अङ्क ३

गुरुकुल झज्जर (रोहतक), कार्तिक सं० २०११ वि०
नवम्बर १९५४, दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

विश्वधा—गौ—माता—अवध्या है

माता रुद्राणां दुहिता वसूनाᳬ
स्वसादित्यानममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचञ्चिकितुषे जनाय
मा गामनागामदितिं वधिष्ठ ॥
ऋ० ८-१०१-१५

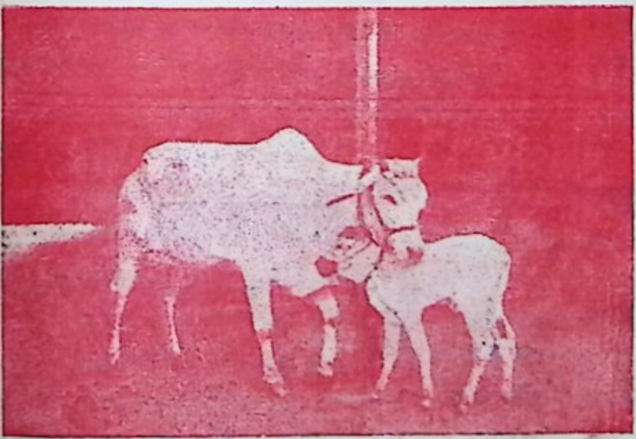

मैं राष्ट्रजन (चिकितुषे-जनाय) समझदार मनुष्य के लिये (प्र-वोचम्) प्रवचन करता हूं—समझाता हूं "कि ऐ राष्ट्र नेताओ ! (अनागाम्-अदितिम्-गाम्) निष्पाप, अखण्डनीया पूज्या गौ को (मा-वधिष्ठ) मत मारो—हत्या करना तो दूर, थोड़ी भी पीड़ा गौ को न दो, (नु) क्योंकि यह गौ-माता (अमृतस्य-नाभिः) अमृत=जीवन=प्राण का आधार है । यह (रुद्राणाम्) महा तेजस्वी वीरों की (माता) मान्यता दिलाती है, (वसूनाम्) राष्ट्र के प्राण स्वरूप महाविद्वानों की (दुहिता) सब श्रेष्ठ कामनाओं को पूर्ण करती है तथा (आदित्यानाम्) अबाधित रूप से सर्वत्र गमनागमन करने वाले राष्ट्र के आधारभूत प्रजाजनों की (स्वसा) सुख देकर वैसे ही पालन करती है, जैसे कि परिवार में माता, पुत्री और बहिन सुख पहुँचाती हैं । विश्व का कल्याण गोहत्या निषेध में निहित है ।"

* * *

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सह सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

इस अंक की विषय सूची

विषय	लेखक	पृ०
ब्रह्मचर्यमहत्वम्	श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न	३-४
सम्पादकीय		५-६
राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान	श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति	७ से १०
अपतन्त्रक	श्री बलराम आर्य वैद्य	११
आदर्श कर्मवीर (कविता)	श्री श्यामलाल सिद्धान्त शास्त्री	१४
सभ्यता पर गौ का प्रभाव	श्री डा० रामस्वरूप जी	१५
चरित्र बल	श्री मा० दीपचन्द जी बी० ए०	१६
संस्था समाचार		२२

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—आर्यसमाज या वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं ली जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है।

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संस्कृत में करें, उत्तर के लिये जवाबी कार्ड डालें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चौथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	९)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिभ ५% अधिक।

,, तृतीय १०% अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

(श्री पण्डित मेधाव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्)

[गताङ्क से आगे]

मन्त्रः—अभिक्रन्दन् स्तनयन्नरुणः शितिङ्गो बृहच्छे-
पोऽनुभूमौ जभार । ब्रह्मचारी सिञ्चति सानौ रेतः
तेन पृथिव्याँ जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः ॥
(अथर्व० ११।५।१२)

अभिक्रन्दञ्छितिङ्गोऽलं स्तनयन्नरुणो यदा ।
ब्रह्मचारी बृहच्छेपो भूमावनुहरत्यसौ ॥६०॥

अर्थ—जब यह अत्यन्त बलशाली, श्यामवर्ण, देदीप्यमान, ब्रह्मचारी गरजता है और कड़कता हुआ भूमि पर अनुग्रह करता है ।

तदा सिञ्चति यद्रेतः सानौ समतलावनौ ।
पृथिव्यां तेन जीवन्ति चतस्रः प्रदिशो भृशम् ॥६१॥

अर्थ—तब वह समतल भूमि व उच्च स्थानों पर रेतः का सिंचन करता है जिससे पृथ्वी पर चारों दिशाएं निरन्तर जीवन प्राप्त कर रही हैं ।

तदम्बरस्थं जगदाधिदैविकं
सुब्रह्मचारी जलवीर्यमातपैः ।
स्वमूर्ध्वगामि प्रविधाय वर्षणैः
करोति पृथ्वीं वरजीवनान्विताम् ॥६२॥

अर्थ—आकाश स्थिति आधिदैविक जगत् रूप बहुबलशाली देदीप्यमान ब्रह्मचारी किरणों द्वारा अपने जलरूप वीर्य को उर्ध्वगामी बनाकर वर्षण से पृथ्वी को उत्तम जीवन (धारक शक्ति) सम्पन्न बना देता है ।

क्रन्दन्नमन्दं स्तनयन् बृहद्बलः
सुश्यामलो मेघ इवाधिभौतिकः ।
समाज आत्मव्रतिभिःश्रुतामृतं
प्रवर्ष्य संजीवयति प्रजागणम् ॥ ६३ ॥

अर्थ—बहुत प्रभावशाली, शक्तिमान, श्यामवर्ण, (प्राणियों में श्रेष्ठ) आदिभौतिक समष्टि ब्रह्मचारी अपने स्नातक बन्धुओं द्वारा वेदामृत की वृष्टि कराके समस्त प्रजा को वैसे ही उत्तम जीवन प्रदान कराता है जैसे बहुत गरजता और कड़कता हुआ काला मेघ ।

स ऊर्ध्वरेतास्तपसा व्रतीश्वरः
प्रलभ्य धर्माम्बुधराम्बुवर्षणम् ।
समग्रमङ्गं नवदिव्यजीवना-
मृतैःप्रफुल्लं कुरुतेऽरुणप्रभः ॥ ६४ ॥

अर्थ—उसी प्रकार (आभ्यन्तर शक्ति सम्पन्न) ब्राह्मतेज से देदीप्यमान , व्रतियों में श्रेष्ठ (व्यष्टि-जगत्) ऊर्ध्वरेता योगी 'ब्रह्मचारी' तपस्या से धर्म-मेघ समाधि में अम्बुवर्षण (ओज) को प्राप्त करके नई-नई दिव्य जीवनीय (अणिमा, लघिमा, गरिमा आदि अलौकिक सिद्धियों द्वारा प्राण केन्द्रों पर) अमृतवृष्टि कर समस्त शरीर के अङ्गों को तृप्त करता रहता है । शरीर के सारे सूक्ष्म अवयव जीवन प्राप्त करते रहते हैं ।

वीर्योर्ध्वगत्यां मनुजस्य योगिनो—
यो दिव्य आनन्द इहोपजायते ।
तं शान्तमेते क्षणसौख्यभोगिनो—
विद्युर्यदि स्याद् बहुमङ्गलं तदा ॥ ६५ ॥

अर्थ—योगी मनुष्य के वीर्य की ऊर्ध्वगति होने पर जो दिव्य आनन्द उसे मार्ग में आता है यदि ये क्षण सुखभोगी (संसारी जन) उस शान्त गम्भीर आनन्द को समझ जायें तो उनका बहुत कल्याण हो ।

कल्माषश्यामवर्णो वियति विलसति ब्रह्मचारीन्द्रमेघः
क्रन्दन्घोरं च गर्जन्नुपचितसुबलः सोऽनुगृह्णाति भूमिम् ।
रेतःशाली पृथिव्यां गिरिवरशिखरक्षेत्रभागेऽम्बुरेतः
सिञ्चत्याशाश्चतस्रस्सकलस्तनुभृतस्तेन जीवन्ति तृप्ताः
॥६६॥

अर्थ—जल धारण से अत्यन्त बलशाली भूरा व श्यामवर्ण मेघ ब्रह्मचारी भयङ्कर गर्जता व कड़कता हुआ आकाश में अपनी छटा दिखाता है, एवं भूमि पर दया-दृष्टि घुमाता है। रेतःशाली = जलपुञ्जधारी वर मेघ पृथिवी के ऊँचे पर्वत शिखरों व सस्य-सम्पत्-सनाथ क्षेत्र भागों पर जलरूपी वीर्य का सिंचन करता है, जिससे तृप्त हुआ हुआ समस्त प्राणिवर्ग व चारों दिशायें जीवन प्राप्त करती हैं।

मन्त्रः—अग्नौ सूर्ये चन्द्रमसि मातरिश्वन् ब्रह्मचार्यप्सु समिधमादधाति। तासामर्चींषि पृथगभ्रे चरन्ति तासामाज्यं पुरुषोवर्षमापः ॥ अथर्व० ११।५।१० ॥

अग्नौ सूर्ये चन्द्रमस्यप्सु वाया—
देधो रार्शि ब्रह्मचार्यादधाति।
तस्यार्चींषि व्योम्नि भिन्नं चरन्ति
तस्यैवाज्यं पूरुपो वर्षमापः ॥६७॥

अर्थ—ब्रह्मचारी अग्नि में, सूर्य में, चन्द्रमा में, जल ं और वायु में पृथक्-पृथक् समिधाओं का आधान करता , उन समिधाओं की लपटें आकाश में भिन्न-भिन्न रूप से र्तमान रहती हैं, उन्हीं का वृत्त देदीप्यमान आत्मा है था व्यापककर्म ही वर्षा है।

सूर्येऽग्नौ पवने हिमांशुवलये श्रीब्रह्मचारी जले
तत्तज्ज्ञानमयीं पवित्रसमिधं भक्त्या दधातीशितुः।
प्राकाशे पृथगेव यन्ति विमले तासां सदर्चीष्यहो !!
ासामाज्मयं यमीन्द्रपुरुषः सत्कर्मवृष्टिःक्रतोः ॥६८॥

अर्थ—शासक आचार्य की भक्ति करता हुआ उत्तम ह्मचारी सूर्य, अग्नि, वायु, चन्द्रमा तथा जल में तत्तत् ान की द्योतक पवित्र समिधाओं का आधान करता है। हो ! उन समिधाओं की ज्वालायें निर्मल आकाश में थक्-पृथक् ही वर्तमान रहती हैं। संयमी आत्मा उन्हीं ा घृतरूप होता है तथा यज्ञ से सत्कर्मरूपी वृष्टि ती है।

तात्पर्य यह है कि—सूर्यादि का ज्ञान ब्रह्मचारी के त्र अन्तःकरण में पृथक्-पृथक् स्थित रहता है, मिलकर चड़ी नहीं हो जाता है, एवं सत्कर्मों से पुरुष संयमी ता है। शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रतिदिन यज्ञ करने यही उद्देश्य है।

रेतःप्राणमनोविलोचनसुवाग्देवाग्निषु व्यक्तितां
हुत्वा स्वां समिधं विधाय वशगान् देवानि मानात्मनः।
एषां तत्त्वविदेव संयमधनः सम्पद्यते वर्णिराट्
तत्साहाय्यबलेन विन्दतितरामानन्दवर्षामृतम् ॥६९॥

अर्थ—वीर्य, प्राण, मन व ज्ञानेन्द्रियों के प्रतिनिधि चक्षु तथा कर्मेन्द्रियों के प्रतिनिधि वाक्-इन्द्रिय, दिव्याग्नियों में निज समिधाओं को समर्पित करते हुए समस्त देवगणों को अपने अधीन बनाकर ही वस्तुतः वह अत्यन्त संयमी—तत्त्ववेत्ता व उत्तम ब्रह्मचारी बनता है। फिर तो वशंवद हुए उन देवों की सहायता से वह आनन्दामृत का नित्य पान करता है।

ऊर्ध्वगस्य हि तैलस्य वर्तिकावर्त्मना यथा।
सुषुम्णया सुवीर्यस्य ज्वलनं वर्णिनस्तथा ॥७०॥

अर्थ—सुषुम्णा नाड़ी के द्वारा ऊपर गये हुए ब्रह्मचारी के उत्तम वीर्य का वैसा ही दीपन होता है जैसे बत्ती के मार्ग से चढ़े हुए तैल का।

विविधां ज्ञानसंदीप्तिं कुर्वते ब्रह्मचारिणः।
ततो नानाविधा दिव्या लभ्यन्ते तैः सुसिद्धयः ॥७१॥

अर्थ—ब्रह्मचारी गण को भिन्न-भिन्न प्रकार के ज्ञानों का प्रकाश हो जाता है, उससे वे अनेक विध दिव्य सिद्धियां प्राप्त करते हैं।

विष्णोरग्न्यर्कचन्द्रानिलसलिलमुखाः
शक्तयः सन्ति दैव्या, आध्यात्मिक्योऽपि तासां वपुषि
तनुजुषां वाग्दगाद्याः सदंशाः। पंचप्राणैः सुभूतैरपि
जगति महानन्वयः ख्यात आसां बाह्यान्तर्देवतृप्त्यै
यजति विमलमात्मानमात्मज्ञवर्णी ॥७२॥

अर्थ—जगत् में विष्णु भगवान् की शक्तियों में अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा, वायु और पानी दिव्य शक्तियों प्रधान हैं—शरीर से सम्बन्धित उन अग्नि आदि शक्तियों के सार-अंश में शरीर में भी वाक् चक्षु-मन-प्राण और वीर्य क्रमशः आध्यात्मिक शक्तियें हैं। प्राण-अपान-उदान-समान और व्यान रूप पांच प्राणों तथा पृथिवी-द्यौ-विद्युत दिशाएँ व आकाश के साथ भी अग्नि आदि दैविक शक्तियों का बड़ा भारी सम्बन्ध सर्वविदित है ! आत्मरत ब्रह्मचारी बाह्य व आभ्यन्तर इन समस्त देवों की तृप्ति के लिए अपने पवित्र आत्मा का यजन करता रहता है।

(क्रमशः)

सम्पादकीय---

श्रमिक वर्ग

(किसान, मजदूर, कारीगर और दुकानदार)

वेद में राजा को "बिशांपतिः" कहा गया है और प्रजा को "विशः" शब्द से कहा गया है। अर्थात् राजा का कर्त्तव्य है कि वह प्रजाओं की रक्षा करे। वेद प्रतिपादित राजा कोई स्वयं सिद्ध राजा नहीं है। अपितु जिस को प्रजायें चाहें वही राजा हो सकता है। अथर्ववेद में कहा है—"विशस्त्वां वाञ्छन्तु" अर्थात् प्रजायें तुझे चाहती हैं—"वृणतां त्वां राज्याय" तुझे प्रजायें राज्य के शासन के लिये छांटती हैं—स्वीकार करती हैं। इससे प्रकट होता है कि वेद में "विशः" शब्द को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसी से "वैश्य" शब्द स्मृतियों में साधारण प्रजा अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। समाज में ब्राह्मण वर्ण बहुत थोड़ा होता है, क्षत्रिय उससे कुछ अधिक होता है। शूद्र वर्ण की संख्या भी अधिक नहीं होती। यद्यपि ब्राह्मण और क्षत्रियों के योग से वह अधिक संख्यक होता है। वैश्य वर्ण शेष तीनों वर्ण की मिली हुई संख्या से भी अधिक होता है। इस कारण समाज में वैश्य वर्ण की प्रधानता रहती है। इसी भाव को वेद में "विशः" शब्द से कह दिया गया है। साधारण रूप से विशः = प्रजाओं के आजकल की दृष्टि से (वर्ण व्यवस्थानुसार नहीं) चार मुख्य भेद हैं—किसान, मजदूर, कारीगर और दुकानदार। यही चारों पेशे राष्ट्र अथवा समाज में व्यापक हैं। अन्य पेशे शिक्षा, सेना और शासन का कर्मचारी वर्ग आदि थोड़ा-थोड़ा है। भारत की वर्तमान जनसंख्या में उपर्युक्त चारों वर्गों की संख्या लगभग ६० प्रतिशत है। शासन-व्यवस्था के शुद्ध न होने से राष्ट्र की आर्थिक सम्पत्ति का विभाग भी अशुद्ध है। ये चारों पेशे राष्ट्र का समस्त कच्चा उत्पादन करते हैं। खेती की पैदावार, वस्त्र, लोहा तथा काठ आदि का निर्माण, समस्त कारखानों का श्रम और कच्चे माल का यातायत इन्हीं के द्वारा होता है। अतः राष्ट्र का कर्तव्य है कि इन चारों की उन्नति का ध्यान रखे और इनको शोषित और पीड़ित न होने देवे। राष्ट्र के जो स्वार्थी-लोभी जन इनके श्रम से स्वयं मोटे होना चाहते हैं, राज्य शासन द्वारा उन पर अंकुश रखा जाना आवश्यक है।

वेद में कहा है—"स राजा न व्यथते यस्मिन्" इस के दो अर्थ हैं—(१) राजा वही कहला सकता है जिसके शासन में प्रजाओं को पीड़ा नहीं होती। (२) वह राजा नहीं हो सकता जिसके शासन में ये चारों उत्पादक वर्ग कष्ट पाते हों। वेद में समाज के शोषक वर्ग को "वृत्र" शब्द से कहा है। "वृत्र" शब्द का अर्थ है—रुकावट डालने वाला। ऐसे सामाजिक कल्याण के अवरोधक तत्वों को नष्ट करना राजा का कर्तव्य है। इसीलिये वेद में राजा का "वृत्रहा" नाम है—अर्थात् वृत्रों = समाज के पदार्थों को अनुचित संग्रह करके स्वार्थ सिद्ध करने वालों को राजा दण्ड देवे। इन वर्गों की रक्षा और सम्पन्नता पर राष्ट्र की सम्पत्ति बढ़ती है।

वर्तमान युग के सब से बड़े महापुरुष महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं—"राजाओं के राजा किसान आदि परिश्रम करने वाले हैं।" इस वाक्य से पता चलता है कि ऋषिवर को किसान आदि परिश्रम करने वाले राष्ट्र भाग का कितना ध्यान था। वेद में किसान को 'कवि' नाम से कहा है—"सीरा युञ्जन्ति कवय." अर्थात् क्रांतिकारी किसान हल चलाते हैं—हमारे भारतीय राष्ट्र में उपर्युक्त चारों श्रमिक वर्गों की अवस्था अच्छी नहीं है। किसान दिन-रात बाल-बच्चों, स्त्रियों और वृद्धों सहित खेत में कमाता है परन्तु स्वयं नंगा, भूखा, अशिक्षित और शोषित रहता है। कारखानों आदि के मजदूर खून पसीना एक करके राष्ट्र की औद्योगिक सम्पत्ति को बढ़ाते हैं परन्तु आर्थिक दशा इनकी शोचनीय रहती है। सुख इनके पास फटकने नहीं पाता। कारीगर दिन-रात छोटे-छोटे ग्रामीण धन्धों में लगा रहता है परन्तु अपने साथी किसान और मजदूर की दशा में जीवन व्यतीत करता है। दुकानदार गांव के कच्चे माल को मण्डियों में पहुँचाता है और नगरों के साधारण उस सामान को गांवों में ले जाता है जिसकी गांव में खपत हो सकती है। अदला बदली में ही अपना सारा जीवन समाप्त कर देता है। इस की दशा भी अपने गांव के तीनों साथियों जैसे ही रहती है। इन चारों वर्गों पर राष्ट्र खड़ा है परन्तु सबसे अधिक उपेक्षित भाग यही है। इस कच्चे माल को लेकर बड़े-बड़े मालदार पूंजीपति

पंखों के नीचे बैठे सारा सार-भाग उड़ा जाते हैं। अपनी सन्तान को उच्च शिक्षा दिलाते और सरकारी उच्च पदों को प्राप्त करते हैं। बड़े-बड़े इंजिनियर, प्रौफेसर और राज्य कर्मचारी आदि स्थानों को यही घेरे रहते हैं। शासन की सत्ता पर इन्हीं का अधिकार होने से उपर्युक्त चारों श्रमिक वर्गों का न्याय भी सुलभ नहीं होता। सरकार की प्रतिज्ञायें बड़ी-बड़ी होती हैं परन्तु ये स्वार्थी लोग उनका लाभ पीड़ित जनता तक नहीं पहुंचने देते। वेद में ऐसे अत्याचारियों को "पणि" कहा गया है और राजा को आदेश दिया है कि "जहि पणिम्" अर्थात् इन स्वार्थियों को शासन से नष्ट कर डालो।

संसार को दिखाने के लिये किसान-मजदूर के नाम पर घोषणायें होती हैं परन्तु उन घोषणाओं का फल पीड़ित जनता तक पहुंचता ही नहीं। उन किसान-मजदूरों के नाम पर ये बीच वाले स्वार्थी स्वयं सब लाभ को हड़प जाते हैं। इस का एक उदाहरण पर्याप्त होगा--भारत सरकार ने एक घोषणा की थी कि कुछ किसान खेती आदि के काम को देखने और सीखने के लिये अमेरिका भेजे जावेंगे। इस घोषणा के परिणाम स्वरूप कुछ लोग अमेरिका भेजे भी गये। इन के पास अग्रीकलचर की डिग्री भी थी, परन्तु इन में किसान वर्ग के काम करने वाला कोई भी व्यक्ति न था। वही बाबू लोग किसान के नाम पर वहां पहुँच गये। एक सुशिक्षित सज्जन हमें मिले और कहने लगे कि मैं किसान के सब कामों से परिचित हूँ–चाहे खेती न करता हूँ। सौभाग्य से उस दिन वर्षा हो रही थी। महीना यही आश्विन का था। तब उस सज्जन ने अपनी किसान-योग्यता का परिचय देते हुये कहा कि बड़ी अच्छी वर्षा हो गई है। अब तो बाजरा और चणे खूब बोये जायेंगे। हम ने उस महाशय को जो कुछ कहना था—कहा। यह अवस्था है उन लोगों की जो कि किसान के नाम पर राष्ट्र के खून-पसीने की कमाई पर मौज उड़ाने के लिये विदेशों की सैर करते हैं और "कृषि विशेषज्ञ" की उपाधि लेकर लौटते हैं। इस प्रकार बहुत बड़ा दम्भ किया जाता है। सरकार का यह प्रथम कर्तव्य है कि वह राष्ट्र के सभी वर्गों का ध्यान रखे। शोषित-पीड़ित वर्गों के उत्थान के लिये विशेष ध्यान रखे।

यह आवश्यक नियम है कि कोई भी व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र अपने ही बल पर उन्नत हो सकता है। अतः किसान आदि चारों वर्गों का यह कर्तव्य है कि वे स्वयं उठें। आज जनतन्त्र युग में इन चारों वर्गों को शासन-सत्ता मिल सकती है। इन श्रमिक वर्गों को मिले रहना चाहिये। अपने में से योग्य सदाचारी जन सेवक व्यक्ति को शासन कार्य के लिये आगे बढ़ाना चाहिये। अत्यन्त खेद है कि किसान आदि पीड़ित वर्ग के वोट=मतों को लेकर बड़े-बड़े पूंजीपति शासन सत्ता को पकड़ लेते हैं। यह पीड़ित शोषित लोग उनके लुभावने जाल में फंस जाते हैं। जब वह पूंजी का लाडला चुन लिया जाता है तब इन पीड़ितों की ओर मुँह करके भी नहीं सोता। अतः इन श्रमिक लोगों को अपना आचरण उत्तम रखना चाहिये। जाति बिरादरी की दीवारों में घिरे नहीं रहना चाहिये। अपना सर्वस्व स्वाहा करके अपने बालकों को सुशिक्षित बनाना आवश्यक है। भारत का यह श्रमिक वर्ग अभी तक हीन दशा में है। परन्तु हमारे देखते-देखते चीन आदि देश के किसान आदि श्रमिक लोग अपने राष्ट्र के स्वामी बन चुके हैं। यह पूर्ण ध्यान रखना चाहिये कि अपनी संस्कृति, सभ्यता और पवित्र आचरण को कभी नहीं छोड़ना चाहिये। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी-अपनी मर्यादायें होती हैं। हमारा भारत राष्ट्र वैदिक मर्यादा पर खड़ा है। तब हमें वैदिक संस्कृति को धारण करना ही श्रेयस्कर है। इसी से पारस्परिक मत भेद दूर होते हैं। अमीर-गरीब और छोटा-बड़ा भेद नहीं रहता। गुण-कार्य का आदर होता है।

किसान, मजदूर, कारीगर और दुकानदार सब एक ही तत्व के चार मुख्य भाग हैं। चारों एक दूसरे के सहायक और पूरक हैं। पारस्परिक सहयोग भावना को बढ़ाते रहना अच्छा है। अपनी त्रुटियों को छोड़ना और दूसरों के गुण ग्रहण करना आवश्यक है। पक्षपात में अपने दुर्गुणों पर अड़ जाना अच्छा नहीं। सुधारक का यह सदा यत्न रहता है कि जनता के सब भागों में साम्य बना रहे। एक-दूसरे की सहयोग भावना सुदृढ़ हो। कुरीतियों से दूर रहें। सद्गुणों को धारण करें। तब यह सम्भावना है कि उपर्युक्त श्रमिक वर्ग उठ जायेगा और अपनी वास्तविक स्थिति को प्राप्त कर सकेगा।

राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान

(श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति)

[४—गतांक से आगे]

गीता के ये राष्ट्र के मूल भूत सिद्धांत जब तक राष्ट्रिय जीवन में प्रकट नहीं होंगे तब तक राष्ट्र में किसी भी उपाय से शांति उपस्थित नहीं होगी। जितने भी उपाय किए जा रहे हैं वे उलझे हुए तागे को सुलझाने के लिये हैं, परन्तु एक ओर से सुलझाते हैं तो दूसरी ओर, दूसरी ओर सुलझाते हैं तो पहली ओर दृढ़ गांठ पड़ती जाती है। इसी प्रकार राष्ट्र में एक समस्या का हल होने नहीं पाता, तभी दूसरी समस्या खड़ी होकर व्याकुलता उत्पन्न करती है। गीता केवल हाथ जोड़ने की पुस्तक नहीं है, परन्तु वह उत्तम राष्ट्र निर्माण शास्त्र है। उसके सिद्धांत के अनुसार सिक्के का चलना बिल्कुल बन्द करना होगा और राष्ट्रिय जीवन में संतुलन लाना होगा। जब तक गीता के पूर्वोक्त सिद्धांतों का जीवन में प्रसार नहीं होगा, तब तक किसी भी अन्य उपाय से शांति नहीं होगी। इस सम्बन्ध में जो कठिनता उपस्थित होती हैं, वे सब कठिनताएं गुरुकुल की आधार भूत शिक्षण प्रणाली से दूर हो सकेंगी। उस शिक्षण प्रणाली में कर्म वा श्रम की राष्ट्र हित की दृष्टि से प्रधानता है, इसलिये गुरुकुल व्यवस्था के आधार पर जिस राष्ट्र का निर्माण होगा उस राष्ट्र में विषमता का दोष नहीं रहेगा और समता का जीवन उपस्थित होगा। इस प्रकार हमें दोष और उनका निवारण समझना चाहिए।

प्रश्न ७—गुरुकुल शिक्षण पद्धति का नाम क्या हो ?

उत्तर—गुरुकुल शिक्षण पद्धति का नाम धर्मनीति शक्षण है। धर्म शब्द का अर्थ मर्यादा है। इस शिक्षण के द्वारा शिष्यों को मर्यादा में रहना सिखाया जाता है। जीवन के अन्दर मर्यादा के टूट जाने से राष्ट्र विश्रृङ्खलित हो जाता है। उसमें सुव्यवस्था नहीं रहती। सब लोग अपनी-अपनी मर्यादा में रहते हुए कार्य करें और अपने जीवन के उद्योगों को राष्ट्र के अर्पण करने का अभ्यास करें तो इसी अभ्यास का नाम नीति वा सदाचार होता है। यह अभ्यास अर्थात् मर्यादा में रहने का क्रियात्मक अभ्यास पीछे से वा बलात्कार से नहीं होता। प्रारम्भ से ही गुरुकुल शिक्षणालयों में बच्चों को कराया जाता है, और उनकी आदतें पकी हुई न होने से वे किसी भी अभ्यास को, मनोवैज्ञानिक ढङ्ग से शिक्षण देने से, सुगमता से ग्रहण कर लेते हैं। इसलिए गुरुकुल शिक्षण प्रणाली शिक्षण के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिक प्रणाली है। जिसमें प्रत्येक प्रकार के ज्ञान का अभ्यास, सुचारु रूप से अर्थात् कला के द्वारा बालकों की वृत्ति का विकास करते हुए, कराया जाता है। इस मुख्य विशेषता को लेकर इस शिक्षण प्रणाली का नाम धर्मनीति—शिक्षण रखना उचित प्रतीत होता है।

प्रश्न ८—शिक्षकों का शिक्षण कैसा हो ?

उत्तर—इस शिक्षा क्रम में शिक्षकों को, शिक्षाओं का प्रकार स्वयं निकालना होगा। शिष्यों की विभिन्न वृत्तियों में कार्य करते हुए शिक्षक जब यह निश्चय कर लेंगे कि व्यक्ति और राष्ट्र को उन्नति के सम्बन्ध में विकसित करने वाली वृत्तियां शिक्षकों को अवश्य ही विकसित करनी हैं तो शिक्षकों को शिष्यों के द्वारा स्वयं ही शिक्षण का मार्ग मिलता चला जायेगा। इसलिए धर्मनीति के द्वारा दी जाने वाली राष्ट्रिय शिक्षा का शिक्षा क्रम कोई ठोस वस्तु नहीं बन सकता। शिक्षकों को मनोवैज्ञानिक तरीके से हर समय शिक्षण के क्षेत्र में प्रवेश करना होगा। जिन शिक्षकों को मनोवैज्ञानिक ढङ्ग से शिक्षण का मार्ग निकालने का स्वभाव नहीं पड़ा हुआ है और जिनमें इस प्रकार की समयोचित् सूझ नहीं है वे शिक्षण कला से अनभिज्ञ होने के कारण शिक्षक नहीं बन सकते।

प्रश्न--६:---शिक्षण क्रम का उद्देश्य क्या है ?

उत्तर:—धर्मनीति का शिक्षा क्रम जीवन निर्माण के लिए है, इसलिए जब से जीवन आरम्भ होता है तब से लेकर मृत्यु पर्यन्त संपूर्ण जीवन धर्मनीति का क्षेत्र है। इस शिक्षा क्रम में शिष्य का निर्माण होते हुए उसके शिक्षक का पहले निर्माण होता है। जीवन निर्माण का शिक्षा क्रम शिक्षा की अवधि पर नहीं बल्कि उसकी गहराई पर बल देता है। यह शिक्षा क्रम, जीवन भर के लिए और जीवन के द्वारा दोनों ओर से हैं। इस शिक्षा क्रम में जीवन के सारे पहलुओं का समावेश है। जीवन में कोई भी छोटी बड़ी बात ऐसी नहीं है जिसका संबंध शिक्षण से न हो। शिक्षकों को ध्यान में रखना चाहिए कि सफाई, स्वच्छता, आरोग्य, स्वावलम्बी जीवन घर में व शिक्षणालय में, माता-पिता तथा गुरुजन तथा उसी प्रकार अन्य मान्य सज्जनों की सहायता करना और उन्हें मान देना आदि सब स्वभाव इस धर्म नीति के शिक्षण क्रम में हैं।

शिक्षा को हम इस दृष्टि से देखें तो वह जीवन के साथ चलने वाली वस्तु बन जाती है। सफाई आरोग्य, सामाजिक शिक्षण, काम और प्रार्थना, खेल-कूद और मनोरंजन ये सभी प्रवृत्तियां शिक्षा क्रम के विभिन्न विषय न होकर सर्वांगीण संतुलित, अविरोधी जीवन के पूर्ण विकास के लिए आवश्यक प्रवृत्तियां हैं। इस प्रकार ये शिक्षा का साधक बन जाती हैं। व्यक्ति का सुसम्बन्धित विकास ही धर्मनीति का ध्येय नहीं, प्रत्युत राष्ट्रोन्नति की दृष्टि से एक ऐसे समाज का निर्माण करना उसका ध्येय है जिसका आधार न्याय पर हो और जिसमें सबके साथ समानता का व्यवहार हो। सबको योग्यतानुसार स्वतन्त्रता से आगे बढ़ने का अधिकार प्राप्त हो।

शिक्षा का यह आदर्श नया नहीं है, बहुत पुराने समय से आज तक के सब शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा के इस आदर्श को सिद्धांततः स्वीकार किया है कि इस आदर्श को पूरा करने के लिए शिक्षा उत्पादक काम के द्वारा दी जावे। और यह शिक्षा परनिरपेक्षा स्वावलम्बी बने। सच्ची शिक्षा वह है जिसे पाकर मनुष्य अपने शरीर, मन और आत्मा के उत्तम गुणों का पूर्ण विकास कर सके और उन्हें प्रकाश में ला सके। साक्षरता शिक्षा का अन्तिम ध्येय नहीं है। उससे शिक्षा आरम्भ भी नहीं होती यह तो सभी पुरुषों को शिक्षित करने में अनेक साधनों में से एक साधन मात्र है। साक्षरता अपने आप में कोई शिक्षा नहीं है। इसीलिए गांधीजी कहते हैं कि बच्चे की शिक्षा का आरम्भ उसी क्षण से हो जाता है जिस क्षण से वह कुछ न कुछ नया सर्जन करने के अभ्यास को ग्रहण करना है। स्वामी दयानन्द जी वैदिक विचारों के आधार पर शिक्षण का आरम्भ जन्म से भी पूर्व गर्भावस्था में और इच्छानुसार बालक उत्पन्न करने के लिए गर्भाधान से भी पूर्व अनुकूल तैयारी करने से लेकर शिक्षा का आरंभ मानते हैं। इस पद्धति से मन और आत्मा में उच्च से उच्च विचारों का विकास किया जा सकता है।

जो उद्योग-धन्धे यन्त्रवत् सिखाये जाते हैं वे वैज्ञानिक ढंग से सिखाये जाने चाहिएं। बच्चों को उनके अनुभव के आधार पर यह समझाया जाए कि कौन सी क्रिया किस लिए की जाती है। इसके लिये उनके अनुभव में वृद्धि करनी चाहिये। इस शिक्षण पद्धति में शरीर-श्रम का महत्त्व विशेष है, इसलिए शिक्षकों को चाहिए कि वे बालकों को शरीर श्रम का महत्त्व और गौरव समझायें, जिससे कि बालक शरीर श्रम को बुद्धि के विकास का एक अविभाज्य अंग और साधन मानना सीखें, और समझें कि अपने परिश्रम से अपना निर्वाह करने में राष्ट्र की सेवा है। अभिप्राय यह है कि बालकों जो हस्त-कौशल सिखाया जाए वह उनके किसी प्रकार के उत्पादक कार्य करने की इच्छा से नहीं प्रत्युत उनकी बुद्धि का विकास करने के विचार से सिखाया जाए। ज्ञान के सभी क्षेत्रों में मन का विकास प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि सारा ज्ञान किसी उद्योग के द्वारा ही दिया जाए।

बच्चों को जो हस्तोद्योग सिखाया जाए उसके द्वारा उन्हें पूर्णरूप से शारीरिक बौद्धिक और आत्मिक शिक्षा दी जाए। उद्योग की सभी क्रियाओं के द्वारा बचों के अन्दर जो भी अच्छा बीज है उस सबको विकसित करना है। धर्म नीति की शिक्षा का उद्देश्य कोई व्यवसाय सिखाना नहीं है किन्तु कला देकर मनुष्य बनाना है, अर्थात् अघड़ को सुघड़ बनाने वाली यह शिक्षा है।

मनुष्यों को जीवन का रस प्राप्त करना है । धर्मनीति अपूर्ण मनुष्यों को सम्पूर्ण बनाती है । इस प्रकार की शिक्षा से बच्चे स्वावलम्बी बनते हैं । धर्मनीति मनुष्य को स्वाश्रयी बनाती है । स्वाश्रयी होना ही इसकी कसौटी है ।

इस शिक्षण से असमृद्धि दूर होकर ग्रामों के लोग समृद्ध बनेंगे । समृद्धि बाहर से नहीं आवेगी परन्तु भीतर से प्रत्येक ग्रामीण के शुद्ध उद्योग से आवेगी । स्वावलंबी शिक्षण का सर्व प्रथम अर्थ यह है कि संस्थाओं में जो काम शिक्षा के माध्यम के रूप में चुना जाए उसके उत्पादन से उस संस्था के चालू खर्च का एक बड़ा भाग निकल सके । यह स्वावलंबन केवल अर्थ की दृष्टि से नहीं है बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक व राजनैतिक दृष्टि से भी है । इस शिक्षण से जो समाज या व्यक्ति तैयार हो जाते हैं वे आर्थिक, सामाजिक व नैतिक सभी दृष्टियों से स्वावलम्बी होते हैं । स्वावलम्बी व संतुलित जीवन बनाने की प्रवृत्ति भी इस शिक्षण का माध्यम बनती है । इसी के द्वारा विद्यार्थी को विषयों की आवश्यक जानकारी दी जाती है, उसकी आदतों, व्यवहारों व मनोवृत्तियों का सन्तुलित विकास किया जाता है । यही स्वाश्रयी धर्मनीति शिक्षण-पद्धति है ।

धर्मनीति की शिक्षण-पद्धति यह मानती है, कि शिक्षा का भवन यदि पक्का करना है तो आधार गहरा होना चाहिए । इसलिए यदि बच्चों की शिक्षा को दृढ़ करना है तो यह शिक्षण उनके मां-बाप वा समाज से शुरू होना चाहिए । जिसमें सारे समाज की सफाई, स्वास्थ्य के नियम, मां का कर्त्तव्य, उद्योग-धन्धे, सामाजिक शिक्षण, शुद्ध मनोरंजन के उपाय आदि बातें आ जायें । शिक्षणालय में रहने वाले बालकों को घर ग्राम व नगर का वातावरण भिन्न मालूम न हो । जब से बच्चा मां-बाप का आश्रय छोड़ चलने-फिरने लग जाता है तब से उसकी शिक्षा का क्षेत्र घर से शिक्षणालय तक बढ़ जाता है । घर, शिक्षणालय और गांव में बच्चे के शरीर व मन का पूर्ण विकास और नागरिकता की पहली तैयारी ही इस शिक्षण की योजना में बच्चों के शिक्षण का कार्यक्रम है । शिक्षण के उस कार्यक्रम में बच्चों का शारीरिक पोषण, स्वास्थ्य का निरीक्षण, व्यक्तिगत और सामाजिक सफाई तथा आरोग्य एवं अपना कार्य स्वयं करने का स्वभाव, सामाजिक शिक्षण और काम, खेल की सर्जनात्मक और रचनात्मक प्रवृत्तियाँ, भाषा कला और संगीत में आत्मा का प्रकाश, प्रकृति निरीक्षण आदि बच्चों के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली सभी बातें सम्मिलित हैं ।

साधारण शिक्षणालय और उच्च शिक्षणालय के शिक्षण का प्रयोग भी किसी न किसी उत्पादक काम के द्वारा विद्यार्थी को ज्ञान और विज्ञान के अधिक ऊँचे स्तर तक पहुँचाने के लिए है और साथ ही साथ उन्हें अपनी पारिवारिक और सामाजिक जिम्मेवारी के लिए तैयार करता है । इस शिक्षण प्रणाली से यह अपेक्षा की जाती है कि विद्यार्थी अपने शिक्षा के समय ही अपने खाने और कपड़े की समस्या को अपने काम से ही पूरा कर सके । इस प्रकार विद्यार्थी समाज की किसी न किसी उपयोगी प्रवृत्ति के द्वारा अपने परिवार के लिए आवश्यक कार्य कर सकेगा । और उत्तरदायी नागरिक के ढङ्ग से सुसंस्कृत, पारिवारिक व सामाजिक जीवन बना सकेगा । इसके पश्चात् शिक्षा में वह शिक्षा है जो देश व मानव-जाति की सच्ची आवश्यकता को पूर्ण करे, और साथ-साथ विशुद्ध ज्ञान साधन की ऊँची श्रेणी स्थापित रखे ।

प्रश्न—१०. धर्म नीति के शिक्षण का ध्येय क्या है ?

उत्तर—१. सामाजिक २. व्यक्तिगत विकास

१. पहिला ध्येय-भारत के सब बालक-बालिकाएँ उसकी नागरिकता के लिये तैयार हों । अपने सब गुणों व प्रवृत्तियों के विकास से शुद्ध संतुलित और सुसंगत जीवन व्यतीत करने के लिये तैयार हों । साथ-साथ इस जीवन के सामाजिक और नैतिक पहलुओं को समझें । इस ध्येय को सिद्ध करने के लिये आवश्यक होगा कि शिक्षक ऐसा वातावरण और कार्यक्रम बालक-बालिकाओं के लिये उपस्थित करें कि आदर्श समाज का प्रत्यक्ष अनुभव लेते हुये शिक्षा ग्रहण कर सकें । स्वार्थ के लिये व्यक्तिगत-विकास का धर्मनीति के शिक्षण क्रम में कोई स्थान नहीं है । व्यक्तिगत विकास के सम्बन्ध में प्रत्येक बात पर अपने आप सोचने की शक्ति और साहस, सच्ची घटना को मानने की और उसमें हेर-फेर न करने की ईमानदारी, घटना और

परम्परा को सत्य की कसौटी पर जाँचने के लिये आवश्यक धैर्य और निष्पक्षता, ये सब गुण व्यक्तिगत विकास में अपेक्षित हैं। इनका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि विभिन्न प्रकार के आचरण करने वाले लोग आपस में प्रेम के साथ रहकर काम कर सकेंगे और एक दूसरे को समझने का प्रयत्न करेंगे। इसके लिये आवश्यक है कि जीवन में सादगी और सरलता हो, जो सत्य की खोज करता रहे उसे जीवन के अनावश्यक भारों से मुक्त होना पड़ता है। सच्चाई, ईमानदारी और कर्मकाण्ड का उपयोगिता की दृष्टि से ग्रहण सबसे ऊँची वस्तु है। इस सम्पूर्ण कथन का अभिप्राय यह नहीं है कि शिक्षालय का काल समाप्त करके सभी व्यक्ति इस आदर्श पर पहुँच ही जावेंगे। परन्तु धर्म नीति के शिक्षण क्रम में यह आदर्श निहित है कि इसी आदर्श के अनुसार हमें शिक्षा देने का आदर्श नियुक्त करना चाहिये। शिक्षण के कार्यक्रम में शिक्षा के माध्यम के रूप में चार-पाँच प्रवृत्तियों को चुना गया है—

१. शुद्ध और स्वस्थ जीवन व्यतीत करने का अभ्यास।
२. स्वावलम्बन का अभ्यास।
३. कम से कम किसी एक उत्पादक आधारभूत हस्तोद्योग का अभ्यास।
४. समाज में नागरिकता का अभ्यास।
५. रचनात्मक और सांस्कृतिक प्रवृत्तियों का अभ्यास।

प्रथम विभाग में व्यक्तिगत और सामाजिक आरोग्य के लिये आवश्यक आदतों और विकास का ही मुख्य स्थान रहना चाहिये। इन प्रवृत्तियों के द्वारा शरीर शास्त्र, आरोग्य शास्त्र और आहार शास्त्र का सामान्य ज्ञान दिया जाना चाहिये।

दूसरे अभ्यास में इसका महत्त्व ध्यान देने योग्य है क्योंकि यह चरित्र के विकास का प्रभावशाली साधन है।

तीसरे अभ्यास में बच्चों के शारीरिक और बौद्धिक विकास के लिये अनुकूल और आवश्यक ज्ञान देना उपयोगी है। शिक्षाक्रम में दूसरे विषयों का सम्बन्धित ज्ञान देने का भी यह मुख्य साधन है।

चतुर्थ अभ्यास में समग्र मानव जाति में समीपवर्त्ती व्यक्ति के कर्मकाण्ड के लिये मिल-जुलकर काम करने के लिये आवश्यक साधन वा मनोवृत्ति का विकास करना ही नागरिकता के अभ्यास का मुख्य ध्येय है।

पाँचवें अभ्यास में बच्चों की कलात्मक प्रवृत्तियों का विकास करने की अपेक्षा की जाती है। इस अभ्यास में खेल-कूद, अभिनय, संगीत, नाट्य-प्रयोग, सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक उत्सवों का मनाना, साहित्य रचना आदि विविध और विचित्र प्रवृत्तियों का समावेश है।

प्रश्न—११. धर्म नीति के शिक्षण की परख किस प्रकार हो?

उत्तर—इस परख में आठ विभाग हैं। १. साफ और स्वस्थ जीवन बिताने की योग्यता, २. अन्न-वस्त्र व आश्रम के स्वावलम्बन की योग्यता ३. आधारभूत हस्त-कौशल में योग्यता ४. ज्ञान-विज्ञान में योग्यता ५. नागरिकता में योग्यता, ६. भाषा की योग्यता ७. गणित में योग्यता ८. सर्जनात्मक और कलात्मक प्रवृत्तियों में योग्यता।

प्रथम विभाग में शरीर का संतुलित और उचित विकास, व्यायाम, प्राणायाम और आसनादि के द्वारा अभीष्ट है। इस विकास में शरीर स्वस्थ और फुर्तीला हो। ग्राम सफाई के आधारभूत स्वभावों को जानता हो। स्थानिक समाज में सफाई का कार्यक्रम बनाने की योग्यता हो। मानव शरीर के विविध अङ्गों और अवयवों के काम, स्वास्थ्य रक्षा के आधारभूत नियम और स्थानिक वस्तुओं से संतुलित आहार बनने का साधारण ज्ञान रखता हो। सामान्य प्राथमिक उपचार जानता हो। रोगी की साधारण शुश्रूषा कर सकता हो। स्थानिक जड़ी बूटियों और घरेलू दवाइयों से परिचित हो।

दूसरे विभाग की योग्यता में संतुलित आहार के लिये आवश्यक पदार्थ उत्पन्न कर सकता है। कपास बोना और उससे अपने लिये वस्त्र बना सकना, भोजन बनाना, परोसना और सुरक्षित रखना। भोजन के व्यय का अनुमान-पत्रक बना सकना और खर्च का हिसाब रख सकना। घरेलू शस्त्रास्त्रों के उपयोग और सुरक्षा की जानकारी रखना। साइकिल पर चढ़ने और उसे अच्छी हालत में रख सकने की योग्यता।

तीसरे विभाग की योग्यता में रसायन शास्त्र और प्राणिशास्त्र के जिन सिद्धान्तों से हमारा काम पड़ता है उनका सामान्य परिचय हो।

(शेष पृ० १३ पर)

स्त्रियों का भयङ्कर दुखदायी रोग
अपतन्त्रक

ले० श्री वैद्य बलराम आर्य मु०-पो० नोनामजरा (रोहतक)

अपतन्त्रक (हिस्टेरिया) रोग विशेषतः युवतियों को होता है। इस रोग के प्रारम्भ में मनोवृत्ति, विवेक शक्ति और वातनाड़ियों में विकार उत्पन्न होता है, फिर जननेन्द्रिय (गर्भाशय) आदि में विकृति हो जाती है। कभी गर्भाशय और बीजाशय के विकार से मनोवृत्ति में विकृतावस्था आ जाती है। फिर अपतन्त्रक रोग उत्पन्न होता है।

इस रोग में अतिहास्य या अतिरूदन, दीर्घ निःश्वास बीच-बीच में हास्य या रोदन, घबराहट श्वासावरोध, कण्ठावरोध, किसी-किसी को आमाशय में आध्मान आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। रुग्णा गिर जाने पर भी उसे चारों ओर के बर्ताव का ज्ञान रहता है किन्तु वह उस समय बोल नहीं सकती। गिर जाने पर हाथ पैरों में आक्षेप आता है।

यह रोग प्रधानतः इच्छा शक्ति के दोष और चेतन शक्ति के परिवर्तन से ही अधिक होता देखा जाता है। यह पीड़ा विवाहिता और अविवाहिता दोनों प्रकार की स्त्रियों में देखी जाती है। १९ से ५० वर्ष की आयु तक यह हो सकती है।

कारण—दुर्बलता इस पीड़ा का प्रधान कारण माना जाता है। स्नायुओं में रक्त का संचालन कम होने से हिस्टेरिया का लक्षण देखा जाता है। यह पीड़ा साधारणतः रजस्राव बन्द ऋतु अनियमित वा अधिक होना, प्रदरस्राव अधिक दिन स्तन दान (चूची पिलाना) मानसिक उत्तेजना, भय-शोक-हताश प्रणय-निद्रा शून्यता-विलास में जीवन यापन, इत्यादि हेतुओं से उत्पन्न होती है।

लक्षण—रोगिणी के नाना प्रकार के भाव होते हैं। रोगिणी कभी रोती है कभी हंसती है, कभी चिल्लाती हैं, कभी झगड़ा करती है, रोग के आक्रमण के पहिले रोगिणी को मालूम होता है कि उसके पेट में से कोई वस्तु गोला सा ठेलकर उसके गले में चढ़ रहा है, और इसके बाद ही रोगिणी चीत्कार करके गिर जाती है। इस समय ज्ञात होता है कि रोगिणी को किसी प्रकार का ज्ञान नहीं, किन्तु अच्छी प्रकार परीक्षा करने पर मालूम पड़ता है कि उसका सम्पूर्ण ज्ञान लोप नहीं हुआ है। नेत्रों के पपोटे चलते हैं, और पुतलियां घूमती फैलती नहीं, श्वास-प्रश्वास शब्द के साथ अनियमित होता है।

हिस्टेरिया रोग निर्णय करने का एक सहज उपाय यह है, रोगिणी जिस स्थान में दर्द मालूम करती है, यदि किसी प्रकार तुम उसका ध्यान बदल दोगे, तो देखोगे कि पूर्वोक्त दर्द को मालुम नहीं करेगी, रोगिणी की आंख में अंगुली देने की चेष्टा करने से वह नेत्रबन्द करने की चेष्टा करेगी। हिस्टेरिया रोगिणी का लम्बा श्वास लेना भी एक प्रधान कारण है।

सूचना – सभी हिस्टेरिया रोगियों को एक जैसे दौरे नहीं होते, किसी को कैसे ही, किसी को कैसे ही। कुछ थोड़ा रूप यहां दिया जाता है—

किसी को अत्यन्त दुर्बलता स्मरण शक्ति का लोप, सर्वदा दुःखित भाव और चिन्ता। एक इच्छा कुछ करने को कहती है, अन्य इच्छा मना करती है।

२—अथवा दौरे के समय प्रतिबार सामान्य उत्तेजना से मूर्छा रोग के सदृश दम फूलना, रात में तकलीफ की अधिकता, श्वास बन्द होने के भय से लोटकर नहीं रह सकती, अकेली रहने के समय या शयन करने के समय मृत्यु भय होता है, अत्यन्त अस्थिरता और व्याकुलता होती है, गर्म घर में रहना चाहती है।

३—अथवा, पेट में गोला सा ठेलकर ऊपर की ओर गले में चढ़ता रहता है। शूल-दर्द, पेट में गुड़गुड़ाहट, अपानवायु छूटने से आराम, रोगिणी अत्यन्त खुशी के साथ हंसती है।

४—अथवा सदा आत्म-हत्या करने की इच्छा, उदास

भाव, रोगिणी कभी खुश रहती है। कभी झगड़ा करती है। कभी रोती है, मूर्छा रोग की तरह आक्षेप—अत्यन्त स्वाभाविक दुर्बलता, रजःस्राव अधिक आये।

५—अथवा रजःकष्ट के साथ हिस्टेरिया के लक्षण-जरायु की गड़बड़ी के कारण रोग।

६—अथवा रोगिणी हमेशा बकती है, हंसती है—हमेशा सीटी देती है और नाना प्रकार की अंग-भंग करती है, आत्म-हत्या करना चाहती है। गले में गोले की तरह वस्तु अटकी हुई मालूम होना, गले में स्पर्श सहन नहीं होता है। निद्रा के बाद क्रोध आता है—अन्तिम ऋतु-बन्द होने पर पीड़ा।

७—अथवा हंसी—सबही उसके पास हंसीजनक दृश्य मालूम होता है, अपने आप कहती रहती है। मुंह और जीभ अत्यन्त सूखी, किन्तु प्यास नहीं रहती भोजन के उपरान्त पेट फूल जाता है। अत्यन्त निद्राभाव।

८—अथवा-स्वभाव नरम और रोने वाला, सर्वदा लक्षणों का बदल जाना, सर्वदा शीतबोध ऋतुस्राव अत्यन्त देर में व अति अल्प होता है या ऋतु धर्म बन्द रहता है।

९—अथवा हँसने की या रोने की इच्छा नहीं होती है—किंतु फिर भी हँसती और रोती है, उसको मालूम होता है, कि अंतड़ियां मरोड़ कर गले की ओर चढ़ रही हैं। जीभ अकड़ जाती है, मेदे में खाली भाव मालूम होता है और मूत्र दुर्गन्धित।

१०—अथवा शारीरिक और मानसिक परिश्रम में अनिच्छा-सर्वदा हाथ पैर और देह का फड़कना—चलने के समय, खांसते समय, और छींक आने के समय बेखबरी से मूत्र निकल जाना। ऋतुस्राव के समय ठीक रहती है।

टि० हमने ऊपर हिस्टेरिया रोगियों के दश रूप अलग २ दर्शाये हैं, यह न समझ लेना चाहिये कि इनके अतिरिक्त अन्य लक्षण न होंगे, हमारे ग्राम में पन्द्रह स्त्रियों को यह रोग हुआ है, सभी के लक्षण भिन्न-भिन्न थे। एक बार अच्छी चिकित्सा होने पर रोग ने कभी दर्शन नहीं दिये, गर्भवती स्त्री को तथा चार पांच संतान होने पर भी यह रोग देखा है। हमारे ग्रामीण इसको भूतबाधा भूतनी-ओपरा, पराया इत्यादि समझ कर रोगी के गण्डे-तावीज कुत्ते की बिठा तथा लाल मिर्चों की धूनी देकर रोगी को व्यर्थ पीड़ा देते हैं। और हताश हुये फिरते हैं। अनेक भ्रष्टाचार करते हैं, जिनके लिखने से भी लज्जा आती है। हमारे भाईयों ने भ्रम को त्याग देना चाहिये और अनुभवी वैद्यों से चिकित्सा करानी चाहिये।

वैसे तो इसकी चिकित्सा रोग के लक्षणों के आधार पर है—तथापि कुछ योग देता हूं, योग शत-प्रतिशत परीक्षित हैं, जिनसे कि वैद्य लोग यश लाभ करते हैं।

(१) हिस्टेरिया पर अनुभूत योग

मकरध्वज—	६ माशे
कस्तूरी—	६ माशे
शु० मैनशिल —	६ माशे

विधि—पान के रस में घोटकर गोला सा बनालो, अरंड के पत्तों में लपेट कर धान के ढेर में दबादो। १५ दिन बाद पीस कर रखो। अथवा पान के रस में घोट कर चने प्रमाण वटी बनावें।

मात्रा—१ रत्ती दवा ६ माशे शहद के साथ दें।

गुण—हिस्टेरिया को २१ दिन में अवश्य दूर करता है।

(२) हिस्टेरिया नाशक वटी।

केशर असली—	३ माशे
गांजा—	१ तोला
बच—	१ तोला
कपूर—	१ तोला
जटामांसी—	२ तोला
अजवायन खुरासानी—	४ तोला

विधि—सबको अद्रक के रस में खरल करके चने प्रमाण बटी बनावें।

मात्रा—दो २ गोली दिन में तीन बार जल के साथ देवें।

गुण—२१ दिन में हिस्टेरिया रोग को दूर करती है।

(३) मल्लचन्द्रोदय वटी।

मल्लचन्द्रोदय—	१ तोला
शु०कुचिला—	१ तोला

केशर—	१ तोला
कस्तूरी—	१ माशा

विधि—समस्त औषधियों को सूक्ष्म करके पान के रस में खरल करके गोलियां बनावें।

गुण—हिस्टेरिया-अपस्मार तथा वात विकार में लाभकारी है।

स्त्रियों के सब प्रकार के रोगों पर

(४) स्त्री जीवन

अशोक की छाल ३ सेर लेकर १८ सेर पानी में क्वाथ करें। ६ सेर क्वाथ रहने पर छानलें फिर इसमें ४ सेर पुराना गुड़ डाल कर मिलादें।

धायपुष्प, १० तोला, हर्ड़-बहेड़ा-आमला, लोध, डाभ की जड़, विदारीकन्द, नागकेशर, बनपशा, असगंध, गुलाब पुष्प, बासमूलत्वक्, कमलपुष्प, जीरा सफेद, मंजीठ, शतावर, बड़ी पीपल, छोटी पीपल, प्रत्येक एक-एक तोला।

विधि—सबको कूट पीसकर मिलादें। और अमृतवान में भर दें। १ मास पश्चात् छान कर फिर अमृतबान में डालकर एक बोतल मृतसंजीवनी सुरा डालकर मुख बन्द करदें, एक सप्ताह पश्चात् छानकर बोतलों में भरदें।

मात्रा—६ माशे से एक तोला तक दूध में मिला प्रातः सायंकाल दें। अथवा जल मिलाकर भोजनोपरान्त सेवन करावें।

गुण—इसके प्रभाव से स्त्रियों के सब विकार दूर हो जाते हैं, प्रदर-सोमरोग—गर्भ गिर जाना या सन्तान न होना आदि रोगों पर हमारा विशेष अनुभूत है। इसके प्रभाव से योनि विकार दूर होते हैं, मासिकधर्म समय पर होता है, ऋतुधर्म शुद्ध आता है, मासिक ऋतु शूल सदा के लिये दूर हो जाता है। इसके सेवन से अनेक स्त्रियों के सन्तान हुई हैं। अनेक नोटिसबाज इसके अनेक नाम रख कर खूब व्यापार करते हैं। आप परीक्षा करने पर अवश्य प्रशंसा करेंगे।

इसके अतिरिक्त वातकुलान्तक रस, महावात विध्वंस रस, उन्माद गजकेसरी, हिस्टेरिया नाशिनी बटी, मल्ल-सिन्दूर, इत्यादि योग अच्छा प्रभाव करते हैं, रोग की अवस्था अनुकूल नस्य-अंजन भी करने चाहियें। रोगी को कब्ज बिलकुल न रहने दें। शाम को सोते समय हलका रेचन करावें। भोजन के बाद दशमूलारिष्ट या अशोकारिष्ट, मृतसंजीवनी सुरा मिलाकर दें। अगर नींद न आवे तो सर्पगन्धा प्रसत्व इत्यादि के योग सेवन करावें। हमने उपरोक्त कुछ योगों का दिग्दर्शन करा दिया है। चिकित्सा रोग के हालात पर निर्भर है।

(पृ० १० का शेष)

चौथे विभाग की योग्यता में अपने चारों ओर प्राकृतिक परिवेश में और दैनिक जीवन की प्रवृत्तियों में विज्ञान-गणित और अन्य शास्त्रों के जिन आधारभूत सिद्धान्तों का उपयोग होता है उनका सामान्य परिचय हो।

पाँचवें विभाग की योग्यता में समष्टि जीवन का महत्त्व और व्यष्टि जीवन का समष्टि जीवन के लिये अर्पण का सिद्धान्त समझना। समर्पण के जीवन, अथवा यज्ञ भावना से अर्थात् सहकारिता से अनेक सामाजिक कार्यों को करने के विचार में निपुण।

६. खुली सभाओं में बिना हिचकिचाहट साफ और स्पष्ट भाषा में बोलने की योग्यता रखता हो। मातृभाषा के साहित्य से परिचित हो। वर्तमान पत्र और साप्ताहिक मासिक पत्र पत्रिकाओं का उपयोग कर सके। अभिधान और कोष का उपयोग जानता हो।

७. गणित में इतनी योग्यता हो कि दैनिक कार्य से सम्बन्ध रखने वाले सारे हिसाब-नाप और तोल आदि ठीक-ठीक और शीघ्रता से कर सके। ज्यामिति (रेखा गणित) की सरल आकृतियों से और नियमों से परिचित हो तथा सुन्दर चित्रकारी करने में इनका उपयोग कर सके

८. उत्सव, त्योहार, सभा समिति के अवसर प शिक्षणालय या सभास्थल को सुरुचि के साथ सजा सकत हो। अपने देश की परम्परागत कला आदि से परिचि हो। समाज के लिये शुद्ध मनोरञ्जन के कार्यक्रम क व्यवस्था कर सके। (क्रमशः)

'सुधारक' पर सम्मति

केवल नाम मात्र से ही सुधारक नहीं, अपितु ही "सुधारक"। इस की जितनी प्रशंसा की जाये उत थोड़ी।

(श्री राजसिंह मण्डौरी

आदर्श कर्मवीर

(श्री श्यामलाल सिद्धान्तशास्त्री, प्रभाकर, नरेला)

धर्म के ऐ वीर सिपाही,
कैसे गुण-गण गाएं हम।
कलम हमारी तुच्छ है एवं,
गुण हैं तेरे उज्ज्वलतम॥

हिन्दू होते थे विधर्मी,
मुस्लिम की तलवार के संग।
तब तुम ने हुंकार उठाई,
सुनकर हो गए थे सब दंग॥

नित्य हमारे ऋषि-मुनियों का,
होता था अपमान यहाँ।
प्रबल युक्तियों के अभाव में,
रहते थे सब चुप यहाँ॥

उसी समय तुमने आकर,
वेदों की लाज बचाई थी।
सम्मुख तेरे कुरान बाईबल,
नहीं यहां टिक पाई थी॥

प्रबल निष्काम सेवा-भाव के,
थे तुम एक ज्वलन्त प्रमाण।
जाति के प्राण बचाने को,
भेंट किए पुत्र के प्राण॥

अपने अल्प समय में तुमने,
मोह लिए थे सब के मन।
सब हो जाते थे तत्पर देने को,
अपना तन, मन, धन॥

दुर्भाग्य हमारा, एक पिशाच,
आया एक दिन उन के संग।
किया वार था छुरे से उसने,
मौका पा, होकर निश्शंक॥

भाग्यवान् तुम वीर सिपाही
दिए प्राण जो धर्म के हित।
अन्त समय तक धर्म की चिंता
रहती थी मन तेरे नित॥

लेख कार्य यहाँ बन्द न होवे,
अन्त समय यह बैन कहे।
छोड़ हमें निस्सहाय यहाँ तुम,
अमरत्व को गए गहे॥

अपना जो कर्त्तव्य है पालें,
धर्म-वीर सेनानी हित।
लेख कार्य को करते जावें,
पढ़ते जावें हम सब मित॥

सुधारक पाठकों की दृष्टि में

सुधारक का "व्यायाम विशेषांक" पढ़ कर हृदय को अपार प्रसन्नता हुई। यह अंक वास्तव में भारतीय युवक एवं युवतियों के स्वास्थ्य रक्षार्थ परम-सिद्धोपयोगी सिद्ध होकर भारतवर्ष के भविष्य को उन्नति-शील बनावेगा। अंक में जो स्थान-स्थान पर चित्रों द्वारा व्यायाम करने की विधि समझाई गई है वह सोने में सुहागे का कार्य करती है। सम्पादन भी बहुत सुन्दर है।

मैं परम प्रभु परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि उन की ऐसी कृपा हो कि 'सुधारक' वास्तव में एक सुधारक सिद्ध हो।

कृष्ण दत्त मिश्र
व्यवस्थापक, "मानसहंस"
मानस मन्दिर, हाथरस।

सभ्यता पर गौ का प्रभाव

(श्री डा० रामस्वरूप जी रिटायर्ड वेटर्नरी असिस्टेंट सर्जन, सांपला)

एग्रीकल्चर एडवाइजर टु दि गवर्मेंएट आफ इण्डिया ने गोशाला व्यवसायों में से दूध और घी के व्यवसाय के सम्बन्ध में स्टेट्समैन में एक लेख छपवाया था। वही लेख ट्रिब्यून के ४ नवम्बर सन् १६२४ के अंक में प्रकाशित हुआ था।

प्राचीन समय से गौ को पालतू जानवर बना लेने का प्रभाव भारतवर्ष की सभ्यता पर ऐसा गहरा पहुँचा है कि इसका कोई अनुमान नहीं किया जा सकता। शहर शिकागो का एक निवासी इन लाभों को जो एक दूध देने वाली गौ से मनुष्य जाति को पहुँचते हैं, इन शब्दों में वर्णन करता है।

१. गाय मनुष्य जाति के लिये सब समृद्धियों की खान है। कोई जाति इसके बिना सभ्यता के ऊंचे दर्जे पर नहीं पहुंची है।

२. गाय सबसे उत्तम रूप का आहार उपस्थित करती है जो संसार की किसी अन्य वस्तु से प्राप्त नहीं हो सकता।

३. गाय मोटे झोटे घास फूस के चारे से इस उत्तम आहार (दूध) को बनाती है जिसे हम खाते है, जो स्वास्थ्य और बल देता है।

४. गाय न केवल अपने बछड़े और पालने वाले के लिये आहार प्रदान करती है, किन्तु कुछ फालतू भी बच जाता है जिसको उसका स्वामी बेच सकता है।

५. जहां गायें पाली जाती हैं और उनकी रक्षा की जाती है वहां सभ्यता उन्नत होती है और भूमि उपजाऊ हो जाती है और आबादी बढती हैं, कर्जा घट जाता है, समृद्धि बढ जाती है। सच तो यह है कि गाय ही सम्पत्ति, समृद्धि और ऐश्वर्य की जननी है। प्राचीन समय में भारत वासियों का सबसे बड़ा धन्धा गोपालन था। प्राचीन समय का हिन्दू या इण्डो आर्यन दूध या इससे उत्पन्न वस्तुओं को अधिक मात्रा में काम में लाया करता था। यही कारण था कि उनके शरीर बड़े बलवान्, सुदृढ और हृष्ट-पुष्ट होते थे। इनकी मस्तिष्क की शक्तियां आश्चर्यजनक उन्नत हो चुकी थीं। उसके प्रमाण के लिये आप वर्णन करते हैं—कि उस जमाने में जब कि लिखने का हुनर ही नहीं था वेद आदि पुस्तकें कण्ठ कराई जाती थीं। इस पुराने जमाने के बहुमूल्य कोष को याद कराने की रीति बाप से बेटे को पहुंचती रही और इस तरह से अनेक सदियां गुजर गई। हिन्दू ऋषियों ने तमाम ऋचाओं का संग्रह करके उपलब्ध वेदों का रूप दिया, जो संस्कृत भाषा में लिखे गये।

प्राचीन समय में किसान और सौदागर मौजूद थे। इन बुजुर्गों की समृद्धि और सहायता से जिन्होंने भारतवर्ष के प्राचीन समय की सभ्यता के क्रियात्मक प्रोग्राम की रूप रेखा तैयार की थी। हम आज इस दर्जे पर पहुंचे हैं, लेकिन इस में भी कोई सन्देह नहीं कि गोदुग्ध और उससे बने पदार्थों की अधिकता ने इनकी उन्नति में भारी सहायता की थी और उसका प्रत्यक्ष परिणाम दिखलाया था। आप अन्त में निःसन्देह गोपालन और गोशाला के सीखने की जरूरत पर जोर देते हैं।

गौ के साथ सच्चे प्रेम का फल

हरयाना प्रान्त के सांपला ग्राम में सन् १६३० में सिरिया नाम का एक ब्राह्मण तालाब में नहा रहा था। एक गुस्से में भरी भैंस ने उस ब्राह्मण को पानी में गिरा कर बेकाबू कर दिया कि वह पानी में से बाहर न निकल कर मर जाय। सिरिया चिल्लाया कि "है कोई आदमी मुझे बचाने वाला, दौड़ो" थोड़ी दूर पर गोचर भूमि में उसकी गौ चर रही थी, उसने अपने स्वामी की आवाज को पहिचाना और भागी हुई उस घटना स्थल पर आई। गाय ने पानी में घुसकर भैंस को अपने सींगों से मार कर भगाया और अपने स्वामी की रक्षा की। अभी तक इस घटना का वर्णन लोग बातचीत में करते हैं। इस घटना में सबसे बड़ी बात ध्यान देने की यह है कि गौ ने अपने स्वामी की धीमी आवाज को किस प्रकार पहिचाना और उसके भाव को समझा। निःसन्देह सिरिया के निःस्वार्थ गोप्रेम का ही यह परिणाम था।

चरित्र बल

(श्री मा० दीपचन्द जी बी० ए०, सहारनपुर)

दुराचारो हि पुरुषो लोके भवति निन्दितः
दुःखभागी च सततं व्याधितोऽल्पायुरेव च ॥
(मनुस्मृति)

अर्थः—दुराचारी पुरुष लोक में निन्दा पाता है और सदा रोगी तथा अल्पायु होता है। अतः चरित्र बल का आश्रय लो।

"चरित्र एक शक्ति है, प्रभाव है। वह मित्र बनाता है, सहायक और संघ-रक्षक प्राप्त कराता है और धन-मान तथा सुख का निश्चित मार्ग खोल देता है।"
(जे० हावेज)

वास्तव में मनुष्य जीवन में चरित्र-बल एक विशिष्ट-स्थान रखता है। चरित्रवान् व्यक्ति के कथन का प्रभाव अनायास ही उसके साथियों, बन्धुओं तथा उससे सम्बन्ध रखने वाले मनुष्यों पर पड़ता है। चरित्रवान् व्यक्तियों ने ही समाज के अन्दर सुधार किये, जातियों को उभारा तथा अनेक बिगड़ते हुए प्राणियों को सुधारा है। इतिहास के पृष्ठ उन्हीं चरित्रवान् व्यक्तियों की कहानी सुना रहे हैं। कवि उन्हीं की गौरव-गाथा गा रहे हैं तथा कितने ही लेखक उनके नामों पर लेख लिख कर यश के भागी हो रहे हैं।

संसार सही मार्ग पर जितना भी चल रहा है वह सब चरित्रबल की शक्ति से चल रहा है। चरित्र बल खोने पर संसार का मूल्य ही समाप्त हो जाये। मानवता, दानवता तथा पशुबल का रूप धारण करके नग्न नृत्य जग में ही आरम्भ करदें। प्राणियों में त्राहि त्राहि मच जाय। यह है बिना चरित्र बल के संसार का नक्शा।

जो जाति चरित्र बल को गौण समझती है वह उन्नति के मार्ग पर नहीं चल सकती। आजकल भारतवर्ष में चरित्र का दिवाला निकला पड़ा है। किस किस को रोएं, रोग एक स्थान पर होता तो चिकित्सा भी कर लेते। अब तो सारे ही शरीर का चकना चूर हुआ पड़ा है। समाज रूपी ढांचा बेईमानी, चोरबाजारी, रिश्वतखोरी-धोखेबाजी तथा चोरी जारी के प्रहारों से टूटा पड़ा है। बेचारी नैतिकता कान दबाये इधर-उधर फिरती है; किन्तु शरण ही मिलनी कठिन हो रही है। यह तो रही देश की दशा। नवयुवकों की दशा भी कुछ विचित्र ही है। पश्चिम की आंधी में उड़े जा रहे हैं। पश्चिम से जो आंधी गरद गुब्बार लाती है वह इनके दरवाजे पर डाल जाती है। ये उसको फूलों की वर्षा समझकर मारे हर्ष के गद्‌गद् हो जाते हैं। किन्तु आँधी के शान्त होने पर वास्तविकता का पता लग जायेगा। फिर देखेंगे कि हम कहां आ गये हैं।

चरित्र निर्माण का कार्य कालिजों ने भी प्रायः समाप्त ही कर दिया है। फिर इस कार्य को कौन सम्भालें, क्या इसका उत्तरदायी कोई एक व्यक्ति है कि सम्पूर्ण मानव समाज? मेरे विचार से इस कार्य का उत्तरदायी सम्पूर्ण मानव-समाज है। इसलिये उन्नति के इच्छुक भाइयो! पहिले हम सबको चरित्र का निर्माण करना चाहिए। दूसरों को उपदेश देने से तो कोई काम नहीं होता। आओ आज हम अपने-अपने चरित्र का सुधार करें। यदि सब मनुष्य अपना २ सुधार करेंतो यह कार्य अति सुगम हो सकता है।

चरित्र-बल को दूसरे शब्दों में सदाचार या आचार-बल कहा जाता है। यह शक्ति मानवजाति रूपी इंजन के अन्दर कोयले और तैल का कार्य करती है। जिस इंजन का कोयला और तैल समाप्त हो जाये वह इंजन बेकार है। बेकार इंजन के लिये गाड़ी भार है। इसी प्रकार आचारहीन जाति बिना आचार के देश के लिये भार हो जाया करती है। यही दशा आज आचारहीन

होकर आर्य जाति की होती जा रही है । दूसरी जातियाँ ईसाई आदि इसे हड़प करने का यत्न कर रही हैं । इन शत्रुओं को अपने चरित्र-बल से क्यों पराजय का मुँह नहीं दिखाते ?

किसी देश का महत्त्व उसके क्षेत्रफल या जन-संख्या से नहीं माना जाता । वह तो देश वासियों के चरित्र से होता है । जिस देश अथवा जाति के अन्दर चरित्रवान् व्यक्ति होते हैं, वह जाति अथवा देश सर्वदा उन्नतिशील रहता है । जातियाँ चरित्रवान् व्यक्तियों के जीवन चरित्रों से नित्य नये नये पाठ पढ़ती रहती हैं । हमारी आर्य-जाति अब तक इस लिए ही जीवित रही कि इसके मूल को अनेक ऋषि मुनियों ने, त्यागी महात्माओं ने, सच्चे वीर धार्मिक आत्माओं ने अपने चरित्र रूपी जल से सींचा है । राम, कृष्ण जैसे वीर कणाद पतञ्जलि जैसे ऋषि, शंकर, दयानन्द जैसे सुधारक क्या अब भी यशरूपी शरीर से हमारे मध्य में विद्यमान नहीं हैं ? इसी लिये तो किसी उर्दू कवि ने कहा है —

"यूनान मिश्र रोमां, सब मिट गये जहां से ।
मगर अब भी बाकी है नामोनिशां हमारा ॥"

महापुरुषों के चरित्र में एक विशेषता होती है कि वे पर्वत के समान दृढ़ रहते हैं । चारों ओर तूफान उठते हैं, झंझावात चलता है किन्तु वे किंचित् भी विचलित नहीं होते ।

क्या दुर्गादास का चरित्र ऐसा ही नहीं है जो कि औरङ्गजेब की बेगम गुलेनार के प्रणय निवेदन करने पर भी रञ्चमात्र भी विचलित नहीं हुआ । धन्य है इस आर्य जाति को जिस ने ऐसे चरित्रवान् वीरों को जन्म दिया । अपने ऊँचे चरित्र-बल से आर्यों ने संसार की जातियों को नीचा दिखा दिया । आर्यो ! तुम राम-कृष्ण की सन्तान हो, उनका रक्त तुम्हारी नसों में बह रहा है, फिर भी तुम सदाचार से गिरते जा रहे हो । यह तुम्हारे लिए लज्जा की बात है । कहीं हरिश्चन्द्र की आत्मा सत्य का अपमान सुनकर तुम्हें कोस रही है । सती देवियों की लाज का ध्यान करो और फिर से चरित्र-बल के द्वारा संसार में चमक कर दिखा दो ।

जागो अब सुप्रभा आ गया है । देखो पूर्व से लाल-लाल ज्ञान-भानु उदय हो रहा है । विज्ञान के रूप में यह ज्ञान-सूर्य योरुप में चमक चुका, अब अध्यात्मवाद के रूप में भारत में निकल रहा है । इसकी किरणों से अपने शरीर वा आत्मा को पवित्र कर लो । भौतिकवाद का युग समाप्त समझो, अब अध्यात्मवाद का युग आ रहा है । आगे बढ़े चलो, जब तक मंजिल का अन्त न आवे रुको मत, यही जीवन का सार है ।

हमारे कारखाने में यज्ञ तथा पूजा
आदि का सर्व प्रकार का
सामान तैयार किया
जाता है ।
निर्माता
सीताराम आर्य एण्ड सन्ज़
१७६ लाजपतराय मार्कीट, देहली ।

गुणी तथा धनवान बनाने वाली पुस्तकें

चित्रकारी ताथा पेंटिंग शिक्षा ३) सिलाई कटाईशिक्षा २॥) धनवान बनने के गुप्त रहस्य २॥) मोटर ड्राइविंग मेकनिक गाइड़ ३॥) मोटर मेकनिक गाइड़ ३॥) इलेक्ट्रीक रेडियो गाइड़ २॥) घड़ी साजी शिक्षा ३॥) साबुन विज्ञान २॥।) पाक प्रवेशिका १॥) हर प्रकार के सुगन्धित तेल व इत्र बनाना २॥।) स्त्री रोग चिकित्सा १॥) पुरुष रोग चिकित्सा १॥) बाल रोग चिकित्सा १॥) पेटेण्ट दवाओं के नुस्खे ॥।) खेती बाड़ी शिक्षा २॥) जादूगरी का उस्ताद ३) ताश का जादू २॥) मोहनी (मिस्मीरेजम) विद्या ३) वर्क शोप गाइड अथवा फिटर ट्रेनिङ्ग ३) खराद शिक्षा टर्नर गाइड ३) पशु चिकित्सा ३) व्यौपार दस्तकारी २॥) व्यौपारिक तेजी मन्दी २॥) ज्योतिष विज्ञान ६) ऐम्ब्रोडरी (कढ़ाई) शिक्षा ३) प्रत्येक पुस्तक पर ०-१२-० डा० खर्च अलग ।

प्रेम विज्ञान मन्दिर
सराय वाल (S-G) अलीगढ़

नवीन प्रकाशन

(३१-१२-५२ के बाद के हमारे प्रकाशनों का संक्षिप्त परिचय)

१. स्वामी विरजानन्द—ले० श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज मूल्य १।)—अनेक वर्ष हुये श्री पं० देवेन्द्रनाथ जी ने महर्षि दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द का जीवन चरित्र लिखा था। उसे समाप्त हुए भी कई वर्ष बीत गये। तब से महर्षि दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द जी महाराज के जीवन चरित्र की बड़ी मांग थी। इसी मांग को दृष्टि में रखते हुए स्वामी जी महाराज का यह प्रामाणिक जीवन चरित्र लिखा गया है। इस में स्वामी जी सम्बन्धी अनेक ऐसी नवीन घटनाओं को दे दिया गया है जिन का पता बहुत से भाइयों को अभी तक नहीं था।

२. दृष्टान्त-मञ्जरी—ले० पं० जगत्कुमार शास्त्री—मू० २) सजिल्द—इस में अनेक महापुरुषों की जीवनियों से ११४ घटनायें दी गई हैं जिनका पाठ पाठकों में सत्य, न्याय प्रियता, साहस, परिश्रम, मनोबल, देश-भक्ति, समाज प्रेम, सेवा, धैर्य आदि गुणों का संचार करेगा। विद्यार्थियों के लाभार्थ यह मोटे अक्षरों में छापी गई है। प्रत्येक लेखक, व्याख्याता तथा अध्यापक के पास इसकी एक प्रति अवश्य रहनी चाहिये।

३. आर्य सिद्धान्त दीप—ले० पं० मदन मोहन विद्यासागर—मू० १।)—आर्य सिद्धान्तों पर अपने ही ढङ्ग की अनोखी पुस्तक। आर्य सिद्धान्तों का वास्तविक स्वरूप एवं परिचय जानने के लिये इस का स्वाध्याय अत्यन्त आवश्यक है। इस की एक प्रति प्रत्येक समाज, कुमार सभा, लेखक एवं व्याख्याता के पास अवश्य होनी चाहिए। पुस्तक क्या है गागर में सागर भरने की कहावत को सत्य सिद्ध करती है।

४. चकबन्दी कानून—ले० चौ० बलवन्तसिंह एम० एल० ए०—मू० ॥)—इस में चकबन्दी के साथ, चकबन्दी कैसे होगी, चकबन्दी का कानून इत्यादि अनेक विषय अत्यन्त सरल भाषा में समझाये गये हैं। प्रत्येक किसान, जमींदार एवं वकील को इसके स्वाध्याय से लाभ उठाना चाहिये।

५. संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय—ले० श्री पं० जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती भू० पू० आचार्य गुरुकुल किरठल—मू० ॥)—वेदों से लेकर आज तक के प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थों के निर्माण का समय, लेखक का नाम तथा उनका विषय इत्यदि इस में दिये गये हैं। यह संस्कृत पाठशालाओं एवं परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में लगाने योग्य अनुपम पुस्तक है। इसकी विशेषता इसी से सिद्ध है कि यह 'विरजानन्द संस्कृत परिषद्' की संस्कृत परीक्षाओं में निर्धारित है।

६. व्यायाम सन्देश—लेखक आचार्य भगवान्देव—मूल्य १)—इस में व्यायाम सम्बन्धी अनेक आवश्यक बातें यथा—व्यायाम क्यों करें, कब करें, कितना करें, कौनसा करें, कैसे करें, देशी तथा विदेशी व्यायामों की तुलना एवं उनके हानि लाभ, दण्ड, बैठक के फोटो-चित्र होने कारण इस की उपयोगिता और भी बढ़ गई है।

७. आसनों के व्यायाम—लेखक भाष्याचार्य वेदव्रत गुरुकुल झज्जर (रोहतक)—मू० ॥) इस—में तीन दर्जन से अधिक आसनों का परिचय, उनके करने की विधि एवं लाभ समझाये गये हैं। प्रत्येक आसन का फोटो—चित्र इस पुस्तक की अपनी विशेषता है।

वैदिक साहित्य सदन
आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली ६.

आर्य आयुर्वैदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की बहुमूल्य औषधियाँ

च्यवनप्राश (सर्वोत्तम रसायन)

इसी ऋतु के ताजे आँवले से तैयार किया गया स्वादिष्ट, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सबके लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका (निरन्तर) सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य ७) सेर, ५ सेर लेने पर ६) सेर

ज्वरामृत

यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की रामबाण औषध है। बिगड़े हुये मलेरिया; विषम ज्वर को दूर करने में अद्वितीय औषध है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन सिर दर्द, स्वप्नदोष प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है। मलेरिया काल में सेवन की हुई मलेरिया को नहीं आने देती। अधिक प्रशंसा व्यर्थ है, सेवन करें और लाभ उठावें।

मूल्य छोटी शीशी २) बड़ी शीशी ५)

सूखा रोगामृत

जिन गृहस्थों के बालक सूखा रोग (मसान) से सूख-सूख कर मरते हैं। अनेक प्रकार चिकित्सा करने पर भी कोई लाभ नहीं होता। ऐसे निराश रोगियों के लिये यह औषधि अचूक है। सहस्रों रोगियों पर अनुभूत है। इसके अतिरिक्त बालक के हरे पीले दस्त, अजीर्ण, अरुचि, दाँत निकलते समय के रोग, वमन, निर्बलता और ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखें।

मूल्य १ मास के सेवन तथा मालिश के लिये १२)

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है। इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजले) की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास (खांसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपेदिक) श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढंग की एक ही औषधि है।

छोटी शीशी २), बड़ी शीशी ५)

स्वप्नदोषामृत

इस भयङ्कर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग के दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। मू० ५) रुपये

सञ्जीवनी तैल

मूर्च्छित लक्ष्मण को चेतावनी देने वाली इतिहास-प्रसिद्ध बूटी से तैयार किया गया यह तैल घावों को भरने में जादू का काम करता है। भयङ्कर फोड़े फुन्सी, गले सड़े जख्मों तथा आग से जले जख्मों को अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भरकर ठीक कर देता है। खून का बहना तो तुरन्त ही बन्द हो जाता है। चोट की भयङ्कर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है।

मूल्य छोटी शीशी ।।=) बड़ी शीशी २)

सेवन विधि

फाये में भरकर बार-बार चोट आदि पर लगायें।

स्वप्नदोषामृत चूर्ण

—यह अत्यन्त परिश्रम से तैयार किया गया है। अत्यन्त बलवर्धक है तथा समस्त धातु विकारों को नष्ट करके जीवन प्रदान करता है।

मूल्य छोटी शीशी १), बड़ी शीशी २)

१. नेत्र ज्योति सुर्मा—इसके लगाने से आंखों के सर्व रोग जैसे आँख दुखना, खुजली, जाला, फोला, रोहे कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट) दूर का कम दीखना (लांग साइट), प्रारम्भिक मोतियाबिन्दु आदि दूर होते हैं। आंखों के सब रोगों की रामबाण औषधि है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है। लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। मूल्य ॥) शीशी।

२. नेत्र ज्योति सुर्मा (विशेष)—यह आंखों के उपरोक्त रोगों में विशेष लाभदायक है। मू० १) शीशी।

३. नेत्रामृत—यह दुखती आंखों के लिये जादू भरा विचित्र योग है। भयङ्करता से दुखती हुई आँखें भी इसके एक दो दिन डालने मात्र से ठीक हो जाती हैं। साथ ही अन्य सभी नेत्र रोगों में हितकर है। मूल्य ।=) शीशी।

४. दन्तरक्षक मंजन—दांतों से खून या पीप का आना, दांतों का हिलना, दांतों के कृमि रोग, सब प्रकार की दांतों की पीड़ा तथा अन्यान्य सभी दन्त रोगों को दूर भगाता है। नित्य प्रयोगार्थ उत्तम मंजन है। मू० ॥) शीशी।

५. दन्तरक्षक तेल—इसके सेवन से मुख का तथा दांतों का कोई रोग रहने नहीं पाता। पायोरिया के लिये हितकर है। मुख की दुर्गन्धि को दूर करता है। मंजन तथा तेल दोनों का साथ प्रयोग अत्यन्त लाभकर है। मूल्य ॥) शीशी।

६. संजीवनी तेल—यह औषध यथा नाम तथा गुण वाली है। कटे-फटे घावों को बहुत जल्दी भरता है। अन्दर की चोट की भी उत्तम औषध है। जादू भरा प्रभाव रखती है। मू० २) बड़ी शीशी ।=) छोटी।

७. व्रणामृत—यह फोड़े, फुन्सी, नासूर, गले-सड़े जख्मों को बहुत ही जल्दी ठीक करती है। मू० १) शीशी।

८. पाचनामृत—मन्दाग्नि, अरुचि, अजीर्ण, (कब्ज) पेट का फूलना, पेट का भारीपन, शूल, वमन, जी मिचलाना, खट्टी डकार आदि पेट के सभी रोगों को नष्टकर भूख बढ़ाता है। आंतों के सब रोगों को दूर कर पाचन शक्ति को बल देता है। पुराने से पुराने तिल्ली जिगर की अचूक औषध है! मू० ५) रुपये शीशी।

९. अर्श रोगामृत—यह खूनी तथा बादी दोनों प्रकार की बवासीर को दूर करती है। खून के आने को तो इसकी दो चार मात्रा ही बन्द कर देती हैं। मू० एक मास के सेवनार्थ १०)।

१०. कर्ण रोगामृत—यह कान के सब रोगों को दूर करता है। कान से पीप आना, बहरापन और प्रत्येक प्रकार के दर्द को अत्यन्त शीघ्र दूर करती है। प्रतिदिन के सेवन करने से कानों में कोई रोग नहीं होता। और मस्तिष्क की शुष्कता (खुश्की) दूर होती है। मू० १) शीशी।

११. स्वास्थ्यवर्धक चाय—यह चाय स्वदेशी ताजी एवं शुद्ध जड़ी-बूटियों से तैयार की गई है। यह वर्तमान चाय की भांति नींद और भूख को न मारकर, खांसी, जुकाम, नजला, सिरदर्द, खुश्की, अजीर्ण, थकान, सर्दी आदि रोगों को दूर भगाती है। मस्तिष्क एवं दिल को शक्ति देती है, नित्य प्रयोगार्थ उत्तम पेय है। मू० ।-) छोटी।

१२. हवन सामग्री—यह सामग्री सुगन्धित, पौष्टिक, बलवर्धक, औषधियों से तैयार की जाती है। ऋतु अनुकूल ताजा और शुद्ध सामग्री का ही यज्ञ करना महत्व रखता है। दैनिक हवन के प्रेमियों ने इसे अपनाया है। यज्ञों, महायज्ञों, संस्कारों तथा पर्वों के अवसर पर इसका अवश्य प्रयोग कीजिये। मू० १।) सेर।

मिलने का पता—

१—आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (रजि०) गुरुकुल झज्जर।
२—गुरुकुल फार्मेसी, रेलवे रोड, रोहतक।
३—नवजीवन संचारक कम्पनी, आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार देहली।
४—वैद्य कर्मवीर जी आर्य आयुर्वेदिक औषधालय नरेला (देहली)।

हमारे तीन अभिनव प्रकाशन

१—विरजानन्द चरित

सर्वविध क्रान्तिकारी महर्षि विरजानन्द जी महाराज का यह जीवन चरित अपने ढङ्ग का एक ही अनुपम ग्रन्थ है। इसके लेखक लेखनी के धनी श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज हैं जिन्होंने दर्जनों ग्रन्थ वेद के विषय में लिखे हैं, आप अनेक भाषाओं के प्रौढ विद्वान् हैं। इस ग्रन्थ में भी 'उत्थानिका' के मिष से अनेक गूढ रहस्यों का उद्घाटन किया है। ऐसे उच्च कोटि के विद्वान् की लेखनी से लिखे इस अपूर्व जीवन चरित में आप को ऐसी अनेक घटनायें मिलेंगी जो अभी तक साहित्य जगत् में नहीं आई हैं। बढ़िया कागज पर सुन्दर छपाई की गई है फिर भी २०० पृष्ठों के ग्रन्थ का मूल्य केवल १॥)।

२—व्यायाम सन्देश

श्री आचार्य भगवान् देव जी की यह वही उत्कृष्ट रचना है जिस के लिये गत एक वर्ष से व्यायाम प्रेमी सज्जन तथा विद्यार्थी समाज चातक की भाँति टकटकी लगाये हुये है। इस के पढ़ने से ६० वर्ष का व्यक्ति भी लङ्गोट बान्ध कर अखाड़े में आजायेगा, आचार्य जी के शब्दों में यह एक विचित्र शक्ति ही है कि मुर्दों और नपुसंक में भी जीवन शक्ति का सञ्चार हो जाता है क्यों कि ये हृदय के उद्गार स्वानुभूत होते हैं। १६ चित्रों से सुसज्जित इस प्रकार की उत्तम सामग्री व्यायाम के विषय में अन्यत्र न मिलेगी। मूल्य १) मात्र।

३—आसनों के व्यायाम (सचित्र)

ब्र० वेदव्रत जी द्वारा लिखित इस पुस्तक में तीन दर्जन आसनों का परिचय, करने की विधि और लाभ अति सरल भाषा में वर्णन किया है जिस से सर्व साधारण व्यक्ति भी लाभ उठा सकता है। साथ में चित्र होने से विषय को समझने में किञ्चिन्मात्र भी कठिनाई नहीं होती। आसन तो बहुत हैं किन्तु इस ग्रन्थ में केवल स्वानुभूत विशेष विशेष आसनों पर प्रकाश डाला है। मूल्य ॥)।

विशेष सुविधा—ऊपर लिखे १ विरजानन्द चरित और २ व्यायाम सन्देश दोनों २॥) की पुस्तक लेने वाले व्यक्ति को "आसनों का व्यायाम" पुस्तक बिना मूल्य (मुफ्त) दी जायेगी।

आचार्य भगवान्देव जी कृत पुस्तकें—

१. ब्रह्मचर्य के साधन पांचों भाग	१।।।=)	९. व्यायाम का महत्त्व	≡)
२. ब्रह्मचर्यामृत साधारण संस्करण	=।।)	१०. रामराज्य कैसे हो ?	≡)
३. " बाल संस्करण	।=)	११. स्वप्नदोष की चिकित्सा	=)
४. तम्बाकू का नशा, साधारण संस्करण	=।।)	१२. बाल विवाह से हानियाँ	-)
५. " " बाल संस्करण	।=)	१३. बिच्छू विष चिकित्सा	≡)
६. पापों की जड़ शराब साधारण संस्करण	=।।)	**श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज कृत पुस्तकें**	
७. " " " बाल संस्करण	।-)	१४. आदर्श ब्रह्मचारी	=)॥
८. नेत्र रक्षा	≡)	१५. कन्या और ब्रह्मचर्य	=)॥

इनके अतिरिक्त मूल वेद, वेदों के भाष्य, गीता, उपनिषद्, महर्षि दयानन्दकृत सभी ग्रन्थ तथा महापुरुषों के जीवन चरित्र एवं आर्य सिद्धान्त सम्बन्धी सभी ग्रन्थ और आर्य कुमार परिषद् द्वारा सञ्चालित—

१. सिद्धान्त सरोज २. सिद्धान्त रत्न ३. सिद्धान्त भास्कर ४. सिद्धान्त शास्त्री ५. सिद्धान्त वाचस्पति—

इन पांचों परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें हमारे यहाँ उचित मूल्य से मिल सकती हैं। विशेष जानकारी के लिये पत्र व्यवहार करें।

प्राप्ति स्थान

आर्य पुस्तकालय गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

संस्था समाचार

गुरुकुल झज्जर में आयुर्वेद महा विद्यालय के लिये बाघपुर ग्राम से दान में निम्न धन का वचन मिला है। दान दाता सज्जनों को बधाई।

५०१) श्री विजयकुमार शीषराम जी।
५०१) श्री मांगेराम होशियारसिंह जी।
१०१) श्री भगवानूसिंह जी।
१०१) श्री अमीरसिंह जी।
१०१) श्री सूरतसिंह जी।

निवेदक
मुख्याधिष्ठाता

भयङ्कर पतन

इस समय भारत का सम्पूर्ण वायुमण्डल ही दूषित हो गया है मानव-समाज में विविध भयङ्कर दोषों ने घर कर लिया है अतः मानव जो ईश्वर की सृष्टि का सर्वोत्तम प्राणी है उसका नैतिक-स्तर पशुओं से भी निकृष्ट हो गया है। आहार के सम्बन्ध में एक सज्जन लिखते हैं—

"मैं ता० २७-६-५४ को एक डाक्टर साहब के घर गया, उसके छोटे-छोटे बालक कोई ३ वर्ष का, कोई ४ वर्ष का, कोई ६-१० वर्ष का और डा० साहब, ये सब मांस और अण्डे खा रहे थे तो मैं अपने घर आगया; और मुझे यह अवस्था देखकर अत्यन्त दुःख हुआ अतः यह पत्र आपके पास लिख रहा हूँ। देश का सुधार कैसे हो सकता है, छोटे-छोटे बालकों को मांस अण्डे चाय बिस्कुट बीड़ी सिगरेट शराब आदि-आदि खाने और पिलाने की आदत डाल देते हैं तो देश का सुधार होना बड़ा ही कठिन है और उन बालकों के माता पिता घोर शत्रु हैं। जिनके मां-बाप मांस अंडे आदि-आदि ऐसी बुरी आदतें सिखाते हैं।

मैं सुधारक मासिक पत्र के लेखक को धन्यवाद देता हूँ जो धर्मात्मा हैं और अच्छी प्रकार देश की सेवा कर रहे हैं। और अच्छे-अच्छे विषयों को सुधारक में अंकित करते हैं।

मध्य भारत शासन के शिक्षा विभाग
द्वारा स्वीकृत

सुयोग्य, सुन्दर सामिग्री से भरपूर, एकांकी, कहानी, लेख व कविताओं के अतिरिक्त साहित्य समालोचना, बाल एवं महिला जगत् तथा उत्सव समाचार सहित प्रकाशित होने वाला—

राम चरित मानस
एवं भारतीय संस्कृति के प्रचार का सचित्र अद्वितीय

प्रधाक सम्पादक श्री मानस जी शास्त्री

मासिक पत्र
मानस हंस

स० सम्पादक श्री दामोदर-प्रसाद उपमन्यु साहित्यरत्न

अवश्य पढ़ें

यह रामचरित मानस के सुन्दर विवेचनात्मक टीका, लेख, शंका समाधान तथा सांस्कृतिक साहित्यिक, धार्मिक लेख; कहानी, कविताओं से युक्त पत्र अत्यन्त उपादेय है। वर्ष में एक विशेषांक, ११ साधारण अंक दिये जाते हैं।

इस वर्ष का विशेषांक "बृजलीला-अंक" है।

वार्षिक चन्दा ५≡) नमूना मुफ्त

एजेन्सी के लिये पत्र-व्यवहार करें।
पता—व्यवस्थापक 'मानस हंस'
मानस मन्दिर हाथरस।

प्रधान सम्पादक महेशचन्द्र गुप्ता 'स्नेही'

वीणा

सह सम्पादक जीवनप्रकाश जोशी साहित्य रत्न

पारिवारिक, धार्मिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक विषयों के साथ जो नारी समस्या एवं बाल मनोरंजन की सुन्दर सामिग्री देकर आपके मन और मस्तिष्क को गुदगुदायेगा।

प्रगतिशील सचित्र हिन्दी मासिक पत्र

वार्षिक मूल्य २) एक प्रति का तीन आने।

हिन्दी के प्रौढ़ एवं उदीयमान कवियों की चुनी हुई ललित कविताओं, चोटो के विचारकों के लेखों, मर्मस्पर्शी कहानीकारों की कहानियों का कोष, विशेषाकर्षण के साथ वीणा की साहित्यिक झंकार आपको मुग्ध कर देगी।

आदर्श विज्ञापन के लिये स्थान खाली।

एजेन्सी की सुविधा के लिये लिखें।

पता—व्यवस्थापक वीणा, रामानन्दी सहारनपुर

TEXMACO

TEXTILE MACHINERY DIVISION

RING SPINNING FRAMES

Of any gauge up to 3" and lift up to 8".

Drafting System 4 Roller self weighted with or without Pendulum Arm Weighting, 4 Roller saddle weighted Casablanca 500 with or whitout Pendulum Arm Weighting, 500-A or E 10 B.

Roller Bearing Spindles.
Ball Bearing Jockey Pulleys.
Ball Bearing Front Top Rollers.

DRAWING FRAMES

Of I6" or 18" Gauge with one or two heads.
Belt or Motor driven.
Electric Stop Motion.
Automatic Locking Device
9", 10" or 12" diameter Cans.

BOILER & HEAVY ENGINEERING DIVISION

Smoke Tube, Marine, Water Tube and Locomotive Boilers, Flues, Mechanical Stokers, Economisers, Chemical and Pressure Vessels Coal Handling Plant, Chimneys, Ductings, Cranes, Railway Wagons and Rolling Stock, Penstock Pipes, Sluices and Spillway Gates for Hydraulic Dam Projects.

Smoke Tube Boiler design in collaboration with M/S. Babcock & Wilcox of India Ltd.

For particulars please write to

TEXTILE MACHINERY CORPORATION
LIMITED.

Belghurriah 24 Parganas West Bengal

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(श्री शान्तिस्वरूप वर्मा । बाजार कलाँ
बड़ौत जि० मेरठ)

देश और विदेश में जा वेदों का सन्देश जब,
पुत्र आर्यों के प्राणीमात्र को सुनायेंगे।
प्रेम भाव पूरित हो मिथ्या अभिमान तज,
विश्व की वसुन्धरा को गले से लगायेंगे।
तर्क की कटार और सत्य की बना के ढाल,
सुयश पताका विश्व नभ में उड़ायेंगे।
पूरा निज कर्म और सत्य वेद वाणी तब,
होगी हम आर्य विश्व भर को बनायेंगे ॥

—

कुण्डलियाँ

(श्रीमती शशिप्रभा देवी "आर्य")

[१]

अवगुन अपने त्याग ग्रहण कर पर के सद्गुण।
वाणी से सच बोल श्रवण से कथा श्रुति सुन ॥
सुन सन्तों की बात तापत्रय हरने वाली।
प्रभु शरण का ध्यान सकल सुखों की ताली ॥
सीख मान ले चतुर नहीं पछतावे सिर धुन।
विमल चन्द्र सा चरित बना तज कर सब अवगुन ॥

[२]

वाणी मीठी बोल जगत् के मन को हरिये।
मात-पिता गुरु भक्ति भाव से उर में धरिये ॥
धरिये प्रभु विश्वास चरित को निर्मल कीजे।
दूषित दुर्गुण दूर न खोटी संगत कीजे ॥
अधर धरे मुस्कान जोड़ युग पल्लव वाणी।
सब का आदर करो बोल कर मीठी वाणी ॥

पता

ग्राहक संख्या 842

सेवा में श्री— चि॰ जगदीशचन्द्र जी

मु॰ मुरारी ब्रादर्स

पो॰ कमलानगर

जि॰ देहली

"आर्यनेता"

(श्रीमती सरस्वती देवी "आर्य" बड़ौत)

हिन्दुन बचाया आर्य जाति को जिलाया और,
देश का बढ़ाया मान स्वामी दयानन्द ने।
खोला गुरुकुल और शुद्धि का चलाया चक्र,
अन्त में अमर पद पाया श्रद्धानन्द ने।
श्रुति रस लहरों में न्हाय सब देशवासी,
वसुधा पे सुधा बरसाई नित्यानन्द ने।
सभ्यता की भेरी कर गुंजरित बार-बार,
कीना सावधान आर्यों को दर्शनानन्द ने।

* * *

"रोटी का फिकर"

होवे यदि पास धन मूरख कहावे गुणी,
व्यसन हो लोप जिमि दिन तारे कर से।
चतुर वही है धीर-वीर है गम्भीर वही,
जहां हो उजाला प्रभुता के प्रभाकर से।
मान है उसी का जग शान है उसी की बड़ी,
ज्ञान है उसी का सब भांति बड़ा सब से।
पूछी जात रंच भी न बात रंक चातरों की,
सोच-सोच मरे मूढ़ रोटी के फिकर में।

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री
सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

ओ३म्

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष २
अङ्क ४

गुरुकुल झज्जर (रोहतक), मार्गशीर्ष-पौष सं० २०११ वि०
दिसम्बर १९५४, दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≡)

नर-केसरी स्वर्गीय भाई वंशीलाल जी

वर्तमान हैदराबाद के निजामी राज्य के मूल परिवर्तक, निजामी-आतङ्क का विध्वंस करने वाले, राज्य-आर्य समाज के आधार स्तम्भ, क्षात्र-धर्म के साक्षात् तेजः-पुञ्ज, निर्भीकता तथा साहस की मूर्ति तथा हैदराबाद राज्य की आर्ष पाठ विधि के प्रवर्त्तक एवं जीवन-जल से गुरुकुल-पादप के परिषेक्ता।

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सह सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

इस अंक की विषय सूची

विषय	लेखक	पृ०
ब्रह्मचर्यमहत्वम्	श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न	३-४
सम्पादकीय		५-६
राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान	श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति	७ से १०
वन गङ्गा का विलाप (कविता)	श्री कान्तिकृष्ण "अनर्गल"	११
ब्रह्मचारी की आदर्श और अमर सन्तान	श्री आचार्य भगवान् देव जी	१२-१४
आहार ग्रहण करने की विधि और नियम		१६
हम वेद क्यों पढ़ें ?	श्री वेदव्रत वयाकरणाचार्य	२२

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—आर्यसमाज या वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध. अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं ली जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है।

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संस्कृत में करें, उत्तर के लिये जवाबी कार्ड डालें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चौथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	९)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५% अधिक।

,, तृतीय १०% अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

(श्री पण्डित मेधाव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्)

[गताङ्क से आगे]

मन्त्रः—आचार्यो मृत्युर्वरुणः सोम ओषधयः पयः ।
जीमूता आसन्त्सत्वानस्तैरिदं स्वराभृतम् ॥
(अथर्व० ११।५।१४)

आचार्यो वरुणो मृत्युः सोम ओषधयः पयः ।
जीमूतास्सन्ति सत्वानस्तैरिदं हि स्वराभृतम् ॥७३॥

अर्थ—वरुण-मृत्यु-सोम-ओषधियें तथा पयः ये आचार्य के पांच रूप हैं, ये सत्वानः = पांचों बल जीमूताः= जीवन बरसाने वाले मेघ हैं, इन्हीं बलों के द्वारा आचार्य ने अपने ब्रह्मचारी के लिए सुख, अमृत्व,तेज का निःसन्देह आहरण किया हुआ है ।

आचार्यस्याज्ञया पूर्वं स्वेच्छानान्तु निकन्दनम् ।
शिष्याणां मरणं यस्मादाचार्यो मृत्युरुच्यते ॥७४॥

अर्थ—आचार्य की आज्ञा से अपनी सम्पूर्ण इच्छाओं का अन्त कर देना (सर्वथा समर्पित हो जाना) शिष्यों का मरण है, इस हेतु से आचार्य को मृत्यु रूप कहा गया है । ऐसा करने से ही शिष्य विद्या-आधान द्वारा दूसरा जन्म धारण करता है ।

युग्मम्—जीर्णं शरीरमाहृत्य मृत्युरूपो यथेश्वरः ।
नवीनं देहिने दत्ते वर्णिने गुरुराट् तथा ॥७५॥
संस्कारान् पूर्वजान् कामान्त्संत्याज्य हितरोधकान् ।
उज्जवलान्त्सुगुणान् भव्यान् द्विजार्हानार्यभूषणान् ॥७६॥

अर्थ—मृत्युरूप ओ३म् जैसे जीर्ण शरीर को छीन कर आत्मा के लिए नवीन शरीर देता है, वैसे ही मृत्युरूप आचार्य हित प्रतिबन्धक पूर्व जन्मगत संस्कारों व कामनाओं को छुड़ाकर ब्रह्मचारी के लिए उज्ज्वल, सुन्दर, द्विजयोग्य एवं आर्यों के भूषणरूप सद्गुणों का प्रदान करता है ।

यथा शोभते वर्णो रोपितो निर्मलांशुके ।
गुणाधानैस्तथा वर्णी दीप्यते विमलान्तरः ॥७७॥

अर्थ—जैसे अति उज्ज्वल श्वेत वस्त्र पर चढ़ाया हुआ रंग अपनी छटा दिखाता है वैसे ही पवित्र हृदयशाली ब्रह्मचारी गुणों के धारण से देदीप्यमान होता है ।

बध्नाति नियमैः शिष्यानाचार्यः पापवारणैः ।
सदाचारैर्यदा नित्यं तदा वरुणरूपकः ॥७८॥

अर्थ—इसके अनन्तर जब आचार्य पापनिवारक सदाचरण नियमों से शिष्य को प्रतिक्षण नियन्त्रित करता है तब वह वरुण रूप है ।

यदा भवति शिष्याणामभ्यासो नियमावने ।
सोमरूपस्तदाचार्यो दृश्यते प्राणतः प्रियः ॥७९॥

अर्थ—नियन्त्रित रहने से जब शिष्यों को नियम पालन में अभ्यास हो जाता है तब वही आचार्य सोमरूप हुआ हुआ प्राणों से भी प्यारा दिखाई देता है ।

यदाचार्यो विनेयानां दुःखशोकापहारकः ।
सम्पद्यते तदा प्रोक्त ओषधिप्रतिमः पिता ॥८०

अर्थ—एवं जब आचार्य विनीत शिष्यों के दुःख शोक को सर्वथा दूर हटाने वाला होता है तब उसे ओष के समान पालक पिता कहा गया है ।

तात्पर्य—सोम्यरूप आचार्य के सम्मुख ही सब प्रकार की कठिनईयां रखने से तन्निवारकत्वात् आचार्य औषध रूप है ।

अन्ततोऽयं पयोरूपो जीवनामृतपायिनी ।
जायते जननी नूनं गुरुदेवः सुवर्णिनाम् ॥८१॥

अर्थ—अन्त में वह आचार्य पयोरूप होकर ब्रह्मचारियों के लिए निःसन्देह जीवन रस पिलाने वाली माता बन जाता है ।

नवजीवनसम्प्राप्तिर्जायते ब्रह्मचारिणाम् ।
पयोरूपे गुरौ स्निग्धे संवृत्ते पुष्टिदायके ॥८२॥

अर्थ—आचार्य के पुष्टिदायक—प्रेम करने वाले व

पयोरूप होने पर ब्रह्मचारियों को नवीन जीवन की उपलब्धि होती है।

महाभयङ्कराचार्यो मृत्युरूपो लसन्मुखे ।
अन्ते पयोमयो जातो नवजीवनदायकः ॥८३॥

अर्थ - पहले आचार्य मृत्युरूप में महाभयंकर प्रतीत होता है, परन्तु अन्त में नवीन जीवन का संचारक होने से पयोरूप=पुष्टिदायक हो जाता है।

जीवनामृतवर्षीणि सत्त्वानीमानि सद्गुरोः ।
तैराहरति वर्णिभ्यो दिव्यं तेजोऽमृतं सुखम् ॥८४॥

अर्थ—आचार्य के पांचों बल (रूप) जीवनामृत वर्षा करने वाले हैं, इन्हीं के द्वारा वह ब्रह्मचारियों के
ृ दिव्य-तेज-अमृत व सुख का आहरण करता हैं।
लिए ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेने वालो ! अपने आपको
चार्य के चरणों में पूर्ण समर्पित कर दो।

मन्त्रः—अमा घृतं कृणुते केवलमाचार्यो भूत्वा
णो यद्यदैच्छत् प्रजापतौ । तद् ब्रह्मचारी प्रायच्छत्
न्मित्रो अध्यात्मनः ॥ (अथर्व० ११।५।१५)

ाचार्यो वरुणो भूत्वा केवलं तनुते घृतम् ।
माश्रमे वसन् यद्यत् समिच्छति प्रजापतौ ॥८५॥

अर्थः—आचार्य वरुण होकर ब्रह्मचारी के साथ
म (गुरुकुल) में निवास करते हुये ब्रह्मचारी के लिये
स २ ज्ञान दीप्ति व तेज का विस्तार करता है जिस २
को प्रजापति (भगवान्) की इच्छा समझता है।

तत्तन्मित्रनिभः शिष्यः स्नातको ब्रह्मचारिराट् ।
स्वादात्मनोऽधलोकानां कल्याणाय प्रयच्छति ॥८६॥

अर्थः—मित्र तुल्य (भक्ति परायण, श्रद्धालु) शिष्यत्व को प्राप्त हुआ श्रेष्ठ ब्रह्मचारी स्नातक होने के पश्चात् उस उस ज्ञान दीप्ति व तेज को अपनी अन्तरात्मा से निकाल कर संसार के कल्याणार्थ (आचार्य के प्रसाद रूप में) वितरण करता है।

आचार्यो व्रतिना समं गुरुकुले नित्यं वसन् निर्मलं
तेजोमण्डितजीवनं वितनुते सज्ज्ञानधारां बटोः ।
भूत्वा पापनिवारककश्च वरुणो यद्यत्ततो वाञ्छति
प्राजापत्यकृते प्रयच्छति सुहृद् वर्णी तदात्मद्युतेः ॥८७॥

अर्थः—आचार्य ब्रह्मचारी के साथ निरन्तर गुरुकुल में वास करते हुए ब्रह्मचारी की वास्तविक ज्ञान धारा को विस्तृत करता है और उसका जीवन निर्मल व तेजस्वी बनाता है एवं वह पाप-निवारक वरुण रूप होकर प्रजापति भगवान् की विशुद्ध धर्मादि इच्छा के लिए वेदविद्यानिष्णात ब्रह्मचारी से जो जो (प्रचार रूप में या दक्षिणा रूप में) चाहता है, उत्तम-विनयी-श्रद्धालु-मित्र-तुल्य ब्रह्मचारी उस-उस को अपनी आत्मा की चमक (शक्ति) से पूर्णतया समर्पित कर देता है।

आजीवनं स सम्बन्ध आचार्यब्रह्मचारिणोः ।
ज्ञानजीवनदातुस्तु सदावश्यकता गुरोः ॥८८॥

अर्थः—आचार्य और ब्रह्मचारी का पारस्परिक सम्बन्ध जीवन पर्यन्त है क्योंकि (शिष्य के कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण होने पर भी समय-समय पर उत्पन्न शंकाओं के निवारणार्थ) ज्ञानमय जीवन प्रदाता आचार्य की सदा आवश्यकता रहती है।

वरुणमित्रनिभौ गुरुवर्णिनौ
जनयतो घृतमात्मसुबोधजम् ।
तदमृतं प्रतिजीवतृषं यथा
हरति मानसतर्षमिहात्मनाम् ॥८९॥

अर्थः—वरुण व मित्र तुल्य गुरु और शिष्य दोनों आत्मा के संज्ञान से उत्पन्न तेज व दीप्ति का आविर्भाव करते हैं वह ज्ञानामृत अज्ञानी मनुष्यों की ज्ञान पिपासा को ठीक वैसे ही शान्त कर देता है जैसे जल प्रत्येक पिपासु की प्यास को।

वितरति गुरुदेवः शिष्यरत्नाय देयं
शुभगुरुकुलवासे ब्रह्म विज्ञानवित्तम् ।
अथ भवति विनेये स्नातके ज्ञानदात्रे,
भुवनहितकृतेऽसौ द्रव्यमर्च्यं प्रदत्ते ॥९०॥

अर्थः—गुरुकुल के पवित्र धाम में तो दिव्य गुण विभूषित आचार्य शिष्यरत्न के लिए दातव्य ब्रह्मज्ञान रूप धन प्रदान करता है और शिष्य अपने स्नातक हो जाने पर लोक कल्याण के लिए ज्ञानदाता गुरुदेव को (दक्षिणा रूप में) अर्चनीय धन अर्पण करता है। भावपूर्ण दक्षिणा लोक हित कर ज्ञान-प्रसार का एकमात्र प्रतीक है।

(क्रमशः)

सम्पादकीय——

सदाचार

वर्तमान सृष्टि के आरम्भ में ही आदि विद्वान् ब्रह्मा ने आर्य्यावर्त्त का संविधान बनाया था। इसी लिये ब्रह्मा का एक पर्य्यायवाची नाम विधाता भी है। उसी संविधान को प्रशासन-कार्य में प्रयुक्त करने वाला आदि राजा मनु था। उसी संविधान की रूपरेखा वर्तमान मनुस्मृति में उपलब्ध है। परम्परया वे नियम आर्यावर्त्त में प्रचलित रहे हैं। अति प्राचीनकाल में वे नियम सूत्र रूप में थे। जिनको "मानवधर्म सूत्र" भी कहा जाता था। कालान्तर में महर्षि भृगु ने उन धर्म-सूत्रों का प्रवचन किया। उसी प्रवचन का रूप वर्तमान मनुस्मृति है; जो कि छन्दोबद्ध है। इसी कारण इसको "भृगु-प्रोक्त मनु-संहिता" भी कहा जाता है। आर्यावर्त्तीय लोगों ने मनुस्मृति में प्रतिपादित नियमों पर चलकर करोड़ों वर्षों तक सुख और ऐश्वर्य का उपभोग किया। संसार में आर्य चक्रवर्ती राज्य स्थापित किया और यहां के ऋषि-मुनि इन्हीं नियमों पर चलते हुये "मोक्ष" परम पद को प्राप्त करते रहे हैं।

इन नियमों में "आचार" का बहुत बड़ा महत्व स्वीकार किया गया है। जैसे—

१--आचार : परमो धर्म : श्रुत्युक्त : स्मार्त एव च ॥
२--आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेदफलमश्नुते ॥
३--आचाराल्लभते ह्यायुः ॥
४--आचारो हन्त्यलक्षणम् ॥
५--दुराचारो हि पुरुषो लोके भवति निन्दितः।
दुःखभागी च सततं व्याधितोऽल्पायुरेव च ॥

उपर्युक्त पांचों वचन मनुस्मृति के हैं। इनका अभिप्राय यह है—

१--वेद और स्मृति में कहा हुआ आचार मुख्य धर्म है।

२--आचारहीन ब्राह्मण को वेदाध्ययन का फल प्राप्त नहीं होता।

३--आचार से पूर्ण आयु की प्राप्ति होती है।

४--आचार सब कुत्सित भावों को नष्ट कर देता है।

५--दुराचारी पुरुष संसार में निन्दा का पात्र बनता है। सदा दुःखी और रोगी होता हुआ अल्पायु होता है।

आचार का अभिप्राय उन वैयक्तिक और सामाजिक नियमों से है जिनके कारण मानव स्वयं उन्नत होता है और दूसरों के भी उन्नत होने में कारण बनता है। आचार के कुछ नियम नीचे दिये जाते हैं—

१—ब्रह्मचर्य पालन—ब्रह्मचर्य पालन जहां अपने लिये अमृत-वर्षा करता है, शरीर, इन्द्रिय, मन और आत्मा को स्वस्थ, समर्थ और उन्नत करता है, वहां समाज में भी पवित्र भावना का संचार करता है। एक ब्रह्मचारी के पवित्र जीवन के अनुकरण से हजारों व्यक्तियों का उत्थान हो जाता है। इससे व्यक्ति, समाज और राष्ट्र में बल एवं ओज का संचार होता है। दीन भाव नष्ट होकर स्वतन्त्रता का प्रकाश चमकता है। ब्रह्मचर्य की महत्ता पर लिखते हुये ऋषि दयानन्द संस्कार विधि में कहते हैं—"यह सब सुधारों का सुधार है।" हजारों वर्षों से लुप्त वेदमार्ग पर पुनः चलना आदित्य ब्रह्मचारी देव दयानन्द ने ब्रह्मचर्य बल से बतलाया।

२--तपः—द्वन्द्वों को जीतना = भूख-प्यास, शरदी-गरमी, हानि-लाभ, मान-अपमान, सुख-दुःख प्राण-अपान आदि जितने जोड़े हैं इन सब पर विजय देने वाला "तप" नामक आचार है। तप से उत्साह-हीनता आदि दुर्गुण नष्ट हो जाते हैं। तपस्वी के सामने निराशा तथा घबराहट नाम का कोई पदार्थ ही नहीं होता। ब्रह्मचर्य और तपोबल से मानव का शरीर चमक उठता है, ऐसे तपस्वी को नकली तेल, फुलेल और सुगन्ध आदि शृङ्गार प्रसाधन वशीभूत नहीं कर सकते।

३--स्वाध्याय—वेदादि सत्य शास्त्रों का अध्ययन-अध्यापन, श्रवण, मनन और प्रचार ही स्वाध्याय कहा जाता है, झूठे किस्से-कहानी, गल्प आदि त्याज्य पुस्तकों का पठन नहीं। वेद के स्वाध्याय से सत्य नियमों में प्रवृत्ति होती है। स्वाध्याय योग--मार्ग का परम सहायक है। योग से स्वाध्याय के परमतत्व ज्ञात करने में अपूर्व सहायता मिलती है। ऋषि पतञ्जलि ने कहा है—

"स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः"

स्वाध्याय में वह शक्ति है कि इच्छित पदार्थ को इच्छित प्रयोग में लिया जा सकता है। इसी सूत्र पर महर्षि व्यास भाष्य लिखते हैं—

"स्वाध्यायाद् योगमासीत,· योगात्स्वाध्यायमामनेत् ।
स्वाध्याययोगसम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते ॥"

स्वाध्याय और योग के सामञ्जस्य से परमात्मा का प्रकाश मानव के हृदय में हो जाता है। स्वाध्याय आचार का प्रधान अंग है।

४. उपासना—उपासना का नाम ही आजकल भक्ति और कीर्तन पड़ गया है। भक्ति और कीर्तन अवैदिक तथा पौराणिक बीज की उपज है। हमारा अभिप्राय यह नहीं कि भक्ति शब्द अच्छा नहीं। कहना इतना ही है कि आजकल भक्ति शब्द माला आदि द्वारा जप अर्थ में फंस गया है। उपासना शब्द का सीधा सम्बन्ध ज्ञान और कर्म से है। उपासना शब्द के उच्चारण से ही परमेश्वर का ध्यान मन में पहुँच जाता है। उपासना, आचार का वह भाग है जिसके द्वारा जीव, ब्रह्म का साक्षात् करने में समर्थ होता है। यही जीव का परम प्रयोजन है। उपासना में आत्मा अपने मन और बुद्धि को सीधे रूप में ईश्वरार्पण कर देता है। इसमें कोई ढोंग नहीं। कोई अध्यत्य नहीं है। इसी कारण उपासना का बहुत बड़ा महत्व आचार-दर्शन में है।

५. पंचयज्ञ—ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, वैश्वदेवयज्ञ, और अतिथि यज्ञ; इन पांच महायज्ञों के करने से मनुष्य को सर्वविध कल्याण की प्राप्ति हो जाती है। जो सद् गृहस्थ इन पांच यज्ञों को नित्य रूप में करते हैं वे श्रेष्ठाचार सम्पन्न होते हैं। उनके सन्तान भी सदा तथा अन्य सुगुणों से विभूषित होते हैं। इन यज्ञों द्वा मनुष्य साधारण जीविका-कार्य से लेकर परम पद-मोक्ष के साधनों को सुविधानुसार कर सकता है।

इन उपर्युक्त पांच आचार नियमों की बड़ी विस्तृ व्याख्या की जा सकती है, परन्तु हमने इनका सं वर्णन इसलिये दे दिया है जिससे वर्तमान पद्धति में सुधा हो सके। आजकल ब्रह्मचर्य, तपः, स्वाध्याय, उपासना और यज्ञों के विषय में अनेक प्रकार की भ्रान्तियां फैली हुई हैं। इनकी शुद्ध-पद्धति का प्रचार होने से ये भ्रान्तियां दूर हो सकती हैं। इनके सुधार से पाखण्ड-आडम्बर दू होकर सरल मार्ग मनुष्य को मिल जाता है।

कई कुचक्री लोग इन पवित्र आचरण-अंगों में व्यर्थ शङ्कायें करके जनता का अहित किया करते हैं एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा—एक संन्यासी महानु भाव ब्रह्मचर्य पालन पद्धति पर बड़ा मनोहर भाषण रहे थे। जनता पर उत्तम प्रभाव पड़ा था। वहीं उपस्थित एक व्यसनी पुरुष ने कहा कि यदि सब लोग ब्रह्मचर्य धारण करने लगें तो संसार निस्सन्तान होकर नष्ट हो जावे। यह शंका करते हुये इधर-उधर देखकर हंसा—मानो ब्रह्मचर्य विषयक व्याख्यान का खण्डन कर दिया। इस शंका के उत्तर में पूज्य संन्यासी महाभाग ने कहा—हे प्रिय! इसमें दो बातें हैं। प्रथम तो यह है कि ब्रह्मचर्य के जो गुण बताये गये उनके विषय में तो आपको विमति नहीं, क्योंकि शंका में ब्रह्मचर्य पालन से कोई हानि आप न बता सके। अतः ब्रह्मचर्य का महत्व कम नहीं हो जाता। दूसरी बात निस्सन्तान हो जाने के भय की है। यह भी ठीक नहीं। जिन ऋषियों ने ब्रह्मचर्य जीवन का असा महत्व बतलाया है, वहां उन्होंने गृहस्थाश्रम को ज्येष्ठाश्रम कहा है। अर्थात् गृहस्थाश्रम के आश्रय पर शेष तीनों, ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम रहते हैं। इससे सिद्ध है कि नियमपूर्वक सन्तानोत्पत्ति धर्म है। इसीलिये मनु महाराज ने कहा है—

"ब्रह्मचार्यैव भवति यत्र तत्राश्रमे वसन्"

(शेष पृष्ठ १५ पर)

राष्ट्र-निर्माण में गुरुकुल का स्थान

(श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति)

(५--गतांक से आगे)

प्रश्न १२:—शिक्षकों के लिए आवश्यक निर्देश कौन से हैं ?

उत्तर १--शिक्षक, आरोग्य और सफाई को, सच्ची शिक्षा देने के लिए समग्र शिक्षा के कार्यक्रम में प्रधान स्थान देवें। शरीर कपड़े और आस-पास की दैनिक सफाई के नियमित अभ्यास के साथ मन की शुद्धि का गहरा सम्बन्ध समझें।

२—स्वच्छता, शीघ्रता और शुद्धता (पूर्णता) इन तीनों बातों को छोटे-बड़े सभी कार्यों में चाहे वह व्यवहार के हों या पढ़ाई के, अभ्यास डलवाने का प्रयत्न करें। इनके सम्बन्ध में नोटबुक रख कर व्यक्तिगत एक-एक काम के प्रतिदिन नम्बर देने चाहियें। जिससे शिक्षक और शिष्य दोनों की प्रगति का ज्ञान होता रहे कि कौन सा छात्र किस दिशा में उन्नति कर रहा है और किस दिशा में न्यून है? स्वभाव बन जाने तक अभ्यास की इस प्रकार जांच करते रहना आवश्यक है।

३ – शिक्षकों का कर्तव्य है कि बच्चों में खाने पीने व वस्त्र आदि के सम्बन्ध में समानता और व्यवस्था की आदत डालें और जो कुछ खावें-पीवें उसके सम्बन्ध में सहवासियों का ध्यान भी छात्र रखें। गुरुकुल के छात्रावास, विद्यालय और अन्य प्रकार की उत्पत्ति यद्यपि वहाँ के निवासियों की समान है तथापि अध्यक्ष की आज्ञा के बिना उसको लेने का प्रयत्न न करें। इससे बालकों में शिष्टता, अनुशासन की वृत्तियों का विकास होगा।

४—शिक्षकों का कर्तव्य है कि सब कुलवासी अपने आपको इस प्रकार चलावें कि कोई रोगी रहे ही नहीं, क्योंकि किसी के रोगी होने से सार्वजनिक हित की हानि का पाप उत्पन्न होता है। परन्तु यदि कोई रोगी हो जावे तो उसकी सहानुभूति परिचर्या आदि में भाग लेना सबको समयानुसार आवश्यक समझना चाहिये। क्योंकि न जाने किसके ऊपर कब विपत्ति आ जावे। इससे पारस्परिक प्रेम, सहायता और समानता का भाव उत्पन्न होता है।

५—शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि शिक्षा क्रम के मुख्य तीन पहलुओं पर विशेष ध्यान दें। १. शुद्ध और स्वस्थ जीवन व्यतीत करने के लिये कर्त्तव्यों की खोज और उनका पालन। २. अपने आस पास के स्थानों की सफाई और सफाई के साधनों की रक्षा। ३. घर, विद्यालय या गाँव में किसी के रुग्ण होने पर या किसी आकस्मिक दुर्घटना के घट जाने पर यथाशक्ति निर्देश और उसका पालन।

६—शिक्षकों के लिए आवश्यक है कि उनका स्वास्थ्य अन्यों की अपेक्षा अधिक ऊंचा हो। उनमें निरुत्साह तथा चिन्ताशीलता न हो। वाणी में प्रेम और ओजस्वी भाव रहे। आँखों में आकर्षकता रहे। किसी प्रकार का व्यसन शिक्षकों में न हो।

७—शिक्षणीय विषय के लिए आवश्यक तैयारी लिख कर शिक्षणालय में जाना चाहिए। शिक्षण देने से पहले शिक्षक को पता होना चाहिए कि उन्होंने किस विषय का कौन सा अंश किस प्रकार सब विद्यार्थियों के या किसी विशेष कमजोर विद्यार्थी के मन में बैठा देना है और उस प्रकार शिक्षण देते हुए विद्यार्थी की किस मनोवृत्ति को उन्नत करना है।

८—विद्यार्थियों के औद्योगिक कार्य में शिक्षक भी क्रियात्मक भाग लें, जिससे विद्यार्थियों में अपने-अपने कार्यों में अधिक रुचि और क्रियाशीलता बनी रहे।

९—शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि शिक्षा का प्रत्येक विषय उद्योग के साथ मिला कर उसका महत्त्व अर्थात् जीवन के साथ उसका सम्बन्ध प्रगट करते हुए शिक्षण दें।

१०—शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि विद्यार्थियों की

वस्तुओं को व्यवस्थित रखने का स्वभाव डलवावें। दिन में अनेक बार विद्यालय या आश्रम में निर्दिष्ट समयों पर वस्तुओं को सुव्यवस्थित करा दें, और सुव्यवस्थित रूप में रखने के लाभ समय २ पर समझाते रहें।

११—शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि बालकों में परस्पर निर्दोष स्पर्धा उत्पन्न करें और विद्यार्थियों की मानसिक प्रगति का लेखा रखें और मास के अन्त में प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी प्रगति के अंक सुनाते रहें।

१२—शिक्षकों को चाहिए कि वे २४ घण्टे विद्यार्थियों के साथ रहते हुए, विद्यार्थियों की मनोवृत्तियों का निरीक्षण करते रहें क्योंकि शिक्षण-शास्त्र की दृष्टि से आश्रम और विद्यालय दो पृथक् वस्तु नहीं हैं।

१३—शिक्षकों को यह नहीं समझना चाहिए कि वे शिक्षण-कला में पूर्ण हो चुके हैं। क्योंकि विद्यार्थियों की मनोवृत्तियों को समझने की कला इतनी विषम है कि एक-एक को समुन्नत करने के लिए उचित मार्ग का निकालना सुगम नहीं होता, इसलिए शिक्षकों को शिक्षण-कला में पूर्णता प्राप्त करने के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती कि अमुक उन्नति के बाद शिक्षक पूर्ण हो जाता है। इसलिए शिक्षकों को समझना चाहिए कि जब उनको शिष्य मिल जाते हैं तो वस्तुतः शिष्य उनकी प्रगति में सहायक होते हैं और उनकी प्रगति के प्रकाश से शिष्यों की प्रगति होती है। इसलिए शिक्षकपना अमुक घण्टों तक कार्य करने से अमुक वेतन प्राप्त करने से पूर्ण नहीं हो जाता। जो शिक्षक समय और वेतन की दृष्टि से अपने शिक्षकपने को तोलता है वह वस्तुतः शिक्षक नहीं है। उनको शिक्षण संस्थाओं के कार्य से पृथक् ही रहना चाहिये। सच्चे शिक्षक का कर्तव्य है कि वह शिक्षण के क्षेत्र में अपनी कला का विकास करते हुये राष्ट्र के बालकों को उन्नत मनोवृत्तियों वाला सुशिक्षित व्यक्ति बना देने का अपना कर्तव्य समझे। वस्तुतः शिक्षण कला प्राचीनकाल से बढ़ती बढ़ती केवल मानव समाज तक सीमित नहीं रही, प्रत्युत प्राणिमात्र को समुन्नत और सुशिक्षित करने के लिये लागू हो चुकी है। इसी के कारण गाय, बैल, भैंस, ऊँट, घोड़ा, हाथी, कुत्ता, सांप आदि पशु सुशिक्षित होकर उन्नतवृत्ति वाले देखे जाते हैं। इसलिये किसी भी शिक्षक को राष्ट्रोन्नति की दृष्टि से प्रवेश करना चाहिये, समय और धन की मर्यादा से बद्ध होकर नहीं।

शिक्षण भी अन्य अनेक व्यसनों की तरह एक प्रकार का व्यसन है। अन्य व्यसनों का तो निषेध किया जाता है, किन्तु इस व्यसन को बढ़ाया जाता है। अनेक शिक्षक मनुष्य दूसरों को शिक्षित किये बिना रह ही नहीं सकते। ऐसा उत्तम व्यसन जिन मनुष्यों में होता है, वे ही शिक्षक कहलाने योग्य हैं। वे ही शिक्षण संस्थाओं के लिये लाभदायक हो सकते हैं अन्य नहीं। इन्हीं को शिक्षणसंस्थाओं में कार्य करने के लिये आगे आना चाहिये, अन्यों को नहीं। ऐसे शिक्षक धन और निर्दिष्ट समय केलिये शिक्षण का कार्य नहीं करते, अपितु वे शिक्षण के द्वारा आत्मा की उन्नति समझते हैं।

प्रश्न १३-क्या शिक्षाक्रम के विषयों का कोई वर्गीकरण है ?

उत्तर—हमने शिक्षाक्रम को पांच विभागों में विभक्त किया है। इन विभागों में वर्णित शिक्षाक्रम के द्वारा विद्यार्थी को पांच प्रकार की उन्नति करनी होती है। (१) शारीरिक (२) मानसिक (३) बौद्धिक (४) आत्मिक और (५) सामाजिक।

(१) शारीरिक—शुद्ध और स्वस्थ जीवन का अभ्यास, क्रीडा तथा व्यायाम।

(२)मानसिक-आर्यभाषा, संस्कृतभाषा दोनों का साहित्य, चित्रकला, संगीत, मनोरञ्जन।

(३) बौद्धिक—अर्थात् मानव जीवन का सिद्धान्त और आत्मोन्नति के साधन—

मूल उद्योग का अभ्यास, खेती, गोशालाकर्म (अन्नस्वालम्बन) कताई, बुनाई आदि (वस्त्रस्वालम्बन) उपयोगी गणित।

(४) आर्य सिद्धान्त का ज्ञान।

(५) सामाजिक विज्ञान—वर्तमान जगत् की स्थिति से परिचय, अन्य सम्पूर्ण विषयों से सम्बन्ध, उनको पुष्ट करने वाला इतिहास भूगोल आदि।

वर्गीकरण पर विवेचन

१—इस वर्गीकरण के प्रथम विभाग में शुद्धता, स्वच्छता और स्वस्थता इन तीनों बातों का जीवन में अभ्यास शिक्षकों ने व्यक्तियों को कराना है। बालकों के शरीर का विकास सुन्दर और उत्तमरूप में होना चाहिये। शरीर को, अपने रहने के स्थान को और अपने निवास-स्थान को शुद्ध, स्वच्छ, रोगरहित करने का अभ्यास करना है। इससे बालकों में स्वस्थजीवन व्यतीत करने की वृत्ति जाग्रत करनी और करवानी है। स्वस्थता के कारण बालकों में स्फूर्ति, प्रसन्नता प्रकट होनी चाहिये। उसके लिये उन्हें क्रीडा, खेल-कूद, व्यायाम, आसन, प्राणायाम, व्यूहरचना, सामूहिक और व्यक्तिगत लेजिम, गदका, बनैठी, छुरे भाले आदि का प्रयोग, लाठी चलाना, स्तूप-निर्माण आदि का अभ्यास कराया जाना चाहिये। इससे शरीर में समतुलन होगा। सम्पूर्ण इन्द्रियों की शक्तियाँ बढ़ेंगी। सम्पूर्ण शिक्षण का परिणाम यह होगा कि बालकों का शारीरिक विकास व उन्नति अच्छे प्रकार होगी। शरीर की उन्नति को प्रथम विभाग में इसलिये रखा गया है, क्योंकि कहा है "शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्" उत्तम शरीर ही सबसे पहिला धर्म का कारण है

२—शिक्षण का दूसरा विभाग मानसिक उन्नति से सम्बन्ध रखता है। इस शिक्षण में वृत्तियों का ग्रहण और उनका प्रकाशन दो वस्तुओं में सन्निविष्ट है। वृत्तियों का ग्रहण भाषाओं के द्वारा ही होता है जिस में वर्तमान समय की और भूतकाल की दोनों प्रकार की वृत्तियां पठनपाठन से सम्बन्ध रखती हैं। उस के लिये भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है।

भाषाओं में संस्कृत भाषा और हिन्दी भाषा की प्रधानता हैं। शब्दों का शुद्ध स्वरूप और उच्चारण बिना संस्कृत भाषा के अभ्यास के नहीं हो सकता। अतः संस्कृत भाषा का सिखाया जाना और उसके आधार पर आर्यभाषा का लिखाया जाना आवश्यक है। भाषा के द्वारा मनोवृत्तियों के शुद्ध रूप को ग्रहण करने के लिए संस्कृत साहित्य और साथ ही साथ हिन्दी साहित्य पढ़ाया जाना आवश्यक होता है। जिन शुद्ध मनोवृत्तियों को विद्यार्थी ग्रहण करता है उनके प्रकाश किये बिना अपने तथा समाज के जीवन से उनका सम्बन्ध ज्ञात नहीं पड़ता। इस लिए भाषा के साथ भावों का ग्रहण और प्रकाशन दोनों को दूसरे विभाग में रखा गया है।

३—शिक्षा का तीसरा विभाग बुद्धि का विकास है। बुद्धि के विकास में कारीगरी, गणित और सामान्यविज्ञान सम्मिलित होना चाहिये। क्रियात्मक अभ्यास के द्वारा विद्यार्थी में सूझ और समझ शक्ति बढ़ती है—कि क्या करने से क्या होता है। जिस परिणाम को विद्यार्थी लाना चाहता है उसके लिये उस में सूझ पैदा होती है कि उसे क्या करना चाहिये। यही चीज गणित के द्वारा भी सिखलाई जाती है और दोनों का मेल सामान्य विज्ञान में होता है। ऐसा मेल होते हुए विज्ञान उद्योग में सहायक हो जाता है। इस प्रकार विद्यार्थी की बुद्धि का विकास होता है। परन्तु यह बुद्धि का विकास कोरे तर्क को ही उत्पन्न नहीं करता, किन्तु बाह्य और आन्तर जीवन के मार्ग का पथ प्रदर्शन करते हुए आत्मिक विकास के रूप में बदल जाता है। इस लिए शिक्षा के तीसरे विभाग को हम आत्मिक उन्नति का विभाग कहते हैं।

४—चौथा विभाग आर्य सिद्धान्त का विभाग है। सत्यनिर्णय के लिए तर्कना का प्राधान्य-विशेष है। अतः इस विभाग को हम ने बौद्धिक-विकास के साधन के रूप में ग्रहण किया है।

५. शिक्षाक्रम का पाँचवाँ विभाग सामाजिक उन्नति का है। पूर्वोक्त जितने विभाग आ चुके हैं उन सबका परिणाम सामाजिक उन्नति में है। अपने देश की और दूसरे देशों की वर्तमान काल और भूतकाल में सामाजिक उन्नति का क्या क्या स्वरूप रहा और उसमें वहाँ के निवासियों का क्या क्या कर्तव्य रहा; इस सबका ज्ञान इतिहास, भूगोल और नागरिकता से होता है। इसलिए सब विभागों का परिणाम-भूत विभाग समाज उन्नति का विभाग होने से यह अन्तिम विभाग होता है।

प्रति विषय शिक्षकों को निर्देश।

१—शिक्षक इस बात का ध्यान रखें कि वे बच्चों को स्वस्थ, और शुद्ध जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देते समय इसके नैतिक व सामाजिक पहलुओं को भी अपने सामने रखें। शिक्षणालय में विद्यमान, औषधालय में

बच्चों से दवाई बनवाना और रोगी परिचर्या सिखलावें ।

२—शिक्षक ध्यान रखें कि छोटे बच्चों से स्वच्छता और स्वास्थ्य की मनोवृत्ति के लिए आवश्यक स्वभाव उत्पन्न करें न कि उन्हें विषय ज्ञान देना है । यह शिक्षा क्रम पढ़ाई का विषय नहीं, बल्कि बच्चों के विकास का केन्द्र है । यदि बच्चों की ओर से कोई प्रश्न आये तो सरल शब्दों में इन कामों का संबंधित ज्ञान देवें । स्वास्थ्य के सम्बन्ध में शरीर विज्ञान की जो शिक्षा दी जावे वह सब सरल शब्दों में दी जानी चाहिए, वैज्ञानिक शब्दों में नहीं । प्रत्येक कार्य पर शिक्षक की दृष्टि रहनी चाहिए कि वह कार्य दिए हुए निर्देश पर हुआ है कि नहीं । दैनिक कार्य की प्रत्येक प्रवृत्ति का इस भाँति अध्ययन करें जिससे आरोग्य और स्वच्छता के जिन सिद्धान्तों पर शुद्ध और स्वस्थ-जीवन-विज्ञान निर्भर है उनसे विद्यार्थियों का परिचय हो ।

यथा समय ब्रह्मचर्य रक्षा के विषयों का अध्ययन प्रारम्भ किया जाए । बारह वर्ष की आयु के पश्चात् किशोरावस्था में शारीरिक और मानसिक जो विशेष परिस्थिति होनी संभव हो उससे पहिले ही सरल और गंभीर शब्दों में ब्रह्मचर्य संबंधी ज्ञान देना अभीष्ट है । ताकि किशोरावस्था में बालक और बालिकाओं में ब्रह्मचर्य पालन के लिए उपयुक्त ज्ञान और श्रद्धा हो । अस्वाभाविक ढंग से बच्चों को यह ज्ञान नहीं दिया जाना चाहिए ।

वनस्पति शास्त्र, प्राणिशास्त्र, शरीर शास्त्र के द्वारा उनको खेती बागबानी या सफाई आदि प्रवृत्तियों के साथ साथ स्वाभाविक ढंग से ब्रह्मचर्य संबंधी ज्ञान दिया जाना चाहिए। साथ २ जीवन की इस प्रवृत्ति के सम्बन्ध में श्रद्धा और उत्तरदायित्व के बोझ का विकास होना चाहिए ।

३—शिक्षणालयों में शिक्षक पांचवीं श्रेणी तक बागबानी का काम आवश्यक रखें। अगली तीन श्रेणी में विद्यार्थी को इतना अभ्यास हो जाना चाहिए कि वह अपने शारीरिक तथा मानसिक विकास से आजीविका प्राप्त करने में समर्थ हो और उद्योग द्वारा शिक्षणालय का आर्थिक उत्तरदायित्व उठाने का प्रयत्न कर सकें ।

४—औद्योगिक श्रम अन्न स्वावलंबन, वस्त्र स्वावलंबन व उपकरणों की सामान्य मरम्मत की दृष्टि से होना चाहिए । शिक्षकों को ध्यान रखना चाहिए कि उद्योग के उपकरण नियत स्थान से लिए जावें और कार्य समाप्ति पर नियत स्थान पर रखे जावें । प्रत्येक कार्य की समाप्ति के पश्चात् प्रतिदिन काय का हिसाब निकालना चाहिए कि कितना कार्य हुआ कितना करना चाहिए और कितना शेष है । इस प्रकार कार्य का वेग वर्ष भर का निकाल कर मालूम करना चाहिए । कार्य के वेग का निर्देश करके विद्यार्थियों को सूचित करना चाहिए कि उनके कार्य की गति कितनी है । शुद्धता, पूर्णता, शीघ्रता की दृष्टि से प्रत्येक विद्यार्थी के अङ्क प्रति दिन कार्य समाप्ति पर देने चाहिएं । जिन कार्यों में एक साथ छोटे बड़े परस्पर सहायकों की आवश्यकता हो उनमें उनके किए हुए कार्यों का निरीक्षण करते हुए बालकों की अवस्था को नहीं भूलना चाहिए ।

५—बच्चों के उच्चारण में अनेक अशुद्धयां होती हैं, इसलिए पाणिनि के बनाए वर्णों के उच्चारण के नियम समझाते हुए विद्यार्थियों को वर्णों के उच्चारण का अभ्यास डलवाया जाए । जिह्वा को कहाँ किस प्रकार लगाना इसका निर्देश करते हुए उच्चारण ठीक कराया जा सकता है ।

इसी प्रकार संयुक्त अक्षरों को बोलने का नियम स्पष्ट समझाकर और बुलवाकर समझाना चाहिए । उच्चारण ठीक करने के लिए किसी औषध विशेष की आवश्यकता हो तो उसका प्रयोग करना चाहिए । काम के सिलसिले में जब बच्चों में लिखने और पढ़ने की आवश्यकता प्रतीत हो तब लिखना-पढ़ना आरम्भ कराया जाए । विद्यार्थियों को आरम्भ से ही यह अभ्यास करना चाहिए कि मौखिक कहानी कविता और मनोरंजन आदि के द्वारा अपने देखे और सुने को शिष्ट भाषा में प्रकाशित कर सकें । (क्रमशः)

“सम्मति”

“सुधारक” देश भर की कुरीतियों को समाप्त करके ही दम लेगा ।

हरिश्चन्द्र “नाज”
गढी घसीटा (सोनीपत)

वन गंगा का विलाप

श्री क्रान्तिकृष्ण "अनर्गल" नयागांव, पटना ।

कांगड़ी ग्राम की वन गंगा,
भर उर में आवेग प्रबल ।
मचा रही ऊर्म्मि-त्रिभंगों में,
फेनोच्छल भावों के हलचल ।
उर में ऊर्म्मिल फेनोच्छ्वास-
भर, क्यों बह रही गंगा अशान्त ।
मन्द प्रवाह, श्री रहिता सी,
किसे ढूँढ रही सुरसरि ! दिग्भ्रान्त ॥
भूधर-अधित्यका का कूल,
गहन कानन नीरव एकान्त ।
जहां मार्ग भी पथ भूल,
उन्मन भटक रहे उद्भ्रान्त ।
प्रखर मध्याह्न-किरणें भी,
भेद न पातीं कुञ्जों का ध्वान्त ।
हिंस्र-व्याल-व्याघ्रों से निर्भीक,
होते थे श्रद्धानन्द यहीं विश्रान्त ॥
तब तुंग नगपति देता था,
कुछ अनन्य अलौकिक उत्साह ।
अब कहां ! गंगा बहती है !
विभंग में भर उमंग-प्रवाह ।
स्वप्न बन गया अब वह,
वीचि-वीचि में उनका अनुराग ।
कानन के कलि-कुसुमों का,
म्लान अब मरन्द-गन्ध—पराग ॥
कुंज कुंज के वन-भृंगों का,
शिथिल अब वह सरस गुंजार ।
कोकिल कण्ठ, केकी की केका,
अब न करती वैसा रस संचार ।
अब न मुग्ध मृगों का यूथ,
करता निःशंक समोद विहार ।
अब न सिंह-शिखी में अन्योन्य,
कुरंगम उरंगम का विश्वास ।
कानन-कुंज, लता-गुल्मों में,
कहां ! वायु का होम-सुगन्धि-प्रश्वास ।
लिए हरिणों के से मुग्ध भाव,
कहां ! खेल रहे तापस से बाल ।
कहां ! वह उषा की रश्मि,
जो थी भेद रही अविद्या का जाल ।
तेजः किरण जो बरसाता था,
कहां ! वह श्रद्धानन्द का उन्नत भाल ।
कहां ! वह श्रद्धानन्द की छाती,
जिसे झोंक न सकी किरचें विकराल ।
खण्डित जिसके आगे संगीनें,
कहां ! वह राष्ट्रोन्नायक ! दिव्य ! विशाल ।
स्तम्भित जिसके आगे बन्दूकें.
कहां ! जन-जलधि की उत्ताल लहर ।
नयनों का वह ओज कहां ?
गोरा पल्टन चित्रलिखित जिस पर ॥
म्लान शिखरि-श्रेणी के शिखर,
उधर हिमगिरि का उन्नत शृंग ।
आर्त्त विकल हो खग मृग,
ढूँढ रहे उसे गुहा गुहा वन कुंज ।
क्षीण हुई आभा चंडीवन की,
कहां ! गया वह श्रद्धानन्द छवि-पुंज ॥
शिथिल अब पवन का वेग,
उड़ा उड़ा जो फिरता था भर संवेग ।
कहां ! विटप विटप में प्राण,
जो फूंकता था श्रद्धानन्द का सन्देश ।
विकल ! जामा मसजिद कहता,
जागो ! सुंशो ! खण्ड खण्ड भारत देश ।
ओ ! लार्ड चेम्सफोर्ड के राजा !
व्याकुल भारत मांग रहा नव आदेश ।
ओ ! मोहन गांधी के बल दाता !
उठ चिता से जागो ! भर नव आवेश ॥
ये कांगड़ी के भग्न खंडहर,
स्मृति दिला रहे किसी का वियोग लिए ।
इन ध्वस्त ध्वंसावशेष में भी,
मुख साम-मुखर थे उनका संयोग लिए ।
व्याकुल कांगड़ी की वन गंगा,
तट पर खंडहर का भार लिए ।
एकाकिनी विधवा सी होती है,
तट-सीमन्त में श्रीहत सुहाग लिए ।
म्लान ! क्षीण छवि ! अब यह,
उर में विस्मृत अरमान लिए ॥

(शेष पृ० १४ पर)

इतिहास की झांकी

ब्रह्मचारी की (आदर्श और अमर) सन्तान

[नैष्ठिक ब्रह्मचारी आचार्य भगवान्देव जी गुरुकुल झज्जर, रोहतक]

रात्रि का शान्त समय है। लगभग ६ बजे हैं। नीरव निर्जन वन है। सुन्दर सुहावना ऋषियों का आश्रम है। आश्रम के मध्य में एक पर्ण कुटीर है। एक दीपक टिमटिमा रहा है। दीपक के समीप ही एक महात्मा विराजमान हैं। सुन्दर सुडौल कसा हुआ शरीर है। अङ्ग प्रत्यङ्ग हृष्ट-पुष्ट हैं। लम्बाई होगी दो गज से भी अधिक। इनके सारे अङ्ग ऐसे जान पड़ते हैं जैसे इस्पात (फौलाद) के बने हुए हों। जानु (घुटनों) तक लटकती हुई ढीली भुजायें, सुती हुई पिंडलियां, विशाल लाल ललाट और चमचमाते हुए सूर्य के समान ताम्र-वर्ण तेजस्वी मुख मण्डल, आँखों की अपूर्व ज्योति लम्बी सुन्दर दाढी और लटकती हुई घुंघुरू वाली जटायें शरीर की शोभा को चार चांद लगा रही हैं। देह पर केवल एक वल्कल की कोपीन और कटि वस्त्र है। शृंगार नाम को नहीं। और मानव-सरलता की परकाष्ठा को लाँघ गये हैं। पूर्ण युवा प्रतीत होते हैं किन्तु आयु १०० वर्ष के लगभग है। सारे शरीर पर झुर्री नाम को भी नहीं है। कोई पूर्ण योगी पूर्ण विद्वान् उग्र तपस्वी सर्वस्वत्यागी महात्मा हैं। किसी गहरे विचार में मग्न हैं वा समाधि का अपूर्व आनन्द ले रहे हैं। ओ हो! दीपक बुझने लगा। बत्ती जल कर आगे गुल (मुरंड) आ गया। इतने में एक देवी बड़ी शीघ्रता से दीपक की ओर बढ़ती हुई दिखाई देती है। कैंची से बड़ी चतुरता से मुरंड काटती है। किन्तु फिर भी दीपक बुझ जाता है। वह देवी उसे तुरन्त ही दीपशलाका से जला देती है। किन्तु इसी अवसर पर उस महात्मा की समाधि खुलती है। वे दीपक को बुझता और पुनः जलता हुआ देखते हैं। अपनी कुटी में एक युवती को देखकर आश्चर्य में पड़ जाते हैं और पूछते हैं—ऐ देवी! ऐ माता! तुम इस घोर रात्रि में इस निर्जन वन में कैसे और कहां से आई हो? तुम कौन हो, मेरी कुटी में तुम्हारा क्या काम? देवी मौन है, चुप्पी साधे हुए है, उत्तर नहीं देती; बोलते हुए डरती और घबराती है। अपना अपराध समझती झिझकती वा लजाती है। फिर पुनः महात्मा जी विनय भाव से पूछते हैं। माता जी? आप कौन हैं?

देवी—महात्मा मेरा अपराध हुआ, क्षमा करें। मेरे कारण दीपक बुझा और आप के कार्य में विघ्न पड़ा। कृपा करके मुझे क्षमा करें और मुझे माता कहकर लजित न करें।

महात्मा—ऐ देवी! आपने मेरा कोई अपराध नहीं किया, न ही मेरे कार्य में कोई विघ्न डाला। ईश-कृपा से मैं जिस तत्त्व की खोज में था, जिस ध्येय की प्राप्ति की धुन मुझे थी वह मुझे प्राप्त हो गया। जिस समस्या को मैं सुलझा रहा था वह आज सुलझ गई। जिस सूत्र का अर्थ नहीं लगने में आता था वह पूर्णतया लग गया। इसी हर्ष में मग्न हो ज्योंही मैंने आंखें खोलीं तो क्या देखता हूँ कि एक देवी दीपक को बुझने से बचा रही है और बुझने पर पुनः जला रही है। आपका क्या दोष वा अपराध है। आपने तो उलटी सेवा की है। आप जगत् जननी हैं। मातृ-शक्ति हैं। अतः मैंने आप को माता कह कर पुकारा है। 'संसार की सभी स्त्रियों को माता के समान मानो' यही हमारी सभ्यता, यही हमारा धर्म है। आप बुरा क्यों मानती हैं। क्या आपको भगिनी (बहिन) कहना उचित है? नहीं महात्मन्! यह बात नहीं हैं। 'मातृवत् परदारेषु।' कहा है पराई वा दूसरों की स्त्रियों को माता बहिन के समान समझो।

मैं तो महात्मन्। आपकी————(कहती हुई लजाती है)

महात्मा—ऐ देवी ! चुप क्यों हो ? कहो निःसंकोच हो कर कहो।

देवी—महात्मन् मैं तो आपकी अर्धाङ्गिनी हूं। धर्मपत्नी हूँ। आप मुझे माता माता कह कह कर लज्जित करते हैं।

महात्मा जी आश्चर्य में पड़ जाते हैं। कुछ देर बाद विचार करके पूछते हैं--आप मेरी धर्मपत्नी हैं यह कैसे ? आपकी बुद्धि ठीक ठिकाने है या नहीं। मस्तिष्क तो नहीं बिगड़ गया है ?

देवी—महात्मन् ! जो मैं कहती हूँ सब ठीक कहती हूं आप मेरे पति देव हैं।

महात्मा—यह कैसे-क्या मैंने विवाह भी किया है ? आप इस जन्म की बातें कहती हैं या किसी अन्य जन्म की, सब खोल कर बताओ।

देवी—मैं इसी जन्म और इसी शरीर की बात कहती हूँ। लगभग ५० वर्ष हुए उस समय मेरा और आपका विवाह (पाणिग्रहण) संस्कार हुआ था। उस समय भी आपके हाथ में इस वेदान्त-दर्शन--शाङ्कर भाष्य के पृष्ठ (पन्ने) थे। जो आज भी आपके आगे रखे हैं। आप विवाह करके मुझे सर्वथा भूल गये और इन्हीं के लिखने पढ़ने और विचारों में लगे रहे। मैं भी अपना धर्म समझ आपकी परिचर्य्या (सेवा) में लगी रही। यही मेरे विवाह की कहानी है।

महात्मा—(बहुत देर विचार कर) ओ हो ! ठीक है। आपका कथन ठीक है। मैंने बड़ा भारी अपराध किया है। दोषी आप नहीं—मैं हूँ। क्षमा करें। मैंने थोड़ा नहीं घोर अपराध किया है आपका, जनता के समक्ष अग्नि देवता को साक्षी देकर, पोष्या कह कर पाणिग्रहण किया। किन्तु आपको सर्वथा भूल गया। आपके निर्वाह का कोई प्रबन्ध नहीं किया। देवी मुझे क्षमा करना। अच्छा तुमने अपना शरीर पोषण कैसे किया और ये पचास वर्ष कैसे बिताये ?

देवी—महात्मन् ! मैं प्रतिदिन ग्राम में जाती--पाठशाला में कन्याओं को पढ़ाती। जनता को धर्मोपदेश दे कर्तव्या-कर्तव्य का बोध कराकर सन्मार्ग पर लाती थी और अपने ब्राह्मण वर्ण धर्म को निभाती थी। जो दान दक्षिणा श्रद्धापूर्वक मिलती उससे स्वयं निर्वाह करती और आपका काम चलाती थी। आपके शरीर रक्षार्थ जल आदि अन्य पदार्थ आपके स्थान पर प्रतिदिन रख जाती थी। और उष्ण-काल (गर्मी) में जब आप कार्य से निवृत्त होकर सो जाते तो पंखा चलाती थी और प्रतिदिन आपके पैर दबाती थी। थक कर जब मुझे निद्रा आती तो मैं भी सो जाती थी। और इसी प्रकार अपने दिन बिताती थी। महात्मन् ! आपका कोई दोष नहीं। मैं तो अपना सौभाग्य समझती हूँ कि प्रभु ने मुझे सच्चे महात्मा की सेवा का शुभ अवसर दिया। यह उसकी महती कृपा है कि मुझे विवाह के बहाने आपके साथ जोड़ दिया। मैंने तो आपके समान महापुरुष की सेवा कर अपना जीवन सफल किया। यदि दुर्भाग्यवश किसी सामान्य पुरुष से मेरा विवाह हो जाता तो यों ही साँसारिक धंधों और विषयों में फंस कर यह मनुष्य जीवन नष्ट होता और व्यर्थ जाता।

किन्तु केवल एक इच्छा . मौन हो जाती है।

महात्मा—देवी स्पष्ट कहो वह एक क्या है ?

(देवी उत्तर नहीं देती चुप है।)

महात्मा जी समझ गये और बोल उठे, देवी मैं जान गया, केवल एक पुत्र की कामना है। आप यही चाहती हैं। आपका उत्तराधिकारी--आपका प्रतिनिधि—आपका नाम चलाने वाला, एक सुपुत्र आपके पीछे संसार में रहे। वह तो हो गया, हमने ऐसा पुत्र उत्पन्न किया है जो आज से पूर्व किसी ने नहीं किया। आज तक पुत्र के नाम से पिता का स्मरण करते हैं। या यूं कहिये कि पुत्र से पिता का नाम चलता है। बेचारी माता का नाम तो विलीन ही हो जाता है। इतिहास इसका साक्षी है। मैंने ५० वर्ष के पुरुषार्थ से यह वृत्ति (टीका) लिखी है। प्रातः स्मरणीय श्रद्धेय श्री १०८ स्वामी शङ्कराचार्य जी महाराज ने वेदान्त शास्त्र का भाष्य किया है। इसी शांकर भाष्य पर मैंने टीका लिखी है। यही हमारा पुत्र वा सन्तान है। इसका नाम मैं आपके नाम पर रख देता हूं। इस पुत्र के साथ सदैव तेरा ही नाम सम्बन्धित (जुड़ा) रहेगा। यह कह कर उस टीका का नाम उन्होंने अपनी धर्मपत्नी के नाम पर 'भामती-भाष्य' रख दिया।

यह महात्मा पण्डित वाचस्पति मिश्र थे। इन्होंने लगभग सभी दर्शनों पर टीकायें की हैं। जिनको आज का विद्वन्मण्डल बड़ी श्रद्धा से अध्ययन करता है। धन्य

हो स्वामी शंकर आचार्य ! जिनको वाचस्पति मिश्र जैसे अनेकों शिष्य मिले। जिन्होंने आजीवन ब्रह्मचारी रह कर उनके सिद्धान्तों का प्रचार किया। वाचस्पति मिश्र तो इन सब में आगे बढ़ गये। विवाह करके टीका लिखने में इतने संलग्न और व्यस्त हुए कि ५० वर्ष तक दर्शनों के अध्ययन और टीका लिखने में लगे रहे। यहाँ तक कि यह भी भूल गये कि मेरा विवाह भी हुआ है या नहीं, सन्तानोत्पत्ति की बात तो दूर रही। आज उनका विद्या-पुत्र 'भामती-भाष्य' अमर है और दोनों पति-पत्नी को सदैव के लिए अमर रखेगा। आज भी शंकर के जो भक्त शांकर भाष्य के लालित्य का आस्वादन करते हैं, उन्हें शंकर के गूढ़ रहस्यों के समझने के लिए वाचस्पति मिश्र के अमर और आदर्श पुत्र (भामती-भाष्य) के श्रद्धापूर्वक चरण छूने ही पड़ते हैं · आज का गन्दा संसार इस ऐतिहासिक सच्चाई पर विश्वास करे या न करे, किन्तु इस पवित्र भारत में तो अनेक विवाहित तथा अविवाहित महापुरुष हुए हैं जो आजीवन ब्रह्मचारी रह कर वेद की पवित्र वाणी का प्रचार कर अमर हो गये। आज का गिरा हुआ मनुष्य जो स्वयं एक दिन भी ब्रह्मचारी नहीं रह सकता, ऐसे अटल सत्य पर कैसे विश्वास करे। ऐ आर्यसमाजियों ! तुम भी तो बाल-ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द के शिष्य हो। क्या तुम्हारे में भी किसी के हृदय में आग है कि अपने पुत्रों को महर्षि दयानन्द के चिह्नों पर चलने के लिए तैयार करे। आर्य-समाज का प्रचार तो उसी दिन होगा जब आर्य युवक ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर घर बार को लात मार 'दयानन्द-भिक्षु' बनेंगे और अशोक के पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा के समान देश देशान्तर द्वीप द्वीपान्तर में प्रचारार्थ फैल जायेंगे—और अपने ब्रह्मचर्य युक्त पवित्र जीवन की आहुति देंगे। दुःख तो यह है ये आर्यसमाजी भी बाल-विवाह की दल दल में फंसे हैं। अपनी सन्तान को अर्थात् लड़कों को २५ वर्ष तक और कन्याओं को १६ वर्ष तक भी नहीं पहुँचने देते। यह निकृष्ट ब्रह्मचर्य का भी पालन नहीं करने देते। विद्यार्थी और युवको ! तुम ही साहस करो, इस अन्याय का घोर विरोध करो। इस बाल-विवाह को जो ब्रह्मचर्य का अत्यन्त घातक है। संसार से मिटाकर छोड़ो। जिसके हृदय में देश-धर्म की थोड़ी सी भी तड़प है, उनके सामने वाचस्पति मिश्र के दाम्पत्य जीवन का अथवा अखंड ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द के आदर्श का पथप्रदर्शन है। उनके पीछे चलो और अपने जीवन को सफल बनाओ और सदा के लिए अमर हो जाओ। परमात्मा आर्यों को सद्बुद्धि प्रदान करे कि ये भी अपनी सन्तान को अमर और आदर्श बना सकें। यदि ये अब भी न जागे तो कवि के कथनानुसार फिर कब जगेंगे।

जो ऋषि दयानन्द के जगाये भी न जगे,
उन्हें फिर से कौन आयेगा जगाने के लिये।

आर्यों ! होश में आओ और अपने कर्तव्य के लिए सिर धड़ की बाजी लगा दो। सारा संसार आर्य बनने के लिए तैयार खड़ा है। अब परीक्षा है--देखें कौन आगे आता है।

(पृष्ठ ११ का शेष)

बिखरे ! वीचि-लटों में गंगा !
परिहत वसना नग्न-पुलिस गंगा।
जल परिकृश ! वन गंगा !
शिला-कंकालों में अस्थिमात्र ! गंगा !
फेंक ! विभंग-भूषण गंगा !
वन वन गिरि गुहा ढूँढ रही उनको।
शून्य वनवासिनी गंगा !
उठ रात्रि में ढूँढती है ! उनको !
कहते हैं पगली वन गंगा !
आठों याम घूम रही है देखने उनको ॥
ओ ! रो रही ! कांगड़ी की गंगा !
कर याद अतीत वैभव का इतिहास।
ओ ! सुनो। गंगा की मर्मव्यथा,
यहीं होता था विद्याओं का सर्वविकास।
इसी वन गंगा के तट पर,
अतीत गौरव का छिपा उल्लास।
यही वेदना वन गंगा की,
कहां ? वह श्रद्धानन्द का वाग्विलास।
वीचि वीचि का यही विलाप !
कहां ? श्रद्धानन्द का ऊर्ध्व ललाट।
मध्य रात्रि को जो उठकर,
घूमता था वन वन परिव्राट्।
शहीद ! जिसकी कीर्त्ति अमर,
कहां ? वन खंडहर का सम्राट्।
जो राष्ट्र चेतना का वैभव।
कहां ? श्रद्धानन्द ! वह ! विराट् ॥

(पृष्ठ ६ का शेष)

अर्थात् नियमानुसार गृहस्थाश्रम में सन्तानोत्पत्ति करता हुआ भी गृहस्थ ब्रह्मचारी कहलाता है। विवाह-संस्कार शुद्ध उत्तम सन्तान के लिये किया जाता है न कि विषय वासना में लिप्त होकर कीड़े मकौड़े पैदा करके अपना और पराया जीवन नष्ट करना। विवाहसंस्कार में सन्तानोत्पत्ति के नियमों में ब्रह्मचर्य रक्षा पर पूर्ण बल दिया गया है। अतः उत्तम नियमों पर चलता हुआ सद् गृहस्थ ब्रह्मचर्य पालन के नियमों से नहीं गिरता और सन्तान प्राप्ति भी करता है। जो लोग विषय वासना में लिपटे रहते हैं वे ब्रह्मचर्य का नाश करके प्रायः निस्सन्तान ही मर जाते हैं। स्वयं क्षय आदि रोगों में फंस जाते हैं। अतः इस शंका की दूसरी बात भी निस्सार है। श्रद्धेय प्रवक्ता महाशय का युक्तियुक्त समाधान सुनकर उपस्थित गृहस्थ जनता पर बड़ा उत्तम प्रभाव पड़ा।

इसी प्रकार अन्य नियमों के विषय में भी समझना चाहिये। ऋषि लोग क्रान्तदर्शी होते हैं। नियमों का निर्माण करते समय वे उस उस नियम में होने वाले अपवादों का भी ध्यान रखते हैं। जिस से संसार का हित सिद्ध होवे। इस लेख में आचार के "विध्यात्मक" अंश पर ही प्रकाश डाला गया है। इस का दूसरा अंश "निषेध-स्वरूप" भी है। विधि का अर्थ यह है कि "ऐसे करना चाहिये"। विधि के पालन से मनुष्य सुख की प्राप्ति करता है तथा निषिद्ध को छोड़ देने से दुःखों से बच जाता है। जैसे—

"मा गृधः कस्य स्विद्धनम्" यजुर्वेद के इस वाक्य में निषेध स्वरूप से यह उपदेश दिया है कि किसी के धन पर लालच की दृष्टि न डालें। इस वेदोपदेश पर आचरण करने से मनुष्य पर-धन पर दृष्टि डालने रूप अनेक विपत्तियों और अनाचार से बच जाता है। उस का सुधार होता रहता है और फिर विधि रूप कर्तव्य के पालन से जीवन उन्नत हो जाता है—

"कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व" ऋग्वेद में कहा—ऐ-मानव! खूब खेती कर और धन में रमण कर। इस से पता चला कि खेती अत्यन्त पवित्र और शुद्ध कमाई है। इस से धन और धर्म प्राप्त होते हैं। पौराणिक काल में खेती के पेशे की बड़ी निन्दा की गई और इस को नीच कहा गया। इस का परिणाम यह हुआ कि राष्ट्र चौपट हो गया।

अतः यह सिद्ध हो गया कि कर्तव्य कर्मों का पालन और अकर्तव्य कर्मों का त्याग श्रेष्ठ आचार है। इस से अपना और पराया सुधार हो कर जगत् में सुख की वृद्धि होती और दुःखों का ह्रास होता है।

विरजानन्द संस्कृत परिषद्

विरजानन्द संस्कृत परिषद् में आगामी एक वर्ष के लिये निम्न सज्जन परिषद् के अधिकारी चुने गये—

१. प्रधान—श्री स्वा० वेदानन्द जी महाराज (अनेक ग्रन्थों के लेखक एवं प्रचार मंत्री, सार्वदेशिक गोरक्षासमिति)

२. मुख्य उप-प्रधान—श्री स्वामी व्रतानन्द जी महाराज (आचार्य गुरुकुल चित्तौड़ तथा प्रधान विद्यार्य सभा, नरेला

३. उप-प्रधान—श्री पं० राजेन्द्र नाथ 'शास्त्री' (आचार्य दयानन्द वेद विद्यालय, देहली)

४. मंत्री—श्री रघुवीर सिंह जी बी. ए., बी. टी. (मुख्याध्यापक डी. ए. वी. स्कूल, हस्तसाल)

५. उप मंत्री—श्री महेन्द्र कुमार जी शास्त्री

६. परीक्षा मन्त्री—श्री जगन्नाथ, बी. ए., एल एल. बी., जे. डी., प्रभाकर, सि० शास्त्री

७. प्रचार मन्त्री-श्रीमती सरोज अग्रवाल एम. ए., सा० रत्न

८. कोषाध्यक्ष—श्री रामेश्वर दास जी, बी. एस् सी, एल एल. बी., जे. डी.

अन्तरंग सदस्यः—

९. श्री स्वा० आत्मानन्द जी महाराज (अध्यक्ष वैदिक साधन आश्रम)

१०. श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी महाराज (सर्वाधिकारी सार्वदेशिक गोरक्षा समिति)

११. श्री पं० जगदेव सिंह जी शास्त्री सिद्धान्ती सं० सम्राट् देहली

१२. श्री पं० भगवान् देव जी, (आचार्य गुरुकुल झज्जर (रोहतक) तथा सम्पादक "सुधारक")

आहार ग्रहण करने की विधि और नियम

१. शरीर की न्यूनता की पूर्ति के लिए भोजन करने की भावना को दृढ़ कर लो। जिह्वा के स्वाद के लिए नहीं। स्वाद भूख में है, भोजन में नहीं।

२. हर एक पदार्थ को निगलने से पूर्व खूब चबाओ, जब तक पतला नहीं हो जावे न निगलो।

३. जब तक अच्छी भूख न लगे भोजन मत करो, और जिस भक्ष्य पदार्थ की अति इच्छा हो उसे अवश्य खाओ।

४. शरीर में जिस पदार्थ की कमी है, उस कमी को भूख और प्यास बतलाती है।

५. पेट को खूब डाट कर मत भरो, हवा और पानी के लिए कुछ खाली रखो।

६. भोजन जीवन के लिये है, जीवन भोजन के लिए नहीं। इस भावना को दृढ़ कर लो।

७. भोजन चौबीस घण्टों में दो समय, नियत समय पर ही करो, बार-बार भोजन करना आमाशय को निर्बल करता है।

८. रात का भोजन सोने से तीन घंटे पहले कर लो।

९. भोजन के साथ पानी कभी न पिओ, नहीं रहा जाय तो दो-चार घूँट से अधिक न पियो। भोजन करने के एक घण्टा पश्चात् पीना लाभदायक होगा।

१०. प्रातःकाल यदि भोजन की इच्छा हो जावे तो गाय की ताजा छाछ (मट्ठा) सब से उत्तम भोजन है।

११. फल, मिठाई, दूध आदि भोजन करने के साथ ही लेना अच्छा है।

१२. दो भोजनों के बीच में छः घण्टों का अन्तर अवश्य होना चाहिये। चार घण्टे भोजन पचाने के लिये और दो घण्टे अङ्गों को विश्राम के लिये।

१३. चाय, कॉफी, मांस, शराब, पान, तम्बाकू, गांझा, सुलफा; लाल मिर्च, अफीम उत्तेजक और हानिकारक हैं। इनके सेवन से ब्रह्मचर्य और बुद्धि की हानि होती है अतः इनका सेवन कभी न करो।

१४. चाय नींद कम करती है, अण्डकोषों को निर्बल बनाती है, मूत्र अधिक लाता है।

१५. खटाई और दूध एक साथ मत खाओ।

१६. भोजन के पूर्व तथा पीछे हाथ, पांव, जिह्वा, गला; दांत स्वच्छ कर लो।

१७. भोजन के तत्काल पीछे व्यायाम, स्नान, चिन्ता तथा क्रोध करना अत्यन्त हानिकारक है।

१८. अन्न की निन्दा मत करो, (ईश्वर का धन्यवाद करो)।

१९. वृद्धावस्था में (साठ साल के बाद) भोजन एक ही समय दिन में करो। प्रातः गाय की ताजा छाछ (मट्ठा) और रात को सोने से तीन घण्टे पहले केवल शुद्ध दूध का इच्छानुसार पान करो, स्वास्थ्य उत्तम रहेगा और बुढ़ापे के रोगों से सुरक्षित रहोगे।

२०. भोजन चबाते समय ध्यान मुँह की क्रिया पर हो, और अन्त में पाँच मिनट के लिये मैदे की क्रिया पर ध्यान लगाने से चार घण्टों का काम दो घण्टों में हो जावेगा।

आपका हितैषी—शान्तानन्द

अध्यक्ष
डा० रामकुमार वर्मा
वार्षिक २)

त्रिवेणी
साहित्यिक नैतिक
पारिवारिक मासिक

सम्पादक
राजकुमार शर्मा
एक प्रति ≡)

जिसके पृष्ठों में आपको मिलेंगे—नये आदर्श, नये लेखक, नयी रचनायें नयी कल्पनायें, कटु सत्यतायें और श्री राजकुमार शर्मा की अमृत विषभरी कलम का चमत्कार। जिसमें मिट्टी बोलती है, आकाश हंसता है।

'त्रिवेणी' रेलवे बुक स्टालों के अलावा २०० एजेंसियों से प्रचार पा रही है। अतः विज्ञापन का प्रमुख साधन है।

'त्रिवेणी' के वार्षिक सदस्य शरद साहित्यसदन, सहारनपुर द्वारा प्रकाशित साहित्य पौने मूल्य में पाने के अधिकारी है।

हर जगह एजेण्टों की आवश्यकता है।

कार्यालयः—८० सी मधवापुर इलाहाबाद,
प्रकाशक—शरद साहित्य-सदन, सहारनपुर; शिमला, देहरादून, इलाहाबाद, कलकत्ता।

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक

युवक और स्वप्नदोष

स्वप्नदोष एक ऐसा भयंकर रोग है, कि जिस के जाल से कोई सौभाग्यशाली ही युवक बचता है। यह विद्यार्थी तथा नवयुवकों को कुमारावस्था अर्थात् १४ वर्ष से १८ वर्ष की आयु के मध्य उभरती हुई युवावस्था में ही घेर लेता है। मेरे पास प्रति वर्ष सैकड़ों विद्यार्थी व युवकों के पत्र आते रहते हैं। अतः मैं अपने अनुभव के आधार पर यह बलपूर्वक कह सकता हूं कि ९९ प्रतिशत इस भयंकर रोग में फंसे हुए पाये जाते हैं। कालिजों, हाईस्कूलों के विद्यार्थी तो निःसन्देह शतप्रतिशत इस रोग के आखेट (शिकार) बने हुए हैं। पीले मुरझाये हुए मुख पर अन्दर धंसी हुई आँखें निस्तेज और कान्तिरहित दुर्बल शरीर आदि चिह्न युवकों का इस रोग में फंसे हुये का प्रत्यक्ष प्रमाण है। यह भयंकर रोग मेरे देश के युवकों के शरीर को घुन की तरह खाकर निर्बल और जीर्ण-शीर्ण कर रहा है। कुसंग, कुशिक्षा, कुत्सित विचार, मद्यमांसादि दुष्टभोजन, अधिक सोना, अधिक खाना, आलस्य प्रमाद में पड़े रहना, सिनेमा, स्वांगादि देखना, नावल नाटकादि, गन्दी पुस्तकें पढ़ना, इस रोग के मुख्य कारण हैं। यदि भारत के युवक शुद्ध विचार, शुद्ध भोजन, सत्संग और स्वाध्याय करते हुये श्रद्धापूर्वक व्यायाम, प्राणायाम और सन्ध्या (ईश्वर भक्ति) नियमित रूप से करें, तो इस भयंकर रोग का सर्वथा उन्मूलन बिना किसी औषध-सेवन के भी हो सकता है। किन्तु आज का युवक इन साधनों पर श्रद्धा विश्वास नहीं रखता। औषधों का आश्रय लेना अधिक हितकारी समझता है। इसलिए विद्यार्थी और युवकों के इस दुःख को दूर करने के लिए हमने निम्नलिखित औषध अपनी रसायनशाला में बड़े परिश्रम से बनाई है। पर्याप्त नवयुवक इनसे लाभ भी उठा चुके हैं। इस रोग की चिकित्सा में प्रमाद नहीं करना चाहिए। इसके अधिक बढ़ने पर मनुष्य नपुंसक (नामर्द) हो जाता है। हमारा स्वप्नदोषामृत रस तथा चूर्ण वीर्य को गाढ़ा तथा पुष्ट करके इस रोग को दूर करने में सफल हुआ है। इसके एक मास के सेवन करने से कितने रोगियों का स्वप्नदोष तो सर्वथा नष्ट हो चुका है। इसके सेवन करने वालों का लाभ तो सब को होता है। किसी को ५० प्रतिशत किसी को ७५ प्रतिशत होता है। जिन युवकों को अजीर्ण कब्ज रहता हो, उन्हें बीच-बीच में त्रिफले का सेवन करते रहना चाहिये।

स्वप्नदोषामृत रस—यह रस स्वप्नदोष को दूर करने की सर्वोत्तम औषध है। साथ ही वीर्य के मूत्र के आगे-पीछे या मध्य में आने वाले रोग को तुरन्त शान्त करता है। यह सब प्रमेहों के लिए भी अत्युत्तम औषध है। यह हताश तथा निराश युवकों को जीवन प्रदान करता है।

मूल्य ५) शीशी एक मासार्थ

स्वप्नदोषामृतचूर्ण—यह चूर्ण धातु को पुष्ट करता है, बलदायक है। स्वप्नदोष के रोगी के लिये अत्यन्त हितकर है। दोनों औषध रस तथा चूर्ण साथ-साथ सेवन करने से आश्चर्यजनक लाभ होता है। साथ ही यह नपुंसकता (नामर्दी) के लिये भी लाभदायक है। यह प्रमेहनाशक है। यह चूर्ण विद्यार्थियों के लिए विशेष हितकारी है।

मूल्य २) शीशी एक मास सेवनार्थ

१—दोनों दवाई एक मास की एक साथ मंगाने वालों से डाकखर्च एवं पैकिंग खर्च नहीं लिया जावेगा। यह रियायत उन्हीं को दी जायेगी जो दोनों दवाईयों के ७) मनीआर्डर द्वारा पहले भेज देंगे। मंगाने में शीघ्रता करें, धड़ाधड़ आर्डर आ रहे हैं।

सेवन विधि—चूर्ण को एक मासे से तीन मासे तक प्रातः सायं दूध वा जल के साथ लेना चाहिये. रस की एक-एक गोली प्रातः सायं दूध वा जल के साथ लेनी चाहिये। जो विद्यार्थी वा युवक ब्रह्मचारी हों, उन्हें इसका सेवन जल के साथ ही करना चाहिये, भूल कर भी दूध से सेवन न करें। जो युवक निर्बल वीर्यहीन हों, उन्हें ताजे दूध अथवा गर्म किये हुये ठण्डे दूध के साथ प्रातः सायं सेवन करना चाहिये। खटाई, कच्चा मीठा; मिर्च; लहसन; प्याज इत्यादि उष्ण चीजों का पथ्य रखें।

१. **नेत्र ज्योति सुर्मा**—इसके लगाने से आँखों के सर्व रोग जैसे आँख दुखना, खुजली, जाला, फोला, रोहे कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट), दूर का कम दीखना (लांग साइट), प्रारम्भिक मोतियाबिन्दु आदि दूर होते हैं। आँखों के सब रोगां की रामबाण औषधि है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आँखों को कमल की तरह साफ रखता है। बुढ़ापे तक आँखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है। लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। मूल्य ॥) शीशी।

२. **नेत्र ज्योति सुर्मा (विशेष)**—यह आँखों के उपरोक्त रोगों में विशेष लाभदायक है। मूल्य १) शीशी।

३. **नेत्रामृत**—यह दुखती आंखों के लिये जादू भरा विचित्र योग है। भयंकरता से दुखती हुई आंखें भी इसके एक दो दिन डालने मात्र से ठीक हो जाती हैं। साथ ही अन्य सभी नेत्र रोगों में हितकर है। मूल्य ।=) शीशी।

४. **दन्तरक्षक मञ्जन**—दांतों से खून या पीप का आना, दांतों का हिलना, दांतों के कृमि रोग, सब प्रकार की दांतों की पीड़ा तथा अन्यान्य सभी दन्त रोगों को दूर भगाता है। नित्य प्रयोगार्थ उत्तम मंजन है। मू० ॥) शीशी

५. **दन्तरक्षक तेल**—इसके सेवन से मुख का तथा दांतों का कोई रोग रहने नहीं पाता। पायोरिया के लिए हितकर है। मुख की दुर्गन्धि को दूर करता है। मंजन तथा तेल दांतों का साथ प्रयोग अत्यन्त लाभकर है। मूल्य ॥) शीशी।

६. **संजीवनी तेल**—यह औषध यथा नाम तथा गुण वाली है। कटे-फटे घावों को बहुत जल्दी भरता है। अन्दर की चोट की भी उत्तम औषध है। जादू भरा प्रभाव रखती है। मूल्य २) बड़ी शीशी ।=) छोटी।

७. **व्रणामृत**—यह फोड़े, फुन्सी, नासूर, गले-सड़े जख्मों को बहुत ही जल्दी ठीक करती है। मूल्य १) शीशी।

८. **स्वास्थ्यवर्धक चाय**—यह चाय स्वदेशी ताजी एवं शुद्ध जड़ी बूटियों से तैयार की गई है। यह वर्तमान चाय की भांति नींद और भूख को न मार कर, खाँसी, जुकाम नजला, सिरदर्द, खुश्की, अजीर्ण, थकान; सर्दी आदि रोगों को दूर भगाती है। मस्तिष्क एवं दिल को शक्ति देती है। नित्य प्रयोगार्थ उत्तम पेय है। मूल्य ।–) छोटी।

९. **हवन साम्री**—यह सामग्री सुगन्धित, पौष्टिक, बलवर्धक, औषधियों से तैयार की जाती है। ऋतु अनुकूल ताजा और शुद्ध सामग्री का ही यज्ञ करना महत्त्व रखता है। दैनिक हवन के प्रेमियों ने इसे अपनाया है। यज्ञों, महायज्ञों, संस्कारों तथा पर्वों के अवसर पर इसका अवश्य प्रयोग कीजिये। मूल्य १।) सेर।

१०. **बलदामृत**—यह औषध हृदय उदर एवं मस्तिष्क रोगों में रामबाण है। श्वास, कास, यक्ष्मा, तथा फेफड़ों की निर्बलता को दूर करके अतीव बल देती है। सुमधुर रसायन है। मस्तिष्क का कार्य करने वाले व्यक्तियों के लिये लाभदायक है। मूल्य ५) शीशी २० दिन के लिये पर्याप्त। छोटी शीशी २)।

११. **च्यवनप्राश**—शास्त्रोक्त विधि से तैयार किया हुआ स्वादिष्ट सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है, जिस का सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक सभी हृनय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है। मूल्य २) का पाव; ३॥।) का आधा सेर, ७) सेर तथा ५ सेर लेने पर ६) सेर।

मिलने का पता—

१. आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला गुरुकुल झज्जर।
२. गुरुकुल फार्मेसी रेलवे रोड रोहतक।
३. नव जीवन संचारक कम्पनी, आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली।
४. वैद्य कर्मवीर जी आर्य औषधालय, नरेला देहली।
५. म० श्री जोखीराम जी, आर्यसमाज मन्दिर लुहारू (नागल) हिसार।
६. श्री म० शिवनरायण जी पचगांवा (बाढड़ा) महेन्द्रगढ़।
७. श्री वैद्य बलराम जी नोना माजरा, रोहतक।
८. श्री म० रघुवीरसिंह जी बोडा, एलम जिला मुजफ्फर नगर।

हमारे प्रकाशन

[आज से पांच वर्ष पूर्व दीपमाला सं० २००६ को हम ने साहित्य सेवा का व्रत लिया था। तब से अब तक हमने ५६ छोटी बड़ी पुस्तकों का प्रकाशन किया है। उन में से पांच के तीसरे और नौ के दूसरे संस्करण तक निकल चुके हैं। हम यह सेवा आप महानुभावों के सहयोग से ही कर सके हैं। आशा है आगे भी यह सहयोग पूर्ववत् प्राप्त होता रहेगा।]

नये प्रकाशन

१. व्यायाम सन्देश	१)
२. आसनों के व्यायाम	॥)
३. सदाचार पंचिका	॥)
४. दृष्टान्त मंजरी	२)
५. काश्मीर यात्रा (प्रेस में)	॥)
६. बिच्छू विष चिकित्सा	=)
७. दयानन्द और गोरक्षा	-)॥
८. आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
९. चकबन्दी कानून	॥)
१०. संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय	॥)
११. स्वामी विरजानन्द	१॥)
१२. संस्कृत क्यों पढ़ें	१।=)

पूर्व के प्रकाशन

१३. ब्रह्मचर्य के साधन—	
भाग १,२ (प्रातः जागरणादि)	।-)
भाग ३ (दन्त रक्षा)	≡)
भाग ४ (व्यायाम सन्देश)	१)
भाग ५ (स्नान, संध्या, यज्ञ)	।=)
१४. ब्रह्मचर्यामृत—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)॥
१५. तम्बाकू का नशा—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)॥
१६. पापों की जड़ शराब—	
बाल संस्करण	।-)
साधारण संस्करण	=)॥
१७. ब्रह्मचर्य शतकम्	॥=)
१८. हित की बातें	-)॥
१९. नेत्र रक्षा	≡)
२०. व्यायाम का महत्त्व	=)
२१. आदर्श ब्रह्मचारी	।)
२२. कन्या और ब्रह्मचर्य	≡)
२३. स्वप्नदोष और उसकी चिकित्सा	=)॥
२४. बाल विवाह से हानियां–समाप्त	
२५. मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)
२६. संस्कृतांकुर	१।)
२७. संस्कृत कथा मंजरी	।-)
२८. श्रुति सुधा	≡)
२९. वैदिक गीता	३)
३०. आर्यसमाज की आवश्यकता	।)
३१. आ०स० आवश्यकता (छोटी)	-)
३२. आर्योद्देश्य रत्न माला	-)
३३. आर्यसमाज के नियमोपनियम	=)
३४. वैदिक संध्या पद्धति	-)
३५. वैदिक संध्या हवन पद्धति समाप्त	
३६. वैदिक सत्संग पद्धति	।=)
३७. कर्त्तव्य दर्पण	।॥=)
३८. हितैषी की गीता	।॥)
३९. कृषि विज्ञान	।॥)
४०. सिख और यज्ञोपवीत	≡)
४१. पंजाब की भाषा	-)
४२. आर्यकुमार गीतांजली भाग १, २	।=)
४३. रामराज्य कैसे हो ?	≡)
४४. अफ्रीका की यात्रा	२।)
४५. स्वा० दयानन्द और म० गांधी	२)
४६. स्वा० श्रद्धानन्द	)॥
४७. क्या हम आर्य हैं (६० प्रश्न)	-)
४८. महर्षि दयानन्द का कार्य	-)

नवीन साहित्य

(३१-१२-५२ के बाद हमारे प्रकाशनों का संक्षिप्त परिचय)

१. स्वामी विरजानन्द—ले० श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज मूल्य १।)—अनेक वर्ष हुए श्री पं० देवेन्द्रनाथ जी ने महर्षि दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द का जीवन चरित्र लिखा था। उसे समाप्त हुए भी कई वर्ष बीत गये। तब से महर्षि दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द जी महाराज के जीवन चरित्र की बड़ी मांग थी। इसी मांग को दृष्टि में रखते हुए स्वामी जी महाराज का यह प्रामाणिक जीवन चरित्र लिखा गया है। इसमें स्वामी जी सम्बन्धी अनेक ऐसी नवीन घटनाओं को दे दिया गया है जिनका पता बहुत से भाइयों को अभी तक नहीं था।

२. दृष्टान्त मञ्जरी—ले० पं० जगत्कुमार शास्त्री—मू० २) सजिल्द--इसमें अनेक महापुरुषों की जीवनियों से ११४ घटनाएँ दी गई हैं जिनका पाठ पाठकों में सत्य, न्याय प्रियता, साहस, परिश्रम, मनोबल, देश भक्ति, समाज प्रेम, सेवा, धैर्य आदि गुणों का संचार करेगा। विद्यार्थियों के लाभार्थ यह मोटे अक्षरों में छापी गई है। प्रत्येक लेखक, व्याख्याता तथा अध्यापक के पास इसकी एक प्रति अवश्य रहनी चाहिये।

३. व्यायाम सन्देश—लेखक : आचार्य भगवान्देव—मूल्य १)—इसमें व्यायाम सम्बन्धी अनेक आवश्यक बातें यथा—व्यायाम क्यों करें, कब करें, कितना करें, कौनसा करें, कैसे करें, देशी तथा विदेशी व्यायामों की तुलना एवं उनके हानि लाभ दिये गये हैं। आसन, दण्ड, बैठक के फोटो—चित्र होने के कारण इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है।

४. आसनों के व्यायाम—लेखक : भाष्याचार्य वेदव्रत गुरुकुल झज्जर (रोहतक)—मू० ।।) इसमें तीन दर्जन से अधिक आसनों का परिचय, उनके करने की विधि एवं लाभ समझाये गये हैं। प्रत्येक आसन का फोटो—चित्र इस पुस्तक की अपनी विशेषता है।

५. आर्य सिद्धान्त दीप—ले० पं० मदनमोहन विद्यासागर—० १)—आर्य सिद्धान्तों पर अपने ही ढंग की अनोखी पुस्तक। आर्य सिद्धान्तों का वास्तविक स्वरूप एवं परिचय जानने के लिए इसका स्वाध्याय अत्यन्त आवश्यक है। इसकी एक प्रति प्रत्येक समाज, कुमार सभा, लेखक एवं व्याख्याता के पास अवश्य होनी चाहिये। पुस्तक क्या है गागर में सागर भरने की कहावत को सत्य सिद्ध करती है।

६. चकबन्दी कानून—ले० चौ० बलवन्तसिंह एम० एल० ए०—मू० ।।)—इसमें चकबन्दी के साथ, चकबन्दी कैसे होगी, चकबन्दी का कानून इत्यादि अनेक विषय अत्यन्त सरल भाषा में समझाये गये हैं। प्रत्येक किसान, जमींदार एवं वकील को इसके स्वाध्याय से लाभ उठाना चाहिये।

७. संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय—ले० श्री पं० जगदेवसिंह जी सिद्धांती भू० पू० आचार्य गुरुकुल किरठल—मू० ।।)—वेदों से लेकर आज तक के प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थों के निर्माण का समय, लेखक का नाम तथा उन का विषय इत्यादि इसमें दिए गये हैं। यह संस्कृत पाठशालाओं एवं परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में लगाने योग्य अनुपम पुस्तक है। इसकी विशेषता इसी से सिद्ध है कि यह 'विरजानन्द संस्कृत परिषद्' की संस्कृत परीक्षाओं में निर्धारित है।

८. सदाचार पञ्चिका—ले० शारदा प्रभाकर—(मू० ।।)—यह डायरी आपके जीवन को अवश्य ही उच्च एवं नियमित बनाने में सहायता देगी। इसकी विशेषता यह भी है कि यह आपको डायरी का काम भी देगी तथा जिस तारीख से भी आप इसका उपयोग आरम्भ करेंगे तभी से आगे एक वर्ष के लिये काम देगी।

९. काश्मीर यात्रा—(प्रेस में)—ले० श्री जगन्नाथ बी० ए०, एल० एल० बी०—मू० ।।) इसमें काश्मीर सम्बन्धी प्रत्येक तथ्य—यथा वहां का इतिहास, रहन-सहन, उपज, ऋतु, दर्शनीय स्थान, नदी-नाले, होटल एवं उनके किराये इत्यादि का पूरा-पूरा विवरण दिया गया है। यह पुस्तक काश्मीर सम्बन्धी बाजार में मिलने वाली किसी भी हिन्दी पुस्तक की अपेक्षा अधिक अच्छी और सस्ती है। काश्मीर न जा सकने वाले व्यक्ति भी इसे पढ़ कर घर बैठे काश्मीर यात्रा का कुछ आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

१०. संस्कृत क्यों पढ़ें—ले० स्वामी वेदानन्द जी—मू० ।=) ऐसे उच्चकोटि के विद्वान् की लेखनी से लिखी यह पुस्तिका संस्कृत भाषा के महत्व को समझाने के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। प्रत्येक संस्कृत प्रेमी को इसका प्रचार करना चाहिये।

११. दयानन्द और गोरक्षा—पं० लक्ष्मीदत्त दीक्षित एम० ए०—मू० -)।। -प्रचारार्थ ७) सैंकड़ा (मोटे अक्षर २४ पृष्ठ) गोरक्षा आन्दोलन को तीव्र गति देने एवं इस आन्दोलन के वास्तविक दृष्टिकोण को जनता के समक्ष रखने के लिए इसका प्रचार करना प्रत्येक संस्था एवं गोभक्त का कर्तव्य है।

१२. बिच्छू विष चिकित्सा—ले० आचार्य भगवान्देव—मू० =)—इसमें बिच्छू के विष को दूर करने के लिये १०० नुस्खे दिये गये हैं।

वैदिक साहित्य सदन
आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली—६

हमारे तीन अभिनव प्रकाशन अवश्य पढ़ें

१—विरजानन्द चरित

सर्वविध क्रान्तिकारी महर्षि विरजानन्द जी महाराज का यह जीवन चरित अपने ढङ्ग का एक ही अनुपम ग्रन्थ है। इसके लेखक लेखनी के धनी श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज हैं जिन्होंने दर्जनों ग्रन्थ वेद के विषय में लिखे हैं, आप अनेक भाषाओं के प्रौढ विद्वान् हैं। इस ग्रन्थ में भी 'उत्थानिका' के मिष से अनेक गूढ रहस्यों का उद्घाटन किया है। ऐसे उच्च कोटि के विद्वान् की लेखनी से लिखे इस अपूर्व जीवन चरित में आप को ऐसी अनेक घटनायें मिलेंगी जो अभी तक साहित्य जगत् में नहीं आई हैं। बढ़िया कागज पर सुन्दर छपाई की गई है फिर भी २०० पृष्ठों के ग्रन्थ का मूल्य केवल १।।)।

२—व्यायाम सन्देश

श्री आचार्य भगवान् देव जी की यह वही उत्कृष्ट रचना है जिस के लिये गत एक वर्ष से व्यायाम प्रेमी सज्जन तथा विद्यार्थी समाज चातक की भाँति टकटकी लगाये हुये है। इस के पढ़ने से ६० वर्ष का व्यक्ति भी लङ्गोट बान्ध कर अखाड़े में आजायेगा, आचार्य जी के शब्दों में यह एक विचित्र शक्ति ही है कि मुर्दों और नपुंसक में भी जीवन शक्ति का सञ्चार हो जाता है क्यों कि ये हृदय के उद्गार स्वानुभूत होते हैं। १६ चित्रों से सुसज्जित इस प्रकार की उत्तम सामग्री व्यायाम के विषय में अन्यत्र न मिलेगी। मूल्य १) मात्र।

३—आसनों के व्यायाम (सचित्र)

ब्र० वेदव्रत जी द्वारा लिखित इस पुस्तक में तीन दर्जन आसनों का परिचय, करने की विधि और लाभ अति सरल भाषा में वर्णन किया है जिस से सर्व साधारण व्यक्ति भी लाभ उठा सकता है। साथ में चित्र होने से विषय को समझने में किञ्चिन्मात्र भी कठिनाई नहीं होती। आसन तो बहुत हैं किन्तु इस ग्रन्थ में केवल स्वानुभूत विशेष विशेष आसनों पर प्रकाश डाला है। मूल्य ॥)।

विशेष सुविधा—ऊपर लिखे १ विरजानन्द चरित और २ व्यायाम सन्देश दोनों २॥) की पुस्तक लेने वाले व्यक्ति को "आसनों का व्यायाम" पुस्तक बिना मूल्य (मुफ्त) दी जायेगी।

आचार्य भगवान्देव जी कृत पुस्तकें—

१. ब्रह्मचर्य के साधन पांचों भाग	१॥।=)
२. ब्रह्मचर्यामृत साधारण संस्करण	=)॥
३. " बाल संस्करण	।=)
४. तम्बाकू का नशा, साधारण संस्करण	=)॥
५. " " बाल संस्करण	।=)
६. पापों की जड़ शराब, साधारण संस्करण	=)॥
७. " " " बाल संस्करण	।-)
८. नेत्र रक्षा	≡)
९. व्यायाम का महत्त्व	≡)
१०. रामराज्य कैसे हो ?	≡)
११. स्वप्नदोष की चिकित्सा	=)
१२. बाल विवाह से हानियाँ	-)
१३. बिच्छू विष चिकित्सा	≡)

श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज कृत पुस्तकें

१४. आदर्श ब्रह्मचारी	=)॥
१५. कन्या और ब्रह्मचर्य	=)॥

इनके अतिरिक्त मूल वेद, वेदों के भाष्य, गीता, उपनिषद्, महर्षि दयानन्दकृत सभी ग्रन्थ तथा महापुरुषों के जीवन चरित्र एवं आर्य सिद्धान्त सम्बन्धी सभी ग्रन्थ और आर्य कुमार परिषद् द्वारा सञ्चालित—

१. सिद्धान्त सरोज २. सिद्धान्त रत्न ३. सिद्धान्त भास्कर ४. सिद्धान्त शास्त्री ५. सिद्धान्त वाचस्पति—

इन पांचों परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें हमारे यहाँ उचित मूल्य से मिल सकती हैं। विशेष जानकारी के लिये पत्र व्यवहार करें।

प्राप्ति स्थान

आर्य पुस्तकालय गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

हम वेद क्यों पढ़ें

[ब्र० वेदव्रत, व्याकरणाद्याचार्य, सिद्धान्तवाचस्पति, गुरुकुल झज्जर]

आज सर्वत्र यही सुनाई देता है कि हम वेद क्यों पढ़ें, वेद में क्या विशेषता है, वेद के अध्ययन से हमें क्या लाभ होगा? इत्यादि।

प्रत्येक व्यक्ति यह चाहता है कि मैं श्रेष्ठ और धर्मात्मा बनूं, मेरी सन्तान सुशील, सभ्य और उत्तम हो, पापी तथा दुराचारी बनने की इच्छा कोई नहीं करता, किन्तु केवल इच्छा मात्र करने से तो कुछ नहीं होता, तदनुकूल कर्म करने से ही वैसा बन सकते हैं।

धर्म का अर्थ किसी मत सम्प्रदाय आदि संकुचित भाव का नहीं, अपितु धर्म वह है, जिससे यह लोक और परलोक दोनों सुधरें। धर्म शब्द का पदार्थ ही यह है कि जो अपनी चहुं-मुखी उन्नति के लिये धारण किया जाये वही धर्म है।

धर्म के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान वेदाध्ययन से ही हो सकता है—

"धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः।"

(मनुस्मृतिः २—१३)

धर्म के ज्ञान के लिये वेद ही सर्वोत्तम प्रामाणिक ग्रन्थ है। वेद ही धर्म का मूल है—

'वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च॥'

(मनु० २—६)

सम्पूर्ण वेद, वेदवेत्ता ऋषि महर्षि और विद्वानों की बनाई स्मृति एवं शास्त्र, श्रेष्ठ पुरुषों का आचार और अपना आत्मा जिसमें सन्तुष्ट हो वही धर्म का मूल = जड़ = उत्पत्ति स्थान है।

वेद के सत्य ज्ञान के प्रकाश में मृत्यु का भी भय नहीं रहता, वेदादि के न पढ़ने से ही हमें मृत्यु दुःख देती है।

'अनभ्यासेन वेदानामाचारस्य च वर्जनात्।
आलस्यादन्नदोषाच्च मृत्युर्विप्रान् जिघांसाति॥

(मनुस्मृति)

वेदों का अध्ययन अध्यापन न करने से, आचारहीनता, आलस्य और दूषित आहार के सेवन से हमें मृत्यु आ घेरती है। और वेदों के अध्ययन से हम मृत्यु को अपने वश में कर सकते हैं, मृत्युञ्जय बन सकते हैं।

'अभ्यासेन तु वेदानां ब्रह्मचर्यस्य पालनात्।
युक्ताहारविहाराभ्यां मृत्युं विप्रो जिघांसति॥

वेदों के पठन-पाठन से, ब्रह्मचर्य के पालन से और उचित सात्विक भोजन और विहार = भ्रमण आदि से हम मृत्यु को भी पार सकते हैं, मृत्युञ्जय बन सकते हैं।

हमारा उपरिलिखित श्लोक मन घड़न्त नहीं, अपितु श्रुति और स्मृति के ही आधार पर है—

'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत"

(अथर्ववेद ११—५)

ब्रह्मचर्य रूपी तप से विद्वानों ने ही मृत्यु को कुचल डाला। इस मन्त्र-खण्ड का ही अनुवाद ऊपर लिखा श्लोक है, क्योंकि 'ब्रह्मचर्य' शब्द के अनेक अर्थ हैं, ब्रह्म = वेद का पढना, वीर्य आदि धारण करना आदि। वैसे वीर्य या बल अर्थ में यह शब्द अधिक प्रसिद्ध हो गया है।

गीता में श्री कृष्ण जी ने कहा है।

'युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥'

युक्त-आहार-विहार, उचित कर्म, नियमित निद्रा और जागरण रूपी कर्म योग से दुःख नष्ट होता है। सबसे भयङ्कर दुःख इस संसार में मृत्यु का ही है, इससे कृमि से करी, मूर्ख और विद्वान् तक सभी त्रस्त हैं। वास्तव में मृत्यु दुःखदायक नहीं है, अपितु अज्ञान के कारण ही हम उससे भयभीत होते हैं। जब वेदादि शास्त्रों के अध्ययन से यथार्थ ज्ञान

[शेष पृष्ठ २४ पर]

TEXMACO

TEXTILE MACHINERY DIVISION

RING SPINNING FRAMES

Of any gauge up to 3″ and lift up to 8″.
Drafting System 4 Roller self weighted with or without Pendulum Arm Weighting, 4 Roller saddle weighted Casablanca 500 with or whitout Pendulum Arm Weighting, 500-A or E 10 B.

Roller Bearing Spindles.
Ball Bearing Jockey Pulleys.
Ball Bearing Front Top Rollers.

DRAWING FRAMES

Of I6″ or 18″ Gauge with one or two heads.
Belt or Motor driven.
Electric Stop Motion.
Automatic Locking Device.
9″, 10″ or 12″ diameter Cans.

BOILER & HEAVY ENGINEERING DIVISION

Smoke Tube, Marine, Water Tube and Locomotive Boilers, Flues, Mechanical Stokers, Economisers, Chemical and Pressure Vessels. Coal Handling Plant, Chimneys, Ductings, Cranes, Railway Wagons and Rolling Stock, Penstock Pipes, Sluices and Spillway Gates for Hydraulic Dam Projects.

Smoke Tube Boiler design in collaboration with M/S. Babcock & Wilcox of India Ltd.

For particulars please write to

TEXTILE MACHINERY CORPORATION
LIMITED.

Belghurriah   24 Parganas   West Bengal

(पृष्ठ २२ का शेष)

हो जाता है तब मृत्यु भी सुखदायक बन जाती है। मृत्यु क्या है? पूर्व शरीर को छोड़ कर दूसरे को धारण करना, जैसे कि जीर्ण-शीर्ण वस्त्र को छोड़कर नवीन वस्त्र को धारण करते समय हर्ष होता है वैसे ही यहाँ भी होना चाहिये। दुःख का कारण अज्ञान ही है।

महर्षि मनु ने मोक्ष के साधनों में वेदाभ्यास को भी एक साधन बतलाया है—

'वेदाभ्यासस्तपोज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः।
अहिंसा गुरुसेवा च निःश्रेयस्करं परम्॥
(मनु० १२—८३)

वेदाभ्यास, तप, ज्ञान, इन्द्रियों का संयम=ब्रह्मचर्य, अहिंसा और गुरुसेवा ये मुक्ति के श्रेष्ठ साधन हैं। वेदाध्ययन के विना तत्त्व ज्ञान नहीं हो सकता और तत्व ज्ञान के अभाव में मुक्ति कहाँ? अतः वेद का पढ़ना परमावश्यक हुआ। वेदों को अर्थ—ज्ञान सहित ही पढ़ना चाहिये, क्योंकि—

'स्थाणुरयं भारहारः किलाभूदधीत्य वेदं
न विजानाति योऽर्थम्।
यो अर्थज्ञ इत्सकलं भद्रमश्नुते नाकमेति
ज्ञानविधूतपाप्मा ।१॥
यद्गृहीतमविज्ञातं निगदेनैव शब्द्यते।
अनग्नाविव शुष्कैधोन तज्ज्वलति कर्हिचित् ।२॥
(निरुक्त अ० १ ख० १८)

जो वेद का अर्थ नहीं जानता, पाठ मात्र पढ़ता है वह ठुँठवृक्ष की भांति भार ही वहन करते हैं और जो वेद के अर्थ को जानता हुआ तदनुकूल वर्त्तता है वह ज्ञान से पवित्र होकर नाकम्=मोक्ष को प्राप्त करता है।

ज्ञान के विना ग्रहण किया हुआ, केवल शब्दमात्र उच्चारण किया जाता है वह अधीत शास्त्र अग्नि के विना सूखी लकड़ियों की भांति प्रदीप्त नहीं होता।

वेद में कहा भी है—

उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु।
अधेन्वा चरति माययैषा वाचं शुश्रुवाँ अफलामपुष्पाम्॥
(ऋग्वेद १०-७१-५)

पता

ग्राहक संख्या ४४२
सेवा में श्री— जगदीशचन्द्र जी विद्या
मु० c/o मुरारी ब्रादर्स
पो० कमलानगर देहली
जि०

जिसने वेदार्थ को भली भांति जान लिया है, वह विद्वत्सभा में निर्भयता से उसको प्रकाशित है, उसको कोई भी वैदिक गम्भीर विषयों में भी पराजित नहीं कर सकता। जो वेद ज्ञान रहित मूर्ख है, वह तो अर्थ ज्ञान रहित वाणी के साथ माया रूप से ही विचरता है।

अतः वेदों को अर्थ सहित ही पढ़ना चाहिये। सर्वथा न पढ़ने से तो मूलमात्र पढ़ना भी श्रेष्ठ है, कुछ तो लाभ होता ही है। यास्काचार्य इसी मन्त्र की व्याख्या करते हुये लिखते हैं—"किञ्चित्पुष्पफलेतिवा" अर्थात् किञ्चित् लाभ तो अवश्य ही होता है।

प्राचीन काल में वेदों का पढ़ना पढ़ाना एक धार्मिक कर्त्तव्य था, महर्षि पतञ्जलि लिखते हैं—

"ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च" (महाभाष्य १-१)

साङ्गोपाङ्ग वेदों का पढ़ना ब्राह्मण का निष्कारण=(स्वार्थ सिद्धि आदि प्रयोजन रहित) धर्म है। यही मनु जी ने बतलाया था कि जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वेद को न पढ़कर अन्यत्र व्यर्थ परिश्रम करता है वह इसी जन्म में अपने धर्म से पतित हो जाता है। यही बात ऋषि दयानन्द जी ने यों कही थी कि—"वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" इसीलिये पहले यह नियम था कि ब्रह्मचारी जब तक न्यून से न्यून एक वेद को न पढ़ले, तब तक द्वितीय आश्रम में नहीं जा सकता था।

॥ ओम् शम् ॥

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

ं २
ङ्क ५

गुरुकुल झज्जर (रोहतक), पौष-माघ सं० २०११ वि०
जनवरी १९५५—दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक अङ्क का ≈)

ामहोपाध्याय महाविद्वान् पं० आर्यमुनि जी

आर्यसमाज के आरम्भिक ाल में लेखों तथा शास्त्रार्थों ारा वैदिक सिद्धान्तों का मण्डन र अवैदिक मतमतान्तरों का ण्डन करने वाले आर्य विद्वानों निखिल तन्त्र-स्वतन्त्र सर्वशास्त्र ख्यात पण्डित आर्यमुनि जी ग्रगण्य थे। ब्रिटिश राज्य काल आर्य विद्वानों में आप को ामहोपाध्याय की राजकीय पदवी से विभूषित किया गया। ऋग्वेद ७म मण्डल के अवशिष्ट ऋषिदयानन्द के भाष्य को पूर्ण किया। षड्-दर्शन, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति और गीता आदि पर आर्य-भाषा में आपने पाण्डित्य पूर्ण भाष्य रचे। मीमाँसा-दर्शन पर आप द्वारा ही आर्य-भाषा में भाष्य रचा गया है।

* * *

ापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

इस अंक की विषय-सूची

विषय	लेखक	पृ०
ब्रह्मचर्य महत्त्वम्	श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न	३-४
सम्पादकीय		५-६
राष्ट्रनिर्माण में गुरुकुल का स्थान	श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति	७ से १०
भैंसपालन से गोपालन की विशेषता	डा. रामस्वरूप जी	११ से १३
आधुनिक शिक्षा प्रणाली	श्री रामप्रसाद आर्य	१४
गुरुकुल महोत्सव		१५
सर्प-विष चिकित्सा	आचार्य भगवान् देव जी	१७ से १६
पट् सूक्तयः	श्री पं० सत्यदेव वाशिष्ठ	२०
संस्था समाचार		२३
स्मरणीय वचन	श्री स्वामी शान्तानन्द जी महाराज	२४

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—आर्यसमाज या वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं ली जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है।

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संस्कृत में करें, उत्तर के लिये जवाबी कार्ड डालें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चौथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	९)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५% अधिक।

,, तृतीय १०% अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

(श्री पण्डित मेधाव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्)

[गताङ्क से आगे]

मन्त्रः—आचार्यो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी प्रजापतिः।
प्रजापतिर्विराजति विराडिन्द्रोऽभवद् वशी ॥
(अथर्व० ११।५।१६)

अचार्यो ब्रह्मचार्यस्ति ब्रह्मचारी प्रजापतिः।
विराजति प्रजास्वामी विराडिन्द्रो वशीश्वरः ॥९१॥

अर्थः—आचार्य ब्रह्मचारी होता है तभी ब्रह्मचारी (स्नातक होकर) "प्रजापति" = प्रजापालक बनता है फिर वही प्रजापति "विराट्" = विशेष ज्ञान-प्रकाशक बन जाता है और अन्त में अत्यन्त जितेन्द्रिय होकर "इन्द्र" कहलाता है।

वसुरुद्रवरादित्यास्त्रिविधा ब्रह्मचारिणः।
स्थूलसूक्ष्मात्मजगतां वशिनो गुरुमूर्त्तयः ॥ ९२ ॥

अर्थः—वसु, रुद्र तथा आदित्य तीन प्रकार के ब्रह्मचारी हैं जो क्रमशः स्थूल, सूक्ष्म व अध्यात्म जगत् को वश में करने वाले प्रत्यक्ष गुरुदेव का ही स्वरूप हैं।

व्रती गृही वनीशोऽसौ संन्यासी क्रमशो वशी।
आचार्योत्तररूपाणि जगन्मङ्गलहेतवः ॥ ९३ ॥

अर्थः—दूसरा अर्थः—तथा ब्रह्मचारी ही क्रमशः आदर्श गृहस्थ, आदर्श वानप्रस्थ तथा आदर्श संन्यासी बनता है। ये सारे ही जगत् का कल्याण करने में कारणभूत आचार्य के उत्तर रूप हैं (आचार्य ही इनका स्रष्टा है)।

मन्त्रः—ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।
आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते ॥
(अथर्व० ११।५।१७)

तपसा ब्रह्मचर्येण राजा राष्ट्रं विरक्षति।
आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छति ॥९४॥

अर्थः—राजा ब्रह्मचर्यरूप तपस्या से राज्य की समुचित रक्षा करता है एवं आचार्य भी ब्रह्मचर्य से ही ब्रह्मचारी को चाहता है।

ब्रह्मचर्यतपसात्मसंयमी
रक्षितुं प्रभवति प्रजागणम्।
ज्ञानशक्तिगुणसम्पदुन्नतं
कर्तुमुज्ज्वलगुणैश्च भूपतिः ॥ ९५ ॥

आत्मसंयमी नरेन्द्र ही ब्रह्मचर्य तप द्वारा अपने प्रजागण की रक्षा करने में समर्थ होता है तथा अपने सत्य-न्याय-दयार्द्रता आदि उज्ज्वल गुणों से जनता को ज्ञान, शक्ति, सद्गुण व धनधान्य से उन्नत करने में शक्तिमान् बनता है।

शान्तिदं जीवनं यस्य ब्रह्मचर्यमहोज्ज्वलम्।
स्वसन्निभं स आचार्यो ब्रह्मचारिणमिच्छति ॥९६॥

अर्थः—अहो! जिस आचार्य का जीवन ब्रह्मचर्य से अति उज्ज्वल और शक्तिदायक है वही अपने तुल्य ब्रह्मचारी की इच्छा करता है।

मन्त्रः—ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।
अनड्वान् ब्रह्मचर्येणाश्वो घासं जिगीर्षति ॥
(अथर्व० ११।५।१८)

सुकन्या ब्रह्मचर्येण युवानं विन्दते पतिम्।
अनड्वान् ब्रह्मचर्येण ह्यश्वो घासं जिगीर्षति ॥९७॥

अर्थः—कान्तिमयी कन्या ब्रह्मचर्य से ही जवान पति को प्राप्त करती है। बैल और घोड़ा भी ब्रह्मचर्य से ही घास खाना चाहते हैं।

शुभगुणवरविद्यादीप्यमाना सुकन्या
कृतगुरुकुलवासा ब्रह्मचर्येण धन्या।
विहितगुरुनिवासं विन्दते सत्पतिं सा
व्रतिवरयुववीरं स्नातिका स्नातकेन्द्रम् ॥९८॥

अर्थः—ब्रह्मचर्य पूर्वक गुरुकुल में नियत समय तक रही हुई, शुभगुणों व उत्तम ज्ञान से समुज्ज्वल प्रशंसनीय स्नातिका बनी हुई कन्या, आचार्य चरणों में रहे हुए

ब्रह्मचारियों में श्रेष्ठ जवान वीर उत्तम स्नातक को सुन्दर पति के रूप में प्राप्त करती है।

वृषभो ब्रह्मचर्येण भोक्तृत्वं लभतेतराम् ।
तरङ्गश्चणकादीनां पाचने तेन शक्तिमान् ॥९९॥

अर्थः--बैल ब्रह्मचर्य से अपने भोक्तृत्व पदार्थ घास आदि को निरन्तर प्राप्त करता रहता है तथा घोड़ा भी ब्रह्मचर्य शक्ति से ही चने आदि पदार्थों के पचाने में समर्थ होता है।

मन्त्रः—ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत ।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत ॥
(अथर्व० ११।५।१९)

तपसा ब्रह्मचर्येण देवा मृत्युं जयन्त्यलम् ।
इन्द्रो हि ब्रह्मचर्येण देवेभ्योऽस्ति स्वराहरः ॥१००॥

अर्थः—देवगण ब्रह्मचर्य के तपोबल से मृत्यु को पर्याप्त मात्रा में जीत लेते हैं। तथा इन्द्र ब्रह्मचर्य से ही देवों के लिए सुख का आहरणकर्ता बनता है।

मृत्युं हत्वाऽतुलसुखजुषो ब्रह्मचर्येण देवा—
विद्वद्वर्या ऋषिमुनिजना ब्रह्मतेजो बलाढ्याः।
अग्न्यादिभ्यो मनुजविबुधेभ्यो वपुर्निर्जरेभ्य—
स्तेजस्सौख्यं वितरत इमाविन्द्र आत्मा च वर्णी॥१०१॥

अर्थः—ब्रह्मचर्य के प्रताप से मृत्यु को दूर हटाकर देवगण अपरिमित सुखसेवी बन गये। तथा विद्वदृषि-मुनिजन अत्यन्त ब्रह्मतेज बलधारी हो गये। एवं परमेश्वर ब्रह्मचारी विद्वज्जनों के लिए और शरीर अधिष्ठाता आत्मा शरीरस्थल देव इन्द्रियों के लिए यथायोग्य सुख और तेज का वितरण कर रहे हैं।

संयमी ब्रह्मचारी यद् भुङ्क्ते दिव्यं परं सुखम् ।
वराका भोगिनोऽमुष्य सहस्रांशं न ते विदुः ॥१०२॥

अर्थः—संयमी ब्रह्मचारी जिस अद्भुत दिव्य सुख का अनुभव करता है, नरक की तैयारी करने वाले बिचारे विलासप्रिय जन उस परम सुख के हजारवें भाग को भी नहीं जानते।

आनन्दतेजोऽमृतदं सुभद्रं
तद् ब्रह्मचर्यं जगतोऽस्ति मूलम् ।
इन्द्रप्रभोर्दिव्यमदोऽन्तरेण
ब्रह्माण्डचक्रं न चलेत् क्षणान्तम् ॥१०३॥

अर्थः—आनन्द तेज व अमृत को देने वाला अतः एव अत्यन्त कल्याणकारी होता हुआ यह ब्रह्मचर्य जगत् का मूलकारण है। ब्रह्मचर्यरूप अटल नियमों के बिना ऐश्वर्य सम्पन्न जगदीश्वर का यह दिव्य ब्रह्माण्ड चक्र क्षण भर भी नहीं चल सकता।

मन्त्र—ओषधयो भूतभव्यमहोरात्रे वनस्पतिः।
संवत्सरः सहर्तुभिस्ते जाता ब्रह्मचारिणः॥
(अथर्व० ११।५।२०)

ओषध्यो भूतभव्यं भो अहोरात्रो वनस्पतिः।
संवत्सरः सहर्तुभिस्ते जाता ब्रह्मचारिणः॥१०४॥

अर्थः—ओषधियाँ, भूत और भविष्यत्, दिन और रात तथा छः ऋतुओं के साथ वर्ष, ये सब ब्रह्मचारी हुए हैं = अटल नियमों के पालक हैं। दूसरा अर्थः—भगवान् ब्रह्मचारी से ये सब पदार्थ उत्पन्न हुए हैं।

सद्ब्रह्मचारिण इदं भुवनं प्रजातं
तद्ब्रह्मचर्यनियमानवति प्रकामम्।
संवत्सरस्स ऋतुभिर्धरणीरुहाद्या
भूतञ्च भव्यमृतुगामि दिनं निशा च ॥१०५॥

अर्थः—सर्वोत्कृष्ट ओ३म् ब्रह्मचारी से यह समस्त ब्राह्माण्ड अत्युत्तम रचना रूप में उत्पन्न हुआ है और उसके ब्रह्मचर्य-नियमों का यथेष्ट व निरन्तर पालन कर रहा है। देखो तो सही:—ऋतुओं के साथ वर्तमान वर्ष, वृक्ष वनस्पति आदि पदार्थ, अतीत और भावी, रात और दिन सब के सब ऋतुगामी हैं:—कोई भी अपने नियम को भङ्ग नहीं करता = नियन्त्रित हुए अनवरत कर्मरत हैं।

मन्त्रः—पार्थिवा दिव्याः पशव आरण्या ग्राम्याश्च ये।
अपक्षाः पक्षिणश्च ये ते जाता ब्रह्मचारिणः॥
(अथर्व० ११।५।२१)

पशवः पार्थिवा दिव्या ग्राम्या आरण्यकाश्च ये।
अपक्षाः पक्षिणो ये ऽपि ते जाता ब्रह्मचारिणः ॥१०६॥

अर्थः—पृथिवी-निवासी जो पंख रहित जङ्गल व ग्राम के पशु तथा गगन-विहारी पङ्खवाले पक्षी हैं वे सब ब्रह्मचारी हैं। (क्रमशः)

सम्पादकीय—

संस्कृति

आज कल भारतवर्ष में सर्वत्र "संस्कृति" शब्द का व्यवहार खूब हो रहा है, परन्तु संस्कृति शब्द के अर्थ में भिन्न भिन्न मत प्रचलित हैं। कुछ महानुभाव साम्प्रदाय को आधार मानकर संस्कृति के अर्थ का प्रचार करते हैं जैसे इसलामिक संस्कृति आदि। दूसरे कुछ सज्जन भौगोलिक आधार पर संस्कृति शब्द का प्रयोग करते हैं जैसे--यूरोपीय अथवा पाश्चात्य संस्कृति। अन्य कुछ विशिष्ट व्यक्ति किन्हीं रूढियों (रीति-रिवाजों) को संस्कृति का नाम देते हैं जैसे पहनावा-खान पान आदि। राजनीतिक नेता प्रायः नाच-गान को कला मान कर कला को ही संस्कृति शब्द से पुकारते हैं जैसे भारतीय सरकार द्वारा रूस आदि देशों में भारतीय संस्कृति के नाम पर गाने बजाने और नाचने वालों के प्रतिनिधि मण्डलों का भेजना। इसी प्रकार छोटे-मोटे और भी अवान्तर भेद सुने जाते हैं। एक सत्यान्वेषी जिज्ञासु इस प्रकार भिन्न-भिन्न मन्तव्यों को सुनकर आश्चर्य में पड़ जाता है और विचार करता है कि किस को संस्कृति मानूँ और किसको नहीं ? इस प्रकार की अवस्था को देखकर संस्कृति शब्द के वास्तविक भाव को नीचे की पंक्तियों में प्रकट किया जाता है।

"प्राणीमात्र का कल्याण करने वाले उत्तम गुणों से विशिष्ट मानव-आचार को ही संस्कृति कहते हैं।" आचरण को उच्च बनाने वाले नियम सर्वत्र, सदा और सबके लिये एक समान होते हैं। इन नियमों की भौगोलिक, साम्प्रदायिक और राजनीतिक सीमायें नहीं होतीं। मानव संस्कृति एक ही है। जिस सम्प्रदाय, राष्ट्र और राजनीतिक दल में मानव आचार का जितना जितना समावेश होगा वह सम्प्रदाय, राष्ट्र और राजनीतिक दल उतना उतना ही मानव संस्कृति से युक्त होगा।

प्राणीमात्र का पिता परमेश्वर एक ही है। ईश्वर द्वारा रचित प्राकृतिक जगत् सब के लिये है। भौतिक तत्त्व वायु-अग्नि आदि सबके प्रयोग के लिये समान दिये गये हैं। शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि, आदि सामर्थ्य मानव मात्र के लिये एक रूप में मिले हुये हैं। शुद्ध कर्म करने और निन्दित कर्म को त्यागने के लिये प्रत्येक सृष्टि के आदि में परमेश्वर लोक-कल्याणार्थ वेदज्ञान का उपदेश देता है। यह उपदेश भी सब मनुष्यों के लिये एक समान होता है। इस उपदेश पर चलने और चलाने, मानव व्यवहार, शब्द-अर्थ और सम्बन्ध बोध तथा इसको कार्य में प्रयोग करने के लिये आदान-प्रदान का साधन-भाषा भी एक रूप में सर्गारम्भ में ही ईश्वर द्वारा दी जाती है। वेदोपदिष्ट आचार नियम सबके लिये समान होते हैं। अतः यह स्वयं सिद्ध है कि ईश्वर प्रदत्त और उपदिष्ट आचार नियमों का मूल संस्कृति भी एक ही है। इसमें भिन्नता नहीं हो सकती।

यजुर्वेद ७म अध्याय के १४ वें मन्त्र में उपदेश मिलता है—

"सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा"

अर्थात् वह सदा नित्य (प्रवाह) रूप से चलने वाली मानव संस्कृति "विश्ववार = विश्वा = संसार द्वारा एक समान स्वीकार करने योग्य और "प्रथमा" सर्वत्र विस्तृत तथा सर्वोत्तम होती है।

आर्यजनों का कर्तव्य है कि संस्कृति के भाव को स्वयं समझें और दूसरों को समझाते रहें। भारत राष्ट्र में संस्कृति विषयक जो विवाद चल रहा है उसकी असत्यता और वेदोक्त संस्कृति की सत्यता का प्रचार करना चाहिये। संस्कृति की विशेष व्याख्या यहां इसलिये नहीं की जाती क्योंकि मनु-आदि स्मृतियों में वेदानुकूल आचार के वे सब नियम प्रतिपादित हैं और उनके ज्ञान के लिये मनुस्मृति का अध्ययन और मनन करना आवश्यक है।

संस्कृत

संस्कृति का ज्ञान प्राप्त करने के लिये संस्कृत भाषा प्रमुख साधन है । अंग्रेजी दासता काल में आर्यसमाज ने गुरुकुल, विद्यालय तथा पाठशालाओं द्वारा संस्कृत अध्ययन-अध्यापन का उत्तम प्रबन्ध किया । काशी आदि स्थानों में पहले से ही संस्कृत पठन-पाठन का क्रम चला आ रहा था । दक्षिण भारत, महाराष्ट्र, बंगाल और बिहार आदि प्रदेशों में संस्कृत की पढ़ाई लिखाई का अच्छा प्रबन्ध था । राजाओं और धनाढ्यों की ओर से भी निर्धन विद्यार्थियों के लिये भोजन-वस्त्रादि सहित संस्कृत सीखने सिखलाने का ढांचा चलता था । साधु-संन्यासी भी संस्कृत का प्रचार करते रहते थे । साधारण जनता भी इस शुभ कार्य में अच्छा सहयोग देती थी । उस समय यह समझा जाता था कि विदेशी राज्य के कारण शासन की ओर से संस्कृत भाषा को सहयोग और सहायता नहीं मिल सकती ।

यह आशा की जाती थी कि स्वराज्य प्राप्त होने पर राज्य की ओर से संस्कृत भाषा की उन्नति और पठन-पाठन के लिये भरपूर सहायता मिलेगी । ईश्वर की दया और भारतीय वीरों के बलिदान के फलस्वरूप स्वराज्य मिल गया । परन्तु संस्कृत के प्रचार के लिये दिशा ही बदल गई । साधारण जनता ने समझ लिया कि इस काम को अब सरकार करेगी, यह विचार कर जनता उदासीन हो गई । धनाढ्य लोग भी उद्योग-धन्धों और व्यापार के राष्ट्रियकरण की आशंका से धार्मिक कार्यों तथा संस्कृत प्रचार में धन लगाने से पीछे हट गये । राजा और जागीरदारों का समय चला गया । जब उनके राज्य और जागीरें ही गईं तो इन द्वारा संस्कृत प्रचार और प्रसार में दी जाती हुई सहायता भी नष्ट हो गई । भारतीय सरकार ने असाम्प्रदायिक चोला धारण कर लिया और हमारे शासक तथा नेताओं ने यह समझ लिया कि संस्कृत प्रचार में सहायता देना साम्प्रदायिकता है । अतः सरकारी द्वार भी संस्कृत के लिये बन्द हो गया । जब सरकार की ओर से संस्कृत के लिये कुछ भी प्रोत्साहन नहीं मिला तो विद्यार्थी गण भी संस्कृत भाषा को स्कूल और कालिजों में लेने से पीछे हट रहे हैं । आर्यसमाज तथा सनातन धर्म सभा आदि द्वारा संचालित संस्कृत शिक्षणालय काल के ग्रास बन रहे हैं । संस्कृत पाठशालाओं, विद्यालयों और गुरुकुलों में विद्यालयों की रुचि संस्कृत से हट रही है । यह समस्या बड़ी शोचनीय है । इतना ही नहीं, उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने पंजाब विश्वविद्यालय का दीक्षान्त भाषण देते समय संस्कृत के ह्रास पर चिन्ता प्रगट की है । भारत के भूतपूर्व सर्वोच्च न्यायाधीश श्री पतञ्जलि शास्त्री उपकुलपति देहली विश्वविद्यालय ने भी संस्कृत को प्रोत्साहन देने की प्रेरणा देते हुये कहा कि भारत की राष्ट्रभाषा संस्कृत होनी चाहिये । केन्द्रिय शिक्षा मन्त्रालय मुसलिम लीगी खान अलीगढ़ विश्वविद्यालय को लाखों रुपये की सहायता देता है परन्तु संस्कृत शिक्षा के लिये उसके द्वार खुलते ही नहीं ।

ऐसी विकट दशा में संस्कृत प्रेमीजनों को गम्भीरता से विचार करना पड़ेगा कि संस्कृत की रक्षा कैसे की जावे । यदि संस्कृत की रक्षा करने में प्रमाद और असावधानता की गई तो न केवल संस्कृत भाषा का ही ह्रास होगा; अपितु संस्कृत से परिपूर्ण सम्पूर्ण आर्ष साहित्य और वेदोक्त शिक्षाओं से हम दूर जा पड़ेंगे । इसका दुष्परिणाम यही होगा कि नित्य-मौलिक संस्कृति का नाम मात्र शेष रहेगा । भारतीय राष्ट्र की जड़ वेदोक्त विश्व संस्कृति ही है । अतः समय रहते हमें सचेत हो जाना चाहिये जिस से वैदिक विश्ववारा संस्कृति की रक्षार्थ संस्कृत भाषा को बचायें । वेद का पठन-पाठन संस्कृत विना असम्भव है । ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज का तीसरा नियम यह बनाया—"वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है । वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है ।" अतः हमें संस्कृत और संस्कृति की रक्षार्थ सर्वात्मना उद्योग और साहस करना पड़ेगा । यह सामायिक धर्म है ।

राष्ट्र-निर्माण में गुरुकुल का स्थान

(श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति)

(६—गतांक से आगे)

शिक्षक ध्यान रखें कि श्रेणी में पढ़ाते समय समाज में या सभा समितियों में बोलते समय विद्यार्थियों के शुद्ध व स्पष्ट और निर्भयता के साथ बोलने में क्रमशः वृद्धि हो रही है या नहीं। औद्योगिक कार्यों के सिलसिले में विद्यार्थियों को गणित के कार्यक्रम का अभ्यास कराना चाहिए। शिक्षकों को चाहिए कि सामान्य ज्ञान में जिज्ञासा उत्पन्न करें। सृष्टि में जो कुछ हो रहा है उसमें वैज्ञानिक दृष्टि से कार्य-कारण का सम्बन्ध ज्ञात करने का स्वभाव डलवाना चाहिए। विज्ञान के द्वारा प्रत्येक पदार्थ के स्वरूप जानने की इच्छा पैदा करनी चाहिए। ऐसा करने से विद्यार्थी को दैनिक काम में विशेष अभिरुचि पैदा हो जायगी। किसी अच्छे शिक्षक को चाहिए कि बच्चों के प्रश्नों और आलोचनाओं से जो अवसर प्राप्त करे उसी में कुछ न कुछ बतलाता रहे। और जितने भी ज्ञानवान छोटे-बड़े कीट-पतंग, वृक्ष-वनस्पति पौधे इत्यादि जड़ और चेतन पदार्थ हैं उन सब का जीवन संबद्ध है तथा परस्पर सापेक्ष है, इसलिए विश्व के पदार्थों का उपयोग समझाते हुये सर्वत्र मित्र-भाव से व्यवहार करने का स्वभाव डलवायें।

शिक्षकों को ध्यान में रखना चाहिए कि इतिहास, भूगोल, समाज शास्त्र या श्रम शास्त्र जीवन से पृथक्-पुस्तकों के विषय नहीं हैं अपितु ये प्रकृति और मानव के जीवन प्रवाह की निरन्तर धारायें हैं। इन में विभिन्न जीवनों के पारस्परिक सम्बन्ध का ज्ञान होता है। पारस्परिक सम्बन्धों की दृष्टि से यह सब नागरिक शास्त्र कहलाता है। अतः नागरिक शास्त्र का अभ्यास = सामाजिक उत्तरदायित्व के बोध का समुचित विकास होने से बालक-बालिकाओं को इस का अभ्यास हो सकता है। इस लिये नागरिक शास्त्र का अभ्यास बालक-बालिकाओं को शिक्षणालय के जीवन के द्वारा कराना चाहिए। जिस से वे समझें कि उन का एक दूसरे के प्रति क्या कर्त्तव्य है। पारस्परिक सह-भाव के समझने से अन्न-स्वावलंबन और वस्त्र-स्वावलंबन का कार्य भी इतिहास, भूगोल और समाज शास्त्र के अध्ययन का एक साधन बन सकता है।

इस शिक्षाश्रम में ऐतिहासिक राजाओं के युद्धों की कहानियों और उन से सम्बन्धित तारीखों का कोई महत्व नहीं। इस शिक्षा-क्रम में विभिन्न धर्मों के संस्थापकों और साधु-सन्तों के दिवस मनाने के कार्य-क्रम पर विशेष बल दिया जाना चाहिए, जिस से कि नागरिकों को उनके कर्त्तव्य का बोध मिले और मानव संस्कृति का विकास हो। महापुरुषों के जीवन से एकता और मैत्री के प्रचार का लाभ होता है। अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध संग्राम करने की शक्ति जागृत होती है। शिक्षकों को चाहिए कि बच्चों में नागरिकता का बोध पैदा करने के लिये व्यक्तिगत और सामाजिक उदारदायित्त्व को जागृत करें।

बच्चों के शिक्षकों का और बालकों का सम्बन्ध इतना निकट हो कि शिक्षणालय और घर दोनों मिलकर बच्चों के सामाजिक शिक्षण का साधन बनें। शिक्षक बालकों को उत्सव = त्योहारों का पालन सिखावें अर्थात् निमन्त्रण देना, उत्सव का मंच सजाना, भाषण देना, संगीत खेल व मनोरंजन का कार्य-क्रम रखना और उत्सव के पश्चात् उसका विवरण लिखकर स्थानीय पत्रिका में प्रकाशित कराना। बालकों से शिक्षणालयों में ६ प्रकार के उत्सव मनाने का अभ्यास कराया जा सकता है। १. धार्मिक उत्सव २. राष्ट्रिय उत्सव, ३. सामाजिक उत्सव, ४. सांस्कृतिक

उत्सव, ५. प्राकृतिक उत्सव ६. शिक्षणालय सम्बन्धीं उत्सव।

विद्यार्थी को स्वयं-सेवक होने का अभ्यास डलवाया जावे । शिक्षकों को चाहिये जो कुछ सिखलाया जावे उसे क्रियात्मक रूप दे दें, इस से विद्यार्थी को सुगमता से ज्ञान प्राप्त होता है और मनोरंजन भी रहता है। कभी २ विद्यार्थी को प्रकृति निरीक्षण, ज्ञान-विज्ञान के शिक्षण के लिए आस-पास के ऐतिहासिक स्थानों में पर्यटन के लिये ले जाना चाहिए और शिक्षणालय में दैनिक साप्ताहिक व मासिक पत्र-पत्रिकाएँ मंगवावें, उसमें जो विशेष पठनीय हों उस का शीर्षक–प्रतिदिन कृष्ण-फलक = ब्लेक-बोर्ड पर लिख दिया करें जहां सब की दृष्टि पड़ सके। विशेष समय पर पत्र-पत्रिकाएं प्रकट करने के लिए प्रोत्साहन देते रहें। शिक्षकों को चाहिए कि मनोरंजन के लिए बालकों को प्रोत्साहन देते रहें। मनोरंजन, चित्रकला, संगीत कथनोपकथन के द्वारा कराना अति आवश्यक है। इस से आत्म-प्रकाशन का अभ्यास बढ़ता है। विद्यार्थियों का जीवन शुष्क वा नीरस नहीं होना चाहिए। सरस जीवन से विद्यार्थी शारीरिक स्वास्थ्य और बल के विकास में उन्नति करते हैं।

प्रश्न १४—धर्म नीति की परीक्षा कैसे हो ?

उत्तर:—उपकरण = किसी काम को करने लिए काम आने वाले साधन—

मितव्ययता = जितना चाहिए उतना व्यय करने का अभ्यास बनाना, न अधिक न कम, भोजन में झूठ न छोड़ना।

शुश्रूषा = किसी बात को ध्यान से सुनकर काम करने के लिए तत्काल ग्रहण करना, क्या जी ? हैं जी ? इत्यादि न करना।

द्वन्द्व सहिष्णुता = सर्दी-गर्मी, सुख-दुःख, कटु-वचन इनको सहन करना और कार्य में रुचि से तत्पर रहना।

विनय = किसी बात को सीखने वा ग्रहण करने की इच्छा से नम्र होना।

शिष्टता = उत्तम मनुष्यों जैसा आचरण प्रकट करना जिस से कि मनुष्य में सीधापन सुघड़ता प्रतीत होती है, उचित वर्ताव प्रकट होता है ।

प्रेम से रहना = किसी को चिड़ाना नहीं, किसी के मन को न दुखाना ।

व्यवस्था = वस्तुओं या कार्यों का ऐसा ढङ्ग कि वे वस्तु या कार्य करने में बाधा न डालें।

अस्तेय = स्तेय का अर्थ है 'चोरी' किसी बात का छिपा रहना, छिपने का अभिप्राय है कि उसके कारण और परिणाम का ज्ञान न होना इस लिये किसी बात के कारण और परिणाम के ज्ञान करने को अस्तेय में लिया है। कारण के द्वारा परिणाम तक कैसे पहुँचा जाता है मनुष्य को इस बात की अपने या दूसरों के अनुभव से सूझ होना इस का नाम स्फुरण है। इसी से प्राप्तव्य वस्तु की प्राप्ति हो जाती है। इस लिये इसे अस्तेय में रखा गया है। जब तक प्राप्ति नहीं होती तब तक वह अज्ञान भविष्य के गर्भ में छिपा हुआ पड़ा रहता है।

किसी कार्य वा रचना को प्रकट करने के लिये उसकी प्रक्रिया साफ २ और बुद्धिगम्य होनी चाहिये। इसके लिए स्पष्टतः कहा गया है और छोटी से छोटी रीति से वस्तु को सिद्ध करने के लिए कलामय रचना का स्वीकार करना कहा गया है।

अपरिग्रह = इकट्ठा करके न रखना। यह तभी सिद्ध होता है जब कि वह मनुष्य जिसके पास ज्ञान, धन व शक्ति का संचय हो गया है वह दूसरों को भी ज्ञान, धन और शक्ति से युक्त करने का संकेत और प्रयत्न करे, अर्थात् उसके चित्त में समानता का भाव प्रगट हो, और इस को पूर्ण करने के लिए दूसरों को अपने पास से कुछ न कुछ दिया करे। इस लिये दूसरों की सहायता और समानता का अनुभव अपरिग्रह में रखा गया है।

धर्मनीति की परीक्षा प्रणाली का मासिक परिणाम पत्रक

नाम ………… मास

१	२	३	४	५
शौच	सन्तोष	तप	स्वाध्याय	ईश्वर प्रणिधान
स्वच्छता शरीर वस्त्र स्थान उपकरण।	मित व्ययता क्षोभ न करना उचित से अधिक की अनिच्छा।	शुश्रूषा, सेवा रुचि कर स्वास्थ्य प्रद आहार निर्माण द्वन्द्व सहिष्णुता।	पढ़ना, याद करना, करने का काम न भूलना।	काम पूरा करना आज्ञा-पालन विनय शिष्टता।

६	७	८	९	१०
अहिंसा	सत्य	अस्तेय	ब्रह्मचर्य	अपरिग्रह
किसी की वस्तु न बिगाड़ना, किसी से न लड़ना, प्रेम से रहना।	छल कपट न करना, सच बोलना, यथार्थता, साधनों को ठीक स्थान पर रखना, व्यवस्था।	घटना का कारण— स्फुरणा (सूझ), स्पष्टता, कलामय रचना।	संयमी, तेजस्वी, प्रसन्न, सच्चरित्र।	दूसरों की सहायता, समानता का अनुभव।

प्रश्न १५—राष्ट्र को आदर्श पर पहुँचने के लिए सामायिक कर्त्तव्य।

उत्तरः—सिक्के के चलन से वर्त्तमान अर्थशास्त्र को लेकर, इस समय संपूर्ण विश्व में विभिन्न समस्यायें हैं जिनका सुलझना तब तक सम्भव नहीं है जब तक सिक्के का चलन बन्द नहीं होता और उसके आधार पर चलते हुए अर्थशास्त्र को नहीं बदला जाता। अर्थशास्त्र में सिक्के का विचार इसीलिए किया जाता है क्योंकि द्रव्यों के विनिमय का माध्यम सिक्का चलाया गया है। द्रव्यों के विनिमय से लोगों के श्रम का विनिमय नहीं होता। और लोग राष्ट्रिय भावना से उन्नति नहीं कर पाते, प्रत्युत व्यक्तिगत स्वार्थों को पूर्ण करने के लिए उद्यम करते हैं। और रातदिन इसी सिक्के के संग्रह की चिन्ता में लगे रहते हैं। जितने भी राष्ट्रिय कार्य हो रहे हैं वे सब कार्य प्रायः करके राष्ट्र की वास्तविक उन्नति का साधन नहीं हैं बल्कि अच्छे २ पढ़े लिखे विद्वानों के भी कार्य के करने, वा राष्ट्र हित दिखाने के झूठे मार्ग हैं और उनकी दृष्टि अधिक से अधिक धन खींचने की ओर लगी रहती है। इस प्रकार शासन विभाग के संपूर्ण कार्यों में असत्य और बाह्य दिखावा बढ़ता जा रहा है। यदि किसी को दोष पूर्ण कहला कर अलग किया जाता है तो उसके स्थान में आने वाले व्यक्ति भी पहली चलती आ रही चाल का ही अनुसरण करते हैं। इस प्रकार राष्ट्र का व्यय हो रहा है, परन्तु उससे राष्ट्र की उन्नति नहीं, अवनति हो रही है, जैसे लकड़ी के अन्दर लगती हुई दीमक लकड़ी को खोखला और निस्सार कर देती है। ऊपर से देखने में लकड़ी बड़ी सुन्दर और उपयोगी जान पड़ती है परन्तु वह अन्दर से खाई हुई, अत्यन्त निस्सार लकड़ी किसी भी काम की नहीं रहती। केवल इतना ही कि उसको जलाकर राख कर दिया जाए।

दूसरा दोष सिक्के के चलन का यह है कि इससे द्रव्यों की उत्पत्ति में लगे हुए श्रम का माप नहीं होता। श्रम से श्रम का माप होता है, सिक्के से श्रम का माप नहीं। यदि राष्ट्र की वर्त्तमान व्यवस्था में उत्पादकों के हाथ में बाजार दे दिया जाए और उपभोक्ताओं के हाथ से बाजार निकाल दिया जाए तो दरिद्रों की दरिद्रता को दूर करने के लिए कुछ सहायता हो सकती है। क्योंकि अधिकतर दरिद्र मनुष्य ही वस्तुओं के उत्पादन में श्रम कर रहे हैं। श्रमियों को उनके श्रम के बदले में जो कुछ मिलता है उससे वे संन्तुष्ट नहीं होंगे, और साथ ही अपनी प्राप्ति का सद्व्यय करना भी नहीं जानते। जो कुछ उनको प्राप्त होता है उसका वे सद्व्यय करें, यह उनको दीगई शिक्षा के ऊपर निर्भर है। उत्पादकों के हाथ में बाजार जाने से उनकी आय में वृद्धि हो जायगी। देश के अन्दर उत्पादन के जितने भी विभाग हैं उनके अन्दर सभी मनुष्यों को विभक्त होना चाहिए। और इस प्रकार मनुष्यों के विभाग जिस व्यक्ति को बाजार में विनिमय करने का अधिकार दें, वही अपने विभाग का प्रतिनिधि होकर विनिमय करे। इस प्रकार विनिमय करके जो भी प्राप्ति करें वह उसकी व्यक्तिगत न होकर उस विभाग की आय समझी जाए और वस्तुओं का मूल्य विभाग के प्रतिनिधियों की सभा नियुक्त करे। ऐसा करने से राष्ट्र के अन्दर सम्पत्ति का उचित वितरण होगा और दरिद्रता बहुत अंशों में दूर होकर लोग अपने श्रमका प्रतिफल प्राप्त करके संतुष्ट हो सकेंगे। यही श्रमियों के विभाग, राष्ट्र की सामूहिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए अपने ऊपर कर देने की योजना करेंगे। इन विभागों के प्रतिनिधि जो शासन विभाग में रहेंगे वे इन विभागों को सुझाव देंगे कि अमुक २ कार्यों को करने के लिए धन का संग्रह होना चाहिए। ये सामुहिक कार्य उदाहरण के लिए लम्बी सड़कों का निर्माण, रेलवे-गाड़ियां और इंजिन, मोटर, विमान बांध, नहर आदि की योजना के लिए विभागों से ही धन एकत्र होगा। इस प्रकार राष्ट्रिय आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए राष्ट्र के विभाग स्वयं स्वेच्छा से धन एकत्र करके कार्यों को चालू करेंगे और अपने ऊपर किसी प्रकार का बोझ अनुभव नहीं करेंगे।

(क्रमशः)

भैंस-पालन से गो-पालन की विशेषता

(डा० रामस्वरूप जी रिटायर्ड वेटर्नरी असिस्टेण्ट सर्जन सांपला)

लोग नहीं जानते कि भैंस पालन से भारतवर्ष का कितना और कैसा अपकार हो रहा है। कुत्ता हड्डी चबाता है, उसकी रगड़ से उसका मुख लहूलुहान हो जाता है, लहू स्वाद में नमकीन होता है। मूर्ख कुत्ता समझता है कि यह हड्डी का ही स्वाद है। यही हालत भारतवासियों की भैंस पालन के सम्बन्ध में है।

बम्बई सरकार के पशु विशेषज्ञ स्वर्गीय ई० जे० ब्रूएन आई० ए० एस० ने एक बार अपने एक वक्तव्य में भैंस से होने वाली हानि की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया था—कि 'भैंस का दूध लोग इसलिये अधिक पसन्द करते हैं कि उसमें अधिक चिकनाई है। पर भैंस के दूध के प्रति यह अधिक रुचि इस देश के गोवंश की वृद्धि को रोकने के लिये अपना पूरा प्रभाव डाल रही है। वस्तुतः जितना नुकसान गोवंश का तथा कृषि का भैंस ने किया है, कदाचित् ही उतना और किसी ने किया हो।'

दक्षिणी चीन, फिलिपाइन द्वीप समुह तथा भारतवर्ष ही ऐसे देश हैं जहाँ भैंस भी पाली जाती हैं। अन्य देशों में भैंस का पालन नहीं होता और न उसके दूध का ही कहीं के लोग व्यवहार करते हैं।

प्राचीन भारत में भैंस नहीं थी। वेदों में भैंस पालन का उल्लेख नहीं है। ऋग्वेद में 'गौर्मे माता' कहा गया है, जिसका अर्थ है गौ हमारी माता है। गाय दुहनेवाली को वेदों में दुहिता (पुत्री) कहा गया है।

वेदों के समान कुरान, बाइबिल, बौद्धपिटक, जैनग्रन्थ, सिक्खों के गुरुग्रन्थ, जिन्द अवेस्ता आदि में भी भैंस के लिये कोई स्थान नहीं है। केवल आदि मिश्र निवासियों की धार्मिक क्रिया के वर्णन में पाया जाता है कि आत्मा को स्वर्ग के लिये वैतरणी नदी को गाय की अथवा भैंस की पूंछ पकड़कर पार उतरना पड़ता है।

भैस की उत्पत्ति के विषय में दन्तकथायें–१ नन्दिनी नामक गाय के लिये वशिष्ठ जी के साथ विश्वामित्र जी झगड़े में हार गये। विश्वामित्र जी ने घोर तपस्या करके भैंस का निर्माण किया जो गाय से सामना करे। सचमुच शनैः शनैः भैंस के विस्तार से गांव के गांव गायों से खाली होगये।

२. दक्षिणियों का विश्वास है कि सत्य की रक्षा से शूद्र के साथ विवाहित ब्राह्मण की लड़की प्रायश्चित्त के रूप में आग में जल कर शुद्ध हुई और अगले जन्म में लक्ष्मी बनकर सर्वत्र पूजी जाने लगी और वेदपाठी वह शूद्र अगले जन्म में भैंसा बना और उसकी बलि लक्ष्मी की पूजा के लिये दी जाने लगी। वस्तुतः भैंस के आसुरी भावों के परित्याग से ही लक्ष्मी की सच्ची पूजा होती है, ऐसी चेतावनी है।

धर्म बतलाता है कि राष्ट्रहित की दृष्टि से भैंस का संवर्धन और पालन त्याग देना चाहिये। केवल गोसेवा की जबाबदेही लेनी चाहिये क्योंकि उसी में धर्म पालन है। भारतवर्ष केवल कृषि प्रधान देश ही नहीं है बल्कि शाकाहारी भी है। घनी आबादी के कारण अन्य देशों की तरह यहाँ मशीनों से कार्य सम्भवनीय नहीं है। वर्षा के आधिक्य के कारण घोड़े आदि भी इस कार्य के लिये उपयुक्त नहीं हैं। उष्णता के कारण भैंसे से भी ठीक कार्य नहीं चल सकता। अतः अत्यन्त प्राचीनकाल से गोवंश का ही व्यवहार यहाँ के लिये उपादेय सिद्ध हुआ है। गाय भारत के शरीर की सचमुच रीढ तथा किसानी की कुञ्जी है।

गाय और भैंस की तुलना

पशु गणना से पता लगाया गया है कि दुनिया में जितने पशु हैं उनके एक तिहाई भारत में ही हैं। तो भी यहाँ की जनसंख्या के अनुसार अन्य देशों की अपेक्षा पशु बहुत कम हैं। सरकार प्रति पाँचवें वर्ष पशु गणना कराती है, पाँचवीं गणना सन् १९४० में हुई थी। उसके अनुसार भारत में गाय और भैंसों की संख्या निम्न प्रकार है।

संयुक्त प्रान्त और उड़ीसा की संख्या इसमें सम्मिलित नहीं है, क्योंकि वहाँ गणना नहीं हो सकी।

गोवंश		भैंस वंश	
साण्ड-बैल	५१९१४३७१	भैंसा	५१७४६८७
गाय	४४७९८७३१	भैंस	१७५०६६४२
बछड़े	३८०४४२७१	पड़वा पड़िया	१३०७९१८६
योग	१३४७५७३७३	योग	३५७६०५१५

ऊपर के आंकड़ों को ध्यानपूर्वक देखिये ; बैल-साण्ड तथा गाय की संख्या देखने से मालूम हुआ है कि लगभग ७० लाख गायों को लोग मार कर खागये। भैंसा और भैंस की संख्या का मिलान करने से पता लगता है कि सवा करोड़ भैंसे अधिकांश अपालन और सख्त मेहनत से घुल-घुल कर मर गये और कुछ मांस के लिये मार डाले गये। भैंसे की हत्या का कारण वही है जो यूरोप में बैल का। बैल यूरोप में खेती और लादने के काम में नहीं आते, और भैंसे भारत में इन कामों के लिये निकम्मे हैं। भैंसों की संख्या में पूर्व गणना से वृद्धि हुई है, उस समय १३१३७७७४ भैंसें थीं जो अब पौने दो करोड़ होगई हैं। पता चला है कि गायें घट रही हैं और भैंसें बढ रही हैं। इस अनुपात से यदि वे घटती-बढ़ती चलीं तो १५-२० वर्ष में गोवंश का सर्वनाश हो जायेगा।

भारतवर्ष गरीब देश है। दूध के लिये और खेती के लिये अलग-अलग पशु पालने में घाटा है। इस घाटे से बचने के लिये एक न एक दिन गाय और भैंस में से किसी एक पशु को चुनना होगा। इसलिये विचारना है कि हमको किसी एक पशु को रखना चाहिये, जिससे हमारे दूध और खेती दोनों कार्य मजे में चल सकें।

बैल के बिना कृषकों का काम नहीं चल सकता। यह अनुभव सिद्ध है कि उसके स्थान पर भैंसा किसानी और लदनी आदि के काम नहीं कर सकता। इसलिये गाय को ही पालना और बढाना अच्छा है; क्योंकि वह भैंस से कम खाती है तथा भैंस से अधिक दिन जीवित रहती है। भैंस गाय से दुगने से भी अधिक खाती है। उसका पड़वा जल्दी मर जाता है। इसलिये यदि हम साढे तीन करोड़ भैंस वंश को स्वतन्त्र छोड़ सकें तो उसका अर्थ हुआ कि हम सात करोड़ गोवंश के लायक चारा बचा सकेंगे। फिर हमारी गायों की अवस्था बदलते देर न लगेगी।

गाय और भैंस के गुण दोषों का तुलनात्मक विवेचन

गाय

१. गाय आर्य संस्कृति की पोषक, पुण्य दर्शन तथा दैवी सम्पत्ति है।

२. गाय के शरीर पर हाथ फेरने से उम्र बढ़ती है, एवं तेजस्विता आती है और खूंटे पर बराबर खाती रहे तो वह सौख्य और शान्ति बढ़ाती है।

३. गोवंश बैल रूप में मृत्युञ्जय (मृत्यु अर्थात् अपुरुषार्थ को जीतने वाले महादेव जी) का वाहन है।

४. गाय की पूछ पकड़िये, अथाह जल पार करा देगी।

५. गाय का बछड़ा खेती लदनी आदि के काम पानी धूप जाड़े सभी में बहुत काल तक कर सकता है। वह 'बलद' अर्थात् 'बल-दाता' कहलाता है।

६. गाय कष्ट सहिष्णु जीव है, अतः वह जल्दी बीमार नहीं पड़ती।

भैंस

१. भैंस म्लेच्छ संस्कृति की पोषक, अशुभ दर्शन तथा आसुरी सम्पत्ति है।

२. भैंस के शरीर पर हाथ फेरने से मृत्यु निकट आती है; बराबर खूंटे पर बंधी रहने से दरिद्रता और अशान्ति बढ़ाती है। पहले-पहल उसके पास जावे तो उसकी देह से तीव्र दुर्गन्ध निकलती हुई मालूम होगी।

३. भैंसा अन्तक (मृत्यु) का वाहन है।

४. भैंस की पूंछ पकड़िये, जल में नीचे बैठ जावेगी, इसलिये वह यमपुर ले जाने वाली है।

५. भैंस का पड़वा खेती लदनी आदि के काम में एकदम निकम्मा है। यदि धूप होती है तो लदनी की वस्तुओं को लेकर पानी में बैठ जाता है। भैंस के पानी के जीव होने के बहुत प्रमाण हैं। रावण के लिये यमराज का भैंसे पर पानी लाने, हेमचन्द्र का पुरुष चरित्र में भैंसे पर व्यापार-मण्डली के लिये पानी ढुवाये जाने आदि का वर्णन हमारे प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है।

पूरा काम लीजिये तो वह साल-छः महीने ही जीता है ।

६. भैंस अतितिक्षु और पानी का जानवर है, इसलिये जल्दी-जल्दी बीमार पड़ती है ।

सरकार अपने डेयरी फार्मों में भैंस इसलिये नहीं पालती कि उसके सालभर के दूध और पालन खर्च का दाम जोड़ा जाय तो बड़ा घाटा रहता है । भारत सरकार ने एक क्लब (Club) खोल रक्खा है । उसके रजिस्टर में उसी गाय का नाम लिखा है जो एक ब्यात में दस हजार पौण्ड दूध देती है । लेकिन उसमें भैंस की भर्ती के लिये सिर्फ सात ही हजार पौण्ड रक्खा है । इससे सिद्ध हुआ कि सब मिला कर गाय भैंस से अधिक दूध देती है; क्योंकि चाहे थोड़ा भी दूध दें, पर बहुत काल तक देती रहती है । गाय ९ या १० मास में ब्याती है और उसके सूखे काल का पालन खर्च भी बहुत कम है । भैंस लगभग एक वर्ष में ब्याती है, तथा उसके सूखे काल का पालन खर्च बहुत अधिक है । गाय दस ग्यारह मास तक दूध देती है, भैंस छः-सात मास तक ही । भैंस एक-दो मास के बाद अधिकतर एक वक्त दूध देने वाली हो जाती है, क्योंकि उसके बच्चे बहुत मरते हैं । गाय कम खाती है, भूखे रहने पर भी कुछ न कुछ दूध अवश्य दे देती है । वह तीन चार बार दुही जा सकती है । ज्यादह बार दुहने से उसका दूध बढ़ता है । ब्यायी हुई गाय में भोजन पचाने की अपूर्व क्षमता होती है ।

भैंस गाय से लगभग दुगुणा अधिक खाती है । थोड़ी भी भूखी रहने पर दूध नहीं देती । जबकि वह दो बार भी कठिनता से दुही जा सकती है, तो फिर अधिक बार दुहने की तो बात ही छोड़िये । ब्यायी हुई भैंस में अधिक चारा पचाने की शक्ति नहीं होती, उसे पेट फूलने की बीमारी का डर रहता है । गाय का गोबर सुन्दर खाद है. लीपने पर कीड़ों को मारता है एवं हवा को शुद्ध करता है । भैंस का गोबर तमाखू के लिये उपयुक्त खाद है । वह लीपे जाने पर कोई सुन्दर फल नहीं देता । गाय के दूध से साधारण खनिज पदार्थ शुद्ध किये जाते हैं । संखिया आदि के समान तीव्र जहर को शुद्ध करने के लिये भैंस का दूध भी ठीक है । गोमूत्र अमृत तुल्य अमोघ दवा है । भैंस का मूत्र विषतुल्य अमोघ जहर है । गाय से गो-रोचन जैसे सुन्दर पदार्थ तथा पञ्चगव्य जैसे सुमधुर एवं सुपाच्य पेय प्राप्त होते हैं और उनसे यज्ञ, प्रायश्चित्त प्रक्षालन आदि दिव्य कर्म सम्पन्न होते हैं तथा परम्परा प्राप्त मुक्ति तक की भी प्राप्ति हो जाती है । भैंस से उपर्युक्त पदार्थ नहीं प्राप्त होते, उससे तो विपरीत फल मिलते हैं । जातिवन्त (Stud) साण्ड से संयोग कराने पर गाय के वंश का ही सुधार नहीं होता, उसकी दूध देने की शक्ति भी बढ़ जाती है । भैंस के साथ ऐसा प्रयोग करके कई बार देखा गया, उसके दूध में कुछ भी फर्क नहीं पड़ा । गाय में असमय में प्रसव कर जाने की बीमारी बहुत कम होती है, पर भैंस में यह बीमारी अधिक पाई जाती है । यह भी देखने में आया है—कि भैंस पानी की इतनी प्यारी होती है कि वह उसके भीतर ही प्रसव कर डालती है और उसका बच्चा योंही मर जाता है । गाय का सात मास का बच्चा मनुष्य के बच्चे के समान जीता बच जाता है, परन्तु भैंस का ऐसा बच्चा नहीं बचता । तेज, बल, बुद्धि आदि की उपमा जहाँ-जहाँ दी गई है, वहाँ गोवंश के ही नाम का व्यवहार दिया गया है, यथा—'वृषभस्कन्ध' 'नरर्षभ' आदि-आदि । क्रोध अल्हड़पन, बेवकूफी आदि की उपमा भैंस से दी जाती है—जैसे—पड़िया के ताऊ, महिसेसा, भैंसवार आदि ।

गाय को चराने में बुद्धि विकास की कुछ विचित्र शक्ति है, तेज, प्रज्ञा, बल आदि सभी गुण इससे प्राप्त होते हैं: श्रीकृष्ण की बाललीला, नानक, ईसा और बापा-रावल का गोचरण आदि परम उल्लेखनीय हैं । भैंस के प्रति १०० बच्चों के पीछे ७५ बच्चे मरते हैं, जबकि गाय के केवल २५ ही ।

—

'सुधारक' की ग्राहक संख्या बढ़ा कर
सुधार-कार्य में सहयोग दीजिये

'सुधारक' में विज्ञापन देकर
अपने व्यापार को उन्नत कीजिये

आधुनिक शिक्षा प्रणाली

(ले० रामप्रसाद आर्य, अध्यापक प्राइमरी स्कूल भेटगडी)

जब अंग्रेजों ने सन् १६०० में भारत में व्यापारिक कम्पनी खोली और व्यापार का कार्य प्रारम्भ किया, तब कम्पनी को कल्र्कों की आवश्यकता हुई। इसपर उस कम्पनी ने ऐसे पठित पुरुषों को नौकरी दी जो कल्र्क का काम कर सकें और ऐसी ही शिक्षा प्रणाली चलाई जो केवल कल्र्क ही पैदा कर सके। क्योंकि उन्हें कल्र्कों के अतिरिक्त कोई काम जानने वालों या करने वालों की आवश्यकता नहीं थी।

कुछ काल--उपरान्त राज्य की बागडोर उनके हाथ में आई। वह शिक्षा-प्रणाली और भी आवश्यक कर दी, क्यों कि वह लोग हमें पराधीन देखना चाहते थे। हमारी पुरानी सभ्यता को समाप्त करना चाहते थे। हमें केवल कल्र्क की ही शिक्षा देकर हमारी उच्च शिक्षा का कार्य रोक देते थे और हमें उन्नति के स्थान पर अवनति की ओर ले जाते थे। हमारी परतन्त्रता की नींव को दृढ़ कर देना उनका ध्येय था।

किन्तु अब देश स्वतन्त्र हो गया। इस निकम्मी शिक्षा को ग्रहण न करके भावी शिक्षा और मानव जीवन को उन्नत बनाने वाली सब भाषाओं की जननी संस्कृत विद्या को ग्रहण करें। वेदों को पढ़ना अपना कर्तव्य समझें, जिससे सुधार हो, नहीं तो सुधार तो दूर रहा, मेरे विचार में सुधार के स्थान में बिगाड़ ही होगा। बिना आदर्श विद्या के ग्रहण किये सुधार होना कठिन ही नहीं किन्तु असम्भव है।

देश में दूध घी की नदियाँ बहा करती थीं। विद्या का प्रचार और संस्कृत विद्या का प्रसार तथा पढ़ना पढ़ाना सौभाग्य की बात थी। जो महान् आत्मा संस्कृत पढ़कर ऋषि महर्षियों की उपाधि धारण किया करते थे, आज उनकी सन्तान उस संस्कृत विद्या के अभाव और इस निकम्मी आधुनिक शिक्षा को पाकर इतने निर्बल और बुद्धिहीन हो गये और फैशन में फंस गये कि सिनेमा देखना, शराब मदिरा पीना, मांस अंडे और कबाब खाना, स्वांग करना, जनाने बनकर नाचना आदि दुर्गुण धारण कर चुके हैं। इसका एक मात्र कारण शिक्षा-प्रणाली का अच्छा न होना ही है। यदि इस रोग की चिकित्सा करनी है तो शिक्षा-प्रणाली को बदलकर आदर्श विद्या के अध्ययन में स्थान दें और संस्कृत जैसी आदर्श विद्या प्राप्त करें।

गोरक्षा संकल्प

(श्री हरिश्चन्द्र "नाज़" गढ़ी घसोटा सोनीपत)

गौ माता की रक्षा खातिर हम अपने शीश कटा देंगे।
तन, मन, धन अर्पण कर देंगे, और जीवन भेंट चढ़ा देंगे॥
गोवध को बन्द कराने का, हमने है दृढ संकल्प किया।
इस प्रण के पूरा करने को, अपना सर्वस्व लुटा देंगे॥
ऋषिवर का ऋण चुकाने को अब कार्य क्षेत्र में उतरे हैं।
हम तब आराम से बैठेंगे, जब कुछ कर के दिखला देंगे॥
सन्तान हैं आर्य जाति की, अरु मान हैं प्यारे भारत का।
माता की पीड़ा हर लेंगे, अरु उसका मान बढ़ा देंगे॥
फिर घी के स्रोते उबलेंगे, सरिताएँ दूध की उछलेंगे।
प्राचीन काल की भाँति हम, भारत को स्वर्ग बना देंगे॥
प्रताप, शिवा, गोविन्दसिंह, आदर्श पे अपने स्वामी के।
चल कर वीरों के दल के दल पापों की भीत गिरा देंगे॥
धुन के पक्के हैं "नाज़" हमीं दुःख दर्द निरन्तर सहते हैं।
आपत्तियों से निर्भय होकर लड़ना सब को सिखला देंगे॥

सम्मति

'सुधारक' मेरे लिये तो वरदान तुल्य है। सुधारक जब से सामाजिक जीवन क्षेत्र में उतरा है तभी से सुधार सम्भव हो गया है। सचमुच सुधारक—सुधारक ही है। सुधारक प्रचालित करके आप आर्यसमाज के नेता पं० लेखराम जी आर्य मुसाफिर के आदेशानुसार कि—"आर्यसमाज से लेखन कार्य बन्द न होना चाहिये" का अक्षरशः पालन कर रहे हैं। मैं आप के सुधारक के सुधार कार्य में सहयोग देने के लिये सदैव उद्यत हूँ। मैं तो इसे अब साप्ताहिक; पुनश्च दैनिक समाचार पत्र के रूप में देखना चाहता हूँ। ईश्वर से भी प्रार्थना है कि वह सामाजिक कार्य में सुधारक के सहयोगियों को भी साहस दे।

सुखदेव शास्त्री (आसन)

हरयाणा प्रान्त के प्रधान गुरुकुल निःशुल्क आर्षपाठविधि के केन्द्र

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का

तेतीसवां वार्षिक महोत्सव

फाल्गुन कृष्णा त्रयोदशी, चतुर्दशी सम्वत् २०११ विक्रमी, तारीख २० और २१ फरवरी सन् १९५५ ई० रविवार, सोमवार को समारोह से मनाया जावेगा। भारी संख्या में पधार कर महोत्सव की शोभा बढावें।

इस अवसर पर आर्य जगत् के महान् नेता पूज्यपाद स्वामी आत्मानन्द जी महाराज अध्यक्ष वैदिक साधना-आश्रम यमुनानगर अम्बाला, उच्चकोटि के वैदिक विद्वान् पूज्यपाद श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज अध्यक्ष विरजानन्द वैदिक संस्थान खेड़ाखुर्द देहली, पूज्यपाद श्री स्वामी व्रतानन्द जी महाराज संस्थापक गुरुकुल चित्तौड़गढ़, श्री पूज्य स्वामी शान्तानन्द जी महाराज आर्यसमाज ब्यावर, शास्त्रार्थ महारथी पूज्य पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार, सैद्धान्तिक विद्वान् श्री पूज्य जगदेवसिंह जी शास्त्री सिद्धान्ती संस्थापक सम्राट् देहली, श्री पूज्य आचार्य राजेन्द्र नाथ जी देहली आदि उच्चकोटि के विद्वानों और प्रान्तीय तथा केन्द्रिय धारा-सभाओं के कतिपय सदस्यों को निमन्त्रित किया गया है।

अथर्ववेद से महायज्ञ

महोत्सव से लगभग डेढ सप्ताह पूर्व अथर्ववेद से महायज्ञ प्रारम्भ होगा और पूर्णाहुति २१ फरवरी सोमवार को प्रातःकाल १० बजे होगी। इस शुभ अवसर पर यज्ञोपवीत ग्रहण करने वाले सज्जनों को यज्ञोपवीत प्रदान किये जायेंगे। महायज्ञ की सफलता के लिये हव. के प्रेमी सज्जन कम से कम एक समय का घी अवश्य भेजें तथा पड़ौसियों और इष्ट मित्रों से भिजवा कर पुण्य के भागी बनें।

नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश

राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा सब भाषाओं की जननी देववाणी संस्कृत की उच्च शिक्षा तथा आर्षपाठ विधि के अनुसार वेद-वेदाङ्गों के अध्ययन अध्यापन का समुचित प्रवन्ध है। अतः अपने भावी राष्ट्र-निर्माता होनहार बालकों को गुरुकुल में प्रविष्ट कराकर उनके जीवन को सफल बनावें। प्रवेश नियम तथा प्रार्थना पत्र कार्यालय से मंगवा लें।

नवीन भवन-निर्माण

आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये नूतन भवनों के निर्माण का कार्य चल रहा है। अभी तक आतुरालय बनकर तैय्यार हो गया है। नवीन भवन निर्माण के लिये जो सज्जन १०१) प्रदान करेंगे उनका नाम पत्थर पर अङ्कित किया जायेगा। ५०१) प्रदान करने वाले सज्जन के नाम का पत्थर नवीन-भवन पर लगाया जायेगा। १००१) तथा २५०१) प्रदान करने वाले सज्जनों के नाम से छोटा तथा बड़ा कमरा बनवाया जायेगा। प्रेमी सज्जन अपने समाज तथा ग्राम के नाम से भवन बनवायें। अपने पूर्वजों की स्मृति में भवन बनवाने का अच्छा अवसर है।

निवेदक—

प्रो० शेरसिंह एम०एल०ए० प्रधान प्यारेलाल आर्य मन्त्री भगवानदेव आचार्य

टि० १—गुरुकुल की प्रबन्धकारिणी सभा का साधरण वार्षिक अधिवेशन ता० २० फरवरी रविवार को सायङ्काल रात्रि को ८ बजे से प्रारम्भ होगा। सभा की सदस्यता का शुल्क १०) है। १०१) प्रदान करने वाले आजीवन सदस्य कहलायेंगे। २—अपने बिस्तर और कपड़े साथ लावें

हमारे तीन अभिनव प्रकाशन अवश्य पढ़ें

१—विरजानन्द चरित

सर्वविध क्रान्तिकारी महर्षि विरजानन्द जी महाराज का यह जीवन चरित अपने ढङ्ग का एक ही अनुपम ग्रन्थ है। इसके लेखक लेखनी के धनी श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज हैं जिन्होंने दर्जनों ग्रन्थ वेद के विषय में लिखे हैं, आप अनेक भाषाओं के प्रौढ विद्वान् हैं। इस ग्रन्थ में भी 'उत्थानिका' के मिष से अनेक गूढ रहस्यों का उद्घाटन किया है। ऐसे उच्च कोटि के विद्वान् की लेखनी से लिखे इस अपूर्व जीवन चरित में आप को ऐसी अनेक घटनायें मिलेंगी जो अभी तक साहित्य जगत् में नहीं आई हैं। बढ़िया कागज पर सुन्दर छपाई की गई है फिर भी २०० पृष्ठों के ग्रन्थ का मूल्य केवल १॥)।

२—व्यायाम सन्देश

श्री आचार्य भगवान् देव जी की यह वही उत्कृष्ट रचना है जिस के लिये गत एक वर्ष से व्यायाम प्रेमी सज्जन तथा विद्यार्थी समाज चातक की भाँति टकटकी लगाये हुये है। इस के पढ़ने से ६० वर्ष का व्यक्ति भी लङ्गोट बान्ध कर अखाड़े में आजायेगा, आचार्य जी के शब्दों में यह एक विचित्र शक्ति ही है कि मुर्दों और नपुंसक में भी जीवन शक्ति का सञ्चार हो जाता है क्यों कि ये हृदय के उद्गार स्वानुभूत होते हैं। ६ चित्रों से सुसज्जित इस प्रकार को उत्तम सामग्री व्यायाम के विषय में अन्यत्र न मिलेगी। मूल्य १) मात्र।

३—आसनों के व्यायाम (सचित्र)

ब्र० वेदव्रत जी द्वारा लिखित इस पुस्तक में तीन दर्जन आसनों का परिचय, करने की विधि और लाभ अति सरल भाषा में वर्णन किया है जिस से सर्व साधारण व्यक्ति भी लाभ उठा सकता है। साथ में चित्र होने से विषय को समझने में किञ्चिन्मात्र भी कठिनाई नहीं होती। आसन तो बहुत हैं किन्तु इस ग्रन्थ में केवल स्वानुभूत विशेष विशेष आसनों पर प्रकाश डाला है। मूल्य ॥)।

विशेष सुविधा—ऊपर लिखे विरजानन्द चरित और २ व्यायाम सन्देश दोनों २॥) की पुस्तक लेने वाले व्यक्ति को "आसनों का व्यायाम" पुस्तक बिना मूल्य (मुफ्त) दी जायेगी।

आचार्य भगवान्देव जी कृत पुस्तकें—

१. ब्रह्मचर्य के साधन पांचों भाग	१॥।=)
२. ब्रह्मचर्यामृत साधारण संस्करण	=)॥
३. " बाल संस्करण	।=)
४. तम्बाकू का नशा, साधारण संस्करण	=)॥
५. " " बाल संस्करण	।=)
६. पापों की जड़ शराब साधारण संस्करण	=)॥
७. " " " बाल संस्करण	।-)
८. नेत्र रक्षा	≡)
९. व्यायाम का महत्त्व	≡)
१०. रामराज्य कैसे हो	≡)
११. स्वप्नदोष की चिकित्सा	=)
१२. बाल विवाह से हानियाँ	-)
१३. बिच्छू विष चिकित्सा	≡)

श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज कृत पुस्तकें

१४. आदर्श ब्रह्मचारी	=)॥
१५. कन्या और ब्रह्मचर्य	=)॥

इनके अतिरिक्त मूल वेद, वेदों के भाष्य, गीता, उपनिषद्, महर्षि दयानन्दकृत सभी ग्रन्थ तथा महापुरुषों के जीवन चरित्र एवं आर्य सिद्धान्त सम्बन्धी सभी ग्रन्थ और आर्य कुमार परिषद् द्वारा सञ्चालित—

१. सिद्धान्त सरोज २. सिद्धान्त रत्न ३. सिद्धान्त भास्कर ४. सिद्धान्त शास्त्री ५. सिद्धान्त वाचस्पति—

इन पांचों परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें हमारे यहाँ उचित मूल्य से मिल सकती हैं। विशेष जानकारी के लिये पत्र व्यवहार करें।

प्राप्ति स्थान

वैदिक पुस्तकालय गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

सर्पविष-चिकित्सा

(श्री आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर)

[लेखाङ्क--५]

५—वैकरञ्ज ।

……………वैकरञ्जास्त्रयस्तथा ।
वैकरञ्जोद्भवाः सप्त चित्रा मण्डलिराजिलाः ॥

(सु० कल्पस्थान अ० ४, श्लोक १२)

ये दोगले सर्प इन्हीं दर्वीकर आदि तीनों के मिलाप से होते हैं । चित्रित मण्डली, राजिमान् और वैकरञ्जों से उत्पन्न सांप सात हैं अर्थात् मण्डली से चार और राजिमान् से तीन । इनकी उत्पत्ति किस प्रकार होती है इसके विषय में महर्षि धन्वन्तरि जी इस प्रकार लिखते हैं—

"वैकरञ्जास्तु त्रयाणां दर्वीकरादीनां व्यतिकराज्जाताः तद्यथा—माकुलिः, पोटगलः, स्निग्धराजिरिति । तत्र कृष्णसर्पेण गोनस्यां वैपरीत्येन वा जातो माकुलिः, राजिलेन गोनस्यां वैपरीत्येन वा जातः पोटगलः, कृष्णसर्पेण राजिमत्यां वैपरीत्येन वा जातःस्निग्धराजिरिति तेषामाद्यस्य पितृवद्विषोत्कर्षो द्वयोर्मातृवदित्येके ।" (सुश्रुत कल्पास्थान अ० ४)

वैकरञ्ज अर्थात् दोगले सांप इन दर्वीकारादि तीनों के मेल से उत्पन्न होते हैं । १—फणियर और मण्डली सर्पों के मेल से माकुलि उत्पन्न होता है ।

२—कोड़िया और मंडली के संयोग से पोटगल उत्पन्न होता है । ३—चिकनी धारियों वाला, फणियर और कोड़िये के संयोग से उत्पन्न होता है'। इन में माकुलि सर्प के विष का स्वभाव पिता के सदृश तथा पोटगल और स्निग्धराजि के विष का स्वभाव माता के समान होता है।

"त्रयाणां वैकरञ्जानां पुनर्दिव्येलकरोध्रपुष्पकराजिचित्रकपोटगलपुष्पाभिकीर्णदर्भपुष्पवेल्लितकाः सप्त, तेषामाद्यास्त्रयो राजिलवत्, शेषा मंडलिवत्, एवमेतेषां सर्पाणामशीतिर्व्याख्याताः" (सु० क० अ० ४)

तीनों वैकरञ्ज सांपों के भेद सात हैं । यथा दिव्येलक, रोध्रपुष्पक, राजिचित्रक, पोटगल, पुष्पाभिकीर्ण, दर्भपुष्प, वेल्लितक । इन में पहले तीन का विष राजिमान् सांपों की भान्ति और शेषों का विष मण्डली के समान होता है । इस प्रकार इन सांपों के भेद अस्सी प्रकार के हुये । इन सांपों के सब भेदों को अनुभवी सपेरे अथवा सर्प विशेषज्ञ ही भली भान्ति जानते हैं । सामान्य मनुष्यों के लिये इनकी आकृति को देखकर सब भेदों का जानना असम्भव नहीं तो बहुत कठिन अवश्य ही है ।

सर्प, सर्पिणी के लक्षण भेद—

तत्र महानेत्रजिह्वास्यशिरसः पुमांसः, सूक्ष्मनेत्रजिह्वास्यशिरसः स्त्रियः, उभयलक्षणा मन्दविषा अक्रोधा नपुंसका इति । (सु० कल्पस्थान अ० ४)

अर्थात् इनमें जिनके नेत्र, जिह्वा, मुख और शिर बड़े एवं मोटे होते हैं वे पुरुष अर्थात् सर्प, तथा जिनके नेत्र, जिह्वा, मुख और शिर सूक्ष्म (छोटे) होते हैं उन्हें स्त्री अर्थात् सर्पिणी जानना चाहिये । और जिनमें दोनों लक्षण विद्यमान हों वे मन्द (अल्प) विष वाले क्रोधरहित नपुंसक (हीजड़े) होते हैं ।

दंश भेद के लक्षण—

"पुरुषाभिदष्ट ऊर्ध्वं प्रेक्षते" पुरुष सांप से काटा हुआ रोगी ऊपर को देखता है । "अधस्तात्स्त्रिया, सिराश्चोत्तिष्ठन्ति ललाटे" स्त्री सर्पिणी से दंशित रोगी नीचे देखता है और उसके माथे में सिरायें (नसें) उठी अर्थात् उभरी हुई हो जाती हैं । "नपुंसकाभिदष्टस्तिर्यक्प्रेक्षो भवति" नपुंसक (हीजड़े) सांप का काटा रोगी तिरछा अर्थात् टेढा=पार्श्व में देखता है । "गर्भिण्या पाण्डुमुखो ध्मातश्च" गर्भवती सर्पिणी से काटे रोगी का मुख पीला पड़ जाता है तथा मुख और पेट फूल (सूज) जाता है । "सूतिकया कुक्षिशूलार्तः सरुधिरं मेहति, उपजिह्विकाऽस्य भवति" प्रसूता सर्पिणी के काटे हुए रोगी के उदर में शूल होता है तथा मूत्र में रक्त (खून) मिला हुआ आता है और उपजिह्विका नाम का रोग भी हो जाता है ।

"ग्रासार्थिनाऽन्नं काङ्क्षति" भूखें सर्प के काटने से रोगी अन्न (भोजन) की इच्छा करता है। "वृद्धेन चिरान्मन्दाश्च वेगाः, बालेनाशु मृदवश्च, निर्विषेणाविषलिङ्गम्" अर्थात् बूढे सर्प के काटने पर विष का वेग (जोर) मन्द (अल्प) रहता है और देर से चढ़ता है। बालक (थोड़ी आयु के) सांप के काटने पर विष शीघ्र चढ़ता है। परन्तु वेग मन्द ही रहता है और निर्विष सांप के काटने पर विष का लक्षण (प्रभाव) नहीं होता। "अन्धाहिकेनाऽन्धत्वमित्येके" अन्धे सांप के काटने से रोगी अन्धा हो जाता है ऐसा किसी-किसी का मत है। "ग्रसनादजगरः शरीरप्राणहरो न विषात्" अजगर सांप प्राणी को निगल कर समाप्त करता है, अजगर में विष नहीं होता अतः विष से प्राणनाश नहीं करता।

विपैले सर्प दंश का प्रभाव

"तत्र सद्यः प्राणहराहिदष्टः पतति शस्त्राशनिहत इव भूमौ, स्रस्ताङ्गः स्वपिति।"

(सु० कल्प० अ० ३८ श्लोक ४)

जब भयङ्कर प्राण हरने वाला विषधर किसी को काटता है तो वह चिकित्सा के लिये अवसर नहीं देता। रोगी तुरन्त ही शस्त्र (हथियार) अथवा विद्युत् (बिजली) से आहत = मारे हुए के समान भूमि पर गिर पड़ता है, उसके सारे शरीर के अंग शिथिल = ढीले पड़ जाते हैं और वह सदा के लिये गम्भीर, न समाप्त होने वाली नींद में सो जाता है। ऐसे विपैले सर्पों की चिकित्सा किसी शास्त्र में अथवा किसी भी पैथी (चिकित्सा पद्धति) में नहीं है। जब औषध देने वा किसी भी प्रकार की चिकित्सा वा उपचार करने का समय ही मृत्यु प्रदान नहीं करती तब चिकित्सा कोई कैसे कर सकता है? ऐसे सर्पों का काटना साक्षात् मृत्यु ही समझना चाहिये।

सर्पदंशन की सांघातिक अर्थात् साध्या-साध्य अवस्थाओं पर विस्तार से विचार आगे चलकर करना है।

सर्प-दंश-भेद

सर्प भिन्न-भिन्न प्रकार से काटते हैं, इस विषय में महर्षि धन्वन्तरि लिखते हैं—

पादाभिमृष्टा दुष्टा वा क्रुद्धा ग्रासार्थिनोऽपि वा।
तेदशन्ति महाक्रोधाः त्रिविधं भीमदर्शनाः॥

(सु० अ० ४ श्लो० १३)

सर्प तीन प्रकार से काटता है। (१) पांव से दब जाने या छू जाने से, (२) स्वभाव की दुष्टता अथवा क्रोध से और (३) भोजन की इच्छा से सर्प प्राणियों को काटता है। जब तक सर्प किसी भी कारण से क्रोधित नहीं होता, तब तक वह काटता नहीं। अति क्रोधी होकर जब सर्प काटता है तब इस का रूप भी भयानक होता है और क्रुद्धावस्था में काटने पर ही विष छोड़ता है। सामान्य अवस्था में काटता भी नहीं। यदि बिना क्रोध के काट भी ले तो भय करने की आवश्यकता नहीं, कई बार तो ऐसी अवस्था में चिकित्सा की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। जब सर्प अत्यन्त क्रुद्ध अवस्था में उद्धत होकर काटता है तो वह अवस्था भयानक होती है। तब चिकित्सा में बड़ी सावधानी करनी पड़ती है। क्रुद्धावस्था में जब सर्प काटता है तो वह भी तीन प्रकार का होता है—

सर्पितं रदितं चापि तृतीयमथ निर्विषम्।
सर्पाङ्गाभिहतं केचिदिच्छन्ति खलु तद्विदः॥१४॥

(सुश्रुत अ० ४)

(१) सर्पित (२) रदित और (३) निर्विष, तथा कोई कोई सर्पविष-विशेषज्ञ वैद्य सर्पाङ्गाभिहत अर्थात् सर्प के छू जाने को भी एक प्रकार मानते हैं।

सर्पित के लक्षण

पदानि यत्र दन्तानामेकं द्वे वा बहूनि वा।
निमग्नान्यल्परक्तानि यान्युद्वृत्य करोति हि॥१५॥
चञ्चुमालकमुक्तानि वैकृत्यकरणानि च।
सङ्क्षिप्तानि सशोथानि विद्यात्तत्सर्पितं भिषक्॥१६॥

(सु० अ० ४)

सांप जब काटता है तो उस काटे हुए स्थान पर एक, दो अथवा बहुत दांतों के चिह्न गहरे गडे हुए प्रतीत हों और उनके निकलने पर थोड़ा रुधिर भी निकला हुआ हो, और उनके निकलने पर दान्तों की पंक्ति पूरी गड़ी सी प्रतीत हो। अर्थात् जिन दांतों के चिह्नों को सांप ने उलट

कर किया है । जो इन्द्रियादिक में विकार उत्पन्न कर दें । तथा दाढ सम्यक् रीति से बैठ गई हों और दंश स्थान पर शोथ भी हो, उनको वैद्य लोग सर्पित समझें । अर्थात् पूर्ण रूप से भली भाँति सर्प ने डसा है ।

सर्व साधारण लोग तथा कुछ डाक्टरी के ग्रन्थ भी इस प्रकार मानते हैं कि विषैले सर्प दर्वीकर आदि के काटने पर दंश स्थान पर दो दांतों के इस प्रकार चिह्न (. .) होते हैं, जिनके बीच में $\frac{1}{2}$ इंच के लगभग अन्तर (दूरी) होती है, किन्तु यह सर्वथा सत्य नहीं। क्योंकि विषैले तथा निर्विष दोनों प्रकार सर्पों के काटने पर एक, दो अथवा अधिक दांतों के चिह्न देखने में आते हैं । अत: विषैले और निर्विष सर्प के दंश का ज्ञान तथा सर्पित और रदित आदि का भेद पर्याप्त अनुभव के पीछे होता है ।

रदित और निर्विष का लक्षण–

राज्य सलोहिता यत्र नीलाः पीता: सितास्तथा ।
विज्ञेयं रदितं तत्तु ज्ञेयमल्पविषं च तत् ।।१७।।
अशोथमदुष्टासृक् प्रकृतिस्थस्य देहिन: ।
एदं पदानि वा विद्यादविषं तच्चिकित्सक: ।।१८।।
(सुश्रुत अ० ४)

जिस डसे हुए स्थान पर लाल वा नीली या पीली अथवा श्वेत रेखायें (लकीरें) सी प्रतीत हों उसे रदित अर्थात् झरोट ही आई है, उसे सर्प ने पूर्ण रूप से नहीं काटा---ऐसा समझना चाहिए । जहाँ पर सूजन थोड़ा हो वा सूजन का सर्वथा अभाव ही हो, रक्त थोड़ा दूषित हुआ हो, इन्द्रियों वा शरीर की प्रकृति में कोई विकार न हो, चाहे एक या अधिक दांतों के चिह्न भी हों तो भी वह दंश निर्विष अर्थात् विष रहित समझना चाहिये । विषैले सर्प के काटते ही तुरन्त ही रोगी के शरीर तथा इन्द्रियों पर प्रभाव पड़ता है । जिस प्रकृति का सर्प काटता है उसी दोष के कुपित होने के लक्षण डसे हुए प्राणी पर प्रकट होने लगते हैं । इस के विपरीत निर्विष सर्प के काटने अथवा रदित (थोड़ा निर्विष दंश) होने पर शरीर वा इन्द्रियों पर कोई विकार नहीं होता । अनुभवी वैद्य शरीर, प्रकृति और इन्द्रियों पर पड़ने वाले प्रभाव से ठीक जाँच कर सकता है । दांत के चिह्नों से तो अनेक बार भ्रम ही में पड़ सकता है ।

सर्पाङ्गाभिहत के लक्षण

सर्पस्पृष्टस्य भीरोहि भयेन कुपितोऽनल: ।
कस्यचित् कुरुते शोथं सर्पाङ्गाभिहतं तु तत् ॥१९॥
(सुश्रुत अ० ४)

जो भीरु मनुष्य होता है उसके शरीर को यदि सर्प छू भी जावे, वह सर्प के छू जाने से ही भयभीत हो जाता है । उस को यह भ्रम हो जाता है कि मुझे सांप ने काट लिया । इसी से वायु कुपित होकर शोथ = सूजन हो जाता है, प्रकृति बिगड़ जाती है और सर्पदंश सम्बन्धी अनेक लक्षण दिखाई देने लगते हैं । भय से रोगी पर विचित्र प्रभाव पड़ता है ।

एक बार छप्पर से फूंस हटाते हुए एक मनुष्य को सर्प ने काट लिया, किन्तु उस मनुष्य ने उस सर्प को नहीं देखा । उस ने यह समझा कि कोई झाड़ का कांटा लग गया है । सर्प विषैला नहीं था अथवा पूर्ण रूप से नहीं काट सका । अत: उस मनुष्य पर सर्प विष का कोई प्रभाव प्रकट नहीं हुआ । एक वर्ष के पीछे उसी छप्पर पर कार्य करते हुए उसी स्थान पर उसी व्यक्ति ने सर्प देखा और उसे गत वर्ष की बात याद आ गई और वह विचारने लगा कि "मुझे गत वर्ष कांटे नहीं लगे इस सर्प ने ही काटा था।" इस विचार के आते ही वह भयभीत हो गया तथा सर्प के काटने के सब लक्षण उसके शरीर तथा इन्द्रियों पर प्रकट होने लगे । वह इतना घबराया कि अपने आप को सम्भाल न सका, अतः कुछ समय के पीछे उस भीरु की मृत्यु हो गई ।

(क्रमशः)

—:o:—

षट् सूक्तयः

(ले० श्री पं० सत्यदेव वासिष्ठ, सत्याग्रह नीति-काव्य प्रणेता, ऋषिकेश)

[सर्व साधारण के लाभार्थ पद्यों का हिन्दी अनुवाद भी कर दिया है। —सम्पादक।]

१—पुरुष–पशुः कः ?

धर्मे रतिर्नैव, न च राष्ट्रसेवा,
नो शास्त्र-चर्चा, न तपो न दानम्।
एवंविधो मर्त्य-पशुः प्रमादी,
असत्यदान्तो भुवि भारभूतः ॥ १ ॥
विकलः पुच्छश्रृङ्गाभ्यां ज्ञान-विज्ञान-वर्जितः ।
अन्नादः पशुवज्ज्ञेयो यो न धर्माय कल्पते ॥ २ ॥

मनुष्यरूपी पशु कौन है ?

जिसकी धर्म में रुचि नहीं, न राष्ट्र की सेवा करता है, न वेदादि सत्य शास्त्रों की चर्चा करता है, न तपस्या करता है और न ही दान देता है, इस प्रकार का (शुभ कर्म हीन) व्यक्ति है वह प्रमादी रूप रङ्ग से मनुष्य होता हुआ भी पशु है और व्यर्थ ही भूमि पर भार होकर घूमता रहता है ॥ १ ॥

जो व्यक्ति धार्मिक कर्म नहीं करता तथा ज्ञान-विज्ञान से शून्य है वह उदरम्भरि (पेटू) पुच्छ-श्रृङ्गरहित पशु के समान जानना चाहिये ॥ २ ॥

२—तपःप्रधानो नावमन्तव्यः—

शमप्रधानैस्तपसातिदीप्तैः,
संञ्चीयते वह्नि-समं हि तेजः ।
प्रदाहशीलं सुतपोऽस्ति यस्मात्,
भस्मत्वमायाति नरोऽवमन्ता ॥ ३ ॥

तपस्वी का निरादर नहीं करना चाहिये—

शमदमादि साधनों से युक्त तपस्वी पुरुष अग्नि के सदृश तेज को एकत्रित कर लेते हैं। क्योंकि तप (तेज) का स्वभाव जलाना है अतः तपस्वी का अनादर करने वाला नर स्वयमेव भस्म हो जाता है ॥ ३ ॥

३—सुखस्य हेतुः कः ?

तथ्यं नरा वच्मि न पक्षपातात्,
सर्वेषु लोकेषु सुखैक-हेतोः ।
सत्याग्रहाच्छ्रेष्ठतमोऽस्ति नान्यो–
दुराग्रहाद् दुष्टतमो न कश्चित् ॥ ४ ॥

सुख का हेतु क्या है ?

हे मनुष्यो ! मैं पक्षपात से नहीं, अपितु सत्य कहता हूँ कि सब लोकों में सुख का एकमात्र कारण सत्याग्रह से बढ़कर और कोई नहीं और दुराग्रह से बढकर कोई दुष्ट नहीं है ॥ ४ ॥

४—प्रशासनकर्तुरेकस्य परिषदो वा दुराग्रह-निष्ठ-चित्तमेव प्रजाभ्यो दुःखाय कल्पते—

निरुद्ध्य दुर्दान्तमनोविकारान्,
प्राज्ञाः ! समर्यादमुदाहरन्तु ।
सत्याग्रहः स्याद् यदि भूपचित्ते,
कुतः प्रजानां दुरिताग्रहः स्यात् ॥ ५ ॥

एक शासनकर्त्ता का या परिषद् का दुराग्रह युक्त चित्त ही प्रजा के दुःख का कारण हो जाता है—

हे विद्वानो ! दुर्दान्त मनोविकारों को रोक कर मर्यादा सहित उदाहरण दो कि यदि राजा के चित्त में सत्याग्रह हो तो प्रजा के मन में दुराग्रह कहां से हो ॥ ५ ॥

५—राज्ञो मनः कदा सत्याग्रहक्षमं भवति ?

यावदेव नृपचेतसि स्फुरत्येष सत्यज-विवेक-दीपकः ।
तावदेव भवति श्रद्धा-ग्रह-प्रीतिमाननृत-विमोचनेच्छुकः ॥ ६ ॥

राजा का मन कब सत्याग्रह के योग्य होता है ?

जब तक राजा के चित्त में सत्यज्ञान का दीपक जलता रहता है तभी तक राजा श्रद्धालु, प्रीतियुक्त और असत्य के छुड़ाने का इच्छुक रहता है ॥ ६ ॥

६—महतां चरितं दुर्बोध्यं भवति—

(शेष २३ पृष्ठ के नीचे)

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक की अचूक औषधियाँ

च्यवनप्राश (सर्वोत्तम रसायन)

इसी ऋतु के ताजे आंवले से तैयार किया गया स्वादिष्ट, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातु-क्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका (निरन्तर) सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य १ पाव का दो रुपया, ७) सेर

स्वास्थ्यवर्धक चाय

यह चाय स्वदेशी, ताजी एवं शुद्ध जड़ी-बूटियों से तैयार की गई है। वर्तमान चाय की भाँति यह नींद और भूख को न मार कर खाँसी, जुकाम, नजला, सिरदर्द, खुश्की, अजीर्ण, थकान, सर्दी आदि रोगों को दूर भगाती है। मस्तिष्क एवं दिल को शक्ति देती है।

मू० १ छटांक।-)

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है। इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजले) की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास (खांसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपेदिक) श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढंग की एक ही औषधि है।

५) बड़ी शीशी

हवन सामग्री

यह हवन सामग्री सैकड़ों सुगन्धित, पौष्टिक, बलवर्धक औषधियों से तैयार की जाती है। ऋतु अनुकूल ताजा और शुद्ध सामग्री का ही यज्ञ करना महत्व रखता है। दैनिक हवन के प्रेमियों ने इसे अपनाया है। यज्ञ-महायज्ञ और संस्कार तथा पर्वों के लिये यह उपयोगी सिद्ध हुई है।

मूल्य १।) सेर

कुछ महानुभावों की सम्मतियां

"आर्य आयुर्वेदिक फार्मेसी" गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की रसायनशाला में निर्मित 'बलदामृत' का सेवन किया। वास्तव में मन्दाग्नि एवं मस्तिष्क की निर्बलता निवारण करने में अनुपम रामबाण सम अमृत औषध है। मेरे रोग को दो दिनों में नष्ट कर मुझे शक्ति-सम्पन्न बनाया और प्रतिदिन मेरी क्षुधा प्रदीप्त होने लगी। मैं मस्तिष्क का कार्य दिन भर करने पर भी नहीं थकता हूं। यहीं रह कर मैंने २५ दिन में ३०३ श्लोक ब्रह्मर्षि विरजानन्द-चरित के निर्माण किये। अनेक रोगों हर (जो विज्ञापन में वर्णित हैं) सचमुच अतुल लाभकर बलप्रद औषध रसायन है। 'हाथ कंगन को आरसी क्या ?

मेधाव्रताचार्य पो० पेवला (नासिक)
'दयानन्द दिग्विजय' महाकाव्यकार

"बलदामृत" औषधि ने मेरे अन्दर जवानी का संचार किया। साथ-साथ च्यवनप्राश का भी प्रयोग, दोनों के कारण मेरे अन्दर वह फुर्ती है कि जो कभी २० साल की आयु में थी। आज मेरी आयु ५० साल की है परन्तु "आर्य आयुर्वेदिक फार्मेसी गुरुकुल झज्जर" की दोनों औषधियों द्वारा मेरे जीवन में बचपन की लहर दौड़ रही है। च्यवनप्राश तो वह है जो च्यवन ऋषि ने खाया था जितनी भी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। अगर इन दवाइयों के होते हुए भी कोई वृद्ध हो तो उसकी ना समझी है।

पृथ्वीसिंह बेधड़क कविरत्न आर्योपदेशक

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इस के लगाने से आँखों के सब रोग-जैसे आँख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट) दूर का कम दीखना (लांग साइट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आँख के सब रोगों की राम वाण औषध है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आँखों को कमल की तरह साफ स्वच्छ रखता है। बुढ़ापे तक आँखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है।

सेवन विधि-पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रातः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ।।) शीशी

कुछ महानुभावों की सम्मयियां

I have used Netra Jyoti Surma. After a great search I have found a really good eye soother. I have put my whole family on it.

R. R. Kumaria Principal govt. Collage

(भावार्थ) मैंने नेत्र ज्योति सुर्मे का प्रयोग किया। बहुत बड़ी खोज के पीछे यथार्थ में एक बहुत श्रेष्ठ आँखों को शान्त करने वाली औषध प्राप्त हुई। मैंने अपने सारे परिवार के लिये यह (गुरुकुल झज्जर का सुर्मा) प्रयोग करने के लिये दे दिया है। —आर० आर० कुमरिया

प्रिंसिपल गवर्नमेंट कालेज रोहतक

सुर्मे तो पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं परन्तु इतना लाभप्रद और सस्ता सुरमा बाजार में मिलना कठिन ही नहीं असम्भव है। स्वयं मेरी माता जी ने इस नेत्र ज्योति सुर्मे का प्रयोग किया था और इसको अत्यन्त लाभदायक पाया। यह रसायनशाला गुरुकुल झज्झर का नेत्रज्योति सुर्मा नेत्रों के लिये एक बहुत अच्छा और सस्ता सुर्मा है। —रघुवीरसिंह मुख्याध्यापक

मिडिल स्कूल बख्तावरपुर देहली राज्य

त्रिफलादि घृत

यह घृत आंखों के लिये अत्युत्तम है। इसकी जितनी प्रशंसा करें, थोड़ी है। यह आँखों के समस्त रोगों के लिये रामवाण है, इसके सेवन से नेत्रों का कोई भी रोग नहीं रहता। इससे रतौंधी, आँखों की खुजली, पानी जाना, धुन्ध, जाला इत्यादि सब दूर होते हैं। आंखें निर्मल होकर चमकने लगती हैं। सौ वर्ष तक नेत्र-ज्योति नवयुवकों के समान बनी रहती है। मोतियाबिंद को भी लाभदायक है। आँखों के छोटे बड़े सब रोगों को हितकारी है। सेवन विधि—६ माशे से एक तोले तक दूध में डाल कर अथवा मिश्री मिला कर या भोजन के साथ प्रातः सायं सेवन करें। मूल्य आध पाव ४) रु०

ब्राह्मी घृत

यह घृत आयुर्वेद शास्त्र की विधि के अनुसार शुद्ध गोघृत से बनाया गया है। इसका सेवन कुष्ठ (कोढ़) मृगी (हिस्टीरिया) मस्तिष्क की निर्बलता चक्कर आना, याद किये हुये पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है और जिसकी स्मरण शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिये श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी, दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष और सब प्रकार के धातु प्रमेह को दूर करता है। इसके सेवन से स्मरणशक्ति खूब बढ़ती है।

सेवन विधि—६ माशे से १ तोले तक दूध में डाल कर अथवा मिश्री मिलाकर प्रातः सायं सेवन करें।

मू० आध पाव ४) चार रुपये।

त्रिफलादि घृत और नेत्र ज्योति सुर्मा

मै अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूं कि नेत्र ज्योति सुर्मा और त्रिफलादि घृत रसायनशाला गुरुकुल झज्जर के जितने गुणकारी सिद्ध हुए हैं उतने किसी अन्य फार्मेसी के नहीं। इन से आश्चर्य जनक लाभ होता है।

वैद्य सोमवीर आर्य आयुर्वेदाचार्य M. A. M. S.

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक

संस्था समाचार

आतुरालय

गुरुकुल झज्जर में दश सहस्त्र रुपये से अधिक की लागत से आतुरालय भवन बन कर तैयार हो गया है। इसमें आठ रोगी रक्खे जा सकेंगे। गुरुकुल के चारों ओर ग्राम हैं ग्रामीण जनता इससे अधिक लाभ उठा सकेगी।

इस आतुरालय के लिये एक वैद्य तथा एक उपवैद्य तथा औषधियों की आवश्यकता है। यदि कोई परोपकारी दानी महानुभाव उपरोक्त तीनों आवश्यकताओं की पूर्ति कर दे तो पुण्य होगा। —निवेदक मुख्याधिष्टाता

सम्मतियाँ

"गुरुकुल झज्जर के आचार्य ब्र० भगवान्‌देव के तत्त्वावधान में निकलने वाला यह मासिक अपने नाम के अनुरूप सामग्री से सजा रहता है। भारतीय आदर्शों के अनुसार व्यक्तिगत सुधार व समाज सुधार सम्बन्धी लेख पत्र की विशेषतायें प्रदर्शित करते हैं।"

"शिक्षा सुधार" मुरादाबाद

समाज सुधार करने में "सुधारक" पत्र का पहला हाथ है, यह सभी प्रकार की कुरीतियों को हटाकर समाज की भलाई में तत्पर है अर्थात् भूलों को मार्ग दर्शाने वाली, गिरतों को उठाने वाली, जीवन में सुधार के नाते हर एक के दर्द की दवा है। रामप्रसाद "आर्य"

अध्यापक प्रा० स्कूल भेडपटी (महेन्द्रगढ़)

"सुधारक" का व्यायाम विशेषांक पढकर नव जीवन का सञ्चार हो रहा है। स्वास्थ्य प्रेमी विशेष कर ब्रह्मचारी इस में बतलाये हुए ढङ्ग से नियमित व्यायाम आरम्भ कर दें तो ब्रह्मचर्य वा वीर्य की रक्षा करना वाम हस्त का कार्य है। मैं यह इसलिये कहता हूं कि मैं ने स्वयं अनुभव किया है। ब्र० धर्मपाल आर्य सूप (मेरठ)

अक्तूबर मास का सुधारक पढ कर बड़ी ही प्रसन्नता हुई। हार्दिक धन्यवाद। ईश कृपा से पूर्ण निश्चय है- सुधारक पत्रिका अवश्य ही वास्तविक सुधारक सिद्ध होगी।

आनन्दभिक्षु वानप्रस्थ
आर्यसमाज कंपाला (ईस्ट अफ्रीका)

समस्त हिन्दी-पहेलियों पर सारगर्भित
एवं
अधिकार-पूर्ण टिप्पणी करने वाला
विचार-सार
(पाक्षिक)
वार्षिक मूल्य तीन रुपया
एक प्रति दो आने
नमूना के लिए दो आने का टिकट भेजें।
प्रत्येक शहर में एजेण्टों की आवश्यकता है।
'विचार-सार' पाक्षिक, मथुरा

हमारे कारखाने में यज्ञ तथा पूजा
आदि का सर्व प्रकार का
समान तैयार किया
जाता है।
निर्माता
सीताराम आर्य एण्ड संज़
१७९ लाजपतराय मार्कीट, देहली।

(२० पृष्ठ का शेष)

नृभ्यो मेघ इव प्रयच्छति सदा सत्योपदेशामृतं,
तृप्तास्तेन जनाः स्वकर्म-निरताः स्वेष्टं लभन्ते मुदा।
शान्तात्मा सुतरां प्रयाति गत-भीरुच्चैःपदं शाम्भवं,
दुर्बोधं महतामगम्यचरितं सत्याग्रहं कुर्वताम् ॥७॥

महापुरुषों का चरित दुर्बोध होता है—

मनुष्यों को सदा मेघ कि भान्ति सत्योपदेशामृत का पान करवाता है, उससे संतृप्त हुए मनुष्य अपने अपने कर्म में लगे हुए इष्ट फल को प्राप्त करते हैं। वह निर्भय, शान्तात्मा अत्युच्च मोक्षपद को प्राप्त करता है अतः महापुरुषों का चरित दुर्बोध है, सत्याग्रह करो।

पता

ग्राहक संख्या ४०२
सेवा में श्री— जगदीशचन्द्र जी विर
मु० C/o मुरारी ब्रादर्स
पो० कमलानगर देहली
जि०

स्मरणीय वचन

(श्री स्वामी शान्तानन्द जी महाराज आर्यसमाज ब्यावर)

१. परमात्मा से दो वस्तुओं की सर्वात्मना प्रार्थना करो, सुबुद्धि और आरोग्यता।

२. प्रत्येक कार्य सत्य और असत्य को विचार कर करो।

३. धर्म से धन कमाओ, अधर्म की कमाई से बुद्धि बिगड़ जाती है।

४. जीवन समय से बना है, दिनचर्या बनाकर काम करने से प्रत्येक काम समय पर हो जाता है। समय को वृथा खोना और आत्मघात करना एक ही बात है।

५. कार्य आरम्भ करने से पहिले उसके हानि-लाभ को शान्ति से विचार लो एवं बुद्धिमानों और ज्ञानियों से सलाह लेलो।

६. दूसरों के साथ ऐसा व्यवहार करो जैसा कि तुम दूसरों से अपने लिये चाहते हो।

७. दूसरों की बुराई करने और सुनने का स्वभाव छोड़ दो।

८. बुद्धिमान् वह है, जो सुख और दुःख दोनों को शान्ति से सहन करले।

९. बाहर के शत्रुओं से आन्तरिक शत्रु-काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, और ईर्ष्या अधिक हानि-कारक हैं, इनसे सदैव बचो।

१०. अपने विचारों में दुर्बलता और उत्साह-हीनता न आने दो।

११. सुख और दुःख तो कर्मानुसार ईश्वराधीन हैं, फिर कर्तव्य पालन में किसी से भय खाने की क्या आवश्यकता है?

१२. शत्रुओं की संख्या में वृद्धि न होने दो। सब को मित्र की दृष्टि से देखो।

१३. जो मनुष्य अपनी वाणी और लेखनी को वश में नहीं रख सकता, उसके मित्र भी उसको संकट से नहीं बचा सकते।

१४. कृपण मनुष्य बहुत से काम स्वयं बिगाड़ लेता है, उदारता और दानशीलता नेकनामी का द्वार है। दान देने के अभ्यासी बनो।

१५. कटाक्षयुक्त बातों से अपने भी पराये बन जाते हैं।

॥ भोजन—विशेषाङ्क ॥

गतवर्ष आपकी सेवा में सुधारक के दो विशेषाङ्क एक गो-अंक और दूसरा व्यायाम-सन्देशाङ्क उपस्थित किये थे, जिनको सभी पाठकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा उनको हृदय से अपनाया।

पाठकों को यह जानकर अति प्रसन्नता होगी कि इस वर्ष सुधारक का विशेषाङ्क मार्च तथा अप्रैल दोनों मासों का सम्मिलित "भोजन-विशेषाङ्क" होगा। जिसमें भोजन-सम्बन्धी सभी ज्ञातव्य विषयों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला जायेगा, अर्थात् मनुष्य का वास्तविक भोजन क्या है? भोजन कैसा हो? कब करें, कैसे करें? कितना करें? किस अवस्था में करें और किस में न करें। सात्विक, राजस, तामस भोजन के गुण दोष, किन किन पदार्थों को एक साथ न खाना चाहिये, किस आयु के व्यक्ति के लिये कौनसा भोजन श्रेष्ठ है इत्यादि सभी विषयों का खोजपूर्ण, पुस्तकाकार लगभग २०० पृष्ठों की उत्तम सामग्री अन्यत्र किसी भी एक पुस्तक में न मिलेगी।

यह अंक उन्हीं सज्जनों को मिल सकेगा जिनका सुधारक का चन्दा आ गया [illegible] फरवरी तक आ जायेगा। पाठक—महानुभावों से निवेदन है कि २) चन्दा भेजकर शीघ्र ही ग्राहक बन जावें, जिससे कि पुनः पश्चात्ताप न करना पड़े।

—व्यवस्थापक सुधारक

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

ओ३म्

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष २
अङ्क ६

गुरुकुल झज्जर (रोहतक), माघ-फाल्गुन सं० २०११ वि०
फरवरी १९५५—दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक प्रति का ≡)

शास्त्रार्थ रणकेसरी वेदज्ञ व्यासदेव शास्त्री एम. ए.

आर्य जगत् के शास्त्रार्थ महारथी विद्वानों में श्री पं० व्यासदेव जी शास्त्री एम. ए, एम. ओ. एल, एल एल. बी. अग्रगण्य थे। वेद-वेदाङ्गों के पारंगत विद्वान् होते हुये आप पाश्चात्य साहित्य के भी मर्मज्ञ थे। शास्त्रार्थ में निर्भीकता आप का विशेष गुण था। आप के हृदय सागर में आर्य जाति और आर्यावर्त्त राष्ट्र का प्रेम प्रबल तरंगों में प्रवाहित रहता था। आर्य जाति के सर्व सम्प्रदायों को वेद की शरण में लाना आप का लक्ष्य था। ऐसे प्रकाण्ड विद्वान् का हस्तलिखित ग्रन्थ अप्रकाशित पड़ा है। इस में १ हजार से ऊपर वेद मन्त्रों के प्रमाण दिये गये हैं। वेदों के ऋषि, देवता, छन्दः और स्वर पर यह पाण्डित्य पूर्ण रचना है। क्या कोई वेद-प्रेमी इस ग्रन्थ निधि को प्रकाशित करने का यश प्राप्त करेगा?

* * *

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक

सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति

सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

इस अंक की विषय-सूची

विषय	लेखक		
ब्रह्मचर्य-महत्वम्	श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न	पृ०	३-४
आर्थिक सुधार	सम्पादकीय	,,	५-६
राष्ट्रनिर्माण में गुरुकुल का स्थान	श्री मुनि देवराज विद्यावाचस्पति	,,	७-८
शाकों का राजा बथुवा	श्री आचार्य भगवान् देव	,,	९-१०
हृदय-रोग और इंजेक्शन	श्री श्रीराम द्विवेदी आयुर्वेदाचार्य	,,	११-१३
बाल शिक्षा	श्री शान्तानन्द भिक्षु	,,	१४-१६
संस्था समाचार		,,	१९-२०
सूक्तय:	ब्र० वेदव्रत	,,	२१

◆

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—आर्यसमाज या वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं ली जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है।

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संस्कृत में करें, उत्तर के लिये जवाबी कार्ड डालें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चोथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	९)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५ प्रतिशत अधिक।

,, तृतीय १० प्रतिशत अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

(श्री पण्डित मेधाव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्)

दिव्याः पक्षिगणा गिरीन्द्रवनजाः सिंहादयः प्राणिनो-
ग्राम्या गोमहिषाश्वकुक्कुरमुखा नीरस्थमत्स्यादयः ।
सर्वे ब्रह्मनिदेशपालनपरास्ते ब्रह्मचर्यावनं
कुर्वाणा ऋतुगामिनो भगवतः सृष्टौ मनुष्येतरे ॥१०७॥

अर्थः—भगवान् की सृष्टि में मनुष्य से भिन्न आकाशचारी पक्षी, पर्वत और वन में उत्पन्न सिंह आदि, जलनिवासी मच्छली आदि जितने भी प्राणी हैं, वे सब ब्रह्म आज्ञा पालन में तत्पर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए ऋतुगामी बने हुए हैं ।

तद्ब्रह्मचर्योत्तमवायुमण्डले ।
व्याप्ते त्रिलोक्यामयि मानव ! त्वया ।
तद्ब्रह्मचर्यं तपसा निषेव्यतां
तदन्तरेण स्थितिरेव नास्ति ते ॥१०८॥

अर्थः—हे मनुष्य । त्रिलोक में व्याप्त ऐसे अत्युत्तम ब्रह्मचर्य के वातावरण में तपश्चरण से तू सर्वसिद्धिकारी ब्रह्मचर्य का सेवन करले, अन्यथा उसके बिना तो तेरा जीवन टिक ही नहीं सकता !

मन्त्रः—पृथक् सर्वे प्राजापत्याः प्राणानात्मसु बिभ्रति
तान्सर्वान् ब्रह्म रक्षति ब्रह्मचारिण्याभृतम् ॥
(अथर्व० ११।५ २२)

प्राजापत्याः पृथक् सर्वे प्राणानात्मसु बिभ्रति ।
ब्रह्म रक्षति तान्त्सर्वानाभृतं ब्रह्मचारिणि ॥१०९॥

अर्थः—सभी प्रजापति ईश्वर के नियमों से उत्पन्न हुए प्राणी अपने में पृथक्-पृथक् रूप से प्राणों को धारण कर रहे हैं । एवं ब्रह्मचारी में संगृहीत हुआ वेद ज्ञान उन सब की रक्षा करता है ।

वेधस्सन्नियमैः कृतास्तनुभृतः प्राणान् पृथग् बिभ्रति
सर्वे स्वात्मसु रक्षति व्रतिधृतं ज्ञानं परं ब्रह्मणः ।
तान्सर्वान् विविधाकृतीन्प्रकृतिता भिन्नान्त्समं प्राणिनः
संसारो न हि जीवितुं प्रभवति ज्ञानं विना वैदिकम
॥११०॥

अर्थः—जगन्नियन्ता के सन्नियमों से उत्पन्न सब शरीरधारी अपने अपने शरीर में प्राणों को धारण कर रहे हैं । ब्रह्मचारियों में धारण किया हुआ ब्रह्म का उत्कृष्ट ज्ञान विविध आकृतिवाले स्वभाव से भिन्न उन सब प्राणियों की समानता से रक्षा करता है । भोले भाइयो ! वैदिकज्ञान के बिना तो संसार जीवित रह ही नहीं सकता ।

मन्त्रः—देवानामेतत् परिषूतमनभ्यारूढं चरति रोच-
मानम् । तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्मज्येष्ठं देवाश्च
सर्वे अमृतेन साकम् ॥ (अथर्व० ११।५।२३)

तद् देवानां ब्रह्मचर्यं हि सारं
यन्नाक्रान्तं रोचमानं सदैति ।
तस्माज्ज्येष्ठं ब्राह्मणं ब्रह्मजातं
सर्वे देवाश्चामृतेनैव साकम् ॥१११॥

अर्थ—अतः ऋषि मुनियों का सार-भूत किसी से आभिभूत न होने वाला यह ब्रह्मचर्य सदा से चमकता हुआ आ रहा है । उसी के प्रताप से सर्वोत्कृष्ट ब्रह्मसम्वन्धि ज्ञान उत्पन्न होता है । और उसी से सम्पूर्ण देव ब्रह्म के साथ सम्बन्ध स्थापित करते हैं ।

विना ब्रह्मचर्यं न देवाधिदेवो—
विना ब्रह्मचर्यं न देवोऽस्ति किञ्चित् ।
बिना ब्रह्मचर्यं न देवस्य सृष्टि—
र्जना ब्रह्मचर्यं ततः पालयन्तु ॥११२॥

अर्थ—ब्रह्मचर्य के बिना देवाधि देव "ओ३म्" नहीं है, ब्रह्मचर्य रहित देव कुछ नहीं है, तथा ब्रह्मचर्य रूप अटल नियम को तोड़ने वाली भगवान् की सृष्टि भी नहीं है अतः हे मनुष्यो ! ब्रह्मचर्य का पालन करो ।

मन्त्रः—ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद् बिभर्ति तस्मिन् देवा
अधिविश्वे समोताः प्राणापानौ जनयन्नाद् व्यानं
वाचं मनो हृदयं ब्रह्म मेधाम् (अथर्व ११।५।२४(

पानी फिर गया। लोग प्रसन्न हो गये। सरकार भी घमण्ड में चूर होकर समझती है कि राष्ट्र की अन्न सम्पत्ति बढ़ गई। कल कारखानों के लिये बिजुली घर-घर पहुंचा दी गई। यह सब कुछ ठीक। शिर झुकाकर हमने माना। परन्तु संसार में असम्भव कुछ नहीं होता। कोई भी शत्रु देश हमारे भाखरा जैसे बाँधों को यदि बमों से नष्ट कर डाले तो तब राष्ट्र की क्या गति होगी? विचारिये तो सही! तुरन्त वह जल प्रलय का महाविनाश होगा कि जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती! देशी स्वाभाविक साधन तो हमने छोड़ दिये। घर में न सरसों का तेल है न दीपक बत्ती। नलकों के भरोसे न कुंये हैं। नहरों के भरोसे सब जोहड़ तालाब, झीलें ध्यान से हटा दी गई। न घर का बढ़ई है न लुहार। न कोल्हू है न चक्की। सब कुछ बिजुली के सहारे पर जो कार्य होता था वह बिजुली के फेल होते ही स्वाहा! कारखानों, ट्रेक्ट्रों, रेलों, मोटरों, वायुयानों आदि में फूंके जाते पैट्रोल तथा मिट्टी के तेल से सब जलवायु दूषित कर दिया। समय पर वर्षा का नाम नहीं। आलसी और प्रमादी होकर घर-घर रोगी शालायें खुल गई। गौ और बैलों का नाम नहीं। दूध घी पर हड़ताल हो गई। मशीनों के साधन पर मनुष्य चलता था। जब मशीनों को चलाने वाली बिजुली ही नष्ट कर दी गई तो अब क्या होवे? यह सब कुछ आसुरी लीला का नंगा नाच है। हमने जो कुछ ऊपर कहा वह अनहोना नहीं। असम्भव नहीं। आँखें मींचने से कबूतर बिल्ली की झपट से बाहर नहीं हो जाता।

फिर इसका उपाय क्या है? इसका सरल, सीधा उपाय है आर्थिक सुधार। प्राचीन आर्थिक नीति का पालना "यज्ञ पद्धति" का ग्रहण है। उदाहरण के लिये हम केवल "यज्ञ" के एक मूलभूत अंग "हवन" को लेते हैं। आप देखिये—इस का महत्त्व! यदि हमारे राष्ट्र में घर-घर में प्रतिदिन दो छटांक घृत का भी हवन होवे। दो अमावस्या और पूर्णिमा के पाक्षिक यज्ञ होवें। ऋतु सन्धि कालों में पार्वणिक बृहद् हवन होवें, तो समस्त राष्ट्र का जलवायु शुद्ध होकर देश में नीरोगता छा जाय। अरबों रुपया विदेशी दवाओं में भेजने की बचत होवे। जंगल अधिक हों। गौ आदि पशुओं की अपार वृद्धि होने से घी, दूध पुष्कल मात्रा में देशवासियों को मिले। अभक्ष्य पदार्थ हटा दिये जावें। सात्विक भोजन से, बुद्धि, बल और वीर्य सूक्ष्म, शुद्ध और तीव्र होकर जीवन संयमी और ब्रह्मचर्य-पूर्ण होवे। सन्तान की वृद्धि भेड़ बकरियों के समान रुक जावे समय पर वर्षा होवे। अन्न और घास चारे की कमी न रहे। नहरों की आवश्यकता ही नहीं। जब प्रत्येक गांव, और नगर अपने में पूर्ण हो तो अधिक यातायात के साधनों की आवश्यकता भी नहीं। साधारण बैलगाड़ी, रथ, घोड़े आदि साधन जनता के उपयोग में आवें। पैट्रोल आदि गैसों का विनाशकारी धूआं रहे नहीं। रेलों और सड़कों में लाखों एकड़ रुकी भूमि गोचर भूमि और जंगलों का काम देवें। व्यापार के लिये भी बैल और घोड़े काम देवे। राष्ट्र स्वयं स्वावलम्बी बन जावे। आसुरी लीला के प्रलय का डर ही नहीं रहे। कोई अणुबम भी क्या कर सकता है? दैवी सम्पत्ति का घर-घर में वास हो जावे।

कोई कह सकता है कि विदेशी आक्रान्ता अपने आसुरी साधनों=अणुबमों, तोपों और वायुयानों द्वारा राष्ट्र की रक्षा को हड़प कर सकता है और देश फिर पराधीनता की बेड़ियों में जा सकता है। इसका उपाय क्या? उत्तर में निवेदन है कि राज्य संचालन, सेना, पुलिस और प्रशासन कार्य के लिये मुख्य-मुख्य स्थानों पर बड़े बड़े कारखाने हों। मुख्य-मुख्य सड़कें होवें। सेना के लिये वायुयान और अणु आदि शस्त्रास्त्र होवें, परन्तु जनता के उपयोग के लिये नहीं। देश को छोटे-छोटे प्रान्तों में न रखकर बड़े-बड़े ४–५ भाग ही कर दिये जावें। इस से प्रशासन ठीक होगा और वायुयान आदि साधनों को पर्याप्त संख्या में रखा जा सकेगा। अतः राष्ट्र पर विदेशी आक्रान्ता को मुँह तोड़ उत्तर दिया जा सकता है। राष्ट्र की सेना अति बलवती होनी आवश्यक है।

यदि समय रहते राष्ट्र के इस आर्थिक सुधार पर ध्यान दिया जावे तो राष्ट्र अनेकविध विपत्तियों से बच सकता है। परन्तु इधर ध्यान दे कौन? आर्य समाज एक ऐसी संस्था है जिसका प्राचीन वैदिक अर्थ नीति पर विश्वास है। यदि राजनीति में काम करने वाले आर्य नेता और कार्यकर्त्ता निःसंकोच वैदिक अर्थ नीति का प्रचार करें तो यह बात कुछ भी कठिन नहीं। किन्तु खेद से कहना पड़ता है कि आर्य नेता स्वयं भिन्न-भिन्न राजनीतिक दलों में फँसकर आत्म-शक्ति का ह्रास कर रहे हैं फिर आर्य अर्थ नीति पर ध्यान कौन देवे? हमें समय रहते वैदिक अर्थ पद्धति पर विचार करना और वर्तमान अर्थ नीति में सुधार करने का यत्न करना चाहिये। इसी में राष्ट्र का कल्याण, रक्षा और वृद्धि है।

राष्ट्र-निर्माण में गुरुकुल का स्थान

(श्री मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति)

(गताङ्क का शेष)

इस प्रकार के प्रबन्ध में व्यक्तिगत संपत्ति पर लोगों का अधिकार नहीं रहने से अनेक प्रकार के मुकदमेबाजी की उद्विग्नतायें नहीं रहेंगी। तथा लोगों का जीवन किसी अंश में सुख शान्तिमय तथा बाह्य दिखावे से अलग सचाई की तरफ ढलेगा। राष्ट्र के व्यक्ति विदेशों से व्यापार सीधा न करके, शासन विभाग के अन्दर व्यापार विभाग के अधिकारी विदेशों सें व्यापार करके, देश की अनेक उन आश्यकताओं को पूरा करेंगे—जिन आवश्यकताओं को, अपना राष्ट्र, पूरा करने में समर्थ नहीं है। इस प्रकार की योजना के अनुसार यदि हमारे राष्ट्र का संचालन-बल कार्य करे तो समुचित पथ पर चलते हुए हम किसी समय इस आदर्श राष्ट्र व्यवस्था पर पहुंच जाएंगे जिसका पूव निर्देश किया जा चुका है।

प्रश्न १६—शिक्षा का प्रसार

उत्तरः—शिक्षा के प्रसार के लिए आवश्यक है कि वर्तमान समय में एक अखिल-भारतीय विश्व-विद्यालय की स्थापना हो। जिसके द्वारा सभी विषयों और भाषाओं का शिक्षण पत्र व्यवहार पद्धति के द्वारा चलाया जाये। इससे लाभ यह होगा कि बहुत से विद्यार्थी जो वर्तमान समय में अध्ययन का बोझ नहीं सम्भाल सकते वे अपनी सुविधा के अनुसार विषयों की तैयारी करते हुए सफल हो सकते हैं। कितने ही विद्यार्थी अध्ययन काल में वा परीक्षाकाल में रोगी हो जाने के कारण या अन्य किसी प्रकार के कार्य की बाधा उपस्थित होने के कारण परीक्षा में सम्मलित होने से वंचित रह जाते हैं। वे भी अपनी सुविधानुसार तैयारी करते हुए इस पद्धति से पूर्ण लाभवान् हो सकते हैं। इस प्रकार जो शिक्षण विश्व-विद्यालयों में अभी तक दिया जारहा है उस शिक्षण में पूर्वोक्त बाधायें उपस्थित होने पर विद्यार्थियों का शुल्क का अनुचित बोझ अनेक समय विद्यार्थियों पर पड़ता है। वह बोझ भी इस पद्धति से दूर हो जाता है। बहुत से विद्यार्थी अवसर न मिलने पर विश्वविद्यालयों में प्रविष्ट नहीं हो सकते, परन्तु इस पद्धति से पूर्ण लाभ उठा सकते हैं। विद्यार्थियों का विश्वविद्यालयों के साथ जो छात्रावासों की रीति चली हुई है उसके व्यय का बोझ भी विद्यार्थियों पर नहीं पड़ेगा।

समय समय पर विद्यार्थी अपनी फीस नहीं भर सकते और विश्वविद्यालय में प्रविष्ट होनेसे वञ्चित रह जाते हैं। इस पद्धति से भिन्न भिन्न रुचि वाले विद्यार्थी अपने साथियों का ध्यान न करके अनेक प्रकार से काल यापन करते हैं। जिससे साथी विद्यार्थियों को बड़ी असुविधा रहती है। वह सब असुविधा पूर्वोक्त शिक्षण पद्धति के अनुसार दूर हो जाती है। बहुत से माता पिता अपने कार्य में बालकों की सहायता लेने के विचार से विश्वविद्यालयों में भेज ही नहीं सकते। जिस समय उनके बालक अपनी सुविध के अनुसार शिक्षण की तैयारी कर सकते हैं वह समय विश्वविद्यालय के कार्य क्रम से सम्बद्ध नहीं होता। परन्तु इस शिक्षण पद्धति के अनुसार वे भी अपनी सुविधा के अनुसार अभ्यास क्रम की तैयारी कर सकते हैं। इस प्रकार हम समझते हैं कि पत्रव्यवहार शिक्षण पद्धति का बड़ा महत्त्व है। शिक्षा का प्रसार शीघ्र से शीघ्र और अधिक से अधिक छात्रों में तथा अल्प व्यय में जितना अधिक इस पद्धति से हो सकता है वह अन्य पद्धतियों से नहीं। इस शिक्षण पद्धति में एक ही स्थान में सम्पूर्ण शिक्षाओं को केन्द्रित नहीं किया जाना चाहिये। जिस जिस कालिज को जिस

जिस स्थान में खोलने की सुविधा हो उसी उसी स्थान में उस उस विद्या का महाविद्यालय स्थापित हो। इस प्रकार सब भाषाओं का (देशी और विदेशी) तथा अन्य औद्योगिक शिक्षण और तत्त्वज्ञान का शिक्षण, सभी पत्रव्यवहार शिक्षण पद्धति से बड़ी उत्तमता से चल सकेगा।

प्रश्न १७—पुस्तकों और समाचार पत्रों का विवरण

उत्तरः—हम पहले कह चुके हैं कि सम्पूर्ण राष्ट्र शिक्षणालयों के जाल में बंटा हुआ होना चाहिये। प्रत्येक शिक्षणालय से सम्बन्ध एक एक वाचनालय और पुस्तकालय होना चाहिये। जितने वाचनालय हों वहां पर, वहां के निवासियों की योग्यता और अभिरुचि के अनुसार पत्र-पत्रिकाओं का वितरण होना चाहिये। किस किस प्रकार की कितनी कितनी मात्रा में और कहां कहां पर पत्र-पत्रिकाओं की आवश्यकता है उसी के अनुसार शिक्षा प्रसार मंत्री पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन करवाकर वितरण करने की योजना करे, और प्रत्येक पुस्तकालय में आवश्यक पुस्तकों को प्रकाशित करवाकर शिक्षा मन्त्री ही वितरण करने की व्यवस्था करे। इस प्रकार सामूहिक संग्रहों से लाभ उठाते हुये राष्ट्र के व्यक्ति, व्यक्तिगत संग्रह करने की वृत्ति से अलग रहते हुये पूर्ण लाभ प्राप्त कर सकते हैं। प्रकाशन का इसी प्रकार से नियन्त्रण रहते हुए अनेक प्रकार का अनुचित साहित्य, जो कभी प्रकाशित होता रहता है, वह प्रकाशित नहीं हो सकेगा और राष्ट्र के प्रकाशन कार्य पर व्यर्थ का बोझ नहीं पड़ेगा।

प्रश्न १८—यातायात

उत्तर—राष्ट्र की इस योजना में यातायात का प्रश्न बड़े महत्त्व का है। बिना सिक्के के चलन वाले राष्ट्र में यातायात कैसे हो सकेगा इस की कल्पना लोगों को आसानी से नहीं हो सकेगी। यह हो सकता है कि प्रारम्भ में इस में कुछ कठिनता का अनुभव हो, परन्तु लोगों के शिक्षित होने पर वैसी अव्यवस्था सम्भव नहीं है जैसी प्रतीत होती है। आजकल के वैज्ञानिक युग में रेल गाड़ियों के सम्बन्ध में सब से पहले हम निर्देश करते हैं कि रेलवे लाइन डबल होनी चाहिये। एक मार्ग जाने का रहे और एक आने का। गाड़ियां सब बिजली से चलने वाली होनी चाहियें। यात्रियों के बैठने की जगह सब एक जैसी हों। ऊंचे नीचे और बीच के दर्जों का भेद भाव न हो। अधिक से अधिक आधे आधे घंटे के बाद गाड़ियां चलती रहें। डबल लाइन होने से गाड़ियों के भिड़ने की सम्भावना नहीं होगी। पहले हमने मानव जनता को चार भागों में विभक्त किया है, शिक्षक, रक्षक, पोषक और सहायक। इन्हीं नामों से गाड़ियों के डब्बों का विभाग रहे। जो जिस विभाग का व्यक्ति हो वह उसी डब्बे में बैठे। समान कार्य करने वाले व्यक्ति साथ-साथ बैठने में ठीक रहते हैं। बैठने के जितने स्थान होंगे उन स्थानों पर नम्बर लगे हुये हों। डब्बों के बाहर लिखा हुआ हो कि कितने नम्बर से कितने नम्बर तक उस डब्बे में स्थान हैं। उसी के अनुसार यात्रियों के टिकटों पर उनका वर्ग और सीट का नम्बर लिखा हो। प्रत्येक वर्ग का व्यक्ति अपने वर्ग के चिह्न को बताकर स्टेशन पर टिकट ले सके। उसका टिकट नम्बर जिस डब्बे में हो वहीं जाकर उसको बैठना होगा। यात्री को अपना सामान—सामान रखने के डब्बों में, अपने सामान पर अपने पते का टिकट लगवा कर रेलवे कर्मचारी के सुपुर्द करना होगा। वह सामान यात्री को उसके निर्दिष्ट स्थान पर जहां उस को पहुंचना है रेलवे के आधीन तांगा आदि सवारी पर सुरक्षित पहुंचा दिया जायगा। अपरिग्रह राष्ट्र में राष्ट्रिय भावना से पारस्परिक सेवा कार्य होगा और चोरी आदि होने की चिन्ता का भय नहीं होगा।

निर्मित भोग्य सामग्री को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाने के लिये राष्ट्रहित की दृष्टि से विद्युत संचालित माल गाड़ियां पहुँचा देंगी। बहुत लम्बी-लम्बी सड़कें उन सुदूरवर्त्ती ग्रामों के बीच में से जायेंगी जिन सड़कों से ग्राम बहुत अधिक दूर नहीं रहेंगे। इन सड़कों पर रेलवे मोटर या विद्युत

(शेष पृष्ठ १० पर)

शाकों का राजा बथुवा

(ले०—आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर)

वास्तुकं वास्तु वस्तूकं वास्तुकं हिमलोचिका ।
शाकराजो राजशाकश्च चक्रवर्ती च कीर्तितः ॥
(राजनिघण्टुः)

वास्तूकं वास्तुकञ्च स्यात् क्षारपत्रं च शाकराट् ।
तदेव तु बृहत्पत्रं रक्तं स्याद् गौडवास्तुकम् ॥
प्रायशो यवमध्ये स्याद् यवशाकमतः स्मृतम् ॥ (भावप्रकाश)

वास्तुक, वास्तु, वास्तूक हिमलोचिका, शाकराज, राजशाक, शाकराट् चक्रवर्ती और क्षारपत्र—ये बथुवे के संस्कृत नाम हैं । इसी में जिसके बड़े पत्ते और लाल रङ्ग होता है उसको गौडवास्तुक कहते हैं । बथुवा प्रायः जौ के खेत में उत्पन्न होता है इसलिये इसका नाम यवशाक भी पड़ गया है ।

भाषा भेद से नाम भेद

हिन्दी—बथुवा, रक्त बथुआ ।
बंगाली—बेतुया ।
फार्सी—मुसेलेस्म सरमक ।

इङ्गलिश—White Goose foot (ह्वाईट गूज फुट) Purple goose foot, चिनोपोडियम अल्बम-Chenopodium Allbum, चिनापाड्यम् एट्रिपालाइसिस C. Atripolisis.

विवरण—बथुआ क्षुद्र और बृहत्, रक्त तथा हरित पत्र होने से दो प्रकार का होता है । बथुवे का क्षुप (पौदा) एक हाथ से लेकर चार हाथ तक ऊंचा होता है । छोटे बथुवे के पत्ते मोटे, चिकने तथा हरे रङ्ग के होते हैं और बड़े बथुवे के पत्ते बड़े और पुष्ट होने पर लाल रङ्ग के हो जाते हैं । बथुवा अधिकतर जौ और गेहूं के खेतों में उत्पन्न होता है । यह शीतकाल तथा गर्मी के आरम्भ काल में भारत के सभी प्रान्तों में पाया जाता है , इसके फूल छोटे-छोटे तथा हरे होते हैं, उनमें काले रँग के छोटे-छोटे बीज निकलते हैं । बथुवे में एक प्रकार का क्षार होता है । डाक्टर इस में "सी" विटामिन बहुत मात्रा में मानते हैं । बथुवा जब मिले, पर्याप्त मात्रा में खाना चाहिये ।

बथुवे के गुण—

वास्तुकं तु मधुरं सुशीतलं क्षारमीषदमलं त्रिदोषजित् ।
रोचनं ज्वरहरं सहार्शसां नाशनं च मलमूत्रशुद्धिकृत् ॥
(राजनिघण्टुः)

वास्तूकद्वितीयं स्वादु क्षारं पाके कटूदितम् ।
दीपनं पाचनं रुच्यं लघु शुक्रबलप्रदम् ।
सरं प्लीहास्रपित्तार्शःक्रुमिदोषत्रयापहम् ॥ (भावप्रकाशः)

दोनों ही प्रकार का बथुवा स्वाद में मधुर, खारी, पाक में चरपरा थोड़ा अम्ल और सुशीतल होता है । यह रुचिवर्द्धक, हल्का, दीपन पाचन करने वाला, बल-वीर्य को बढ़ाने वाला, प्लीहा (तिल्ली) रक्त पित्त, ज्वर सब प्रकार का अर्श (बवासीर) और क्रिमि रोगों का नाश करने वाला है । तीनों दोषों को जीतने वाला और रेचक अर्थात् मल-मूत्र की शुद्धि करने वाला है । इस से पेट की शुद्धि खूब होती है । एक रोगी को मलबन्धा (बन्धा) हो गया, सब औषधियां निष्फल हो गईं । उस रोगी ने किसी के कहने से बथुवा उबाल छानकर पर्याप्त मात्रा में बथुवे का जल पी लिया, इसी से उसका बन्धा टूट गया, लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ और रोगी बच गया ।

वास्तूकोऽग्निकरो रसे च मधुरः पित्तापहश्चक्षुषः,
स्निग्धो वातविनाशनः क्रुमिहरः पित्तादिदोषापहः ।
वर्चोमूत्रविशोधनः प्रथमतः श्लेष्मामयानां तथा,
शाकानामपि चोत्तमो लघुतरः पथ्यः सदा प्राणिनाम् ॥
(शालिग्राम निघण्टुः)

बथुवा जठराग्नि को दीप्त करने वाला, रस में मीठा, पित्तनाशक, नेत्रों के लिये हितकारी, स्निग्ध, क्रिमिनाशक, पित्तादि दोषों को नष्ट करने वाला, मल-मूत्र शोधक शाकों में उत्तम और हल्का तथा कफ के रोग वाले मनुष्यों के लिये सदैव हितकारी है ।

चरक शास्त्र ने बथुवे में "भिन्नवर्चस्तु वास्तुकम्" मल को भेदन करने वाला गुण अन्य शाकों की अपेक्षा विशेष माना है।

लाल बथुआ (चिल्ली)

सक्षारः कृमिजित् त्रिदोषशमनः सन्दीपनः पाचन-
श्चक्षुष्यो मधुरः सरो रुचिकरो विष्टम्भशूलापहः।
वर्चोमूत्रविशोधनः स्वरकरः स्निग्धो विपाके गुरु-
र्वास्तूकः सकलामयप्रशमनश्चिल्ली तदेवोत्तमा ॥
(सुषेण)

लाल बथुआ, क्षार युक्त, कृमिनाशक, त्रिदोषशमन करने वाला, दीपन, पाचन, नेत्रों केलिये हितकारी, सारक, रुचिकारक, विष्टम्भ (कब्ज) और शूल नाशक, मलमूत्र-शोधक, स्वर को उत्तम करने वाला, स्निग्ध, पाक में भारी, सब प्रकार के रोगों को शान्त करने वाला है और यह सब से उत्तम है।

चिल्ली वास्तुकतुल्या च सक्षारा श्लेष्मपित्तनुत्।
प्रमेहमूत्रकृच्छ्रघ्नी पथ्या च रुचिकारिणी ॥
(राजनिघण्टु)

चिल्ली (लाल बथुवा) बथुवे के समान गुणवाली है। क्षारयुक्त, कफपित्त प्रमेह नाशक, मूत्रकृच्छ्र निवारक, पथ्य और रुचिकारक है।

वास्तुकं मधुरं हृद्यं वातपित्तार्शसां हितम् ॥ (ह० स०)

बथुवा मधुर, हृदय को हितकारी तथा वातपित्त और बवासीर रोग वालों के लिये हितकारी है।

अर्शस्त्रिदोषारुचिजन्तुहारी, विस्रंसनो बुद्धिबलाग्निकारी।
क्षारो विपाके कटु वास्तुकः स्यात्तद्वच्च चिल्ली लघुपत्रयुक्ता ॥
(सुषेण)

बथुवा बवासीर, त्रिदोष, अरुचि और कृमिनाशक है। विस्रंसन, बुद्धिजनक, बलकारक, जठराग्नि-वर्धन, क्षार-युक्त, विपाक में कटु होता है और चिल्ली के भी गुण इसी के समान हैं।

विशेष गुण

१—चेचक में वमन कराने के लिये बथुवे के रस में शहद मिलाकर पिलाना चाहिये।

२—अग्नि से जल जाये तो बथुवे का रस लगाना चाहिये।

३—वातज्वर में बथुवे को उबालकर छानकर उसका पानी पिलाना चाहिये।

४—वायु की पीड़ा में बथुआ उबालकर थोड़ा सैंधा नमक मिलाकर गरम गरम बांधना चाहिये।

५—अरुचि में बथुवे का शाक दाल में पकाकर खाना चाहिये।

पृ० ८ का शेष

संचालित ट्राम चलेंगी। इन का सम्बन्ध रेलवे स्टेशनों से होगा। इस प्रकार उस राष्ट्र में जो अपरिग्रह राष्ट्र है, यातायात की सुचारु व्यवस्था होगी। विद्युत संचालित गाड़ियों में और ट्रामों में अन्दर ही यदि विद्युत उत्पादन यन्त्र लगा दिया जाय और उस से गाड़ियां चलें तो अलग से ऊपर तार लगाकर चलाने की व्यवस्था का बहुत सा श्रम बच सकेगा।

खानों से उत्पन्न हुआ कोयला राष्ट्रिय औद्योगिक कलाकौशल और शिल्प कारियों में नये नये आविष्कार करने के साधनों के लिये प्रयुक्त होगा। इस से रसायन शास्त्र और भौतिकी तथा सूक्ष्म प्रकृति के अन्वेषण कार्यों में विशेष सुविधा होगी।

यातायात के विचार के साथ लगता हुआ डाक तार विभाग है। राष्ट्रिय कार्यों के संचालक के लिये इस की बड़ी आवश्यकता है। अपरिग्रह राष्ट्र में जिस में सिक्के का चलन नहीं है, डाक तार विभाग के पत्र-पत्रिका किसी राष्ट्रिय चिह्न विशेष के साथ युक्त हुए हुए उसी प्रकार से चलते रहेंगे जिस प्रकार से अब बिना टिकट लगे डाक तार विभाग के चलते रहते हैं। परन्तु यह आवश्यक होगा कि राष्ट्र में जितने विभाग चल रहे हैं उन सब के पत्र पत्रिकाओं पर उस उस विभाग का द्योतक ऐसा चिह्न, जिस से उस उस विभाग के पत्र पत्रिका की पहचान हो सके, उस पर छपा हुआ होगा, इस से यह लाभ होगा कि बिना सिक्के के चलन के अपरिग्रह राष्ट्र में पत्र-पत्रिकाओं के विभागानुसार वितरण में सुविधा होगी। प्रजा के व्यक्तियों में व्यर्थ का पत्र व्यवहार बिल्कुल बन्द होजायगा। यदि किसी व्यक्ति को कभी कोई विशेष पत्र लिखने की आवश्यकता हुई तो उसे अपने विभाध्यक्ष से पत्र मिल सकेगा।

(समाप्त)

हृदय-रोग और इंजेक्शन

(श्री श्रीराम द्विवेदी आयुर्वेदाचार्य, लखनऊ)

आजकल हृदयरोग बढ़ रहे हैं और तेजी से बढ़ रहे हैं। इस बात को नवविज्ञानाचार्य डाक्टर भी मानने लगे हैं। हृद्रोग के विभिन्न क्रियाकलापों को देख कर वे चिन्तित भी हो रहे हैं। अधिकांश लक्षण ऐसे भी मिलने लगे हैं जिन्हें वे समझ भी नहीं पाते कि ये विकार क्यों और कैसे उत्पन्न हो गये ? ऐसे हृद्रोगों की निदान-विपरीत या व्याधि-विपरीत चिकित्सा भी एक समस्या बन गयी है ।

पाश्चात्यों में जिस भाँति मानस रोग बढ़ रहे हैं भारतीयों में उस भाँति हृदय के रोग भी बढ़ रहे हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि शहरों में और शिक्षित समुदाय में जिन में नवविज्ञान की चिकित्सा सुलभ है वहीं यह हृद्रोग (हार्टडिजीजेज) बढ़ते दिखाई दे रहे हैं। देहातों में नहीं। वहां नवविज्ञान की चिकित्सा भी सुलभ नहीं ।

इस स्थिति में सहज ही यह विचार उत्पन्न हो जाता है कि ऐसा क्यों ?

देश के कई विद्वान् डाक्टरों से मैं ने सैद्धान्तिक और निदान की दृष्टि से इस पर विचार विमर्श किया। इस आपसी वार्तालाप में उन्होंने स्पष्टतः यह स्वीकार किया कि इसका कारण समझ में नहीं आता। हां, इतना कहा जा सकता है कि जमाने की बदलती हुई नयी परिस्थितियां और चिन्ता, भय, शोक आदि ही कारण हो सकते हैं। दो विद्वानों ने वर्तमान आर्थिक विश्रृङ्खलता और पौष्टिक आहार का अभाव बतलाया ।

डाक्टरों के इस हृद्रोग सम्बन्धी कारण ज्ञान को छोड़ कर उन के लक्षणात्मक विकारों का विज्ञान अब तक इस प्रकार है (१) हृदयजाड्य, (ब्राडिकार्डिया) (२) हृदयशोष (ऐट्रोफी आफ दी हार्ट) (३) हृदय स्तम्भ (हार्ट फैल्यूअर) (४) हृदय द्रव (पेरीकार्डियल एफ्यूजन) (५) हृदय ग्रह (टाइटनेस आफ दी हार्ट) (६) हृदय स्तिमित (मिस इण्टर, सिस-आफ हार्टबीट) (७) हृदयोद्वेष्टन (ऐंडिनापेक्टोरिस) (८) हृदय स्पन्दन (पल्पिटीशन आफ दी हार्ट) (९) हृदय विद्रधि (कैंसर आफ दी हार्ट) (१०) हृदय गौरव (हाइप्रस्ट्रोफी आफ हार्ट) (११) हृदय शून्यता, हृदय शूल, आदि अष्टादश विकार मुख्य तथा अनेकों लक्षणात्मक गौण विकार, जिन पर नवविज्ञानाचार्यों ने विद्वतापूर्ण बहुत कुछ लिखा है ।

किन्तु उनके निदान-विनिर्णय और चिकित्सा विज्ञान में कोई निश्चित मत स्थिर न कर सके। वे कुछ को अज्ञात कारण और बहुतों को अन्य रोगों का उपद्रव मानकर उनका उपचार करते हैं। इन सन्दिग्ध निदानोपचारों से हृद्रोगों में कोई कमी नहीं हुई, प्रत्युत वे बराबर बढ़ ही रहे हैं। नवविज्ञान के इन अनाख्येय, असाध्य प्रायः रोगों में त्वरित मौत आये दिन बराबर बढ़ती जाती हैं ।

आयुर्वेद में कोई भी हृद्रोग असाध्य नहीं माना गया है। वे पांच हैं। हृदय रोग का निदान—

आयुर्वेद और हृद्रोग

अत्युष्ण, गुर्वन्न, कषाय-तिक्त-श्रमाभिघाताध्यशनप्रसंगैः ।
सचिन्तनैर्वेगविधारणैश्च हृदामयः पंचविधः प्रदिष्टः ॥

इन सामान्य कारणों से हृदय रोग उत्पन्न होते हैं ।

त्रिदोष विज्ञान से उनके विभिन्न प्रकार आयमन, तुदन, निर्मथन, दीर्यन, स्फोटन, पाटन, वेपथु, वेष्टन, स्तम्भ, प्रमोह, शून्यता, दररिका, हृद्दाह, तिक्तता, अम्लोदिगरण, क्लम, तृष्णिक, संमूर्च्छक भ्रामक, स्वेदक, सुप्त, स्तिमित, भारिक, तान्द्रिक, अरुचिक, गौरवक, संस्त्रावक, अग्नि-मादक, माधुर्यक, इन क्रमिक त्रिदोपज विकारों के सान्निपातिक दृष्ट या अनेकों विकारों की उत्पत्ति होती है ।

इसके अतिरिक्त कृमिलक्षणात्मक भी हृद्रोग माना है, जिससे तुद्यमान, छिद्यमान, भिद्यमान, उत्क्लेशक, ष्ठीवनक,

सचीतोदक, शूलक, हृल्लासक, नामक अरौचिक श्यावनेत्रक, शोषक आदि हृदय विकारों का विस्तृत वर्णन आयुर्वेद ने किया है। नवविज्ञानाभिमानी डाक्टर अभी तक इसके आधे विकारों का भी ज्ञान नहीं प्राप्त कर सके हैं। उन्हें यह समझना चाहिये। आयुर्वेद की दृष्टि में ये सभी साध्य हैं।

इसके अतिरिक्त आजकल के असाध्य त्वरित मारक हृद्रोगों का वैज्ञानिक वर्णन त्रिकाल द्रष्टा महर्षियों ने हजारों वर्ष पहले ही कर दिया है, पाठक इसे कौतूहल से देखेंगे।

आजकल जाने, बिना जाने प्रत्येक रोग की परिस्थिति में इंजेक्शन लगाये जा रहे हैं। आयुर्वेद में सूचीभेद, इन्जेक्शन, प्रयोग तभी माना गया है जब रोगी के औषधि देने योग्य मुखादि मार्ग सभी अवरुद्ध जड होगये हों और जीवन रक्षा का कोई भी उपाय शेष न हो, तब सूचीवेध द्वारा औषधियां शरीर में प्रविष्ट करायी जाती हैं। यों नहीं। रोगी की सामान्य स्थितियों में इन्जेक्शनों का क्या परिणाम होता है उसे महर्षियों ने इस भांति बताया है।

दूषयित्वा रसं दोषाः विगुणा हृदयं गताः ।
हृदि बाधां प्रकुर्वन्ति हृद्रोगं तं प्रचक्षते ॥

मांसपेशी और शिरादि द्वारा इन्जेक्शन की हुई वस्तु पहले रस को दूषित करती है।

रस क्या है ?

सम्यक् पक्वस्य भुक्तस्य सारो निगदितो रसः ।
स तु द्रवः क्षितः शातः स्वादुः स्निग्धश्चलो भवेत् ॥

रस का स्थान—

सर्वदेहचरस्यापि रसस्य हृदयं स्थलम् ।
समान-मरुता पूर्वं यदयं हृदये धृतः ॥

रस के कर्म—

आरुह्य धमनीर्गत्वा धातून् सर्वकायं रसः ।
पुष्णाति तदनु स्वीयर्व्याप्नीत्तिव तनुगुणैः ॥
गुणैः शीतस्निग्धपोषकतत्वैः ॥
मन्दवह्नि विदग्धस्तु कटुर्वाम्लो भवेद्रसः ।
स कुर्याद्बहुलान् रोगान् विपकृत्यं करोत्यपि ॥

इन्जेक्ट किया हुआ पदार्थ सर्वदेहचारी रस में प्रविष्ट होकर सीधे हृदय में ही आ जाता है। हृदय ही का रस स्थल है। वहां से धमन्यादि स्रोतों द्वारा सब धातुओं को पहुँचाता है। इस भांति इन्जेक्शनों द्वारा दूषित रस (जिसके संशोधन का कोई उपाय ही नहीं है) हृदय में पहुँचकर असाध्य हृद्रोग को उत्पन्न करता है। आयुर्वेद ने इसे—बहुत रोगोत्पादक विष—कृत्य कारी माना है। महर्षि सुश्रुत ने इसे विगुण मार्ग माना है, किसी भी पदार्थ या वस्तु में सारभूत और असारभूत तत्व रहते हैं वे प्रसाद और किट्ट कहलाते हैं।

जो भी भक्ष्य औषधि आदि मुंह से ली जाती है उसे आहार यन्त्र अपनी अद्भुत् रासायनिक क्रिया से विश्लेषण और संशोधन करके दो भागों में विभक्त कर देता है—एक सारभूत प्रसाद रस—जो शरीर का पोषक तत्व होता है, दूसरा असारभूत किट्ट, फुजला, होता है। इन्हीं के नाम सात्म्य और असात्म्य है।

असार यन्त्र इस सात्म्य सारभूत प्रसाद रस को शरीर के पोषण के लिये हृदादि अङ्गों को पहुँचाता है और असात्म्य या असारभूत किट्ट को शरीर से बाहर निकाल फेंकता है। मुख के द्वारा ग्रहण किए हुए औषधि आदि पदार्थों की यह सरल, स्वाभाविक निर्दोष क्रिया है। अब इन्जेक्शनों द्वारा लिये हुए औषधादि पदार्थों की विक्रिया को देखिये। इन्जेक्ट किया हुआ पदार्थ सीधा हृदय में पहुँचता है। इस मार्ग में कोई विश्लेषण या संशोधन क्रिया नहीं होती। द्रव्य के सारभूत और असारभूत तत्व प्रसाद और किट्ट दोनों जैसे के तैसे हृदय में पहुँच जाते हैं।

हृदय में कोई संशोधक अंग नहीं और न शरीर के आभ्यान्तरिक कार्य जैसे शिरागत दूषित क्रिया व शेष रक्तांत की भांति फुफ्फुसों से विनिमय क्षमता ही रखता है। बहिर्मार्गतः या विगुण मार्ग से आये हुए इन्जेक्ट पदार्थों का असात्म्य असारभूत किट्ट हृदय को दूषित करता है, इसी को आयुर्वेद ने विषकृत्यकारी कहा है।

ऐसी स्थिति से जो अनेकों घोर रोग हृदय में उत्पन्न होते हैं उन्हीं में एक कृमिलक्षणात्मक हृद्रोग भी होता है। कृमि हृद्रोग का कारण नहीं, वे रोग की पंक्ति भेदावस्था या पाकावस्था में सड़ान्ध से उपद्रव रूप उत्पन्न हो जाते हैं।

महर्षि चरक कहते हैं—

मर्मैकदेशे संक्लेदं रसश्चास्योपगच्छति ।
संक्लेदात्क्रमयश्चास्य भवन्त्युपहतात्मनः ॥
मर्मैकदेशे संजाताः सर्वतो भक्षयन्ति च ।

हृदय के अनेकों ज्ञात अज्ञात रोग इन्जेक्शनों द्वारा ही उत्पन्न हो रहे हैं। इन्जेक्शन अपनी रुग्ण शामक क्रिया के साथ शरीर में अन्य रोग उत्पन्न करते हैं। अब उनको नवविज्ञानाचार्य भी मानने लगे हैं। इन्जेक्शनों की प्रत्यक्ष प्राणघातकता को भी आज के डाक्टर स्वीकार करते हैं, किन्तु ननुनच के साथ। गलत और सही का फर्क करते हैं, उनका कहना है कि गलत इन्जेक्शन प्राणघातक और सही इन्जेक्शन ठीक है, रुग्ण नाशक है।

किन्तु शरीर शास्त्र के प्रकृति-विज्ञान की दृष्टि से यह इन्जेक्शन क्रिया ही गलत है। इसमें गलत और सही का सवाल ही नहीं उठता। हां, प्रश्न केवल कम हानि और अधिक हानि का है।

आयुर्वेद ने रोग के तीन मार्ग माने हैं—त्रयो रोगमार्गा इति, 'शाखा, मर्मास्थि-सन्धयः कोष्ठश्च'। इन तीनों में शाखा मार्ग रोग का बाह्य मार्ग है। 'तत्र शाखा रक्तादयो धातवस्त्वक् स च बाह्यो रोगमार्गः' त्वचा, मांसपेशियां, रसरक्तादि से शरीर में अनुप्रवेश पाने वाले रोग बाह्य-मार्गीय कहलाते हैं उपर्युक्त त्वचादि विषक या अनुपयुक्त पदार्थों के संसर्गानुप्रवेश से दूषित होकर शोथ, पिडका, अलजी, अपची, चर्मकील, अर्बुद, अधिमांस, मशक, कुष्ठ, व्यंग, विसर्प, श्वयथु, गुल्म, अर्श, विद्रधि आदि कर्मानुसारी रोग उत्पन्न होते हैं। यह तो सामान्य संसृष्टाप्रवेश जन्य रोग हैं। किन्तु उन्मत्त, श्वदंश, सर्पदंश या इन्जेक्शन आदि द्वारा शरीर में जो विशिष्टानुप्रवेश कार्य होता है वह बड़ा ही घातक होता है। हां, इनकी घातकता में न्यूनाधिक हानि का प्रश्न होता ही है।

यह तो इन्जेक्शनों द्वारा बढ़ती हुई हृद्रोग की बीमारियों के सम्बन्ध की बात है। इसके अतिरिक्त स्वस्थ या रोगग्रस्त हजारों रोगियों की जो इन्जेक्शनों द्वारा हानि हो रही है, उसका कोई पुर्साहाल नहीं। न कोई लेखा-जोखा ही प्रकाशित होता है। ऐसी मौतों के रहस्य सम्बन्ध का सरकार को कोई ज्ञान नहीं और डाक्टरों का कोई दण्ड विधान नहीं। डाक्टर ऐसी तात्कालिक मौत पर कभी कभी तो स्वीकार कर लेता है कि इन्जेक्शन देने में गलती हुई। चिकित्सक की तो गलती हुई और रोगी की प्राणहानि। इसका न्याय सामंजस्य कैसे बिठाया जाय?

आयुर्वेद में चिकित्सक की ऐसी गलतियों पर राजदण्ड तो था ही, साथ ही आत्म-प्रायश्चित रूपी उच्च दण्ड विधान भी था, किन्तु आजकल का नवविज्ञानवेत्ता डाक्टर धर्म और ईश्वर को जानता ही नहीं। जीव को शरीर रूपी जड यन्त्र की एक क्रिया मात्र मानता है। ऐसी क्रिया हुई, होकर न हुई या न होने दी गई तो उसके लिए कोई खेद का विषय नहीं! तब वह प्रायश्चित या पश्चात्ताप क्यों करे? उसके लिए तो **'यावज्जीवेत, सुखं जीवेत्'** ही सब कुछ है।

देश के उच्च विद्वानों को, देश हितैषी सार्वजनिक स्थास्थ्य-संरक्षकों को, तथा सरकार को भी रोगानीक, रोगों की बढती हुई फौज पर और वर्तमान चिकित्सा प्रणाली के गुण दोषों पर विचार करना चाहिये।

× × (रसायन)

देशबन्धु
कहानी प्रधान मासिक
सम्पादक—
वैजनाथ दानी
पृष्ठ संख्या ६४ मूल्य चार आना
वार्षिक तीन रुपया मात्र
नमूना के लिए चार आने का टिकट भेजें!
प्रत्येक शहर में एजेंण्टों की आवश्यकता है।
'देशबन्धु' कार्यालय, मथुरा

बाल-शिक्षा

(श्री शान्तानन्द भिक्षु, आर्यसमाज ब्यावर)

पुत्र—पिता जी, हम सबको अपने कल्याण के लिए किस पवित्र नाम का जाप करना चाहिये ?

पिता—यों तो ईश्वर के अनेक नाम हैं किन्तु सर्व नामों में पवित्र नाम 'ओ३म्' है। इसी एक अद्वितीय नाम का हम सब को अपने कल्याण के लिये अर्थ सहित जाप करना चाहिये।

पुत्र—ओ३म् शब्द का क्या अर्थ है ?

पिता—सर्वत्र, सदा, सर्वथा, रक्षा करने वाला।

पुत्र—मुझको, भाई को, आपको, और यह जो संसार दिखाई देता है, इन सबको किसने बनाया है ?

पिता—हम सबको तथा इस पृथ्वी से सूर्य पर्यन्त सब जड़ व चेतन वष्तुओं को बनाने वाला वही एक अद्वितीय ईश्वर है।

पुत्र—जब सब संसार का बनाने वाला ईश्वर है तो ईश्वर को बनाने वाला कौन है ?

पिता—ईश्वर महान् है! उससे महान् कोई नहीं है। उसको किसी ने नहीं बनाया है, वह स्वयं अनादि और अजन्मा है।

पुत्र—ईश्वर कहाँ रहता है ? दिखाई क्यों नहीं देता है ?

पिता—ईश्वर सब जगह सब चीजों में मौजूद है। ऐसा कोई स्थान और वस्तु नहीं है जहाँ ईश्वर विद्यमान न हो। ईश्वर का कोई रङ्ग-रूप नहीं है। इसीलिए उसको निराकार कहते हैं। वह इतना सूक्ष्म है कि इन बाह्य आंखों से उसको नहीं देख सकते।

पुत्र—सृष्टि किसे कहते हैं ?

पिता—हमको जो भी जड़ और चेतन, सूक्ष्म और स्थूल वस्तुयें दिखलाई देती हैं इसी को सृष्टि कहते हैं।

पुत्र—प्रलय किसको कहते हैं ?

पिता—सृष्टि की सब वस्तुओं का नाश (कारण-रूप में परिवर्तन) हो जाना ही प्रलय कहलाता है।

पुत्र—श्री रामचन्द्र जी वा श्री कृष्ण जी कौन थे ?

पिता—ये दोनों महान् पुरुष योगिराज थे। इन्होंने अच्छे कर्म किये, इसलिये लोग उनको याद करते हैं। लोगों ने भूल से उन्हें ईश्वर समझ लिया है। ईश्वर जन्म नहीं लेता है।

पुत्र—मृत्यु क्या चीज है ?

पिता—जब जीव शरीर छोड़ देता है तो कहते हैं कि मृत्यु हो गई। बिना जीव के शरीर काम नहीं देता है।

पुत्र—जीव कितने हैं ?

पिता—असंख्य। जीव न पैदा होते हैं और न मरते हैं। जीव एक शरीर को छोड़ कर दूसरे शरीर में चला जाता है।

पुत्र—जीव किस शरीर में जाता है ?

पिता—जीव जैसा कर्म करता है वैसा ही शरीर मिलता है। यदि अच्छा कर्म करता है तो मनुष्य का और बुरा कर्म करता है तो कुत्ता, बिल्ली, कीट, पतंग आदि का शरीर मिलता है।

पुत्र—मुक्ति किसे कहते हैं ?

पिता—सब दुःखों से छूट जाना ही मुक्ति है। जब कोई मनुष्य बहुत अच्छे कर्म करता है तो उसकी मुक्ति हो जाती है अर्थात् उसको दोबारा शरीर धारण नहीं करना पड़ता। वह बिना शरीर के ईश्वर के साथ रह कर आनन्द भोगता है।

पुत्र—वेद क्या वस्तु है ?

पिता—ईश्वर ने जो ज्ञान दिया है वह वेद के नाम से पुकारा जाता है।

पुत्र—वेद कितने हैं ?

पिता—वेद चार हैं। (१) ऋग्वेद (२) यजुर्वेद (३) सामवेद (४) अथर्ववेद ।

पुत्र—वेद में क्या है ?

पिता—वेद में ईश्वर ने उपासना, ज्ञान, धर्म और कर्म का उपदेश दिया है ।

पुत्र—वेद कौन पढ़ सकते हैं ?

पिता—प्रत्येक स्त्री, पुरुष को वेद पढ़ने का अधिकार है ।

पुत्र—ब्राह्मण कौन है ?

पिता—जो वेद को पढ़ता, पढ़ाता, यज्ञ करता और कराता, दान देता और लेता है वही ब्राह्मण है ।

पुत्र—क्षत्रिय कौन है ?

पिता—जो वेद पढ़ता, यज्ञ करता, दान देता तथा सब प्राणियों की रक्षा करता है वही क्षत्रिय है ।

पुत्र—वैश्य कौन है ?

पिता—जो वेद पढ़ता, यज्ञ करता, दान देता, खेती करता, गऊ आदि पशुपालन करता व वाणिज्य-व्यापार करता है वही वैश्य है ।

पुत्र—शूद्र कौन है ?

पिता—जो ब्राह्मण, वैश्य और क्षत्रिय के कर्मों से हीन है और जो सब की सेवा करता है वही शूद्र है।

पुत्र—आर्य कौन है ?

पिता—आर्य्य का अर्थ है श्रेष्ठ, विद्वान् । जो मनुष्य वेद और शास्त्र के बताये हुये मार्ग पर चलते हैं वे आर्य हैं।

पुत्र—यज्ञ कितने प्रकार के हैं ?

पिता—पाँच प्रकार के । (१) ब्रह्मयज्ञ—सन्ध्या करना (२) देवयज्ञ—अग्निहोत्र करना (३) पितृयज्ञ—जीते माता-पिता और गुरु की सेवा करना (४) अतिथियज्ञ—घर पर आये हुये प्राणिमात्र का भोजन वस्त्र व प्रिय वाणी से यथायोग्य सत्कार करना । (५) बलिवैश्वदेव-यज्ञ—कुत्ता, कौवा, चींटी, रोगी, पापी आदि को भोजन कराना ।

पुत्र—श्राद्ध क्या है ?

पिता—जब माता-पिता मर जाते हैं तो लोग ब्राह्मणों को खिलाते हैं।इसी को वह लोग श्राद्ध कहते हैं, वे समझते हैं कि ब्राह्मणों को खिलाने से यह भोजन हमारे माता-पिता को मिल जायगा। ऐसा श्राद्ध नहीं करना चाहिये। परन्तु जीते माता-पिता व गुरु की सब प्रकार की सेवा करनी चाहिये । यही श्राद्ध है और नहीं ।

पुत्र—लोग कहते हैं पृथ्वी शेषनाग के सिर पर है ?

पिता—नहीं यह भी झूठी बात है। जो लोग ऐसी बात कहते हैं उनसे पूछना चाहिये कि शेषनाग किस पर बैठा है । पृथ्वी, सूर्य और चन्द्रमा एक दूसरे को खींच रहे हैं इसलिये वे गिरते नहीं।

पुत्र—कौन सी चीजे खाने योग्य है ?

पिता—जो चीजें शरीर में बल और बुद्धि लाती हैं वही खानी चाहियें जैसे घी, दूध, मक्खन, फल, मूल अन्नादि ।

पुत्र—देवी देवता किसे कहते हैं ?

पिता—जो स्त्री धर्मात्मा तथा विदुषी हो वह देवी है। जो पुरुष धर्मात्मा, विद्वान् हो वह देवता है। लोगों ने भूल से देवी देवताओं की कहानियाँ रच ली हैं यह सब झूठी हैं। इसी प्रकार उनकी पूजा भी झूठी है ।

पुत्र—क्या नक्षत्र आदि का प्रभाव हम पर पड़ता है जैसा ज्योतिषी मानते हैं ।

पिता—नक्षत्र जड़ हैं और हम चेतन हैं। जड़ का चेतन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ज्योतिषियों ने धन कमाने के लिये यह विद्या रच ली है । हमें उनके चक्र में नहीं आना चाहिये।

पुत्र—भूत-प्रेत क्या चीज हैं ?

पिता—भूत-प्रेत कोई चीज नहीं है। भूत-प्रेत की कहानियाँ लोगों ने झूठी रच ली हैं। जब मनुष्य मरता है तो जीव उसके शरीर में से निकल कर दूसरे के शरीर में चला जाता है। वह बिना शरीर के नहीं रहता है ।

पुत्र—नशीली चीजें कौनसी हैं ?

पिता—बीड़ी, सिगरेट, भाँग, शराब, गांजा, अफीम आदि । इन चीजों के सेवन करने से मनुष्य की बुद्धि नष्ट हो जाती है उसका स्वभाव भी चिड़चिड़ा हो जाता है। शरीर भी दुर्बल हो जाता है।

पुत्र—मांस खाना चाहिये या नहीं ?

पिता—नहीं खाना चाहिये—मांस खाने से पाप होता है। जिस प्राणी का मांस खाते हैं उसको मारते हैं उसको दुःख होता है और हिंसा होती है। मांस खाने से बुद्धि भी बिगड़ जाती है।

पुत्र—अहिंसा क्या है ?

पिता—किसी प्राणी को बिना कारण के नहीं सताना चाहिये किन्तु जब कोई दुष्ट तुम्हारी जान और हमला करता है तो तुम को भी डटकर उसका माल की हानि पहुंचाने के लिये तुम पर मुकाबिला करना चाहिये न कि डर कर भाग जावो। डर कर भाग जाना पाप है और उसका डट कर मुकाबिला करना पुण्य है, यही सत्य अहिंसा है।

त्र—हमारा धर्म कर्म क्या है ? और हम कौन हैं ?

ता—वैदिक हमारा धर्म है, आर्य हमारा नाम।
एक ब्रह्मको पूजना, यही मुख्य एक काम ।।

त्र—पिता जी इन सब बातों को जानने के लिये किस पुस्तक को पढ़ना चाहिये।

ता—सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ कर तुम यह सब बातें जान सकोगे। यह पुस्तक महर्षि दयानन्द जी ने हर मनुष्य के कल्याण के लिये लिखी है।

पुत्र—आर्यसमाज को किसने बनाया ?

पिता—महर्षि दयानन्द जी ने। हमको चाहिये कि उनका गुण गान करें।

पुत्र—तो सत्यार्थ प्रकाश मेरे को मंगा दीजिये ? कहां मिलती है ?

पिता—हर आर्य समाज से यह पुस्तक प्राप्त होती है। "बोले सो अभय, वैदिक धर्म की जय।"

स्वास्थ्य रक्षा तथा आयुर्वेद प्रचारक
भारत का प्रगतिशील पत्र
॥ स्वास्थ्य ॥

संस्थापक—श्री १०८ स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज।
संपादक—डा० बलदेव शर्मा आयुर्वेदाचार्य शास्त्री।
प्रबन्ध सम्पादक—कविराज देवेन्द्रनाथ चक्रवर्ती बी० ए०

योग्य विद्वानों के आयुर्वेदिक मौलिक लेखों के अतिरिक्त इसमें प्राकृतिक-चिकित्सा, मनोविज्ञान, योगासन, स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी आदि लेख होते हैं। प्रोफेसर, जज, वकील, अध्यापक, विद्यार्थी, व्यापारी; क्लर्क तथा मजदूर-किसानवर्ग सब के लिये उपयोगी है। विज्ञापन दाताओं के लिये "स्वास्थ्य" अपूर्व साधन है। हमारा अप्रैल मास का अंक "रजत जयन्ती अंक" होगा। वार्षिक मूल्य ३) रु० विदेशों से ६ शिलिंग १ प्रति छः आने।

व्यवस्थापक—"स्वास्थ्य"
कृष्ण-गोपाल आयुर्वैदिक धर्मार्थ औषधालय
पो० कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

हमारे कारखाने में यज्ञ तथा पूजा आदि का सर्व प्रकार का सामान तैयार किया जाता है।

निर्माता
सीताराम आर्य एण्ड संज़
१७९ लाजपतराय मार्कीट, देहली।

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि.) रोहतक की अचूक औषधियाँ

च्यवनप्राश (सर्वोत्तम रसायन)

इसी ऋतु के ताजे आंवले से तैयार किया गया स्वादिष्ठ, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातु-क्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका (निरन्तर) सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य १ पाव का दो रुपया, ७) सेर

स्वास्थ्यवर्धक चाय

यह चाय स्वदेशी, ताजी एवं शुद्ध जड़ी-बूटियों से तैयार की गई है। वर्तमान चाय की भांति यह नींद और भूख को न मार कर खांसी, जुकाम, नजला, सिरदर्द, खुश्की, अजीर्ण, थकान, सर्दी आदि रोगों को दूर भगाती है। मस्तिष्क एवं दिल को शक्ति देती है।

मू० १ छटांक ।-)

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामवाण है। इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बला दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजले) की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास (खाँसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपेदिक) श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढंग की एक ही औषधि है। ५) बड़ी शीशी

ब्राह्मी घृत

वह घृत आयुर्वेद शास्त्र की विधि के अनुसार शुद्ध गोघृत से बनाया गया है। इसका सेवन कुष्ट (कोढ़) मृर्गी (हिस्टीरिया) मस्तिष्क की निर्बलता चक्कर आना, याद किये हुये पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है और जिसकी स्मरण शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिये श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी, दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष और सब प्रकार के धातु प्रमेह को दूर करता है। इसके सेवन से स्मरण शक्ति खूब बढ़ती है।

सेवन विधि—६ माशे से १ तोले तक दूध में डाल कर अथवा मिश्री मिलाकर प्रातः सायं सेवन करें।

मूल्य आध पाव ४) चार रुपये।

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इसके लगाने से आँखों के सब रोग-जैसे आँख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट) दूर का कम दीखना (लांग साइट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आंख के सब रोगों की रामवाण औषध है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ स्वच्छ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है।

सेवन विधि-पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रायः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ।।) शीशी

त्रिफलादि घृत

यह घृत आंखों के लिये अत्युत्तम है। इसकी जितनी प्रशंसा करें, थोड़ी है। यह आंखों के समस्त रोगों के लिये रामवाण है, इसके सेवन से नेत्रों का कोई भी रोग नहीं रहता। इससे रतौंधी, आंखों की खुजली, पानी जाना, धुन्ध, जाला इत्यादि सब दूर होते हैं। आंखें निर्मल होकर चमकने लगती हैं। सौ वर्ष तक नेत्र-ज्योति नवयुवकों के समान बनी रहती है। मोतियाबिंद को भी लाभदायक है। आंखों के छोटे बड़े सब रोगों को हितकारी है। सेवन विधि—६ माशे से एक तोले तक दूध में डाल कर अथवा मिश्री मिलाकर या भोजन के साथ प्रातः सायं सेवन करें। मूल्य आध पाव ४) रु०

हवन सामग्री

यह हवन सामग्री सैकड़ों सुगन्धित, पौष्टिक, बलवर्धक औषधियों से तैयार की जाती है। ऋतु अनुकूल ताजा और शुद्ध सामग्री का ही यज्ञ करना महत्व रखता है। दैनिक हवन के प्रेमियों ने इसे अपनाया है। यज्ञ-महायज्ञ और संस्कार तथा पर्वों के लिये यह उपयोगी सिद्ध हुई है। मूल्य १।) सेर।

* * *

कुछ महानुभावों की सम्मतियां

I have used Netra Jyoti Surma. After a great search I have found a really good eye soother. I have put my whole family on it.

R. R. Kumaria Principal govt. Collage

(भावार्थ) मैंने नेत्र ज्योति सुर्मे का प्रयोग किया। बहुत बड़ी खोज के पीछे यथार्थ में एक बहुत श्रेष्ठ आंखों को शान्त करने वाली औषध प्राप्त हुई। मैंने अपने सारे परिवार के लिये यह (गुरुकुल झज्जर का सुर्मा) प्रयोग करने के लिये दे दिया है। —आर० आर० कुमरिया
प्रिंसिपल गवर्नमेंट कालेज रोहतक

सुर्मे तो पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं परन्तु इतना लाभप्रद और सस्ता सुरमा बाजार में मिलना कठिन ही नहीं असम्भव है। स्वयं मेरी माता जी ने इस नेत्र ज्योति सुर्मे का प्रयोग किया था और इसको अत्यन्त लाभदायक पाया। यह रसायनशाला गुरुकुल झज्जर का नेत्र ज्योति सुर्मा नेत्रों के लिये एक बहुत अच्छा और सस्ता सुर्मा है।

—रघुवीरसिंह मुख्याध्यापक
मिडिल स्कूल बख्तावरपुर देहली राज्य

त्रिफलादि घृत और नेत्र ज्योति सुर्मा

मैं अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूं कि नेत्र ज्योति सुर्मा और त्रिफलादि घृत रसायनशाला गुरुकुल झज्जर के जितने गुणकारी सिद्ध हुए हैं उतने किसी अन्य फार्मेसी के नहीं। इन से आश्चर्यजनक लाभ होता है।

वैद्य सोमवीर आर्य आयुर्वेदाचार्य M. A. M. S.

रसायनशाला गुरुकुल झज्जर का ऐजेण्ट होने के नाते मैंने इस फार्मेसी से बनी प्रायः सभी औषधियों का प्रयोग रोगियों पर किया है। यहां की सभी औषधियां रामवाण हैं तथा रोगों पर जादू सा असर डालती हैं।

च्यवनप्राश—मेरे भाई को हमेशा ज्वरी सी बनी रहती थी। खांसी और जुकाम से बेहद तंग व दुःखी था। मैंने उसे गुरुकुल फार्मेसी का बना च्यवनप्राश सेवन कराया। बड़े आश्चर्य की बात हुई कि बहुत थोड़ा अर्थात् पाव भर च्यवनप्राश खाने मात्र से ही उसके सब रोग दूर हो गये तथा भूख खूब लगने लगी। उसने यहां के च्यवनप्राश की भूरि-भूरि प्रशंसा की। एक दूसरे हमारे ही गांव के रोगी जिसकी बहुत कमाई वैद्य डाक्टरों की भेंट हो जाने पर भी ठीक न हो पाया था व अत्यन्त निराश था। मैंने उसे यहां के च्यवनप्राश का सेवन कराया। केवल मात्र च्यवनप्राश के सेवन से ही उसके सब रोगों की निवृत्ति हो गई, तथा इतना कार्य करने लग गया है कि एक नौजवान भी नहीं कर सकता। मेरा अपना अनुभव है कि अकेले च्यवनप्राश का निरन्तर सेवन सर्व प्रकार के रोगों से बचाता है, विशेष कर यहां की रशायनशाला से निर्मित च्यवनप्राश बिल्कुल शास्त्रोक्त विधि से बनाये जाने के कारण अत्यन्त लाभप्रद है। अतः प्रत्येक सज्जन को इससे लाभ उठाना चाहिये।

शिवनारायण आर्य पंचग्राम् (महेन्द्रगढ़)

* * *

सुधारक पर सम्मति

'सुधारक' का "व्यायाम सन्देश" विशेषाङ्क प्राप्त हुआ। व्यायाम की महत्ता, आवश्यकता पर उत्तम सामग्री तो है ही, व्यायाम की कई श्रेष्ठ विधियां का वर्णन भी है। अङ्क सर्वजनोपयोगी हुआ है। धन्यवाद।

गोरखपुर
हनुमानप्रसाद पोद्दार
सम्पादक
कल्याण

संस्था समाचार

वार्षिक महोत्सव

कन्या गुरुकुल नरेला देहली का प्रथम-वार्षिक महोत्सव ता० १,२ जनवरी सन् ५५ ई० शनि, रविवार को बड़े समारोह से मनाया गया, इस अवसर पर १००००) नकद और वचनों के रूप में प्राप्त हुआ।

देहली की आर्य स्त्री समाजों ने बड़ा उत्साह दिखाया। सबमें गुरुकुल के प्रति प्रेम और उत्साह है। आर्य महिलायें पर्याप्त संख्या में महोत्सव में सम्मिलित हुईं।

देहली डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन श्री माननीय हीरासिंह जी ने बड़ा सहयोग दिया है। उन्होंने स्वयं १०१) प्रदान किये तथा अपने साथियों से ५०१) दिलाये। आशा है उनसे आगे भी पर्याप्त सहयोग मिलता रहेगा।

श्री पं० ब्रह्मदेवजी लोवा कलां निवासी ने अपनी सुपुत्री शकुन्तलादेवी जी को जो कन्या गुरुकुल हाथरस की स्नातिका हैं, गुरुकुल की सेवा के लिये लगा दया है।

श्री १०८ श्री पूज्यपाद स्वा० व्रतानन्द जी महाराज आचार्य चित्तौड़गढ़ की बहिन महोत्सव में सम्मिलित हुई और ६०१) प्रदान किये। इसी प्रकार पूज्यपाद स्वामी जी के भ्राता जी भी पधारे और १ सहस्र रुपये की पुस्तकें प्रदान कीं।

नरेला के समीपस्थ ग्राम तथा देहली नगर में गरुकुल के प्रति बड़ा उत्साह दिखाई देता है। नरेला म्युनिसिपल कमेटी के सदस्यों ने भी बड़ा सहयोग दिया है।

वांस माजरा निवासी श्री महाशय छोटूराम जी ने अपने सुपुत्र श्री रोहिताश्व जी B. A. को इसी अवसर पर आर्यसमाज की सेवा के लिये समर्पित कर दिया।

सहयोगियों के उत्साह को देखकर प्रतीत होता है कि परेशानुकम्पा से यह गुरुकुल शीघ्र भारी उन्नति करेगा। सहयोगी सज्जनों के सहयोग के लिये हार्दिक धन्यवाद।

निवेदक—मन्त्री कन्या गुरुकुल नरेला (देहली)

विदेशों में वैदिकधर्म का प्रचार

पूज्यपाद स्वामी आनन्द भिक्षु जी महाराज १ जनवरी ५४ को विदेश में वैदिकधर्म का प्रचार करने के लिये गये थे और ३१ दिसम्बर को वहां से भारत लौट आये हैं। १६ जनवरी १९५५ को देहली पहुँच गये। इस एक वर्ष के समय में मोरीशस, दारुल सलाम, पोर्टलुईस आदि स्थानों में वहां के निवासियों को वेदोपदेशामृत का पान करवाया, अनेक स्थानों पर यज्ञ तथा यज्ञोपवीत करवाये। उनके एक वर्ष के कार्य का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

१—६७४ परिवारों में यज्ञ करवाये।
२—१२३८ सज्जनों की यज्ञोपवीत प्रदान किये।
३—३९५ व्याख्यान विविध विषयों पर हुए।
४—२ बार रेडियो से भाषण प्रसारित किया।
५—दो मुस्लिम देवियों को शुद्ध किया।
६—तीन गायत्री महायज्ञ करवाये।
७—गोरक्षा निधि के लिये लगभग १२०००) रुपये प्राप्त हुए। २५०) को पुस्तकें प्रचारार्थ बांटीं। ८३३) भेंट में प्राप्त हुए, जोकि सार्वदेशिक सभा को विदेश प्रचार के लिये दे दिये। ३५००) लगभग दक्षिणा प्राप्त हुई, जिसमें से ९२५) आर्यसमाज मारीशस को और २४७४) भिन्न-भिन्न संस्थाओं को भेजे।

इसी समय में दो नगरकीर्तन करवाये, एवं सज्जन को वानप्रस्थाश्रम की दीक्षा दी। अनेक व्यक्तियों के मद्यमांस और सिगरेट छुड़वाये। कई स्वागत और विदाई पत्र प्राप्त हुए, एक विद्यार्थी को श्री दयानन्द उपदेशक विद्यालय यमुनानगर (जगाधरी) में भेजा और ९ विद्यार्थियों की जनवरी में वेदप्रचारक बनने के लिये आने की आशा है।

ईश कृपा से विदेशयात्रा पूर्ण निर्विघ्नता तथा पूर्ण सफलता के साथ सम्पन्न हुई। —सम्पादक

गुरुकुल झज्जर

गुरुकुल झज्जर रोहतक में आयुर्वेद-महाविद्यालय के लिये दाचां (बेरी) रोहतक ने १०००) रुपये का जो वचन दिया था वह पूरा कर दिया है। इसी प्रकार बेरी में वैठ्याण पान्ना निवासी श्रीमान् महाशय सूरतसिंह जी ने भी ५०१) प्रदान किये हैं। साथ ही निम्न सज्जनों से जो धन प्राप्त हुआ वह भी निम्न है ।

१०१) श्री मा० कुन्दनसिंह जी रासीवास महेन्द्रगढ़ ।
१०१) " महा० छोटूराम शेरसिंह जी बालन्द रोहतक
८५) " मा० लज्जेराम जी समसपुर महेन्द्रगढ़ ।
५०) " ला० श्रीकृष्ण जी टीकरीकलां देहली ।

उपरोक्त सब महानुभावों का तथा दाचां ग्रामवासियों का धन्यवाद । आशा है वचन देने वाले अन्य सज्जन भी अपना धन शीघ्र भिजवा देंगे ।

निवेदक—मुख्याधिष्ठाता

समालोचना

[आलोचना के लिये पुस्तक की दो प्रतियां भेजनी चाहियें, अन्यथा ध्यान न दिया जायेगा । (सम्पादक)]

श्री मार्तण्डपञ्चाङ्गम्

उपरोक्त नाम का पञ्चाङ्ग $\frac{२०\times३०}{८}$ के कागज पर छपा है, मूल्य बारह आने है । इस में फलित और गणित दोनों का समावेश है । फलित से हम सहमत नहीं हैं। गणित पर श्री सत्यव्रत जी शास्त्री तथा श्री प्रियव्रत जी शास्त्री कुराली पञ्जाब का प्रयत्न सराहनीय है । इसके प्रकाशक-मोतीलाल बनारसीदास पुस्तक विक्रेता, बनारस, हैं। किनारी बाजार देहली, तथा बांकीपुर पटना से भी यह पञ्चांग प्राप्त हो सकता है ।

बाईबिल के पैगम्बर चोर ?

$\frac{२०\times३०}{१६}$ पर आठ पृष्ठ का ट्रैक्ट बाईबिल के विषय में लिखा गया है । इस के लेखक श्री हरिशरण जी ने बाईबिल का वर्षों तक अध्ययन किया है । पादरियों के साथ शास्त्रार्थ के लिये सर्वदा उद्यत रहते हैं । हैदराबाद में बढ़ते हुये पादरियों के प्रचार के सामने आपने मोर्चा लगाया है। वहीं से ज्ञान गंगा पुस्तक माला हैदराबाद की ओर से इसका प्रकाशन किया गया है । ट्रैक्ट के अध्ययन से बाईबिल की वास्तविकता का पता चलता है । ईसाईयों के बढ़ते हुए प्रचार को रोकने के लिये हम ऐसे ट्रैक्टों के प्रकाशन को आवश्यक समझते हैं । इसका जितना भी प्रचार हो अच्छा है ।

नवदीप + आनन्दगान

माता मासिक मातृकेन्द्र गाजियाबाद (उत्तरप्रदेश) से निकलने वाला आध्यात्मिक पत्र है । इसके उपरोक्त नवदीप और आनन्द गान, नवम्बर और जनवरी मास के दो विशेषाङ्क मिले हैं । नवदीप नौ कहानियों का संग्रह है तथा आनन्द गान में भक्ति रस के गान हैं । अपने ढंग के अनूठे अङ्क हैं । भक्ति रस के प्रेमियों के लिये अच्छी सामग्री है । परन्तु हम लेखक के सभी विचारों से सहमत नहीं हैं ।

"आयुर्वेद चिकित्सक" जबलपुर के नवीन प्रकाशन––

"तत्काल फल प्रयोग" चारों भाग मूल्य ७॥) पृष्ठ संख्या ६०० लगभग इन चारों भागों में लेखक महोदय ने सर्वसाधारण के उपयोगार्थ १२०० (एक हजार दो सौ) अनूठे प्रयोगों का संग्रह किया है, जिन के द्वारा थोड़े ही मूल्य से भयङ्कर रोगों की चिकित्सा की जा सकती है। इसमें द्वितीय तथा तृतीय भाग में तो केवल महिला रोगों के ही ७०२ अद्भुत योग (नुस्खे) दिये हैं। "आयुर्वेद चिकित्सक" एक अच्छा प्रगतिशील मासिक पत्र है। ह इस के सफल भविष्य की कामना करते हैं।

●

सूक्तयः

(सङ्कलयिता—ब्रह्मचारी वेदव्रतः)

१. सत्यं वद (तै० उ० १-११-१) सत्य भाषण कर।

२. समूलो वा एष परिशुष्यति योऽनृतमभिवदंति (प्र० उ० ६।१) जो मनुष्य मिथ्या भाषण करता है वह समूल सूख जाता है अर्थात् उसके लोक और परलोक दोनों ही नष्ट हो जाते हैं।

३. धर्मं चर (तै० उ० १-११-१) वेदोक्त धर्म का पालन कर।

४. धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः (भर्तृहरि) धर्म से रहित मनुष्य पशु तुल्य हैं।

५. तपसा कल्मषं हन्ति (मनु० १२-१०४) तप के द्वारा पाप को नष्ट करता है।

६. तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व (तै० उ० ३-२-५) तप से ब्रह्म की खोज कर।

७. ब्रह्मचर्यं तप उत्तमम्। ब्रह्मचर्य ही सर्वोत्तम तप है।

८. यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति (क० उ० १।२।१५) जिस ईश्वर की प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य आदि का अनुष्ठान करते हैं।

९. नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः (मु० ३।२।४) वह परमात्मा बलहीन को नहीं मिलता।

१०. नैषा तर्केण मतिरापनेया (क० उ० १।२।९) यह आत्मज्ञान तर्क से प्राप्त नहीं होता, अथवा इस आत्मज्ञान को तर्क के द्वारा नष्ट नहीं करना चाहिये।

११. आचार्यवान् पुरुषो वेद (छा० उ० ६।१४।२) जिसे श्रेष्ठ आचार्य प्राप्त है वही आत्मतत्त्व को जान सकता है।

१२. आचार्द्धैव विद्या विदिता साधिष्ठं प्राप्त् (छा० उ० ४।९।३) आचार्य (गुरु) की कृपा से प्राप्त की हुई विद्या ही प्रापणीय (ईश्वर) की प्राप्ति करवा सकती है।

१३. ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः—ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं होती।

१४. विद्ययाऽमृतमश्नुते। (यजुर्वेद अ० ४०) विद्या के द्वारा अमृत का पान करता है।

१५. विद्यया देव लोकः (बृ० उ० १।५।१६) विद्या से देव लोक की प्राप्ति होती है।

१६. कर्मणा पितृलोकः (बृ० उ० १।५।१६) कर्म से पितृ लोक की प्राप्ति होती है।

१७. सा विद्या या विमुक्तये। श्रेष्ठ विद्या वही है जिस से मोक्ष की प्राप्ति हो।

१८. इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावीदन्महती विनष्टिः। (उपनिषद्)यदि इस जन्म में परमात्मा को जान लिया तो ठीक है=उसने परमार्थ तत्त्व को पा लिया=उसका जन्म सफल है, और यदि इस जन्म में न जाना=न प्राप्त किया तो महान् अनर्थ होगा अर्थात् जन्म वृथा ही गया।

१९. आत्मन्येवात्मानं पश्यति (बृ० उ० ४।४।२३) आत्मा में ही परमात्मा का ज्ञान होता है।

२०. तरति शोकमात्मवित् (छा० उ० ७।१।३) आत्मज्ञानी शोक सागर से पार उतर जाता है।

२१. किं प्रजया करिष्यामो येषां नोऽयमात्मायं लोकः (बृ० उ० ४-४२२) जिनको यह परमात्मा और ब्रह्मलोक ही अभीष्ट है उनका सन्तानोत्पत्ति आदि से क्या मतलब ?

२२. अक्षैर्मा दीव्यः (ऋ० १०-११-१२) जूआ मत खेल।

२३. कृषिमित्कृषस्व (ऋ० १०-११-१२) खेती कर।

२४. अन्नं बहु कुर्वीत (तै० उ० ३।९।१) अन्न पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न करना चाहिये।

२५. पर्जन्यादन्नसम्भवः (गीता ६-६) वृष्टि से अन्न की उत्पत्ति होती है।

२६. यज्ञाद्भवति पर्जन्यः (गीता ६-६) यज्ञ से वर्षा होती है।

२७. अन्नं न निन्द्यात् (तै० उ० ३।७।१) अन्न की निन्दा न करे।

२८. मा गृधः कस्य स्विद्धनम्। पराये धन की इच्छा मत कर।

२९. न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः (क० उ० १।१।२७) मनुष्य की धन से तृप्ति नहीं हो सकती।

३०. स तु भवति दरिद्रो यस्य तृष्णा विशाला। दरिद्र वही है जिसकी तृष्णा विशाल है।

हरियाणा प्रान्त के प्रधान गुरुकुल, निश्शुल्क आर्ष पाठविधि के केन्द्र

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का

तैंतीसवां वार्षिक महोत्सव

फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी, चतुर्दशी सम्वत् २०११ वि० ता० २०, २१ फरवरी सन् १९५५ ई० रवि, सोमवार को समारोह से मनाया जायेगा । भारी संख्या में पधार कर महोत्सव की शोभा को बढ़ायें ।

इस अवसर पर श्री १०८ श्री पूज्यपाद स्वामी व्रतानन्द जी महाराज आचार्य गुरुकुल चित्तौड़गढ़, श्री पूज्यपाद स्वामी ब्रह्ममुनि जी महाराज, श्री पूज्य स्वामी धर्मानन्द जी महाराज, श्री पूज्य स्वामी सन्तोषानन्द जी महाराज, श्री वानप्रस्थ आनन्द भिक्षु जी महाराज, श्री पूज्य पं० जगदेवसिंह जी शास्त्री सिद्धान्ती संस्थापक सम्राट् देहली, श्री पूज्य आचार्य राजेन्द्रनाथ जी शास्त्री देहली उच्चकोटि के महात्मा विद्वान् तथा प्रान्तीय और केन्द्रीय धारासभा के कतिपय सदस्य पधारेंगे ।

अथर्ववेद से महायज्ञ

महोत्सव पर ता० १० फरवरी बृहस्पतिवार से अथर्ववेद से महायज्ञ का प्रारम्भ होगा । ब्रह्मा का आसन श्री पूज्य स्वामी सुरेन्द्रानन्द जी महाराज ग्रहण करेंगे । इस महायज्ञ की पूर्णाहुति ता० २१ फरवरी सोमवार को प्रातः ९ बजे होगी । इस समय यज्ञोपवीत ग्रहण करने वाले सज्जनों को यज्ञोपवीत प्रदान किये जायेंगे । महायज्ञ की सफलता के लिये हवन प्रेमी सज्जन कम से कम एक समय का घी अवश्य भेजें तथा पड़ौसियों और इष्ट मित्रों से भिजवा कर पुण्य के भागी बनें ।

नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश

राष्ट्र भाषा हिन्दी, तथा सब भाषाओं की जननी देववाणी संस्कृत की उच्च शिक्षा तथा आर्ष पाठविधि के अनुसार वेद वेदाङ्गों के अध्ययन अध्यापन का समुचित प्रबन्ध है । अतः अपने होनहार बालकों को गुरुकुल में प्रविष्ट करा कर उनके जीवन को सफल बनावें । प्रवेश नियम तथा प्रवेश पत्र कार्यालय से मंगायें ।

नवीन भवन निर्माण

आयुर्वेद महाविद्यालय के लिये नूतन भवनों का निर्माण हो रहा है । आतुरालय बन कर तैयार हो गया है । नवीन भवन निर्माण के लिये जो सज्जन १०१) प्रदान करेंगे उनका नाम पत्थर पर अङ्कित किया जायेगा । ५०१) प्रदान करने वाले सज्जन के नाम का पत्थर नवीन भवन पर लगाया जायेगा । १००१ तथा २५०१) प्रदान करने वाले सज्जनों के नाम छोटा तथा बड़ा कमरा बनवाया जायेगा । प्रेमी सज्जन अपने समाज तथा ग्राम के नाम से भवन बनवायें । अपने पूर्वजों की स्मृति में भवन बनवाने का अच्छा अवसर है ।

निवेदक—

शेरसिंह एम० ए०, एम० एल० ए०	**प्यारेलाल आर्य**	**भगवानदेव**
प्रधान	मन्त्री	आचार्य

टि०—१. गुरुकुल की प्रबन्धकारिणी सभा का साधारण अधिवेशन ता० २० फरवरी रविवार की सांयकाल रात्रि को ८ बजे से प्रारम्भ होगा ।

२. प्रबन्धकारिणी सभा की सदस्यता का शुल्क एक वर्ष का १०) है । २५) प्रदान करने वाले ३ वर्ष तक सदस्य समझे जायेंगे तथा १०१) एक बार प्रदान करने वाले आजीवन सदस्य कहलायेंगे ।

३. अपने बिस्तर और कपड़े साथ लायें

हमारे प्रकाशन

[आज से पांच वर्ष पूर्व दीपमाला सं० २००६ को हम ने साहित्य सेवा का व्रत लिया था। तब से अब तक हमने ५६ छोटी बड़ी पुस्तकों का प्रकाशन किया है। उन में से पांच के तीसरे और नौ के दूसरे संस्करण तक निकल चुके हैं। हम यह सेवा आप महानुभावों के सहयोग से ही कर सके हैं। आशा है आगे भी यह सहयोग पूर्ववत् प्राप्त होता रहेगा।]

नये प्रकाशन

१. व्यायाम सन्देश	)
२. आसनों के व्यायाम	।।)
३. सदाचार पंचिका	।।)
४. दृष्टान्त मंजरी	२)
५. काश्मीर यात्रा (प्रेस में)	।।)
६. बिच्छू विष चिकित्सा	=)
७. दयानन्द और गोरक्षा	–)।।
८. आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
९. चकबन्दी कानून	।।)
१०. संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय	।।)
११. स्वामी विरजानन्द	१।।)
१२. संस्कृत क्यों पढ़ें	।=)

पूर्व के प्रकाशन

१३. ब्रह्मचर्य के साधन—	
भाग १,२ (प्रातः जागरणादि)	।–)
भाग ३ (दन्त रक्षा)	≡)
भाग ४ (व्यायाम सन्देश)	१)
भाग ५ (स्नान, संध्या, यज्ञ)	।=)
१४. ब्रह्मचर्यामृत —	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)।।
५. तम्बाकू का नशा—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)।।
१६. पापों की जड़ शराब—	
बाल संस्करण	।–)
साधारण संस्करण	=)।।
१७. ब्रह्मचर्य शतकम्	।।=)
१८. हित की बातें	–)।।
१९. नेत्र रक्षा	≡)
२०. व्यायाम का महत्त्व	=)
२१. आदर्श ब्रह्मचारी	।)
२२. कन्या और ब्रह्मचर्य	≡)
२३. स्वप्नदोष और उसकी चिकित्स	=)।।
२४. बाल विवाह से हानियां–समाप्त	
२५. मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२।।)
२६. संस्कृतांकुर	१।)
२७. संस्कृत कथा मंजरी	।–)
२८. श्रुति सुध	≡)
२९. वैदिक गीता	३)
३०. आर्यसमाज की आवश्यकता	।)
३. आ०प० आवश्यकता (छोटी)	–)
३२. आर्योद्देश्य रत्न माला	–)
३३. आर्यसमाज के नियमोपनियम	=)
३४. वैदिक संध्या पद्धति	–)
३५. वैदिक संध्या हवन पद्धति	≡)
३६. वैदिक सत्संग पद्धति	।=)
३७. कर्त्तव्य दर्पण	।।।=)
३८. हितैषी की गीता	।।।)
३९. कृषि विज्ञान	।।।)
४०. सिख और यज्ञोपवीत	≡)
४१. पंजाब की भाषा	–)
४२. आर्यकुमार गीतांजली भाग १, २	।=)
४३. रामराज्य कैसे हो ?	≡)
४४. अफ्रीका की यात्रा	२।)
४५. स्वा० दयानन्द और म० गांधी	२)
४६. स्वा० श्रद्धानन्द	)।।
४७. क्या हम आर्य हैं (६० प्रश्न)	–)
४८. महर्षि दयानन्द का कार्य	–)

नवीन साहित्य

(३१-१२-५२ के बाद हमारे प्रकाशनों का संक्षिप्त परिचय)

१. स्वामी विरजानन्द—ले० श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज मूल्य १।।)—अनेक वर्ष हुए श्री पं० देवेन्द्रनाथ जी ने महर्षि दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द का जीवन चरित्र लिखा था। उसे समाप्त हुए भी कई वर्ष बीत गये। तब से महर्षि दयानन्द के गुरु स्वामी विरजनन्द जी महाराज के जीवन चरित्र की बड़ी मांग थी। इसी मांग को दृष्टि में रखते हुए स्वाम जी महाराज का यह प्रामाणिक जीवन चरित्र लिखा गया है। इसमें स्वामी जी सम्बन्धी अनेक ऐसी नवीन घटनाओं को दे दिया गय है जिनका पता बहुत से भाइयों को अभी तक नहीं था।

२. दृष्टान्त मञ्जरी—ले० पं० जगत्कुमार शास्त्री—–मू० २) सजिल्द--इसमें अनेक महापुरुषों की जीवनियों से ११४ घटनाएँ दी गई हैं जिनका पाठ पाठकों में सत्य, न्याय प्रियता, साहस, परिश्रम, मनोबल, देश भक्ति, समाज प्रेम, सेवा, धैर्य आदि गुणों का संचार करेगा। विद्यार्थियों के लाभार्थ यह मोटे अक्षरों में छापी गई है। प्रत्येक लेखक, व्याख्याता तथा अध्यापक के पास इसकी एक प्रति अवश्य रहनी चाहिये।

३. व्यायाम सन्देश—लेखक : आचार्य भगवान्‌देव—मूल्य १)—इसमें व्यायाम सम्बन्धी अनेक आवश्यक बातें यथा—व्यायाम क्यों करें, कब करें, कितना करें, कौनसा करें, कैसे करें, देशी तथा विदेशी व्यायामों की तुलना एवं उनके हानि लाभ दिये गये हैं। आसन, दण्ड, बैठक के फोटो—चित्र होने के कारण इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है।

४. आसनों के व्यायाम—लेखक : भाष्याचार्य वेदव्रत गुरुकुल झज्जर (रोहतक)—मू० ॥) इसमें तीन दर्जन से अधिक आसनों का परिचय, उनके करने की विधि एवं लाभ समझाये गये हैं। प्रत्येक आसन का फोटो—चित्र इस पुस्तक की अपनी विशेषता है।

५. आर्य सिद्धान्त दीप—ले० पं० मदनमोहन विद्यासागर—मू० १।)—आर्य सिद्धान्तों पर अपने ही ढंग की अनोखी पुस्तक। आर्य सिद्धान्तों का वास्तविक स्वरूप एवं परिचय जानने के लिए इसका स्वाध्याय अत्यन्त आवश्यक है। इसकी एक प्रति प्रत्येक समाज, कुमार सभा, लेखक एवं व्याख्याता के पास अवश्य होनी चाहिये। पुस्तक क्या है गागर में सागर भरने की कहावत को सत्य सिद्ध करती है।

६. चकबन्दी कानून—ले० चौ० बलवन्तसिंह एम० एल० ए०—मू० ॥)—इसमें चकबन्दी के साथ, चकबन्दी कैसे होगी, चकबन्दी का कानून इत्यादि अनेक विषय अत्यन्त सरल भाषा में समझाये गये हैं। प्रत्येक किसान, जमींदार एवं वकील को इसके स्वाध्याय से लाभ उठाना चाहिये।

७. संस्कृत वाङ्‌मय का संक्षिप्त परिचय—ले० श्री पं० जगदेवसिंह जी सिद्धांती भू० पू० आचार्य गुरुकुल किरठल—मू० ॥)—वेदों से लेकर आज तक के प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थों के निर्माण का समय, लेखक का नाम तथा उन का विषय इत्यादि इसमें दिए गये हैं। यह संस्कृत पाठशालाओं एवं परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में लगाने योग्य अनुपम पुस्तक है। इसकी विशेषता इसी से सिद्ध है कि यह 'विरजानन्द संस्कृत परिषद्' की संस्कृत परीक्षाओं में निर्धारित है।

८. सदाचार पञ्चिका—ले० शारदा प्रभाकर—(मू० ॥)—यह डायरी आपके जीवन को अवश्य ही उच्च एवं नियमित बनाने में सहायता देगी। इसकी विशेषता यह भी है कि यह आपको डायरी का काम भी देगी तथा जिस तारीख से भी आप इसका उपयोग आरम्भ करेंगे तभी से आगे एक वर्ष के लिये काम देगी।

९. काश्मीर यात्रा—(प्रेस में)—ले० श्री जगन्नाथ बी० ए०, एल० एल० बी०—मू० ॥) इसमें काश्मीर सम्बन्धी प्रत्येक तथ्य—यथा वहां का इतिहास, रहन-सहन, उपज, ऋतु, दर्शनीय स्थान, नदी-नाले, होटल एवं उनके किराये इत्यादि का पूरा-पूरा विवरण दिया गया है। यह पुस्तक काश्मीर सम्बन्धी बाजार में मिलने वाली किसी भी हिन्दी पुस्तक की अपेक्षा अधिक अच्छी और सस्ती है। काश्मीर न जा सकने वाले व्यक्ति भी इसे पढ़ कर घर बैठे काश्मीर यात्रा का कुछ आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

१०. संस्कृत क्यों पढ़ें—ले० स्वामी वेदानन्द जी—मू० ।=) ऐसे उच्चकोटि के विद्वान् की लेखनी से लिखी यह पुस्तिका संस्कृत भाषा के महत्त्व को समझाने के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। प्रत्येक संस्कृत प्रेमी को इसका प्रचार करना चाहिये।

११. दयानन्द और गोरक्षा—पं० लक्ष्मीदत्त दीक्षित एम० ए०—मू० -)॥ —प्रचारार्थ ७) सैंकड़ा (मोटे अक्षर २४ पृष्ठ) गोरक्षा आन्दोलन को तीव्र गति देने एवं इस आन्दोलन के वास्तविक दृष्टिकोण को जनता के समक्ष रखने के लिए इसका प्रचार करना प्रत्येक संस्था एवं गोभक्त का कर्तव्य है।

१२. बिच्छू विष चिकित्सा—ले० आचार्य भगवान्‌देव—मू० =)—इसमें बिच्छू के विष को दूर करने के लिये १०० नुस्खे दिये गये हैं।

वैदिक साहित्य सदन
आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली—६

गुरुकुल झज्जर की प्रसिद्ध औषधियां

१. नेत्र ज्योति सुर्मा—इसके लगाने से आंखों के सर्व रोग जैसे आंख दुखना, खुजली, जाला, फोला, रोहे कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट), दूर का कम दीखना (लांग साइट), प्रारम्भिक मोतियाबिन्दु आदि दूर होते हैं। आंखों के सब रोगों की रामबाण औषधि है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है। लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। मूल्य ॥) शीशी।

२. नेत्र ज्योति सुर्मा (विशेष)---यह आंखों के उपरोक्त रोगों में विशेष लाभदायक है। मूल्य १) शीशी।

३. नेत्रामृत—यह दुखती आंखों के लिये जादू भरा विचित्र योग है। भयंकरता से दुखती हुई आंखें भी इसके एक दो दिन डालने मात्र से ठीक हो जाती हैं। साथ ही अन्य सभी नेत्र रोगों में हितकर है। मूल्य ।=) शीशी।

४. दन्तरक्षक मंजन—दांतों से खून या पीप का आना, दांतों का हिलना, दांतों के कृमि रोग, सब प्रकार की दांतों की पीड़ा तथा अन्यान्य सभी दन्त रोगों को दूर भगाता है। नित्य प्रयोगार्थ उत्तम मंजन है। मू० ॥) शी०

५. दन्तरक्षक तेल---इसके सेवन से मुख का तथा दांतों का कोई रोग रहने नहीं पाता। पायोरिया के लिये हितकर है। मुख की दुर्गन्धि को दूर करता है। मंजन तथा तेल दोनों का साथ प्रयोग अत्यन्त लाभकर है। मूल्य ॥) शीशी

६. संजीवनी तेल--यह औषधि यथा नाम तथा गुण वाली है। कटे-फटे घावों को बहुत जल्दी भरता है। अन्दर की चोट की भी उत्तम औषध है। जादू भरा प्रभाव रखती है। मूल्य ४) बड़ी शीशी, ।=) छोटी।

७. व्रणामृत—यह फोड़े, फुन्सी, नासूर, गले-सड़े जख्मों को बहुत ही जल्दी ठीक करती है। मू० १) शीशी

८. स्वास्थ्यवर्धक चाय---यह चाय स्वदेशी ताज़ी एवं शुद्ध जड़ी बूटियों से तैयार की गई है। यह वर्तमान चाय की भांति नीन्द और भूख को न मारकर, खांसी, जुकाम, नजला, सिरदर्द, खुश्की, अजीर्ण, थकान, सर्दी आदि रोगों को दूर भगाती है। मस्तिष्क एवं दिल को शक्ति देती है। नित्य प्रयोगार्थ उत्तम पेय है। मू० ।-) छोटी शी०

९. हवन सामग्री—यह सामग्री सुगन्धित, पौष्टिक, बलवर्धक, औषधियों से तैयार की जाती है। ऋतु अनुकूल ताजा और शुद्ध सामग्री का ही यज्ञ करना महत्व रखता है। दैनिक हवन के प्रेमियों ने इसे अपनाया है। यज्ञों, महायज्ञों, संस्कारों तथा पर्वों के अवसर पर इसका अवश्य प्रयोग कीजिये। मूल्य १) सेर।

१०. बलदामृत--यह औषध हृदय उदर एवं मस्तिष्क रोगों में रामबाण है। श्वास, कास, यक्ष्मा तथा फेफड़ों की निर्बलता को दूर करके अतीव बल देती है। सुमधुर रसायन है। मस्तिष्क का कार्य करने वाले व्यक्तियों के लिये लाभदायक है। मूल्य ४) शीशी २० दिन के लिये पर्याप्त। छोटी शीशी २)।

११. च्यवनप्राश—शास्त्रोक्त विधि से तैयार किया हुआ स्वादिष्ठ, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है, जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपैदिक तथा सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषधि है। स्वप्न दोष, प्रमेह, धातुक्षीणता, अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है। मूल्य २) का पाव, ३॥) का आधा सेर, ७) सेर।

१२. कर्णरोगामृत—यह कान के सब रोगों को दूर करती है। कान से पीप आना, बहरापन और प्रत्येक प्रकार के दर्द को अत्यन्त शीघ्र दूर करती है। प्रतिदिन के सेवन करने से कानों में कोई रोग नहीं होता। और मस्तिष्क की शुष्कता (खुश्की) दूर होती है। मूल्य १) शीशी।

१३. ज्वरामृत—यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की रामबाण औषध है। बिगड़े हुए मलेरिया, विषम-ज्वर को दूर करने में जादू का काम करती है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषधि है। कुनेन का सेवन शिरदर्द, स्वप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है। किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है। तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है। मूल्य ५) रुपए, छोटी शीशी २) रुपये।

१४. अर्शरोगामृत—यह खूनी तथा बादी दोनों प्रकार की बवासीर को दूर करती है। खून के आने को तो इसकी दो चार मात्रा ही बन्द कर देती हैं। मूल्य एक मास के सेवनार्थ १० ।

१५. पामामृत—यह सब तरह की खुजली दादादि चर्म रोगों के लिये अत्युत्तम औषध है। खुजली सूखी हो या पकने वाली, यह सब प्रकार की खुजली के लिये रामबाण है। इसके प्रयोग करने के पश्चात् किसी अन्य औषध की आवश्यकता नहीं। दाद को भी दूर करती है। मूल्य १ शीशी।

१६. पाचनामृत—मन्दाग्नि, अरुचि, अजीर्ण, (कब्ज) पेट का फूलना, पेट का भारीपन, शूल, वमन, जी मिचलाना, खट्टी डकार आदि पेट के सभी रोगों को नष्ट कर भूख को बढ़ाता है। आँतों के सब रोगों को दूर कर पाचनशक्ति को बल देता है। पुराने से पुराने तिल्ली जिगर की अचूक औषध है। मू० ४) रुपये शीशी ।

१७. बालरोगामृत--बालकों के हरे पीले दस्त, अपच, अजीर्ण, (कब्ज) अरुचि, दांत निकलते समय के रोग, सूखिया (मसान) रोग, वमन, निर्बलता ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखे। मूल्य छोटी शीशी २), बड़ी शीशी ४) रुपये ।

१८. बालरोगामृत रस—इसके भी उपरोक्त गुण हैं। यदि दोनों साथ-साथ सेवन की जावें तो सोने पर सुहागा है। सूखिया रोग को एकदम दूर करती है। मू० ६) शीशी, नमूना।)।

१९.स्वप्नदोषामृत रस--इस भयंकर रोग के कारण प्रायः सभी युवक और विद्यार्थी हताश और निराश दिखाई देते हैं। यह औषध इस रोग को दूर करने में बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। यह प्रमेह अर्थात् मूत्र में आगे पीछे या बीच में वीर्य के आने को बन्द कर देती है। एक मास के सेवनार्थ ५) रुपये, छोटी शीशी २॥=)।

२०. स्वप्नदोषामृत चूर्ण—यह अत्यन्त परिश्रम से तैयार किया गया है। अत्यन्त बलवर्धक है तथा समस्त धातु विकारों को नष्ट करके जीवन प्रदान करता है। मू० छोटी शीशी १), बड़ी शीशी २) ।

२१. लवणभास्कर चूर्ण—अग्निमांद्य के लिये उत्तम है। भूख लगाता है। अरुचि दूर करता है। दस्त साफ आता है। मू० ॥=) शीशी।

२२. हिंग्वष्टक चूर्ण—अपचन, दस्तों का आना, वायुगोला, पेट का अफरना तथा पेट दर्द आदि के लिये उत्तम है। मूल्य १।) शीशी।

मिलने का पता—नवजीवन संचारक कम्पनी,
आर्यसमाज मन्दिर—सीताराम बाजार, देहली ६।

अवश्य पढ़िये

१—राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान (भाग १)

इसके लेखक मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति गुरुकुल काङ्गड़ी के उन स्नातकों में से हैं जिन पर भारत को अभिमान है। इसमें अनुभवी लेखक ने राष्ट्र निर्माण का चित्रण इतना सुन्दर किया है कि पुस्तक को समाप्त किये बिना छोड़ने को मन नहीं चाहता। कम्यूनिज्म के बढ़ते हुए प्रवाह को रोकने का सर्वोत्तम हल इसमें पढ़िये और पढ़िये आदर्श राष्ट्र का सुन्दर रूपरेखा। मूल्य केवल ।।)

२—विरजानन्द चरित

सर्वविध क्रान्तिकारी स्वामी विरजानन्द जी का यह अनुपम जीवन स्वामी वेदानन्द जी महाराज ने लिखा है। इसमें ऐसी अनेक घटनायें मिलेंगी जो अभी तक किसी भी जीवन चरित में नहीं आई हैं। पृष्ठ २०० बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई। फिर भी मूल्य केवल १।।) मात्र।

३—व्यायामसन्देश

आचार्य भगवान्देव जी की वह उत्कृष्ट रचना है जिसकी पर्याप्त समय से व्यायाम प्रेमी सज्जन चातक की भान्ति बाट देख रहे थे। इस प्रकार की उत्तम सामग्री एकत्र किसी भी पुस्तक में न मिलेगी। साथ सचित्र होने के नाते इसकी शोभा द्विगुणित हो उठी है। मूल्य १)

४—आसनों के व्यायाम (सचित्र)

ब्र० वेदव्रत जी ने इस पुस्तक में तीन दर्जन आसनों का परिचय, करने की विधि और लाभ अति सरल भाषा में वर्णन किया है। प्रत्येक आसन का साथ-साथ चित्र होने के कारण विषय को समझने में कुछ भी कठिनता नहीं होती। इसमें केवल मुख्य-मुख्य आसनों पर ही प्रकाश डाला गया है। मूल्य ।।) मात्र।

५—सन्ध्या-अष्टाङ्गयोग

श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ने सन्ध्या की वैज्ञानिक ढङ्ग से आध्यात्मिक व्याख्या की है जे बड़ी ही रोचक और सारगर्भित है। अध्यात्म पिपासु महानुभाव एक-एक प्रति अवश्य ही मंगवावें। बढ़िय कागज पर सुन्दर छपाई और पक्की सुनहरी जिल्द के २०० पृष्ठ के गुटके का मूल्य केवल ।।।)।

आचार्य भगवान्देव जी द्वारा लिखित पुस्तकें—

१. ब्रह्मचर्य के साधन पांचों भाग	१।।।=)	६. स्वप्नदोष की चिकित्सा	=
२. ब्रह्मचर्यामृत	=)।।	७. व्यायाम का महत्त्व	≡
३. तम्बाकू का नशा	।=)	८. नेत्र रक्षा	≡
४. पापों की जड़ शराब	।-)	९. बिच्छू विष चिकित्सा	≡
५. बाल विवाह से हानियां	-)	१०. रामराज्य कैसे हो ?	≡

इनके अतिरिक्त मूल वेद, वेदभाष्य, गीता, उपनिषद्, महर्षि दयानन्द कृत सभी ग्रन्थ, महापुरुषों जीवन चरित्र, सन्ध्या-हवन, ब्रह्मचर्य, सदाचार सम्बन्धी धार्मिक ग्रन्थ, आर्यकुमार परिषद् द्वारा संचालित १. सिद्धान्त सरोज, २. सिद्धान्त रत्न, ३. सिद्धान्त भास्कर, ४. सिद्धान्त शास्त्री, ५. सिद्धान्त वाचस्पति परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें और विरजानन्द संस्कृत परिषद् देहली द्वारा संचालित १. संस्कृत सुमन, २. संस्कृत विनोद, ३. संस्कृत विज्ञ और ४. संस्कृत प्रवीण परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें इत्यादि सभी ग्रन्थ हमारे यहां उचित मूल्य से मिलते हैं। विशेष जानकारी के लिये पत्र व्यवहार करें।

वैदिक पुस्तकालय—गुरुकुल झज्जर, जि० रोहतक

● भोजन विशेषांक ●

गतवर्ष आपकी सेवा में सुधारक के दो विशेषाङ्क एक गो-अंक और दूसरा व्यायाम-सन्देशाङ्क उपस्थित किये थे, जिनकी सभी पाठकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा उनको हृदय से अपनाया।

पाठकों को यह जानकर अति प्रसन्नता होगी कि इस वर्ष सुधारक का विशेषाङ्क मार्च था अप्रैल दोनों मासों का सम्मिलित "भोजन-वेशेषाङ्क" होगा। जिसमें भोजन-सम्बन्धी भी ज्ञातव्य विषयों पर विस्तार पूर्वक प्रकाश ाला जायेगा. अर्थात् मनुष्य का वास्तविक भोजन क्या है? भोजन कैसा हो? कब करें, कैसे करें? कितना करें? किस अवस्था में करें और किस में न करें। सात्विक, राजस, ामस भोजन के गुण दोष, किन किन पदार्थों को एक साथ न खाना चाहिये, किस आयु के व्यक्ति के लिये कौनसा भोजन श्रेष्ठ है—इत्यादि सभी विषयों का खोजपूर्ण, पुस्तकाकार लगभग १०० पृष्ठों की उत्तम सामग्री अन्यत्र किसी भी एक पुस्तक में न मिलेगी।

यह अंक उन्हीं सज्जनों को मिल सकेगा जिनका सुधारक का चन्दा आ गया है या फरवरी तक आ जायेगा। पाठक-महानुभावों से निवेदन है कि २) चन्दा भेजकर शीघ्र ही ग्राहक बन जावें, जिससे कि पुनः पश्चात्ताप न करना पड़े।

—व्यवस्थापक सुधारक

ग्राहक संख्या ८८२

सेवा में श्री— जगदीशचन्द्र जी वि

मु० C/o मुरारी ब्रादर्स

पो० कमलानगर

जि० देहली

अर्शरोगामृत

वार्षिक महोत्सव के उपलक्ष्य में मूल्य में भारी कमी, केवल दो मास तक १०) के स्थान में पांच रुपये छटांक। अर्श (बवासीर) के रोगियों के लिये स्वर्ण अवसर

यह औषधि सब प्रकार के अर्श (बवासीर) के लिये रामबाण का काम करती है। हमारी रसायनशाला में इसे तैयार करने के लिये कई मास तक भरसक प्रयत्न किया गया है। इस की तीन चार मात्रा के सेवन मात्र ही से खून का आना तो तुरन्त बन्द हो जाता है। यह औषधि जादू के समान तुरन्त प्रभाव दिखाती है। प्राचीन आयुर्वेद का इसे चमत्कार कहना चाहिये। संसार में इस से बढ़कर अर्श के लिये कोई औषधि नहीं।

सेवन विधि—एक से दो गोली तक प्रातः सायं धारोष्ण दूध के साथ सेवन करें। यदि कोष्टबद्धता (कब्ज) के कारण मल त्यागते समय रक्त आता है तो गोली लेते समय एक तोले से दो तोले तक इसबगोल के साथ मिला कर सेवन करें।

मूल्य एक मास केलिये १०) के स्थान में ५) मात्र।

मिलने का पता:

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) रजि०

गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

प्रकाशक [illegible] गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस. पहाड़ी धीरज, देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

ओ३म्

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष २
अङ्क ७

गुरुकुल झज्जर (रोहतक), फाल्गुन-चैत्र सं० २०११ वि०
मार्च १९५५—दयानन्दाब्द १३०

वार्षिक मूल्य २)
एक प्रति का ≡)

हरयाणा में आर्ष शिक्षा यज्ञ के प्रथम अध्वर्यु

श्री पं० विश्वम्भरदयाल जी

श्री पं० विश्वम्भर दयाल जी दृढ़ वैदिक धर्मी और ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त थे। सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन ने हृदय में आर्ष गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के प्रति अटूट आस्था उत्पन्न कर दी। अपने शुभ मनोरथ को सफल करने के लिये सर्वात्मना इस पवित्र कार्य में जुट गये। अपनी निवास भूमि झज्जर (जि० रोहतक) में ही अपना सर्वस्व (भूमि आदि) दान करके हरयाणा प्रान्त में आर्य शिक्षा यज्ञ के प्रथम अध्वर्यु बने और गुरुकुल झज्जर की स्थापना की। शरीर की चिंता त्याग कर गुरुकुल हितार्थ धनादि संग्रह से अच्छा सहयोग प्राप्त किया। दिन-रात्रि इसी कार्य में संलग्न रहने से प्रौढ़ अवस्था में ही स्वर्ग सिधार गये। परब्रह्म की अपार दया से आप द्वारा आरोपित और सिंचित गुरुकुल पादप झज्जर की पवित्र भूमि में पुष्पित और पल्लवित हो कर हरयाणा प्रान्त को ही नहीं अपितु दूर-दूर तक राष्ट्र वायु को सुगन्धित कर रहा है।

* * *

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक

सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति

सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

इस अंक की विषय-सूची

विषय	लेखक	
ब्रह्मचर्य-महत्वम्	श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न	पृ० ३-४
सम्पादकीय		,, ५-६
हमारी सौराष्ट्र यात्रा	ब्र० सुदर्शनदेव	,, ७-९
कविता		,, १०
भोजन में लवण का स्थान	श्री आचार्य भगवान् देव	,, ११-१६
अपूर्व त्याग	श्री जगन्नाथ बी० ए० एल० एल०बी	,, १७-१८
संस्था समाचार		,, १९

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—आर्यसमाज या वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार त । मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं ली जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है।

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संस्कृत में करें, उत्तर के लिये जवाबी कार्ड डालें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चोथाई पृष्ठ
एक वार	१६)	९)	५)
तीन वार	४०)	२४)	१३)
छः वार	७५)	४५)	२५)
१ वष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५ प्रतिशत अधिक।

,, तृतीय १० प्रतिशत अधिक

विशेपांक में सवाया। कम से कम ४)

ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्

(श्री पण्डित मेधाव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्)

प्रतप्यमानोऽनुसमुद्रतीरं
ज्ञानाम्बुधौ स्नाततरः स बभ्रुः ।
सुपिङ्गलो रम्यवसुन्धरायां
प्ररोचते ब्राह्ममहोऽभिरामः ॥१२२॥

अर्थः—ज्ञान सागर के तट पर तप करता हुआ ज्ञानसागर में पारंगत (स्नातक बना हुआ) धारक पोषक गुणशाली, ब्रह्मतेज से देदीप्यमान अत एव कान्तिमान् ब्रह्मचारी मनोहारिणी इस वसुन्धरा पर अत्यन्त सुहाता है ।

तरङ्गिण्यास्तीरे क्वचिदमलनीरे परिसरे
गिरेः कान्तारे वा गुरुचरणसेवारतमनाः ।
तपोऽलं कुर्वाणो जितकुसुमबाणो व्रतिवरः
परब्रह्मानन्दं निगमविदमन्दं कलयति ॥१२३॥

अर्थः—कहीं निर्मल जल वाले नदी तट पर, कहीं पर्वत की तलहटी में या पर्वतीय वन में कठोर तप करता हुआ श्रद्धेय आचार्य-वर्य की सेवा-सुश्रूषा में दत्त-चित्त, कामवासनाओं का दमन करके वेद-विद्या निष्णात श्रेष्ठ ब्रह्मचारी इष्ट ब्रह्म के अमन्द आनन्द का उपभोग करता है ।

स ब्रह्मचारी नहि केवलं तपो
वाक्कायजं किन्तु करोति मानसम् ।
तपोऽभिषेक्तुं तपताममुं वरं
ज्ञानार्णवस्सत्यमुपैति हर्षदः ॥१२४॥

अर्थः—वह ब्रह्मचारी केवल वाणी और शरीर सम्बन्धी तप ही नहीं अपितु मानस तप भी करता है । तब तपस्वियों में श्रेष्ठ इस ब्रह्मचारी का अभिषेक करने के लिए सचमुच आनन्ददायी ज्ञानसमुद्र वेद उपस्थित होता है ।

ततोऽनिशं वर्षति वर्णिवारिदः
सवेदनादं जनताम्बरे लसन् ।
निपीय तद्बोधजलं ह्यलं जनो—
विमुच्यते भोगजरोगसंकटात् ॥१२५॥

अर्थः—चमकता हुआ वह ब्रह्मचारी रूपी मेघ जनतारूपी अन्तरिक्ष में वेद गर्जना करता हुआ रात-दिन अमृत की वर्षा करता रहता है । मनुष्य उस ज्ञान जल को यथेष्ट पीकर भोग-जन्य रोग दुःखों से मुक्त हो जाते हैं ।

अतः परं श्रेष्ठब्रह्मचारिणां निदर्शनानि

× × ×

श्रेष्ठ ब्रह्मचारियों के उदाहरण

ओ३माचार्यो जगति सुमहान् ब्रह्मचारी वेरण्यः
सृष्टेर्गोप्ता सकलजनको ब्रह्मचर्यप्रणेता ।
जीवेभ्योऽसौ निगमवचसा ब्रह्मचर्योपदेशं
पूर्व-चक्रे मह ऋषिगणैः स्वीकृतो विस्तृतोऽयम् ।१२६।

अर्थः—"ओ३म" बहुत बड़ा ब्रह्मचारी है (ब्रह्मचर्य की पराकाष्ठा है) उसने आदि सृष्टि में जीवों को वेदवचनों द्वारा ब्रह्मचर्य का उपदेश दिया । अतः ब्रह्मचर्य का प्रणयन कर्त्ता होने से वह जगत में सर्वश्रेष्ठ आचार्य है । (ब्रह्मचर्य के प्रताप से वह अकेला ही) वस्तुमात्र का जनक और ब्रह्माण्ड का रक्षक बना हुआ है । महर्षिगणों ने इसी ब्रह्मचर्य के उपदेशक को स्वीकारा और फैलाया ।

योगीन्द्रो भुवि शङ्करोवरगुरुः प्रागंब्रह्मचर्यावने
तत्सिद्ध्या मदनस्त्रिलोकविजयी भस्मीकृतस्तेन सः ।
कामारिर्विदितोऽभवत्तदनु स संस्मर्यते योगिभि
र्योगारम्भ विधौविनिर्मलहृदा भक्त्या सदाचार्यवत् ॥१२७

अर्थः—ब्रह्मचर्य के रक्षण में श्रेष्ठ गुरु योगिराज भगवान् शंकर इस भूमण्डल में (कामदेव के शत्रु) कामारि नोम से प्रसिद्ध हो गये हैं । उन्होंने ब्रह्मचर्य की सिद्धि से त्रिलोकविजयी कामदेव को भस्म कर दिया था, तभी से वे योगियों द्वारा आज तक योगारम्भ करने के समय अति निर्मल पवित्र हृदय और श्रद्धाभाव से आचार्य की न्याई स्मरण किये जा रहे हैं ।

व्यभूषयन्नार्यवसुन्धरां पुरा
धुरन्धराः श्री सनकः सनन्दनः
सनत्कुमारो व्रतिनां सनातन—
स्सनातनोमिन्द्रवशंवदाः सदा ॥१२८॥

अर्थः—ब्रह्मचारियों में धुरन्धर ब्रह्मचारी श्री सनक, सनन्दन, सनत्कुमार और सनातन नामक ऋषि प्रतिक्षण सनातन ओ३म् के वशंवद हुए। किसी समय इस आर्यभूमि को अलंकृत कर रहे थे।

चतुर्भिरेतैश्चतुरैरियत्तप-
स्तपस्विभिस्तच्चरितं सुदुश्चरम्।
यमोऽज्वरार्त्तस्तु जरां जरा गता
सुरासुरास्तच्चरणं सिषेविरे ॥१२६॥

अर्थः—इन चारों तपस्वियों ने इतना कठोर तप किया कि जिससे भयभीत हो मृत्यु को तो ज्वर चढ़ गया, बुढ़ापा जीर्ण-शीर्ण हो गया, तथा देव और असुर उनके चरणों में आ गिरे।

स्मरस्मरँस्ताँश्चपलं पलायित—
स्त्रिलोकलोकाः प्रविलोक्य कम्पिताः।
व्रतीश्वराणामुपदेशलेशत—
स्तदा बभूवुर्व्रतिनस्सहस्रशः ॥ १३० ॥

अर्थ—कामदेव उनका स्मरण करते ही एकदम भागा और त्रिभुवन निवासी जन उन्हें देखते ही कम्पायमान हो गये। उस समय इन वर्णीन्द्रों के थोड़े से उपदेश से ही हजारों की संख्या में ब्रह्मचारी तैयार हुए।

शुक्राचार्योऽजनि सुविदितो ब्रह्मचर्योपदेष्टा
स्वीयाञ्छिष्यानकृतदनुजान् विश्वजिष्णू-
ञ्जिताक्षान्।
देवत्वं तानसुरनिवहान्नीतवान् ब्रह्मवाग्भि—
स्सञ्जीवन्या मृतकसदृशाञ्जीवयञ्जीवनेशः
॥ १३१ ॥

अर्थ—शुक्राचार्य ब्रह्मचर्य के प्रसिद्ध उपदेष्टा हुए हैं। उन्होंने अपने दानव शिष्यों को विश्व-विजयी एवं जितेन्द्रिय बनाया, जीवन के निर्माता बनकर उन्होंने ब्रह्मचर्य संजीवनी बूटी से मृतक सदृश उन असुरों में प्राण फूंकते हुए वेद-वाणी द्वारा उनको देव बनाया।

विजितरुचिरकामं सत्यकामं प्रकामं
परम परशुरामं ब्रह्मचर्याभिरामम्
द्विजसरसि जहंसं विप्रवंशावतंसं
प्रमदनृपतिकालं को न वेदर्षिबालम् ॥१३२॥

अर्थ—मोहक विषयों को जीतने वाले, सत्य वस्तु कामना को चाहने वाले, उत्तम ब्रह्मचर्य से प्रदीप्त, द्विज-कमल के हंस, ब्राह्मण वंश के भूषण, मदमत्त राजाओं के कालस्वरूप, परम कान्तिमान् ऋषि बालक परशुराम को कौन नहीं जानता।

अनुपम बलशाली ब्रह्मचार्यंशुमाली
विमलहृदयसत्वः प्राप्तशास्त्रास्त्रतत्त्वः।
रचित दुरितलीलान् क्षत्रियान् दुष्टशीलान्
व्यधित मुहुरशेषानेकलोनामशेषान ॥१३३॥

अर्थ—उस अनुपम बलशाली, पवित्र हृदय और बुद्धि वाले, शस्त्र-अस्त्र के मर्मज्ञ ब्रह्मचारी-रूपी सूर्य ने अकेले ही पाप लीलाओं के रचयिता दुष्ट क्षत्रियों को अनेक बार मृत्यु के घाट उतारा।

दत्तात्रेयो ब्रह्मचर्यावतारो—
यावज्जीवं ब्रह्मचर्यं जुगोप।
वैराग्यश्रीशोभमानो महात्मा
ब्रह्मज्ञानं ब्रह्मचर्येणलेभे ॥ १३४ ॥

अर्थ—ब्रह्मचर्य के अवतार रूप महात्मा दत्तात्रेय ने जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य को निभाया और वैराग्यरूपी लक्ष्मी से सजकर ब्रह्मचर्य से ब्रह्मज्ञान को प्राप्त किया।

अगण्यताखण्डसुवर्णिकुण्डलः
प्रचण्डतेजोजितसूर्यमण्डलः।
असौ मुनीन्द्रः शुकदेव उज्ज्वलः
सुब्रह्मचर्यस्य हि दर्पणोऽमलः ॥१३५॥

अर्थ—मुनीन्द्र शुकदेव अखण्ड ब्रह्मचारियों में भूषण स्वरूप गिने गये, वे ब्रह्मचर्य के प्रचण्ड तेज से सूर्य तेज को फीका कर रहे थे, निःसन्देह ये ब्रह्मचर्य के एक निर्मल और चमकते हुए आदर्श थे।

कृतारम्भा रम्भा विजयकृतदम्भा शुकमुनेः
सुनेत्राम्भोजान्तेर्हृदयमतिकान्तैर्वशयितुम्।
यदा नालं जेतुं जितमकरकेतुं व्रतिवरं
परं लज्जोद्विग्ना विपदुदधिमग्ना समभवत्।१३६।

अर्थ—विजय करने का दम्भ करनेवाली देवाङ्गना रम्भा अप्सरा ने अपने मनोहर नेत्र कटाक्षों से शुक मुनि के हृदय को वश में करने के लिए आडम्बर रचना आरम्भ किया, परन्तु जब काम-विजयी उस व्रतिवर को वह न जीत सकी तो लज्जा से अति विह्वल होकर दुःख सागर में डूब गई। (क्रमशः)

सम्पादकीयः—

हमारे स्वास्थ्य का आधार भोजन है। जैसा भोजन किया जाता है वैसा ही स्वास्थ्य बनता है। यदि शरीर को यथोचित मात्रा में भोजन नहीं मिलता है तो स्वास्थ्य गिर जाता है, शरीर निर्बल और कृश हो जाता है। शरीर के साथ-साथ मन तथा आत्मा भी निर्बल हो जाते हैं, क्योंकि प्रायः देखा जाता है बलिष्ठ शरीर में आत्मा भी बलवान् होता है। आजकल हमारा भोजन बिगड़ा हुआ है अतएव हमारा नैतिक स्तर भी गिरा हुआ है।

—"जैसा खावे अन्न वैसा ही मन" के अनुसार भोजन प्रणाली के दूषित होने से मन भी दूषित हो गया है, इसी लिए संसार में चोरी-जारी, लूट-मार, रिश्वत आदि की भरमार है।

भोजन जीवन के लिये है न कि भोजन के लिये जीवन। किन्तु लोग इसे भूल जाते हैं और जिह्वा के वश में होकर कुछ का कुछ खा बैठते हैं। खाते समय यह विचार नहीं करते कि इसका परिणाम क्या होगा ? प्रकृति विरुद्ध भोजन के सेवन से जब नाना व्याधियों से ग्रस्त हो जाते हैं तब रोते और पछताते हैं। बुद्धिमत्ता इसी में है कि रोग के आने से पूर्व ही उससे बचने का उपाय ढूंढ निकालना चाहिये। जैसे कि हमारे शास्त्रकारों ने लिखा है—

"हेयं दुःखमनागतम्" (योगदर्शन २।१६) अर्थात् दुःख का आने से पूर्व ही प्रतिकार कर देना चाहिये।

भोजन के विषय में लोगों में अनेक कुरीतियाँ प्रचलित हो गई हैं और वे प्रतिदिन बढ़ती जारही है। इस का एक मात्र कारण भोजन सम्बन्धी अज्ञान और जिह्वा की लोलुपता ही है। प्रायः लोग परस्पर विरुद्ध भोजन करते देखे जाते हैं, यथा—नमक डाले हुए दलिये या खिचड़ी के साथ दूध, तरबूज और सङ्गतरे के साथ नमक, मूली के साथ दूध इत्यादि।

वैसे ये साधारण वस्तुयें प्रतीत होती हैं किन्तु बात ऐसी नहीं। यदि हम गम्भीरता से विचार करें तो ज्ञात होगा कि इन्हीं साधारण छोटी-छोटी त्रुटियों के कारण हम कुष्ठ जैसे भयङ्कर रोग के शिकार हो जाते हैं। दूध के साथ नमक खाने से विष बन जाता है।

इसी प्रकार मद्य, मांस आदि अनेक अभक्ष्य पदार्थों के सेवन की दुष्परिपाटी चली हुई है। मछली और अण्डे का प्रचार अति वेग से बढ़ रहा है, सरकार भी इसके प्रचार में सहयोग दे रही है, लाखों रुपये अभक्ष्य पदार्थों के प्रचार में व्यय किये जा रहे हैं।

हमारे शास्त्रकारों ने गम्भीरतापूर्वक विवेचन किया है कि किस व्यक्ति को किस अवस्था में क्या भोजन करना चाहिये, कितनी मात्रा में किस पदार्थ का सेवन करना उपयुक्त है और किस का अनुपयक्त। हमारे शरीर के लिये किस प्रकार के भोजन की आवश्यकता है। भोजन का देश, काल, प्रकृति और अवस्था भेद से हमारे शास्त्रकारों ने पृथक् पृथक् विवेचन किया है। जब तक हम शास्त्रों के अनुसार चलते रहे तब तक हमारा शरीर और स्वास्थ्य ठीक रहे। हमारे पूर्वज इतने हृष्ट-पुष्ट और बलवान् इसी लिये थे, क्योंकि वे शास्त्रोक्त विधि के अनुकूल भोजन करते थे, उनका आहार विहार और व्यवहार संयमित था।

किन्तु आजकल सर्वथा इसके विपरीत प्रथा चली हुई है, भोजन करते समय इस बात का ध्यान नहीं दिया जाता कि इस भोजन पदार्थ का मेरे शरीर पर क्या प्रभाव होगा, अथवा इसकी मेरे शरीर के लिये आवश्यकता है या नहीं, इसके क्या गुण हैं और दोष क्या हैं। इन सब की अवहेलना कर केवल भोजन के परखने की एक ही कसौटी रह गई है कि वह हमारी रसना की तृप्ति कर सके। यदि किसी पदार्थ

में रसना को तृप्त करने की शक्ति विद्यमान है तो उसे निःसंकोच होकर हमारे भाई खा लेते हैं, पी लेते हैं, चाहे उस पदार्थ को रखने के लिये पेट में स्थान खाली न हो और उससे आजन्म रुग्ण शैय्या पर रहना पड़े, उसकी कोई चिन्ता नहीं। चिन्ता तो केवल इस पिशाचिनी रसना की है, इसकी तृप्ति के लिये आज का मानव अपना सर्वस्व स्वाहा कर रहा है।

भोजन और ब्रह्मचर्य का घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि भोजन से ही रसादि धातुओं की उत्पत्ति होती है। यदि उत्तेजक, अभक्ष्य और ब्रह्मचर्य के लिये हानिकारक पदार्थों का सेवन किया जायेगा तो उन पदार्थों से बना हुआ वीर्य भी वैसा ही होगा, वह हमारे शरीर का अङ्ग नहीं बन सकता, अतएव वह हमारे शरीर को हृष्ट-पुष्ट, तेजस्वी और ओजस्वी नहीं बना सकता। भोजन जीवन के लिये किया जाता है और इस प्रकार ब्रह्मचर्य के नष्ट होने से भोजन करने का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है।

भोजन करने से पूर्व हमें क्या करना चाहिये और भोजन के पश्चात् क्या-क्या क्रियायें अपेक्षित हैं तथा भोजन करते समय हमें किन-किन नियमों का ध्यान रखना आवश्यक है, इत्यादि साधारण किन्तु अत्यावश्यक बातों का लोगों को ज्ञान नहीं। पशु की भान्ति पेट भर लेने से ही भोजन का उद्देश्य पूर्ण नहीं हो जाता, सभी दृष्टिकोणों को ध्यान में रखना आवश्यक है। भोजन शरीर को सुरक्षित रखता है अतः भोजन को दूषित तथा नष्ट-भ्रष्ट करना अपनी जीवन-यात्रा के रथ को दूषित और नष्ट-भ्रष्ट करना है, वह शीघ्र ही जीर्ण-शीर्ण होकर लक्ष्य तक नहीं पहुंचा सकेगा।

भोजन सम्बन्धी सभी त्रुटियों को दूर करने के लिये, प्रचलित भोजन प्रणाली को सुधार कर उसको श्रेष्ठतम बनाने के लिये, भोजन सम्बन्धी अज्ञान को मिटाकर भोजन के वास्तविक उद्देश्य को बतलाने के लिये हम "भोजन विशेषाङ्क" निकाल रहे हैं। हम अपने उद्देश्य में कितने सफल होंगे यह तो पाठक ही बतला सकेंगे। यदि हमारे परिश्रम से कुछ स्वास्थ्य और जीवन प्रेमी सज्जनों को भी पथ-प्रदर्शन हुआ तो हम अपने परिश्रम को सफल समझेंगे।

——

भोजन-विशेषाङ्क

सुधारक का "भोजन विशेषाङ्क" अप्रैल और मई का अङ्क होगा और मई में निकाला जायेगा, अतः कोई सज्जन व्यर्थ ही पत्र व्यवहार करने का कष्ट न करें। फरवरी में गुरुकुल का वार्षिक महोत्सव था और मार्च में हरयाणा प्रान्तीय आर्य महासम्मेलन हो रहा है, अतः कार्याधिक्य से विशेषाङ्क की तैय्यारी न हो सकी। इसी कारण अङ्क आपकी सेवा में पूर्व सूचित समय पर उपस्थित न कर सके। मई में "भोजन विशेषाङ्क" बड़ी सज-धज के साथ आपकी सेवा में भेजा जायेगा। जिन महानुभावों ने चन्दा नहीं भेजा है वे शीघ्र ही भेजने की कृपा करें।

व्यवस्थापक "सुधारक"

हमारे कारखाने में यज्ञ तथा पूजा
आदि का सर्व प्रकार का
सामान तैयार किया
जाता है।
निर्माता
सीताराम आर्य एण्ड संज़
१७६ लाजपतराय मार्कीट, देहली।

हमारी सौराष्ट्र यात्रा

(ब्र० सुदर्शनदेव गुरुकुल झज्जर)

(देहली से अजमेर तक)

सौराष्ट्र में सणोसरा नामक एक ग्रामटिका (छोटा सा ग्राम) है। इसी ग्राम में ता० १३, १४ १५ नवम्बर में अखिल भारतीय नई तालीम संघ के महासम्मेलन का आयोजन हुआ। विद्यार्थी होने के हेतु इस नई तालीम के महासम्मेलन को देखने की उत्कट इच्छा मन में उत्पन्न हुई। पूछताछ करने पर यह भी विदित हो गया कि वहाँ जाने के लिए प्रतिनिधियों को आधा कन्सेशन भी मिलता है। मार्गव्यय की न्यूनता के कारण जाने की इच्छा और भी प्रबल हो गयी। ऐसा अवसर कभी-कभी सौभाग्य से ही मिलता है। श्री आचार्य जी से भी अनुनय-विनय की। धन की समस्या भी परमात्मा की कृपा से पूर्ण हो गयी। और ता० ५ नवम्बर को प्रातः निम्नाङ्कित ११ व्यक्ति यात्रा के लिये सन्नद्ध हुए।

१—श्री ब्र० भगवानदेव जी आचार्य	गुरुकुल	जज्जर
२— ,, ब्र० वेदव्रत जी	,,	,,
३— ,, ब्र० सुदर्शनदेव जी	,,	,,
४ – ,, ब्र० महावीर जी	,,	,,
५— ,, ब्र० सोमवीर जी	,,	,,
६ – ,, ब्र० मनुदेव जी	,,	,,
७— ,, ब्र० देवशर्म्मा जी	,,	,,
८— ,, स्वा० नित्यानन्दजी	,,	,,
९— ,, सू० धीरजसिंह जी	महपालपुर	देहली
१०— ,, राजपाल जी	बिहूनी	मेरठ
११ ,, अतरसिंह जी	माजरा (जहाजगढ़)	

सायंकाल १०॥ बजे की मेल से देहली जङ्क्शन से प्रस्थान किया। और देहली से रेवाड़ी, अलवर बांदीकुई, जयपुर, किशनगढ़ होते हुये अजमेर पहुँचे, स्टेशन से चल अजमेर के आर्यसमाज मन्दिर में डेरा लगाया।

आजकल आर्यसमाज मन्दिर केसरगंज में श्री प्रकाशचन्द्र जी कविरत्न रहते हैं। ये लकुवा रोग से ग्रस्त हैं। इन्होंने हमारे जाते ही अति प्रसन्नता प्रकट की और यथाशक्ति सेवा भी की। रोगग्रस्त होने के कारण यह कहीं प्रचारार्थ नहीं जा सकते अतः आर्यसमाज मन्दिर में ही बालकों को संगीत सिखाते और साप्ताहिक यज्ञ एवं भजन कीर्त्तन आदि करवाते रहते हैं। इनकी आर्य समाज के प्रचार की लग्न अति प्रशंसनीय है। आर्य समाज मन्दिर भी दर्शनीय है। मन्दिर से मिलता हुआ ही डी० ए० वी० हाई स्कूल भी है।

१—वैदिक यन्त्रालय

आर्य समाज मन्दिर में नित्यकर्मों से निवृत्त हो दर्शनीय स्थानों को देखने चले। आर्यसमाज मन्दिर के निकट ही वैदिक यन्त्रालय है। इसे श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज ने अपने कर कमलों से स्थापित किया था। यह यन्त्रालय (प्रेस) अति विशाल है। इसमें प्रत्येक कार्य के लिये पृथक् २ विभाग हैं। एक मशीन स्वामी जी के समय की भी अब तक बिराजमान है। किंतु दुःख है कि यन्त्रालय कार्य-

कर्त्ताओं में परस्पर कलह के कारण चार मास से बन्द पड़ा है। सत्यार्थ प्रकाश का कम्पोज किया हुआ पड़ा है। यह सब कुछ वहां के एक कार्यकर्ता ने हमें दिखलाया तथा बतलाया।

२—दयानन्द-आश्रम

यन्त्रालय के निकट ही यह दयानन्द आश्रम नामक भवन है। इसमें एक बहुत विशाल पुस्तकालय है। पुस्तकालय में २८ बड़ी २ अलमारियां है। अलमारियों में विषय अनुसार सभी पुस्तकें पृथक् २ रखी हुई हैं। यहां ऋषि दयानन्द जी महाराज के हस्तलिखित ग्रन्थ भी हैं। हमारी ग्रन्थ देखने की इच्छा थी, प्रबन्धक महोदय से पूछने पर पता चला कि मन्त्री जी से आज्ञा लेनी पड़ेगी, तभी हस्तलिखित ग्रन्थ दिखाये जा सकते हैं। मन्त्री जी वहाँ विराजमान न थे अतः ग्रन्थावलोकन की इच्छा अपूर्ण ही रह गयी।

३—दयानन्द सरस्वती भवन

यह भवन अति सुन्दर और बहुत विशाल है। श्री स्वा० केवलानन्द जी महाराज ने घोर परिश्रम से इसे बनवाया था। इस भवन की चारदीवारी के अन्दर उद्यान, यज्ञशाला, व्यायामशाला, मल्ल शाला, साधु-आश्रम आदि २ अनेक विभाग हैं। इसी वाटिका में जहां श्री स्वामी जी महाराज के शरीर की भस्म डाली गई थी। जैसा कि उनका आदेश था कि मेरी मृतक देह की भस्म किसी किसान के खेत में डाल देना। इसी वाटिका में एक सुन्दर यज्ञशाला विराजमान है। इसमें दैनिक यज्ञ होता है। यह स्थान देखकर हृदयसागर उमड़ आता है। हमारे पर किये ऋषि जी के अगण्य उपकारों की याद आ-आकर उच्च जीवन निर्माण की प्रेरणा प्राप्त होती है। इस भवन के पास एक अना सागर भी है।

४—ख्वाजा चिस्ती की दरगाह

यह ख्वाजा साहब की दरगाह अति विशाल है। इसका फर्श सङ्गमरमर के पत्थर से बना हुआ है। इसके अन्दर दो बहुत बड़े २ लोहे के बने देग हैं, जो कि सिमेण्ट में चिने हुए हैं। एक में ६० मन और दूसरे में १२० मन चावल सहजतया पकाये जा सकते हैं। यहां प्रतिवर्ष ख्वाजा साहब की स्मृति में महोत्सव भी होता है। इस दरगाह में अनेक मुस्लिम बादशाहों ने लाखों रुपये लगाकर विशाल भवन और मस्जिदें बनाये हुये हैं। औरङ्गजेब और अकबर बादशाह की भी बनवाई हुई मस्जिदें हैदराबाद के नवाब ने भी इसमें विशाल स्थान बन हुआ है जिसे देखकर मनुष्य चकित हो दाँतों तले अंगुली दबाते हैं। ख्वाजा चिस्ती की दरगाह का स्थान बहुत विशाल और अति सुन्दर बना हुआ है। जिसे देखने के लिए नग्न शिर नहीं जा सकते, इसमें शिर पर वस्त्र डाल कर प्रवेश करना पड़ता है। स्थान दिखाने वाला सज्जन दर्शकों से उस पर भेंट चढ़ाने की प्रेरणा करता है। इस भवन की भित्तिका सोने के झोल से समलंकृत हैं। इस भवन के चारों तरफ श्रद्धालु भक्त लोग भवन की भित्तिकाओं से शिर लगाये पड़े रहते हैं। दरगाह में एक पुस्तकालय भी विक्रयार्थ पुस्तकों का है। जिसमें से कुछ एक पुस्तकें हमने भी खरीदीं। दिखाने वाले

यवन सज्जन ने हमको सभी स्थान प्रेमपूर्वक दिखलाये। वे दरगाह में दिखाने का काम करते हैं। अतः वे अपना कुछ पारिश्रमिक भी चाहते हैं। हमने भी उसे पारिश्रमिक, धन्यवाद आदि देकर उससे बिदा ली।

५—राजा भिनाय की कोठी

दरगाह से चलकर हम राजा भिनाय की कोठी पर आये। यह वह स्थान है जहाँ ऋषि दयानन्द जी महाराज का देहावसान हुआ था। इस कोठी की मरम्मत की जा रही है। किंतु जिस भवन में ऋषि जी का शरीर पूर्ण हुआ था वह कमरा अपने पूर्व रूप में ही छोड़ा हुआ है। इस स्थान को देख कर हृदय कुछ विह्वल हो उठा। ऋषि जी का हम पर कितना ऋण है। ऋषि ऋण का बदला किस प्रकार दिया जाये यह मन की एक विकट समस्या थी। इसी विचार धारा में बहते हुये सायंकाल आर्यसमाज मन्दिर में पहुँचे। नित्य कर्मों से निवृत्त हो भोजन के पश्चात् कुछ समय यात्रा विषयक वार्तालाप करते रहे, फिर सब सो गये।

ता० ७ नवम्बर को प्रातः नित्यकर्म से निवृत्त हो आर्यसमाज अजमेर के साप्ताहिक सत्संग में सम्मिलित हुये। श्री आचार्य जी का भी मनोविषयक प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। श्री सूबेदार धीरजसिंह जी महीपालपुर के कुछ फौजी मित्र भी यहां मिल गये। सत्संग समाप्ति के पश्चात् सूबेदार जी के मित्रों ने पुष्कर जाने के लिये हमारे लिये एक मोटर का प्रबन्ध किया। अजमेर से उत्तर की ओर ५ मील की दूरी पर पुष्कर है। मार्ग में पहाड़ भी है। पहाड़ के अन्दर से ही मोटर पुष्कर जाती है। मोटर में सानन्द बैठकर हम पुष्कर पहुंचे।

६ पुष्कर

पुष्कर के तालाब, विष्णुमन्दिर आदि सभी प्रसिद्ध स्थान देखे। पुष्कर को हिंदू तीर्थ समझते हैं। पुष्कर का मेला भी प्रतिवर्ष लगता है इसके विषय में एक कहावत प्रसिद्ध है कि "ताल तो पुष्कर और सब तलैया"। इस तालाब में स्नान कर लोग अपने आपको पापों से मुक्त हुआ समझते हैं। ता० १० को पुष्कर का मेला था अतः हिंदू लोग भारी संख्या में पुष्कर जा रहे थे। ब्रह्मा का मन्दिर यहां पर बड़ा सुन्दर है। मन्दिर के आगे एक चबूतरा बना हुआ है। इस चबूतरे में चांदी के पुराने सिक्के लगे हुये हैं। जिन्हें दर्शक लोग बड़ी रुचि से देखते हैं। मन्दिर के पुजारी के साथ हमारा संस्कृत में कुछ काल तक वार्तालाप हुआ। पश्चात् सायं ३ बजे अजमेर लौट आये। अना-सागर पर शौचादि से निवृत्त हो दौलत बाग का भ्रमण किया। अना-सागर से दौलतबाग पूर्व पक्ष में है। यह बाग भी अति रमणीक है। बाग के निकट अनासागर के तट पर एक बारहदरी नामक स्थान है। यह केवल सङ्गमरमर के पत्थर से बना हुआ है। यहाँ पर हमने विश्राम किया और अनासागर से सिंघाड़े खरीद कर सभी ने आनन्द से खाये। फिर यहां से निवृत्त हो आर्यसमाज मन्दिर की ओर चले। मार्ग में एक जैनियों का विशाल मन्दिर पड़ता था। उसको देखने की भी हमारी अभिलाषा थी। किंतु जब वहां पहुंचे तो उसका द्वार बन्द हो चुका था, अतः इस रम्य जैन-मन्दिर को हम अन्दर से न देख सके। आर्यसमाज मन्दिर में आकर नित्य कर्मों से निवृत्त हो सुख से सो गये।

ता० ८ नवम्बर को प्रातः ब्राह्म मुहूर्त में उठ नित्यकर्मों से निवृत्त होकर दुग्धपान किया, पुनः ६॥ बजे वाली मेल से १०॥ बजे ब्यावर आर्यसमाज मन्दिर में पहुंचे।

(क्रमशः)

आशावादी

श्री चन्द्रशेखरसिंह 'चन्द्र' "साहित्यरत्न" शिशराढ,
हेठुवा राजपुर जि० शाहबाबाद)

तू कौन अहे! अपने उर में
वेष्टित नन्दन उद्यान लिए ?
जीवन की जलती ऋतु में भी
कोकिल की मधुमय तान लिये।
तू हँस हँस नैश-तिमिर पीते
इसलिए कि अरुणोदय होगा;
तू हँस हँस दुःख को सह लेते
इसलिए कि भाग्योदय होगा।
अपने सपनों की दुनिया में—
फिरते दुःख का अवसान लिए। तुम०।
तुमको कुछं नहीं असम्भव है
इसलिए कि आशावादी हो
उज्ज्वल भविष्य की आशा में
सुख दुःख सहने के आदी हो।
निज शुभ कर्मों के दर्पण में
मानवता की पहिचान लिए।तुम।
तू आशावादी है इससे
तुमको यह जीवन प्यारा है।
इस पार और भी सुंदर है
उस पार और भी न्यारा है
इस भव सागर की लहरों में
आशा का नव जलयान लिए।तुम०।

स्वच्छता

(हरिश्चन्द्र नाज़ गढ़ी घसीटा सोनीपत)

उठो नौजवानो, उठो नौनिहालो।
स्वयं देश अपने की बिगड़ी बनालो॥
द्वेष और घृणा दिलों से निकालो।
अछूतों को अपने गले से लगा लो॥
सजाते हो कूचा, भवन, गृह जैसे।
यूँ ही हृदय-नगरी को तुम भी सजालो॥
यदि मन है मैला तो सब कुछ है मैला।
बदन की स्वच्छता पे इतराने वालो॥
बुरे कार्यों की गिलाज़त में फंसकर।
न अपने पराये पे कीचड़ उछालो॥
जमी हृदय-गृह में घृणा की मिट्टी।
उसे प्रेम-झाड़ से बाहर निकाजो॥
नहीं छुपती वास्तव में ये वास्तविकता।
उसे लाख पर्दों में चाहे छुपालो॥
जगत् को हमेशा हो अभिमान तुम पर।
तुम्हीं विश्व को "नाज़" अपना बनालो॥

* * *

सद्-ज्ञान

(श्री चन्द्राकर प्रसाद त्रिवेदी "मानव")
कटियारी हा० सै० स्कूल सांडी, हरदोई)

(१)

जिस मनुष्य ने पढ़ी न विद्या
किया नहीं जिसने तप दान
जिसने धर्म न सीखा जग में
लिया नहीं जिस ने सद्ज्ञान॥
शील रहित वह व्यर्थ अभागा
बना हुआ पृथ्वी का भार।
पशु इव विचरण करता जग में
नीच पतित दुर्गुण भण्डार॥

(२)

बिना बुलाये जो भी मानुष
अन्य घरों में जाता है।
बिना किसी के कुछ भी पूछे
बहुत अधिक बतलाता है॥
विश्वास योग्य जो नहीं व्यक्ति
उसका यकीन भी करता है।
ऐसा नीच नराधम पापी
घृणित पा मरता है॥

(विदुर नीति के आधार पर)

* * *

भोजन में लवण का स्थान

[श्री आचार्य भगवान्देव जी, गुरुकुल झज्जर]

लवण और क्षार

क्षार के विषय में चरक शास्त्र में लिखा है—"दृष्टिशुक्रघ्नः क्षारः" क्षार दृष्टि अर्थात् आंखों के देखने की शक्ति और वीर्य अर्थात् ब्रह्मचर्य को नष्ट करता है।

चरक में "क्षारः पुंस्त्वोपघातिनाम्" अर्थात् पुरुष की पुंस्त्वशक्ति का नाश करने वाले पदार्थों में सब से आंधक पुंस्त्वनाशक क्षार है। मनुष्य की ब्रह्मचर्य शक्ति वा वीर्य का सब से अधिक नाश क्षार करता है।

क्षार क्या वस्तु है, इस विषय में—'क्षरणात्क्षारः' क्षरण करने से क्षार कहाता है। यह त्वचा, माँस आदि को उतार देता है अतः इसे क्षार कहते हैं। चक्रपाणि के मत में नीचे जाने की क्रिया को क्षार कहते हैं। दोषों को अपने स्थान से हिला देना, यह भी क्षरण का अभिप्राय है। वैसे क्षार अनेक रस वाले द्रव्यों (यव, सज्जी, अपामाग, मूली, सुहागा आदि) से तैयार किया जाता है। इसमें कटु लवण आदि अनेक रस होते हैं।

क्षार सभी लगभग रूक्ष, उष्ण और तीक्ष्ण होते हैं। अतः वीर्य को पतला करके नाश करने वाले होते हैं। ब्रह्मचर्य प्रेमी व्यक्ति को इनका सेवन नहीं करना चाहिये। औषध में क्षार का सेवन करना भी पड़ जाय तो किसी चतुर वैद्य की सम्मति से करना चाहिये। जहां क्षार कुछ रोगों को दूर करता है वहां इसमें ब्रह्मचर्य नाश करने वाला भयङ्कर दोष भी है, अतः ब्रह्मचारी को सदैव इससे बचकर रहना चाहिये।

गोभिल गृह्य सूत्र में लिखा है—"क्षाररेचनद्रव्याणि मा सेवस्व"। स्वामी दयानन्द जी ने संस्कार विधि में इस का अर्थ इस प्रकार लिखा है—"क्षार अधिक लवणादि और रेचक जमालगोटादि द्रव्यों का सेवन मत कर।" वेदारम्भ संस्कार में ब्रह्मचारी के लिए लिखा है कि—"तीन दिन तक क्षार लवण रहित पदार्थ का भोजन ब्रह्मचारी किया करे।" इस से सिद्ध होता है कि ब्रह्मचारी के लिये लवण क्षार का परित्याग उसकी ब्रह्मचर्य साधना में सहायक है।

लवण से हानियाँ

चरक शास्त्र में लवण के दोष इस प्रकार लिखे हैं—"लवणो रसो गुरुः स्निग्ध उष्णश्च ··· पित्तं कोपयति, रक्तं वर्तयति, तर्षयति, मोहयति, मूर्च्छयति तापयति, दारयति, कुष्णाति मांसानि, प्रगालयति कुष्ठानि, 'विषं वर्धयति', शोफान् स्फोटयति पुंस्त्वमुपहन्ति, इन्द्रियाण्युपरुणद्धि, वलीपलितखालित्यमापादयति, अपिच लोहितपित्ताम्लपित्तविसर्पवातरक्तविचर्चिकेन्द्रलुप्तप्रभृतीन् विकारानुपजनयति।

(सू० अ० २६)

लवण रस भारी स्निग्ध और उष्ण होता है, लवण-रस वा नमक का उपयोग पित्त को कुपित करता है, रक्त में अत्यधिक गति को उत्पन्न करता, प्यास लगाता, मोह को पैदा करता, मूर्च्छा तथा सन्ताप को उत्पन्न करता है। फाड़ता है, मांसों को कुरेद देता है, कुष्ठ को गला कर गिरा देता है, विष को बढ़ाता है, शोथों को फोड़ देता है। पंस्त्व को नष्ट करता है, इन्द्रियों को क्षीण करता है अर्थात् उनको अपने अपने विषयों को ग्रहण तथा कर्म करने में असमर्थ बना देता है। मनुष्य को बुड्ढा कर देता है, शरीर में झुर्रियाँ (बुढापे के चिह्न) पड़ जाती हैं, बालों को सफेद और गंजा कर देता है। रक्तपित्त अम्लपित्त, विसर्प; वातरक्त, विचर्चिका इन्द्रलुप्त आदि रोगों को उत्पन्न करता

है। लवण को सुश्रुत में भी खुजली, शोथादि रोगों को उत्पन्न करनेवाला तथा पुंस्त्व और इन्द्रियों की शक्ति का नाशक लिखा है।

जिस प्रकार आजकल नमक का सेवन लोग करते हैं वह तो सर्वथा ही अनुचित है। सब्जियों में ऊपर से नमक डालकर, फलों के साथ भी नमक यहां तक कि सेब तरबूज आदि मीठे फलों के साथ भी नमक खाते हैं, नमक मिले हुये दलिये आदि में दूध मिला कर खाते हैं, ऐसे लोगों पर दया आती है। ऐसे लोग ब्रह्मचर्य की तो क्या रक्षा करेंगे। नमक के सेवन से लोग कुष्ठादि भयङ्कर रोगों में फंस जाते हैं, नमक के कारण अधिक खा जाते हैं, अधिक खाने से अपचन (कब्ज) हो जाता है और कब्ज से वीर्य नाश हो जाता है। क्योंकि कब्ज=मलबन्ध ब्रह्मचर्य का परम शत्रु है। भोजन का अपना क्या स्वाद है यह तो नमक खाने वाले जानते ी नहीं, क्योंकि नमक के स्वाद से अन्य सब स्वाद ष्ट हो जाते हैं। अधिक नमक खाने वाले प्रायः जह्वालोलुप=चटोरे होते हैं अतः वे पेटू बन जाते । पेटू मनुष्य ब्रह्मचर्य की रक्षा सात जन्म में भी हीं कर सकता। ब्रह्मचर्य नाश से सर्वनाश हो जाता । भोजन खाने का जो उद्देश्य स्वास्थ्य, बल वा क्ति बढ़ाना तथा जीवनरक्षादि है वह नमक खाने सर्वथा समाप्त हो जाता है। अतः बाह्य-अप्राकृतिक नमक का परित्याग ब्रह्मचर्य तथा स्वास्थ्य प्रेमी के लिये अत्यन्त हितकर है।

जितनी आवश्यकता लवणरस की शरीर निर्माण स्वास्थ्यरक्षणादि के लिये है उतना नमक शाक-भाजी, फल आदि भोज्य पदार्थों में स्वाभाविक रूप से विद्यमान है। अतः शाक भाजी फलादि सेवन अपनी प्रकृति के अनुसार यथोचित मात्रा में प्रतिदिन करना चाहिये, जिससे शरीर की आवश्यकतानुसार लवणरस की पूर्ति हो सके, और बाहर का नमक खाकर अपने ब्रह्मचर्य तथा स्वास्थ्य का नाश नहीं करना चाहिये। क्योंकि नमक में जो पाचनादि कुछ गुण लिखे हैं वहाँ इसे ब्रह्मचर्य का शत्रु भी तो लिखा है—"पुंस्त्वमुपहन्ति" ब्रह्मचर्य का नाश करके मनुष्य की पुंस्त्व शक्ति को नष्ट करता है अर्थात् लवण का सेवन मनुष्य को नपुंसक (नामर्द) बनाता है।

लवण रस से लाभ तथा बाह्य लवण से हानियां

लवण या नमक एक ही वस्तु है, जिसका सेवन हम सभी प्रतिदिन भोजन में करते हैं। डाक्टर लोग इसको शरीर के लिये हितकारी है, अत अत्यंत आवश्यक मानते हैं।

निम्नलिखित लाभ बतलाते हैं—

१—नमक से हड्डियों तथा शरीर का निर्माण होता है।

२—पाचन शक्ति में नमक सहायता करता तथा रक्त को शुद्ध करता है।

३—नमक के सेवन से मुख की लाला ग्रन्थियां अधिक कार्य करती हैं, लार अधिक मात्रा में उत्पन्न करती हैं।

४—लवण की सहायता से यकृत पित्त बनाने का कार्य करता है।

५—भोजन को पचाने के लिये जो हमारे आमाशय में पाचक-रस बनता है वह लवण के सहयोग से ही बनता है।

चरक शास्त्र में लवण रस के गुण इस प्रकार लिखे हैं—"लवणो रसः पाचनः क्लेदनो दीपनश्च्यावनश्छेदनो भेदनः तीक्ष्णः सरोविकास्यधः स्रंस्यवकाशकरो वातहरः स्तम्भसंघातविधमनः सर्वरसप्रत्यनीकभूत आस्यमास्रावयति कफं विष्यन्दयति"। अर्थात् लवणरस पाचन, गीला करने वाला, दीपन, स्राव करने वाला, छेदन, भेदन, रेचक, सन्धिजोड़ों के बन्धनों को खोलने वाला, कोष्ठों में रुके हुये मलों को बिना पकाये नीचे का ओर ले जाने वाला, वात और कफ को हरने वाला, स्तम्भ (जकड़ना) बन्ध (कब्ज) दोपों के संघात का नाशक और सम्पूर्ण रसों का शत्रु है अर्थात् यदि नमक या लवण रस किसी भोज्य पदार्थ में अधिक हो जाये तो किसी अन्य रस का स्वाद नहीं आता। मुख से लाला और कफ को बहाता है। (मार्गान् विशोधयति) मार्गों को

शुद्ध करता तथा शरीर के अवयवों को मृदु-नरम करता है। (रोचयत्याहारम्) आहार में रुचि करता है अर्थात् लवण रस से आहार स्वादु लगता है। प्रायः लोग इसको अधिक स्वाद के कारण ही अधिक खा जाते हैं। ये लवण रस के लाभ बतलाये हैं, जो नमक प्रतिदिन ऊपर से डालकर खाया जाता है उसमें ये गुण वा लाभ नहीं हैं।

लवण रस शरीर के लिये अत्यन्त उपयोगी है अतः भगवान् ने लवण रस सब से अधिक उत्पन्न किया है। प्रायः सभी खाद्य पदार्थों में लवण रस पाया जाता है। फल तथा शाक-सब्जियों में स्वाभाविक रूप से लवण रस या प्राकृतिक नमक अधिक पाया जाता है। अतः कन्द-मूल, फल,शाकभाजी, के खाने को स्वास्थ्य रक्षार्थ अधिक महत्त्व दिया है। जो लोग शाक भाजी नहीं खाते वे प्रायः रोगी देखे जाते हैं। फलों में मिश्रित जो लवण पाया जाता है वह शरीर के लिये बहुत लाभकारी है। इस स्वाभाविक लवण की ही प्रशंसा प्राचीन शास्त्र तथा आधुनिक वैद्य और डाक्टर करते हैं। जो भोजन में ऊपर से बनावटी सांभर समुद्र आदि का नमक खाते हैं वह हानिकारक है, उसकी आवश्यकता भी नहीं है। वास्तव में हमारी आवश्यकता के अनुसार लवण रस हमें भोज्य पदार्थों से स्वयमेव प्राप्त हो जाता है, अतः यह आवश्यक नहीं कि भोजन पकाते समय लवण डाला जाये या खाते समय ऊपर डाल कर खाया जाये। लवण रस की प्रशंसा के कारण लोगों में नमक मिलाने की प्रबल प्रथा चली हुई है, यह अनावश्यक और हानिकारक है। स्वाद के कारण लोग नमक का सेवन आवश्यकता से अधिक मात्रा में करके हानि उठा रहे हैं। अतः ऊपर से नमक डालकर अथवा भोजन में पकते समय डाल कर खाने की प्रथा को बन्द करना ही हितकर है।

भोज्य पदार्थों में विद्यमान स्वभाविक लवण रस ही हमारे स्वास्थ्य के लिये पर्याप्त है। तथा यह बात भी भली भान्ति समझ लेनी चाहिये कि जहां कहीं लवण का लाभ अथवा उपयोग लिखा है यह सांभर, विड, सौंचर और समुद्र नमक तो कदापि नहीं लेना चाहिये, वहां सैंधे नमक का प्रयोग कर सकते हैं। इस के लिये आयुर्वेद के ग्रन्थों में लिखा है। यह वैद्यों के लिये संकेत है -"लवणं सैन्धवं प्रोक्तम्" जहां कहीं प्रयोग में लवण लिखा हो तो सैंधा नमक ही लेना चाहिये। चरकशास्त्र में भी "सैन्धवं लवणानां श्रेष्ठतमं पथ्यम्" लवणों में सब से श्रेष्ठ सैंधा नमक पथ्य माना है। सैंधा नमक खनिज है अर्थात् खान से निकलता है, इस की खान पाकिस्तान में रह गई, अब सैंधे नमक के नाम से बनावटी नमक बाजार में बिकता है। अतः दौर्भाग्य से असली सैंधा नमक तो औषध-निर्माण के लिये भी नहीं मिलता, प्रतिदिन खाने के लिये कहां से आये? सांभर नमक का सेवन तो अत्यन्त हानिकारक है। ब्रह्मचर्य रक्षा की दृष्टि से तो सभी नमक बहुत हानिकारक हैं।

लवण पर ब्र० रामप्रसाद जी का अनुभव

नमक के विषय में ब्रह्मचारी रामप्रसाद 'बिस्मिल' जो फांसी के तख्ते पर देश की स्वतन्त्रता के लिये हंसते-हंसते झूल गये, लिखते हैं—

"सहसा ही बुरी आदतों को छोड़ा था इसी कारण कभी कभी स्वप्नदोष हो जाता था। तब किसी सज्जन के कहने से हमने नमक खाना छोड़ दिया, केवल उबालकर शाक या दाल से एक समय भोजन करता। मैंने रात्रि के समय भोजन करना त्याग दिया, केवल थोड़ा सा दूध ही रात्रि को पीने लगा। मिर्च खटाई तो छूता भी न था। इस प्रकार पाँच वर्ष तक बराबर नमक न खाया। नमक के न खाने से शरीर के सब दोष दूर हो गये। और मेरा स्वास्थ्य दर्शनीय होगया, सब लोग मेरे स्वास्थ्य को आश्चर्य की दृष्टि से देखा करते।"

लवण पर महात्मा गांधी जी का अनुभव

महात्मा गान्धी जी लवण के विषय में लिखते हैं—

"मसाले के विषय में जो कहा गया है वही नमक के विषय में भी कहा जा सकता है। कितने ही इस बात को सुनकर चौक पड़ेंगे, किन्तु यह एक अनुभव

सिद्ध बात है। इङ्गलैंड में एक स्कूल है, जिस का यह मत है कि नमक मसाले से अधिक हानिकर है, जो शाक हम लोग खाते हैं उस में आवश्यकतानुसार नमक का भाग विद्यमान है। अतः ऊपर से नमक मिलाने की कोई आवश्यकता नहीं। आवश्यकता से अधिक नमक हमारे शरीर के पसीने द्वारा या और किसी दूसरे प्रकार से बाहर निकल आता है। प्रकृति ने आवश्यकतानुसार सभी खाद्य पदार्थों में नमक का भाग छोड़ रखा है। एक लेखक का कहना है कि लवण खून को विषैला बना देता है। वह यह भी कहता है कि जो लोग सर्वथा लवण नहीं खाते उनका खून इतना स्वच्छ रहता है कि सांप के विष का भी प्रभाव उन पर कुछ नहीं पड़ता। हम नहीं कह सकते कि यह कहाँ तक सत्य है। किन्तु अपने निजी अनुभव से यह कह सकता हूं कि दमा जैसे बहुत से रोग नमक छोड़ देने से शीघ्र ठीक हो जाते हैं। दूसरी बात यह है कि इस के छोड़ देने से किसी की कुछ हानि होते नहीं देखी गई, किन्तु उन्हें कुछ लाभ ही होता है। मैंने स्वयं दो वर्ष से नमक छोड़ दिया है। उसका परित्याग मुझे जरा भी नहीं अखरता, बल्कि कुछ अंशों में मुझे लाभ ही हुआ है। अब मुझे पहिले के समान बार-बार जल नहीं पीना पड़ता। यदि कोई मनुष्य नमक छोड़ दे तो कुछ दिन तक उसे अड़चन प्रतीत होगी। किन्तु यदि वह अपने धैर्य को स्थिर रखेगा तो थोड़े ही दिनों में उसे बहुत लाभ हो सकता है।"

लवण पर महात्मा नारायण जी का मत

महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज अपनी 'योगरहस्य' पुस्तक में लिखते हैं—"नामक यदि न खाया जाये तो अधिक अच्छा है, अन्यथा थोड़ी मात्रा में खाया जा सकता है।" इस से भी यही सिद्ध होता है कि यदि अभ्यासी नमक का सर्वथा परित्याग करदें तो उनके लिये अधिक हितकर है।

लवण पर राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन जी का अनुभव

राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन ने हरद्वार में अपने एक भाषण में कहा था—"कि मानव भोजन में ऊपर से नमक मिलाकर खाना व्यर्थ ही नहीं किन्तु अनर्थकर भी है, उतना नमक मनुष्य को शाकादि में मिल जाता है जितने की उसे आवश्यकता है। ऊपरी नमक हानिकारक है।" टण्डन जी ने तर्कबल से विषय पुष्ट किया और उदाहरण में अपने आपको उपस्थित (पेश) किया। राजर्षि दीर्घकाल से नमक नहीं खाते, किन्तु इस प्रयोग से उन पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। टण्डन जी ऊपरी नमक को एक हल्का विष मानते हैं। उन्होंने वैद्यों तथा डाक्टरों से अनुरोध किया कि वे इस विषय पर विचार करें।

लवण पर मेरा अनुभव

२० वर्ष से भी अधिक समय व्यतीत हो गया, तभी से मैंने नमक खाना छोड़ रखा है। उस के कुछ काल पश्चात् मेरे अन्य कई मित्रों ने भी नमक का परित्याग कर दिया था। उन में से कुछ तो कुछ वर्ष पीछे खाने लग गये और कोई कोई ऐसे भी हैं जिन्होंने छोड़ने के पीछे नमक को खाने के लिये स्पर्श भी नहीं किया। हमारे गुरुकुल झज्जर में १२ वर्ष से कोई भी ब्रह्मचारी नमक ऊपर से डालकर या शाक भाजी पकते समय भी डालकर नहीं खाता। जो शाक भाजी में स्वाभाविक लवण होता है वही हम खाते हैं। सैंधादि कोई भी नमक भोज्य पदार्थ के रूप में सेवन नहीं करते। कभी यदि दुर्भाग्यवश रोगी पड़ जाये तो भले ही वह लवण जो किसी औषध का अङ्ग हो अर्थात् औषध में मिला हुआ हो, उसका औषध के साथ विवशता से सेवन करना पड़े। वैसे भोजन के रूप में कभी भी कोई ब्रह्मचारी नमक नहीं खाता। इसका मुख्य कारण यही है कि मेरा यह निश्चय है कि ब्रह्मचारी को अपने साधना काल में नमक नहीं खाना चाहिये, अतः मैं स्वयं भी नहीं खाता तथा हमारे ब्रह्मचारी भी नहीं खाते।

नमक छोड़ने का प्रभाव स्वास्थ्य पर कैसा पड़ता

१—यह सर्वथा सत्य है। (लेखक)

है यह हमारे विद्यार्थियों के स्वास्थ्य को देखने से ही पता चलता है। यथार्थ बात यह है कि हमारे विद्यार्थियों का स्वास्थ्य भारत के सभी शिक्षणालयों से सामन्यतया अच्छा ही हो सकता है खराब तो किसी रूप में है ही नहीं। खुजली तो आज तक किसी को हुई ही नहीं। फार्मी गन्ना चूसने के कारण कभी कभी एक दो विद्यार्थियों को दाद अवश्य हुए हैं, वे साधारण औषध के सेवन से चले गये। आंख किसी की कभी भी नहीं दुखती। फोड़े-फुन्सी आदि रक्त सम्बन्धी विकार भी नहीं होते। प्यास सामान्य लोगों की भांति हमें नहीं सताती। हमारे यहां जब नया बालक प्रविष्ट होता है तब कुछ दिन तो उसे हमारा बिना नमक का शाक दाल अच्छा नहीं लगता किन्तु थोड़े दिन में उसका अभ्यास हो जाता है और भोजन को रुचि करके खाने लगता है तब उसका शरीर तथा स्वास्थ्य उन्नति करने लगते हैं। पाचन शक्ति पहले की अपेक्षा अधिक कार्य करने लगती है अतः भोजन की मात्रा बढ़ने लगती है। रक्त अत्यन्त शुद्ध हो जाता है, मुख की लाली शरीर का लाल रङ्ग तथा चर्मरोगों का सर्वथा अभाव इसके अकाट्य प्रमाण हैं। यही नहीं, चरक शास्त्र तथा महात्मा गांधी जी का यह कथन है कि नमक खाने से सर्प आदि विषैले जन्तुओं का विष शीघ्र और अधिक हानि करता है। जो नमक नहीं खाते उन पर सर्प आदि का विष बहुत ही न्यून हानि करता है अथवा करता ही नहीं, यह मेरा अनेक वर्षों का प्रत्यक्ष अनुभव है। मुझे तथा मेरे अनेक ब्रह्मचारियों को सर्प ने काटा है किन्तु बहुत ही आश्चर्य की बात है कि प्रत्यक्ष रूप से तो अनेक ब्रह्मचारियों पर नाममात्र भी सर्प के काटने का प्रभाव नहीं दिखाई दिया। किसी किसी पर नाममात्र का प्रभाव हुआ, वह औषध-उपचार से एक-दो दिन में ठीक हो गया। किन्तु जो व्यक्ति नमक का सेवन करते हैं ऐसे भी मेरे कई साथियों को सर्प ने काटा। उन को सर्प के काटने से पर्याप्त हानि तथा कष्ट उठाना पड़ा।

आजकल (चार-पाँच वर्ष से) मैं सर्प-विष की चिकित्सा करता हूँ। आस-पास के ग्रामों से प्रतिवर्ष सर्प के दंशित रोगी आते ही रहते हैं। इस शुष्क प्रान्त में बिना फण के पित्त प्रकृति के (Vapur) सर्प अधिकतर घुरेड़िये चित्तकोड़ियादि हैं जो पर्याप्त विषैले होते हैं। चिकित्सा समय पर तथा यथोचित नहीं होती तो मृत्यु भी हो जाती है। इसी प्रकार के सर्पों ने हमारे ब्रह्मचारियों को काटा था, उन पर तो नाम मात्र का प्रभाव हुआ, अथवा सर्वथा प्रभाव ही नहीं हुआ।

दस वर्ष के लगभग हुये आर्यसमाज के एक विद्वान् ब्रह्मचारी को इसी प्रकार के सर्प ने काटा, वे सज्जन नमक मीठा दोनों खाते थे। उनके शरीर पर विष का भयंकर प्रभाव हुआ। उन दिनों मैं सर्प-विष की चिकित्सा नहीं करता था। एक दो चिकित्सों ने उनकी चिकित्सा भी की, किन्तु सब व्यर्थ ही रहा। दंशित स्थान तथा मुख से विष के कारण रक्तशिराओं के फटने से पर्याप्त मात्रा में रक्त निकल गया। अन्त में भारत के उस अमूल्य रत्न को मृत्यु ने हमारे से छीन लिया। नमक मीठे के सेवन से विष का प्रभाव उन पर इतना अधिक हुआ, ऐसा मेरा विचार है। उनकी मृत्यु के पीछे ही सर्पविष चिकित्सा पर पर्याप्त खोज मैंने की, जो लेखों में पाठक पढ़ रहे हैं। अब तो मैं अनुभव पूर्वक कहता हूँ कि—"लवणो रसो विषं वर्धयति" चरक शास्त्र का यह कथन सर्वथा सत्य है तथा महात्मा गांधी जी का सन्देहास्पद यह लिखना कि "जो लोग सर्वथा लवण नहीं खाते उनका खून इतना स्वच्छ रहता है कि सांप के विष का भी प्रभाव उन पर कुछ नहीं पड़ता।" निःसन्देह चरक शास्त्र के उपर्युक्त कथन का कि "लवण विषवर्द्धक है" अनुमोदन करता है।

जब कोई सर्प का काटा रोगी चिकित्सार्थ गुरुकुल में आता है तब औषधोपचार के साथ उसका नमक मसाला आदि सब छुड़वा देते हैं तथा गोघृतादि सात्विक पदार्थों का सेवन विशेषतया करवाते हैं। नमकादि के छुड़वाने से चिकित्सा शीघ्र तथा सरलता से हो जाती है। इसी प्रकार तृषा, दाह,

रक्तपित्त, अम्लपित्त, विसर्प, कुष्ठ, शोथ, गञ्ज, दाद, खुजली आदि सब चर्मरोग, नेत्ररोग, दन्तरोग बालों का सफेद होना, नपुंसकता (नामर्दी), अर्थात् ब्रह्मचर्य का नाश, स्वप्नदोष और धातु प्रमेह आदि रोगों को नमक का सेवन जन्म देता और बढ़ाता है। नमक के छोड़ने से उपर्युक्त रोग कम हो जाते हैं, कई तो सर्वथा चले ही जाते हैं। यह अनुभव मैं अनेक वर्षों से कर रहा हूँ। ब्रह्मचर्य के लिये नमक कितना हानिकारक है यह काकोरी के शहीद ब्र० रामप्रसाद जी के लेख को पढ़ कर पाठक समझ ही गये।

नपुंसकता को जन्म देने वालों में नमक सब से बढ़ कर है यह चरकशास्त्र के अनेक प्रमाणों से सिद्ध हो चुका है। क्योंकि अणु रूक्ष और तीक्ष्ण प्रकृति के नमकादि जितने भी पदार्थ हैं ये वीर्यादि धातुओं को पतला करते हैं। इससे स्वप्नदोष, वीर्य का मूत्र में निकलना आदि प्रमेह रोग हो जाते हैं। वीर्यनाश नपुंसकतादि रोगों की उत्पत्ति होती है। अतः स्वास्थ्यप्रेमी तथा ब्रह्मचारियों को नमक का सेवन कदापि भूलकर भी नहीं करना चाहिये। यदि दुर्भाग्यवश किसी को औषधादि के रूप में वा किसी अन्य कारण से नमक का प्रयोग करना भी पड़े तो सैन्धे नमक का ही सेवन वह भी थोड़ी मात्रा में करना चाहिये। चरकशास्त्र के अनुसार "सैन्धवं लवणानाम्" सब नमकों में सैन्धव नमक ही पथ्य है, अर्थात् कम हानिकारक है। किन्तु ब्रह्मचारी को नमक से सर्वथा बचना चाहिये। इसी में इसका कल्याण है। सारे नमक रूक्ष तीक्ष्ण और उष्ण होने से वीर्यनाशक हैं। सैन्धे नमक की जहाँ खाने की आज्ञा हो वह केवल इसलिये जो कोई रोगी आदि लवण खाना चाहे अथवा कोई गृहस्थ नमक बिना न रह सके तो वह बहुत थोड़ी मात्रा में सैन्धे नमक का सेवन कर सकता है। इससे कुछ कम हानि होगी क्योंकि 'लवणं सैन्धवं नोष्णम्' चरक में लिखा है सभी लवण रस उष्णवीर्य होते हैं केवल सैन्धव लवण उष्णवीर्य नहीं। तीक्ष्णता और रूक्षता का दोष इसमें भी है। अतः नमक सेवन से बचना ही ब्रह्मचारी के लिये कल्याणकर है।

वेद के व्याख्यान

वेद में अनेक विषय है उनको प्रकट करने के लिये एक व्याख्यान दिया जा रहा है। ऐसे व्याख्यान २०० से अधिक होंगे। अब तक ये व्याख्यान छप चुके हैं—

१. मधुच्छन्दा ऋषि का अग्नि में आदर्श पुरुष का दर्शन। २. वैदिक अर्थ-व्यवस्था और स्वामित्व का सिद्धान्त। ३. अपना स्वराज्य। ४. श्रेष्ठतम कर्म करने की शक्ति और स्वामित्व का सिद्धान्त। ५. व्यक्तिवाद और समाजवाद। ६. ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः। ७. वैयक्तिक जीवन और राष्ट्रीय उन्नति। ८. सप्त व्याहृतियां। ९. वैदिक राष्ट्रगीत। १०. वैदिक राष्ट्र शासन। ११. वेदों का अध्ययन अध्यापन। १२. वेद का श्रीमद्भागवत में दर्शन। १३. प्रजापति संस्था द्वारा राज्य शासन। १४. त्रैत, द्वैत, अद्वैत, और एकत्व के सिद्धान्त। १५. क्या यह विश्व मिथ्या है? १६. ऋषियों ने वेद का संरक्षण किस तरह किया? १७. वेद संरक्षण और प्रचार के लिये आपने क्या किया है? १८. देवत्व प्राप्त करने का अनुष्ठान। १९. जनता का हित करने का कर्त्तव्य। २० मानव के दिव्य देह की सार्थकता।

मन्त्री—स्वाध्याय मण्डल
पो० पारडी, जि० सूरत।

सम्मति

सुधारक "व्यायाम विशेषाङ्क" की ही कृपा है कि आज मैं अपने स्कूल में सर्वविजेता मल्ल हूँ, हालांकि मैं हल्के शरीर का स्वामी हूँ। व्यायाम विशेषाङ्क से कोई भी लाभ उठा सकता है, सर्वश्रेष्ठ स्वस्थ तथा बलवान् बन सकता है। विद्यार्थियों के लिये ही क्या, पेशावर मल्लों के लिए भी व्यायाम विशेषाङ्क से अच्छा गुरु मिलना दुर्लभ है। भोजन विशेषाङ्क निकलने पर मैं समझता हूँ स्वास्थ्य संबंधी कोई भेद छुपा न रह जायेगा।

रामजीवन कक्षा ११
देहली छावनी

अपूर्व त्याग

(श्री जगन्नाथ बी० ए० एल-एल० बी०, जे० डी० प्रभाकर, सिद्धान्त शास्त्री)

[लेखक ने यह कहानी कई वर्ष पूर्व लिखी थी, सुधारक के पाठकों के लाभार्थ पुनः छापी जा रही है]

"भिक्षां देहि" भिक्षां देहि" की आवाज लगाता हुआ वह चला जा रहा था। उसका विशाल मस्तिष्क, उस पर चमकता हुआ तेज दूसरों को सहसा ही अपनी ओर खींच लेता था। शान्ति की वह मूर्ति था और कौपीन पहरे जब "भिक्षा दो माता, भिक्षा दो" कहता हुआ जाया करता था तो लोग-बाग इकट्ठे हो जाते और उसके चरणों को छूकर अपने को भगवान् समझते थे।

सुख-दुःख, हर्ष-शोक, सर्दी-गर्मी, सहानुभूति और उसके प्रति दिखाया गया क्रोध वे सब उसके लिये व्यर्थ थे। वह निर्द्वन्द्व हो चुका था और यह मेरा कर्त्तव्य है, महात्मा बुद्ध की आज्ञाओं का पालन करना मेरा परम धर्म है, ऐसा समझकर ही वह निर्मम निर्मोह होकर त्याग, तपस्या, के साथ जीवन व्यतीत करता हुआ बुद्ध धर्म का प्रचार किया करता था और घर-घर भिक्षा मांग कर ही शरीर कि रक्षार्थ भोजन खाता था।

* * * *

(२)

आज बड़ा भारी मण्डप सजा हुआ है। एक भारी पण्डाल में एक चौकी घर महात्मा बुद्ध विराजमान हैं। पास में ही उनके शिष्य आनन्दादि बैठे हुए हैं। पण्डाल लोगों से खचा-खच भरा हुआ है और लोग बड़ी उत्सुकता से तथा शान्ति से बुद्ध भगवान् का उपदेश सुन रहे हैं।

"यदि तुम संसार में अपना भला चाहते हो और यदि चाहते हो निर्वाण पद प्राप्त करना, तो त्याग करो। त्याग ही तुम्हें अमर पद को प्राप्त करायेगा। मानव जाति की भलाई के लिये गरीबों और बेकसों के लिये, विधवाओं और अनाथों के लिये त्याग करना सीखो। मोक्ष के चाहने वालो, दूसरों की भलाई के लिये अपनी अमूल्य से अमूल्य वस्तु का भी त्याग करो। ऐसा त्याग ही सचमुच मनुष्य को उन्नति की ओर बढ़ायेगा……"

और वह भिक्षु भी मंच के एक कोने पर बैठा हुआ यह सब सुन रहा था।

+ ÷ + +

(३)

"भिक्षां देहि" उस बौद्ध भिक्षुक ने एक मकान के द्वार पर जाकर कहा।

और एक सुन्दर सुन्दर आभूषणों तथा कपड़ों से सुसज्जित सुन्दरांङ्गी महिला मस्ती की चाल से चलती हुई और चंचल दृष्टि से देखती हुई भिक्षा ले तुरन्त आ खड़ी हुई। और भिक्षा देकर हाथ जोड़ कर बोली—

"महाराज! क्या आप मेरी एक प्रार्थना स्वीकार करेंगे?"

"मेरे योग्य क्या सेवा है?" भिक्षुक ने उस महिला के व्यक्तित्व की ओर जरा भी ध्यान न देते हुये कहा।"

"बस यही कि आप मेरे घर नित्य प्रति आकर मुझे सेवा करने तथा आपके दर्शन करने का सौभाग्य प्रदान करें"

+ ÷ + +

(४)

भिक्षुक को आते आते कई दिन बीत गये थे। आज वह महिला अत्यन्त व्याकुल हो एक खाट पर पड़ी आहें भर रही है। वह सोच रहीं है न जाने क्यों मैं अपने मन की व्यथा नहीं कह पाती। रोज निश्चय करती है कि आज अवश्य कहूँगी और न जाने क्यों साहस नहीं होता। आह वह दिव्य मूर्ति सुन्दर शरीर तो यों कष्ट पाने योग्य न था। उसकी आंखें! न जाने उनमें क्या भरा है कि वे मुझे एकदम मोहित कर देती हैं।

"एक तपस्वी से ऐसी बातें"—उसकी आत्मा ने धिक्कारा।

"ऐसा तो दुनिया में हुआ ही करता है" उसके मन ने तुरन्त बहाना किया और उसकी आत्मा की

आवाज ऐसे विचारों से दब ही गई और उसने अपने मन की बात उससे कहने का निश्चय कर ही लिया।

भोले-भाले भिक्षुक को क्या पता था कि श्रद्धा के आरवण में धोखा है। भक्ति के परदे के पीछे षड्यन्त्र रचा जा रहा है।

❀ ❀ ❀ ❀

(५)

"भिक्षा देहि" आज भी नित्यप्रत्यनुसार भिक्षुक ने आवाज लगाई और महिला ने भिक्षा देते हुए बड़े ही मानसिक संघर्ष के पश्चात् हिचकते हुए कह ही डाला:—

"महाराज ! क्या इस दासी का उद्धार करोगे"। "क्या कष्ट है देवी तुमको" भिक्षुक ने उसके आशय को न समझते हुए कहा "मैं चाहती हूँ कि आप मुझ से विवाह....।"

मेरे में ऐसी क्या विशेषता है"—कहते हुए आवेश भरे शब्दों में तुरन्त भिक्षुक ने पूछा।

तुम्हारी आंखें! भगवान् ने तुम्हारी आंखों को कितना सुन्दर बनाया है। वे मुझे कितनी प्रिय लगती हैं कतनी विशाल, कितनी सुन्दर......

"यह सब कुछ वह स्त्री कह ही रही थी कि भिक्षुक ने अपने थैले से एक चाकू निकाला और मेरे गुरु की आज्ञा है कि—

"दूसरों की शान्ति के निमित्त अपनी प्रियतम वस्तु की भी बलि चढ़ा दो।"

ऐसा कहते हुए तुरन्त अपनी आंख निकाल उसके सम्मुख कर दीं।

और यह सब कुछ उसने इतनी निडरता तथा नाटकीय ढँग से किया कि महिला स्तब्ध सी रह गई और उसका हाथ भी न पकड़ पाई।

—

आचार्य श्री रघुवीर प्रसाद जी त्रिवेदी द्वारा सम्पादित
"जय आयुर्वेद" का अभूतपूर्व विशेषाङ्क
पथ्यापथ्य चिकित्साङ्क
पृष्ठ संख्या ३५०
शीघ्र ही ३ रुपये १३ आने भेजकर प्राप्त करें
प्रतियां सीमिति छपी हैं
पता—जय आयुर्वेद कार्यालय,
मोती चौक, जोधपुर (राजस्थान)

हिन्दी का सस्ता साप्ताहिक पत्र [जीवन] वार्षिक मूल्य चार रुपये

इसका उद्देश्य—

'साहित्य-क्षेत्र में प्रवाहित होकर जीवन की हर धारा और उसके छोटे-मोटे सभी भागों को स्पर्श करना चाहता है।'

इसकी विशेषतायें—

- कठिन से कठिन विषय को जनता की भाषा में प्रस्तुत करने वाला।
- लोकरुचि को उन्नत करने वाला।
- आर्थिक लाभ के आगे न झुकने वाला।
- किसी दल या वाद विशेष से बँधा न होने के कारण स्वतन्त्र; संयत और स्वस्थ सामग्री प्रस्तुत करने वाला।
- गुजराती; मराठी आदि भारतीय भाषाओं के श्रेष्ठ लेखों का सुन्दर अनुभव प्रकाशित करने वाला।
- सामाजिक, राजनैतिक; आर्थिक विचारों का विभिन्न दृष्टि-कोणों से विश्लेषण करने वाला आपका निजी पत्र।

इसलिये—

परिवार के सभी सदस्यों, स्त्री-पुरुषों; भाई-बहिनों पुत्र-पुत्रियों को पढ़ने दिया जा सकता है। यह पत्र आपके समूचे परिवार को सुपाठ्य व सात्विक मानसिक आहार देगा।

जीवन प्रकाशन वल्लभ विद्या नगर (गुजरात)

संस्था समाचार

ता० २०, २१ फरवरी सन् १९५५ ई० रविवार; सोमवार को गुरुकुल झज्जर का तैंतीसवां वार्षिक महोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। ता० १४ फरवरी सोमवार को श्री पूज्य-स्वा० सुरेन्द्रानन्द जी महाराज के निरीक्षण में अथर्व वेद से महायज्ञ आरम्भ हुआ और पूर्णाहुति ता० २१ फरवरी सोम वार को प्रातः काल हुई। पूर्णाहुति से पूर्व श्री पूज्य-स्वामी शान्तानन्द जी महाराज आर्यसमाज व्यावर, श्री पूज्य स्वा० सुरेन्द्रानन्द जी महाराज तथा श्री पूज्य आचार्य राजेन्द्रनाथ जी शास्त्री श्री दयानन्द वेद विद्यालय देहली के सारगर्भित प्रवचन हुए। महायज्ञ के लिये लगभग साढ़े तीन मन घृत और दो सौ रुपये प्राप्त हुए

महोत्सव पर विदेश प्रचारक श्री आनन्द भिक्षु जी महाराज, श्री पूज्य स्वामी-सन्तोषानन्द जी महाराज, वैदिक विद्वान् श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यामार्तण्ड, श्री माननीय पं० जगदेव जी शास्त्री सिद्धान्ती, श्री पूज्य आचार्य राजेन्द्रनाथ जी शास्त्री, श्री पूज्य स्वा० धर्मानन्द जी महाराज, श्री पूज्य स्वामी नित्यानन्द जी महाराज पधारे थे।

राष्ट्रिय नेताओं में भारत सरकार के विधि मन्त्री श्री माननीय एच. वी. पाटसकर, श्री माननीया श्रीमती पाटसकर, श्री घमण्डी लाल जी बंसल एम० पी० श्री चौ० बदलुराम जी एम० एल० ए० आदि पधारे थे।

श्री माननीय पाटसकर ने औषधालय, पुस्तकालय, कृषि विभाग, गोशाला, तथा आतुरालय आदि विभागों को देखकर प्रसन्नता प्रकट की। गोशाला की दश-दश और पन्द्रह सेर दूध देने वाली गायों को देख कर बड़े प्रभावित हुए। श्रीमती पाटसकर ने भी पर्याप्त समय तक उपरोक्त विभागों को देखा। दोनों ने शिक्षा पर अपने विचार व्यक्त किये। आपके विचार भारतीय प्राचीन भावनाओं से ओत-प्रोत थे।

श्रीमती पाटसकर ने १०१)गुरुकुल के लिये भेजने का वचन दिया।

महोत्सव पर लगभग आठ सहस्र रुपये नकद तथा वचनों के रूप में प्राप्त हुए।

निवेदक—मुख्याधिष्ठाता

ऋषि पाठविधि के भक्त का महा प्रयाण

श्री पूज्य स्वा० सदानन्द जी महाराज का देहावसान गत मास आर्य समाज घरौण्डा में हृदय की गति रुक जाने से हो गया। स्वर्गीय स्वामी जी महाराज के सहसा ही देहावसान से महर्षि का अनन्य भक्त तथा ऋषि पाठविधि का सेवक आर्य जगत् से उठ गया। आपका बचपन का नाम श्री काशीराम था। बाल्यकाल से ही आप आर्य समाज के कार्यों में अभिरुचि रखते थे। आपका जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले के रूखाला ग्राम में सम्वत् १९५३ विक्रमी के भाद्रपद मास में हुआ था।

विवाह के उपरान्त आपके एक ही पुत्र ने जन्म लिया कि आपकी धर्मपत्नी का देहान्त हो गया। आर्यसमाज के कार्य की लग्न थी, महर्षि के जीवन की हृदय पर छाप थी, अपने इकलौते पुत्र को अपने पिता जी के संरक्षण में छोड़कर आप संन्यासी हो गये। और सदानन्द नाम रखकर संन्यासी होने पर काशी, लाहौर आदि स्थानों पर संस्कृत अध्ययन के लिये भटकते रहे। अछूतोद्धार से प्रेम था। पुनः ग्राम की ओर लौटे और पाठशाला खोलकर विद्या का प्रचार करते रहे। शुद्धि आंदोलन में भी बढ़ चढ़ कर भाग लेते रहे। कई स्थानों पर यवनों से डटकर मुठभेड़ हुई। चोटें खाईं परन्तु शुद्धि के कार्यों से पीछे न हटे। माथे पर लाठी के घाव का निशान दिखाया करते थे। उस लाठी प्रहार के उपरान्त उनके शिर में दर्द रहा करता था। पाठशाला में अधिकतर हरिजन बालकों को प्रवेश करते थे। प्रौढ़ शिक्षा का भी प्रचार करते थे। स्वराज्य आंदोलन में भी बढ़-चढ़ कर भाग लिया। अंग्रेजों का भारत में रहना भारत के लिये अभिशाप बतलाया करते थे। सन् १९३४ ई० में श्री दयानन्द वेद विद्यालय देहली में आ गये। आठ-दश वर्ष तक निरन्तर विद्यालय की सेवा करते रहे।उनके सुपुत्र श्री पं० सुरेन्द्रकुमार जी शास्त्री भाष्याचार्य श्री दयानन्द वेद विद्यालय देहली के सयोग्य स्नातकों में से हैं।

विद्यालय से पृथक् होकर स्वर्गीय स्वामी जी महाराज छोटा खेड़ा, गुरुकुल टटेसर आदि स्थानों पर कार्य करते रहे।

प्रभु हमें सद्बुद्धि प्रदान करे जिससे हम उनका अनुसरण करें। अन्त में हम स्वर्गीय आत्मा की सदगति के लिये प्रभु से कामना करते हैं।

विश्वप्रिय शास्त्री

ऋषिबोधोत्सव के उपलक्ष्य में ३० अप्रैल तक हमने अपने ग्राहकों को कुछ पुस्तकें बिना मूल्य के ही देने का निश्चय किया है। अतः आप इस सुअवसर को हाथ से न जाने दें और अपने आदेश शीघ्र भेज कर पुस्तकें मुफ्त प्राप्त करें। निम्न नियम ध्यान से पढ़कर अधिक से अधिक पुस्तकों का आदेश दें। कृपया ध्यान रखें कि यह नियम केवल हमारे द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर ही लागू होते हैं। १—जो सज्जन २०) की पुस्तकें एक साथ मँगायेंगे उन्हें एक पुस्तक "विदेशों में एक साल" २।) मुफ्त दी जावेगी। २—जो १५) की पुस्तकें एक साथ मँगायेंगे उन्हें "आर्य सिद्धान्त दीप" १।) तथा "आय समाज की आवश्यकता" ।) यह दो पुस्तकें मुफ्त दी जावेंगी। ३ – जो १०) की पुस्तकें एक साथ मँगायेंगे उन्हें "हितैषी की गीता" ॥।) तथा "राम राज्य कैसे हो" ≡) यह दो पुस्तकें मुफ्त दी जावेंगी। ४—जो ५) की एक साथ मँगायेंगे उन्हें "संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय" ॥) पुस्तक मुफ्त दी जावेगी। ५—जो सज्जन २५) से अधिक का आदेश देंगे उनको पुस्तकों की बजाय २५ पच्चीस रुपये प्रतिशत कमीशन दिया जावेगा। अपना आदेश शीघ्र भेजिये।

हमारे प्रकाशन

[आज से पाँच वर्ष पूर्व दीपमाला सं० २००६ को हम ने साहित्य सेवा का व्रत लिया था। तब से अब तक हमने निम्न तथा अन्य ५६ छोटी-बड़ी पुस्तकों का प्रकाशन किया है। उन में से पांच के तीसरे और नौ के दूसरे संस्करण तक निकल चुके हैं। हम यह सेवा आप महानुभावों के सहयोग से ही कर सके हैं। आशा है आगे भी यह सहयोग पूर्ववत् प्राप्त होता रहेगा।]

नये प्रकाशन	
१. व्यायाम सन्देश	१)
२. आसनों के व्यायाम	॥)
३. सदाचार पंचिका	॥)
४. दृष्टान्त मंजरी	२)
५. काश्मीर यात्रा (प्रेस में)	॥)
६. बिच्छू विष चिकित्सा	=)
७. दयानन्द और गोरक्षा	-)॥
८. आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
९. चकबन्दी कानून	॥)
१०. संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय	॥)
११. स्वामी विरजानन्द	१॥)
१२. संस्कृत क्यों पढ़ें	१।=)
पूर्व के प्रकाशन	
१३. ब्रह्मचर्य के साधन—	
भाग १,२ (प्रातः जागरणादि)	।-)
भाग ३ (दन्त रक्षा)	≡)
भाग ४ (व्यायाम सन्देश)	१)
भाग ५ (स्नान, संध्या, यज्ञ)	।=)
१४. ब्रह्मचर्यामृत—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)॥
१५. तम्बाकू का नशा—	
बाल संस्करण	।=)
साधारण संस्करण	=)॥
१६. पापों की जड़ शराब—	
बाल संस्करण	।-)
साधारण संस्करण	=)॥
१७. ब्रह्मचर्य शतकम्	॥=)
१८. हित की बातें	-)॥
१९. नेत्र रक्षा	≡)
२०. व्यायाम का महत्व	≡)
२१. आदर्श ब्रह्मचारी	।)
२२. कन्या और ब्रह्मचर्य	≡)
२३. स्वप्नदोष और उसकी चिकित्सा	=)॥
२४. बाल विवाह से हानियां—समाप्त	
२५. मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)
२६. संस्कृतांकुर	१।)
२७. संस्कृत कथा मंजरी	।-)
२८. श्रुति सुधा	≡)
२९. वैदिक गीता	३)
३०. आर्यसमाज की आवश्यकता	।)
३१. आ० स० की आवश्यकता (छोटी)	-)
३२. आर्योद्देश्य रत्न माला	-)
३३. आय समाज के नियमोपनियम	=)
३४. वैदिक संध्या पद्धति	-)
३५. वैदिक संध्या हवन पद्धति समाप्त	
३६. वैदिक सत्संग पद्धति	।=)
३७. कर्त्तव्य दर्पण	॥।=)
३८. हितैषी की गीता	॥।)
३९. कृषि विज्ञान	॥।)
४०. सिख और यज्ञोपवीत	≡)
४१. पंजाब की भाषा	-)
४२. आर्यकुमार गीतांजली भाग १, २	।=)
४३. रामराज्य कैसे हो?	≡)
४४. अफ्रीका की यात्रा	२।)
४५. स्वामी दयानन्द और म० गांधी	२)
४६. स्वामी श्रद्धानन्द	)॥
४७. क्या हम आर्य हैं? (६० प्रश्न)	-)
४८. महर्षि दयानन्द का कार्य	-)

पता :—वैदिक साहित्य सदन आर्य समाज मंदिर, सीताराम बाजार, देहली।

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि.) रोहतक की अचूक औषधियाँ

च्यवनप्राश (सर्वोत्तम रसायन)

इसी ऋतु के ताजे आंवले से तैयार किया गया स्वादिष्ठ, सुमधुर और दिव्य रसायन (टानिक) है। जिसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पूरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक, सभी हृदय रोगों की अद्वितीय औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातु-क्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका (निरन्तर) सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य १ पाव का दो रुपया, ७) सेर

बृहत्शतत्वरी घृत

(रक्तपति) शरीर के किसी भी अंग से खून निकलना, शिर या किसी भी अंग में जलन होना, मूत्र का लगकर आना, और धातुओं की क्षीणतादि रोगों के लिये यह घृत अत्युत्तम है। हृदय रोगों को नष्ट करके पुरुषत्व को बढ़ाता है।

मूल्य ३) आधा पाव २३) सेर

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है। इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजले) की महौषधि है। वीर्यवर्द्धक, कास (खाँसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपेदिक), श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्तवर्द्धक है। निर्बलता का दूर निर्बलों को बलिष्ठ व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढंग की एक ही औषधि है। ५) बड़ी शीशी

ब्राह्मी घृत

यह घृत आयुर्वेद शास्त्र की विधि के अनुसार शुद्ध गोघृत से बनाया गया है। इसका सेवन कुष्ठ (कोढ़) मृगी (हिस्टीरिया) मस्तिष्क की निर्बलता चक्कर आना, याद किये हुये पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है और जिसकी स्मरण शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिये श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी, दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष और सब प्रकार के धातु प्रमेह को दूर करता है। इसके सेवन से स्मरण शक्ति खूब बढ़ती है।

सेवन विधि--६ माशे से १ तोले तक दूध में डाल कर अथवा मिश्री मिलाकर प्रातः सायं सेवन करें। मूल्य आध पाव ४) चार रुपये।

नेत्र ज्योति सुर्मा

लगाइये और नेत्र ज्योति पाइये। इसके लगाने से आंखों के सब रोग-जैसे आंख दुखना, खुजली, लाली, जाला, फोला, रोहे, कुकरे, पास का कम दीखना (शोर्ट साइट), दूर का कम दीखना (लांग साईट) प्रारम्भिक मोतिया बिन्द आदि दूर हो जाते हैं। आंख के सब रोगों की रामबाण औषध है। यही नहीं किन्तु लगातार लगाने से दृष्टि (बीनाई) को तेज तथा आंखों को कमल की तरह साफ स्वच्छ रखता है। बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। प्रतिदिन जिसने भी लगाया उसी ने मुक्तकण्ठ से इस सुर्मे की प्रशंसा की है।

सेवन विधि--पहले सलाई को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लें। फिर सुर्मे में भर कर झाड़ कर लगाइये। प्रायः सायं लगाना चाहिये। मूल्य ॥) शीशी

त्रिफलादि घृत

यह घृत आंखों के लिये अत्युत्तम है। इसकी जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है। यह आंखों के समस्त रोगों के लिये रामबाण है, इसके सेवन से नेत्रों का कोई भी रोग नहीं रहता। इससे रतौंधो, आंखों की खुजली, पानी जाना, धुन्ध जाला इत्यादि सब दूर होते हैं। आंखें निर्मल होकर चमकने लगती हैं। सौ वर्ष तक नेत्र-ज्योति नवयुवकों के समान बनी रहती है। मोतियाबिंद में भी लाभदायक है। आंखों के छोटे-बड़े सब रोगों को हितकारी है।

सेवनविधि-६माशे से एक तोले तक दूध में डाल कर अथवा मिश्री मिलाकर या भोजन के साथ प्रातः सायं सेवन करें। मूल्य आध पाव ४) रु०

हवन सामग्री

यह हवन सामग्री सैकड़ों सुगन्धित, पौष्टिक, बलवर्धक औषधियों से तैयार की जाती है। ऋतु अनुकूल ताजा और शुद्ध सामग्री का ही यज्ञ करना महत्व रखता है। दैनिक हवन के प्रेमियों ने इसे अपनाया है। यज्ञ-महायज्ञ और संस्कार तथा पर्वों के लिये यह उपयोगी सिद्ध हुई है। मूल्य १।) सेर

स्वास्थ्यवर्धक चाय

यह चाय स्वदेशी, ताजी एवं शुद्ध जड़ी-बूटियों से तैयार की गई है। वर्तमान चाय की भांति यह नींद और भूख को न मार कर खांसी, जुकाम, नजला, सिरदर्द, खुश्की, अजीर्ण, थकान, सर्दी आदि रोगों को दूर भगाती है। मस्तिष्क एवं दिल को शक्ति देती है। मू० १ छटांक।-)

महाबांसादि घृत

यह घृत रक्तपित्त, खांसी, स्वरभेद, हलीमक, गुल्म रोगों में उत्तम है। रक्तपित्त (शरीर के किसी भी अंग से खून निकलना) रोग के लिये तो यह एक मात्र अचूक औषध है। हमने इसको अनेक रोगियों पर अनुभव किया है। हमारे एक ब्रह्मचारी को नकसीर में किसी भी प्रकार की औषधि से लाभ नहीं हुवा, उसके लिये भी इस घृत ने अमृत का काम किया। अब उसकी नकसीर बन्द है।

मूल्य ५) आधा पाव, ४०) सेर

बृहत्कण्टकारि घृत

इसके सेवन से सब प्रकार की खांसी, हिचकी, श्वास, कफरोगादि दूर होते हैं। दमे के रोगियों के लिये भी लाभदायक है। अनेक रोगियों पर अनुभव घृत है। मूल्य ४) आध पाव, ३२) सेर

हमारी रसायनशाला में प्रत्येक घृत शुद्ध गोघृत बनाया जाता है। तथा अत्यन्त सावधानी परिश्रम से शास्त्र विधि से मन्दी-मन्दी अग्नि द्वारा सिद्ध किया जाता है। जिसमें कई घृत तो पच्चीस-पच्चीस तीस-तीस दिन में बनाते हैं। अतः सर्वोत्तम हैं। हम बलपूर्वक कह सकते हैं कि ऐसे उत्तम घृत किसी रसायनशाला के नहीं हैं।

अमृत घृत

यह घृत सब प्रकार के विष स्थावर (संखियादि) जंगम (सर्पबिच्छू विषादि) को दूर करता है। अपस्मार, उन्माद, क्षय, उदरविकार, पाण्डु, प्लीहा, कामला, हनुस्तम्भ, आदि रोगों में विशेष लाभकारी है। विषनाश करने में तो अमृत का काम करता है। यह मृत सदृश पुरुषों को भी जीवन प्रदान करता है। यह सर्व विष की अचूक और सर्वोत्तम औषध है। अतः इसे अमृत कहा है। यह सब विषों के नाशक घृतों में श्रेष्ठ है। यह सर्व विषों के नाशार्थ श्रेष्ठ घृत है। मूल्य ५) आध पाव, ४०) सेर

फलघृत

यह स्त्रियों के गर्भाशय के सभी रोगों के दूर करता है। जिन स्त्रियों को गर्भ नहीं ठहरता या ठहर कर गिर जाता है या सन्तान निर्बल होती है। उनके लिये अत्युत्तम है। स्त्रियों के शरीर या कमर में दर्द के लिये बहुत उत्तम है। स्त्रियों के आर्तवदोष तथा पुरुषों के वीर्यदोष दूर करता है। जिनके बच्चे मर जाते हैं उन गृहस्थों को इसका सेवन करना चाहिये। जिनके कन्यायें ही होती हैं इसके सेवन से पुत्र उत्पन्न होता है। इसका अनुभव तो सेवन करके ही किया जाता है। संतान रूपी फल का देने वाला यथा-नाम-गुणकारी है। प्रत्यक्ष में प्रमाण क्या। सेवन करें और फल प्राप्त करें। मूल्य ४) आध पाव, २२) सेर

ब्राह्मी घृत

इसके सेवन से कुष्ठ (कोढ़) मृगी (हिस्टेरिया) मस्तिष्क की निर्बलता, चक्र आना, याद किये हुए पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है। और जिसकी स्मरण-शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिये श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी, दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष, सब प्रकार के धातु प्रमेह को दूर करता है। इसके सेवन से स्मरणशक्ति खूब बढ़ती है।

मूल्य आधा पाव ४), एक सेर ३२)

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर रजिस्टर्ड (रोहतक)

अवश्य पढ़िये

१–राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल का स्थान (भाग १)

इसके लेखक मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति गुरुकुल काङ्गड़ी के उन स्नातकों में से हैं जिन पर भारत को अभिमान है। इसमें अनुभवी लेखक ने राष्ट्र निर्माण का चित्रण इतना सुन्दर किया है कि पुस्तक को समाप्त किये बिना छोड़ने को मन नहीं चाहता। कम्यूनिज्म के बढ़ते हुए प्रवाह को रोकने का सर्वोत्तम हल इसमें पढ़िये और पढ़िये आदर्श राष्ट्र की सुन्दर रूपरेखा। मूल्य केवल ॥)

२–विरजानन्द चरित

सर्वविध क्रान्तिकारी स्वामी विरजानन्द जी का यह अनुपम जीवन स्वामी वेदानन्द जी महाराज ने लिखा है। इसमें ऐसी अनेक घटनायें मिलेंगी जो अभी तक किसी भी जीवन चरित में नहीं आई हैं। पृष्ठ २०० बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई। फिर भी मूल्य केवल १॥) मात्र।

३–व्यायामसन्देश

आचार्य भगवान्देव जी की वह उत्कृष्ट रचना है जिसकी पर्याप्त समय से व्यायाम प्रेमी सज्जन चातक की भान्ति बाट देख रहे थे। इस प्रकार की उत्तम सामग्री एकत्र किसी भी पुस्तक में न मिलेगी। साथ सचित्र होने के नाते इसकी शोभा द्विगुणित हो उठी है। मूल्य १)

४–आसनों के व्यायाम (सचित्र)

ब्र० वेदव्रत जी ने इस पुस्तक में तीन दर्जन आसनों का परिचय, करने की विधि और लाभ अति सरल भाषा में वर्णन किया है। प्रत्येक आसन का साथ-साथ चित्र होने के कारण विषय को समझने में कुछ भी कठिनता नहीं होती। इसमें केवल मुख्य-मुख्य आसनों पर ही प्रकाश डाला गया है। मूल्य ॥) मात्र।

५–सन्ध्या-अष्टाङ्गयोग

श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ने सन्ध्या की वैज्ञानिक ढङ्ग से आध्यात्मिक व्याख्या की है जो बड़ी ही रोचक और सारगर्भित है। अध्यात्म पिपासु महानुभाव एक-एक प्रति अवश्य ही मंगवावें। बढ़िया कागज पर सुन्दर छपाई और पक्की सुनहरी जिल्द के २०० पृष्ठ के गुटके का मूल्य केवल ॥।)।

आचार्य भगवान्देव जी द्वारा लिखित पुस्तकें––

१. ब्रह्मचर्य के साधन पांचों भाग	१॥।=)	६. स्वप्नदोष की चिकित्सा	=
२. ब्रह्मचर्यामृत	=)॥	७. व्यायाम का महत्त्व	≡)
३. तम्बाकू का नशा	।=)	८. नेत्र रक्षा	≡)
४. पापों की जड़ शराब	।–)	९. बिच्छू विष चिकित्सा	≡)
५. बाल विवाह से हानियां	–)	१०. रामराज्य कैसे हो ?	≡)

इनके अतिरिक्त मूल वेद, वेदभाष्य, गीता, उपनिषद्, महर्षि दयानन्द कृत सभी ग्रन्थ, महापुरुषों के जीवन चरित्र, सन्ध्या-हवन, ब्रह्मचर्य, सदाचार सम्बन्धी धार्मिक ग्रन्थ, आर्यकुमार परिषद् द्वारा संचालित १. सिद्धान्त सरोज, २. सिद्धान्त रत्न, ३. सिद्धान्त भास्कर, ४. सिद्धान्त शास्त्री, ५. सिद्धान्त वाचस्पति परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें और विरजानन्द संस्कृत परिषद् देहली द्वारा संचालित १. संस्कृत सुमन, २. संस्कृत विनोद, ३. संस्कृत विज्ञ और ४. संस्कृत प्रवीण परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें इत्यादि सभी ग्रन्थ हमारे यहाँ उचित मूल्य से मिलते हैं। विशेष जानकारी के लिये पत्र व्यवहार करें।

वैदिक पुस्तकालय––गुरुकुल झज्जर, जि० रोहतक

सुधारक   रजि० नं० ई० पी० ५०

• भोजन विशेषांक •

गतवर्ष आपकी सेवा में सुधारक के दो विशेषाङ्क एक गो-अंक और दूसरा व्यायाम-सन्देशाङ्क उपस्थित किये थे, जिनकी सभी पाठकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा उनको हृदय से अपनाया।

पाठकों को यह जानकर अति प्रसन्नता होगी कि इस वर्ष सुधारक का विशेषाङ्क अप्रैल तथा मई दोनों मासों का सम्मिलित "भोजन-विशेषाङ्क" होगा। जिसमें भोजन-सम्बन्धी सभी ज्ञातव्य विषयों पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला जायेगा, अर्थात् मनुष्य का वास्तविक भोजन क्या है ? भोजन कैसा हो ? कब करें, कैसे करें ? कितना करें ? किस अवस्था में करें और किस में न करें। सात्विक, राजस, तामस भोजन के गुण-दोष, किन-किन पदार्थों को एक साथ न खाना चाहिये, किस आयु के व्यक्ति के लिये कौनसा भोजन श्रेष्ठ है—इत्यादि सभी विषयों का खोजपूर्ण, पुस्तकाकार लगभग १०० पृष्ठों की उत्तम सामग्री अन्यत्र किसी भी एक पुस्तक में न मिलेगी।

यह अंक उन्हीं सज्जनों को मिल सकेगा जिनका सुधारक का चन्दा आ गया है या फरवरी तक आ जायेगा। पाठक-महानुभावों से निवेदन है कि २) चन्दा भेजकर शीघ्र ही ग्राहक बन जावें, जिससे कि पुनः पश्चात्ताप न करना पड़े।

—व्यवस्थापक सुधारक

पता

ग्राहक संख्या ४४२

सेवा में श्री—जगदीशचन्द जी विद्या

मु० c/o मुरारी ब्रादर्स

पो० कमला नगर देहली

जि०

अर्शरोगामृत

वार्षिक महोत्सव के उपलक्ष्य में मूल्य में भारी कमी, केवल दो मास तक १०) के स्थान में पांच रुपये छटांक। अर्श (बवासीर) के रोगियों के लिये स्वर्ण अवसर

यह औषधि सब प्रकार के अर्श (बवासीर) के लिये रामबाण का काम करती है। हमारी रसायनशाला में इसे तैयार करने के लिये कई मास तक भरसक प्रयत्न किया गया है। इस की तीन-चार मात्रा के सेवन मात्र ही से खून का आना तो तुरन्त बन्द हो जाता है। यह औषधि जादू के समान तुरन्त प्रभाव दिखाती है। प्राचीन आयुर्वेद का इसे चमत्कार कहना चाहिये। संसार में इससे बढ़कर अर्श के लिये कोई औषधि नहीं।

सेवन विधि—एक से दो गोली तक प्रातः-सायं धारोष्ण दूध के साथ सेवन करें। यदि कोष्ठबद्धता (कब्ज) के कारण मल त्यागते समय रक्त आता है तो गोली लेते समय एक तोले से दो तोले तक इसबगोल के साथ मिला कर सेवन करें।

मूल्य एक मास के लिये १०) के स्थान में ५) मात्र।

मिलने का पता

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) रजि०

गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

प्रकाशक आचार्य भगवान्देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष २ | गुरुकुल झज्जर (रोहतक), आषाढ सं० २०१२ वि० | वार्षिक मूल्य ३)
अङ्क १० | जून १९५५—दयानन्दाब्द १३१ | एक प्रति ≡)

तपोमूर्त्ति वीतराग शास्त्रवेत्ता संन्यासी

श्रद्धेय स्वामी श्री आत्मानन्द जी महाराज, वैदिक साधनाश्रम यमुनानगर के अध्यक्ष तथा श्रीमद्दयानन्दोपदेशक विद्यालय के आचार्य हैं। वैदिक सिद्धान्त, आर्ष शिक्षा और योगक्रियाओं के आप प्रसिद्ध व्याख्याता, प्रसारक और उपदेष्टा हैं। आर्यजगत् को आपके पवित्र व्यक्तित्व पर गौरव है। आपने मनोविज्ञान पर "शिवसङ्कल्प और मनोविज्ञान" नाम उच्चकोटि का ग्रन्थ लिखा है। वेदविद्या का प्रकाश और वैदिक आचार का प्रसार ही आपका ध्येय है।

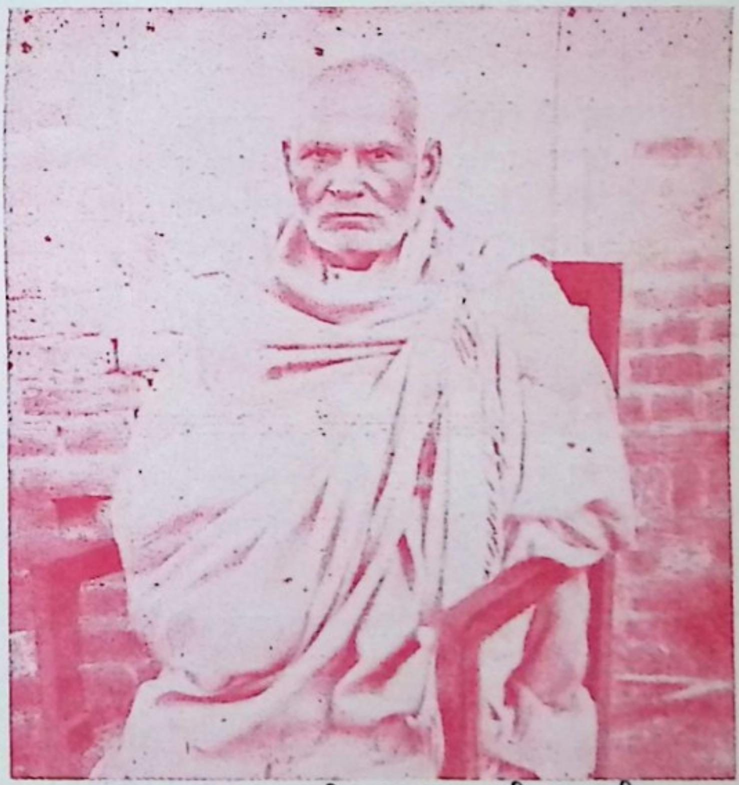

पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक
सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति
सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

विषय क्रम दर्शक

विषय	लेखक	पृष्ठ
१—ब्रह्मचर्य-महत्त्वम्	श्री पं० मेधाव्रताचार्य कविरत्न	३ से ६
२—विवाह विच्छेद (तलाक)	सम्पादकीय	७ ,, ९
३—राष्ट्रनिर्माण में धर्म का स्थान	श्री मुनि देवराज विद्यावाचस्पति	१० ,, १२
४—आज के गुरु	श्री सहदेव शास्त्री	१३
५—खटमल और उसको नष्ट करने के उपाय	श्री रामेश बेदी	१४—१५
६—हमारी सौराष्ट्र यात्रा	ब्र० सुदर्शन देव सिद्धान्त वाचस्पति	१६ ,, १८
७—स्वतन्त्रानन्द धाम		२३

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें, किसी व्यक्ति के नाम न भेजें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं दी जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है।

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संस्कृत में ही करें। उर्दू, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं में पत्र व्यवहार न करें। पत्रोत्तर के लिये जवाबी कार्ड भेजें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चौथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	९)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५% अधिक।

,, तृतीय १०% अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

ब्रह्मचर्य महत्वम्

(श्री पण्डित मेधव्रताचार्य कविरत्न प्रणीतम्)

[गताङ्क से आगे]

भारद्वाजः श्रुतियुगभवो ब्रह्मचारी प्रकाण्डो–
यस्स्वीयायुस्त्रयमगमयद् ब्रह्मचर्ये प्रसन्नः
वेदाभ्यासे विभुवरशिवोपासने वीर्यगोप्ता
लक्षर्षिभ्यो व्यतरदतुलं ब्रह्मचर्योपदेशम् ।१३७।

अर्थः—वैदिककाल में भारद्वाज एक प्रकाण्ड ब्रह्मचारी हुए हैं, जिन्होने अपने तीन जन्म वेदाभ्यास और सर्वव्यापक शिव की उपासना में प्रसन्नता पूर्वक ब्रह्मचर्य धारण करते हुए व्यतीत किये। वीर्य के रक्षक वनकर उन्होंने लाखों ऋषियों को ब्रह्मचर्य का अनुपम उपदेश दिया।

मृत्योः काले परमपितरं प्रार्थयामास यत्स-
ब्रह्मं स्तुर्ये जनुषि हि पुनर्ब्रह्मचर्येण वेदान् ।
अध्येष्येऽलं प्रखरतपसा त्वत्पदं लाषुकोऽहं
मह्यं देहीत्यमलमनसा मानवं जन्म याचे ॥१३८॥

अर्थः—उन्होंने मरण समय में परमपिता ब्रह्म से प्रार्थना की कि :—हे ब्रह्मन् ! तेरे मोक्षपद का अभिलाषी मैं चौथे जन्म में भी कठोर तप से ब्रह्मचर्य-पूर्वक वेदों को पूर्ण रूप से पढ़ूँगा। शुद्ध मन से मैं पुनः मनुष्य जन्म ही आप से मांगता हूँ वह मुझे प्रदान कीजिये।

दोर्भ्यां येन विलंघितो जलनिधिर्दग्धा च लङ्कापुरी
लङ्केन्द्रश्चकिती कृतः स्वमहसा सीता च सन्देशिता
तत्सन्देशहरेण रामनृमणिः सन्तोषितोऽयं बली
रक्षःकुञ्जरकेसरी व्रतिवरो वज्राङ्गधृन्मारुतिः ॥१३९॥

अर्थः—जिन्होंने बाहुओं से समुद्र को लांघा, लंकापुरी को जला दिया, अपने तेज व पराक्रम से लङ्कापति रावण को चकित किया, सीता को राम का सन्देश दिया और सीता का सन्देश लाकर जिन्होंने नरेन्द्र श्रीरामचन्द्र को सन्तुष्ट किया, ऐसे राक्षसरूप हाथियों में बबर शेर वज्र-अङ्गधारी अतिबलवान्, श्रेष्ठ ब्रह्मचारी मरुत्-पुत्र श्री हनुमान् थे।

वेदाङ्गवेदनिपुणः पवनात्मजोऽसौ
सुग्रीवराजसचिवोऽप्रतिवार्यवीर्यः
श्रीरामचन्द्रनृपलक्ष्मणप्राणगोप्ता
सीतापतेः प्रमुखभक्त इह प्रसिद्धः ॥१४०॥

अर्थः—वेद वेदाङ्ग में पारङ्गत, राजा सुग्रीव के मन्त्री, अत्यन्त साहसी, प्रजापति श्रीराम और लक्ष्मण के प्राणरक्षक, माता सीता के पति श्रीराम के अनन्य भक्त, पवनपुत्र हनुमान् इस लोक में विख्यात हो गये हैं।

श्रीशान्तनोर्नरपतेस्तनयस्स भीष्मो—
गंगात्मजो निखिलवेदविदां वरिष्ठः ।
देवव्रतः पितृमनीषितपूरणार्थं
यो ब्रह्मचर्यमधृतामरणं व्रतीन्द्रः ॥१४१॥

अर्थः—जिन्होंने पिता की इच्छा को पूर्ण करने के लिये जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य को धारण किया, वे राजा शान्तनु के पुत्र, गंगा माता के बेटे, वेदवक्ताओं के भूषण, देवव्रत नामक, व्रतियों में श्रेष्ठ ब्रह्मचारी श्री भीष्मपितामह थे।

प्राणान्निरुध्य शयितं ह्यधिवाणशय्यं
पप्रच्छ कृष्णभगवान्त्स पितामहं तम् ।
कष्टं विनाऽयि भगवन् ! कथमत्र शेते ?
स ब्रह्मचर्यमहिमेति जगाद सत्यम् ॥१४२॥

अर्थः—प्राणों को रोककर बाणों की शय्या पर सोते हुये उन भीष्म पितामह से भगवान् श्रीकृष्ण ने पूछाः—अयि भगवन् ! आप विना कष्ट के कैसे इस बाण-शय्या पर सो रहे हैं ? तब उन्होंने केवल यही उत्तर दिया कि:—सचमुच यह सब ब्रह्मचर्य की ही महिमा है।

शिवगुरुतनयेन्द्रः श्रीसतीनन्दनोऽसौ
निखिलनिगमवेत्ता शंकरो ब्रह्मचारी ।
सकलजनुरखण्डं ब्रह्मचर्यं बभार
स्वकनिगमसुधर्मोद्धारसंलग्नचेताः ॥१४३॥

अर्थः—शिवगुरु के सुपुत्र, माता श्री सती के बेटे, सकल शास्त्रों के ज्ञाता, अपने शास्त्रों में प्रतिपादित उत्तम धर्म के उद्धार में दत्त-चित्त श्री ब्रह्मचारी शंकराचार्य ने आजन्म अखण्ड ब्रह्मचर्य को धारण किया।

विद्वत्प्रकाण्डवरपण्डितमण्डनं तं
विद्यावतारमहिलामथ भारतीं ताम् ।
शास्त्रार्थसंगर उभौ स विजित्य शिष्यौ
चक्रे यतो यतिरिह स्वमतं वितेने ॥१४४॥

अर्थः—प्रकाण्ड पण्डितों में पण्डितमणि श्री मण्डन-मिश्र तथा साक्षात् सरस्वती सी परम विदुषी महिला भारती को शास्त्रार्थ महारथी श्री शंकराचार्य ने शास्त्रार्थ-समर में जीत कर दोनों को शिष्य बना लिया। जिस से उस संन्यासी ने अपने अद्वैत मत को इस आर्यावर्त में पूर्ण रूप से फैलाया।

संस्कारकारकमुखात्स्वविवाहकाले
यः सावधान इति शब्दमहो! निशम्य।
सद्यः पलायत ततस्त्वरयातिदूरं
गोदावरीतटमितश्च तपश्चचार ॥१४५॥

अर्थः—अहो! जो अपने विवाह के समय पुरोहित के मुख से "सावधान" शब्द सुनते ही एकदम बड़ी शीघ्रता से गोदावरी नदी के किनारे बहुत दूर भाग गये और वहाँ तप करने लगे।

आदित्यब्रह्मचारी रघुकुलतिलकांघ्रौ रतो रामदासो
राष्ट्रोद्धाराय सोऽयं शिवनृपमृणिमुत्साहयामास भक्तम्।
निष्णातो राजनीत्यां गुरुवरवचनैर्यावनाक्रांतदुर्गान्--
जित्वा राष्ट्राधिपत्यं व्यधित दृढबलोऽतो महाराष्ट्रराजः
॥१४६॥

अर्थः—वे रघुकुल के भूषण श्री रामचन्द्र की अर्चना में लीन, आदित्य ब्रह्मचारी श्री रामदास थे। उन्होंने राष्ट्र के उद्धार के लिये अपने भक्त श्री छत्रपति शिवाजी के उत्साह को बढ़ाया। गुरु उपदेशों से राजनीति में निष्णात बनकर दृढ़सेनाधारी महाराष्ट्रराज ने मुसलमानों के चंगुल में फँसे हुये दुर्गों को जीतकर उन पर महाराष्ट्र का आधिपत्य स्थापित किया।

अपाठयद्यो निजपाठशाला—
प्रविष्टशिष्यानृषिभक्तरत्नम्।
आर्षप्रणालीमनुगम्य पाठान्
निरस्य नूत्नं क्रमसार्षचुञ्चुः ॥१४७॥

अर्थः—आर्ष विद्या में विख्यात, ऋषियों के श्रेष्ठ भक्त दण्डी विरजानन्द अपनी पाठशाला में आये हुये शिष्यों को नवीन प्रणाली का निरादर करके आर्ष प्रणाली के अनुसार पाठ पढ़ाया करते थे।

योऽनेकराजेन्द्रविनम्रमौलि—
रत्नावलीरंजितपादपद्मः।
ज्ञानांशुसम्बोधितशिष्यचेतः—
पङ्केरूहोऽराजत पद्मिनीन्द्रः ॥१४८॥

अर्थः—इनके चरण कमल अनेक राजाओं के झुके मुकुटों की रत्न-प्रभा से शोभित रहते थे। ये सूर्य की तरह ज्ञान-किरणों से शिष्यों के हृदय-कमलों को विकसित किया करते थे।

अनन्तशब्दार्णवपारदृश्वा
विश्वागमानामृतसारवेत्ता।
भेत्ता प्रतिद्वन्द्विविवादिवाचा—
माचार्य आचारविधौ य आसीत् ॥१४९॥

अर्थः—दण्डी जी अनन्त शब्दसागर के पारगामी, सम्पूर्ण वेदों और शास्त्रों के सत्य तत्त्व के वेत्ता, प्रतिद्वन्द्वी पण्डितों के वाग्जाल के भेत्ता एवं आचार शास्त्रों के मानो आचार्य थे।

—(वियोगिनी-सुन्दरी वा वृत्तम्)

सकलार्यगुरोर्गुरूत्तमो—
विरजानन्दयतिर्व्रतीश्वरः।
तपसा बृहता स दीपितो—
निखिलायुर्व्रतमुज्ज्वलं दधौ ॥१५०॥

अर्थः—सकल आर्यों के आचार्य दयानन्द जी के आदर्श गुरु ब्रह्मचारो संन्यासी विरजानन्द जी ने बृहत तप से देदीप्यमान होकर आजीवन उज्ज्वल ब्रह्मचर्य धारण किया।

विलीनानां प्रायो व्यधितनिगमानां य उदयं
चलं धर्मैश्वर्यं पनरपि पदं पूर्वमनयत्।
स्वतन्त्रत्वस्येभं भुवि विमलभावं प्रथितवान्
दयानन्दं वन्दे किमिव न तमानन्दजनकम् ॥१५१॥

अर्थ:—प्रायः लुप्त हुये वेदों का जिन्होंने उदय किया, अस्थिर बने हुये धर्म के ऐश्वर्य को फिर भी पूर्वपद पर प्रतिष्ठापित किया और संसार में स्वातन्त्र्य के शुद्ध भावों को फैलाया, उन आनन्ददायक ऋषिवर दयानन्द को में क्यों न प्रणाम करूँ !

त्रिलोकीलक्ष्मीरुत्पथयि मलं नैव यमहो !!
प्रहारोद्युक्तानां विविधमतभाजामपि नृणाम् ।
कुलादुग्रा भीतिर्विमुखमकरोन्न श्रुतिपथाद्
यमूर्व्यां स स्वामी परमपदकामी किरतु शम् ॥१५२॥

अर्थः—अहा !! त्रिभुवन की राजलक्ष्मी भी जिन्हें कुमार्ग की ओर ले जाने के लिये समर्थ नहीं हुई तथा मारने के लिये तैयार हुये नाना मतवादी जनों के समूह का तीव्र भय भी जिनको वेदमार्ग से विमुख करने के लिए शक्तिमान् न हुआ, वे मोक्षपद के अभिलाषी महर्षि दयानन्द भूलोक में सुख की वर्षा करें।

आदित्यब्रह्मचारी गुणिगणगणनास्वग्रगण्यो वरेण्यो-
वाग्मी वश्येन्द्रियाणामवनिसुरकुलोत्तंस आर्यावतंसः
नानापाखण्डिजालं जगति कुपथगं धर्मविद्यो न्यषेधत्
सन्मार्गस्योपदेष्टा जयति स जगदानन्दनो वन्दनीयः
॥१५३॥

अर्थ:—जो अखण्ड आदित्य बह्मचारी, गुणवानों की गणना में अग्रगण्य, उत्तम वक्ता, जितेन्द्रियों में श्रेष्ठ; ब्राह्मण कुल के भूषण तथा आर्यों के अलंकार थे, और जिन्होंने कुमार्ग की ओर जाने वाले नाना पाखण्डियों के दलों को विदलित किया, वे जगत के आनन्ददाता तथा सब के वन्दनीय महर्षि दयानन्द विजय पा रहे हैं।

आदित्य ब्रह्मचर्याभिधविमलमहःपुञ्जतो ध्वान्तवृन्दं
भिन्दानो वाममार्गाचरणनिशिचरानन्दरात्रीनिहन्ता।
पुण्यात्माम्भोजकान्तो निगममतवनोद्भासने चेतनांशुः
संसारोद्बोधनोऽयं विलसतु हृदये श्रीदयानन्दभानुः
॥१५४॥

अर्थ—आदित्य ब्रह्मचर्य रूपी निर्मल तेज पुञ्ज से पापान्धकार को नष्ट करते हुए, वेद विरुद्ध मार्ग में विचरने वाले निशाचरों को आनन्द देने वाली रात्री का विनाश करने वाले, वैदिकमत रूपी उपवन को बुद्धि रूपी किरणों से प्रफुल्ल बनाने वाले और संसार को मोह निद्रा से जगाने वाले स्वामी दयानन्द मुनि रूपी सूर्य-भगवान् हमारे हृदयों को ज्ञान से प्रकाशित बनावें।

ब्रह्मर्षिश्रीयोगिराजोपदेशान्—
नित्यानन्दो ब्रह्मचारी महात्मा।
जातः स्वामी सत्यदेवोऽपि वाग्मी
सत्सिद्धान्तं वैदिकं तेनतुस्तौ ॥१५५॥

अर्थ:—ब्रह्मर्षि योगिराट् दयानन्द सरस्वती के उपदेशों के प्रभाव से महात्मा व कुशल वक्ता श्री स्वामी नित्यानन्द जी एवं स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक दोनों आजन्म ब्रह्मचारी रहे और वैदिक सत्य सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे।

आचार्यो यो दर्शनानां समेषां
विद्वानात्मानन्दनामा यतीशः।
यावज्जीवं ब्रह्मचर्योज्ज्वलोऽयं
ख्यातो योगे काव्यकर्त्तुर्गुरुर्मे ॥१५६॥

अर्थः—ब्रह्मविद्या में मुझ काव्यप्रणेता के गुरु, नव्य-प्राच्य-बौद्ध-जैन समस्त दर्शनों के आचार्य, धुरन्धर विद्वान् अनेक संन्यासियों के गुरु श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य से अत्यन्त ख्याति पा रहे हैं।

व्रतिवरकुलतीर्थो वेदतीर्थः स शास्त्री
निगममतबुधेन्द्रः ख्यातसत्कीर्तिचन्द्रः।
विलसति नरदेवो राष्ट्रसेवाप्रवीणः
सदसि चतुरवक्ता ब्रह्मचारी धुरीणः ॥१५७॥

अर्थ:—उत्तम ब्रह्मचारियों के तीर्थ रूपी वैदिक सिद्धान्तों के प्रकाण्ड पण्डित, चन्द्रतुल्य निर्मल यशशाली, राष्ट्रसेवा में प्रवीण और राज्य समिति के कुशल वक्ता, आजन्म ब्रह्मचारी श्री नरदेव जी शास्त्री वेदतीर्थ आर्यों में चमक रहे हैं।

आचार्यः श्री व्रतानन्दो यतीन्द्रो ब्रह्मचारिराट्।
ब्रह्मचर्याश्रमं दुर्गे चित्तौडेऽस्थापयद्वरम् ॥१५८॥

अर्थ:—अखिल भारतीय संन्यासी मण्डल के प्रधान, ब्रह्मचारियों में देदीप्यमान श्री आचार्य व्रतानन्द जी ने चित्तौड़ दुर्ग के समीप अपूर्व ब्रह्मचर्याश्रम गुरुकुल को स्थापित किया।

ब्रह्मविद् ब्रह्मदत्तोऽपि ब्रह्मचारी महाबुधः।
भाष्ये योऽकृत सद्व्याख्यां दयानन्दस्य याजुषे ॥१५९॥

अर्थ:—दिग्गज पण्डित, वेदवेत्ता श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु भी अखण्ड ब्रह्मचारी रह ब्रह्मर्षि दयानन्द के याजुष भाष्य के दश अध्यायों की उत्तम व्याख्या कर चुके हैं।

आर्षशिक्षाप्रणाल्या यो ब्रह्मचर्याश्रमं व्यधात् ।
आर्यः शंकरदेवोऽसौ ब्रह्मचारी विदांवरः ॥१६०॥

अर्थः—जिन्होंने आर्ष शिक्षा प्रणाली से ब्रह्मचर्याश्रम साङ्गवेदविद्यालय नौनेर को स्थापित किया, वे पण्डित मण्डल के भूषण, आर्यशिरोमणि ब्रह्मचारी शंकरदेव जी हैं।

आचार्यो भगवान्देवो ब्रह्मचारी तपोधनः ।
ब्रह्मचर्यप्रचारार्थं सततं तनुते श्रमम् ॥१६१॥

अर्थः—तपस्वियों में श्लाघनीय आचार्य श्री भगवान् देव जी स्वयं अखण्ड ब्रह्मचारी बनकर ब्रह्मचर्य-प्रचार के लिये निरन्तर परिश्रम कर रहे हैं।

व्रतीश्वरो माणिकरावनायकः
परन्तपो मल्लगुरुर्महाबली ।
समग्रशस्त्रास्त्रसु शिक्षणे भृशं
विचक्षणो राजति राजपत्तने ॥१६२॥

अर्थः—पहलवानों के गुरु, अत्यन्त बलशाली, ब्रह्मचर्य के पुञ्ज, शत्रुञ्जय श्री माननीय माणिकराव जी सम्पूर्ण शस्त्र-अस्त्र के शिक्षण में विचक्षण बड़ोदा राज्य में विराजमान हैं।

यः सार्वदेशिकसदार्य सभाप्रधानो—
वाग्मिप्रवीर इह राजगुरुधुरेन्द्रः ।
आर्योदयार्थमनिशं विहितावधानः
स ब्रह्मचारिवर एव महार्यनेता ॥१६३॥

अर्थः—आर्यो की शिरोमणि सार्वदेशिक सभा के प्रधान, कुशल वक्ता श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री ब्रह्मचारी हैं, अतः एव आर्यों की उन्नति में अनवरत रत रहते हुये आर्यों के महान् नेता पद को अलंकृत कर रहे हैं।

ऋषिवरवरशिष्या ब्रह्मचर्यं चरन्तो—
दिशि दिशि विलसन्तो ब्रह्मचर्यं दिशन्तः ।
निखिलभुवनलोकध्वान्तदुःखं हरन्तः
परमपदसुखाब्धिं देवदेवं भजन्तु ॥१६४॥

अर्थः—जगद् गुरु ब्रह्मर्षि दयानन्द के अनेक अग्रगण्य शिष्य ब्रह्मचर्य पालन पूर्वक समस्त भूमण्डल में विराजमान होकर ब्रह्मचर्य का उपदेश करें और समस्त भूलोक के अज्ञान जन्य अन्धकार रूप दुःख का हरण कर परम धाम सुख-सागर देवाधिदेव ओ३म् को भजें।

* इति ब्रह्मर्षिदयानन्ददिग्विजयकारस्य महाकवि—
श्रीपण्डितमेधाव्रताचार्यस्य पवित्रकृति—
'ब्रह्मचर्यमहत्त्वं' नाम काव्यं
वे^{४}द^{६}रसब्र^{१}ह्ममितश्लोकलसितं
समाप्तिमगमत ॥*

आदर्श-सन्तान

(लेखक—बुद्धराम आर्य कान्हौरी)

टेक—सुधारक के सुधार से, ब्रह्मचर्य के प्यार से, वेदों के प्रचार से,
तेरी बलशाली सन्तान बने ।
विनति यही हमारी है सन्तान बनाने वालों से, सुधारक का उद्देश्य यही मां बाप कहाने वालों से,
गर तुम्हारे में करामात हो, कौशल्या सी मात हों, राम भरत से भ्रात हों,
तेरी पहिले वाली शान बने ॥१॥
पच्चीस साल से पहिले मत बच्चों को पथ से भ्रष्ट करो, गवाल बाल की शिक्षा दे मत ब्रह्मचर्य को नष्ट करो,
फिर आवे मजा आजादी का, बजवाकर ढोल मनादी का, बालविवाह की शादी का,
जल्दी से एक विधान बने ॥२॥
अच्छी शिक्षा ले बच्चा तेरा देश धर्म से प्यार करे, बीच भँवर में नैय्या डोले इसको परली पार करे,
फिर आर्यावर्त की लाज हो, दयानन्द महाराज हो, विरजानन्द गुरुराज हो,
जो देश जाति का अभिमान बने ॥३॥
हम तो यही कहेंगे सुनो आर्य ! भारत के नर नारी, विद्या का प्रचार करो बनो सच्चे हितकारी,
विद्या गुण की खान है, विन विद्या पशु समान है, "बुद्धिधर" सब ज्ञान है,
क्यों जान बूझ अनजान बने ॥४॥

सम्पादकीय--

विवाह विच्छेद (तलाक)

४ मई को लोकसभा में विवाह विच्छेद विधेयक पारित हो गया, ध्यान रहे यह तलाक बिल उसी 'हिन्दू कोड' की शाखा है जिस पर कि गत १० वर्षों से चर्चा चल रही है। इस विधेयक में तीन बातों पर ध्यान दिया गया है, (१) जाति-पांति के झगड़े को छोड़कर विवाह किया जाये, (२) एक समय में एक ही पत्नी हो, (३) तलाक अर्थात् पति या पत्नी जब चाहें तब विवाह विच्छेद कर दूसरी तीसरी-स्त्री और पुरुष से अपना सम्बन्ध स्थापित कर ले।

जाति को छोड़कर विवाह करना और एक पत्नी-बाद तो ठीक है, किन्तु तलाक ने तो एक पत्नी-वाद पर भी पानी फेर दिया। इस तलाक से पति-पत्नी का पवित्र सम्बन्ध और प्रेमपाश टूट जायेगा। हमारी सभी प्राचीन श्रेष्ठ परम्परायें समूल नष्ट हो जायेंगी, लोकसभा ने इस विधेयक को पास कर हमारी आर्य संस्कृति पर भयंकर कुठाराघात किया है। इसके दुष्परिणाम जब सामने आयेंगे तब देशवासी रोयेंगे और पछतायेंगे।

विधिमन्त्री श्री हरि विनायक पाटस्कर ने कहा कि "देश में ८० प्रतिशत तलाक की प्रथा है। हम इसे कानूनी रूप दे रहे हैं। यदि कोई व्यक्ति किसी कारण वैवाहिक जीवन व्यतीत न कर सके तो तलाक दे दे।" प्रथम हमारे देश में ८० प्रतिशत तलाक प्रथा नहीं और यदि कुछ है भी तो एक कुप्रथा को कानून का रूप देना कहाँ की बुद्धिमत्ता है? अच्छा होता यदि इस तलाक और इसके मूल कारण बालविवाह, अनमेल विवाह आदि को तत्काल कानून द्वारा बंदकर दिया जाता। किन्तु हमारा ऐसा सौभाग्य कहाँ, यहाँ पर प्रत्येक विषय में यूरोप का अनुकरण किया जाता है, हमारे सत्तारूढ व्यक्तियों का आदर्श यूरोप है, अतः उसी के रीति-रिवाजों को प्राथमिकता दी जाती है, इनकी दृष्टि में हमारे पूर्वज ऋषि-महर्षि और वेदशास्त्र सब हेय हैं। इसलिये विधिमन्त्री श्री पाटस्कर ने कहा कि-

"यह ठीक है कि मनुस्मृति में विवाहविच्छेद की व्यवस्था नहीं है। लेकिन उन दिनों इसकी व्यवस्था भी कैसे होती जब कि उस काल में कन्यायें बेची जातीं थीं।"

प्राचीन काल में स्वयम्वर विवाह होते थे, इसका इतिहास साक्षी है और महर्षि मनु ने भी अपने विधान में कन्या विक्रय को स्थान नहीं दिया। यदि कन्या विक्रय (वर पक्ष से कुछ द्रव्य लेना) व्यवस्था का निषेध-हेतु है तब तो अब भी तलाक नहीं होना चाहिए, क्योंकि आजकल कन्या और वर दोनों के विक्रय की प्रथा प्रचलित हो रही है।

महर्षि मनु और याज्ञवल्क्य ने आठ प्रकार के विवाह बतलाये हैं—१ ब्राह्म, २ दैव, ३ आर्ष, प्राजापत्य, ५ आसुर, ६ गान्धर्व, ७ राक्षस और ८ पिशाच।

१. ब्राह्मविवाह—विद्यायुक्त शीलसम्पन्न वर को बुलाकर वस्त्रादि से सत्कार करके विधिपूर्वक कन्या देना।

२. दैवविवाह—ज्योतिष्टोमादि यज्ञ में भली भांति यज्ञ करवाने वाले ऋत्विज वर को वस्त्राभूषणादि से अलंकृत कन्या का दान करना।

३. आर्ष विवाह—वर पक्ष से एक अथवा दो गाय बैलों का जोड़ा धर्मपूर्वक लेकर विधिपूर्वक कन्या देना। गाय बैलों का जोड़ा लेना भी मनु का मत नहीं है इसका आगे चल कर मनु जी ने खण्डन किया है।

४. प्राजापत्य—"तुम दोनों साथ मिलकर धर्म का पालन करो" इस प्रकार कहकर कन्यादान।

५. आसुर विवाह—कन्या और कन्या पक्ष वालों को यथाशक्ति द्रव्य देकर विवाह करना।

६. गान्धर्व विवाह—अपनी इच्छा से कन्या और वर का संयोग होना, यह कामियों का विवाह है।

७. राक्षस विवाह—मारपीट कर रोती चिल्लाती कन्या को बलात् ले जाना।

८. पैशाच विवाह—सोई हुई या उन्मत्त कन्या को उठाकर ले जाना, यह सबसे निकृष्टतम विवाह है।

इन आठ प्रकार के विवाहों का निर्देश कर मनु जी ने प्रथम चार विवाह ही श्रेष्ठ बतलायें हैं जिनमें कन्या विक्रय का नाम-निशान भी नहीं। इन्ही चार विवाहों से उत्पन्न सन्तान श्रेष्ठ, तेजस्वी, पराक्रमी, गुण-रूप-धन-सम्पन्न और यशस्वी होती है तथा सौ वर्ष तक जीवित रहती है। शेष निन्दित ४ (आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पिशाच) विवाहों से क्रूर, निर्लज्ज, मिथ्यावादी, ईश्वर वेदशास्त्र और धर्म से विमुख (द्वेष करने वाली) सन्तान उत्पन्न होती है। "तस्मान्निन्द्यान् विवर्जयेत्" अतः निन्दित चारों त्याज्य हैं।

कन्या के पिता को द्रव्य लेने का मनु जी ने सर्वथा निषेध किया है, जो कोई द्रव्य लेकर विवाह करता था वह "अपत्यविक्रयी" कहलाता था तथा समाज में निकृष्ट समझा जाता था।[1] ब्राह्मण से लेकर शूद्र तक किसी को भी कन्या विक्रय का अधिकार न था।[2] इतना होते हुये भी विधि मन्त्री का यह कहना कि "मनु के समय में कन्यायें बेची जाती थीं" सर्वथा कल्पित है।

इस विधेयक के समर्थकों का कथन है कि आजकल की विवाह पद्धति में स्त्रियों की दुर्दशा होती है, एक महिला सदस्य न तो यहाँ तक कहा कि आजकल की विवाह पद्धति वेश्यावृत्ति से कम नहीं।

यह ठीक है कि कुछ कुप्रथाओं के कारण महिलाओं का जीवन कष्टमय है। किन्तु उनके कष्ट को दूर करने का यह उपाय उचित नहीं, इस से तो महिला जीवन और भी सङ्कट ग्रस्त हो जायेगा। यह तो (वृश्चिकविषभीत इवाशीविषेण दष्टः) बिच्छू से डरे हुये को सांप से कटवाना है।

हमारी वैदिक विवाह पद्धति सर्वथा निर्दोष है। उसमें नारी को अर्धाङ्गिनी और धर्मपत्नी (धर्म की रक्षा करने वाली) माना है। हमारी संस्कृति और सभ्यता में जो स्थान नारी का है वह अन्यत्र कहीं भी नहीं। वेद के अनुसार पति-पत्नी का सम्बन्ध अटूट है—"इहैव स्तं मा वियोष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्" अर्थात् तुम पति-पत्नी विश्वायु=चिरकाल तक मिल कर रहो, पृथक् मत होना=विवाह-विच्छेद (तलाक) न करना। यदि कुछ महिलाओं का जीवन आपद्-ग्रस्त है तो विवाह पद्धति का दोष नहीं, अपितु सामाजिक कुप्रथायें ही उनका कारण हैं, उनको दूर करने से ही नारी का जीवन सुख सम्पन्न हो सकता है। दोष हो सामाजिक कुप्रथाओं का और परिवर्तन हो विवाहपद्धति में, यह कहाँ का न्याय है ?

इस तलाक में विवाह समय में की गईं सभी प्रतिज्ञायें और शिलारोहण, सूर्यदर्शन, ध्रुवदर्शन, हृदयस्पर्श आदि सभी क्रियायें निष्प्रयोजन हैं। विवाह समय में "पोष्या" की प्रतिज्ञा पर तलाक

---

[1] —न कन्यायाः पिता विद्वान्,
गृह्णीयाच्छुल्कमण्वपि।
गृह्णंश्छुल्कं हि लोभेन
स्यान्नरोऽपत्यविक्रयी॥ ५१॥
स्त्रीधनानि तु ये मोहा-
दुपजीवन्ति बान्धवाः।
नारीयानानि वस्त्रं वा
ते पापा यान्त्यधोगतिम्॥ ५२॥
आर्षे गोमिथुनं शुल्कं,
केचिदाहुर्मृषैव तत्।
अल्पोऽप्येवं महान्वापि,
विक्रयस्तावदेव सः॥५३॥
(मनु० अ० ३)

[2] —आददीत न शूद्रोऽपि,
शुल्कं दुहितरं ददन्
शुल्कं हि गृह्णन् कुरुते,
छन्नं दुहितृविक्रयम्॥६८॥
(मनु० अ० ६)

देना विश्वासघात है। यह प्रथा निन्दित गान्धर्व विवाह से भी निकृष्ट तथा वेश्यावृत्ति से उत्तम न होगी। राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन के शब्दों में—"तलाक वहाँ होता है जहाँ व्यभिचारी और व्यभिचारिणियाँ हों।"

इसी प्रकार उत्तराधिकार का प्रश्न भी अनेक दुष्परिणामों और कलह की जड़ है। इससे भाई बहिन का अद्वितीय वात्सल्य नहीं रहेगा, वे एक दूसरे के शत्रु हो जायेंगे। भूमि के छोटे-छोटे टुकड़े हो जायेंगे उत्तराधिकार का प्रश्न ही तलाक के कारण उठता है, अन्यथा पत्नी पतिगृह की साम्राज्ञी होती है। अतः इसके मूल कारण तलाक को ही समाप्त कर देना चाहिये, जिससे "न रहे बांस, न बजे बांसुरी"।

स्वास्थ्य रक्षा तथा आयुर्वेद प्रचार का मार्मिक पत्र

"स्वास्थ्य"

कृष्ण गोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय की ओर से प्रकाशित इस पत्र में योग्य विद्वानों के लिखे हुये स्वास्थ्य तथा आयुर्वेद सम्बन्धी मौलिक लेखों के अतिरिक्त होमियोपैथी, यूनानी, प्राकृतिक चिकित्सा, मनोविज्ञान, योगासन, महिला जगत्, स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी आदि लेख प्रकाशित होते रहते हैं। प्रोफेसर, जज, वकील, अध्यापक, विद्यार्थी, व्यापारी, क्लर्क तथा मजदूर, किसान वर्ग सब के लिए उपयोगी है। इसका प्रचार अफ्रीका, इंग्लैंड, आदि देशों में भी हुआ है। सब प्रकार के वैज्ञानिक साधन जानना चाहें तो "स्वास्थ्य" अवश्य पढ़ें।

वार्षिक मूल्य ३) रु० विदेशों में ६ शिलिंग

व्यवस्थापक "स्वास्थ्य"
पो० कालेड़ा—कृष्णगोपाल (अजमेर)

———

(राष्ट्रकवि श्री रामावतार 'विकल')

बेटी का समभाग पिता की, सम्पत्ति में जब कर डाला।
हैं जितने हकदार जलेगी, नित उनके उर में ज्वाला॥
बहिन भाई के शुद्ध प्रेम का, होगा महा भयङ्कर रूप।
'भय्यादूज' न होगी होगी, बहिन भाई की वधशाला॥१॥
कौन मिलेगी पति चरणों पर, जीवन अर्पण कर डाला।
कौन मिलेगा पत्नी को, जीवन सङ्गी कहने वाला॥
कभी परस्पर प्रेम न होगा, बनी रहेगी यह शङ्का।
कब 'तलाक' दे हाय न जाने, कौन खोल दे वधशाला॥२॥
भारतीय नारी का जग में, हो जायेगा मुंह काला।
था जिसका जीवन महान्, हा! उसे गति में क्यों डाला॥
"सीता", "द्रौपदी" की सन्तानें, रण्डी बनकर घूमेंगी।
जरा जरा सी बातों पर, दिन रात खुलेगी वधशाला॥३॥
अच्छा हो सरकार बुलाये, एक सभा विद्वानों की।
तब निर्णय करके सब खोले, इस दुष्कर्म की वधशाला॥४॥

(दयानन्द सन्देश से)

राष्ट्र निर्माण में धर्म का स्थान

(ले०—मुनि श्री० देवराज जी विद्यावाचस्पति)

राष्ट्र निर्माण के लिये धर्म की बड़ी आवश्यकता है, कहा है "धर्मो जगतः प्रतिष्ठा" धर्म जगत् की प्रतिष्ठा अर्थात आधार है। "धर्मम् प्रजाः उपसर्पन्ति" धर्म की ओर प्रजाऐं गति करती हैं। "तस्मात् धर्मं विदुर्बुधाः" इस कारण से विद्वान् बुद्धिमान् लोग धर्म का ज्ञान और उसका पालन करते हैं।

इसी प्रकार अन्यत्र कहा है—"धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः, तस्मात् धर्मो न हन्तव्यः मा नो धर्मो वधीत्" अर्थात् धर्म का पालन न करने से पालन न करने वाले का धर्म नाश करता है। इस लिये धर्म का पालन करना चाहिये, कदाचित धर्म का पालन न करने से धर्म हमारा नाश न कर दे।

धर्म क्या वस्तु है ? यह यहां पर समझना अत्यावश्यक है, धर्म शब्द "धृञ् धारणे" धातु से बना है, जो धारण करे उस का नाम धर्म है, राष्ट्र में व्यवस्था को बनाये रखने के लिये जो नियम बनाये जाते हैं उनका नाम धर्म है. उन नियमों के द्वारा राष्ट्र की प्रजा व्यवस्थित अर्थात मर्यादा में रहतीं हैं, जिस समय प्रजाजनों में अनेक मानसिक दुष्प्रवृत्तियों के कारण व्यवस्था अर्थात् मर्यादा टूट जाती है, उस समय धर्म दण्ड रूप में प्रकट होता है, इसी कारण कहा है—"धर्मं दण्डं विदुर्बुधाः" ज्ञानी लोग धर्म की दण्ड शब्द से व्याख्या करते हैं। यह धर्म क्या वस्तु है, और कैसे प्रगट होता है ? हम यहां पर धर्म की व्याख्या राष्ट्र निर्माण की दृष्टि से करेंगे और प्रगट करेंगे कि इस व्याख्या के अनुसार धर्म यथावत् समझ की और आचरण की वस्तु होता है। शरीर में अंग-प्रत्यंग अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार अपना-अपना कार्य कर रहे हैं। वे अपना कार्य अपने लिये नहीं कर रहे प्रत्युत शरीर के लिये कर रहे हैं। शरीर के पुष्ट होने से उन अंगों की अपनी-अपनी पुष्टि तो स्वतः परिणाम सिद्ध है। यदि प्रत्येक अंग अपना-अपना कार्य अपने स्वार्थ की पूर्त्ति के लिये करे और यह समझे कि मेरे किये हुये श्रम का फल मुझे ही मिलना चाहिये दूसरे को इस श्रम का फल लेने का अधिकार नहीं है, तो इस स्वार्थमयी बुद्धि से न उस श्रम करने वाले का भला होगा और न उस शरीर का पोषण होगा जिस शरीर का वह अंग है।

पूर्वोक्त शरीर के दृष्टान्त से हम समझ रहे हैं कि प्रत्येक अङ्ग छोटे-छोटे अनेकों कोष्ठों से बना हुआ है, और वे कोष्ठ अपने स्वभावानुकूल प्रकृति के अनुसार अपना-अपना कार्य कर रहे हैं। जिनके कार्यों से उस-उस अङ्ग का निर्माण और उसकी क्रिया चल रही है, इसको हम यूं कह सकते हैं, कि अंग में कार्य करने वाले कोष्ठों (Cells) ने अपने आपको उस-उस अंग के अर्पण कर दिया है अर्थात् प्रत्येक कोष्ठ की व्यष्टि आत्मा ने अपने आप को उस अंग की समष्टि आत्मा के समर्पण किया हुआ है, जिस अंग का वे छोटे-छोटे कोष्ट निर्माण करते हैं। इसी प्रकार अंगों की व्यष्टि आत्माओं ने उस शरीर की समष्टि आत्मा के अर्पण किया हुवा है, जिस शरीर के वे अंग हैं, और शरीर के निमित्त अपना-अपना कार्य कर रहे हैं। यदि मुख में डाला हुवा भोजन अपनी स्वार्थ वृत्ति से अपने पास रख ले और शरीर के लिये रस बनाने के लिये पेट में न भेजे तो उस अन्न से मुख में विकृति होगी तथा शरीर का पोषण नहीं हो सकेगा। उसी प्रकार पेट में पहुंचा हुआ अन्न रस बन कर यदि आगे रक्त आदि धातुओं में परिणत न हो और पेट स्वार्थवश उस अन्न को अपने पास रख छोड़े तो पेट में विकार उत्पन्न होगा और शरीर क्षीण हो जायगा। इसी प्रकार शरीर में विद्यमान सब अं-गप्रत्यंग जो कुछ कार्य कर रहे हैं वे अपनी व्यष्टि-गत आत्मा की तृप्ति के लिये नहीं, प्रत्युत शरीर की समष्टि-आत्मा की तृप्ति के लिये कार्य कर रहे हैं। कहा है "नरराष्ट्रमिव देवराष्ट्रम्" नरों के राष्ट्र की तरह देवों का राष्ट्र होता है। प्रत्येक नर को उसका शरीर एक छोटे राष्ट्र के समान मिला हुवा

है, इस राष्ट्र में जिस प्रकार कार्य हो रहा है उस कार्य पद्धति को नरों ने समझना है और उसे धारण करना है, क्योंकि इस कार्य-पद्धति के अनुसार देवों अर्थात् विद्वानों की राष्ट्र पद्धति चलनी है। जब तक हम इस शरीर में चलती हुई कार्य पद्धति को हृदयङ्गम नहीं कर लेंगे तब तक देवों का सुन्दर राष्ट्र निर्माण नहीं हो सकेगा। एक मकान बनाना हो तो उसमें लगे हुये शिल्पी (कारीगर) अपनी पूर्ण कुशलता के साथ भवन का निर्माण करते हैं। ये सब शिल्पी जो भिन्न-भिन्न कार्य करने वाले हैं अपनी कार्य कुशलता रूप व्यष्टि-आत्मा को भवन की समष्टि आत्मा के अर्पण कर देते हैं।

इसी प्रकार यदि कुछ व्यक्ति मिल कर छप्पर वा किसी लोहे वा पत्थर के बोझ को उठाते हैं तो, अपनी-अपनी व्यष्टि-आत्माओं को छप्पर आदि की आत्मा में अर्पण करते हैं तो वह कार्य सरलता से सुन्दर रूप में सम्पन्न हो जाता है। यदि वे व्यक्ति अपने अपने मन में ऐसा निश्चय करें कि अन्य व्यक्ति उठा ही लेंगे और सहयोग न दें, तो इस प्रकार वह बोझ उठ नहीं सकेगा। इत्यादि उदाहरणों से हम समझते है कि व्यक्ति को अपनी व्यष्टि आत्मा समष्टि आत्मा के लिये अर्पण कर देनी पड़ती है, अर्थात् व्यष्टि को अपनी ही उन्नति रो सन्तुष्ट न रह क समूह की समष्टि आत्मा के अर्पण करके सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी होती है। जैसे शरीर के अंग अपने आप को शरीर की समष्टि आत्मा के अर्पण करते हैं, जैसे ग्राम निवासी अपनी व्यष्टि आत्माओं को ग्राम की समष्टि आत्मा के अर्पण करते हैं, आत्माओं को प्रान्त की समष्टि आत्मा में अर्पण करते हैं, जैसे प्रान्त अपनी व्यष्टि आत्माओं को राष्ट्र की समष्टि आत्मा में अर्पण करते हैं, वैसे पृथिवी के समस्त राष्ट्र महासमष्टि के अर्पण करते हैं। यह महासमष्टि ऐसी समष्टि है जिसमें छोटी-छोटी अनेक समष्टियां विद्यमान है। यह महासमष्टि है, जिसके लिये छोटी-छोटी समष्टियों और व्यष्टियों ने अपने आपको अर्पण कर रक्खा है। छोटी समष्टि वा व्यष्टि का बड़ी समष्टि के अर्पण करना यह उनका धर्म, वा कर्तव्य है। इस धर्म वा कर्तव्य से च्युत हो जाना यह अधर्म है। धर्म से च्युत होना ही मर्यादा का भंग है, व्यष्टियां वा छोटी २ समष्टियां जब मर्यादा का भंग करती है, तो संसार में अशान्ति का उद्भव हो जाता है। मनुष्यों की दूर दृष्टि न रह कर छोटे-छोटे सामयिक कर्तव्यों में बंध जाती है। इस प्रकार समष्टि आत्मा के लिये व्यष्टियों का समर्पण करने से जिस यज्ञ का सम्पादन होता है वह यज्ञ वा संगठन टूट जाता है। इस संगठन के टूट जाने से सर्वत्र अधर्म का उदय और धर्म का नाश होता है। श्री कृष्णचन्द्र महाराज ने गीता में बतलाया है "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोचयिष्यामि मा शुचः" इस श्लोक का अर्थ है कि सब धर्मों (miner-dytys) को छोड़कर अहं पद जिस महा समष्टि को बतलाता है, तू अपने आपको उस महा समष्टि के अर्पण कर दे।

अहं पद वाच्य यह महा-समष्टि कृष्ण का तात्त्विक रूप है। श्रीकृष्ण मनुष्य व्यक्ति ने यह तत्त्वज्ञान अर्जुन के सामने रक्खा है, और उसको उपदेश दिया है, कि अपना मन, वचन और कर्म महा समष्टि रूप कृष्ण तत्त्व के अर्पण कर दे, उसी उपदेश में कहा है "यत् करोपि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत। यद्यत्पश्यसि कौन्तेय तत कुरुष्व मदर्पणम्" इस श्लोक में खाना, पीना, हवन, करना, देना आदि क्रियाएँ भी अर्पण करने के लिये कहा गया है। उन क्रियाओं का फल अर्पण करने पर भी अर्पण करने वाले को मिलता ही है तो भी अर्पण हो जाता है। इसका यह अर्थ है कि क्रिया करने वाला जो भी क्रिया करे वह राष्ट्र हित की दृष्टि से करे। जिस क्रिया से राष्ट्र का अहित हो उस क्रिया का न करना ही उचित है। जो हम खाते पीते हैं, वह यदि अधिक खा जायें, तो राष्ट्र का अहित होता है। यदि उचित मात्रा से कम खावें तो भी राष्ट्र का अहित होता है। अधिक खाने में अर्थात् उचित मात्रा से अधिक ग्रहण करने में, राष्ट्र के अन्य व्यक्तियों का आहार द्रव्य ग्रहण कर लेते हैं, और संभवतः हम रोगी हो जाते हैं। हमारा रोगी होना यह राष्ट्र का अहित हुवा। इस कारण बड़ी सावधानी के साथ आहार द्रव्य को ग्रहण करना उचित होता। इसके लिये लोभ और तृष्णा पर विजय प्राप्त करने का यत्न करना होता है।

जो हम हवन करते हैं, उसमें हमें चार प्रकार के पदार्थों का उचित मात्रा में हवन करना होता है (१) सुगन्धित २ पुष्टिकारक ३ रोग विनाशक ४ मिष्ट पदार्थ। इन पदार्थों का अग्नि बल के अनुसार हवन करने से राष्ट्र में रोगों का नाश और रहने वालों की पुष्टि होती है। इस प्रकार हवन भी राष्ट्रिय दृष्टि से अर्पण की भावना के साथ किया जाता है। इसी प्रकार जो हम दान देते हैं वह भी राष्ट्र हित की दृष्टि से सुपात्र और कुपात्र का विचार करके दिया जाता है। जो हम तप अर्थात् कार्य की सिद्धि के लिये यत्न करते हैं, वह भी राष्ट्र हित की दृष्टि से किया जाता है। यदि राष्ट्रहित दृष्टि नहीं रहेगी और स्वार्थ बुद्धि संकुचित वृत्ति रहेगी तो तप भी अनिष्ट देने वाला होगा। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को लक्ष्य करके मानव मात्र को उपदेश दिया है कि जो कुछ मन, वचन, कर्म का उपयोग करो, वह मानव कल्याण के लिये करो, थोड़ी भी स्वार्थ बुद्धि उस में नहीं होनी चाहिये। स्वार्थ बुद्धि का त्याग और मानव कल्याण के हित की दृष्टि से किया गया मन, वचन कर्म का उपयोग ही सच्चे अर्थों में अर्पण कहलाता है, केवल " कृष्ण को अर्पण हो ऐसा कहने मात्र से मन, वचन, कर्म, का अर्पण नहीं होता। क्योंकि उसमें मन, वचन कर्म के प्रयोग से उत्पन्न फल का त्याग नहीं होता, उस पर अपनी दृष्टि बनी ही रहती है। इस दृष्टि को हटाने के लिये गीता में श्री कृष्ण का उपदेश है कि कर्म तो करो परन्तु कर्म के फल की चाह न रक्खो। कर्म करने और उस फल की चाह न रखने से वह कर्म कृष्ण तत्त्व समष्टि-आत्मा के अर्पण होता है।

यहां प्रश्न उपस्थित होता है कि फल की चाहना के बिना कर्म कैसे हो सकेगा? 'श्री कृष्ण' ने उसका उत्तर दिया है—संसार में एक व्यक्ति मानव अकेला ही अपनी आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकता। सब मनुष्य मिलकर एक दूसरे की सहायता से अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण कर रहे हैं। उदाहरण के लिये यदि हमने रोटी खानी हो तो रोटी बनाने के लिये आटा चाहिये, आटे के लिये गेहूँ आदि सामग्री चाहिये, गेहूं आदि को खेत में उत्पन्न करने के लिये, जोतने बोने और काटने के साधन चाहियें, आटा तैयार होने पर भी रोटी सेंकने के लिये लकड़ी इन्धन और तवे आदि का सामान होना चाहिये। इन सब साधनों को जुटाने के लिये, अनेक व्यवसायी अपना-अपना कार्य करते हैं और तब इन सब व्यवसायी लोगों के सहयोग से रोटी आदि पदार्थ खाने को मिलते हैं। इन सब व्यवसायी लोगों के मिलने से राष्ट्र का निर्माण होता है। और राष्ट्र के व्यक्ति यह समझ लेते हैं, कि हमारा जीवन सब का मिल करके है अकेले-अकेले का नहीं, इस लिये हमें जो कुछ करना है, राष्ट्र हित की दृष्टि से करना है अपने हित की दृष्टि से नहीं।

श्री कृष्ण ने गीता में बतलाया है कि जो कुछ करो वह अपने पास मत रक्खो। उसे राष्ट्रिय समष्टि-आत्मा अर्थात् कृष्ण तत्त्व के अर्पण कर दो। मनुष्य जीवन के निर्माण के लिये पांच महाव्रतों में (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) अपरिग्रह पर बड़ा बल दिया है। परिग्रह वा संग्रह को महाव्रतों में नहीं रक्खा। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है, कि परिग्रह वा संग्रह की वृति मनुष्य जीवन निर्माण के लिये हानिकर है और राष्ट्र निर्माण के लिये भी घातक है। इसलिये मनुष्य के पास जो कुछ हो वह राष्ट्रिय समष्टि—आत्मा के अर्पण करना चाहिये मनुष्य को अपने पास कुछ नहीं रखना चाहिये। राष्ट्रिय आत्मा से दिया गया जो कुछ हो उसी से अपनी सन्तुष्टि और तृप्ति करनी चाहिये। (क्रमशः)

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें

(लेखक श्री रामेश बेदी)

१. लहसुन प्याज (सं० ३)	मूल्य	२॥)
२. त्रिफला (तीसरा संस्करण)		३।)
३. शहद (शहद की पूरी जानकारी)		३)
४. तुलसी (सं० दूसरा)		२)
५. नीम : बकायन		२।)
६. सोंठ (तीसरा संस्करण)		१॥)
७. मिर्च (दूसरा संस्करण)		१)
८. देहाती इलाज (तीसरा संस्करण)		१)
९. शहतूत		॥)
१०. पेठा कद्द		॥)
११. सर्पगन्धा		।=)
१२. साँपों की दुनियाँ सचित्र सजिल्द		५)

पता—हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट
गुरुकुल काङ्गड़ी (हरद्वार)

* आज के गुरु *

(लेखक—श्री सहदेव शास्त्री डी० बी० हाई स्कूल बादली (दिल्ली))।

प्राचीन काल में आर्यावर्त देश में गुरु और शिष्य का सम्बन्ध स्पृहणीय था। परन्तु आज सर्वथा परिवर्तन दिखाई देता है। न तो वे गुरु रहे और न वे शिष्य। इस का मूल कारण तो यह बेहूदी तथा राष्ट्र की नींव को खोखला करने वाली प्रचलित शिक्षा-प्रणाली ही है। आज समन्तात् जो भ्रष्टाचार तथा रिश्वतखोरी और कदाचार का बोलबाला दिखाई देता है। यह सब इसी पिशाचिनी का प्रभाव है।

सभी देशवासी राष्ट्रपति तक आधुनिक शिष्य का विरोध करते हैं। इस को बदलने का साहस किसी को नहीं हो रहा। नित्य नये स्कूल और कालेज खोले जा रहे हैं। इतनी महत्वपूर्ण वस्तु की उपेक्षा इसी देश में हो सकती है।

जब तक यह कुशिक्षा हमारे विद्यालयों में प्रचलित रहेगी, तब तक हम विरजानन्द और दयानन्द जैसे आदर्श गुरु शिष्य के दर्शन कदापि नहीं कर सकेंगे।

गुरु शब्द की दुर्दशा जितनी आज के युग में हो रही है, उतनी कभी नहीं हुई।

आज के शिक्षकों के लिए गुरु शब्द का प्रयोग भी 'गुरु' शब्द का अपमान करना है।

बात कटु है, किन्तु है सत्य। "अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः" की उक्ति को ध्यान रखते हुए शिक्षक वर्ग इस कटु सत्य को सुन कर यदि इस पर कुछ भी ध्यान देगा, तो राष्ट्र का परम हित होगा।

यह पहले कहा जा चुका है कि यह सारा दोष तो प्रचलित शिक्षा प्रणाली का है। परन्तु सारा दोष शिक्षा के मत्थे मढ़ना न्याय सङ्गत नहीं। अध्यापक वर्ग यदि चाहे तो पर्याप्त परिवर्तन कर सकता है। वह 'राष्ट्र निर्माता' कहा जाता है। परन्तु अपने महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व को निभा नहीं रहा। निभाए भी कैसे? ऐरे गैरे नत्थू खैरे को पकड़ कर गुरु बना दिया जाता है। लड़कों को बनाना कोई सरल कार्य नहीं है। बच्चों को बनाने के लिए बड़े तपस्वी, चरित्रवान् तथा कर्मठ विद्वान् अध्यापकों की आवश्यकता है।

प्राचीन काल में शिक्षक वानप्रस्थी वा संन्यासी हुआ करते थे। जो कि चरित्रवान् और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का गहरा अनुभव रखते थे। वे आचार की शिक्षा देते थे। अतः आचार्य कहलाते थे। वे परोपकार भावना से विद्या दान करते थे, विद्या दान को अपना कर्तव्य मानते थे। उनके शिष्य उनके पुत्र होते थे। वे बच्चे की प्रत्येक अच्छाई या बुराई के उत्तरदाता होते थे। शिष्य की कीर्ति में अपनी कीर्ति समझते थे।

परन्तु आज दशा सर्वथा विपरीत है। अनुभव शून्य, चरित्रहीन नवयुवक, जब कोई अन्य धन्धा नहीं मिलता, तब 'गुरु' बनने चल पड़ते हैं।

एक सोलह साल का बालक मैट्रिक पास करके एक वर्ष बेसिक में लगा कर गुरु पद को सुशोभित करने लगता है।

मेरे विचार में सब से महत्त्वपूर्ण वस्तु बालकों का शिक्षण है। परन्तु आज कल इस की जितनी दुर्दशा हो रही है, उसे सभी जानते हैं। प्रायः आजकल अध्यापन कार्य में सब प्रकार से अयोग्य व्यक्ति ही प्रवेश करते हैं।

इसका मूल कारण है, पैसा। आजकल योग्यता का मापदण्ड है, कागज के नोट या कुछ धातु के टुकड़े। उन को दिखा कर किसी भी योग्य व्यक्ति की योग्यता खरीदी जा सकती है। "ज्यादा पैसा, ज्यादा योग्य" यह है आजका सिद्धान्त। इसी सिद्धान्त को लेकर आजकल का शिक्षित समुदाय चलता है।

अध्यापक का वेतन प्रायः सब से कम है। विशेषकर छोटे बच्चों को पढ़ाने वालों का। तब ऐसा मूर्ख कौन होगा जो इस क्षुद्र तथा निर्धन पेशे को ग्रहण करे।

बस इस में तो वे ही बेकार भर्ती किए जाते हैं जो कि सर्वथा हताश हो चुके हों।

(शेष पृष्ठ १५ पर)

आप के खून से पुष्ट हुई लाल सेना

खटमल और उस को नष्ट करने के उपाय

(लेखक—श्री रामेश बेदी, संचालक हिमालय हर्बल इंस्टीट्यूट, गुरुकुल काँगड़ी, हरिद्वार)

खटमल को संस्कृत में खट्वामल कहते हैं जिस का अर्थ है खाट का गन्द। खटमल गन्दे घरों में रहते हैं। सामान्यतया रात को निकलते हैं और दिन में चारपाई या फर्नीचर की दरारों के बहुत अन्दर छिपे रहते हैं। इनको खोजना कितना कठिन होता है यह खटमल के इस डाक के पते से ज्ञात होता है—बमुकाम बान, जिला अधवान, डाकखाना पाये, साकिन सेरुवा, मुहल्ला पट्टीवाला, गली चूल में जाकर खटमल शाह को मिले।

भूखे खटमल दिन में भी हमला करते हैं। रात को चारपाइ पर लेटने के बाद आपने जब बत्ती बुझा दी तो कुछ ही मिनटों बाद गरदन और दूसरी जगहों पर खटमलों ने काटना शुरू कर दिया है। बत्ती जलाने पर आप देखेंगे कि सफेद चादर पर छोटे-छोटे लाल जीवों की फौज भागी चली जा रही है। आपका लहू पी पी कर यह लाल सेना पुष्ट हुई है। नींद उचाट करने वाले इन जीवों के संहार के उपायों का मालूम करना आपके लिए स्वाभाविक है। परन्तु यह अचरज की बात है कि खटमलों को भोजन मिल सकने के इरादे से जैनी धन देकर मनुष्यों को खटमल वाली चारपाई पर सुलाया करते हैं। एक रात भी जिसे खटमल वाली चारपाई पर बितानी पड़ी हो, मुझे आश्चर्य है कि वह ऐसा करने को तैयार कैसे होगा ?

अण्डे बच्चे

फर्नीचर और कमरे की दीवारों की दरारों में तथा छिपने के अन्य स्थानों में मादा गर्मियों में अण्डे देती है। अण्डे समूहों में दिये जाते हैं। लार्वे छोटे, सफेद और अर्द्ध पारदर्शक होते हैं। प्रायः दस दिन में इनमें से बच्चे निकल आते हैं। बच्चे अपने माँ बाप से मिलते हैं। ये पाँच बार त्वचा बदलते हैं। करीब एक दर्जन सप्ताहों में ये जवान हो जाते हैं। जवान होने में समय कितना लगता है, यह बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि इन्हें भोजन कितना मिलता रहा है और इन्हें किस तापमान पर रहना पड़ रहा है। कहते हैं कि बिना कुछ खाये खटमल एक साल तक जीवित रह सकता है।

खटमल का मुख तीन सन्धियों वाला प्रोबोसिस होता है। शरीर चपटा होने से इसे दरारों में छिपने में आसानी रहती है। खटमल की लम्बाई करीब ३/१६ इंच होती है। शरीर की ग्रन्थियों से यह दुर्गन्ध देने वाला एक पदार्थ स्रावित करता है। जब इसे छुआ जाय तो यह झट दुर्गन्ध छोड़ने लगता है।

गलत विश्वास

जैनियों के विश्वास के अनुसार वह मल से पैदा होने वाला सम्मूर्च्छन जीव है। हिन्दी विश्व कोष (१६२२ पृष्ठ ६८८) के अनुसार, यह नपुंसक ही होता है और अधिक से अधिक उनचास दिन तक जीवित रहता है। इसके स्पर्श, रसना और नासिका ये तीन इन्द्रियाँ होती हैं, आँख व कान नहीं होते।

रोगों को फैलाता है

यह रक्त चूसने वाला प्राणी है और मुख्यतः मनुष्य के खून पर जीवन निर्वाह करता है। कुछ समय पूर्व चिकित्सकों का यह विश्वास था कि काला आज़ार, और प्रत्यावर्तित ज्वर (रिलेप्सिंग फीवर) को खटमल एक मनुष्य से दूसरे तक पहुँचाता है।

मारने के उपाय

गन्धक की धूनी कमरे में भर कर इसे नष्ट किया

जा सकता है। दीवारों और दरारों में पैराफीन चुपड़ने से ये भर जाते हैं। खटमलों को भगाने के उपायों में मरुए की पत्तियों के रस को चारपाई के छिद्रों में डालना राघव ने बतलाया है। इसकी गन्ध उन्हें भगाती है। डी. डी. टी. इन्हें मारने में बहुत प्रभावकारी है। परन्तु गांवों में और शहरों में भी सर्व साधारण के लिए इसका उपयोग करना सम्भव नहीं। यहां मैं इन्हें नष्ट करने के सरल उपायों का उल्लेख करूंगा।

गरम पानी से

धूप में चारपाइयों को डाल कर उनकी सन्धियों में उबलता पानी डालिये। यदि बड़े कड़ाहे या टब में पानी उबलने का प्रबन्ध हो सके तो बहुत अच्छा रहता है। चारपाई के पैर वाले सिरे को पहले उस में पांच मिनट डुबो दीजिये, फिर दूसरे सिरे को। बाहों पर और बीच के बान पर भी उबलते पानी की धाराएँ छोड़िये। सरदियों के आरम्भ अक्टूबर में पाँवों की सन्धियों के दरारों में इनके सैकड़ों सफेद अण्डे दीख पड़ते हैं। इन पर उबलता पानी छोड़ने से वे नष्ट हो जायेंगे। इन्हें मार देने की सावधानी न की गई तो इनमें से निकलने वाले बच्चे सारा साल परेशान करते रहेंगे। एक बार उबलते पानी से चारपाइयों को सींचने से यद्यपि प्रायः सब खटमल और उनके अण्डे-बच्चे मर जाते हैं परन्तु उसके बाद भी कुछ खटमल शेष रह जाते हैं जो रात को बिस्तरे की सफेद चादर पर घूमते नज़र आ जाते हैं। इसलिए इनके पूर्ण नाश के लिए अगले सप्ताह चारपाइयों की दुबारा उबलते पानी में निकाल देना चाहिये। इसके बाद ही आपको खटमलों के उपद्रवों से मुक्त समझना चाहिये। और अब आपके बच्चे और आप स्वस्थ हो कर नींद का उपभोग करने लगे हैं।

वाष्प द्वारा

बस्ती में एक ऐसा कमरा बनाना चाहिये जिसके दरवाजे और खिड़कियां कस कर बन्द हो सकें और उनमें से हवा का आवागमन न हो। इस कमरे के अन्दर गरम वाष्प के नलके लगे हों। चारपाइयों को एक दूसरे के ऊपर चुन दीजिये। कमरे में आयतन के अनुसार उसमें अधिक से अधिक चारपाइयाँ जमाने के बाद बन्द कमरे के अन्दर गरम वाष्प भर दिये जायें। खटमलों और उनके अण्डे बच्चों को मारने के लिए यह प्रभावशाली तरीके से काम करेगो। बड़े शहरों में, जहां पैसा खर्च करके लोग गरम पानी के शावर बाथ वर्षा स्नान की सुविधा प्राप्त करते हैं वहाँ खटमलों को नष्ट करने के इस उपाय से अवश्य लाभ उठाएंगे। गाँवों में और छोटी बस्तियों में तो लोग चारपाइयों को धूप में डालने झाड़ने और गरम पानी से धोने के झंझट को कर लेते हैं, परन्तु बड़े शहरों में इसके लिए उपयुक्त सुविधायें न होने से वाष्प द्वारा खटमलों को नष्ट करने के इन सार्वजनिक कमरों का अवश्य स्वागत होगा। लौण्ड्री आदि की तरह यह भी नियमित धन्धा बन सकता है।

(पृ० १३ का शेष)

इसका जो दुष्परिणाम होना था, सो हमारे सामने प्रत्यक्ष है। ऐसे अयोग्य, अनुभवहीन और चरित्र भ्रष्ट अध्यापकों से हम क्या आशा कर सकते हैं ?

राष्ट्र की अमूल्य निधि, अबोध बालकों का ऐसे नूतन गुरुओं से किस प्रकार सत्यानाश हो रहा है, यह सब विदित है। गुरु बनने के लिए केवल अक्षरज्ञान का प्रमाणपत्र (सर्टिफिकेट) पर्याप्त नहीं होना चाहिए। प्रत्युत सदाचार भी एक आवश्यक शर्त होनी चाहिए।

अन्य क्षेत्रों में तो ब्रह्मचर्यहीन और बाबू वर्ग कुछ हद तक खप भी सकता है। परन्तु इस महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में इनका प्रवेश "अक्षम्य" ही होना चाहिए। तब तक राष्ट्र ऊँचा नहीं उठ सकता, जब तक कि बालकों का भविष्य मार्ग भ्रष्ट, वासना पीड़ित, तथा पाश्चात्य शिक्षा से अभिभूत, व्यसनी लोगों के हाथ में है।

प्रायः अनेक शिक्षक विवाहित, असत्यवादी, व्यसनी, अपटुडेट होते हैं। भला ऐसे चपल मना बालकों को सदाचारी, सत्यवादी और सुशील छात्र कैसे बना सकते हैं।

हमें स्मरण रखना चाहिए कि जब तक यह आजकल की गुरु परम्परा इसी प्रकार चलती रहेगी तब तक राष्ट्र की अमूल्य धरोवर किशोर यों ही बरबाद होते रहेंगे।

देश की उन्नति, नदी, नहरों, फैक्टरियों या मिल स्थापित करने में नहीं है, अपितु देश के बालकों के सुशिक्षित और सदाचारी बनाने में ही है। यह केवल तब हो सकता है जब कि गुरुओं में वास्तविक गुरुत्व हो। क्या हम आजकल के गुरुओं से ऐसी आशा कर सकते हैं ?

हमारी सौराष्ट्र यात्रा

(ले० ब्र० सुदर्शनदेव भाष्याचार्य सिद्धान्त वाचस्पति)

[लेखाङ्क २]

७—आर्यसमाज मन्दिर ब्यावर

ब्यावर का आर्यसमाज मन्दिर अतिरम्य एवं सुदृढ़ बना हुआ है। इसमें एक मल्लस्थल (अखाड़ा) भी है, जिसमें नवयुवक प्रतिदिन प्रातः सायं मल्ल-युद्ध (कुशती) करते हैं। छोटे-छोटे बालक भी यहाँ प्रतिदिन आकर आसन आदि व्यायाम सीखते हैं। व्यायामार्थी बालकों की प्रतिदिन उपस्थिति ली जाती है। व्यायाम के सभी साधन अर्थात् मोगरी, मुद्गर, गदा, डम्मल आदि यहाँ विराजमान हैं। यह सब म० जयदेव आदि सज्जनों तथा श्री स्वा० शान्तानन्द जी महाराज का परिश्रम है। श्री स्वा० शान्तानन्द जी महाराज को ब्यावर का बच्चा-बच्चा जानता है। यहाँ सेठ लोग इनके अतिप्रेमी हैं। श्री स्वामी जी महाराज तथा श्री पं० वासुदेव जी ने हमारे भोजन का प्रबन्ध किया। भाई वासुदेव जी का आदर्श आर्य्यपरिवार देखकर बहुत प्रसन्नता हुई। श्री स्वामी जी महाराज के अतिप्रेमपूर्ण व्यवहार से हृदय अति-प्रसन्न हुआ। ता० ८ को प्रातः साय दोनों समय वासुदेव जी के घर ही भोजन किया। ता० ८ की रात्रि को आर्य्यसमाज मन्दिर के मैदान में श्री आचार्य जी का भाषण हुआ। श्री मन्त्री पं० रविदत्त जी ने भाषण के लिये अच्छा प्रबन्ध किया। श्री आचार्य जी के भाषण के उपरान्त एक आर्य सेठ श्रीराधाकृष्ण-कुन्दनलाल जी ने प्रातःकाल ता० ९ के लिये भोजन का निमन्त्रण दिया। प्रातः नित्यकर्म के पश्चात् स्वामीजी महाराज ने यथेच्छ दूध पिलाया। पुनः श्री सेठजी के निमन्त्रण से भोजनार्थ उनके घर पहुँचे। यह घर अतिस्वच्छ एवं सुन्दर है। घर में अनेक राजा महाराजाओं के चित्र लगे हुये हैं और घर की भित्तिकायें शिक्षाप्रद सुन्दर-सुन्दर वाक्यों से सुशोभित हैं। यह भी एक अत्युत्तम आर्यपरिवार है। सेठजी ने हमें बहुत प्रेमपूर्वक भोजन कराया और चलते समय कुछ पूरियां, शाक, तथा ६ जोड़े धोती भी भेण्ट किये। तत्पश्चात् शीघ्र ही हम स्टेशन पर पहुँचे। क्योंकि हमें १० बजे की मेल से जाना था। समय पर पहुँचने पर भी हम मेल में जनसम्मर्द (भीड़) होने के कारण नहीं बैठ सके। पश्चात् ११ बजे वाली पैसेञ्जर गाड़ी से यात्रा की और रात्रि के ९।। बजे आबूरोड पहुंचे। रात्रि को वहीं स्टेशन पर शयन किया। ता० १० को नित्यकर्मों से निवृत हो प्रातः ५ बजे की गाड़ी से पुनः प्रस्थान किया। सायं ८।। बजे वाङ्कानेर पहुंचे। यहाँ से टङ्कारा जाने के लिये गाड़ी बदलनी पड़ती है। अतः हमने भी गाड़ी परिवर्तित की, जो मोरवी जाती है। इस गाड़ी से हम रात्रि के ९।। बजे मोरवी पहुंचे। मोरवी स्टेशन से लगभग दो फर्लाङ्ग की दूरी पर यात्रियों के निवासार्थ एक विशाल धर्मशाला बनी हुई है। हमने भी धर्मशाला में ही रात्रि व्यतीत की। प्रातः ता० ११ को शौच स्नान आदि से निवृत्त हो टङ्कारा को प्रस्थान किया। मोरवी से प्रातः ६।। बजे टङ्कारा को गाड़ी जाती है। उसी से हम प्रातः ९ बजे टङ्कारा आर्यसमाज मन्दिर में पहुंचे।

८—टङ्कारा

टङ्कारा ऋषि दयानन्दजी महाराज की जन्मभूमि है, यह बात प्रत्येक आर्य जानता है। टङ्कारा आर्यसमाज मन्दिर में आजकल चञ्चल बहिनजी और शान्ता बहिन

जी दो बहिनें बहुत वर्षों से रहती हैं तथा आर्य समाज का प्रचार करती हैं। हम मन्दिर में यज्ञादि करके वस्त्र-प्रक्षालन के लिये डेमी नदी पर गये। टङ्कारा डेमी नदी के तट पर स्थित है। इसी नदी के तट पर स्वामी दयानन्द जी महाराज के पिता कृष्ण जी तिवाड़ी का शिवमन्दिर विराजमान है। यह वही मन्दिर है, जिस मन्दिर में ऋषि दयानन्द जी विरक्त हो गृहसम्पत्ति एवं सांसारिक भोग विलास की समग्र सामग्री को ठुकरा कर सच्चे शिव के दर्शनों के पिपासु बने थे। आजकल भी यहाँ शिव की पूजा होती है। शिवमन्दिर को देखने के पश्चात् हमने डेमी नदी में सानन्द स्नान किया और वस्त्र भी धोये। डेमी नदी के तट पर कुछ प्रातराश भी किया। तदुपरान्त ऋषि दयानन्द जी महाराज का जन्मगृह देखा। जिस घर में स्वामी जी महाराज का जन्म हुआ था, वह घर तो अब विद्यमान नहीं है। उस स्थान पर एक सेठ ने हवेली बना रखी है। किन्तु घर के जिस प्रकोष्ठ में स्वामी जी ने जन्म लिया था, वह स्थान पूर्ववत् विद्यमान है। यहाँ एक श्रद्धालु वृद्धा रहती हैं। उसने हमें बताया कि अमुक प्रकोष्ठ में स्वामी जी महाराज का जन्म हुआ था और यह कह कर उसके आँखों में आँसू आगये। श्री स्वामी जी महाराज का जन्मगृह देख आर्यसमाज मन्दिर में पहुंचे।

पं० चञ्चल बहिन जी मस्तिष्कशास्त्र की अच्छी ज्ञात्री हैं। इन्होंने हमें मस्तिष्कसम्बन्धी अनेक चित्र दिखलाये और उनके विषय में संक्षेप से हमें कुछ बतलाया। तत्पश्चात् दोनों बहिनों ने हमें अतिप्रेम से भोजन कराया। ता० ११ को ही वापिस आने का हमारा विचार था, किन्तु चञ्चल बहिन जी के अत्याग्रह से ११ को वहीं निवास किया। पं० चञ्चल बहिन जी का पूर्ण विश्वास है कि शिर के अवयवों को देखकर प्रत्येक मनुष्य के विषय में ठीक २ बतलाया जा सकता है कि मनुष्य किस प्रकार का है। जैसे कि इसकी बुद्धि मन्द है वा तीव्र, गणित व चित्रकलादि में इसकी गति कैसी है, काम क्रोधादि की मात्रा भी इसमें कितनी है, क्षुधा एवं पाचनशक्ति कैसी है आदि २। इन्होंने हमारे भी शिरों का निरीक्षण किया। तब सब के गुण, दोष बताये। बहन जी का इस विषय का ज्ञान प्रशंसनीय है।

ता: ११ की सुख से रात्रि व्यतीत कर प्रातः सभी नित्यकर्मों से निवृत्त हो दुग्धपान करा दोनों बहिनों ने प्रेमपूर्वक हमें विदा किया। ता: १२ को टङ्कारा से वापिस मोरवी आये। मोरवी से गाड़ी में बैठ ३। बजे सुरेन्द्रनगर पहुँचे। सुरेन्द्रनगर से सणोसरा को सायंकाल ३॥ बजे गाड़ी जाती है। उसके द्वारा हम रात्रि ६॥ बजे सणोसरा स्टेशन पर पहुँचे। स्टेशन के निकट ही यात्रियों के निवासार्थ कैम्प बने हुये थे। ता: १२ की रात्रि को स्टेशन पर ही निवास किया।

६—सणोसरा

ता: १३ को प्रातः सणोसरा पहुंचे। स्टेशन से सणोसरा गाँव २॥, ३ मील के लगभग है। ग्राम से ½ मील पण्डाल तथा यात्रियों के भोजन और निवास का प्रबन्ध था। हमें १२६ नम्बर की कड़बी की झोंपड़ी निवासार्थ मिली, ता० १३ और १४ को उसी में निवास किया। १३ ता० को सायंकाल ४॥ बजे डा० राजेन्द्रप्रसाद जी राष्ट्रपति वहाँ पर पधारे। राष्ट्रपति जी का भव्य स्वागत हुआ और उनके निवास केलिये ४ हजार रुपये की कुटीर बनाई गई थी।

लगभग भारत के सभी प्रान्तों के शिक्षा मन्त्री यहाँ पधारे हुए थे। सभी शिक्षा मन्त्रियों ने "नई तालीम" के विषय में अपने-अपने विचार प्रकट किये और अपने-अपने प्रान्त में हुई 'नई तालीम' की प्रगति का विवरण जनता के समक्ष उपस्थित किया।

श्री प्रो० शेरसिंह जी ने यहाँ पर स्थानीय शिक्षा समितियों में अच्छा प्रतिनिधित्व किया और 'नई तालीम' के अन्तर्गत सहशिक्षा (लड़के लड़कियों की एक साथ शिक्षा) का तीव्र विरोध किया। नई तालीम क्या है ? इस की कथा लम्बी चौड़ी है, किन्तु स्थूल

रूप से संक्षेपतः इतना कह सकते हैं कि इस पद्धति से साक्षर किसान मजदूर तैयार किये जा सकेंगे, विद्वत्ता का लोप हो जायेगा ।

१५ ता० को सौराष्ट्र के प्रसिद्ध वयोवृद्ध महात्मा रविशङ्कर जी महाराज से लगभग एक घण्टा तक वार्तालाप हुआ, उसमें उन्होंने अपनी सेवा-कार्य करने की पद्धति का वर्णन किया । म० रविशङ्कर जी पहले कट्टर आर्यसमाजी थे । किन्तु गान्धी जी के सम्पर्क से कुछ कांग्रेस की ओर झुकाव हो गया ।

तत्पश्चात् सणोसरा से प्रस्थान किया । सणोसरा स्टेशन पर आकर कुछ विचार विमर्श हुआ कि अब किस ओर चलें । श्री आचार्य जी का विचार तो पोरबन्दर और सोमनाथ मन्दिर आदि दिखाने का था । किन्तु कुछ एक की इच्छा न होने से यह विचार स्थगित कर दिया । सणोसरा स्टेशन से गुरुकुल सोनगढ़ १० मील है । अतः निश्चय हुआ कि गुरुकुल सोनगढ़ तो चलना ही चाहिये । यहाँ ब्र० दिलीप जी (मोगर ग्राम निवासी जो सौराष्ट्र प्रान्त में है) हमारे साथ थे । वह पहिले गुरुकुल सोनगढ़ में रह चुके थे । अतः उनकी भी इच्छा थी कि गुरुकुल सोनगढ़ चलना चाहिये । हम सायंकाल की गाड़ी से (अतरसिंह जी और स्वामी नित्यानन्द जी महाराज को स्टेशन पर सामान के पास छोड़कर) गुरुकुल सोनगढ़ गये । वहाँ स्नान सन्ध्या हवन और भोजन करके सायं ७॥ बजे वहाँ से चले । ८॥ बजे वाली गाड़ी से वापिस सणोसरा स्टेशन पहुंचे । सामान और अतरसिंह जी तथा स्वामी नित्यानन्द जी को साथ में ले सारी रात चलकर १६ ता० को प्रातकाल ८॥ बजे महेसाणा पहुंचे । महेसाणा स्टेशन पर स्नान कर ६ बजे की गाड़ी से १ बजे मध्याह्न आबूरोड पहुंचे । आबूरोड के आर्य समाज मन्दिर में लड़कियों का स्कूल लगा हुआ था, अतः मन्दिर में न ठहर कर हम धर्मशाला में ठहरे । धर्मशाला में सब समान रख कर और अतरसिंह जी को रुग्ण होने के हेतु धर्मशाला में ही छोड़ आबू देखने चले ।

१०—आबू

आबूरोड से आबूशहर १८ मील है । आबूरोड के निवासिजनों ने हमें बतलाया था कि यहाँ से आबू ५-७ मील है । आबूरोड से आबू को मोटरें जाती हैं, किन्तु हमने पदाति (पैदल) जाने का ही निश्चय किया । कुछ एक व्यक्तियों ने हमें पैदल जाने से रोका भी । क्योंकि आबू जाने के लिये आबू पर्वत को लाङ्घना पड़ता है । पहाड़ में अनेक सिंहादि भयङ्कर वन्यपशु भी रहते हैं किन्तु हमने पैदल जाना ही उचित समझा ।

आबू राजस्थान का शिमला कहलाता है । यह वह स्थान है जहां श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज को स्वास्थ्य प्राप्ति के लिये ले जाया गया था । आबू अतिरमणीय हरा भरा पर्वत है । इसे देख 'दूरतः पर्वता रम्याः' वाली लोकोक्ति असत्य प्रतीत होने लगती है और कविवरों के निम्नाङ्कित उद्गार स्वयं वाणी से निकल पड़ते हैं—

पृथ्वीयं पृथुला चलालिललिता द्वीपावलिमण्डिता,
नानानिर्झरिणीनदीन्द्रवलिता नानार्णवावेल्लिता ।
रम्यारण्यसुरामणीयकचिता सा, कन्तुजन्त्वञ्चिता,
भूपेन्द्रावलिपालिता वसुमती राजन्वती राजते ॥

अर्थात् यह पृथ्वी अनेक विशाल पर्वतों से, अनेक द्वीपों के नाना झरनों से, विभिन्न समुद्रों से, सुन्दर वनों की सुन्दरता एवं मनोहर पक्षियों से शोभायमान है ।" वास्तविक प्रकृति का सौन्दर्य तो आबू जैसे पर्वतों पर ही प्रत्यक्ष होता है । वृक्षों से समाच्छन्न पर्वत शिखरें, फूलों की सुगन्धों से सुगन्धित मन्द-मन्द वायु मन को हरती है । उस सुगन्धित वायु के स्पर्श से काया पुलकित हो जाती है । आबू पर्वत पर अनेक झरने भी हैं । जिनका जल ओले से भी कहीं अधिक शीतल प्रतीत होता है । यह सब देखते ही बनता है । जिसका वर्णन कोई कवि ही कर सकता है । हां ! पैदल चलते-चलते हम आबू से ४ मील नीचे ता० १६ को एक जैन मन्दिर

(शेष पृष्ठ २४ पर)

* हमारी साहित्य सेवा *

दीपमाला सम्वत २००६ को हमने साहित्य-सेवा का व्रत लिया था । तब से अब तक हमने निम्न ४८ छोटी बड़ी पुस्तकों का प्रकाशन किया है । एक-एक पुस्तक के कई भाग वा कई प्रकार की हैं, उन सहित संख्या ५६ है । जिन पुस्तकों के आगे यह लिखा है कि "छपेगी" उनकी संख्या पृथक् है । उनमें से हमारे द्वारा प्रकाशित संस्करणों के ४ के तीसरे और ८ के दूसरे संस्करण तक निकल चुके हैं । इस प्रकार पुस्तकों के भागों सहित अब तक १,९७,४०० पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है ।

हम यह सेवा आप महानुभावों के सहयोग से ही कर सके हैं । आशा है कि आगे भी यह सहयोग पूर्ववत् प्राप्त होता रहेगा ।

१. ब्रह्मचर्यामृत—	
साधारण संस्करण	=।।)
बाल संस्करण	।=)
२. आदर्श ब्रह्मचारी	।)
३. कन्या और ब्रह्मचर्य	≡)
४. ब्रह्मचर्य के साधन—भाग १-२	।-)
" भाग ३	≡)
" भाग ४	१)
" भाग ५	।=)
" भाग ६	छपेगी
" भाग ७	"
" भाग ८	"
" भाग ९	।।=)
" भाग १०	छपेगी
" भाग ११	"
५. ब्रह्मचर्य शतकम्	।।=)
६. व्यायाम का महत्त्व	≡)
७. आसनों के व्यायाम	।।)
८. सदाचार पंजिका	।।)
९. स्वप्नदोष की चिकित्सा	=।।)
१०. पापों की जड़ शराब—	
साधारण संस्करण	=।।)
बाल संस्करण	।-)
११. तम्बाकू का नशा—	
साधारण संस्करण	=।।)
बाल संस्करण	।=)
१२. हित की बातें	-)।।
१३. बाल विवाह से हानियां	समाप्त
१४. बिच्छू विष चिकित्सा	=)
१५. चकबन्दी कानून	।।)
१६. संस्कृत कथा मंजरी	।-)
१७. नेत्र रक्षा	≡)
१८. राम राज्य कैसे हो	≡)
१९. आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
२०. वैदिक धर्म परिचय	।।=)
२१. मनोविज्ञान तथा शिव संकल्प	२।।)
२२. संस्कृतांकुर	१।)
२३. श्रुति सुधा	≡)
२४. श्रुति सूक्ति शती	≡)
२५. हम संस्कृत क्यों पढ़ें	।=)
२६. संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय	।।)
२७. स्वामी आत्मानन्द की संक्षिप्त जीवनी	-)
२८. महर्षि दयानन्द का कार्य	-)
२९. स्वा० दयानन्द और म० गान्धी	२)
३०. दयानन्द और गोरक्षा	-)।।
३१. स्वामी विरजानन्द जीवन	१।।)
३२. स्वामी श्रद्धानन्द	)।।
३३. आर्य समाज की आवश्यकता (छोटी)	-)
३४. आर्य समाज की आवश्यकता (बड़ी)	।)
३५. आर्यसमाज के नियमोपनियम	=)
३६. वैदिक सन्ध्या पद्धति	-)
३७. वैदिक सन्ध्या हवन पद्धति	≡)
३८. वैदिक सत्संग पद्धति	।=)
३९. कर्तव्य दर्पण	।।।=)
४०. पंचमहायज्ञ विधि	≡)
४१. वैदिक गीता	३)
४२. पंजाब की भाषा व लिपि	-)
४३. दृष्टान्त मञ्जरी	२)
४४. आर्य कुमार गीतांजलि—	
भाग १	≡)
भाग २	≡)
४५. क्या हम आर्य हैं ?	-)
४६. आर्योद्देश्य रत्नमाला	-)
४७. विदेशों में एक साल	२।)
४८. छात्रोपयोगी विचारमाला	।।=)
४९. काश्मीर यात्रा	"

वैदिक साहित्य सदन,

आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली—६

हमारे यहाँ सुलभ कुछ विशेष ग्रन्थरत्न

१. चारों वेद (मूल) अजमेर	१७॥)	ऋग्वेद ६), यजुर्वेद २॥), सामवेद २), अथर्ववेद ४)
२. ऋग्वेद भाष्य ९ भागों में	५५)	महर्षि दयानन्दकृत ।
३. " " ७ भागों में	४२)	पं० जयदेव विद्यालंकार कृत ।
४. यजुर्वेद भाष्य ४ भागों में	२५)	महर्षि दयानन्द कृत ।
५. " " २ भागों में	१२)	पं० जयदेव विद्यालंकार कृत ।
६. सामवेद भाष्य १ भाग में	६)	" "
७. अथर्ववेद भाष्य ४ भागों में	२४)	" "
८. अष्टाध्यायी सूत्रपाठः	॥।)	पाणिनिमुनिकृत
९. अष्टाध्यायी भाष्य दोनों भाग	७)	महर्षि दयानन्द
१०. वेदाङ्गप्रकाश (सम्पूर्ण १४ भाग)	८॥≡)	" "
११. पातञ्जल महा भाष्य (सम्पूर्ण)	४०)	नेट
१२. गद्यमयं महाभारतम्	३)	आचार्य राजेन्द्रनाथ शास्त्री
१३. दयानन्द-दिग्विजयम् (पूर्वार्द्धं)	४)	आचार्य मेधाव्रत कविरत्न
१४. " " (उत्तरार्द्धं)	५)	" "
१५. कुमुदिनीचन्द्रः (गद्यकाव्यम्)	४)	" "
१६. प्रकृतिसौन्दर्यम् (नाटकम्)	१)	" "
१७. विरजानन्द चरितम् (पद्यकाव्यम्)		" " (प्रेस में)
१८. ब्रह्मचर्यमहत्त्वम् (पद्यकाव्यम्)	॥)	" "
१९. संस्कृत व्यवहारभानुः (पद्यकाव्यम्)	१)	विद्यानिधि शास्त्री
२०. मुनि चरितामृतम् (पद्यकाव्यम्)	१)	दिलीपदत्तोपाध्यायः
२१. व्याख्यान माला (विशिष्टश्लोक संग्रहः)	१॥)	अच्युतानन्द सरस्वती
२२. सिद्धान्तकौमुदी की अन्त्येष्टि	।-)	आचार्य राजेन्द्रनाथ शास्त्री
२३. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका	२॥)	महर्षि दयानन्द सरस्वती
२४. संस्कारविधि	॥।=)	" " "
२५. महर्षि दयानन्द का प्रामाणिक जीवन चरित भाग १	६)	देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय
२६. महर्षि दयानन्द का प्रामाणिक जीवन चरित भाग २	६)	देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय
२७. दयानन्दायन (हिन्दी महाकाव्य)	४)	श्री गदाधरसिंह कविरत्न
२८. सन्ध्या अष्टाङ्ग योग	॥।)	स्वामी आत्मानन्द सरस्वती

सुधारक के प्राप्य विशेषाङ्क

(१) गो—अङ्क ॥), (२) व्यायाम विशेषाङ्क १) (३) भोजन विशेषाङ्क १)
२॥) मनीआर्डर से भेजने पर डाक व्यय माफ ।

आगामी प्रकाशन

१. राष्ट्र निर्माण में धर्म का स्थान
२. " अर्थ का स्थान
३. " काम का स्थान
४. संस्कृत अध्यापक (भाग १ तथा २)
५. ब्रह्मचर्य के साधन भाग ६ (प्राणायाम)
६. " " भाग ७ (सत्सङ्ग)
७. ब्रह्मचर्य के साधन भाग ८ (स्वाध्याय)
८. " " भाग १० (निद्रा)
९. " " भाग ११ (विशेष नियमादि)
१०. आर्येन्द्रचारुचरितम् ।
११. योगदर्शन व्यास भाष्य सरल हिन्दी अनुवाद सहित

"विश्वम्भर वैदिक पुस्तकालय" गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (रजिस्टर्ड) गुरुकुल झज्जर (रोहतक) की पेटेण्ट एवं प्रसिद्ध औषधियां—

थोक भाव

सं०	नाम औषधि	नाम रोग	प्रतिशीशी (नकद)	प्रति दर्जन (नकद)	प्रति ग्र.स(नकद)
१.	नेत्रज्योति सुर्मा—	आँखों में पानी बहना, खुजली, लाली, नजर की कमजोरी आदि में रामबाण	॥)	४॥)	५१)
२.	नेत्रज्योति सुर्मा विशेष—	आँखों में जाला, फोला, रोहे इत्यादि पर अत्युत्तम	१)	६)	१०१)
३.	नेत्रामृत—	भयंकर दु:खती आँखों में जादू का काम करती है	छोटी शीशी ।=) बड़ी शीशी ॥=)	३।=) ५॥=)	३७) ६३)
४.	दन्त रक्षक मञ्जन—	दाँतों से खून व पीप का आना, दांतों का हिलना आदि दूर कर मोती के समान चमकाता है।	॥)	४॥)	५१)
		मञ्जन विशेष	१)	६)	१०१)
५.	दन्त रक्षक तैल—	प्रत्येक प्रकार की दन्त पीड़ा, पायोरिया व जिह्वा व मुख के छालों को दूर करता है।	॥)	४॥)	५१)
६.	व्रणामृत—	भयंकर फोड़े, फुन्सी, गले, सड़े घाव एवं नासूर (सरह) की प्रसिद्ध औषधि	१)	६)	१०१)
७.	कर्णरोगामृत—	कान से पीप आना, बहरापन, कर्णपीड़ा आदि को समूल नष्ट करता है।	१)	९)	१०१)
८.	पामामृत—	खुजली की प्रसिद्ध औषधि है।	१)	६)	१०१)
९.	अर्शरोगामृत—	प्रत्येक प्रकार की बवासीर की संसार प्रसिद्ध रामबाण औषधि है।	१०)	९०)	
१०.	स्वास्थ्यवर्धक चाय—	खांसी, जुकाम, श्वास, नजला, सिर दर्द, थकान आदि को दूर करती है।	।-)	२॥।-)	३१)

११. बलदामृत—	ताजा अंगूरों के स्वरस से निर्मित सुमधुर टानिक।	छोटी शी० २)	१८)	२०२)
	हृदय, उदर तथा मस्तिष्क रोगों में रामबाण है। फेफड़ों की निर्बलता को दूर कर अतीव बल देती है।	बड़ी शीशी ५)	४५)	
१२. ज्वरामृत—	प्रत्येक प्रकार के ज्वर, (बुखार) की अत्युत्तम औषध है	छोटी शीशी २)	१८)	२०२)
	नये पुराने बिगड़े हुए मलेरिया आदि में अमृत का काम करती है।	बड़ी शीशी ५)		
१३. बालरोगामृत–	बालकों के हरे-पीले दस्त, अपच, अजीर्ण, दांत निकलते समय के सभी रोगों को दूर कर बच्चों को बलवान् बनाता है।	२)	१८)	२०२)
१४. बालरोगामृत रस–	उपरोक्त सभी रोगों में रामवाण सिद्ध हुआ है तथा सूखा रोग की अचूक दवा है तोला	३)	२७)	३०३)
१५. स्वप्नदोषामृत रस–	स्वप्न दोष से हताश युवकों के लिये अत्युत्तम है। प्रमेह तथा प्रत्येक वीर्य रोग पर अत्यन्त लाभदायक है।	५)	४५)	
१६. स्वप्नदोषामृत चूर्ण—	उपरोक्त रोग में अत्यन्त लाभदायक है।	२)	१८)	२०२)
१७. संजीवनी तैल—	कटे, फटे एवं जले हुए पर तत्क्षण लाभ करता है। बहते हुये खून को लगाते ही बन्द करता है। जादू भरा प्रभाव रखती है।	॥=)	५॥=)	६३)
१८. च्यवनप्राश— [अष्टवर्गयुक्त]	पुरानी खांसी, फेफड़ों की निर्बलता, दिल की धड़कन तथा बुढ़ापा एवं कमजोरी को दूर करता है।	प्रति सेर (१ पैक) ७) प्रति पाव २)	५ सेर लेने पर (१ सेर के डब्बे) ६) सेर, आध सेर का डब्बा ३॥।)	२० सेर लेने पर (१ सेर के डब्बे) ५।) सेर, एक-एक ग्रुस लेने पर २५% कमीशन
१९. चन्द्रप्रभावटी—	प्रमेह की प्रसिद्ध औषध है। बवासीर, खून की कमी, निर्बलता आदि को दूर करती है।	१)	९)	१०१)
२०. अशोकारिष्ट—	स्त्रियों के स्वास्थ्यप्रद तथा मासिक धर्म विकार में अत्यन्त उपयोगी है।	२)	१८)	२०२)

पता—आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (रजिस्टर्ड) गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

॥ ओ३म् ॥

स्वतन्त्रानन्द धाम

निर्माण के लिये

१ लाख रुपये की अपील

आर्यो ! स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के स्वर्गवास से समस्त देश तथा आर्य जाति की जो हानि हुई है वह अनिर्वचनीय है। स्वामीजी महाराज का देश विदेश से अगाध प्रेम था। उनके संकल्पों में कई आवश्यक कार्य रहा करते थे। जिनकी पूर्ति के लिये सतत प्रयत्नशील रहते थे। अतः देशवासियों का यह नैतिक कर्तव्य है कि स्वामी जी महाराज के संकल्पों को कार्यरूप देने में जुट जायें। इसके लिये रोहतक नगर में स्वतन्त्रानन्द धाम बनाने का निश्चय हुआ है। जिसमें साधुओं के रहने का उचित प्रबन्ध, धर्मार्थ औषधालय, विशाल पुस्तकालय, व्यायामशाला तथा वेद-प्रचार का केन्द्र बनाने का विचार किया गया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह कार्य स्वर्गीय स्वामी जी की दृष्टि में सदैव घूमा करते थे।

स्वर्गीय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

अतः आर्यों का कर्तव्य है कि वे अधिक से अधिक धन राशि देकर इस शुभ कार्य को सम्पन्न करने में सहायक हों। स्वामी जी महाराज के स्मारक सम्बन्धी कार्य को सम्पन्न करके समस्त देश उनके प्रति कृतज्ञता प्रमाणित करने में सफल हो सकता है। अतः स्वर्गीय स्वामी जी के उपकारों से अनृण होने के लिये स्वयं तथा इष्ट-मित्रों से अधिक-से-अधिक धन भिजवा कर पुण्य के भागी बनें। यह धन संग्रह न्यून से न्यून एक लाख रुपया होना चाहिये। स्वतन्त्रानन्द धाम के निम्न विभाग होंगे—स्वतन्त्रानन्द वेद प्रचार भवन, स्वतन्त्रानन्द धर्मार्थ औषधालय, स्वतन्त्रानन्द पुस्तकालय, स्वतन्त्रानन्द व्यायामशाला।

नोट—१०१) रुपये देने वाले सज्जनों का नाम शिला पर अङ्कित कराया जावेगा।

५०१) रुपये देने वालों के नाम कमरे पर भी अङ्कित होंगे।

११०१) रुपये देने वाले सज्जनों के नाम पर स्वतन्त्र भवन [कमरा] बनाया जावेगा।

सब धन नीचे लिखे पते पर भेजा जावे।

स्वामी सुरेन्द्रानन्द जी, दयानन्द मठ, रोहतक

निवेदक—

अध्यक्ष—स्वतन्त्रानन्द धाम समिति, रोहतक।

(पृष्ठ १८ का शेष)

में ठहरे। क्योंकि चलते-चलते सूर्यदेव अस्ताचल को चले गये। जिससे आगे चलना उचित न था। यह जैन मन्दिर पर्वत पर ही बना हुआ है। यहाँ कुछ भील भी रहते हैं। जो पर्वत से लकड़ियां काट कर आबू बेचने जाते हैं। उस जैन मन्दिर में एक जैनी रहता था। हमें चोर डाकू समझ कर उसने मन्दिर में ठहरने का निषेध किया। उसे धमकाया तथा प्यार से समझाया और उसने फिर हमारे लिये सभी भोजन निर्माण के पात्र तथा लकड़ियां भी दे दीं और एक सोने के लिये कमरा तथा नीचे बिछाने के लिये एक दरी भी दी। हमने भीलों से आटा और दूध मूल्य से लिया और शाक के लिये १ पेठा भीलों ने स्वयं दे दिया। हमने मन्दिर में स्वयं रोटी बना कर भोजन किया। रात्रि को ओढ़ने के लिये कोई भी वस्त्र हमारे पास नहीं था। क्योंकि हम उसी दिन लौटने के विचार से आबू गये थे, किन्तु लौट न सके। जैसे तैसे–कटिवस्त्र और कुर्त्ते में ही रात्रि व्यतीत की। यात्रा की थकावट से निद्रा खूब आई। ता० १७ को प्रातः शौचादि से निवृत्त हो आबू की ओर चले। प्रातः ८॥ बजे के लगभग आबू पहुँचे। आबू के नक्की तालाबादि दर्शनीय स्थानों को देखकर १० बजे वापिस उसी जैन मन्दिर में आये जहाँ रात्रि को निवास किया था। प्रातःकालीन भोजन भी इसी जैन मन्दिर में बनाया। भोजन से निवृत्त हो पैदल ही सायं ५॥ बजे आबू रोड धर्मशाला में पहुंचे। यह ३६ मील की पर्वतीय-यात्रा हमारी पैदल-यात्रा थी। ता० १७ की रात्रि को यहीं आबूरोड धर्मशाला में शयन किया। ता० १८ को प्रातः ८ बजे की गाड़ी से मारवाड़ की ओर चले। २ बजे सायं काल मारवाड़ पहुँचे। यहाँ से स्वामी नित्यानन्द जी महाराज और अतरसिंह जी आगे ही गुरुकुल में लौट आये और ९॥ बजे चित्तौड़ वाली गाड़ी से ६ व्यक्तियों ने गुरुकुल चित्तौड़ की ओर प्रस्थान किया।

(क्रमशः)

पता

ग्राहक संख्या ०८२

सेवा में श्री—जगदीशचन्द्र जी विद्य

मु० C/o मुरारी ब्रादर्स

पो० कमलानगर देहल

जि०

हमारे कारखाने में यज्ञ तथा पूजा
आदि का सर्व प्रकार का
समान तैयार किया
जाता है।

निर्माता

सीताराम आर्य एण्ड संज़

१७९ लाजपतराय मार्कीट, देहली।

प्रेमी पाठक महाशयों से

"सुधारक" के प्रेमी पाठक महानुभावों से निवेदन किया जाता है कि कृपया "भोजन विशेषाङ्क" के विषय में अपनी सम्मति भेजने का अनुग्रह करें।

निवेदक—सम्पादक

प्रकाशक आचार्य भगवानदेव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः॥

वर्ष २
अङ्क ११

गुरुकुल झज्जर (रोहतक), श्रावण सं० २०१२ वि०
जुलाई १९५५—दयानन्दाब्द १३१

वार्षिक मूल्य २)
एक प्रति ≡)

दयानन्द जन्म शताब्दी महायज्ञ के ब्रह्मा

स्वर्गीय श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज आर्य जगत् के सर्वमान्य नेता थे। वेदादि सत्यशास्त्रों का स्वाध्याय आप की दिनचर्या में नित्य-कर्म बना हुआ था। मथुरा में महर्षि दयानन्द की प्रथम जन्मशताब्दी का महोत्सव आपकी प्रबल दक्षता तथा सर्वप्रियता का प्रतिबिम्ब था। हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के प्रथम अध्वर्यु आप ही बनाये गये। सिन्ध में सत्यार्थ-प्रकाश पर से प्रतिबन्ध हटवाने में अग्रणी आप ही बने। आप का जीवन अनुकरणीय था।

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक

सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति

सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

विषय - क्रम - दर्शक

विषय	लेखक	पृष्ठ
१–आर्य-समाज की शिक्षा-संस्थाओं के पाठ्य-क्रम की एकता	सम्पादकीय	३-४
२–शिक्षा का ध्येय	डा० राधाकृष्णन् उपराष्ट्रपति	५ से ८
३–हमारी सौराष्ट्र यात्रा	ब्र० सुदर्शनदेव सिद्धान्तवाचस्पति	६ से ११
४–ब्रह्मचर्य का प्रताप (कविता)	पं० ताराचन्द जी आर्य भजनोपदेशक	१२
५–राष्ट्र-निर्माण में धर्म का स्थान	मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति	१३ से १
६–महर्षि दयानन्द के कल्याणकारी उपदेश	स्वामी शान्तानन्द जी महाराज	१६

* * *

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें, किसी व्यक्ति के नाम न भेजें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश् लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जात है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं दी जाती विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संकृत में ही करें। उर्दू, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती आदि भाषाअ में पत्र व्यवहार न करें। पत्रोत्तर के लिये जवाबी कार्ड भेजें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चौथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	६)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५% अधिक।

,, तृतीय १०% अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

सम्पादकीय—

आर्यसमाज की शिक्षा-संस्थाओं के पाठ्य-क्रम की एकता

(आर्षपाठविधि)

वर्तमान युग में शिक्षा के प्रश्न ने एक विकट समस्या का रूप धारण किया हुआ है। मैकाले द्वारा प्रवर्तित इस वर्तमान शिक्षा प्रणाली से भारत के राष्ट्रपति से लेकर एक छोटे से चपरासी तक सभी असन्तुष्ट हैं तथा सन्तोषजनक कोई पद्धति किसी को दिखाई नहीं पड़ती। अभी पिछले दिनों में डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने हरिजन उद्योगशाला का उद्घाटन करते हुए वर्तमान शिक्षाप्रणाली की कटु-आलोचना की तथा स्कूल और कालेजों की "सफेद हाथी" से तुलना करते हुए कहा कि ये केवल आजीविकाविहीन (बेरोजगार) लोगों को ही तैयार नहीं कर रहे अपितु ऐसे लोगों को तैयार कर रहे हैं जो किसी काम के योग्य नहीं रहते और हाथ पांव से काम करना सर्वथा भूल जाते हैं।

ये विचार राष्ट्रपति जी ने कोई नये उपस्थित नहीं किये, वे इससे पूर्व भी अनेक बार इसी प्रकार अपने उद्गार प्रकट कर चुके हैं। राष्ट्रपति ही क्यों, प्रधानमन्त्री शिक्षा-मन्त्री आदि सभी नेता तथा स्कूल कालेज आदि के दीक्षान्त भाषण दाता इस शिक्षणपद्धति की आलोचना करते रहते हैं, और पराधीन भारत में भी भारतीय विचारधारा के लोग इस वर्तमान शिक्षा प्रणाली का खण्डन किया करते थे तथा अब भी करते हैं। किन्तु यह मैकाले की दूषित शिक्षणप्रणाली कब तक "वर्तमान शिक्षाप्रणाली" ही बनी रहेगी, पता नहीं कब "अतीत शिक्षप्रणाली" होगी, ये क्लर्क बनाने के कारखाने कब बन्द होंगे?

इस प्रचलित शिक्षाप्रणाली के दुष्परिणाम किसी भी भारतीय की दृष्टि से ओझल नहीं हैं। इस पद्धति से पढ़े हुए विद्यार्थी की ठीक वही दशा हो जाती है जो कि रस निकाले हुए गन्ने या निचोड़े हुए निम्बू की होती है! क्योंकि इस में विद्यार्थी के चरित्र निर्माण के लिये कोई स्थान नहीं है। हाँ, चरित्र को भ्रष्ट करने की सामग्री पर्याप्तमात्रा में विद्यमान रहती है। अश्लील तथा कामुकता को उत्पन्न करने वाले अनार्ष ग्रन्थों की इस पाठ्यक्रम में भरमार है। प्रथम तो १५ और २० वर्ष के बीच की अवस्था ही भयानक है, इसमें विद्यार्थी के भ्रष्ट होने की आशंका रहती है, क्योंकि यह अवस्था प्रकाश और अन्धकार के बीच की सन्धि वेला है, इसमें न तो प्रकाश ही पूर्णतया हो पाता है और न अंधेरा ही रहता है। द्वितीय साधन अश्लील पुस्तकें बन जाती हैं और कुछ न्यूनता रह भी जाये तो उसकी पूर्ति के लिये सहशिक्षा (लड़के लड़कियों का एक साथ पढ़ाना) का तृतीय साधन ऐसा है कि विद्यार्थी का सदाचारी रहना असम्भव हो जाता है। इनके अतिरिक्त देश के बाह्य वातावरण की तो चर्चा ही क्या करें, वह भी दिन प्रतिदिन दूषित होता जा रहा है।

पाठक कहेंगे कि आप भी दूसरों की भाँति शिक्षा-प्रणाली की ही आलोचना कर रहे हैं, कोई सन्तोषजनक शिक्षाप्रणाली नहीं बतलाई। अस्तु! शिक्षाप्रणाली के लिये क्या क्या साधन आवश्यक हैं यह सब इस श्लोक से प्रतीत हो जायेगा—

कस्मात् शिक्षाऽथ का शिक्षा, शिक्षकः किंगुणः स्मृतः।
कः शिष्यः शिक्षणीयं किं, कदा कुत्र कथं तथा॥

अर्थात् शिक्षा किस लिये है और क्या है. शिक्षकों में क्या क्या गुण हों, शिष्य कैसा होना चाहिये, तथा विद्यार्थी को कब कहाँ और किस शैली से क्या पढ़ाना है इत्यादि सभी विषयों पर ध्यान देकर शिक्षणपद्धति तैयार करनी चाहिये।

इस प्रकार की सर्वांग परिपूर्ण शिक्षणपद्धति बनाना साधारण व्यक्ति का कार्य नहीं, यह तो तत्त्वज्ञानी ऋषि महर्षि ही बना सकते हैं। हमारे पूर्वज ऋषियों ने शिक्षा के प्रत्येक पहलू पर विचार विमर्श कर एक ऐसी सुन्दर सुव्यवस्थित पद्धति तैयार की है जिसमें किसी प्रकार के दोष की सम्भावना भी नहीं की जा सकती। उसमें

उपरिलिखित सभी गुणों का आधान है और प्रचलित शिक्षणपद्धति के दोषों से वह सर्वथा मुक्त है। यह वही शिक्षा प्रणाली है जिसके द्वारा राम, भरत सदृश भ्राता और कृष्ण सुदामा सदृश मित्र तथा अर्जुन जैसे वीर योद्धा एवं ऋषि दयानन्द सदृश आदर्श सुधारक और उद्धारक बने। इस आर्षपाठविधि की नियमावली तथा पाठ्यक्रम ऋषि दयानन्द जी के सत्यार्थप्रकाश तथा संस्कारविधि में विस्तारपूर्वक विद्यमान है। पाठक वहाँ पर ही पढ़ें।

मध्यकाल में इस आर्षशिक्षणपद्धति के प्रचलित न होने के कारण बौद्धिक पराधीनता एवं पाश्चात्य ढांचे में ढले हुए व्यक्तियों का इस शुद्ध आर्ष पाठविधि पर विश्वास नहीं है। और उनको भी कोई दुसरी सरणि दिखलाई नहीं देती। ऐसी अवस्था में जब कि शिक्षा के विषय में देश किंकर्तव्य विमूढ हो रहा है, हम वैदिक धर्मी ऋषि भक्तों का कर्त्तव्य हो जाता है कि हम अग्रणी बनकर देश का पथप्रदर्शन करें। और यह तब हो सकता है जब पहले हम सभी आर्यसमाजी एक मत होकर ऋषि दयानन्द द्वारा प्रतिदिन प्राचीन आर्ष पाठविधि को सभी आर्यसामाजिक शिक्षण संस्थाओं में प्रचलित करें और तदन्तर देश को मार्ग दिखलायें।

यह सौभाग्य की बात है कि है शिरोमणि "सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि" सभा ने १-५-५५ के साधारण अधिवेशन से इस आवश्यक विषय की ओर आर्यजनता का ध्यान आकृष्ट किया है और इस विषय में एक योजना बनाने का निर्देश किया है।

"आर्यसमाज की शिक्षा संस्थाओं तथा गुरुकुलों, महाविद्यालयों, स्कूलों और कालेजों आदि में पाठ्यक्रम, परीक्षाशैली आदि की दृष्टि से एक रूपता लाने के लिये पग उठाया जाये और इस कार्य की एक विशेष योजना तैयार की जाये।"

(आर्यसमाज का भावी कार्यक्रम, जनसम्पर्क विभाग, प्रस्ताव ८)

साथ साथ चरित्र निर्माण, विद्यार्थियों में अनुशासन का भाव, सहशिक्षा का सर्वथा निषेध, आर्यशिक्षा संस्थाओं में आर्यत्व की भावना आदि अन्तरङ्ग विषयों पर भी विशेष ध्यान दिया है।

सर्वदेशिक सभा की इस योजना का हम हृदय से स्वागत करते हैं और साथ-साथ यह भी कह देना चाहते हैं कि आर्यशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रम की एकता केवल आर्षपाठविधि से ही की जा सकती है। इस कार्य को सार्वदेशिक सभा सुगमता से कर सकती है, इस कार्य के सम्पन्न हो जाने पर आर्यसमाज का सङ्गठन, प्रचार आदि का कार्य सफलता से किया जा सकेगा और आर्यों के द्वारा प्रदर्शित इस शिक्षण पद्धति को किंकर्त्तव्य विमूढ हुआ देश स्वागत कर अपनायेगा। यह शुभ अवसर है आर्यसमाज द्वारा मार्ग दर्शाने का। यदि इस में आलस्य प्रमाद किया तो फिर पछताना होगा।

सुधारक पर सम्मति

"सुधारक" मासिक का १०० पृष्ठ का भोजन विशेषाङ्क निकाला गया है, इसके प्रारम्भ में ही "धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्" तथा "आहारवैषम्यादस्वास्थ्यम्" ये सुप्रसिद्ध सूत्र दिये हैं। इसमें अपने प्राचीन ऋषि मुनियों द्वारा बतलाये भोजन सम्बन्धी आवश्यक विचारों का विमर्श तथा अनुभव पूर्वक विवेचन किया है। किस पदार्थ में क्या गुण हैं? कौन सा पदार्थ हितकर है तथा कौन अहितकर? भोजन कहाँ, कैसे करें? इत्यादि प्रमाण पूर्वक देश, काल, प्रकृति, अवस्था आदि के भेद से शास्त्रकारों के पूर्ण विचार दिये हैं।

आयुर्वेद के "स्वस्थवृत" प्रकरण का विशेष महत्व है। स्वस्थवृत्त के उपदेशानुसार चलने और आहार विहार के ठीक रखने से आरोग्य तथा दीर्घायुष्य का लाभ होता है, इस दृष्टि से यह भोजन विशेषाङ्क बहुत महत्व पूर्ण है। अंङ्क उपयुक्त एवं संग्राह्य है। सम्पादक तथा व्यवस्थापक इनको धन्यवाद।

— सम्पादक "आयुर्वेद" बम्बई

शिक्षा का ध्येय—

“आत्मा की स्वाधीनता के लोक में मानव का द्वितीय जन्म”

[गुरुकुल काँगड़ी के ५५ वें उत्सव पर दिया गया डा० राधाकृष्णन् का दीक्षान्त भाषण]

जिन दिनों गुरुकुल की स्थापना हुई थी, उस समय देश में चहुँओर अन्धकार छाया हुआ था। यह गुरुकुल देश के उन गिने चुने शिक्षा प्रतिष्ठानों में से एक था, जिन्होंने इस शिक्षण संस्कृति की यज्ञाग्नि को प्रबुद्ध और सतेज रखा था। आज यह ज्योति और अधिक दीप्तिमान् है। हम यह तो नहीं कह सकते कि इस ज्योति ने इस देश के समस्त क्षेत्रों से अन्धकार को दूर भगा दिया है. परन्तु इतना अवश्य हुआ है कि हम जन-समाज के मनों और हृदयों को आलोकित करने का यह शुभ कार्य अपने हाथ में लेने में असमर्थ हुये हैं। शिक्षातत्व के वे अनेक सिद्धांत, जो आज अनेक शिक्षणालयों द्वारा स्वीकार किये जा रहे हैं, सबसे पहले इस गुरुकुल द्वारा प्रवर्त्तित किये गये थे।

आपने इसे एक आश्रमिक विश्वविद्यालय बनाया है। आपने छात्रों के संख्यातिरेक को नापसन्द किया है। आप इस देश की पुरातन संस्कृति से प्रेरणा प्राप्त करने में विश्वास रखते हैं। आपने मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम स्वीकार किया हुआ है। इन समस्त सिद्धांतों को आज के शिक्षातत्वज्ञ स्वीकार करना चाहते हैं।

कालेजों पर यह आक्षेप किया जाता है क्योंकि वहाँ छात्र इतनी अधिक संख्या में एकत्र हो जाते हैं, जिनकी वे कालेज समुचित व्यवस्था नहीं कर पाते। परिणाम यह होता है कि वहाँ अनुशासन-हीनता आती है और गुरु तथा शिष्य के बीच में निकट सम्पर्क की भावना पुष्ट नहीं हो पाती।

यहूदी धर्मग्रन्थों में एक प्रसिद्ध वचन है—‘जेरूसेलम का विनाश हो गया, क्योंकि वहां पर शिक्षकों का सम्मान नहीं होता था, यह कोई नवीन बात नहीं है। प्राचीन समय से हम इस सचाई को बराबर सुनते आ रहे हैं। जब शिक्षकों का सम्मान नहीं होता और गुरुजनों की शिक्षायें श्रद्धापूर्वक नहीं सुनी जातीं, तो समझ लेना चाहिये कि देश का पतन समीप है। यदि गुरुजन अपना सम्मान चाहें तो उन्हें शिष्यों के निकट सम्पर्क में आना चाहिए। उन्हें छात्रों के साथ सौहार्द स्थापित करना चाहिये। गुरु-शिष्य का यह सौहार्द और सान्निध्य सार्वजनिक प्रवचन करने मात्र से नहीं हो सकता। सौहार्द और सन्मान की भावना के लिये गुरु-शिष्य का निकट सम्पर्क होना ही चाहिये।

प्रश्न उठता है—गुरु और शिष्य के बीच में कैसा सम्बन्ध होना चाहिये? इस विषय में ऊंचे मनीषी-जनों का विचार है कि शिष्य को अपना विकास स्वयं साधने दीजिये। उसे स्वयं ही अपने व्यक्तित्व का निर्माण करने दीजिये। इस विषय में अन्य विचारक, व्यक्ति के मानसिक निर्माण के लिए समष्टिवादी (समग्रवादी = टोटेलिटेरियन) पद्धति को अपनाने का आग्रह रखते हैं। वे कहते हैं कि जिस प्रकार अपने हस्तकौशल से हम एक मृत्तिकापिण्ड को वांछित रूप प्रदान कर सकते हैं, उसी प्रकार व्यक्ति का निर्माण भी किया जा सकता है। परन्तु हमारे देश की परम्परा इस विषय में उनसे भिन्न है। हम व्यक्ति का सन्मान करते हैं। हम व्यक्ति के गौरव को समझते हैं। श्री कृष्णचन्द्र जी गीता में अर्जुन के प्रति अच्छी से अच्छी शिक्षा देने के पश्चात् भी कहते हैं—यथेच्छसि तथा कुरु— अपनी इच्छा के अनुकूल कार्य करो। वे अपने विचारों को अर्जुन के मन पर थोपने का प्रयत्न नहीं करते। वे कहते हैं—मुझे सत्य की जैसी

प्रतीति हुई है, वैसी तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत कर दी। परन्तु मेरा काम यह नहीं कि मैं अपने दृष्टिबिन्दु को तुम पर थोप डालूं। अपनी अन्तरात्मा की की सहायता से सत्य को तुम्हें स्वयं खोज निकालना चाहिये। उसके बाद अपनी ही न्याय-बुद्धि से तुमने यह निश्चय करना है कि तुम्हारे लिए ठीक मार्ग कौन सा हो सकता है ? हमारे देश ने इसी परम्परा को अक्षुण्ण रखा है कि व्यक्ति का सन्मान करो। किसी भी विषय पर जो कुछ भी श्रेष्ठतम विचार किया गया है, उसे व्यक्ति के समक्ष प्रस्तुत कर दो और उस पर निर्णय करने का सम्पूर्ण अधिकार उसी को सौंप दो। अभिप्राय यह है कि व्यक्तित्व की पवित्रता और प्रतिष्ठा का आदर किया जाता रहा है। गुरु और शिष्य के व्यवहार का अनुशासन करने वाली पद्धति यही होनी चाहिये। गुरुजनों को इस प्रकार कदापि नहीं सोचना चाहिए कि इन समस्त व्यक्तियों के मनों में अपने विचार हथौड़े से कूट कर ठूंस दिये जायं।

शिष्यों के प्रति इस भावना से दृष्टिपात करना चाहिए कि ये आत्म-रूपी कोमल कलिकाएं कुसुमों के रूप में विकसित होने के लिए प्रयत्नशील हैं। गुरुजनों का सही मनोभाव इसी प्रकार का होना चाहिए।

रूस, इङ्गलैण्ड, अमेरिका, यूनान और रोम आदि विभिन्न देशों ने शिक्षा के ध्येय के विषय में विभिन्न विचार स्वीकार किए हैं। हम भारतीयों का शिक्षा के स्वरूप के विषय में एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण रहा है। भारतीय मनीषियों ने बताया है कि शिक्षा मानवात्मा की स्वाधीनता के लिए होनी चाहिए—'सा विद्या या विमुक्तये।'

शिक्षा का प्रयोजन यही होना चाहिए कि वह मनुष्य की आत्मा में इस प्रकार का सामर्थ्य उत्पन्न कर दे कि उसको नया जीवन—द्वितीय जन्म-द्वितीय-लोक (स्वाधीनता और आध्यात्मिकता का लोक) प्राप्त हो जाय।

"तद्द्वितीयं जन्म, माता सावित्री, पिता-आचार्यः।"

यद्यपि हम सबका ही जन्म प्राकृतिक परिस्थितियों से सम्भूत तथा भौतिक आवश्यकताओं से भरे हुए संसार में हुआ करता है, तथापि मानव को इन भौतिक शक्तियों की प्रतिक्रियामात्र नहीं समझ लेना चाहिए। उसकी एक अपनी प्रकृति है। हमारे यहां कुछ ऐसे विचारक हैं जो यह कहते हैं कि आध्यात्मिक स्वाधीनता के लोक में मानवीय भावनाओं की उपेक्षा होती है, जो कि मानवीय जीवन का इहलौकिक पहलू है। परन्तु उनका यह कथन ठीक नहीं।

जब प्रश्न पूछा गया कि अमृत क्या है तो ऋषि द्वारा उत्तर दिया गया—

"प्राणानां आरामः, मनस आनन्दः शान्ति-समृद्धिः"

अर्थात्—प्राणों (शरीर) के विश्राम, मन के आनन्द और आत्मा की शान्ति–परमशान्ति—में अमृत समाया हुआ है। मनुष्य तीन तत्वों से बना है—शरीर, मन और आत्मा। मानवीय प्रकृति के इन तीनों तत्वों को विकसित और समृद्ध बनाने वाली शिक्षा को ही हम सर्वाङ्गीण शिक्षा कह सकते हैं।

हमें यह नहीं समझना चाहिए कि विद्या के आदान-प्रदान और दाक्षिण्य के हस्तान्तरण का नाम ही शिक्षा है। उनकी बड़ी आवश्यकता है। इसमें भी कोई संदेह नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति को इस योग्य होना चाहिए कि वह अपनी जानकारी और कार्य-पटुता से अपना योगक्षेम (आजीविका) चला सके। कहा भी है–'अर्थकरी विद्या'। परन्तु यही सब कुछ नहीं। यदि आप वैज्ञानिक दृष्टि से निपुण हो जाते हैं, यदि आप अपनी आत्मा के अन्य पहलुओं को विकसित नहीं करते, और यदि आप यह नहीं मानते कि विद्या और प्रज्ञा के अतिरिक्त भी कोई उदात्त तत्व आपके जीवन में विद्यमान है, तो आप अपने जीवन के स्वामी होने के बजाय केवल राक्षस बन जायँगे। किसी ने ठीक ही कहा है—

"साक्षरो विपरीतत्वे राक्षसो भवति ध्रुवम्"

अर्थात् यदि हम अपने जीवन के आध्यात्मिक

पार्श्व की उपेक्षा करेंगे तो अवश्य ही हम राक्षस (दानव) बन जायेंगे।

अतः यदि हम वर्तमान जगत् की विपदाओं और यन्त्रणाओं से बचना चाहें तो हमें केवल विज्ञान की प्रगति आवश्यक नहीं है, अपितु साहित्य, कला, विद्याविनोद और प्रज्ञा की प्रगति में उन्नति करनी होगी। जब तक हम मानवीय प्रगति के इस पहलू को विकसित और समुन्नत नहीं करते, विज्ञान की ये त्रासदायक उपलब्धियां मानवता के लिए विनाशकारिणी सिद्ध होंगी, किसी भी प्रकार सहायक नहीं बनेंगी। यह सब कुछ उन व्यक्तियों पर निर्भर है जिन्होंने इन वैज्ञानिक आविष्कारों को अपना वशवर्ती बनाया हुआ है। हम आग से क्या करें, यह अग्नि की प्रकृति के ऊपर निर्भर नहीं है अपितु आग का प्रयोग करने वाले व्यक्ति के स्वभाव पर आश्रित है। आग से आप अपनी अँगीठी गरम कर सकते हैं, अपना भोजन पका सकते हैं तथा उसे आप अपने पड़ौसी के मकान को जलाने में भी प्रयुक्त कर सकते हैं। इसी प्रकार अणुबम्ब एक यन्त्र है। वह आजकल मनुष्य के हाथ में पकड़ा दिया गया है। क्या हम उसका उपयोग मानवता. सौन्दर्य और जीवन के प्रकर्ष के लिए कर रहे हैं या विनाश के लिए ? मानव-जीवन अणुशक्ति पर आश्रित नहीं है, अपितु उन व्यक्तियों की प्रकृति पर अवलम्बित है जिन्होंने इस शक्ति का पता लगाया है। स्थान की दृष्टि से जगत् सिकुड़ता जा रहा है। ज्यों-ज्यों वह छोटा होता जाता है, त्यों-त्यों हमारे हृदय विशाल होने चाहिएँ।

अभी आपको उपदेश देते हुए श्री आचार्य जी ने एक ही वस्तु के आन्तरिक और बाह्य पार्श्व का निर्देश किया है। इस तत्त्व के अन्तर्वर्ती भाग को 'सत्य' कहते हैं। वही तत्व जब व्यवहार में मूर्तस्वरूप धारण करता है तब वह धर्म कहाता है।

सत्यान्न प्रमदितव्यम्।
धर्मान्न प्रमदितव्यम्।
कुशलान्न प्रमदितव्यम्॥

धर्म वही है जो मानवता को एकत्र करता है। अधर्म मानवता को विभक्त करता है। धर्म वह है, जो समाज को धारण किए रखता है--एक सूत्र में पिरोए रखता है। अधर्म हमें विशृंखल (विकीर्ण) कर देता है। धर्म हमारा अवलम्बन है। अधर्म से हमारा पतन होता है। धर्म के नाम पर हमने अपने देश में इस प्रकार के अनेक आचरण स्वीकार किए हुए हैं जो वस्तुतः अधर्म हैं। सब प्रकार के जाति-पांति के प्रभेद तथा वे समस्त आचरण जिनके द्वारा हमने अबला नारियों और निम्न श्रेणी के लोगों का दमन और शोषण किया हुआ है, हमारे विनाश का कारण सिद्ध हुए हैं।

यज्ञ के नाम पर वृक्ष-वनस्पतियों को काट कर पशुओं की हत्या कर, उनका रक्त बहाकर, यदि हम स्वर्ग जा सकते हैं तो बताइए नरक में किस मार्ग से जायँ ?

वृक्षाँश्छित्वा पशून् हत्वा कृत्वा रुधिर-कर्दमम्।
यद्येवं गम्यते स्वर्गो नरकः केन गम्यते॥

सदा स्मरण रखिए, सच्चे धर्म के महान् समर्थक सदा सुधारक वृत्ति के लोग (प्रोटस्टेण्ट मनोभाव के व्यक्ति) ही रहे हैं। धर्म के क्षेत्र में वे महान् सुधारक निहित स्वार्थों के विरुद्ध सदा आवाज उठाते रहे हैं। महर्षि दयानन्द और स्वामी श्रद्धानन्द जैसे महाप्राण पुरुषों ने हमारे देश की प्रामाणिक परम्पराओं का प्रतिनिधित्व किया है। वे अन्धविश्वासों के विरुद्ध सदा जूझते रहे हैं।

हमारी मातृभूमि सदा से महान् रही है। आप को उपदेश करते हुए आप के आचार्य जी ने अभी बताया है कि हमारे ऋषि मुनियों ने इस पवित्र भूमि को अपने ज्ञान के आलोक से आलोकित किया है। उन्हीं के योगदान से यह देश गौरवशाली बना है। इस देश की संस्कृति की सुदीर्घ परम्पराएँ इस कारण अक्षुण्ण नहीं रही हैं कि हम लोग अशुद्ध रूप में उनको दुहराते रहे हैं। उसका प्रधान कारण यह है कि हम परिवर्तन के लिए सदा सन्नद्ध रहे हैं। अपने आचार-व्यवहारों और क्रिया-कलापों को अपने आधारभूत विचारों के अनुसार परिवर्तित करने के

लिए हम सदा तैयार रहते आए हैं। जब-जब सच्चे आदर्शों और विकृत विचारों के बीच विसंवाद (विरोध) आता था, तब-तब वे विचारक अशुद्ध आचरणों को छोड़कर जाति को पुनः धर्म के सच्चे पथ पर प्रवर्तित करते रहे है।

आज मानव निर्माणमूलक कार्यों की उदात्त उपलब्धियों के लिये अभीप्सा कर रहा है। उसके लिए मेरी समझ में ध्यान (एकाग्रता) की, चित्त को केन्द्रित करने की बड़ी आवश्यकता है। इस संसार में जो मनुष्य तुच्छ विषयों के प्रति अपनी शक्तियों का अपव्यय करते रहे हैं, वे जीवन में किसी महान् सिद्धि को नहीं प्राप्त कर सकते हैं।

आज इस विश्वविद्यालय से विदा होने वाले नवयुवकों का यह कर्तव्य है कि वे समस्त जीवन में स्वाध्याय और प्रवचन को अपना व्रत रखें–आप के आचार्य जी ने भी आप को यही उपदेश दिया है–'स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्।'

आजकल हमें इस प्रकार के बहुत कम छात्र दिखाई देते हैं जो किसी एक पुस्तक को पूरी तरह आद्योपान्त पढ़ते हों। अपने शिक्षकों से पूछ कर वे नोट्स लिख लेते हैं। परीक्षा के दिनों में उनको उत्तर-पत्रों पर उगल देते हैं और उसके बाद उन पाठों को वे सदा के लिए भुला देते हैं। इतिहासज्ञ गिब्बन ने कहा है—'भारत की समृद्धि मिलने पर भी मैं अध्ययन के आनन्द को नहीं छोड़ सकता।' प्रत्येक विश्वविद्यालय को चाहिए कि वह अपने तरुणों के मन में इस भावना को बद्धमूल करे।

प्रिय नवयुवको, आपने इस शिक्षा-निकेतन में भारतीय-संस्कृति की भावना को हृदयङ्गम किया है। मैं आशा करता हूं कि आप उसके प्रभाव और तेज पर विश्वास रखेंगे। स्मरण रखिए, सत्य के साथ उस संस्कृति की एकरूपता है। इसी के द्वारा आप जनता के हृदयों और मनों पर विजय प्राप्त कर सकेंगे। मैं आप से यह भी कह देना चाहता हूँ कि वह भारतीय संस्कृति, जिस का सत्य से अभेद है, अपने अन्दर अद्भुत शक्ति रखती है। आप को उस संस्कृति का उत्तराधिकारी बनाना चाहिये। आप इस संस्कृति के महत्त्व को अपने हृदयों में स्थापित करें और उसकी वृद्धि करें। यदि आप ऐसा करेंगे तो आप केवल अपने देश की ही नहीं, अपितु सारे विश्व की कुछ सेवा कर सकेंगे। मैं आशा करता हूँ कि आपने इस विद्या-मन्दिर में जो शिक्षा पाई है, वह आपकी आकाँक्षाओं को सफल बनाने में सहायक होगी।

[गुरुकुल पत्रिका से]

हमारे कारखाने में यज्ञ तथा पूजा
आदि का सर्व प्रकार का
सामान तैयार किया
जाता है।
निर्माता
सीताराम आर्य एण्ड संज़
१७९ लाजपतराय मार्कीट, देहली।

स्वास्थ्य रक्षा तथा आयुर्वेद प्रचार का मार्मिक पत्र
"स्वास्थ्य"
कृष्ण गोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय की ओर से प्रकाशित इस पत्र में योग्य विद्वानों के लिखे हुये स्वास्थ्य तथा आयुर्वेद सम्बन्धी मौलिक लेखों के अतिरिक्त होमियोपैथी, यूनानी, प्राकृतिक चिकित्सा, मनोविज्ञान, योगासन, महिला जगत्, स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी आदि लेख प्रकाशित होते रहते हैं। प्रोफेसर, जज, वकील, अध्यापक, विद्यार्थी, व्यापारी, क्लर्क तथा मजदूर किसान वर्ग सब के लिए उपयोगी है। इसका प्रचार अफ्रीका, इंग्लैंड आदि देशों में भी हुआ है। सब प्रकार के वैज्ञानिक साधन जानना चाहें तो 'स्वास्थ्य' अवश्य पढ़ें।
वार्षिक मूल्य ३) रु० विदेशों में ६ शिलिंग
व्यवस्थापक "स्वास्थ्य"
पो० कालेड़ा—कृष्णगोपाल (अजमेर)

हमारी सौराष्ट्र-यात्रा

[३]

(ब्र० सुदर्शनदेव भाष्याचार्य सिद्धान्तवाचस्पति)

मारवाड़ से चित्तौड़गढ़ जाते समय गाड़ी पर्वतों में परिभ्रमण करती हुई जाती है। पर्वतों का दृश्य अति मनोहर है। गाड़ी के मार्ग में बहुत बड़ी-बड़ी घाटियाँ भी हैं। गाड़ी जाने के लिये सुदृढ सेतु (पुल) घाटियों के ऊपर बान्धे हुये हैं। इस पर्वतीय मार्ग में अनेक लम्बी-लम्बी गुहा (गुफा) भी हैं जिनमें से गाड़ी को गुजरना पड़ता है। हम उपरोक्त मार्ग से ता० १८ को रात्रि १०॥ बजे गुरुकुल चित्तौड़गढ़ पहुँचे। सर्वप्रथम जाते ही श्री पं० भद्रसेन जी मिले। जिन्होंने हमारे शयन का सुप्रबन्ध किया, रात्रि सुख से व्यतीत की। ता० १९ को प्रातः नित्यकर्मों से निवृत्त हो दुग्धपान किया, तत्पश्चात् श्री पं० इन्द्रदेव जी ने प्रेमपूर्वक सारे गुरुकुल को अच्छी प्रकार दिखलाया। तत्पश्चात् भोजन कर कुछ काल विश्राम करने के उपरान्त गुरुकुल के निकटवर्ती दर्शनीय स्थानों को अवलोकनार्थ चले।

राजा भूपाल का प्रासाद

यहाँ सर्वप्रथम हमने राजा भूपाल का राजभवन (महल) देखा। यह प्रासाद बड़ा सुन्दर है, इसमें अनेक राजा महाराजाओं के चित्र दर्शनीय हैं। इसमें एक गुहा भी है। जो एक भवन से दूसरे भवन में पहुंचा देती है। और भी अनेक वस्तुयें यहाँ दर्शनीय हैं।

रुण्डेश्वर महादेव का मन्दिर

स्थानीय निवासियों का कथन है कि ऋषि दयानन्द जी महाराज ने भी इस मन्दिर में निवास किया था। यह मन्दिर इस समय जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है। इस मन्दिर के सामने ही एक वाटिका है। वाटिका से मिलती हुई गंभीरी नाम की नदी बहती है। यहाँ गम्भीरी और बेडच नदी का संगम भी है। नदी से मिलता हुआ ही पर्वत है। जिस पर महाराणा प्रताप का दुर्ग (किला) विराजमान है। इस मन्दिर में इस समय चन्द्रशेखर नामक पुजारी रहते हैं। इनके साथ वार्तालाप करने से विदित हुआ कि चन्द्रशेखर के पितामह श्री खेमचन्द जी के सामने श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज इस मन्दिर में पधारे थे। तत्पश्चात् हम शौचादि से निवृत्त हो गुरुकुल लौटे।

ता० २० को भोजनादि से निवृत्त हो प्रातः १० बजे चित्तौड़गढ का दुर्ग देखने चले। गुरुकुल से श्री ब्र० सत्यानन्द जी दुर्ग दिखलाने के लिये हमारे साथ गये। दुर्ग में हमने निम्नाङ्कित स्थान देखे।

१. महाराणा रत्नसिंह जी का मन्दिर।
२. अन्नपूर्णादेवी का मन्दिर।
३. कुक्कड़ेश्वर महादेव का मन्दिर।
४. शम्भुकुञ्ज (चारभुजा का मन्दिर)।
५. बावड़ी (भीमगोड़ा नाम से प्रसिद्ध)
६. श्री फतहसिंह जी का मन्दिर।
७. कीर्तिस्तम्भ (८०० फीट ऊँचा)
८. सूरजपोल द्वार।
९. नीलकण्ठ महादेव का मन्दिर।
१०. जैन मन्दिर।
११. तोपगृह (प्राचीन)।
१२. नोलखा खजाना।
१३. महाराणा कुम्भा का मन्दिर।
१४. कुम्भश्याम मन्दिर।
१५. सतीकुण्ड।
१६. महाराणा कुम्भा का विजयस्तम्भ।
१७. समिधेश्वर महादेव का मन्दिर।

१८. महाराणा प्रताप का जन्मगृह ।
१९. सूर्यकुण्ड ।
२०. भीमताल ।
२१. कालका माता का मन्दिर ।
२२. महाराणी पद्मिनी का महल ।
२३. अल्लाउद्दीन खिलजी का कारावासगृह (कैदघर)
२४. गजस्थल (हाथियों के शिक्षण का स्थान)
२५. गोरा, बादल की समाधि ।
२६. चित्राङ्गद मौर्वी का तालाब ।
२७. गोमुखी तडाग ।
२८. गुप्त द्वार ।

इनका विवरण विस्तारभय से नहीं किया जा रहा है । इनके अतिरिक्त अन्य भी अनेक दर्शनीय स्थान दुग में विद्यमान हैं । जिनको रात्रि हो जाने के कारण नहीं देख सके ।

चित्तौड़ का दुर्ग एक विशाल तथा सुदृढ ऐतिहासिक दुर्ग है। "गढ तो चित्तौड़गढ और सब गडैया" इस लोकोक्ति अनुसार वास्तव में चित्तौड़गढ गढ ही है इसके विषय में कभी पुनः विस्तार से लिखा जायेगा ।

ता० २० को सायं ७॥ बजे गुरुकुल चित्तौड़गढ में लौटे । भोजनादि से निवृत्त हो दुग्धपान कर श्री ब्र० वेदपति जी व ब्र० सत्यव्रत जी के साथ हमारा व्याकरण विषयक वर्तालाप भी हुआ । और २१ ता० को गुरुकुल में ही निवास किया । ता० २२ को प्रातः ५॥ बजे शौचादि से निवृत्त हो गुरुकुल से प्रस्थान किया प्रातः १०॥ बजे के लगभग उदयपुर पहुंचे । उदयपुर की प्रथम धर्मशाला में पहुंचे, यहाँ ठहरने के लिये स्थान नहीं मिला, पश्चात् दूसरी धर्मशाला में गये वहाँ भी शुल्क लगता था अतः नहीं ठहरे । तदुपरान्त तृतीय धर्मशाला में पहुँचे, इसमें हमने निवास किया । सभी वस्तुयें धर्मशाला में रख उदयपुर देखने चले ।

गवर्नमेण्ट आयुर्वेदिक फार्मेसी

यहाँ सर्वप्रथम फार्मेसी का अवलोकन किया । यह फार्मेसी उत्तम प्रकार से चालू है । इसमें अनेक यन्त्र वा मशीनों से भी औषध निर्माण का कार्य होता रहता है । रसायनशाला (फार्मेसी) के अध्यक्ष महोदय ने हमें सभी फार्मेसी के विभागों को प्रेम पूर्वक दिखलाया ।

कमला बाग और अजायब घर

तत्पश्चात् हमने उदयपुर के कमला बाग और अजायबघर को देखा । कमला बाग अतीव रमणीय बाग है । इसमें हीरे और जवाहारातों के भी दर्शन हुये । अन्य भी लाफिङ्ग गिलास आदि अनेक वस्तुयें दर्शनीय थीं ।

जीवालय (चिड़िया घर)

तदनन्तर हमने यहाँ का जीवालय भी देखा । जिसमें वनमानुष, सिंह व्याघ्र (चीता) भल्लूक (रीछ) आदि दर्शनीय प्राणी थे ।

आयुर्वेद कालिज

यह कालिज राजा के महल में चालू है । प्रिंसिपल श्री जानकीलाल जी ने हमें शरीर के आन्तरिक चित्र दिखलाये और हमारा अच्छा सन्मान किया और हमें प्रेमपूर्वक विदा किया ।

राजा भूपालसिंह का जल महल

इसको देखने के लिये नौका द्वारा जाना पड़ता है । क्योंकि यह महल जल के मध्य में स्थित है । इसी लिये इसको जल महल कहते हैं । यह भी अति रमणीय है । इसके दर्शकों का प्रातः से सायं तक तांता लगा रहता है इसमें सुवर्ण भवन विशेष दर्शनीय है ।

राणा अमरसिंह का महल

यह महल राणा प्रताप के पुत्र राणा अमरसिंह का बनवाया हुआ है । यह भी दर्शनीय प्रासाद है। इसमें सीस भवन, चारपत्थर का चबूतरा, एक पत्थर का कुण्ड तथा राजसिंहासन विशेष देखने योग्य हैं।

उदयपुर में सहेलियों की बाड़ी और लक्ष्मी महल आदि भी दर्शनीय स्थान हैं। विलम्ब हो जाने के कारण हम नहीं देख सके ।

उपरोक्त सभी स्थानों को देख शौचादि नित्यकर्मों से निवृत हो जिस धर्मशाला में निज वस्तुयें रखकर

गये थे वापिस उसी धर्मशाला में आकर भोजन किया और सुख पूर्वक सो गये । ता० २३ को प्रातः नित्यकर्मों से निवृत हो ८॥ वजे आशुयान (मोटर) द्वारा नाथद्वारा की ओर चले ।

एकलिङ्गेश्वर महादेव का मन्दिर

नाथद्वारा के मार्ग में यह मन्दिर आता है। यह मन्दिर ९०० वर्ष के लगभग पुराणा है । इस मन्दिर के ३०० ग्राम लगे हुवे हैं । इसकी वार्षिक आय लाखों रुपये है । उदयपुर की राजगद्दी इसी एकलिङ्गेश्वर-महादेव के आधीन है । महर्षि दयानन्द जी को महाराणा सज्जनसिंह जी यही गद्दी सौंप रहे थे, तब ऋषि जी ने कहा था कि मैं इस छोटे से राज्य को तो एक दौड़ में पार कर सकता हूँ । श्रद्धालुभक्त यहाँ दूर २ से दर्शन करने के लिये आते हैं । इस मन्दिर को देखते हुये हम १२ वजे नाथद्वारा पहुँचे । यहाँ धर्मशाला में आकर भोजन किया ।

हल्दी घाटी

नाथद्वारा से हल्दीघाटी १३ मील है । हम नाथद्वारा से मध्याह्न १२॥ वजे के लगभग हल्दीघाटी देखने चले । यह वही ऐतहासिक-स्थान है जहाँ महाराणा प्रताप ने अकबर के साथ तुमुल युद्ध किया था । यहाँ की मिट्टी हल्दी के समान पीली है । सम्भव है अत एव इसको हल्दीघाटी कहा जाता है । यह एक लम्बी-चौड़ी घाटी है । इसमें अनेक फलवान्-वृक्ष हैं । अनेक शीतल जल के झरने वहते हैं । यहाँ अब भील लोग रहते हैं । हल्दीघाटी से कुछ दूर महाराणा प्रताप के चेतक घोड़े की समाधि भी बनी हुई है । समाधि के पास एक चबूतरा और एक छोटा सा मन्दिर भी है । अभी यहाँ से एक मोटर की सड़क भी निकाली गयी है, जो कि उदयपुर से हल्दीघाटी होती हुई सीधी नाथद्वारा जाती है । हम आते समय तो नाथद्वारा से पदाति = पैदल आये । किन्तु जाते समय इसी मोटर से वापिस नाथद्वारा आये ।

नाथद्वारा

यहाँ ता० २३ को सायं भोजनादि से निवृत्त हो सानन्द सो गये । नाथद्वारा को भी तीर्थ स्थान मानते हैं । यहाँ के मुख्य मन्दिर में प्रतिदिन लाखों रुपयों का चढ़ावा चढ़ता है । जो बाजार में भी बिकता है । जिससे मन्दिर को लाखों रुपयों की आय होती है । वास्तव में नाथद्वारा बना ही मन्दिरों से है । यहाँ सैंकड़ों मन्दिर हैं उन्हीं के आश्रय से पुजारी पण्डे और भोजन-भट्टों के डेरा जमा लेने से इसने एक शहर का रूप धारण कर लिया है । इसके विषय में यह लोकोक्ति सर्वथा सत्य है—"ठगद्वारा ठेठ का नाथद्वारा नाम"

प्रातः २४ ता० को नित्यकर्मों से निवृत्त हो कुछ भोजन तैयार कर मोटर द्वारा रेलवे स्टेशन आये । नाथद्वारा स्टेशन से ८॥ वजे प्रस्थान किया । २॥ बजे सायं मारवाड़ जंकशन पहुँचे । ५॥ बजे की मेल से रात्रि के ८ वजे आर्यसमाज-मन्दिर व्यावर में आय। यहाँ २४ ता० को रात्रि को दुग्ध-पान कर सो गये । ता० २५, २६ को व्यावर आर्यसमाज में ही निवास किया । यहाँ पर श्री आचार्य जी का दोनों दिन व्याख्यान हुआ । ता० २७ को अजमेर आकर कुछ वैदिक-साहित्य क्रय किया और ९॥ वजे सायंकाल की मेल से देहली की ओर चले । प्रातः २८ ता० को देहली पहुँचे । और आर्यसमाज-दीवान-हाल देहली का महोत्सव देखा । ता० २९ को वहीं यज्ञादि करके ९॥ बजे अपने निवास स्थान गुरुकुल-झज्जर में पहुँच गये ।

सुधारक पर सम्मति

"सुधारक का इस समय वैशाख-ज्येष्ठ का सम्मिलित "भोजन विशेषङ्क" प्रकाशित हुआ है। विशेषङ्क क्या है भोजन के विषय में सब प्रकार की जानकारी दे दी गई है। शास्त्रीय आधार पर भोजन के सब अङ्गों पर विस्तृत विवेचन किया गया है । सभी भक्ष्यपदार्थों पर वैज्ञानिक प्रकाश डाला हुआ है । हम कह सकते हैं कि प्रत्येक नर नारी इसके अध्ययन से लाभ उठा सकता है । विद्यार्थियों कुमारों और ब्रह्मचारियों के लिए तो मानो "सुधारक" ने जन्म ही लिया है ।

—सम्राट् सप्ताहिक देहली

ब्रह्मचर्य का प्रताप

[कविता]

(श्री पं० ताराचन्द जी आर्य भजनोपदेशक कोथल, महेन्द्रगढ)

ब्रह्मचारी जग में नाम पाते हैं ॥ टेक ॥
परशुराम ने ब्रह्मचर्य से परशे को चमकाया कि ना
जो भी सामने डटा कटा पलभर में हुआ सफाया कि ना
ब्रह्मचारी श्रीराम जनकपुर जाकर धनुष उठाया कि ना
रावण बाली जैसों को निज कर से मार गिराया कि ना
हनुमान बजरंगी ने सब लङ्का नगर जलाया[1] कि ना
पार समन्दर किया तैर कर सुन कर अचरज आया कि ना
बलकारी जग में नाम पाते हैं ॥१॥
अंगद ने लंका में जाकर सभा में पैर जमाया था
हिला नहीं तिल भर भी किसी से लख रावण शरमाया था
ब्रह्मचर्य का पालन कर लक्ष्मण भी यति कहलाया था
मारा इन्द्रजीत यति को दुनियां में यश छाया था
भीष्म पितामह इस व्रत को सारी उमर निभाया था
जिनके सन्मुख कृष्ण ने प्रण छोड़ शस्त्र ठाया था
व्रत धारी जग में नाम पाते हैं ॥२॥
ब्रह्मचारी ऋषि दयानन्द ने सारी दुनियां हिला दई
उजड़ रही थी वेद वाटिका फिर से आकर खिला दई
मुर्दा आर्य कौम पड़ी थी फिर दोबारा जिला दई
जगह-जगह पर बिखरी हुई जो एक जगह पर मिला दई ।
सत्यार्थ की दे शिक्षा हमको आजादी दिला दई
लेकिन पापी जगन्नाथ ने जहर की घूंटी पिला दई
दुखहारी जग में नाम पाते हैं ॥३॥
जिसने इस व्रत को पाला मिली विजय उसे जिस ओड़ गया
श्री स्वामी शङ्कराचार्य बौद्धवाद के कान मरोड़ गया
सुभाषचन्द्र बोस देश के लिए वतन को छोड़ गया
फौज बना आजाद हिन्द जो अँग्रेजों पर दौड़ गया
राममूर्ति ब्रह्मचारी लोहे की बेलें तोड़ गया
ताराचन्द चालीस मन का पत्थर छाती पर फोड़ गया ।
वीर खिलारी जग में नाम पाते हैं ॥४॥

---

[1] लोक में प्रचलित है कि हनुमान् ने लंका को जलाया, किन्तु बाल्मीकीय रामायण में इसका उल्लेख नहीं है । (सम्पादक)

राष्ट्र-निर्माण में धर्म का स्थान

(ले०—मुनि देवराज विद्यावाचस्पति)

[२]

साधारण मनुष्यों के मन में यह प्रश्न उठता है, कि यदि हम अपना सब कुछ अपने श्रम से प्राप्त किया हुआ द्रव्य अपने पास नहीं रखेंगे तो हमारा गुजारा कैसे चलेगा। श्री कृष्ण ने गीता में इस प्रश्न का उत्तर दिया है, "योग-क्षेमं वहाम्यहं" राष्ट्र के व्यक्तियों का धर्म इतना ही है, कि कर्म फल की आशा न रखकर, यथायोग्य श्रम करते हुये राष्ट्र हित के लिये द्रव्य का उत्पादन करें। जो कुछ उत्पत्ति हो वह राष्ट्र के वस्तुभण्डार में चली जाय, और वहां से मनुष्यों को यथायोग्य भोग्य सामग्री प्राप्त हो। इस प्रकार का प्रबन्ध होने से सब मनुष्य उत्पादक श्रम करते हुए राष्ट्र की सम्पत्ति को बढ़ायेंगे और उन्हें खाने, पीने, वस्त्र और रहने के लिए घर राष्ट्र के व्यवस्थापकों द्वारा राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त होगा। इस प्रकार न कोई भूखा-प्यासा रहेगा और न कोई वस्त्रहीन रहेगा और न कोई स्थान और मकान से वंचित रहेगा। परन्तु इस प्रकार की दरिद्रता को दूर करने के लिए सभी व्यक्तियों को यथायोग्य श्रम अवश्य करना पड़ेगा। अपना-अपना श्रम करने के लिये राष्ट्र के व्यक्ति जो दृढ़ता के साथ धर्म का पालन करेंगे, उस धर्म के पालन में आसक्ति को हटाने के लिये उन्हें अपना श्रम राष्ट्र हित की दृष्टि से ही करना होगा। क्योंकि उनके श्रम के आधार में अपरिग्रह वृत्ति विद्यमान है।

इसी का नाम सब धर्मों का परित्याग है और इस त्याग में राष्ट्रहित को दृष्टि में रखते हुये राष्ट्रिय समष्टि आत्मा के लिए अपने आपको अर्पण कर देना है। यह राष्ट्रिय धर्म ऐसा उत्कृष्ट धर्म है, जिसके लिए कहा है—"सर्वे धर्मा राजधर्मेषु चोक्ताः" अर्थात् अन्य सब धर्म (अपने छोटे-छोटे कर्तव्य) इसी राष्ट्र धर्म के अन्तर्गत आजाते हैं। इसीलिये इसका महत्त्व है। ऐसा न होने से और व्यक्तिगत सम्पत्ति का महत्त्व होने से मनुष्यों में अनुचित ढंग से सम्पत्ति का संग्रह करने की आदत पड़ जाती है। मनुष्य करना थोड़ा चाहता है और अधिक प्राप्ति की इच्छा रखता है, यह अधर्म की जड़ है। इससे चोरी करने की आदत पड़ जाती है। अर्थात् हम स्वयं उत्पन्न न करें, और दूसरे के उत्पन्न किये हुये को चोरी, डाका, जाल-साजी आदि के द्वारा प्राप्त करलें। केवल इतना ही नहीं, परन्तु जो दोष उत्पन्न हो, उस दोष से बचने के लिए अनेक प्रकार के झूठ और छल कपट का प्रयोग करें। ऐसा करने से राष्ट्र में चोरों और झूठों की संख्या बढती जायेगी। विशेष विद्वत्ता धारण करने की रुचि नहीं होगी, और जो विद्वत्ता धारण करने के लिए यत्न करेंगे वे भी प्राय: कार्य को अपूर्ण रीति से सम्पन्न करके द्रव्य का संग्रह करने में प्रवृत्त होंगे।

इससे मनुष्यों के जीवन में अपवित्रता, असन्तोष, बाहर की और अन्दर की दोनों प्रकार की सहिष्णुता का अभाव, स्वार्थ-वृत्ति की वृद्धि परस्पर राग द्वेष की वृत्तियों का उद्भव, काम, क्रोध, लोभ और मोह आदि दुर्वृत्तियों का मनुष्य जीवन पर अधिकार बढ़ता जायेगा। इससे राष्ट्र अधर्म के पथ पर चलता हुआ घोर पतन के गड्ढे में जा पड़ेगा, जैसा कि जिस व्यक्ति के मन में आया उसे ही वह धर्म मान कर राष्ट्र का हित करने में तत्पर होगा, इस लिए श्री कृष्ण द्वारा गीता में बताये गये मार्ग के अनुसार चलने में ही धर्म की रक्षा है और इसी प्रकार उत्तम जीवन का निर्माण करते हुए उत्तम राष्ट्र का निर्माण होता है। जिस समष्टि रूप उत्तम तत्व के लिये अपने श्रम के फल अर्पण करने के लिये पहिले कहा है, उसीको गीता के अहं शब्द से किस प्रकार निर्देश किया जा सकता है, इसका भी स्पष्टी-करण आवश्यक है। भगवद् गीता में जहां-जहां अहं शब्द

का अथवा उत्तम पुरुष अस्मद् शब्द का प्रयोग हुआ है, वहाँ वहां अस्मद् शब्द का प्रयोग मनुष्यवाची कृष्ण के लिये बहुत थोड़े स्थानों में है, अन्यत्र सर्वत्र अस्मद् शब्द का प्रयोग मनुष्य देह धारी कृष्ण व्यक्ति के लिए नहीं है। किन्तु समष्टि वाची उत्तम तत्व के लिए है। गीता में कहा है 'अहं सर्वस्य प्रभवः मत्तः सर्वं प्रवर्त्तते' इसका सामान्य अर्थ है, मैं सबका प्रभव हूं और मुझ से सब कुछ प्रवृत्त हो रहा है। यहाँ पर विचारणीय यह है कि श्रीकृष्ण व्यक्ति क्या सब का प्रभव है और क्या सब कुछ उससे प्रवृत्त हो रहा है। इसका स्पष्ट उत्तर है कि श्री कृष्ण मनुष्य व्यक्ति न तो सब का प्रभव है और न उससे सब कुछ प्रवृत्त हो रहा है। प्रभव शब्द का अर्थ है उत्पत्ति स्थान मिट्ठी घड़े का प्रभव है और हिमालय गंगा का प्रभव है, इन दो उत्पत्ति स्थानों में मिट्टी घड़े के रूप में बदल जाती है, परन्तु हिमालय गंगा के रुप में बदल नहीं जाता है इन दो दृष्टान्तों को लेकर विचार करना है कि क्या कृष्ण ऐसा व्यक्ति है, जो सब रुपों में बदल जाता है, जैसे मिट्टी घड़े के रूप में बदल जाती है। इसी प्रकार क्या श्रीकृष्ण व्यक्ति हिमालय की तरह स्थिर पदार्थ है, जिससे विश्व का प्रभव होता है, जैसे हिमालय से गंगा का प्रभव होता है निश्चित है। कि न तो श्रीकृष्ण मिट्टी की तरह समझा जा सकता है न हिमालय की तरह। क्योंकि दोनों अर्थ श्री कृष्ण व्यक्ति में घटते प्रतीत नहीं होते, इसलिए यह प्रश्न स्वभाविक उठता है, कि अहं शब्द से किसका ग्रहण किया जाये ? जिसमें यह दोनों अर्थ घटित हो सकें। अस्मद् शब्द जिसका अहं और मत्तः मम मयि इत्यादि प्रयोग गीता में हुये हैं, वह उत्ताम पुरुष है। शेप दोनों पुरुष प्रथम और मध्यम भी गीता में निर्दिष्ट हुये हैं। इस प्रकार गीता में तीन पुरुषों का वर्णंन है, प्रथम, मध्यम और उत्ताम। कहा है—

"द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थो ऽक्षर उच्यते।
उत्तमः पुरुषस्त्वन्य परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य विभर्त्यव्यय ईश्वरः॥"

इन दो श्लोकों में तीन पुरुषों का वर्णंन है। क्षर, अक्षर और अव्यय। क्षर अपरा प्रक्रुति है, अपरा प्रकृति के सब विकारों को धारण करने वाली जीवभूता परा प्रक्रुति अक्षर है। यह दोनों प्रकृतियां जिस पुरुष के आश्रय में रहती हैं, वह पात्र के सदृश धारण करने वाला अव्यय पुरुष है। गीता में कहा है—

"भूमिरापो ऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रक्रुतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महावाहो ययेदम् धार्यते जगत्॥"

इस प्रकार इन दो श्लोकों में अपरा और परा प्रक्रुतियों का वर्णंन है। अपरा प्रक्रुति से सम्पूर्ण रचना का उसी प्रकार निर्माण होता है, जिस प्रकार मिट्टी से घड़े का निर्माण होता है। यह अपरा प्रक्रुति सृष्टि का उपादान कारण है। और निर्माण करने वाली शक्ति या बल जो उन सब रूपों को धारण कर रही है वह जीव भूतापरा प्रक्रुति है। इसका नाम जीव इस लिए है, क्योंकि जीव शब्द "जीव प्राण धारणे" धातु से बना है। पदार्थों के अपने-अपने स्वरूप को धारण करने वाली यह जीवभूता पराक्रुति है। यहां जीव शब्द देहाभिमानी जीव के अर्थों में नहीं है, यह अक्षर पुरुष है जो प्राणात्मक है, और सृष्टि का निमित्त कारण है। तीसरा अव्यय उत्ताम पुरुष है, वह सृष्टि का साधारण कारण है जिसमें ये दोनों अपरा और परा प्रक्रुतियां सन्निविष्ट हैं। इस अव्यय पुरुष में से जिस को ऊपर परमात्मा और ईश्वर शब्दों से कहा है, उस में से सृष्टि का उसी प्रकार प्रभव हुआ है, जिस प्रकार हिमालय से गङ्गा का प्रभाव होता है। यही अव्यय पुरुष उत्तम परम तत्त्व है, जिसका पहले वर्णन हो चुका है। गीता में प्रायः इसी उत्तम तत्त्व को लेकर के बहुधा वर्णन है, यह महा समष्टि सत्ता है। अन्य छोटी-छोटी समष्टि सत्ताएँ इसी के अन्तर्गत आ जाती हैं। व्यष्टि सत्ताओं की योजिका समष्टि सत्तायें हैं, व्यष्टि सत्तायें अपने आपको उनके अर्पण करती हैं। इसी प्रकार विश्व का और ब्रह्माण्ड का नियन्त्रण चक्र चल रहा है। छोटी सत्ता का अपने आपको बड़ी सत्ता के अर्पण करना यह छोटी सत्ताओं का नित्य धर्म है, यह यज्ञ है। इसी अर्पण करने का नाम यज्ञ-भावना है। इसी को लक्ष्य करके गीता में कहा है

"यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्म बन्धनः । तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसंगः समाचर"

यज्ञ के निमित्त कर्म करने से लोगों को कर्म बन्धन नहीं लगता । इसलिये कर्म के फल की आकांक्षा छोड़कर अर्थात् मुक्त-संग होकर कर्म करना चाहिये । यहाँ पर स्पष्ट कहा है कि राष्ट्र यज्ञ के अर्थ (लोक कल्याणार्थ) कर्म करने से कर्म का बन्धन नहीं लगता । यज्ञ के निमित्त कर्म करना और लोक कल्याणार्थ कर्म करना जिसमें फल की आकांक्षा न हो, इन दोनों का एक ही अर्थ है। इसी प्रकार कर्म की पवित्रता है । यह पवित्र कर्म, कर्म करने वाले को भी पवित्र करना है, इसी लिये गीता में कहा है "यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्" । मनीषि पुरुष वे हैं जो यज्ञ-भावना से कर्म करते हैं, उनको कर्मफल की आकांक्षा नहीं होती । उन्हीं मनीषियों के यज्ञ, दान और तप पवित्र-कारक होते है । इसीलिये गीता में अर्जुन के निमित्त से मानव समाज को उपदेश दिया है; कि हवन, दान, और तप तथा अपना खाना-पीना आदि सब कर्म उत्तम पद वाच्य महा समष्टि के अर्पण करना चाहिये "यत् करोषि यदश्नासि यद्जुहोषि ददासि यत् । पश्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ।" यहां पर मत् शब्द का अर्थ श्री कृष्ण व्यक्ति नहीं है, परन्तु उत्ताम पुरुष वाच्य श्री कृष्ण महा समष्टि नित्य पदार्थ है । यदि मत् शब्द से कृष्ण व्यक्ति लिया जाये तो इस समय कृष्ण व्यक्ति के न होने से अर्पण का भाव असंगत होता है । इसलिये पूर्वोक्त व्याख्या के अनुसार अर्थानुसारी उत्ताम पुरुष अस्मद् शब्द के रूपों का अर्थ लेना होता है । इसी प्रकार राष्ट्र निर्माण में प्रत्येक राष्ट्र के व्यक्ति का यह धर्म है कि वह अपने कर्मों को राष्ट्र के हित और अहित का विचार करके अपना कर्म किया करें, अर्थात् अपने मन से किसी बात का मनन वा विचार और वाणी से उसका प्रकाश तथा शरीर के द्वारा उस विचार का कर्म में प्रयोग किया करें, ऐसा करने से ही कोई भी कर्म जिसे करने के लिये हम उद्यत होते हैं, वह धर्म कहलाता है । और हमारी दृष्टि कर्म करने में राष्ट्र हित या यज्ञीय भावना से रहित हो, तो वह कर्म हमारी व्यक्तिगत दृष्टि में कितना ही उत्तम क्यों न हों, व्यापक राष्ट्रिय भावना को लेकर धर्म नहीं कहला सकता । वह अधर्म की कोटि में ही रखना उचित होता है ।

गीता में दो प्रकार के जीवनों का वर्णन है—एक व्यक्तिगत जीवन और दूसरा सामूहिक राष्ट्रिय जीवन । दोनों प्रकार के जीवनों के निर्माण की पद्धति गीता में बतलाई गई है । व्यक्तिगत जीवन का निर्माण राष्ट्रिय जीवन के लिये उपयोगी होता है । परन्तु दोनों प्रकार के जीवनों के निर्माण के लिये कर्म फल का त्याग तो आवश्यक है । मनुष्य खाते पीते हैं, व्यायाम करते हैं, यह शारीरिक तप व्यक्तिगत जीवन का निर्माण करने के लिये है । शुद्धता से रहना, तृष्णा और लोलुपता पर विजय प्राप्त करना, स्वाध्याय करके अपना ज्ञान बढ़ाना, ईश्वर में चित्त लगाना, यह सब व्यक्तिगत जीवन के निर्माण के लिये हैं । अहिंसादि महाव्रत सामाजिक जीवन की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं । परन्तु इन सब धर्मों का पालन करते हुए स्वार्थ बुद्धि को त्यागना होता है अर्थात् शरीर, मन और आत्मा की सम्पत्ति बढ़ाते हुये यही दृष्टि रखनी पड़ती है कि राष्ट्र का हित हो, यदि अपने धर्मों का पालन करते हुए राष्ट्र हित की दृष्टि नहीं रहेगी तो यह धर्म शान्ति के स्थान में पारस्परिक कलह और विद्वेष का कारण बन जायेंगे । ब्रह्मचर्य आश्रम में आत्मनिर्माण वा आत्मसम्पत्ति का संग्रह इस विचार से किया जाता है कि व्यक्तिगत लाभ नहीं किन्तु राष्ट्र का हित हो । इस लिये व्यक्ति गत सम्पत्ति, शरीर, मन और आत्मा की पुष्टि के रूप में निर्माण की जाती है ।

गृहस्थ आश्रम में पुत्र व पुत्री को उत्पन्न किया जाता है । इस लिए नहीं कि उत्पन्न करने वाले का अपना कुछ स्वार्थ सिद्ध हो, प्रत्युत इस लिये कि अपने से अधिक उत्तम संतान उत्पन्न करने के द्वारा राष्ट्र का हित होता है । यदि स्वार्थ बुद्धि से संतान उत्पन्न की जाये और राष्ट्र के हित का ध्यान न रक्खा जाये तो वह संतान धार्मिक नहीं कहला सकती, उसका परिणाय राष्ट्र-हित के लिये उत्तम न होना असम्भव नहीं है । संतान उत्पन्न होकर उस पर उत्पन्न करने वालों का अधिकार नहीं रहता, क्योंकि वह उत्पत्ति राष्ट्र की सम्पत्ति हो जाती है । उस राष्ट्र की सम्पत्ति के लिये उसके उत्पादक व्यक्ति "ट्रस्टी" के रूप में केवल रक्षक मात्र होते हैं । इसलिये उत्पादकों को उत्पन्न करने से पहिले अपनी उत्पत्ति को राष्ट्र की उत्पत्ति समझ कर उत्पन्न करना चाहिये । यदि राष्ट्र-व्यवस्था

के अनुसार पालन-पोषण, शिक्षण, रक्षण, आदि हुआ करते हों तो राष्ट्र-सम्पत्ति के उत्पादकों पर केवल इतना ही कर्तव्य का बोझ आ पड़ता है, कि वे राष्ट्र सम्पत्ति को उस रूप में उत्पन्न करें कि वह उत्पत्ति राष्ट्र हित के लिये उपयोगी हो, अहित के लिये न हो। ऐसा करने से ही उत्पादक व्यक्ति अपने धर्म का पालन करते हैं अन्यथा नहीं। राष्ट्र के जो व्यक्ति कार्य से निवृत होकर शिक्षण के कार्य में विशेष रूप से लग जाते हैं, उनका राष्ट्र के बालकों को शिक्षण देकर राष्ट्र-हित के लिये उपयोगी बनाना प्रधान कर्तव्य हो जाता है। उनको व्यक्तिगत फल की आकांक्षा छोड़कर राष्ट्रिय आत्मा के निर्माण के लिये अपने किये गये प्रयत्न से संतुष्ट रहना चाहिये।

वानप्रस्थ आश्रम के वाद जो व्यक्ति परम निवृत्त होकर प्रायः घूम फिर कर सम्पूर्ण राष्ट्रिय व्यक्तियों को जीवन का मार्ग-दर्शन करते हैं, वे संन्यासी व्यक्ति पुत्रैषणा, वित्तैषणा और लोकैषणा से निवृत्त होकर राष्ट्र का परम कल्याण करने में तत्पर होते हैं, और इसी में अपना गौरव तथा आनन्द अनुभव करते हैं। इन सब धर्मों का पालन करते हुये राष्ट्रिय व्यक्तियों का भरण, पोषण और आच्छादन तथा निवास का प्रबन्ध राष्ट्रिय समष्टि आत्मा को करना होता है, क्योंकि राष्ट्र की सुन्दर व्यवस्था में व्यक्तिगत सम्पत्ति पर किसी का अधिकार नहीं रहता। यह अपरिग्रह—राज्यव्यवस्था है, जिसमें राष्ट्र के व्यक्तियों को अपने श्रम से उत्पन्न की गई व्यक्तिगत सम्पत्ति पर अपना अधिकार छोड़कर राष्ट्रिय आत्मा के अर्पण करना होता है। इस अर्पण करने का महत्व यह है कि राष्ट्र के व्यक्ति निश्चिन्त होकर राष्ट्र-हित के लिए सम्पत्ति का उत्पादन रूप श्रम करने में तत्पर रहते हैं, और अपना धर्म समझते हैं। यही धर्म ऐसा धर्म है जिसके अन्दर अन्य सब धर्म आ जाते हैं। भिन्न २ व्यक्ति जिन २ धर्मों का पालन कर रहे हैं, उन सब धर्मों को राष्ट्रिय आत्मा के अर्पण करने के अर्थों में ही सब धर्मों का परित्याग करके राष्ट्रयि या महा समष्टि आत्मा के लिए अर्पण करने का आदेश भगवद् गीता में दिया है। इसी प्रकार अर्पण बुद्धि से जीवन व्यतीत करते हुए राष्ट्र के व्यक्ति सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। क्योंकि, इस अर्पण रूप बुद्धि के पालन करने से कर्म जनित बासना रूप संस्कार आवरण-कारक और चंचलता-उत्पादक नहीं रहते। इसी का क्रमशः अभ्यास करते हुए, निष्काम कर्म योग की उपासना करने से मनुष्य परम मुक्ति का अधिकारी बन जाता है।

ऊपर हमने राष्ट्र-हित की दृष्टि से कर्म करने का उल्लेख करते हुए धर्म के स्वरूप का प्रतिपादन किया है। इसे स्पष्ट करने के लिए अनेक दृष्टान्त उपस्थित होते हैं। जिनमें से एक महत्त्वपूर्ण दृष्टांत का उल्लेख किया जाता है। एक सज्जन से पूछा गया, कि आप बीड़ी सिगरेट के रूप में जो तम्बाकू का सेवन करते हैं, वह उचित नहीं है। अमेरिका के डाक्टरों का नया अन्वेषण बतलाता है, कि तम्बाकू के किसी भी रूप में सेवन करने से फेफड़ों में नासूर उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। इसमें लगभग २२ बड़े विष विद्यमान रहते हैं। जो तम्बाकू का सेवन करने वालों को किसी न किसी रूप में हानि पहुंचाते हैं। प्रारम्भ में रोग प्रतिरोधक शक्ति के मुकाबले में तम्बाकू से उत्पन्न हुई हानि अधिक प्रतीत नहीं होती, परन्तु जीवन शक्ति का क्रमशः ह्रास करते हुए तम्बाकू के घातक विष अपना तीव्र प्रभाव प्रगट करते हैं। अन्त में उन विषों के प्रभावों का निवारण अति कठिन हो जाता है, क्योंकि जीवन शक्ति उन प्रभावों को दूर करने के लिए अति निर्बल हो जाती है। यह सब उपदेश सुनकर भी उस सज्जन ने उत्तर दिया, कि भारत के प्रधान मंत्री श्री नेहरू जी भी सिगरेट पीते हैं। यदि इसमें कुछ दोष होता तो इतना बड़ा प्रसिद्ध व्यक्ति इसका सेवन क्यों करता ?

इससे प्रतीत हुआ कि राष्ट्र के संचालक व्यक्तियों को अपनी एक एक चेष्टा पर तथा मन में आये हुये विचार और वाणी के प्रयोग पर साधारण पुरुषों से बहुत अधिक सावधान रहने की आवश्यकता है। उनके मन वचन कर्म का प्रयोग राष्ट्र के किसी व्यक्ति के ऊपर ऐसा प्रभाव तो नहीं डालता, जिससे राष्ट्र के व्यक्तियों की हानि होने की सम्भावना हो। श्री कृष्ण महाराज ने गीता में इस विषय में अपना उदाहरण स्पष्ट रीति से मानव-कल्याण के लिये उपस्थित किया है। गीता में उन्होंने बतलाया है, कि तीनों लोकों में अर्थात् जीवन की, आदि, मध्य, और अन्तिम तीनों अवस्थाओं में अर्थात भूर्भुवः स्वः इन तीनों लोकों में मुझे (श्री कृष्ण को) कुछ भी कर्तव्य शेष नहीं है। ऐसी कोई प्राप्तव्य वस्तु नहीं,

जिसे मैंने प्राप्त न कर लिया हो, तो भी मैं कर्म करने में प्रवृत्त हूँ । यदि मैं सावधानता के साथ कभी प्रवृत्त न रहूँ तो मुझे जीवन पथ का अग्रगामी (पथ-प्रदर्शक) मानने वाले मानव जो मेरे बतलाये मार्ग का अनुसरण करते हैं वे पथभ्रष्ट हो जायें और अत्यन्त कष्ट भोगें, तथा संसार में पथभ्रष्टों के द्वारा संकट उत्पन्न हो जाये और इन प्रजाओं के नष्ट होने के पाप का भागी मैं बनूं ।"

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन ।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वत एव च कर्मणि ॥
यदिह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः ।
मवर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥
उत्सीदेयुरिमे लोकाः न कुर्यां कर्म चेदहम् ।
संकरस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः ॥

इन श्लोकों में श्री कृष्ण ने मानव-कल्याण के लिये अपना कितना उत्तरदायित्व दिखलाया है, जो राष्ट्र के संचालकों के लिये अत्यन्त मननीय और अनुकरणीय है । यही आदर्श रूप में धर्म का परिपालन है । जिसमें व्यक्तिगत स्वार्थ को कोई स्थान प्राप्त नहीं हुआ । यदि राष्ट्र के सब व्यक्ति श्री कृष्ण के जीवन के इस आदर्श का अनुकरण करने लग जायें अर्थात धर्म का परिपालन करने लगें तो राष्ट्र और इसी तरह मानव समाज अति उत्तम अवस्था को पहुंच जावे, इस प्रकार राष्ट्र-निर्माण में धर्म का स्थान अति महत्त्व रखता है अर्थात् मनुष्यों को जो भी कुछ करना हो, वह मानव कल्याण की दृष्टि से और राष्ट्र-हित के लिये अति उपयोगी समझकर करना उचित है, इस प्रकार आचरण रखते हुये राष्ट्र के व्यक्तियों के लिये जाति भेद, वर्ग भेद और प्रान्त भेद का निराकरण होते हुये शुद्ध रूप में राष्ट्र का निर्माण हो सके ।

धर्मनिरपेक्ष राज्य नहीं होता । कोई राजा धर्म से निरपेक्ष है, अर्थात धर्म की अपेक्षा नहीं रखता, यह घोषणा राष्ट्र-संचालकों की ओर से की जाये तो इसका अर्थ यह है कि राष्ट्र संचालक यह नहीं जानते कि धर्म क्या वस्तु है । यदि राष्ट्र के संचालन के लिये धर्म की आवश्यकता नहीं समझी जाती तो ऐसा राष्ट्र देर तक नहीं टिक सकता, क्योंकि राष्ट्र-धर्म ही एक ऐसा धर्म है, जिसमें राष्ट्र के व्यक्ति अपना सब कुछ राष्ट्र के लिये अर्पण करके अर्थात अपने व्यक्तिगत स्वार्थों को राष्ट्र के लिये अर्पण करके विशुद्ध राष्ट्र धर्म के पालन में तत्पर हो सकते हैं, और एक सूत्र में बंध सकते हैं । यदि संपूर्ण राष्ट्र का कोई एक धर्म ही नहीं जिसमें सब व्यक्ति अपने स्वार्थों को छोड़कर एक सूत्र में बंध सकें तो राष्ट्र के व्यक्ति विशृङ्खलित होकर राष्ट्र की सब शक्तियों को कमजोर बना देंगे और उस राष्ट्र का समाज उत्तरदायी मनुष्यों का समाज नहीं होगा, प्रत्युत अपने-अपने स्वार्थों से इकट्ठे हुये पशुओं का गिरोह (समज), इसलिये यह आवश्यक है कि ऐसे राष्ट्र धर्म-का संचालन और शिक्षण दिया जाय जिसमें मनुष्यों के व्यक्तिगत और साम्प्रदायिक धर्म राष्ट्र-धर्म के अंग होकर तथा राष्ट्र-हित के एक सूत्र में बद्ध होकर राष्ट्र को सुदृढ़ बनाने में समर्थ हों । इस समय हमारा भारतवर्ष राष्ट्रहित की दृष्टि से एक सूत्र में बद्ध न होकर धार्मिक दृष्टि से विशृंखलित हो रहा है । धर्म को ऐसी विशृङ्खलता राष्ट्र के व्यक्तियों को छिन्न भिन्न कर रही है और पारस्परिक राग-द्वेष तथा कलह का कारण बन रही है । इसको मिटाने के लिये राष्ट्र की योजना किस प्रकार होनी चाहिये, अब यह विचारणीय प्रश्न विचार के लिये उपस्थित होता है ।

पूर्वोक्त सम्पूर्ण विचार राष्ट्र हित को लक्ष्य में रखकर श्रम के आधार पर किया गया है, इसी श्रम के आधार पर राष्ट्र की योजना का प्रकार बतलाने का प्रयत्न करना है । हमारा संगठन पंचायतों और नगरपालिकाओं के आधार पर बना हुआ है । परन्तु इसके अतिरिक्त राष्ट्र व्यवस्था भारतीयों के अपने अन्दर से उत्पन्न हुई नहीं है । प्रत्युत भारतीय व्यक्तियों पर ऊपर से लादी गई है, और इसका नाम जनतन्त्र रख दिया गया है । जब तक यह राष्ट्र व्यवस्था भारतीयों के अपने अन्दर से विकसित नहीं होती, तब तक इस व्यवस्था को जन-तन्त्र नहीं कहा जा सकता । ग्रामों की पंचायतें हों अथवा नगर की नगर पालिकाएं, सबका निर्माण व्यक्तिगत श्रम करने वाले व्यवसायी श्रमिकों के आधार पर इसका प्रकार निम्नलिखित है—

किसी ग्राम में वा नगर में जितने प्रकार के भी व्यवसायी हों उन व्यवसायियों की अपनी-अपनी समितियों के द्वारा उनकी संख्या के अनुपात से दो प्रतिनिधि व्यक्ति चुने जायें और उन सब प्रतिनिधि व्यक्तियों की मिलकर नगर पालिका बने । इसी तरह ग्रामों में भी व्यवसायी व्यक्तियों के प्रतिनिधियों की ग्रामपालिकाएं बनें । ये नगर-पालिका और ग्राम पालिका अपने संगठनों में से सर्व सम्मति

से योग्य व्यक्तियों को चुनकर उन्हें विवादास्पद विषयों के निर्णय का अधिकार देवें। इस प्रकार इस निर्णायक समिति के द्वारा जो निर्णय हों वे उन सब व्यक्तियों को मान्य होंगे, जिन व्यक्तियों के प्रतिनिधियों के रूप में वे निर्णायक समितियाँ बनी हैं। वे ही निर्णायक समितियाँ उपस्थित हुए किसी भी विवाद का निर्णय सुगमता से और संतोष जनक रूप में कर सकेंगी। लोगों को एक न्यायालय से दूसरे न्यायालय में जाने की व्यर्थ की दुविधा में पड़ना नहीं पड़ेगा। एक जिले में विद्यमान सब नगर पालिकाओं के प्रतिनिधियों से किसी जिले की एक संयुक्त नगर पालिका बनेगी, जिसमें आये हुए प्रतिनिधि अपने-अपने क्षेत्र के अनुसार जहां से वे चुने गये हैं उसको आदेश और निर्देश जिले की नगर पालिका के अनुसार दिया करेंगे और नगर पालिकाओं से निर्वाचित निर्णायक समितियों के प्रतिनिधियों से बनी हुई जिले की निर्णायक समिति उसके नीचे विद्यमान छोटी निर्णायक समितियों से जो विवादास्पद विषय अनिर्णीत होंगे उनका निर्णय देने के लिए वह नीचे की निर्णायक समितियों को पूरी मदद देगी। एक प्रान्त में विद्यमान जिलों की नगर-पालिकाओं के . प्रतिनिधियों से बनी एक प्रांत की नगर-पालिका होगी। यह नगरपालिका अपने प्राँत में विद्यमान जिले की नगरपालिकाओं का निरीक्षण करेगी और प्रांत की सामाजिक नीति से निर्धारित नियमों का अध्यादेश नीचे की नगरपालिकाओं को करेगी और प्रांत की नगर-पालिकाओं के प्रतिनिधियों से बनी हुई प्रान्तीय निर्णायक समिति होगी। जो प्रान्त में उठे हुए विवादास्पद विषयों का निर्णय करेगी। इस प्रकार प्राँत के मुख्य अधिकारियों की मिल कर सब प्रांतों को मिलाने वाली केन्द्रिय समिति होगी जो सब प्रांतों पर शासन करेगी और सब प्रांतों के प्रबन्ध के सामान्य कार्य जिन को एक एक प्रांत नहीं कर पाता उनको किया करेगी। प्रांतीय निर्णायक समितियों के प्रतिनिधियों से बनी हुइ एक सर्वोच्च निर्णायक समिति होगी जो सब प्रांतों में चलते हुए सामान्य कार्यों में उठे हुए विवादों का निर्णय किया करेगी। सब प्रांतों की संयुक्त समितियों से बनी हुई एक महा समिति जो सारे देश की व्यवस्था चलावेगी उसका चुना हुआ अध्यक्ष 'राष्ट्रपति' के रूप में कार्य करेगा। उस महासमिति का जो चुना हुआ मंत्री होगा वही प्रधान मंत्री होगा और वह प्रधानमंत्री राष्ट्र की महासमिति में से समिति से चुने गए भिन्न २ विभागाध्यक्षों को कार्य में निहित करेगा। यह राष्ट्र का प्रबन्ध इस प्रकार का होगा जिसमें राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र निर्माण में भाग ले रहा होगा और यह शासन व्यवस्था राष्ट्र के व्यक्तियों में उनके अपने अन्दर से प्रगट हुई होगी। राष्ट्र व्यवस्था लोगों के ऊपर बाहर से लादी गई नहीं होगी।

इस समय जो राष्ट्र-व्यवस्था है वह लोगों के अन्दर से प्रगट नहीं हुई प्रत्युत बाहर से लादी गई है। वर्तमान राज्य व्यवस्था को हम सच्चे अर्थों में जनतन्त्र शासन प्रणाली नहीं कह सकते, परन्तु जो व्यवस्था ऊपर दिखाई गई है वही सच्चे अर्थों में जन तन्त्र शासन प्रणाली है। इस जनतंत्र शासन प्रणाली में राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति अपने आप को पूर्णतया राष्ट्रिय महासमष्टि आत्मा के लिये पूर्णतया अर्पित करके पूर्ण रूप से धर्म का पालन करता है। इस प्रणाली में वे ही व्यक्ति चुनाव में आ सकेंगे जो प्रजा हित के लिये अपने आपको पूर्णतया निष्कपट भाव से अर्पण करने में प्रमाणित हो चुके हैं दूसरे व्यक्ति जो बाह्य दृष्टि से कितने भी योग्य क्यों न हों, यदि उनके जीवन में सत्यधर्म पूर्णतया उतरा हुआ नहीं है, तो वे किसी भी रूप में शासन विभाग में और प्रबन्ध विभाग में अग्रसर नहीं हो सकते, और चुनाव में नहीं आ सकते। इस प्रकार हम समझते हैं कि राष्ट्र निर्माण में धर्म का सर्वोच्च स्थान है, और इस धर्म का पालन किये विना सुखमय शान्तिमय राष्ट्र का निर्माण नहीं हो सकता। इस व्यवस्था में साम्प्रदायिकता को कोई स्थान नहीं है क्योंकि इस चुनाव में वही व्यक्ति प्रजा के द्वारा चुना जायेगा जो सच्चरित्र है और प्रजाहित के लिये निष्कपट भाव से कार्य करने में जनसमुदाय की दृष्टि में प्रमाणित हो चुका है।

राष्ट्रधर्म की दृष्टि से जीवन को दो मार्गों में विभक्त किया है—१. व्यक्तिगत जीवन २. सामाजिक जीवन। आश्रमधर्म का पालन करने से व्यक्तिगत जीवन का निर्माण होता है और वर्ण धर्म का पालन करने से सामाजिक जीवन का निर्माण होता है। आश्रम जीवन को चार भागों में विभक्त किया है। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास।

क्रमशः

महर्षि दयानन्द के कल्याणकारी उपदेश

(स्वामी शान्तानन्द जी महाराज आर्य समाज ब्यावर)

१—**मोक्ष मार्ग**— "जैसे मनुष्य जल में गोता मार कर ऊपर आता है और फिर गोता लगा जाता है। इसी प्रकार अपने आत्मा को परमेश्वर में बार-बार मग्न करना चाहिये।"

२—**सुखी होने का मार्ग**—"मैंने परीक्षा करके निश्चय किया है कि जो धर्मयुक्त व्यवहार में ठीक-ठीक वर्त्तता है, उसको सर्वत्र सुख लाभ और जो विपरीत वर्त्तता है, वह सदा दुःखी होकर अपनी हानि कर लेता है।"

३—**यथा राजा तथा प्रजा**—"इस पर भी ध्यान रखना चाहिये कि जैसा राजा होता है वैसी ही प्रजा होती है। इस लिये राजा और राजपुरुषों को अति उचित है कि कभी दुष्टाचार न करें, किन्तु सब दिन धर्म न्याय से वर्त्त कर सब के सुधार का दृष्टान्त बनें।"

४—**स्वदेश प्रेम**—"जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है और आगे होगा; उसकी उन्नति तन, मन, धन से सब जने मिल कर प्रीति से करें।"

५—**किसान और मजदूर**—"राजाओं के राजा किसान आदि परिश्रम करने वाले हैं और राजा उनका रक्षक है। जो राजा (कर के रूप में) धन लेवे तो भी इस प्रकार से लेवे कि जिससे किसान आदि खाने-पीने और धन से रहित होकर दुःख न पावें।"

६—**राष्ट्रपति कैसा हो**—"जो सब राजसभासदों में सर्वोत्तम गुण, कर्म स्वभाव युक्त महान् पुरुष हो और सब के प्राणवत् प्रिय, पक्षपात रहित, दुष्टों को भस्म करने वाला और शीघ्र ऐश्वर्य कर्ता हो उसी को राजा या सभापति (राष्ट्रपति) करो।"

७—**आदर्श प्रजातन्त्र**—"राजा जो सभापति है। राजाधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के आधीन, और प्रजा, राजसभा के आधीन रहे। जो प्रजा न हो तो राजा किस का ? राजा न हो तो प्रजा किस की कहावे ? दोनों अपने-अपने काम में स्वतन्त्र और प्रीतियुक्त मिले हुए काम में परतन्त्र रहें।"

८—**वेदों को पढ़ो**—"कोटि-कोटि धन्यवाद परमात्मा को देना चाहिये जिसने अपनी वेद विद्या को प्रसिद्ध करके मनुष्य का परम हित किया है, कि जिस को पढ़ कर महामुनि पाणिनि सदृश पुरुष हो गये।"

९—**जीवन की सफलता का मार्ग**—"वेद और प्राचीन आर्य ग्रंथों के ज्ञान के विना किसी को संस्कृत विद्या का यथार्थ फल नहीं हो सकता और इसके विना मनुष्य जन्म का सफल होना दुर्लभ है।"

१०—**राष्ट्र संघ**–(प्रत्येक राष्ट्रपति) सार्वभौम चक्रवर्ती महाराज सभा (अन्तर्राष्ट्रिय संघ) में सब भूगोल का वर्तमान जनाया करें।"

११—"प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।" (आर्य समाज का नियम ९)

सुधारक पर सम्मति

"सुधारक" को पढ़ कर मन बड़ा प्रसन्न होता है। स्वामी शान्तानन्द जी आर्य समाज ब्यावर की शिक्षाप्रद बातें तो नवजीवन प्रदान करती हैं। हम सभी सुधारक प्रेमी सुधारक की हृदय से उन्नति चाहते हैं।

मांगेराम आर्य (अहमदनगर)

समालोचना—

दिव्यालोक

ज्यौतिष आलोक गृह दारा गंज प्रयाग से प्रकाशित होने वाला "दिव्यालोक" ज्योतिष का त्रैमासिक पत्र है। इसके सम्पादक श्री डा० रघुनन्दन प्रसाद शर्म्मा एम. ए. ज्योतिषाचार्य हैं। मूल्य ४) वार्षिक है। इसके डेढ वर्ष के छः अङ्क हमारे सामने हैं। भारत की प्राचीन ज्योतिर्विद्या जो संस्कृत के ग्रन्थों हैं निहित है, उसको हिन्दी जगत् के समक्ष रखने का स्तुत्य प्रयत्न पत्र ने किया है। इससे ज्योतिर्विज्ञान के अनुसन्धान में साधारण पाठकों की अभिरुचि होना स्वाभाविक है। पत्र की भाषा सरल है, भाव भी अच्छे हैं, परन्तु फलित विचारों से हम सहमत नहीं हैं। पत्र की सफलता के लिये परेश से कामना करते हैं।

धन्वन्तरिचरकचिकित्साङ्क

धन्वरि कार्यालय विजयगढ़ (उत्तर प्रदेश) से प्रकाशित धन्वन्तरि मासिक पत्र का, धन्वन्तरि चरक चिकित्साङ्क, हमारे सामने है, इसके सम्पादक श्री देवीशरण गर्ग आयुर्वेदोपाध्याय तथा श्री ज्वालाप्रसाद अग्रवाल बी. एस. सी. हैं। और इस विशेषाङ्क के अनुवादक, व्याख्याकार और वक्तव्य-लेखक हैं श्री आचार्य रघुवीरप्रसाद त्रिवेदी आयुर्वेदाचार्य ए. एम. एस. एम. एस. ए.।

लगभग आठ सौ पृष्ठ का यह सचित्र विशेषाङ्क है। मूल्य इसका ८।।) है और धन्वतरि का वार्षिक मूल्य ५।।) है।

शास्त्रीय ठोस सामग्री से ओत-प्रोत यह अङ्क प्रभावशाली है। आयुर्वेद की उन्नति के लिये ऐसे विशेषाङ्कों की बड़ी आवश्यकता है। भारतीय आयुर्वेद प्रणाली तथा चरक में निष्ठा रखने वाले व्यक्तियों के लिये यह अपूर्व वस्तु है। इस सफल प्रयत्न के लिये उपर्युक्त महानुभाव बधाई के पात्र हैं। हमारी शुभ कामनायें साथ हैं।

बाइबिल के गपौड़े

उपर्युक्त नाम का १६ पृष्ठ का ट्रैक्ट उर्दू भाषा का हमारे सामने है। इसके लेखक बाईबिल के मार्मिक विद्वान् श्री हरिशरण जी बाइबिलाचार्य हैं। लेखक ने बाईबिल का वर्षों तक स्वाध्याय किया है। ईसाईयों के प्रचार के समय वह काम आया है। आपके सामने ईसाई पादरी ठहर नहीं पाते। अनेकों शास्त्रार्थ कर चुके हे। इससे पूर्व भी कई ट्रैक्ट लिख चुके हैं। ट्रैक्ट के अध्ययन से बाईबिल का दिग्दर्शन हो जाता है। इस सफल प्रयास के लिये लेखक महोदय बधाई के पात्र हैं। हम ट्रैक्ट का अधिक से अधिक प्रचार चाहते हैं। ईसाईयों के प्रचार-स्थल पर ट्रैक्ट को समर्थ लोग मूल्य के बिना बंटवाने का प्रबन्ध कर यश के भागी बनें।

सुधारक पर सम्मति

"सुधारक" वास्तव में सुधार करेगा।
सामाजिक कुरीतियों का जड़ से क्षार करेगा॥
विद्यार्थी और युवक मुर्दा बन रहे हैं आज।
इन में नव जीवन का पुनः सञ्चार करेगा।
आर्ष ब्रह्मचर्य शिक्षा प्रणाली भूल गये,
यह फिरसे उसी शिक्षा का उद्धार करेगा।
गोहत्या निषेध का प्रबल समर्थक,
भारत में फिर गोमाता का सत्कार करेगा।
सर्वश्रेष्ठ उद्देश्यों का प्रतिपादक सुधारक,
'ताराचन्द' वेद धर्म का प्रचार करेगा॥

—ताराचन्द "आर्य भजनोपदेशक"
कोथल (महेन्द्रगढ)

ग्राहक संख्या बढ़ाइये

सुधारक सब प्रकार के सुधार में अपना सर्वस्व लगा रहा है। व्यक्तिगत, शारीरिक, मानसिक और आत्मिक सुधार के उपाय सुधारक देता है। इसके साथ ही सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक सुधारों का प्रतिपादन निर्भयता से सुधारक करता है। प्रत्येक सुधार प्रेमी को इसकी ग्राहक संख्या बढ़ानी चाहिये।

—व्यवस्थापक सुधारक

युवक और स्वप्नदोष

स्वप्नदोष एक ऐसा भयंकर रोग है, कि जिसके जाल से कोई सौभाग्यशाली ही युवक बचता है। यह विद्यार्थी तथा नवयुवकों को कुमारावस्था अर्थात् १४ वर्ष से १८ वर्ष की आयु के मध्य उभरती हुई युवावस्था में ही घेर लेता है। मेरे पास प्रतिवर्ष सैकड़ों विद्यार्थी व युवकों के पत्र आते रहते हैं। अतः मैं अपने अनुभव के आधार पर बलपूर्वक कह सकता हूँ कि ९९ प्रतिशत इस भयंकर रोग में फंसे हुए पाये जाते हैं। कालिजों, हाईस्कूलों के विद्यार्थी तो निःसन्देह शत-प्रतिशत इस इस रोग के आखेट (शिकार) बने हुए हैं। पीले मुरझाये हुए मुख पर अन्दर धंसी हुई आँखें, निस्तेज और कान्तिरहित दुर्बल शरीर आदि चिह्न युवकों का इस रोग में फंसे होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। यह भयंकर रोग मेरे देश के युवकों के शरीर को घुन की तरह खाकर निर्बल और जीर्ण-शीर्ण कर रहा है। कुसंग, कुशिक्षा, कुत्सित विचार, मद्यमांसादि दुष्ट भोजन, अधिक सोना, अधिक खाना, आलस्य-प्रमाद में पड़े रहना, सिनेमा स्वांगादि देखना, नावल नाटकादि गन्दी पुस्तकें पढ़ना, इस रोग के मुख्य कारण हैं। यदि भारत के युवक शुद्ध विचार, शुद्ध भोजन, सत्सङ्ग और स्वाध्याय करते हुये श्रद्धापूर्वक व्यायाम, प्राणायाम और सन्ध्या (ईश्वर भक्ति) नियमित रूप से करें, तो इस भयंकर रोग का सर्वथा उन्मूलन बिना किसी औषधि-सेवन के भी हो सकता है। किन्तु आज का युवक इन साधनों पर श्रद्धा-विश्वास नहीं रखता। औषधों का आश्रय लेना अधिक हितकारी समझता है। इसलिये विद्यार्थी और युवकों के इस दुःख को दूर करने के लिये हमने निम्नलिखित औषध अपनी रसायनशाला में बड़े परिश्रम से बनाई हैं। पर्याप्त नवयुवक इन से लाभ भी उठा चुके हैं। इस रोग की चिकित्सा में प्रमाद नहीं करना चाहिये। इसके अधिक बढ़ने पर मनुष्य नपुंसक (नामर्द) हो जाता है। हमारा स्वप्नदोषामृत रस तथा चूर्ण वीर्य को गाढ़ा तथा पुष्ट करके इस रोग को दूर करने में सफल हुआ है। इसके एक मास सेवन करने से कितने रोगियों का स्वप्नदोष तो सर्वथा नष्ट हो चुका है। इसके सेवन करने वालों को लाभ तो सब को होता है। किसी को ५० प्रतिशत, किसी को ७५ प्रतिशत होता है। जिन युवकों को अजीर्ण-कब्ज रहता हो, उन्हें बीच-बीच में त्रिफले का सेवन करते रहना चाहिये।

स्वप्नदोषामृत रस—यह रस स्वप्नदोष को दूर करने की सर्वोत्तम औषध है। साथ ही वीर्य के मूत्र के आगे-पीछे या मध्य में आने वाले रोग को तुरन्त शान्त करता है। यह सब प्रमेहों के लिये भी अत्युत्तम औषधि है। यह हताश तथा निराश युवकों को जीवन प्रदान करता है।

मूल्य ५) शीशी एक मासार्थ

स्वप्नदोषामृत चूर्ण—यह चूर्ण धातु को पुष्ट करता है, बलदायक है। स्वप्नदोष के रोगी के लिये अत्यन्त हितकर है। दोनों औषध रस तथा चूर्ण साथ-साथ सेवन करने से आश्चर्यजनक लाभ होता है। साथ ही यह नपुंसकता (नामर्दी) के लिये भी लाभदायक है। यह प्रमेहनाशक है। यह चूर्ण विद्यार्थियों के लिये विशेष हितकारी है।

मूल्य २) शीशी एक मास सेवनार्थ

१—दोनों दवाई एक मास की एक साथ मंगाने वालों से डाकखर्च एवं पैकिंग खर्च नहीं लिया जायगा।

सेवन विधि—चूर्ण को एक मासे से तीन मासे तक प्रातः-सायं दूध वा जल के साथ लेना चाहिये, रस की एक-एक गोली प्रातः-सायं दूध वा जल के साथ लेनी चाहिये। जो विद्यार्थी युवक ब्रह्मचारी हों, उन्हें इसका सेवन जल के साथ ही करना चाहिये, भूलकर भी दूध से सेवन न करें। जो युवक निर्बल वीर्यहीन हों, उन्हें ताजे दूध अथवा गर्म किये हुए ठण्डे दूध के साथ प्रातः-सायं सेवन करना चाहिये। खटाई, मिर्च, लहसन, प्याज इत्यादि उष्ण चीजों का पथ्य रखें।

अमृत घृत

यह घृत सब प्रकार के विष स्थावर (संखियादि) जंगम (सर्प बिच्छू विषादि) को दूर करता है। अपस्मार, उन्माद, क्षय, उदरविकार, पाण्डु, प्लीहा, कामला, हनुस्तम्भ, आदि रोगों में विशेष लाभकारी है। विषनाश करने में तो अमृत का काम करता है। यह मृतसदृश पुरुषों को भी जीवन प्रदान करता है। यह सर्व विष की अचूक और सर्वोतम औषध है। अतः इसे अमृत कहा है। यह सब विषों के नाशक घृतों में श्रेष्ठ है। यह सर्व त्रिषों के नाशार्थ श्रेष्ठ घृत है।

मूल्य ५) आधा पाव, ४०) सेर

फलघृत

यह स्त्रियों के गर्भाशय के सभी रोगों को दूर करता है। जिन स्त्रियों को गर्भ नहीं ठहरता, या ठहर कर गिर जाता है, या सन्तान निर्बल होती है, उनके लिये अत्युत्तम है। स्त्रियों के शरीर या कमर के दर्द के लिए बहुत उत्तम है। स्त्रियों के आर्तवदोष तथा पुरुषों के वीर्यदोष को दूर करता है। जिनके बच्चे मर जाते हैं उन गृहस्थों को इसका सेवन करना चाहिए। जिनके कन्यायें ही होती हैं इसके सेवन से पुत्र उत्पन्न होता है। इसका अनुभव तो सेवन करके ही किया जाता है। संतान रूपी फल का देने वाला यथा-नाम तथा-गुणकारी है। प्रत्यक्ष में प्रमाण क्या ? सेवन करें और फल प्राप्त करें।

मूल्य ४) आधा पाव, ३२) सेर

ब्राह्मी घृत

इसके सेवन से कुष्ठ (कोढ़) मृगी, (हिस्टेरिया), मस्तिष्क की निर्बलता, चक्र आना, याद किये हुए पाठ तथा सुनी हुई बात का भूल जाना, रक्खी हुई वस्तु याद न रहना आदि को जड़ से नष्ट कर देता है। और जिसकी स्मरण-शक्ति सर्वथा नष्ट हो चुकी हो उसके लिए श्रुतिधर अर्थात् एक बार सुन लेने पर फिर कभी न भूलने वाला बना देता है। स्कूल के विद्यार्थी, दफ्तर के बाबू और वकील आदि मस्तिष्क का काम करने वालों के लिये अत्यन्त लाभदायक है। स्वप्नदोष, सब प्रकार के धातु-प्रमेह को दूर करता है। इसके सेवन से स्मरण-शक्ति खूब बढ़ती है। मूल्य आधा पाव ४), एक सेर ३२)

त्रिफलादिघृत

यह घृत आँखों के लिए अत्युत्तम है, इसकी जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है। यह आंखों के समस्त रोगों के लिए रामवाण है। इसके सेवन से नेत्रों का कोई रोग नहीं रहता। इससे रतोंधी, आंखों की खुजली, पानी जाना, धुंध, जाला, इत्यादि सब रोग दूर होते हैं। आँखें निर्मल होकर चमकने लगती हैं। सौ वर्ष तक नेत्र ज्योति नवयुवकों के समान बनी रहती है। मोतियाबिंद को भी लाभदायक है। आँखों के छोटे-बड़े सब रोगों पर हितकारी है।

मूल्य ४) आधा पाव, ३२) सेर

महाबाँसादि घृत

यह घृत रक्तपित्त, खाँसी, स्वरभेद, हलीमक, गुल्म रोगों में उत्तम है। रक्तपित्त (शरीर के किसी भी अंग से खून निकलना) रोग के लिये तो यह एकमात्र अचूक औषध है। हमने इसको अनेक रोगियों पर अनुभव किया है। हमारे एक ब्रह्मचारी को नकसीर में किसी भी प्रकार की औषधि से लाभ नहीं हुआ, उसके लिये भी इस घृत ने अमृत का काम किया। अब उसकी नकसीर बन्द है।

मूल्य ५) आधा पाव, ४०) सेर

बृहत्शतावरी घृत

(रक्तपित्त) शरीर के किसी भी अंग से खून निकलना, शिर या किसी भी अंग में जलन होना, मूत्र का लग कर आना, और धातुओं की क्षीणतादि रोगों के लिये यह घृत अत्युत्तम है। हृदय रोगों को नष्ट करके पुरुषत्व को बढ़ाता है। मूल्य ३) आधा पाव, ३२) सेर

बृहत्कण्टकारि घृत

इसके सेवन से सब प्रकार की खाँसी, हिचकी, श्वास, कफरोगादि दूर होते हैं। दमे के रोगियों के लिये भी लाभदायक है। अनेक रोगियों पर अनुभूत घृत है।

मूल्य ४) आधा पाव, ३२) सेर

हमारी रसायनशाला में प्रत्येक घृत शुद्ध गौघृत से बनाया जाता है। तथा अत्यन्त सावधानी परिश्रम से शास्त्र विधि से मन्दी-मन्दी अग्नि द्वारा सिद्ध किया जाता है। जिसमें कई घृत तो पच्चीस-पच्चीस, तीस-तीस दिन में बनते हैं। अतः सर्वोत्तम है। हम बलपूर्वक कह सकते हैं कि ऐसे उत्तम घृत किसी रसायनशाला के नहीं हैं।

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर रजिस्टर्ड (रोहतक)

हमारे यहाँ सुलभ कुछ विशेष ग्रन्थरत्न

१. चारों वेद (मूल) अजमेर	१७॥)	ऋग्वेद ९), यजुर्वेद २॥), सामवेद २), अथर्ववेद ४)
२. ऋग्वेद भाष्य ९ भागों में	५५)	महर्षि दयानन्द कृत
३. ,, ,, ७ भागों में	४२)	पं० जयदेव विद्यालंकार कृत
४. यजुर्वेद भाष्य ४ भागों में	२५)	महर्षि दयानन्दकृत
५. ,, ,, २ भागों में	१२)	पं० जयदेव विद्यालंकार कृत
६. सामवेद भाष्य १ भाग में	६)	,, ,,
७. अथर्ववेद भाष्य ४ भागों में	२४)	,, ,,
८. अष्टाध्यायी सूत्रपाठः	।।।)	पाणिनि मुनि कृत
९. अष्टाध्यायी भाष्य दोनों भाग	७)	महर्षि दयानन्द
१०. वेदाङ्गप्रकाश (सम्पूर्ण १४ भाग)	८॥≡)	,, ,,
११. पातञ्जल महाभाष्य (सम्पूर्ण)	४०)	नेट
१२. गद्यमयं महाभारतम्	३)	आचार्य राजेन्द्रनाथ शास्त्री
१३. दयानन्द दिग्विजयम् (पूर्वार्द्ध)	४)	आचार्य मेधाव्रत कविरत्न
१४. ,, ,, (उत्तरार्द्ध)	५)	,, ,,
१५. कुमुदिनीचन्द्रः गद्यकाव्यम्	४)	,, ,,
१६. प्रकृतिसौन्दर्यम् नाटकम्	१)	,, ,,
१७. विरजानन्दचरितम् (पद्यकाव्यम्)		,, ,, (प्रेस में)
१८. ब्रह्मचर्यमहत्त्वम् (पद्यकाव्यम्)	॥)	,, ,,
१९. संस्कृत व्यवहारभानुः (पद्यकाव्यम्)	१)	विद्यानिधि शास्त्री
२०. मुनिचरितामृतम् (पद्यकाव्यम्)	१)	दिलीपदत्तोपाध्यायः
२१. व्याख्यानमाला (विशिष्टश्लोकसंग्रहः)	१॥)	अच्युतानन्द सरस्वती
२२. सिद्धान्तकौमुदी की अन्त्येष्टि	।–)	आचार्य राजेन्द्रनाथ शास्त्री
२३. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका	२॥)	महर्षि दयानन्द सरस्वती
२४. संस्कारविधि	।।।=)	,, ,, ,,
२५. महर्षि दयानन्द का प्रामाणिक जीवनचरित भाग १	६)	देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय
२६. महर्षि दयानन्द का प्रामाणिक जीवनचरित भाग २	६)	,, ,,
२७. दयानन्दायन (हिन्दी महाकाव्य)	४)	श्री गदाधरसिंह कविरत्न
२८. सन्ध्या अष्टाङ्ग योग	।।।)	स्वामी आत्मानन्द सरस्वती

सुधारक के प्राप्य विशेषाँक

(१) गो—अङ्क ॥) (२) व्यायाम विशेषाङ्क १) (३) भोजन विशेषाङ्क १)

२॥) मनीआर्डर से भेजने पर डाक व्यय माफ

आगामी प्रकाशन

१. राष्ट्र निर्माण में धर्म का स्थान
२. ,, अर्थ का स्थान
३. ,, काम का स्थान
४. संस्कृत अध्यापक भाग १ तथा २
५. ब्रह्मचर्य के साधन भाग ६ (प्राणायाम)
६. ,, ,, भाग ७ (सत्सङ्ग)
७. ब्रह्मचर्य के साधन भाग ८(स्वाध्याय)
८. ,, ,, भाग १० (निद्रा)
९. ,, ,, भाग ११ (विशेष नियमादि)
१०. आर्येन्द्रचारुचरितम्।
११. योगदर्शन व्यासभाष्य सरल हिन्दी अनुवाद सहित

विश्वम्भर वैदिक पुस्तकालय गुरुकुल झज्जर [रोहतक]

संस्था समाचार

गुरुकुल झज्जर में आयुर्वेद महाविद्यालय को उद्घाटन समारोह को इसी श्रावणी-पर्व पर करने का विचार है। भवनों की कमी है। चिनाई प्रारम्भ कर रहे हैं। धन की बड़ी आवश्यकता है। ईश-विश्वास तथा सहृदय-सहयोगियों के सहयोग से ही कार्य प्रारम्भ किया है। जिन प्रेमी-सज्जनों ने आयुर्वेद-महाविद्यालय के लिये धन देने का सङ्कल्प किया हुआ है, कृपया उस धन को भिजवा कर अनुगृहीत करें। जिससे कार्य के प्रारम्भ करने में कठिनाई न हो।

आयुर्वेद-महाविद्यालय के लिये श्री चौ० छाजूराम जी आर्य-सरपञ्च गोच्छी ने ५०१) तथा श्री जयदेव जी आर्य-टिटोली ने १०१) प्रदान करने का वचन दिया है। इसके लिये धन्यवाद। आशा है धन शीघ्र भिजवाकर अनुगृहीत करेंगे।

छात्र-प्रवेश

गुरुकुल में छात्र-प्रवेश ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में होता है, अनेक सज्जन प्रवेश के विषय में पूछ-ताछ करते रहते हैं, अतः सूचना दी जा रही है। छात्र-प्रवेश प्रारम्भ हो रहा है तथा दीपमाला तक रहेगा। जो सज्जन अपने पुत्र, भाई आदि को प्रविष्ट कराना चाहें वे प्रवेश नियम और आवेदन-पत्र कार्यालय से मंगवालें।

विवाह संस्कारों पर दान

विविध विवाहों पर गुरुकुल के प्रेमी-महानुभावों ने निम्न दान दिया है, उनके लिये धन्यवाद। आशा है अन्य सज्जन भी संस्कारों के शुभ अवसर पर गुरुकुल का ध्यान रक्खेंगे।

१०१)	श्री डा० सोमवीर जी रिटौली (रोहतक)
१०१)	श्री प्रतिपाल जी जूई (हिसार)
१५)	श्री पृथ्वीसिंह जी मण्डेला देहली
११)	श्री उमराव सिंह जी खिरनी (बिजनौर)
१०)	श्री रतीराम जी आंवली (रोहतक)
५)	गृगनसिंह जी खरहर
५)	श्री पं० रघुनाथ जी खरहर
५)	श्री गणेशीराम जी आंवली
५)	जमा० शिवलाल जी खेड़ीजट
५)	श्री जागेराम जी कोठ
५)	श्री नेकीराम जी भूरावास
५)	श्री ताराचन्द जी ढाणी भालोट झुन्झुनू
५)	श्री गृगनराम जी " " "

(गोशाला के लिये)

निवेदक—मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

पता
ग्राहक संख्या ८४२
सेवा में श्री वि० जगदीशचन्द्र जी
मुरारी ब्रादर्स
मु०
पो० कमलानगर
जि० देहली

सुधारक पर सम्मति

“भोजनाङ्क” को प्राप्त कर मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई। आज कल जब भारत में खान-पान की रीतियाँ दिन प्रतिदिन बिगड़ती जा रही हैं तब आपने “सुधारक” का भोजन विशेषाङ्क प्रकाशित कर भारतीय जनता पर मानो उपकार किया है। यह अंक सारगर्भित होते हुये प्रत्येक परिवार के लिए अत्युपयोगी है।

—पुरुषोत्तम वासवाणी (नासिकसिटी)

प्रकाशक आचार्य भगवानदेव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) का सचित्र मासिक पत्र

सुधारक

पुनन्तु मा देवजनाः।।

वर्ष २
अङ्क १२

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) भाद्रपद सं० २०१२ वि०
अगस्त १९५५—दयानन्दाब्द १३१

वार्षिक मूल्य २)
एक प्रति ≡)

देव दयानन्द का दिव्य सन्देश

मनुष्य उसी को कहना कि मननशील हो कर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे, अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे, इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व-सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ निर्बल और गुणरहित क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उस का नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे, इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें परन्तु इस मनुष्य रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।

—सत्यार्थप्रकाश-स्वमन्तव्यामन्तव्य

संस्थापक व सम्पादक—ब्र० भगवान्देव आचार्य
गुरुकुल झज्जर, रोहतक

सह-सम्पादक—पं० विश्वप्रिय शास्त्री
साहित्यरत्न

व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० वेदव्रत
सिद्धान्तवाचस्पति

सह-व्यवस्थापक—भाष्याचार्य ब्र० सुदर्शनदेव
सिद्धान्तवाचस्पति

चन्दा समाप्त

कृपया चन्दा भेजिये

विषय—क्रम—दर्शक

विषय	लेखक	पृष्ठ
१–जीवनोत्थान का साधन-स्वाध्याय	सम्पादकीय	३ से ५
२–सूफी अम्बाप्रसाद की जीवन झांकी	ब्र० वेदव्रत	६ से ९
३–पित्त के दाने जब खतरनाक हो जाते हैं	श्री रामेश वेदी	१० से ११
४–सर्प विष-चिकित्सा	आचार्य भगवान् देव	१२ से १५
५–राष्ट्र-निर्माण में धर्म का स्थान	मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति	१६ से १८
मस्तक विद्या	श्रीमती चंचल बहिन मणिकलाल	१९

* * *

सुधारक के नियम

१—सुधारक अंग्रेजी महीने की १० ता० को डाकखाने में डाला जाता है। यदि २० ता० तक न मिले तो अपने पोस्ट आफिस में पूछताछ करनी चाहिये। फिर भी न मिले तो हमें लिखने पर और भेज दिया जायेगा।

२—लेख छोटे, सारगर्भित तथा कागज के एक ओर सुन्दर और सुपाठ्य लिखे हुये हों।

३—लेख में उचित परिवर्तन करना, प्रकाशित करना या न करना सब सम्पादक के आधीन है। अस्वीकृत लेख पोस्टेज भेजने पर ही वापिस लौटाया जा सकेगा।

४—वेद विरुद्ध लेखों का प्रकाशन सुधारक में न हो सकेगा।

५—सिद्धान्त विरुद्ध, अश्लील और मिथ्या विज्ञापनों के लिये "सुधारक" में स्थान नहीं है। इतना होते हुये भी विज्ञापन की सत्यता का उत्तरदायित्व हम पर नहीं है।

६—व्यवस्थापक सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार तथा मनिआर्डर आदि "व्यवस्थापक—सुधारक" के नाम से भेजने चाहियें, किसी व्यक्ति के नाम न भेजें। साथ ही ग्राहक अपनी संख्या अवश्य लिखें।

७—एजेण्टों को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है और ५ से कम की एजेन्सी नहीं दी जाती। विज्ञापन का धन अगाऊ भेजना आवश्यक है

८—सब पत्र व्यवहार हिन्दी तथा संस्कृत में ही करें। उर्दू, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं में पत्र व्यवहार न करें। पत्रोत्तर के लिये जवाबी कार्ड भेजें।

विज्ञापन दर

	पूरा पृष्ठ	आधा पृष्ठ	चौथाई पृष्ठ
एक बार	१६)	९)	५)
तीन बार	४०)	२४)	१३)
छः बार	७५)	४५)	२५)
१ वर्ष तक	१३०)	७५)	४५)

टाईटिल अन्तिम १५% अधिक।

,, तृतीय १०% अधिक

विशेषांक में सवाया। कम से कम ४)

सम्पादकीय—

जीवनोत्थान का साधन-स्वाध्याय

और उसके लिये धार्मिक परीक्षाओं का आलम्बन

जीवनोत्थान के लिये, आत्मकल्याण के लिये यहाँ तक कि परमात्म-प्राप्ति के लिये भी स्वाध्याय एक उत्तम साधन है। स्वाध्याय के द्वारा साधारण व्यक्ति भी उच्च कोटि का महात्मा और विद्वान् बन सकता है, अपना और देश जाति का कल्याण कर सकता है, भूले भटकों का पथ-प्रदर्शक बन सकता है।

संसार में जितने भी महापुरुष हुये हैं वे सभी स्वाध्यायशील थे। स्वाध्याय के बिना न तो शारारिक उन्नति ही की जा सकती है और न ही आत्मिक। चाहे कोई कितना ही पण्डित क्यों न हो, यदि वह स्वाध्याय को छोड़ देता है तो अपने मार्ग से च्युत हो जाता है।

अन्य सभी कार्यों के लिये अनध्याय की आज्ञा शास्त्रकारों ने दी है किन्तु स्वाध्याय और नित्य कर्मों के लिये एक दिन के लिये भी अनध्याय की आज्ञा नहीं है। महाराज मनु लिखते हैं—"स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्यात्" अर्थात् स्वाध्याय नित्य प्रति अवश्य ही करना चाहिये।

> वेदोपकरणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यिके।
> नानुरोधोऽस्त्यनध्याये होममन्त्रेषु चैव हि॥१॥
> नैत्यिके नास्त्यनध्यायो ब्रह्मसत्रं हि तत्स्मृतम।
> ब्रह्माहुतिहुतं पुण्यमनध्यायवषट्कृतम् ॥२॥
> (मनु० अ० २ श्लोक १०५।१०६)

महर्षि दयानन्द जी इन श्लोकों का अर्थ करते हुये सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं—"वेद के पढ़ने पढ़ाने, सन्ध्योपासनादि पञ्च महायज्ञों के करने और होममन्त्रों में अनध्यायविषयक अनुरोध (आग्रह) नहीं है, क्योंकि ॥१॥ नित्य कर्म में अनध्याय नहीं होता जैसे श्वास प्रश्वास सदा लिये जाते हैं बन्द नहीं किये जा सकते, वैसे ही नित्य कर्म प्रतिदिन करना चाहिये। न किसी दिन छोड़ना, क्योंकि अनध्याय में भी अग्निहोत्रादि उत्तम कर्म किया हुआ पुण्य रूप होता है, जैसे झूठ बोलने में सदा पाप और सत्य बोलने में सदा पुण्य होता है वैसे ही बुरे कर्म करने में सदा अनध्याय और अच्छे कर्म करने में सदा स्वाध्याय ही होता है।"

इतना ही नहीं किन्तु किसी नौकरी से या अन्य किसी ऐसे ही कार्य करने में यदि स्वाध्याय करने में बाधा पड़े तो उस कार्य को भी छोड़ देना चाहिये, किन्तु आत्मकल्याणकारी स्वाध्याय को न छोड़—"सर्वान् परित्यजेदर्थान् स्वाध्यायस्य विरोधिनः"

हमारा जन्म से मृत्युपर्यन्त सम्पूर्ण जीवन ही स्वाध्यायमय होना चाहिये। मानव जीवन, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास इन चार आश्रमों में विभक्त किया गया है। प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम तो है ही स्वाध्याय प्रधान, उसमें विद्याध्ययन करते हुये शारीरिक तथा आत्मिक बल की प्राप्ति की जाती है।

जब ब्रह्मचारी स्नातक होकर द्वितीय आश्रम में जाता है तब उसको आचार्य पुनः सावधान करता है—"स्वाध्यायान्मा प्रमदः" "स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्" (७–११)

हे अन्तेवासिन! तू स्वाध्याय को मत छोड़ देना, स्वाध्याय और प्रवचन नित्यप्रति अवश्य करना चाहिये।

वानप्रस्थ आश्रम भी स्वाध्यायादि के द्वारा संन्यास की तैयारी के लिये है। और चतुर्थ एवं अन्तिम संन्यास आश्रम में भी स्वाध्याय की आवश्यकता का विधान अति प्रबल शब्दों में शास्त्रकारों

ने किया है । महर्षि मनु लिखते हैं–

संन्यसेत्सर्वकर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत् ।
वेदसंन्यासतः शूद्रस्तस्माद्वेद न संन्यसेत् ॥

अर्थात् संन्यासी अन्य सभी सांसारिक भोग-विलास की सामग्री को छोड़ दे किन्तु वेद को कभी न छोड़े, उसका स्वाध्याय तो प्रतिदिन अवश्य ही करे । क्योंकि वेदों के स्वाध्याय को छोड़ देने से मनुष्य शूद्र=म्लेच्छ हो जाता है ।

पाठक वृन्द ! आप भली भान्ति समझ गये होंगे कि प्रत्येक व्यक्ति के लिये स्वाध्याय करना कितना आवश्यक दैनिक कर्म है, अतः आज से ही स्वाध्याय प्रारम्भ कर दीजिये और इस स्वाध्याययज्ञ को नियमित रूप से चलाइये, पूरी सावधानता के साथ चलाइये, देखना ! यह स्वाध्याय-यज्ञ विच्छिन्न न होने पाये, यह पवित्र स्वाध्याय व्रत टूट न जाये । यदि एक दिन भी नागा (विना स्वाध्याय किये) चला गया तो यह न समझना कि केवल एक ही तो दिन विना स्वाध्याय के गया है अपितु यह एक दिन का विच्छेद वर्षों से चलाये हुये व्रत को तोड़ देगा और पुनः नये सिरे से साधना प्रारम्भ करनी होगी । इस प्रकार इस एक दिन की पराङ्मुखता से वर्षों का अन्तर पड़ जायेगा ।

हम सभी एक रोग से ग्रस्त हैं, और वह भयङ्कर रोग है स्वाध्यायपराङ्मुखता । हमें स्वाध्याय से प्रेम ही नहीं है, इस श्रेयो मार्ग की ओर हमारी रुचि भी नहीं है । हम शान्तचित्त से बैठकर प्रतिदिन केवल एक घण्टा भी स्वाध्याय नहीं करते, किन्तु मित्र तथा सहवासियों के साथ गप्पें मारते-मारते घण्टे और दिन व्यतीत हो जाते हैं । यदि इसी अमूल्य समय को व्यर्थ न खोकर प्रतिदिन केवल एक घण्टा भी स्वाध्याय किया जाये तो एक वर्ष में न्यून से न्यून सौ-सौ पृष्ठों की तिहत्तर पुस्तकें सरलता से पढ़ी जा सकती हैं । सामान्यतया एक घण्टे में कम से कम २० पृष्ठ तो प्रत्येक व्यक्ति पढ़ ही सकता है और इसी एक घण्टे के हिसाब से वर्ष में ७३०० पृष्ठों का स्वाध्याय किया जा सकता है और इसी प्रकार निरन्तर स्वाध्याय करते रहने से आप विचारिये इतने लम्बे जीवन काल में कितना गम्भीर स्वाध्याय किया जा सकेगा और उसका फल योग दर्शन के भाष्यकार महर्षि व्यास जी के ही शब्दों में पढ़िये—

स्वाध्यायाद् योगमासीत, योगात्स्वाध्यायममनेत् ।
स्वाध्याययोगसम्पत्या, परमात्मा प्रकाशते ॥

प्रथम स्वाध्याय करे, तदनन्तर योग = समाधि लगानी चाहिये, और उस योग से स्वाध्याय का मनन करे । इस प्रकार स्वाध्याय और योग रूपी उत्तरारणी तथा अधरारणी (दीपशलाका) के संघर्षण से आत्मा का और क्रमशः परमात्मा का भी प्रकाश हो जाता है । अस्तु ।

इस स्वाध्याय के विषय में उत्पन्न हुए अरुचि के रोग की चिकित्सा के लिये, आलस्य प्रमाद रूपी महाशत्रु को दूर खदेड़ने के लिये हमें धार्मिक परीक्षाओं का आलम्बन = आश्रय ग्रहण करना चाहिये । इन परीक्षाओं के द्वारा इस स्वाध्याय पराङ्मुखता की चिकित्सा भली भान्ति की जा सकती है । यदि मनुष्य अपना धर्म समझ कर प्रतिदिन धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय नहीं कर सकता है तो उसे धार्मिक परीक्षाओं के मिष से ही स्वाध्याय कर लेना चाहिये ।

९९ प्रतिशत छात्र अपने समय को यार दोस्तों के साथ गप्पें मारने में और आलस्य में पड़े रह कर व्यर्थ ही नष्ट कर देते हैं । वे इस समय धार्मिक स्वाध्याय करें तो कितनी उन्नति कर सकते हैं, यह स्वयं ही अनुभव करने की वस्तु है । अतः विद्यार्थियों को अपने पाठ्यक्रम से बचे हुए समय में धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय कर उनकी परीक्षा अवश्य देनी चाहिये ।

विना परीक्षा के, विना उद्देश्य के और विना अपने लक्ष्य की पूर्ति के स्वाध्याय की ओर मनुष्यों की रुचि नहीं होती । इसी बात को ध्यान में रख कर आर्यसमाज के अग्रणी नेता और विद्वानों ने मिल कर देहली में "विरजानन्द संस्कृत परिषद्" की

स्थापना की थी। इस संस्था के द्वारा अब तक संस्कृत की चार परीक्षायें प्रति वर्ष ली जाती थीं–१ संस्कृत प्रसून, २ संस्कत-विनोद, ३ संस्कृत-विज्ञ और ४ संस्कृत-प्रवीण।

किन्तु इस वर्ष से हिन्दी की भी चार परीक्षायें चालू कर दी गई हैं––१ सिद्धान्त-प्राज्ञ, २ सिद्धान्त-मणि, ३ सिद्धान्त-वागीश और ४ सिद्धान्त- प्रभाकर।

संस्कृत तथा हिन्दी की इन सभी परीक्षाओं में वे ही ग्रन्थ रखे गये हैं जो वैदिक धर्म के अविरुद्ध हैं। अतः इन परीक्षाओं के देने से परीक्षार्थी को वैदिक धर्म सम्बन्धी सभी सिद्धान्तों का पूर्ण परिचय हो जायेगा, जिससे आर्यसमाज के प्रचार कार्य में पर्याप्त सहायता मिलेगी, और वह वेग से आगे बढ़ेगा। उत्तमोत्तम हिन्दी-संस्कृत के धार्मिक ग्रन्थ स्वाध्याय के लिये मिलेंगे, जिससे जीवन का उत्थान होगा। छोटी आयु में पड़ी हुई आर्य सिद्धान्तों की की छाप आजीवन अमिट रहेगी। वैदिक धर्म का प्रचार=आर्यसमाज के कार्य का विस्तार और लोगों को आर्य बनाने का, धार्मिक परीक्षायें उत्तम साधन हैं। इन लाभों को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक आर्य संस्था का तथा प्रत्येक आर्य स्त्री पुरुष का और आर्य-कुमार का कर्त्तव्य है कि वह इनके प्रचार और विस्तार में सहयोग दे।

इस वर्ष परीक्षायें नवम्बर में हो रही हैं जो भी सज्जन परीक्षायें देना चाहें वे १५ अगस्त तक आवेदन-पत्र भरकर परीक्षा कार्यालय (विरजानन्द संस्कृत परिषद्, सीताराम बाजार, देहली-६) में भेजे। जहां भी पांच परीक्षार्थी हों वहां पर नया केन्द्र स्थापित किया जा सकता है। केन्द्र स्थापना के लिए, आवेदन पत्र और पाठविधि आदि के लिए उक्त कार्यालय को लिखें वहां से आपको विना मूल्य सब सामग्री प्राप्त हो जायगी।

संस्कृत और हिन्दी की परीक्षायें क्रमशः होंगी अर्थात् नवम्बर के प्रथम दो रविवारों को संस्कृत की, और तृतीय चतुर्थ रविवार को हिन्दी की। इस प्रकार एक परीक्षार्थी दोनों परीक्षाओं में भी सम्मिलित हो सकता है।

आशा है आय नर-नारी हमारी प्रार्थना पर ध्यान देकर आर्यसमाज के इस प्रचार कार्य में परिषद् के कार्य कर्त्ताओं को सर्वप्रकारेण सहयोग देंगे।

* * *

हर्ष-समाचार

१––इस अंक के साथ 'सुधारक' अपने शैशव के दो वर्ष पूर्ण कर रहा है। इसी उपलक्ष्य में तृतीय वर्ष का (सितम्बर का) प्रथम अंक "सत्सङ्ग-स्वाध्यायाङ्क" पाठकों को भेंट किया जायेगा। पूर्व की भान्ति दो मास का न होकर यह अंक केवल एक ही मास का होगा। इस अंक में अपने विषय की अपूर्व सामग्री पाठकों को मिलेगी। पृष्ठ संङ्ख्या ५० पुस्तकाकार, मूल्य ।।) होगा, किन्तु ग्राहकों को इसी मूल्य में दिया जायेगा। अतः २) मनीआर्डर से भेज कर ग्राहक बनिये। साथ-साथ यह भी सूचित किया जाता है कि जिन सहयोगी ग्राहक महानुभावों का चन्दा इस अंक के साथ समाप्त हो जाता है वे तुरन्त २) मनीआर्डर से भेज दें, अन्यथा अगला "सत्संग-स्वाध्यायाङ्क" उनकी सेवा में नहीं भेजा जा सकेगा।

२–एक और शुभ समाचार पढ़कर पाठकों के हर्ष की सीमा न रहेगी, वह यह है कि इसी २०×३०/८ बड़े आकार का पांच सौ (५००) से भी अधिक पृष्ठों का "बलिदानांक" सुधारक के तृतीय वर्ष के अन्त तक निकाला जायेगा। जिसमें लगभग ५० वीरों के सुरम्य चित्र भी होंगे। तैयारी प्रारम्भ को जा चुकी है चित्रों के लिये ब्लाक बनवाये जा रहे हैं। इस बृहत्काय विशेषाङ्क का विवरण आगामी अङ्क में पढ़िये।

३—प्रेमी पाठकों से प्रार्थना है कि सुधारक की ग्राहक सङ्ख्या बढ़ाकर हमें इस पवित्र सुधार-यज्ञ में सहयोग दें। प्रत्येक प्रेमी पाठक पाँच-पाँच ग्राहक अवश्य बनाये। जब आप हमें सहयोग देंगे तब हम और वेग से इस शुभ कर्म में अग्रेसर होंगे, तथा अधिक सेवा कर सकेंगे।

जो सज्जन पाञ्च नये ग्राहक बनाकर चन्दा कार्यालय में भेज देंगे, उनको एक वर्ष तक सुधारक बिना मूल्य दिया जायेगा।

व्यवस्थापक "सुधारक"
गुरुकुल झज्जर, जि० रोहतक

सूफी अम्बाप्रसाद के जीवन की झांकी

देशभक्त की समाधि

[ब्र० वेदव्रत गुरुकुल झज्जर]

इस पवित्र भारत भूमि पर सहस्रों देशभक्त हुए हैं जिन्होंने भारत को स्वतन्त्र कराने के लिये अपना सर्वस्व न्योछावर किया है। जिन्होंने निःसंकोच भाव से स्वाधीनता के यज्ञ में अपनी आहुति दी है, पराधीनता की जञ्जीरों से जकड़ी हुई, पददलित हुई अपनी जन्म भूमि को बन्धनमुक्त कराने के लिये, उन्नति के शिखर पर चढ़ाने के लिये, सोई हुई आर्य जाति को जगाने के लिये, लुप्त हुये प्राचीन गौरव को पुनः प्राप्त करने के लिये, जन्म मृत्यु के खेल को हंस-हंस कर खेला है। ऐसे वीर शिरोमणियों में से एक वीर श्री अम्बाप्रसाद जी सूफी थे।

ये सच्चे देश-भक्त थे, इनके हृदय में देश को स्वतन्त्र बनाने के लिये दुःख था, दर्द था और था सर्वस्व स्वाहा करने का महान् सङ्कल्प। वे भारतमाता की प्रतिष्ठा देखना चाहते थे, और चाहते थे इसे सब देशों का मुकुटमणि बनाना। इन देशभक्तों के विषय में बहुत कम व्यक्ति हैं, जो कुछ जानते हैं। इन भारतीय वीरों की यशोगाथा अतीत के निबिड अन्धकार में निहित है।

सूफी जी अंग्रेजों के भारत दमन काल में उत्पन्न हुये तथा ईरान दमन के समय में सन् १९१५ में कारागृह की काल कोठड़ी में समाधि लगाई और नश्वर देह को छोड़ दिया।

सूफी अम्बाप्रसाद का जन्म ऐसे समय में हुआ जब सन् सत्तावन के गदर की युद्धाग्नि भलीभान्ति शान्त न हो पाई थी, अंग्रेज सरकार भारतीय जनता का दमन कर अपना साम्राज्य स्थापित कर रही थी। तभी सन् १८५८ में मुरादाबाद में सूफी जी का जन्म हुआ। इनका दाहिना हाथ जन्म से ही कटा हुआ था, अतः ये हंसी में कहा करते थे—"अरे भाई हमने सन् सत्तावन में अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध किया था। हाथ कट गया, मृत्यु हो गई, पुनर्जन्म हुआ, हाथ कटे का कटा आ गया।

शिक्षा

आपकी शिक्षा, मुरादाबाद, बरेली, जालन्धर आदि में हुई। एफ० ए० उत्तीर्ण करने के उपरान्त आपने वकालत पढ़ी, किन्तु की नहीं। उर्दू के प्रभावशाली लेखक होने के कारण सूफी जी ने लेखन कला को ही अपनाया। आप पांव से लेखनी पकड़ कर भी भली-भान्ति लिख सकते थे।

कार्य क्षेत्र में

३२ वर्ष की अवस्था में आप कार्यक्षेत्र में आये और सन् १८९० में अपने जन्म स्थान मुरादाबाद से ही उर्दू का साप्ताहिक पत्र "जाम्युल अलूम" निकालना प्रारम्भ किया। ये हास्यरस के प्रसिद्ध लेखक थे, किन्तु गम्भीरता भी कुछ कम न थी, साप्ताहिक पत्र का प्रत्येक शब्द इनकी अन्तस्थिति का परिचय देता था।

इसी समय भोपाल स्टेट में रेजिडेण्ट कुछ गड़बड़ कर रहे थे और स्टेट को हड़पना चाहते थे। वहां की स्थिति जानने के लिये 'अमृतबाजार पत्रिका' की ओर से सूफी जी को भेजा गया। सूफी जी एक पागल का रूप बनाकर रेजिडेण्ट के पास नौकरी के लिये गये। उनको केवल भोजन पर ही नौकर रख लिया गया! जब यह पागल (गुप्तचर) पात्र मांजता था, तब मिट्टी में लथपथ हो जाता था, मुखादि अंगों पर मिट्टी का लेप कर लेता था। किन्तु बाजार से वस्तुयें लाने में बड़ा ही निपुण था अतः वस्तु खरीदने के लिये इसी को भेजा जाता था।

उधर 'अमृत बाजार पत्रिका' में रेजिडेण्ट के विरुद्ध लेख सूचना आदि पर्याप्त संख्या में निकलने लगे। अन्त में उसकी ऐसी दुर्गति बनाई गई कि उसको पदच्युत कर दिया गया।

इधर रेजिडेण्ड ने कह रखा था कि जो कोई मेरे भेद खोलने वाले को पकड़वायेगा, उसे पारितोषिक दिया जायेगा।

जब रेजिडेण्ट पदच्युत होकर रियासत से बाहर निकल गया, तब वही पागल सा व्यक्ति हैट लगाये हुये, पतलून कोट बूट पहने हुये उसकी ओर आया। उसे देखकर रेजिडेण्ट आश्चर्य-चकित हो गया। उसने विचारा-यह तो वही पागल है जो मेरे पात्र-मांजता था, किन्तु आज पागल नहीं है, उसने आते ही अंग्रेजी में वार्तालाप आरम्भ कर दिया। फिर क्या था, रेजिडेण्ट के पांवों के नीचे से भूमि निकल गई और कांपने लगा। अन्त में रेजिडेण्ट ने कहा कि—तुमको पारितोषिक तो दे दिया है अब मेरे पास क्यों आये हो?

"आपने कहा था कि जो मनुष्य मेरा भेद खोलने वाले गुप्तचर को पकड़वायेगा, उसको पारितोषिक दिया जायेगा।"

रेजिडेण्ट ने कहा—हाँ, कहा तो था, क्या तुमने उसे पकड़ लिया? उत्तर में सूफी जी ने कहा—हाँ, हाँ पारितोषिक दीजिये वह गुप्तचर मैं स्वयं ही हूँ।

रेजिडेण्ट ने क्रोध से कांपते हुये कहा—"यदि राज्य के अन्दर ही मुझे तेरा पता लग जाता तो बोटी-बोटी उड़वा देता।" किन्तु अब उसके पास क्या शक्ति थी, जो कुछ कर सके। उसने अपने कथनानुसार सूफी जी को एक सोने की घड़ी दी और कहा-"यदि तुम को स्वीकार हो तो मैं गुप्तचर-विभाग से १०००) मासिक वेतन दिलवा सकता हूँ।" किन्तु उस देश भक्त के हृदय में धनैषणा न थी, उसने उत्तर दिया—"यदि वेतन ही लेना होता तो तुम्हारे बर्तन क्यों साफ करता।"

सन् १८९७ में आपको राजद्रोह के अपराध में डेढ़ वर्ष का कारावास दण्ड मिला। जब १८९९ में छूटकर आये तब उत्तर प्रदेश के छोटे छोटे राज्यों में अंग्रेज सरकार हस्तक्षेप कर रही थी। सूफी अम्बाप्रसाद जी ने वहां के तात्कालिक राज्याधिकारियों का भाण्डा फोड़ किया, अत एव इन पर मिथ्यादोष आरोपण कर अभियोग चला दिया और ६ वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दिया तथा इनकी समस्त धन सम्पत्ति (जायदाद) जप्त कर ली गई। जेल में ही उनको अनेक यातनायें सहन करनी पड़ीं, किन्तु वह देशभक्त कभी अपने मार्ग से विचलित होकर पथभ्रष्टों की पंक्ति में सम्मिलित न हुये।

सूफी जी को एक गन्दी कोठरी में बन्द कर दिया था इसलिये वे रुग्ण हो गये, रुग्ण हो जाने पर औषधि तो क्या, पानी का भी ठीक प्रबन्ध न किया गया। जेलर आता, और हंसता हुआ प्रश्न करता—"सूफी, तुम अभी तक जिन्दा हो?"

यथाकथञ्चित ६ वर्ष के कारावास को समाप्त कर १९०६ के अन्त में आप बाहर आये। सूफी जी का निजाम हैदराबाद से घनिष्ट सम्बन्ध था अतः जेल से छूटते ही हैदराबाद चले गये। निजाम ने उनके लिये एक सुन्दर भवन बनवाया और भवन के तैयार हो जाने पर निजाम ने कहा कि—"आप के लिये भवन तैयार हो गया है।" सूफी जी भी—"हम भी तैयार हो गये हैं" कहकर अपने वस्त्रादि उठाकर पंजाब की ओर चल दिये और लाहौर में आकर "हिन्दुस्तान" अखबार का कार्य करने लगे। आपकी कार्यकुशलता और वाक् पटुता को देखकर यहाँ भी सरकार की ओर से आप को १०००) मासिक गुप्तचर विभाग की ओर से मिल सकता था, किन्तु इस देशभक्त ने धन की अपेक्षा दरिद्रता और कारावास को ही श्रेष्ठ समझा, अतः ठुकरा दिया। कुछ दिन पीछे "हिन्दुस्तान" सम्पादक से भी आपकी न बनी, अतः त्यागपत्र दे दिया।

इन्हीं दिनों में सरदार अजीतसिंह ने "भारत-माता-सोसाइटी" की स्थापना की और पंजाब के "न्यूकालोनी-बिल" के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ

कर दिया। सूफी जी की उनसे मित्रता हो गई और वे भी इस आन्दोलन की ओर आकृष्ट हुए।

सन् १९०७ में पंजाब में देशभक्तों को अंग्रेज सरकार ने पुनः पकड़ना प्रारम्भ कर दिया, अतः सरदार अजीतसिंह के भाई *किशनसिंह और "भारतमाता-सोसाइटी" के मन्त्री मेहता आनन्दकिशोर, सूफी जी के साथ नैपाल चल दिये। वहाँ पर नैपाल राज के गवर्नर श्री जङ्गबहादुर जी से सूफी जी का परिचय हो गया और उन्होंने इनके साथ अच्छा व्यवहार किया। पश्चात् सूफी जी को आश्रय देने के अपराध में गवर्नर श्री जङ्गबहादुर को पदच्युत कर दिया गया और उनकी धन-सम्पत्ति जप्त रक्खी गई। सूफी जी को भी नैपाल से पकड़कर लाहौर लाया गया और लाला पिण्डीदास जी के "इण्डिया" पत्र में प्रकाशित लेखों के विषय में इन पर अभियोग चलाया गया, किन्तु निर्दोष होने पर इनको छोड़ दिया गया। तदुपरान्त सरदार अजीतसिंह को भी छोड़ दिया गया।

सन् १९०८ में सूफी जी और सरदार अजीतसिंह जी ने "भारत माता-बुक-सोसाइटी" की स्थापना की। इसका अधिकतर कार्य सूफी जी ही किया करते थे। इसी संस्था की ओर स सूफी जी ने 'बागी मसीह' या 'विद्रोही ईसा' पुस्तक का प्रकाशन किया, उसको सरकार ने जप्त कर दिया।

इसी वर्ष लोकमान्य तिलक पर अभियोग चलाया गया और उनको ६ वर्ष के कारावास का दण्ड मिला। उस समय "देशभक्त मण्डल" के सभी सदस्य साधु बनकर पर्वतों की यात्रा करने के लिये चल दिये। उनके साथ एक भक्त (गुप्तचर) भी आया जो कि बूट सूट लगाकर पूरा जैण्टिलमैन बना हुआ था। जब साधु इकट्ठे होकर बैठे तब भक्त ने सूफी जी के चरणों पर शिर झुकाकर नमस्ते की और पूछा—"बाबा जी आप कहाँ रहते हैं?" सूफी जी भोले भाले न थे, पक्के गुप्तचर थे अतः वे इस बगुले भक्त को पहिचान गये और कठोर शब्दों में उत्तर दिया—"रहते हैं तुम्हारे शिर में"

भक्त ने कहा—"साधु जी आप नाराज क्यों हो गये?" सूफी जी ने उत्तर दिया—"अरे मूर्ख तूने मुझे ही क्यों नमस्कार किया? और भी अनेक साधु बैठे हैं, इनको क्यों नहीं किया?" भक्त ने पुनः निवेदन किया कि—"महाराज मैंने आपको ही बड़ा साधु समझा।"

सूफी जी ने कहा—"अच्छा, जाओ, खाने पीने की वस्तुयें लाओ।" भक्त कुछ काल पश्चात् उत्तमोत्तम पदार्थ लेकर आया। भोजन करने के उपरान्त सूफी जी ने उस को बुलाया और कहा-"क्यों बे। हमारा पीछा छोड़ेगा या नहीं?"

भक्त ने कहा—'भला मैं आप से क्या कहता हूँ जी?" सूफी जी ने उसको धमकाया-"क्यों चालाकी से बात करता है? आया है जासूसी करने, जा—जा अपने बाप से कह देना कि सूफी पहाड़ में गदर करने जा रहे हैं।" इतना सुनते ही गुप्तचर सूफी जी के चरणों पर गिर गया और कहने लगा-"महाराज! पेट के लिये सब कुछ करना पड़ता है।"

सन् १९०९ में सूफी जी ने 'पेशवा' नाम से एक पत्र निकाला। उन्हीं दिनों में बङ्गाल में क्रान्तिकारियों का आन्दोलन वेग से चल रहा था। सरकार को चिन्ता हो गई कि कहीं यह विद्रोहाग्नि पञ्जाब में भी न धधक उठे, इसलिये पहले ही जनता का दमन प्रारम्भ कर दिया।

दमन चक्र को देखकर सूफी जी, सरदार अजीतसिंह और ज्याउलहक ईरान जा पहुँचे। वहाँ जाकर ज्याउलहक के मन में लोभ आ गया। उसने विचारा कि इन दोनों को पकड़वा दूँ तो मुझे पारितोषिक मिल जायेगा और मैं दण्ड से भी बच जाऊँगा। किन्तु सूफी जी बड़े नीति निपुण व्यक्ति थे, वे उसकी विचारधारा को समझ गये, उन्होंने उसी को आगे भेज दिया, उसने वहां रिपोर्ट की और स्वयमेव पकड़ा

---

* ये सरदार किशनसिंह और सरदार अजीतसिंह दोनों भाई कट्टर आर्यसमाजी सरदार अर्जुनसिंह जी के सुपुत्र तथा अमर शहीद मृत्युञ्जय सरदार भक्तसिंह के पिता और चाचा थे।

गया। सूफी जी और सरदार अजीतसिंह दोनों बच कर निकल गये।

सूफी जी ईरान में कैसे रहे और क्या किया, यह तो ज्ञात नहीं, किन्तु अंग्रेज सरकार ने वहां भी उनका पीछा न छोड़ा, गुप्तचर सदा पीछे लगे ही रहते थे। इसलिये इनको अनेक वार विपत्तियां उठानी पड़ीं।

एक स्थान पर सूफी जी को घेर लिया गया, वहां से निकलना कठिन होगया। वहां पर ऊँटों वाले व्यापारी ठहरे हुये थे, उनके ऊँटों पर अनेक सन्दूक वस्त्रादि से भरे हुये लद रहे थे। एक ऊँट के दोनों सन्दूकों में सूफी जी और सरदार अजीतसिंह को बन्द किया गया और वहां से बचाकर निकाला गया।

इसी प्रकार एक दिन किसी धनाढ्य व्यक्ति के घर ठहरे हुये थे, पुलिस को पता लग गया और उसने घेरा डाल दिया। उसी समय इन दोनों को बुरका पहनाकर स्त्रियों में बैठा दिया गया। पुलिस ने छानबीन की, अन्त में स्त्रियों की भी तलाशी आरम्भ की, एक दो स्त्रियों के बुरके उठाये भी गये, किन्तु मुसलमान लड़ने मरने को तैयार होगये, अन्य किसी महिला का बुरका नहीं उतारने दिया गया। इस प्रकार ये दोनों वहां से बच गये। जब-जब भी इन पर विपत्तियाँ आईं, सर्वदा इसी भान्ति चतुरता और कार्य पटुता के कारण बचते रहे।

इसके पश्चात् सूफी जी ने ईरान से ही "आबे-हयात" नाम का पत्र निकाला। सरदार अजीतसिंह जी टर्की चले गये और सम्पूर्ण कार्यभार इन्हीं पर आगया। इसलिये ये वहां पर "आक़ा सूफ़ी" के नाम से प्रसिद्ध होगये।

समाधि

सन् १९१५ में अंग्रेजों ने ईरान में अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहा, तब पुनः उथल-पुथल आरम्भ होगई. उस समय सीराज़ पर घेरा डाला गया, सूफी जी ने वहां बायें हाथ से रिवाल्वर चला कर अंग्रेज सरकार का सामना किया, अन्त में उनके वशवर्ती हो ही गये।

सूफी जी के सम्बन्ध में कोर्टमार्शल (सैनिक न्यायालय) में विचार किया गया तथा निश्चय हुआ कि सूफी जी को कल गोली से उड़ा दिया जाये। इस निर्णय को सुनकर सूफी जी ने उसी रात्रि को अपनी कारावास कुटीर में ही समाधि लगा कर पाञ्चभौतिक शरीर को त्याग दिया। ऐसे वीरों के लिये मरना भी जीवन है। नवीन उमङ्ग और नये उत्साह के साथ पुनः संसार मञ्च पर आते हैं और अपने कर्तव्य का नाटक खेल कर पुराना चोला बदलने के लिये चले जाते हैं।

सूफी जी के मृत्यु के वृत्तान्त को सुनकर सर्वत्र सन्नाटा छा गया, असंख्य नरनारी उनके शव के साथ गये थे। उनकी कब्र बनाई गई और वहां पर प्रतिवर्ष मेला लगाया जाता है। इस देश भक्त का नाम सुनकर ईरानी लोग अब भी श्रद्धा से शिर झुका लेते हैं।

स्वास्थ्य रक्षा तथा आयुर्वेद प्रचार का मासिक पत्र

"स्वास्थ्य"

कृष्ण गोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय की ओर से प्रकाशित इस पत्र में योग्य विद्वानों के लिखे हुये स्वास्थ्य तथा आयुर्वेद सम्बन्धी मौलिक लेखों के अतिरिक्त होमियोपैथी, यूनानी, प्राकृतिक चिकित्सा, मनोविज्ञान, योगासन महिला जगत, स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी आदि लेख प्रकाशित होते रहते हैं। प्रोफेसर, जज, वकील, अध्यापक, विद्यार्थी, व्यापारी, क्लर्क तथा मजदूर किसान वर्ग सब के लिए उपयोगी है। इसका प्रचार अफ्रीका, इंग्लैंड आदि देशों में भी हुआ है। सब प्रकार के वैज्ञानिक साधन जानना चाहें तो 'स्वास्थ्य' अवश्य पढ़ें।

वार्षिक मूल्य ३) रु० विदेशों में ६ शिलिंग
व्यवस्थापक "स्वास्थ्य"
पो० कालेड़ा—कृष्णगोपाल अजमेर

पित्त के दाने जब खतरनाक बन जाते हैं

लेखक—श्री रामेश वेदी, संचालक हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट, गुरुकुल कांगडी, हरिद्वार

मेरा परिवार गरमियों में हर साल शिमला जाया करता था। इस साल किन्हीं कारणों से जाना नहीं हुआ। मेरी पत्नी को आज तक ऐसी बुरी तरह पित्त कभी नहीं निकली! जैसी इस बार निकली है। यहां सचमुच आग बरस रही है। डाक्टर साहिब क्या किया जाय?

वह सो भी नहीं पाती थी

पिछले साल की बात है। ये एक बड़े घर के सज्जन पत्नी को साथ लेकर मुझ से परामर्श लेने आये थे। मैंने उन की पीठ की परीक्षा आरम्भ की। छोटे छोटे लाल रंग के घने दानों से वह बुरी तरह भरी हुई थी। नीचे धड़ की तरफ तो दाने कुछ विरले थे, परन्तु ज्यों-ज्यों ऊपर की तरफ जायें दाने घनता में बढ़ते जाते थे। गर्दन के पीछे और सामने की ओर दानों का आकार भी काफी बड़ा था। और इन के सफेद मुखों के अन्दर से पीप झांक रही थी। ब्लाउज़ को ऊपर उठाते हुये पित्त पर जो रगड़ लगी उस की वेदना रोगी को असह्य प्रतीत होती थी। त्वचा के किसी भी भाग को छूने से वह स्पष्ट रूप से विपरीत प्रतिक्रिया दिखाती थी। उस संत्रान्त युवती का चेहरा कष्ट से बहुत उद्विग्न दीखता था। वह न तो रात को सो पाती थी, और न दिन में। पित्त के दानों ने उस के प्रायः शरीर का सारा पृष्ठ आवृत्त कर लिया था। किसी की ओर करवट लेटना उसके लिये मुसीबत है। मैंने देखा कि दानों का इतना जोर है कि उस की गौर त्वचा के ऊपर सारी पीठ और छाती ऐसी लाल नजर आ रही थी कि जैसे उस स्थान की सूक्ष्म रक्तवाहिनियां अभी फट जायेंगी, उन से रक्त बह निकलेगा। पीठ और छाती के ऊपरले भाग पर और गर्दन पर जो दाने हैं उन में भरी हुई पीप में से विष रगों में बह रहा है और इस लिये इस सारे भाग में सोज आ गई है। इस से यह स्थान बहुत अकड़ गया है। गले की गिलटियां भी उभरने लगी हैं तथा दर्द करने लगी हैं। गरदन की पेशियां अकड़ जाने से रुग्णा को स्वतन्त्रता से गरदन घुमाने में भी व्यथा अनुभव होती है।

गरमी जब यौवन पर होती है तब पित्त के दाने निकलने प्रारम्भ हो जाते हैं। ऊपर दिये गये उदाहरण की तरह अनेकों स्त्री पुरुष पित्त का शिकार होने लगते हैं, आप को इस के सरल उपचार का ज्ञान रहना चाहिये, जिस से आप की और आप के बच्चों की परेशानी न बढ़े।

इस का इलाज

इस रोग में क्योंकि शरीर के अन्दर गर्मी अधिक बढ़ जाती है इस लिये इसे दूर करने के लिये सब शीतल उपायों को बरतना चाहिये। अन्तः प्रयोग में सामान्यतया किसी औषध की आवश्यकता नहीं पड़ती। बहुत अधिक उग्र अवस्थाओं में पश्चात्य चिकित्सक सल्फअनोमाइड आदि का प्रयोग करते हैं। जब दानों में पीप पड़ गई हो और शोथ हो तो अवधूलनों (डस्टिंग पाउडरों) में सल्फा औषधियां भी मिला ली जाती हैं। इससे तुरन्त लाभ दीखता है और दाने सूख जाते हैं। परन्तु इस लाक्षणिक चिकित्सा से फलतः रोग शान्त नहीं होता। वास्तविक चिकित्सा तो यह है कि शीतल भोजनों का प्रयोग किया जाय। ककड़ी, खीरा, सत्तू, तरबूज आदि का सेवन, शीतल जल धाराओं, झरनों, शावर बाथ्स का स्नान, ठण्डे पेयों का बराबर प्रयोग ये चीजें हैं, जिन का बार बार प्रयोग रोगी को शान्ति प्रदान करता है। समर्थ लोगों को घर की हर एक खिड़की और दरवाजे पर खस-खस की चटाइयां लगा कर पानी खूब छिड़कवाते रहना चाहिये।

स्थानिक उपचार

दानों की क्षोभ, गरमी, खुजली और जलन के शान्त करने के लिये शीतल ग्राही और क्षोभ शामक द्रव्यों का स्थानिक प्रयोग किया जाता है। इन द्रव्यों में सब से प्रसिद्ध गाचनी मिट्टी है। जिसे भारत में हजारों सालों से इस्तेमाल किया जा रहा है। गाचनी मिट्टी को मुल्तानी मिट्टी भी कहा करते हैं। चन्दन की तरह उसे घिस कर स्नान से पूर्व सारे बदन पर लेप कर देते हैं। लेप जितना गाढ़ा लगाया जाय उतना अच्छा रहता है। लेप जल्दी ही सूख जाता है। कुछ देर तक इसे लगा रहना चाहिये। फिर खुले पानी में नहाते हुये हाथों से मल मल कर धो डालना चाहिये।

चन्दन का प्रयोग

लेप और अवधूलन डस्टिंग पाउडर दोनों रूपों में सफेद चन्दन का प्रयोग होता है। पानी के साथ घिस कर इसे अकेला या गाचनी मिट्टी में मिला कर लेप किया जाता है। बारीक कपड़े में चन्दन का छाना हुआ चूर्ण दानों की अवधूलन की तरह छिड़का जाता है। स्नान के बाद शरीर को नरम तौलिये से पोंछ कर चन्दन को नरम रूई से या पफ से मोटी तह में दानों पर बिछाते जाना चाहिये। पित्त पाउडर के अनेक नुस्खों में चन्दन का चूर्ण या तेल मिलाया जाता है।

सौभाग्य जल

पित्त के दानों और खुजली को शान्त करने के लिये एक तोला सुहागे=सौभाग्य की खील एक पाव कपूर जल में घोल कर बनाये घोल को दानों पर रूई से लगाना चाहिये। नरम कपड़े या शोषक रूई को इस घोल में भिगो कर दानों पर रखें। जब गरम हो जाये तो निचोड़ कर दें। और फिर ठण्डे घोल में भिगो कर रखें। इस से रोगी को बहुत आराम मिलता है।

चावल का आटा

चावल के बारीक पिसे हुये आटे को भी डाक्टर बेअरिंग ने पित्त के दानों पर छिड़कने पर दाह, क्षोभ और गरमी को शान्त करने वाला पाया है। इस के लिये साफ चावलों को बारीक पीस कर कपड़े में छान लें। त्वचा पर इसे छिड़क कर मोटी तह बना दें। दानों पर यह बहुत शीतल और शामक दवा का काम करता है। इस लिये रोगी भी इसे लगाना पसन्द करता है।

पित्त पाउडर

बाजार में पित्त-पाउडरों के नाम से बिकने वाले पाउडरों में सामान्यतया निशास्ता सुहागा बोरिक एसिड, जस्ते का फूला आदि द्रव्य होते हैं। मेरे अनुभव में नीचे लिखा नुस्खा बहुत लाभदायक रहता है।

सुहागे का फूला या बोरिक एसिड १ तोला, जस्ते का फूला या जिंक ओक्साइड १ तोला, निशास्ता एमाइलम २ तोला, सफेद चन्दन का चूर्ण ६ माशा।

दानों में पड़ गई पीप को भी यह सुखाता है। त्वचा की शोथ और क्षोभ को शान्त करता है।

समालोचना

(समालोचना के लिये दो प्रतियां आनी चाहियें)

"वैदिक धर्म परिचय" पुस्तक हमारे सामने है। इसके लेखक हैं वैदिक सिद्धान्तों के मनस्वी विद्वान् श्री जगदेवसिंह जी शास्त्री सिद्धान्ती संस्थापक सम्राट् पहाड़ी धीरज देहली। पुस्तक का आकार प्रकार सुन्दर है। २०×३०/१६ पर छपी ६२ पृष्ठ वाली इस पुस्तक का मूल्य केवल दश आने है। प्रकाशक वैदिक साहित्यसदन, आर्यसमाज सीताराम बाजार देहली है।

वैदिक धर्म की प्रत्येक बात को पुस्तक में प्रश्न और उत्तर के रूप में समझाया गया है।

आर्यसमाज के शिक्षणालयों के लिये पुस्तक विशेष उपयोगी है। प्रत्येक नवयुवक के हाथ में पुस्तक का होना आवश्यक है।

ऐसे परमोपयोगी तथा सर्वसंग्राह्य ग्रन्थ के लिये लेखक बधाई के पात्र हैं। पुस्तकालय इसको मंगाकर अपने पुस्तकालय की शोभा को बढ़ायें।

—विश्वप्रिय शास्त्री

सर्पविष-चिकित्सा

(क्रमागत)

यह घटना सिद्ध करती है कि सर्प के न काटने पर भी भीरु मनुष्य केवल सर्प के सूंघ जाने से ही भयभीत हो, अपने आपको सर्प से डसा हुआ समझ बैठता है तो भय से उसके मन तथा वात-तन्तुओं पर भयङ्कर धक्का लगता है और सर्प विष के लक्षण प्रकट हो मृत्यु तक हो जाती है। सर्प-दंश के विषय में चरक-शास्त्र का मत निम्न प्रकार है—

गूढसम्पादितं वृत्तं पीडितं लम्बितार्पितम् ।
सर्पितं च भृशाबाधं दंशा ये ऽन्ये न ते भृशाः ॥
(चिकित्सा स्थान अ० २३-१३४)

अत्यन्त हानिकारक दंश

जो गहरे हों, गोल हों, पीड़ित अर्थात् जिसमें चार दाँतों के चिह्न हों और रक्त बहता हो अथवा लम्बा हो और जो सर्पित = एक स्थान से दूसरे स्थान पर गया हुआ हो, ऐसे दंश अत्यन्त हानिकारक होते हैं। ऐसे ही दंश का नाम सुश्रुत में सर्पित है। अन्य दंश इतनी हानि पहुँचाने वाले नहीं होते। सुश्रुत के समान अन्यत्र भी तुण्डाहत व्यालीढादि नाम देकर दश भेदों पर प्रकाश डाला है। विस्तार भय से यहाँ नहीं लिखा जाता।

चरक-शास्त्र का सर्प के दांतों और विष के विषय में इस प्रकार मत है--

सर्पदंष्ट्राश्चतस्रस्तु तासां वामाधरासिता ।
पीता वामोत्तरा दंष्ट्रा रक्तश्यावाऽधरोत्तरा ॥
(चिकित्सा स्थान अ० २३-१३६)

सांप के चार दाढ़ें होती हैं, उनमें से बाँये पक्ष में नीचे की ओर की कृष्ण होती हैं और ऊपर की पीली; दाहिना ओर नीचे की लाल तथा ऊपर की श्याम वर्ण की होती है।

सर्प विष की मात्रा

यन्मात्रः पतते विन्दुर्गोवालात्सलिलोद्धृतात् ।
वामाधरायां दंष्ट्रायां तन्मात्रं स्यादहेर्विषम् ॥१३७॥
एकद्वित्रिचतुर्वृद्धिर्विषभागोत्तरोत्तरा ॥

जल में से निकाले हुये गौ की पूंछ के बाल से जल की जितनी बूंद गिरती है उतना ही विष सांप की बाईं ओर की नीचे की दाढ में होता है। अन्य दांतों में उत्तरोत्तर अधिक होता जाता है। अर्थात वाम पार्श्व की नीचे की दाढ़ में एक बूंद, ऊपर की दाढ़ में दो बूंद, दाहिनी ओर की नीचे की दाढ़ में तीन बूंद और ऊपर की दाढ़ में चार बूंद विष होता है। अन्यत्र शास्त्रों में बिन्दु का प्रमाण मूंग के दाने के बराबर कहा है "मुद्गमात्रोऽत्र विन्दुः"। इसी विषय में चरक-शास्त्र में आगे लिखा है—

सवर्णास्तत्कृता दंशा बहूत्तरविषा भृशाः ॥
(चिकित्सा २३-१३८

सांप जिस दाढ़ से डसता है दंश स्थान का वर्ण भी वैसा ही हो जाता है। यदि बाईं ओर के नीचे के दान्त से डसे तो उसका रङ्ग काला होगा यदि ऊपर के दान्त से डसे तो पीला होगा। इसी प्रकार दाहिनी नीचे की दाढ़ से डसा हुआ दंश लाल और ऊपर की दाढ़ का डसा हुआ श्याम वर्ण का होगा।

दंष्ट्राओं का जिस क्रम से वर्णन है उत्तरोत्तर उन दंष्ट्राओं से डसे जाने पर अपेक्षया विष की मात्रा भी अधिक होती है। अतएव वे उत्तरोत्तर दुःखद वा कष्टसाध्य होते हैं। अर्थात् बायें भाग की नीचे की दाढ़ की अपेक्षा बाये की ऊपर की दाढ़ और बांये के ऊपर की दाढ़ की अपेक्षा दायें भाग की नीचे की दाढ़, तथा दायें की नीचे की दाड़ की अपेक्षा ऊपर की दाढ़ के दंश में विष अधिक होता है। इसी प्रकार चिकित्सा में भी अपेक्षया उसी प्रकार कठिनाई अधिक होती है।

पाठक इस बात का ध्यान अवश्य रखें कि पहले मण्डली, दर्वी, राजिमान् आदि सर्पों के जाति भेद से जो दंशों का वर्णन कहा गया है उसे देहमिश्रित (शरीर में प्रविष्ट) विष में जानना चाहिये। और जो यहाँ दंष्ट्रा-भेद से रङ्ग-भेद कहा है उसे जब तक दंशस्थित (काटे हुए स्थान में ठहरा हुआ) विष है तब तक जानना चाहिये।

सर्पविष-चिकित्सकों का यह मतभेद है, किसी भी भाँति सर्प का विष जब रक्त में प्रविष्ट होता है तब वह रुधिर में पहुँचते ही उससे मिलकर रक्ताणुवों की उत्पत्ति वा वृद्धिक्रम को रोक देता है, जिससे रक्ताणुओं की संख्या कम होने लगती है। परिणाम स्वरूप रक्त के छिछड़े से हो जाते हैं और उसमें जीवन की न्यूनता होने से थका हुआ सा प्रतीत होता है।

प्रसिद्ध डाक्टरों का मत इस विषय में यह है कि सर्प का शुष्क विष यदि मात्रा में एक चावल किसी के शरीर में प्रविष्ट होता है तो वह न्यून से न्यून १ लाख ५६ हजार (चावल) गुणा रक्त पर अपना प्रभाव डालता है। अर्थात् अपने से इतने गुणे रक्त को प्रभावित वा दूषित करता है।

सभी प्रकार के सर्प विषों का वर्गीकरण यदि मनुष्य के शरीर के अवयवों पर होने वाले प्रभाव के अनुसार किया जाये तो उसे तीन मुख्य वर्गों में बांटा जा सकता है। प्रथम—वात तन्तुओं पर प्रभाव डालते हैं। द्वितीय—प्रदाहजनक और खरास उत्पन्न करने वाले होते हैं। तृतीय—कीटाणुजनक अर्थात् रोगाणुओं से पूर्ण होते हैं। ये रोगाणु सर्पविष से रक्तप्रणाली में वृद्धि को प्राप्त होते हैं और रक्त में खमीर = सन्धान उत्पन्न करके रक्त के घटकों को नष्ट कर देते हैं। अर्थात् इनको दूषित करने में प्रधान भाग लेते हैं।

वैद्य डाक्टरों का मतभेद होते हुए भी इस बात पर सबका ही एक मत प्रतीत होता है कि विष द्वारा होने वाले प्रभाव तथा उससे उत्पन्न लक्षण तीन ही प्रकार से वा तीन ही वर्गों में प्रकट होते हैं। उन वर्गों के वर्णन वा शैली में भले ही मतभेद हो, किन्तु यह तीन प्रशस्त वर्ग वात, पित्त और कफ का आयुर्वेद का प्रसिद्ध "त्रिदोष" सिद्धान्त ही है। जितने वातकारक सर्प हैं उन सबका लक्षण एक स्थान पर दर्वीकरों के लक्षण में ही आ जाता है। पित्तकारक सर्पों का लक्षण मण्डली सर्पों में और कफ कारक सर्पों का राजिमान् सर्पों में आ जाता है। इनके विषय में पहले लिखा जा चुका है।

सर्पविष के सात वेग

महर्षि धन्वन्तरि जी ने सुश्रुत में (तत्र सर्वेषां सर्पाणां विषस्य सप्त वेगा भवन्ति) सब सर्पों के विष के सात वेग (लहरें) माने हैं। हमारे शरीर में सात धातुयें हैं। रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र इन सात धातुओं से हमारे शरीर का निर्माण होता है। ये धातुयें क्रमश: एक दूसरी के पीछे बनती हैं। एक धातु को अपने से अगली धातु में परिणत होने के लिये निश्चित समय लगता है और इनमें से प्रत्येक को दूसरी धातु से पृथक् करने के लिये एक एक कला होती है, सुश्रुत में कहा है—

धात्वन्तरेषु याः सप्त कलाः संपरिकीर्तिताः।
तास्वेकैकामतिक्रम्य वेगं प्रकुरुते विषम्॥

धातुओं के बीच बीच में जो सात कलायें कही हैं उन में से एक एक को अतिक्रमण करके विष वेग को उत्पन्न करता है। जैसे एक धातु को अपने से अग्रिम धातु में जाने के लिए इन कलाओं को पार करना पड़ता है इसी प्रकार सर्प विष को भी क्रमश: एक के पश्चात् दूसरी को अर्थात् प्रत्येक कला को पार करना पड़ता है। एक एक धातु में एक एक वेग के विचार से सात वेगों की उत्पत्ति होती है। जब रस और रक्त के बीच की कला का अतिक्रमण विष करता है तब वह प्रथम वेग कहाता है। रक्त और मांस की कला का अतिक्रमण करना दूसरा वेग कहलाता है। इसी प्रकार आगे के वेगों के विषय में भी समझिये। इसी विषय में सुश्रुतकार ने आगे लिखा है—

येनान्तरेण तु कलां कालकल्पं भिनत्ति हि।
समीरणेनोह्यमानं तत्तु वेगान्तरं स्मृतम्॥
(कल्पस्थान ४—४१)

अर्थात् वायु से प्रेरित हुआ विष जितने समय में मृत्युरूप कला को पार करता है उतने समय को वेगान्तर कहा है।

मनुष्य तथा पशु आदियों में विष के वेगों के विषय में शास्त्रों में कुछ भिन्नता पाई जाती है। सर्प विष से दंशित पशु प्रथम वेग में दुखी होकर शोक करता है, अङ्ग सूख जाता है। दूसरे वेग में अंग काला पड़ जाता है, मुख से लालास्राव होता है अर्थात् बहने लगती है और हृदय में वेदना होती है। तीसरे वेग में शिर में दर्द, कण्ठ और ग्रीवा टूटने लगते हैं। चौथे वेग में पशु कांपता है और मूढ हो जाता है, दान्तों को काटता-पीसता हुआ प्राण छोड़ देता है। कई आचार्य पशुओं में तीन ही वेग मानते हैं।

यदि पक्षी को सप काट जाता है तो प्रथम वेग में पक्षी चिन्ता करता है और मूर्छित हो जाता है। और दूसरे वेग में व्याकुल=बेचैन हो जाता है। तीसरे वेग में मर जाता है। कुछ आचार्य पक्षियों में विष का एक ही वेग मानते हैं।'

"मार्जारनकुलादीनां विषं नातिप्रवर्तते॥"

बिल्ली और नकुल=न्योला आदि पर सांप का विष अधिक प्रभाव नहीं करता। चरकशास्त्र में पशुओं में चार और पक्षियों में तीन वेग माने हैं।

फणदार=दर्वीकर सर्पविष के सात वेग

प्रथमवेग—दर्वीकर सांपों के प्रथमवेग में विष रक्त को दूषित करता है, इससे दूषित रक्त काला पड़ जाता है। इसीलिये दंशित व्यक्तियों के त्वचा, नेत्र, नाखून, दान्त, मलमूत्र आदि सभी काले पड़ जाते हैं तथा उनमें रूक्षता आ जाती है। शरीर में चिऊटियों के चलने के समान क्रिया प्रतीत होती है। वायु कुपित होने के लक्षण प्रतीत होने लगते हैं।

द्वितीयवेग—दूसरे वेग में विष मांस को दूषित करता है इससे शरीर में अत्यन्त कालापन, सूजन और गांठें उत्पन्न हो जाती हैं।

तृतीयवेग—तीसरे वेग में विष मेद=चर्बी को दूषित करता है, इससे काटा हुआ स्थान सड़ने लगता है, शिर में भारीपन हो जाता है, पसीना आने लगता है, नेत्र बन्द होने लगते हैं और दृष्टि मन्द पड़ जाती है।

चतुर्थवेग—चौथे वेग में विष उदर में पहुंचकर कफ प्रधान दोषों को दूषित करता है, जिससे तन्द्रा, मुख से कफ का गिरना, और सन्धि के जोड़ों में ढीलापन आ जाता है।

पञ्चमवेग—पांचवें वेग में कण्ठ में सूजन हो जाता है और घुर-घुर करने लग जाता है, बोलना बन्द हो जाता है तथा शीत ज्वर वा अन्य कफ के विकार उपस्थित हो जाते हैं।

षष्ठ और सप्तम वेग—छठे तथा सातवें वेग में दर्वीकर सर्प के विष के लक्षण पूर्व के सदृश ही होते हैं। राजिमान् सर्प के काटने से कफ कुपित होने के सभी लक्षण प्रकट होने लगते हैं। शरीर का श्वेत और जड़ावसन्न हो जाना, विष का मन्दगति से चढ़ना तथा रोगी का शनैः शनैः चङ्गा हो जाना वा मर जाना, हृदय और फुफ्फुस का निश्चेष्ट हो जाना, श्वासोच्छ्वास बन्द होकर मृत्यु को प्राप्त होना, ये लक्षण प्रकट होते हैं।

सर्पदंशित रोगियों की साध्यासध्यावस्था

इस विषय में महर्षि धन्वन्तरि जी सुश्रुतमें लिखते हैं—

अश्वत्थदेवायतनश्मशान—
वल्मीकसन्ध्यासु चतुष्पथेषु।
याम्ये सपित्र्ये परिवर्जनीया
ऋक्षे नरा मर्मसु ये च दष्टाः॥

यदि किसी को पीपल वृक्ष के नीचे, देवस्थान, मन्दिर श्मशान, वल्मीक=डीमक की बाम्बी सर्प के घर में, सन्ध्याकाल, चौराहे, भरणी और मघा नक्षत्र में तथा मर्म स्थानों में सर्प काट जाये तो ऐसे रोगी की चिकित्सा करना व्यर्थ है। ये असाध्य होते हैं। ऐसे स्थानों के सर्प क्यों अधिक विषैले होते हैं? यह विषय विचारणीय है।

दर्वीकराणां विषमाशुघाति
सर्वाणिचोष्णे द्विगुणी भवन्ति।
अजीर्णपित्तातपपीडितेषु
बालप्रमहिष्वथ गर्भिणीषु॥

दर्वीकर=फणीयर सांपों का विष शीघ्र मृत्यु कारक होता है। सभी विष उष्ण काल में द्विगुण प्रभाव करते हैं। अजीर्णरोगी, पित्तरोगी, धूप से पीड़ित, बालक, प्रमेह-रोगी, गर्भवती स्त्री, वृद्ध, रोगी, क्षीण, भूखे, रूक्ष प्रकृति तथा भीरु व्यक्तियों पर और आकाश में बादल छा जाने पर सभी विषों का जोर बढ़ता है। इन दशाओं में विष अधिक प्रभाव करता है और असाध्य हो जाता है।

सुश्रुत संहिता में आगे चल कर कहा है—

शस्त्रक्षते यस्य न रक्तमेति
राज्यो लताभिश्च न संभवन्ति।
शीताभिरद्भिश्च न रोमहर्षो
विषाभिहतं परिवर्जयेत्तम् ॥४०॥
जिह्वासिता यस्य च केशशातो
नासावभङ्गश्च सकण्ठभङ्गः॥
कृष्ण, सरक्तः श्वयथुश्च दंशे
हन्वोः स्थिरत्वं च स वर्जनीयः ॥४१॥
वर्तिर्घना यस्य निरेति वक्त्रा-

द्रक्तं स्रवेदूर्ध्वमधश्च यस्य ॥
दंष्ट्रानिपाताः सकलाश्च यस्य
तं चापि वैद्यः परिवर्जयेत्तु ॥४२॥
उन्मत्तमत्यर्थमुपद्रुतं वा
हीनस्वरं वाऽप्यथवा विवर्णम् ॥
सारिष्टमत्यर्थमवेगिनं च
जह्यान्नरं तत्र न कर्म कुर्यात् ॥४३॥
(कल्पस्थान अ० ३)

शस्त्र से काटने पर जिस विषार्त के शरीर से रुधिर न निकले, कोड़ा-चाबुक आदि के मारने से रेखा न पड़े तथा उसके ऊपर शीतल जल डालने से रोंगटे न खड़े हों, उस सर्पदष्ट को असाध्य समझकर त्याग देना चाहिये।'

जिसकी जीभ श्वेत हो गई हो, बाल झड़ने लग गये हों, नाक बैठ गई हो, आवाज रुक गई हो, दंश स्थान पर कृष्ण-रक्त सहित सूजन हो, और जबाड़ी स्थिर=बन्द हो गई हो वह भी असाध्य है ॥

मुख से जमा हुआ कफ निकले, मुख, नाक, गुदा और मूत्रमार्ग से रक्त निकलता हो, दंश स्थान पर सब दान्तों का पूरा पूरा चिह्न हो ऐसे रोगी को भी वैद्य छोड़ दे।

जो रोगी पागल हो, अति उपद्रवों से पीड़ित हो, स्वर मन्द पड़ गया हो या रोगी के शरीर का रङ्ग बदल गया हो, मृत्यु के चिह्न निश्चित रूप से उपस्थित हो गये हों, जिस में वेग=लहर न आयें वह रोगी मरेगा ही, उसकी चिकित्सा करना व्यर्थ है।

सजीव और मृत—परीक्षा

सर्प से दंशित व्यक्ति जीवित रहने पर भी श्वास और नाड़ी के रुकने से मृत सदृश प्रतीत होता है। ऐसी अवस्था में सजीव या मृत की परीक्षा निम्न प्रकार से करनी चाहिये।

यदि सर्पदष्ट व्यक्ति के नेत्रों में दूसरे देखने वालों का प्रतिबिम्ब दिखलाई देवे अथवा दीपक की प्रभा दीखे तो सजीव समझना चाहिये, अन्यथा मृत समझना चाहिये। तथा रोगी के शिर में मूर्द्धा स्थान पर काटने से यदि रक्त निकले तो रोगी जीवित है अन्यथा मृत। यही जीवित और मरे हुए का लक्षण है। इस लक्षणों से ज्ञात होने पर जीवित की चिकित्सा करनी चाहिये।

(क्रमशः)

ईश-प्रार्थना

(विद्यालयारम्भकालगीतिका)

(रचकः—ब्रह्मचारिसुदर्शनदेवः साहित्याचार्य)

ध्रुवम्—विनतिरियं मे नाथवर ! सदा।
आर्षप्रणालिर्जगति तता स्यात्,
ज्ञानामृतपानमतीव भवेन्मुदा ॥१॥
रोगी वा भोगी भवतु न कोऽपि,
रेतोविधारणौषधी रक्षेद्धीदा ॥२॥
वेदविभाकरो ह्यविद्यातिमिरम्,
दलयतु नाशकरमखिलं विदा ॥३॥
मेधां मह्यं देहि त्वममलाम्,
स्यां निगमागमविज्ञवरस्तदा ॥४॥

हिन्दी संस्कृत परीक्षायें

विरजानन्द संस्कृत परिषद्, देहली की हिन्दी एवं संस्कृत भाषा के माध्यम द्वारा धार्मिक परीक्षायें इस वर्ष नवम्बर मास के आरम्भ में होंगी। निश्चित तिथि की सूचना बाद में दी जायेगी। आवेदन पत्र भेजने की अन्तिम तिथि १५ अगस्त कर दी गई है। शीघ्रता करें।

इस विषय में पाठविधि, नियमावली, केन्द्र स्थापनार्थ आवेदन पत्र एवं परीक्षार्थी आवेदन पत्र निम्न पते से मुफ्त मँगायें—

—प्रधान मंत्री

विरजानन्द संस्कृत परिषद्
बाजार सीताराम, देहली–६

हमारे कारखाने में यज्ञ तथा पूजा
आदि का सर्व प्रकार का
सामान तैयार किया
जाता है।
निर्माता
सीताराम आर्य एण्ड संज़
१७६ लाजपतराय मार्कीट, देहली।

राष्ट्र निर्माण में धर्म का स्थान

(ले०—मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति)

(३)

इन चारों आश्रमों में से निकलता हुआ राष्ट्र का व्यक्ति क्रमशः आश्रम धर्मों का पालन करता हुआ अपने जीवन को उन्नत बनाता है और अपने जीवन को राष्ट्रहित के लिये अर्पण करता हुआ राष्ट्र को उत्तमतम बनाने का यत्न करता है। ब्रह्मचर्य काल में संयम के साथ ब्रह्मचर्य आश्रम के नियमों का पालन करते हुये तपस्वी और स्वाध्यायशील रहते हुये गुरु की ज्ञानाग्नि में अपने आपको आहुत करके इतना उज्ज्वल बनता है जितनी हवनकुंड में प्रदीप्त हुई अग्नि में सूखी समिधा अपने आपको अग्नि के अर्पण करती है और उज्ज्वल बन जाती है। गीली समिधा अग्नि में डाली गई उज्ज्वल नहीं बनती, प्रत्युत अपने गीलेपन के कारण धुआं करती है और उस अग्नि का आच्छादन करती है। इसलिये समिधा को उज्ज्वल होने के लिए यह आवश्यक है कि समिधा गीली न हो सूखी हो। इसी प्रकार आचार्य के पास गया हुआ ब्रह्मचारी अपने सब प्रकार के जाति कुल शील आदि के अहंकार वा अभिमान को छोड़कर आचार्य के चरणों में अपने आपको अर्पित कर देता है और आचार्य के ज्ञान और अनुभव से लाभान्वित होता है। ब्रह्मचारी के अन्तःकरण में अहंकार व अभिमान का होना यह समिधा के गीले होने के समान है जो उस ब्रह्मचारी को आचार्य के ज्ञान और अनुभव के ध्यान करने से वञ्चित रखता है। इसीलिये आचार्य अपनी कृपा का पात्र उस ब्रह्मचारी को बना सके उसके लिये प्रारम्भ में उसकी परीक्षा लेना है कि ब्रह्मचारी में किसी प्रकार का अहंकार वा अभिमान तो नहीं है। आचार्य की कठोर परीक्षा में जब ब्रह्मचारी उत्तीर्ण हो जाता है तब आचार्य समझता है किब्रह्मचारी तपस्वी है और ज्ञान वा अनुभव को ग्रहण कर सकेगा।

धौम्य ऋषि ने अपने पास आये हुये तीन ब्रह्मचारियों की कठोर परीक्षा ली। एक ब्रह्मचारी को वाटिका में पानी देने के लिये कहा। पानी की धारा एक स्थान से टूट गई और उस ब्रह्मचारी के अनेक प्रयत्न करने पर भी वह धारा बन्द नहीं हुई। वह ब्रह्मचारी धारा बन्द करने के लिये अपनी कमर लगाकर लेट गया और धारा बन्द करदी। वाटिका का सिचन अच्छी प्रकार होने लगा। आश्रम में ठीक समय पर उस ब्रह्मचारी को उपस्थित न देखकर आचार्य धौम्य ऋषि उस ब्रह्मचारी को खोजने निकले। ब्रह्मचारी की तपस्या देखकर उस ब्रह्मचारी को उत्तीर्ण किया और अध्ययन का अधिकारी ठहराया।

एक दूसरे ब्रह्मचारी की धौम्य ने परीक्षा ली, उसे गाय चराने के लिये जंगल में भेजा। ब्रह्मचारी से कह दिया कि विना आचार्य के अर्पण किये वह कुछ भी खा पी नहीं सकता। वालक ब्रह्मचारी को भूख लगती थी जो भिक्षा में मिलता था वह भी आचार्य के अर्पण कर दिया जाता था गाय का बछड़ा जो झाग उगलता था उसका सेवन भी ब्रह्मचारी को निषिद्ध था। बहुत भूख लगने पर उससे न रहा गया और उसने आक के पत्ते खाने आरम्भ कर दिये, उनकी गर्मी से उसकी आँखों की ज्योति मन्द होगई और वह एक उथले गढ़े में गिर गया। आश्रम में उचित समय पर उसके उपस्थित न होने पर आचार्य धौम्य अन्य ब्रह्मचारियों को लेकर आवाज देते हुये उस ब्रह्मचारी को ढूँढने निकले। ढूँढते-ढूँढते एक कूएें में से उस ब्रह्मचारी की आवाज आई। ब्रह्मचारी ने अपने गिरने की कथा सत्य-सत्य आचार्य के सम्मुख कुएँ मे गिरे गिरे बतादी। आचार्य ने ब्रह्मचारियों के साथ उसको कूए में से निकाला और उस समय के प्रसिद्ध वैद्य अश्विनी कुमारों को बुलाकर उसकी आँखों की चिकित्सा कराई और उसको दृष्टि दान दी। अश्विनी कुमारों ने औषधि रूप में बने हुये एक प्रकार के मोदक दिये। ब्रह्मचारी ने कहा जिन आचार्य की आज्ञा भंग करने से मुझे जो कष्ट हुआ है, उसको दृष्टि में रखकर यह उचित है कि पहले आचार्य ग्रहण करें फिर मैं ग्रहण करूँगा परन्तु वैद्यों और आचार्य की प्रसन्नता के साथ अनुमति मिलने पर उस ब्रह्मचारी बालक ने उन मोदकों का सेवन किया और दृष्टि लाभ प्राप्त किया।

ऐसे उत्तम ब्रह्मचारी जिन्होंने अपने जीवन को यज्ञमय बनाया है राष्ट्र यज्ञ के किसी काम को पूर्ण करने के लिये जिन्होंने अपने जीवन में अभ्यास किया है वे उस यज्ञ की परम्परा को आगे बढ़ाने के लिये अपना अनुरूप अपने किसी सहायक को चाहते हैं ऐसा सहायक या तो उनका कोई शिष्य हो सकता है या उनका पुत्र हो सकता है। ऐतरेय उपनिषद के अनुसार वे स्वयं ही अपने पुत्र रूप में जन्म लेते हैं और आरम्भ किये हुए यज्ञ को आगे बढ़ाने में समर्थ होते हैं। इसी यज्ञ के बढ़ाने के निमित्त से किसी स्त्री के साथ जो संयोग किया जाता है वह यज्ञार्थ संयोग होने से उसकी पत्नी वा धर्म-पत्नी कहलाती है। इस प्रकार राष्ट्र के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझता हुआ ब्रह्मचारी स्नातक अपने निकटतम सहायक को प्राप्त करता है और गृहस्थ आश्रम को राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व के साथ ग्रहण करता हुआ उसके संचालन की सृष्टि विद्या अथवा ब्रह्मविद्या को स्नातक होने से पहले पहले निपुणता के साथ अपने आचार्य के द्वारा ग्रहण कर लेता है। ब्रह्मविद्या वा सृष्टिविद्या को तत्त्व—ज्ञान और विज्ञान के रूप में ग्रहण करके जब तक उत्तीर्ण नहीं हो जाता तब तक उस गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने का अधिकार प्राप्त नहीं होता।

गृहस्थ धर्म सबसे अधिक उत्तरदायित्व का आधार भूत धर्म है क्योंकि इसके आधार पर शेष तीनों आश्रमों का संचालन और पालन-पोषण का आधार है। जब तक राष्ट्र को उत्तम सुसंस्कारी सन्तान प्राप्त नहीं होती तब तक राष्ट्र का उत्तम रूप से निर्माण नहीं हो सकता। और राष्ट्र के व्यक्ति सुदृढ सदाचारी नहीं हो सकते। इसलिये उत्तम राष्ट्र के निर्माण के लिये और सदाचार का प्रचार करने के लिये यह आवश्यक है कि सदाचारी और सुसंस्कारी माता-पिता राष्ट्र को सदाचारी और सुसंस्कारी सन्तान उत्पन्न करके देवें। गृहस्थ आश्रम भोग-विलास और गैर जिम्मेवारी के साथ अपनी वासनाओं को तृप्त करने के लिये नहीं है। प्रत्युत संयम के साथ ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करते हुए प्राजापत्य व्रत को धारण करने का आश्रम है। जैसे राष्ट्रपति अपनी प्रजा के पालन-पोषण आदि का ध्यान रखते हुए प्रजापति कहलाता है इसी प्रकार गृहस्थाश्रमी भोगविलास से अपने चित्त को सर्वथा निवृत्त करके उत्तम प्रजा-निर्माण के हेतु प्रजापति व्रत को धारण करता है। यदि इस प्रकार का व्रत धारण किये बिना यज्ञ के हेतु प्रजा उत्पन्न न करके वासना पूर्ति के निमित्त कैसी भी सन्तान उत्पन्न हो जाती है तो वह निरुद्देश्य से उत्पन्न हुई सन्तान ऐसे पत्र के समान है जिस पर पता नहीं लिखा कि वह पत्र कहां पहुँचना है। ऐसी सन्तान को हम बेपते का लिफाफा कह सकते हैं।

आजकल प्रायः इसी प्रकार की निरुद्देश्य सन्तान उत्पन्न हो रही हैं। ऐसी गैर जिम्मेवारी से उत्पन्न की हुई सन्तान किसी प्रकार के अनुशासन में नहीं रहती, न अपने माता-पिता के और न अपने शिक्षकों के और न किन्हीं हितचिन्तक वृद्ध पुरुषों के अनुशासन में रहती हैं। स्वतंत्रता और स्वेच्छाचारिता का जीवन व्यतीत करते हुए ऐसे नवयुवक किसी प्रकार के धर्म वा उत्तरदायित्व को संभाल सकने के योग्य नहीं होते। ऐसे व्यक्ति राष्ट्र के लिए घातक होते हैं।

एक वृद्ध पिता अपने घर और आंगन में झाड़ दे रहा था उससे मिलने को आये हुए सज्जनों ने पूछा कि आपका कोई लडका नहीं, जो आप इतना कष्ट उठा रहे हैं ? उसने उत्तर दिया कि लड़का तो है, वह नई वेषभूषा में सुसज्जित कुरसी पर बैठा हुआ था, परन्तु उसको बी.ए. की बीमारी लग चुकी थी। ऐसी संतानें राष्ट्रहित के लिए अपने आप को समर्पण करें इसकी आशा दुराशामात्र है। इसलिये गृहस्थ आश्रम आरंभ होने से पहले विद्यार्थी काल के अंतिम वर्ष में यह शिक्षा दी जाना चाहिये कि गृहस्थ आश्रम धारण करने पर गृहस्थी का क्या कर्तव्य और धर्म होता है और १६ संस्कारों के द्वारा शरीर मन, और आत्मा का किस प्रकार निर्माण होता है जिससे कि उत्तम राष्ट्र का निर्माण हो सके। पशुओं की उत्तम सन्तान के लिये जितने विज्ञान और देख-रेख की आवश्यकता है उससे कितने ही गुणा अधिक मनुष्य-सन्तान के उत्तम होने के विज्ञान की आवश्यकता है जिसके शिक्षण के बिना राष्ट्र का उत्तमरूप से निर्माण नहीं हो सकता।

इसके लिये आवश्यक है कि हमारे शिक्षणालयों में तीन प्रकार के अज्ञानों को दूर करने का शिक्षण प्रत्येक

नवयुवक बालक को अवश्य दिया जावे। (१) शरीर के अन्दर किस प्रकार से सुव्यवस्थित रूप में कार्य हो रहा है इसका ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति को होना चाहिये (२). इस शरीर विज्ञान और शरीर, क्रिया विज्ञान के आधार फर राष्ट्र का सुन्दर रूप से संचालन कसे होता है इसका ज्ञान भी प्रत्येक विद्यार्थी को दिया जाना चाहिये। (३) तीसरे प्रकार का ज्ञान जो सबको दिया जाना चाहिये वह यह है कि ब्रह्माण्ड में नियम और व्यवस्था किस प्रकार से चल रही है। जब तक ये तीन प्रकार के ज्ञान शिक्षार्थियों को शिक्षणालय में नहीं दिये जाते तब तक न उत्तम सन्तति का निर्माण हो सकता है और न उत्तम राष्ट्र का निर्माण हो सकता है।

गृहस्थ जीवन से निवृत्त होकर जो व्यक्ति शक्ति सम्पन्न रहते हैं राष्ट्र हित की दृष्टि से उनका कर्तव्य वा धर्म है, कि वे राष्ट्र की उन्नतिशील सन्तानों को अपने ज्ञान, अनुभव और स्वाध्याय के आधार पर राष्ट्र हित की दृष्टि से उत्तम शिक्षण देने में युक्त हो जावें। जीवन के चार भागों में यह भाग तीसरा है जिसे वानप्रस्थ आश्रम कहा जाता है। वानप्रस्थ शब्द वनप्रस्थ शब्द का रूपान्तर है। 'वन' शब्द का अर्थ है वह वस्तु जिसकी हमको सबसे अधिक चाह हो। वनु याचने धातु से वन शब्द बना है। ऐसी याचनीय अभिलषणीय वस्तु ब्रह्म है। केन उपनिषद् में बतलाया है "तद्वनमिति-उपासितव्यम्" उस ब्रह्म का नाम वन है उसी की उपासना करनी चाहिये। उस वन शब्द वाच्य ब्रह्म प्राप्ति के साधन का अभ्यास करने के लिये जो मनुष्य निवृत्त होकर तैयार होकर उद्यत हुआ हो वह वन प्रस्थ कहलाता है। वनप्रस्थ को ही वानप्रस्थ कहते हैं। यहाँ वन शब्द का अर्थ जंगल नहीं है। ऐसे मनुष्य स्वाध्याय और ब्रह्म प्राप्ति का साधन करने के लिये सब विघ्नों से रहित मक्षिका मशक आदि के विघ्नों से शून्य स्थान में रह कर साधना करते हैं। अपनी साधना से उत्पन्न ज्ञान और अनुभव के द्वारा शिक्षण का कार्य करते हुए राष्ट्र धर्म का पालन करते हैं। अपनी ही उन्नति से वे सन्तुष्ट नहीं रहते प्रत्युत सबकी उन्नति मे अपनी उन्नति समझते हैं।

ऐसी साधना की उत्कृष्टतम अवस्था को जब प्राप्त हो जाते हैं तब राष्ट्र उन्नति के लिये सब आश्रमों में घूम-फिर कर सन्मार्ग का उपदेश करते हुये सभी आश्रम वासियों में घूमा फिरा करते हैं। मनुष्य जीवन की यह चौथी मंजिल है जिसे संन्यास आश्रम कहा है। इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र-कल्याण के लिये अर्पित किया होता है। इस लिये इनकी अति अल्प आवश्यकताओं के भार को राष्ट्र के व्यक्ति अपने ऊपर उठा लेते हैं और कुछ बोझ नहीं समझते। अपने जीवन संबंधी आवश्यकताओं को अति अल्प कर देने से और अपनी तृष्णाओं पर पूर्ण विजय पा लेने से साधना कर्म की विशेष अपेक्षा न रखने के कारण संन्यासी लोग सर्वोत्कृष्ट और पूजनीय समझे जाते हैं। इस प्रकार सभी आश्रमवासी अपने अपने व्यक्तिगत जीवन को उत्कृष्ट बनाते हुए राष्ट्र धर्म का परिपालन करते हैं। ऐसे उत्कृष्ट जीवन से सम्पन्न व्यक्ति दो भागों में विभक्त होते हैं। (१) वे जो शिक्षण वा मार्ग-दर्शन का काम करते हैं। राष्ट्र के इस कार्यभार को अपने ऊपर लेते हुए उन्हें देव कहा जाता है और जो व्यक्ति राष्ट्र के विभिन्न भागाध्यक्ष होते हैं और आवश्यक वस्तुओं के निर्माण और संचय का कार्य करते हैं वे व्यक्ति पालन पोषण का कार्य करते हैं इसलिए पितर कहलाते हैं। राष्ट्र के व्यक्तियों को मर्यादा में रखते हुए अन्दर से उत्पन्न और बाहर से आये हुए विघ्नों को दूर करके राष्ट्र की सुरक्षा में तत्पर रहते हैं वे राष्ट्र के रक्षक कहलाते हैं। इन तीनों प्रकार के व्यक्तियों की सहायता करते हुए जो व्यक्ति राष्ट्र की सेवा करते हैं वे सहायक कहलाते हैं। इस प्रकार देवस्थानीय मनुष्य शिक्षक और पितृस्थानीय मनुष्य वैश्य और तीसरे प्रकार के लोग रक्षक और चौथे प्रकार के लोग सहायक होते हैं। ये सभी लोग राष्ट्र-धर्म का पालन करते हुए सामाजिक दृष्टि से राष्ट्र को उन्नत बनाते हैं।

इस प्रकार हमारे देश की वर्णाश्रम-व्यवस्था का आधार राष्ट्र-धर्म है जिसमें ऊँच-नीच का भाव वर्ग-भेद जातीयता और प्रान्तीयता का अभिमान नहीं है और साम्प्रदायिकता से शून्य है। देश-काल परिस्थिति के अनुसार किसी भी महापुरुष के बतलाये हुए मार्ग का अनुसरण करते हुए राष्ट्र धर्म की दृष्टि से सब समान हैं। उनमें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है, कारण कि राष्ट्र के सब व्यक्ति अपने आपको राष्ट्र धर्म का पालन करते हुए अर्पित किये हुए होते हैं इसलिए राष्ट्र-धर्म का बड़ा महत्त्व है और यह राष्ट्र-धर्म राष्ट्र-निर्माण का मूल आधार है।

शिक्षण सिद्धि की चाबी "मस्तक विद्या"

लेखिका--चंचल बहिन मणिकलाल पाठक प्रधान--आर्यसमाज टंकारा (सौराष्ट्र)

मस्तक-विद्या बीसवीं सदी में विकसित हुई विद्या है। उसके द्वारा मनुष्य के गुण, कर्म, स्वभाव और चारित्र्य आदि की यथावत् परीक्षा हो सकती है।

मनुष्य का मन-मन अनेक प्रकार की शक्तियों सामर्थ्यों, भावों. प्रीति और विचारों से युक्त है।

मस्तक—यह मनुष्य के मन की सर्व शक्तियों, और वृत्तियों को प्रदर्शित करने का मुख्य प्राकृतिक साधन है।

मानस अवयव—मनुष्य के मन की भिन्न-भिन्न शक्तियों, वृत्तियों, इच्छा, भाव, चाहना, कामना या सभी प्रकार के लक्षण दर्शाने वाली श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा, और नासिका आदि इन्द्रियों के अनुसार मनुष्य के मस्तक में भी, पृथक् पृथक् मानस अवयव हैं। जिसका प्रत्येक अपना अपना पृथक्-पृथक् मानस व्यापार का कार्य करने के लिये निर्माण हुवा है।

ऐसे मानस अवयवों के नाम, स्थान, कार्य और संवृद्धि तथा क्षय और शिक्षा या खीलवणी--विकसित करना। इसी रीति से उनकी यथायोग्य या विकृत आदि अवस्थाओं का निर्णय करना यह मस्तक विद्या का सब से बड़ा आवश्य० और अति महत्त्व का कार्य है।

इस विद्या द्वारा मनुष्य के मानसिक--व्याधि, विकार जैसें स्मृति भ्रम, अति-हास्य, अति-रोदन, भय,क्रोध, लज्जा, शील, मर्यादा, मद, मोह, भ्रान्ति, त्रिदोष, औदास्य, ईर्ष्या, वैर, घृणा आदि अनेक दर्द का निदान और चिकित्सा या सुधार करने का प्रयास हो सकता है। ऐसा इसी समय के सुधारक, देश के अनेक विद्वान् डाक्टर भी प्रमाण पूर्वक मानते हैं। इससे इस विद्या का लाभ मनुष्य समाज के कल्याणार्थ अनेक रीति से और अनेक प्रसग पर होने के योग्य है।

मस्तक विद्या का उपयोग--लाभ

१-स्त्री, पुरुष और बालकों के स्वभाव या गुण, चारित्र्य की योग्यता अयोग्यता-की परीक्षा।

२-बालकों की प्रकृति और शिक्षा का निर्णय।

३-लग्न के योग्य स्त्रीमें पुरुष गुण, कर्ण, स्वभाव की परीक्षा।

४-नौकर, सेवक, क्लर्क आदि की स्वीकृति।

५-शुद्धाचारी, दुराचारी और धर्मात्मा या पापात्मा आदि मनुष्य के गुण, कर्म और स्वभाव—प्रकृति का निश्चय केवल पांच मिनट में हो सकता है।

६ योग्य व्यक्ति का योग्य स्थान पर उपयोग करना आदि अनेक रीति से इस मस्तक विद्या का लाभ मिल सकता है।

हमारे शास्त्र भी संक्षेप=सारांश=सूत्र रूप में मनुष्य की विविध-प्रवृत्तियों का स्थान दिव्यकोप मस्तक है, इसकी साक्षी देते हैं–

प्राणाः प्राणभृतां यत्र स्थिताः सर्वेन्द्रियाणि च।
यदुत्तमाङ्गमङ्गानां शिरस्तदाभधीयते॥ (चरक)

प्रियाऽप्रियाणि वहुला स्वप्नं संबाधतन्द्रयः।
आनन्दानुगो नन्दांश्च कस्माद् वहति पूरुषः ॥९॥
आर्तिरवर्तिर्निर्ऋतिः कुतो नु पुरुषेऽमतिः।
राद्धिःसमृद्धिर्व्यृद्धिमतिरुदितयः कुतः ॥ १० ॥
तद्वा अथर्वणः शिरो देवकोपःसमुब्जितः।
तत्प्राणो अभिरक्षति शिरो अन्नमथो मनः ॥२७॥
(अथर्ववेद का० १० सू० २)

आकृतिर्गुणान् कथयति।

आकारैरिङ्गितैर्गत्या चेष्टया भाषणेन च।
नेत्रवक्त्रविकारेण लक्ष्यतेऽन्तर्गतं मनः॥

उदीरितोऽर्थः पशुनापि गृह्यते,
हयाश्चनागाश्च वहन्ति नोदिताः।
अनुक्तमप्यूहति पण्डितो जनः,
परेङ्गितज्ञानफला हि बुद्धयः॥

मस्तक विद्या और मुख सामुद्रिक शास्त्र का विषय विशेषतः गहन और भी अति-विस्तृत, है। किन्तु सामान्य जन-समुदाय को ऐसे विषयों का विस्तृत वाचन--पठन करने का समय न मिलने से मनुष्य चारित्र्य की शिक्षा के कार्यों के साथ में मस्तक विद्या का कितना गाढ=पूर्ण=अत्यन्त सम्बन्ध है, यही यहाँ तत्त्व रूप में दिखाने का प्रयत्न किया जायेगा। (क्रमशः)

संस्था-समाचार

इसी श्रावणी पर आयुर्वेद महा विद्यालय का उद्घाटन कर रहे हैं, जो विद्यार्थी आयुर्वेद महाविद्यालय में प्रविष्ट होना चाहें वे अपने प्रार्थना पत्र श्री आचार्य गुरुकुल झज्जर के नाम से भेज दें। भवन-निर्माण का कार्य चल रहा है, दानी महानुभाव अपना पवित्र दान देकर यश के भागी बनें। जिन सज्जनों ने दान का वचन दिया हुआ है वे शीघ्रातिशीघ्र अपने वचन को पूर्ण करें, जिससे आर्थिक समस्या हल हो सके।

अनुकरणीय कार्य

श्री शीशराम जी आर्य ढाणी मालोठ जि० झूंझनू (राजस्थान) के रहने वाले हैं और आजकल देहली में कार्य कर रहे हैं। आप उत्साही कर्मठ आर्य युवक हैं, सर्वदा तन, मन धन से गुरुकुल की सहायता करते रहते हैं। प्रति वर्ष १००) से अधिक चन्दा एकत्रित कर गुरुकुल में पहुँचा देते हैं, सुधारक के भी पर्याप्त ग्राहक बनाये हैं। इस प्रकार की सहायता अन्य आर्य भाइयों को भी करनी चाहिये।

विवाह-संस्कारों पर दान

गत मास में निम्नलिखित प्रेमी महानुभावों ने गुरुकुल को विवाह संस्कारों पर दान दिया है। आशा है इसी प्रकार अन्य सज्जन भी ऐसे शुभ अवसरों पर गुरुकुल का ध्यान रखेंगे—

१०१) मा० होशियारसिंह जी मण्डौरा (रोहतक)
२५) श्री चौ० रामस्नेही जी ताङ्गा इन्स्पेक्टर रोहतक
१०) श्री रत्नसिंह जी जखोली (रोहतक)
५) मा० बीरबल जी शाहजहाँपुर जिला अलवर (राजस्थान)
५) श्री प्रभुदयाल जी रोहतक
५) श्री कलीराम जी कबलाना (रोहतक)
५) श्री श्रीचन्द जी "
५) श्री दरियासिंह जी "

अन्य-दान

१५०) श्री नान्हाराम जी दादरी (महेन्द्रगढ)
२५॥) श्री पूर्ण सिंह जी भजनोपदेशक जुवोरखेड़ी (रोहतक)
५) श्री भानाराम जी टिटोली (रोहतक)

इन सब सज्जनों को धन्यवाद।

मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल झज्जर

❀ सूचना—जिन सज्जनों के पास गुरुकुल की नई पुरानी जो भी रसीदबुक हों वे उसे शीघ्रातिशीघ्र गुरुकुल के कार्यालय में पहुंचा दें, जिससे हिसाब करने में सुविधा हो।

* * *

सरकार द्वारा पुरस्कृत, अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा सम्मानित, स्वास्थ्य सम्बन्धी उपयोगी पुस्तकें।

ले०--श्री रामेश बेदी

१. त्रिफला, तीसरा परिवर्द्धित संस्करण	३०४ पृ०	३।)
२. शहद, शहद के बारे में पूरी जानकारी	२५८ पृ०	३)
३. लहसुन; प्याज, तीसरा संस्करण	२३२ पृ०	२॥)
४. तुलसी, दूसरा परिवर्द्धित संस्करण	१८६ पृ०	२)
५. नीम; बकायन, विविध रोगों में प्रयोग	१४५ पृ०	१।।।)
६. सोंठ, तीसरा संस्करण परिवर्द्धित	१५० पृ०	१॥)
७. मिर्च---काली, सफेद और लाल।	९० पृ०	१)
८. देहाती इलाज, तीसरा संस्करण	६० पृ०	१)
९. पेठा; कद्दू, अनेक रोगों में उपयोग		।')
१०. शहतूत, उपयोग करने की विधि		।=)
११. सर्पगन्धा, चमत्कारी जड़ी के उपयोग		१)
१२. बरगद, विशद गुण तथा उपयोग		१)
१३. सांपों की दुनियां—३४० पृ० २४ चित्र सजिल्द		५)

प्रत्येक घर में, चिकित्सालय में तथा पुस्तकालय में ये पुस्तकें अवश्य होनी चाहियें।

पता—हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट, गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार

पाचनामृत

मन्दानि, अरुचि; अजीर्ण (कब्ज), पेट का फूलना, पेट का भारीपन, शूल, जी मिचलाना, वमन, खट्टी डकार आदि पेट के सभी रोगों को नष्ट कर भूख को बढ़ाता है। आँतों के सब रोगों को दूर कर पाचन शक्ति बल देता है। पुराने से पुराने तिल्ली जिगर की अचूक औषधि है।

मूल्य एक शीशी ४)

पामामृत (दादखुजली)

यह सब ही खुजली दादादि चर्म रोगों के लिये अत्युत्तम औषध है। खुजली सूखी हो या पकने वाली यह सब प्रकार की खुजली के लिये रामबाण औषध है। इसके प्रयोग करने के पश्चात् किसी अन्य औषधि की आवश्यकता नहीं। दाद को जड़ से नष्ट करती है। मूल्य २)

बाल रोगामृत

बालकों के हरे पीले दस्त, अपच, अजीर्ण (कब्ज) अरुचि, दाँत निकालते समय के रोग, सूखिया (मसान) रोग, वमन, निर्बलता, ज्वर आदि सभी रोगों को दूर कर बालकों को मोटा करता है। अतः प्रत्येक गृहस्थी घर में रखें।

मूल्य एक शीशी ५)

सञ्जीवनी तेल

मूर्च्छित लक्ष्मण को चेतना देने वाली इतिहास प्रसिद्ध बूटी से तैयार किया गया यह तल घावों के भरने में जादू का काम करता है। भयंकर फोड़े-फून्सी, गले-सड़े जख्मों तथा आग से जले जख्मों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भर कर ठीक कर देता है। खून का बहना तो तुरन्त ही बन्द हो जाता है। चोट की भयङ्कर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता हैं। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है। मूल्य ५)

सेवन विधि—

फाये में भरकर बार-बार चोट आदि पर लगायें।

च्यवनप्राश

इसी ऋतु के ताजे आंवले से तैयार किया गया स्वादिष्ट, सुमधुर और एक दिव्य रसायन (टानिक) है। जिस का सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सब के लिये अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला गले का बैठना दमा तपेदिक सभी हृदय रोगों की अद्वीतीय औषध है। स्वप्नदोष प्रमेह धातुक्षीणता तथा अन्य सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका (निरन्तर) सेवन समूल नष्ट करता है। यह निर्बल को बलवान और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है।

मूल्य ७) सेर ५ सेर लेने पर ६) सेर

बलदामृत

इसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है, इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आ जाता है। पीनस (सदा रहने वाले जुकाम और नजले) की महौषधि है। वीर्य वर्द्धक कास (खांसी) नाशक, राजयक्ष्मा (तपेदिक) श्वास (दमा) के लिये लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करती तथा अत्यन्त रक्त वर्द्धक है। निर्बलों को बलिष्ट व हृष्ट-पुष्ट बनाती है। यह अपने ढङ्ग की एक ही औषधि है।

मूल्य ५) प्रति शीशी

ज्वरामृत

यह नये व पुराने सभी प्रकार के ज्वरों की बाण औषध है। बिगड़े हुये मलेरिया, विषम ज्वर को दूर करने में अद्वितीय औषध है। कुनेन भी इसके आगे तुच्छ औषध है। कुनेन का सेवन सिर दर्द, स्पप्नदोष, प्रमेह आदि अनेक रोगों को उत्पन्न करता है, किन्तु यह औषध सब दोषों को दूर करती है तथा ज्वर की प्रत्येक अवस्था में दी जा सकती है। मलेरिया काल में सेवन की हुई मलेरिया को नहीं आने देती। अधिक प्रशंसा व्यर्थ है, सेवन करें और लाभ उठावें।

मूल्य एक शीशी ५)

पता—आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला, गुरुकुल झज्जर जि० रोहतक

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला (फार्मेसी) गुरुकुल झज्जर (रजि०) रोहतक

युवक और स्वप्नदोष

स्वप्नदोष एक ऐसा भयंकर रोग है, कि जिसके जाल से कोई सौभाग्यशाली ही युवक बचता है यह विद्यार्थी तथा नवयुवकों को कुमारावस्था अर्थात् १४ वर्ष से १८ वर्ष की आयु के मध्य उभरती हुई युवावस्था में ही घेर लेता है। मेरे पास प्रतिवर्ष सैकड़ों विद्यार्थी व युवकों के पत्र आते रहते हैं। अतः मैं अपने अनुभव के आधार पर बलपूर्वक कह सकता हूँ कि ९९ प्रतिशत इस भयंकर रोग में फंसे हुए पाये जाते हैं। कालिजों, हाईस्कूलों के विद्यार्थी तो निःसन्देह शत-प्रतिशत इस इस रोग के आखेट (शिकार) बने हुए हैं। पीले मुरझाये हुए मुख पर अन्दर धंसी हुई आँखें, निस्तेज और कान्तिरहित दुर्बल शरीर आदि चिह्न युवकों का इस रोग में फंसे होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। यह भयकर रोग मेरे देश के युवकों के शरीर को घुन की तरह खाकर निर्बल और जीर्ण-शीर्ण कर रहा है। कुसंग, कुशिक्षा, कुत्सित विचार, मद्यमांसादि दुष्ट भोजन, अधिक सोना, अधिक खाना, आलस्य-प्रमाद में पड़े रहना, सिनेमा स्वांगादि देखना, नावल नाटकादि गन्दी पुस्तकें पढ़ना, इस रोग के मुख्य कारण हैं। यदि भारत के युवक शुद्ध विचार, शुद्ध भोजन, सत्सङ्ग और स्वाध्याय करते हुये श्रद्धापूर्वक व्यायाम, प्राणायाम और सन्ध्या (ईश्वर भक्ति) नियमित रूप से करें, तो इस भयंकर रोग का सर्वथा उन्मूलन बिना किसी औषधि-सेवन के भी हो सकता है। किन्तु आज का युवक इन साधनों पर श्रद्धा-विश्वास नहीं रखता। औषधों का आश्रय लेना अधिक हितकारी समझता है। इसलिये विद्यार्थी और युवकों के इस दुःख को दूर करने के लिये हमने निम्नलिखित औषध अपनी रसायनशाला में बड़े परिश्रम से बनाई हैं। पर्याप्त नवयुवक इन से लाभ भी उठा चुके हैं। इस रोग की चिकित्सा में प्रमाद नहीं करना चाहिये। इसके अधिक बढ़ने पर मनुष्य नपुंसक (नामर्द) हो जाता है। हमारा स्वप्नदोषामृत रस तथा चूर्ण वीर्य को गाढ़ा तथा पुष्ट करके इस रोग को दूर करने में सफल हुआ है। इसके एक मास सेवन करने से कितने रोगियों का स्वप्नदोष तो सर्वथा नष्ट हो चुका है। इसके सेवन करने वालों को लाभ तो सब को होता है। किसी को ५० प्रतिशत, किसी को ७५ प्रतिशत होता है। जिन युवकों को अजीर्ण-कब्ज रहता हो, उन्हें बीच-बीच में त्रिफले का सेवन करते रहना चाहिये।

स्वप्नदोषामृत रस—यह रस स्वप्नदोष को दूर करने की सर्वोत्तम औषध है। साथ ही वीर्य के मूत्र के आगे-पीछे या मध्य में आने वाले रोग को तुरन्त शान्त करता है। यह सब प्रमेहों के लिये भी अत्युत्तम औषधि है। यह हताश तथा निराश युवकों को जीवन प्रदान करता है।

मूल्य ५) शीशी एक मासार्थ

स्वप्नदोषामृत चूर्ण—यह चूर्ण धातु को पुष्ट करता है, बलदायक है। स्वप्नदोष के रोगी के लिये अत्यन्त हितकर है। दोनों औषध रस तथा चूर्ण साथ-साथ सेवन करने से आश्चर्यजनक लाभ होता है। साथ ही यह नपुंसकता (नामर्दी) के लिये भी लाभदायक है। यह प्रमेहनाशक है। यह चूर्ण विद्यार्थियों के लिये विशेष हितकारी है।

मूल्य २) शीशी एक मास सेवनार्थ

१—दोनों दवाई एक मास की एक साथ मंगाने वालों से डाकखर्च एवं पैकिंग खर्च नहीं लिया जायगा।

सेवन विधि—चूर्ण को एक मासे से तीन मासे तक प्रातः-सायं दूध वा जल के साथ लेना चाहिये, रस की एक-एक गोली प्रातः-सायं दूध वा जल के साथ लेनी चाहिये। जो विद्यार्थी युवक ब्रह्मचारी हों, उन्हें इसका सेवन जल के साथ ही करना चाहिये, भूलकर भी दूध से सेवन न करें। जो युवक निर्बल वीर्यहीन हों, उन्हें ताजे दूध अथवा गर्म किये हुए ठण्डे दूध के साथ प्रातः-सायं सेवन करना चाहिये। खटाई, मिर्च, लहसन, प्याज इत्यादि उष्ण चीजों का पथ्य रखें।

हमारे यहाँ सुलभ कुछ विशेष ग्रन्थरत्न

१. चारों वेद (मूल) अजमेर	१७॥)	ऋग्वेद ९), यजुर्वेद २॥), सामवेद २), अथर्ववेद ४)
२. ऋग्वेद भाष्य ९ भागों में	५५)	महर्षि दयानन्द कृत
३. ,, ,, ७ भागों में	४२)	पं० जयदेव विद्यालंकार कृत
४. यजुर्वेद भाष्य ४ भागों में	२५)	महर्षि दयानन्दकृत
५. ,, ,, २ भागों में	१२)	पं० जयदेव विद्यालंकार
६. सामवेद भाष्य १ भाग में	६)	,, ,,
७. अथर्ववेद भाष्य ४ भागों में	२४)	,, ,,
८. अष्टाध्यायी सूत्रपाठः	।।।)	पाणिनि मुनि कृत
९. अष्टाध्यायी भाष्य दोनों भाग	७)	महर्षि दयानन्द
१०. वेदाङ्गप्रकाश (सम्पूर्ण १४ भाग)	८॥≡)	,, ,,
११. पातञ्जल महाभाष्य (सम्पूर्ण)	४०)	नेट
१२. गद्यमयं महाभारतम्	३)	आचार्य राजेन्द्रनाथ शास्त्री
१३. दयानन्द दिग्विजयम् (पूर्वार्द्ध)	४)	आचार्य मेधाव्रत कविरत्न
१४. ,, ,, (उत्तरार्द्ध)	५)	,, ,,
१५. कुमुदिनीचन्द्रः गद्यकाव्यम्	४)	,, ,,
१६. प्रकृतिसौन्दर्यम् नाटकम्	१)	,, ,,
१७. विरजानन्दचरितम् (पद्यकाव्यम्)		,, ,, (प्रेस में)
१८. ब्रह्मचर्यमहत्त्वम् (पद्यकाव्यम्)	।।)	,, ,,
१९. संस्कृत व्यवहारभानुः (पद्यकाव्यम्)	१)	विद्यानिधि शास्त्री
२०. मुनिचरितामृतम् (पद्यकाव्यम्)	१)	दिलीपदत्तोपाध्यायः
२१. व्याख्यानमाला (विशिष्टश्लोकसंग्रहः)	१॥)	अच्युतानन्द सरस्वती
२२. सिद्धान्तकौमुदी की अन्त्येष्टि	।–)	आचार्य राजेन्द्रनाथ शास्त्री
२३. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका	२॥)	महर्षि दयानन्द सरस्वती
२४. संस्कारविधि	।।।=)	,, ,, ,,
२५. महर्षि दयानन्द का प्रामाणिक जीवनचरित भाग १	६)	देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय
२६. महर्षि दयानन्द का प्रामाणिक जीवनचरित भाग २	६)	,, ,,
२७. दयानन्दायन (हिन्दी महाकाव्य)	४)	श्री गदाधरसिंह कविरत्न
२८. सन्ध्या अष्टाङ्ग योग	।।।)	स्वामी आत्मानन्द सरस्वती

सुधारक के प्राप्य विशेषांक

(१) गो—अङ्क ॥) (२) व्यायाम विशेषाङ्क १) (३) भोजन विशेषाङ्क १)
२॥) मनीआर्डर से भेजने पर डाक व्यय माफ।

आगामी प्रकाशन

१. राष्ट्र निर्माण में धर्म का स्थान
२. ,, अर्थ का स्थान
३. ,, काम का स्थान
४. संस्कृत अध्यापक भाग १ तथा २
५. ब्रह्मचर्य के साधन भाग ६ (प्राणायाम)
६. ,, ,, भाग ७ (सत्सङ्ग)
७. ब्रह्मचर्य के साधन भाग ८ (स्वाध्याय)
८. ,, ,, भाग १० (निद्रा)
९. ,, ,, भाग ११ (विशेष नियमादि)
१०. आर्येन्द्रचारुचरितम्।
११. योगदर्शन व्यासभाष्य सरल हिन्दी अनुवाद सहित

विश्वम्भर वैदिक पुस्तकालय गुरुकुल झज्जर [रोहतक]

भोजन विशेषांक पर पाठकों के उद्गार

सुधारक का भोजन विशेषांक मिला। पत्र तथा यह तो एक (Complete) पूरी पुस्तक है। इसको पढ़कर मेरी यह गलत धारणा लुप्त हो गई कि रोहतक जिले से निकलने वाले सब पत्र भाषा तथा लेख सामग्री के विचार से निम्न कोटि के हैं। ऐसी पुस्तक के विषय में कई महानुभाव तो यहां तक लिख देते हैं कि खाने-पीने के विषय पर ऐसी पुस्तक कोई भी अब तक नहीं छपी है।

लगभग सभी पशुओं के दूध घी के गुण दोष लिखे हैं, अन्नों के लाभ और हानि, खाये जाने वाले फलों तथा साग-सब्जियों के फायदे-नुकसान पर अच्छी तरह विचार प्रकट किये गये हैं। अण्डा, गोश्त, मद्य, तम्बाकू, अफीम आदि मादक एवं अभक्ष्य वस्तुओं पर भी शिक्षाप्रद ढङ्ग से लेख लिखे गये हैं।

ऐसी पुस्तक से छोटे विद्यार्थी जो अभी व्यसनों में नहीं फंसे हैं वे बड़ा लाभ उठा सकते हैं। प्रौढ विद्वान पुरुष भी पर्याप्त मात्रा में शिक्षा लेकर अपने शरीर और जीवन को सुधार सकते हैं।

—तकदीरसिंह 'वकील'

—भोजन विशेषाङ्क में भोजन सम्बन्धी अनेक बातों को भली-भान्ति सुलझाया है। इस अंक का प्रचार भारत के कॉलेजस, रेस्टोरेण्ट्स् तथा होस्टलों में होना अत्यन्त आवश्यक है।

—सम्भाजी मानीकराव जी आर्य
पीपल्स् कॉलेज नान्देड़

—सुधारक के 'भोजन विशेषाङ्क' को पढ़ कर अपनी अनेक कमियों का ज्ञान हुआ, मेरे मित्रों ने भी इसकी मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की। जबसे मैं सुधारक पढ़ने लगा हूँ अपने को बहुत स्वस्थ पा रहा हूँ। आजकल के नवयुवक ऐसी उत्तम पुस्तकों को न पढ़ कर किस्से-कहानियों की पुस्तक पढ़ते हैं। मेरा ऐसे भाइयों से निवेदन है कि वे अपना समय व्यर्थ न खोकर विद्वानों की पुस्तकों का स्वाध्याय करें और अपने जीवन को उत्तम बनावें।

—भगवान्‌सिंह, फील्ड सर्वे पार्टी, शिलौंग (आसाम)

—वैसे तो सुधारक का प्रत्येक अङ्क ही अनुपम और परमोपयोगी होता है। परन्तु व्यायाम और भोजन विशेषाङ्क तो प्रत्येक स्वास्थ्य प्रेमी और ब्रह्मचारी के लिये मार्गदर्शक ही बन गये हैं।

—सहदेव शास्त्री मदीना दाँगी (रोहतक)

पता

ग्राहक संख्या

सेवा में श्री—

मु०

पो०

जि०

१—दन्त रक्षक मंजन

दांतों से खून वा पीप का आना दांतों का हिलना दांतों के कृमि रोग सब प्रकार की दांतों की पीड़ा तथा रोगों को दूर भगाता है और दांतों को मोतियों के समान चमकाता है।

सू० १ शीशी ॥)

२—नेत्रज्योति सुर्मा

(अनुपम अंजन)

आंखों का दुखना, खुजली लाली फोला जाला मोतियाबिन्द रोहे (कुक्करे) आदि सर्व नेत्र रोगों के लिये लाभदायक है। प्रतिदिन प्रयोग करने के लिये बहुत अच्छा सुर्मा है।

मूल्य एक शीशी ॥)

पता----आयुर्वेदिक रसायन शाला, गुरुकुल झज्जर
जि० रोहतक

प्रकाशक आचार्य भगवान्‌देव गुरुकुल झज्जर ने सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली में मुद्रक जगदेवसिंह शास्त्री सिद्धान्ती के प्रबन्ध से छपवाया।